तोहफ़ा-ए-ख़्वातीन

(औ़रतों के लिए दीनी मसाइल व अहकाम)

हज़रत मौलाना
आ़शिक़ इलाही
बुलन्दशहरी
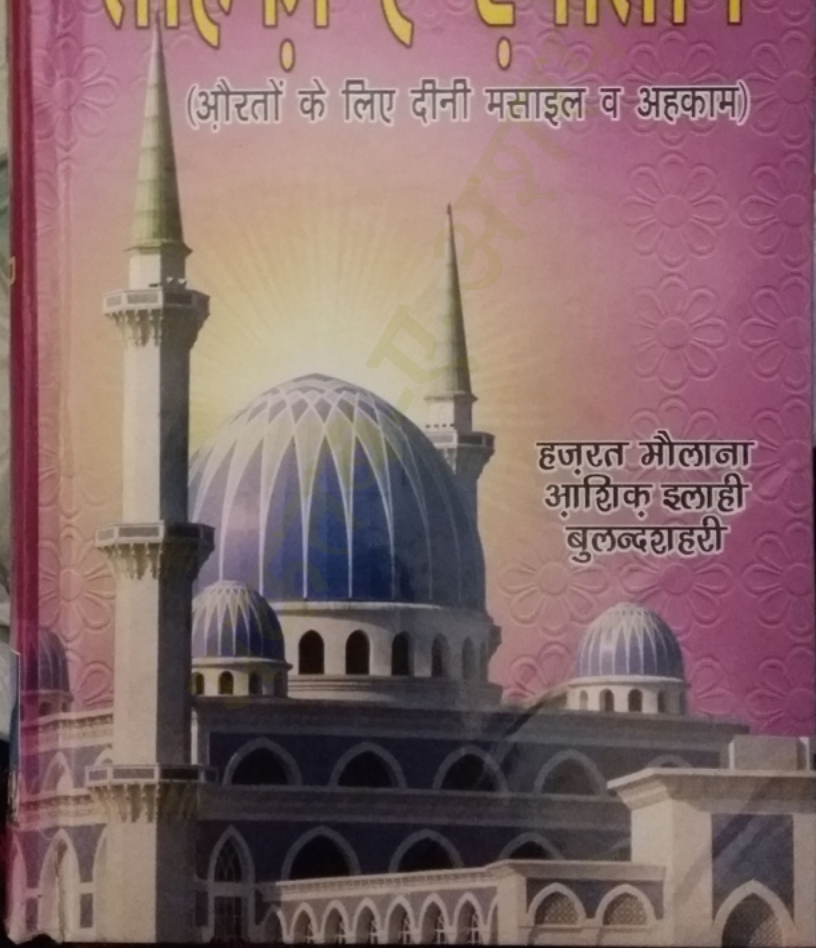
मुसलमान औरतों से

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बातें

* औरतों के लिए *

दीनी मसाइल व अहकाम

(तोहफ़ा-ए-ख़्वातीन)

लेखक

हज़रत मौलाना आशिक़ इलाही साहिब बुलन्द शहरी

रहमतुल्लाहि अलैहि

अनुवादकः मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा. लि.)

422, मटिया महल, उर्दू मार्किट, जामा मस्जिद

देहली-110006

☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆

नाम किताब — **तोहफ़ा-ए-ख़्वातीन**

लेखक — **मौलाना आशिक़ इलाही साहिब**

हिन्दी अनुवाद — मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी

संयोजक — मुहम्मद नासिर ख़ान

तायदाद — 2100

प्रकाशन वर्ष — मार्च 2004

कम्पोज़िंग — इमरान कम्प्यूटर्स
मुज़फ़्फ़र नगर (0131-2442408)

>>>>>>>>>>>

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो प्रा० लि०

422, मटिया महल, उर्दू मार्किट, जामा मस्जिद देहली-110006

फ़ोन आफ़िस, 23289786, 23289159 आवास, 23280786

विषय सूची

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ وَ كَفٰى وَ سَلَامٌ عَلٰى عِبَادِهِ الَّذِيْنَ اصْطَفٰى

मुक़द्दिमा

द्वारा हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद तक़ी साहिब उस्मानी सम्पादक "अल्-बलाग़" कराची

किसी भी क़ौम की औरतों का उस क़ौम के बनाने व तरबियत में जो हिस्सा होता है वह किसी व्याख्या और बयान का मोहताज नहीं। माँ की गोद बच्चे की सबसे पहली पाठशाला भी है और तरबियत का स्थान भी। और यह ऐसी असरदार पाठशाला है कि यहाँ का सीखा हुआ सबक़ ज़ेहन व दिल से पत्थर के नक़्श से भी ज़्यादा देरपा होता है और सारी उम्र नहीं भूलता।

चुनाँचे मिल्लते मुसलिमा के लिए भी जितनी अहमियत मर्दों की दीनी इस्लाह और सुधार को हासिल है, ख़्वातीन और औरतों की दीनी तालीम व तरबियत उससे किसी तरह कम अहमियत नहीं रखती। एक तो इसलिये कि इस्लामी अहकाम का ख़िताब जिस तरह मर्दों को है उसी तरह औरतों को भी है, बल्कि बाज़ अहकाम ऐसे हैं जो औरतों ही से ताल्लुक़ रखते हैं, और दूसरे इसलिये कि औरतों की तरबियत आख़िरकार पूरी क़ौम की तरबियत का ज़रिया साबित होती है।

सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का मामूल भी यह था कि आपके उमूमी ख़ुतबात में तो मर्द और औरतें दोनों ही मुख़ातब होते थे, लेकिन कभी-कभी आप ख़ास तौर से औरतों को ख़िताब करने के लिए अलग मजलिसें आयोजित फ़रमाते थे ताकि उनके ज़रिये औरतों की तरबियत ख़ुसूसी अहमियत के साथ हो सके।

नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की इस सुन्नत की पैरवी में हर दौर के उलमा और बुज़ुर्गाने-दीन ने भी अपने वअ़ज़ व ख़िताब और किताबों व तालीफ़ात में औरतों की इस ख़ुसूसी अहमियत का लिहाज़ रखा है, और बहुत-सी किताबें ख़ास तौर पर औरतों ही के लिये लिखी गई हैं। अल्लाह का शुक्र है कि उर्दू ज़बान में भी मुसलमान औरतों के लिए ऐसी किताबों का

ज़ख़ीरा मौजूद है जो उनकी दीनी ज़रूरतों को पूरा कर सके। एक **"बहिश्ती ज़ेवर"** ही ऐसी किताब है कि औरतों के दीन व दुनिया की शायद ही कोई ज़रूरत ऐसी हो जो उसमें छूट गई हो।

नाचीज़ के मोहतरम बुज़ुर्ग हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद आशिक़ इलाही साहिब मुहाजिर मदनी मद्-द ज़िल्लहुमुल्-आली को भी अल्लाह तआला ने इस ख़ास ज़रूरत के पूरा करने के लिए तौफ़ीक़ अता फ़रमाई है, उनकी अनेक छोटी-बड़ी किताबें बुनियादी तौर पर औरतों ही के लिए लिखी गई हैं, और औरतों के हल्क़ों में उनका आम और पूरा नफ़ा देखने में आया है।

दारुल-उलूम कराची से जब मासिक रिसाला **"अल्-बलाग़"** मुझ नाचीज़ के सम्पादन में निकलना शुरू हुआ तो नाचीज़ ने उनसे दरख़्वास्त की कि रिसाले में औरतों के लिए कोई अहम मज़मून होना चाहिए और मेरी ख़्वाहिश है कि उसको आप लिखें। हज़रत मौलाना ने औरतों के लिए मज़ामीन का जो उनवान चुना वह उर्दू के लिहाज़ से अछूता भी था और बेहद ज़रूरत व फ़ायदा पहुँचाने वाला भी, यह मौज़ू (विषय) था **"मुसलमान औरतों से आँ-हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बातें"**। इस उनवान के तहत हज़रत मौलाना उन हदीसों की तशरीह (व्याख्या) पेश फ़रमाते थे जिनमें या तो आँ-हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने औरतों से बराहे-रास्त ख़िताब फ़रमाया या उनके लिये कोई क़ौली या अमली हिदायत दी जो औरतों ने रिवायत की हैं।

मज़ामीन का यह सिलसिला इस क़द्र मक़बूल और लाभदायक साबित हुआ कि औरतें इसका पहले से इन्तिज़ार करतीं, और बाज़ जगह जमा होकर भी एक-दूसरी को सुनाती थीं। इस तरह औरतों के लिये हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हदीसों और उनकी तशरीहात का ऐसा नादिर मजमूआ तैयार हो गया जिसकी मिसाल उर्दू में तो यक़ीनन नहीं है। मुझ नाचीज़ की जानकारी की हद तक अरबी ज़बान में भी इसकी नज़ीर (यानी इस जैसी कोई किताब) नहीं।

मज़ामीन का यह सिलसिला कई सालों तक चला, और जब हज़रत मौलाना मद्-द ज़िल्लहुम मदीना तय्यिबा की तरफ़ हिजरत फ़रमा गये उस वक़्त यह सिलसिला बन्द हुआ। पढ़ने वालों का इसरार तो पहले से था कि इन मज़ामीन को किताबी शक्ल में शाया किया जाए, अल्लाह का शुक्र है कि

मौलाना के दिल में भी इसका जज़्बा और तक़ाज़ा पैदा हो गया और उन्होंने किताबी शक्ल के लिये नये सिरे से उन मज़ामीन पर दोबारा नज़र डाली। उनको बाक़ायदा तरतीब दिया और उनमें बहुत-से क़ीमती इज़ाफ़े फ़रमाये। अब अल्लाह के फ़ज़्ल से यह किताब ऐसी है कि हक़ीक़त में मुसलमान औरतों के लिए इन्तिहाई क़ीमती तोहफ़े की हैसियत रखती है और इसकी क़द्र व क़ीमत का अन्दाज़ा इसके पढ़ने ही से लगाया जा सकता है।

अल्लाह तआ़ला ने हज़रत मौलाना मुहम्मद आ़शिक़ इलाही साहिब मद्-द ज़िल्लहुम को इल्म व फ़ज़्ल के साथ इख़्लास और नेक-नीयती की दौलत से मालामाल फ़रमाया है, और उन्हें एक दर्दमन्द दिल की नेमत से नवाज़ा है, इसलिये उनके सादा अल्फ़ाज़ में दिलों पर असर करने की वह ग़ैर-मामूली सलाहियत है जो फ़साहत और बलाग़त और उर्दू अदबियत से ज़्यादा एक ख़ुलूस भरे जज़्बे की पैदावार होती है।

मौलाना की इबारत सादा और आसान, बयान का अन्दाज़ हल्का-फुल्का, अल्फ़ाज़ आ़म-फ़हम और अन्दाज़ व तरीक़ा असरदार है, और अल्लाह तआ़ला की रहमत से उम्मीद है कि उनकी यह किताब इन्शा-अल्लाह बहुत-सी औरतों की इस्लाह और सुधार का ज़रिया साबित होगी। ज़रूरत इस बात की है कि इस किताब को **"बहिश्ती ज़ेवर"** के साथ औरतों के निसाब (तालीमी कोर्स) का हिस्सा बनाया जाये। उन्हीं उम्र के शुरूआती दौर ही में इसका मुताला (अध्यन) कराया जाए और शादी में बतौर दहेज़ दिया जाये।

दिल से दुआ़ है कि अल्लाह तआ़ला मुसलमान औरतों को इस किताब की सही क़द्र करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, इसे उनकी तालीम व तरबियत का असरदार ज़रिया बनाये, और इसे अपनी बारगाह में क़बूलियत का सम्मान अ़ता फ़रमाकर हज़रत मुअल्लिफ़ मद्-द ज़िल्लहुम को और किताब के प्रकाशन में हिस्सा लेने वाले तमाम अफ़राद को बेहतरीन बदला अ़ता फ़रमाये, आमीन।

अल्लाह ही है मदद करने वाला और वही है जिसपर भरोसा किया जाए।

10 ज़ीक़ादा 1401 हिजरी

नाचीज़

मुहम्मद तक़ी उस्मानी उफ़ि-य अ़न्हु

ख़ादिमे तलबा दारुल-उलूम कराची न० 14

लेखक की गुज़ारिश

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

الحمد لله رب العالمين و الصلوة و السلام على سيد المرسلين

محمد و اله واصحابه اجمعين

अम्मा बादः अल्लाह पाक का इनाम है कि इस आजिज़ के कलम से बड़ी तायदाद में दीनी रिसाले निकल चुके हैं, जो कुरआन व हदीसों की तालीमात पर आधारित हैं। उन रिसालों में सैकड़ों हदीसों की तशरीह और तर्जुमा आ चुका है। ये रिसाले अल्हम्दु-लिल्लाह अवाम और ख़्वास में बहुत मकबूल हैं और इन्शा-अल्लाह तआला अल्लाह पाक की बारगाह में भी मक़बूल हो चुके हैं, उम्मीद है कि अल्लाह पाक इस थोड़ी-सी मेहनत पर जो दीन के फैलाने में लग गई बहुत-बहुत ज़्यादा अज्र व सवाब से नवाज़ेंगे।

मुहर्रम 1387 हिजरी से कराची से मासिक रिसाला "अल्-बलाग़" शाया होना शुरू हुआ जो मुफ़्ती-ए-आज़म पाकिस्तान हज़रत मौलाना मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि की सरपरस्ती में लगातार आठ साल तक पाबन्दी से निकलता रहा, और अब हज़रत मुफ़्ती साहिब की वफ़ात के बाद भी अल्हम्दु-लिल्लाह बराबर शाया हो रहा है। जब अल्-बलाग़ जारी हुआ तो रिसाले के सम्पादक मौलाना मुहम्मद तकी उस्मानी दामत बरकातुहुम (हज़रत मुफ़्ती साहिब के साहिबज़ादे) ने मुझ नाचीज़ के ज़िम्मे औरतों के लिये इस्लाही मज़ामीन लिखना तजवीज़ फ़रमाया। यह नाचीज़ न मेयारी उर्दू जानता है न अदबी मज़ामीन लिखने पर क़ादिर है, लेकिन यह समझकर अहक़र ने उनका हुक्म मान लिया कि औरतों से मुताल्लिक़ जो रिवायतें हदीस की किताबों में नकल की गयी हैं उनका तर्जुमा लिखकर हर महीने दे दिया करूँगा और कुछ ज़रूरी तशरीह (व्याख्या) अपनी सीधी-सादी ज़बान में उर्दू में कर दिया करूँगा। चुनाँचे अहक़र ने तक़रीबन हर महीने कुछ-न-कुछ लिखना शुरू कर दिया जो बराबर "अल्-बलाग़" के पन्नों में सालों-साल क़िस्तवार शाया होता रहा। अल्-बलाग़ के पढ़ने वालों से जब मुलाक़ातें होतीं तो मेरे मज़मून को बहुत फ़ायदेमन्द बताते और जब किसी महीने नाग़ा होता तो दफ़्तर

अल्-बलाग़ में शिकायतें आनी शुरू हो जातीं, जिससे अन्दाज़ा हुआ कि अल्हम्दु-लिल्लाह अवाम व ख़्वास में यह मज़मून बहुत मक़बूल हुआ है और सब इसका नफ़ा महसूस करते हैं। अल्लाह पाक ने अपने महबूब सय्यदे अबरार सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के कलाम की मक़बूलियत को नाफ़े होने में मक़बूलियत से महरूम न फ़रमाया। जब काफ़ी तायदाद में मुबारक हदीसें मय तर्जुमा अल्-बलाग़ के पन्नों पर आ गईं तो अहक़र को ख़्याल हुआ कि उनको किताबी शक्ल में शाया किया जाये, साथ ही दूसरे हज़रात की तरफ़ से भी इसका तक़ाज़ा हुआ। अहक़र ने शायाशुदा मज़ामीन पर नज़र डाली तो महसूस हुआ कि मुसलसल क़िस्तवार जिस तरह शाया हुए थे, किताबी सूरत में उसी तरह शाया कर देना मुनासिब न होगा क्योंकि किताबी सूरत में जिस तरह तरतीब में लाने की ज़रूरत है वह तरतीब अल्-बलाग़ की क़िस्तों में मलहूज़ न रही थी। लिहाज़ा अहक़र ने अल्-बलाग़ में शायाशुदा क़िस्तों को एक मुरत्तब किताब बनाया तो अच्छी-ख़ासी बड़ी किताब तैयार हो गयी जो पढ़ने वालों के हाथों में है। इसकी तरतीब इस तरह रखी है कि पहले किताबुल-ईमान फिर किताबुल-वुज़ू व ग़ुस्ल, उसके बाद किताबुस्-सलात किताबुज़्-ज़कात किताबुस्-सौम किताबुल्-हज किताब फ़ज़ाइले-क़ुरआन किताबुज़्-ज़िक्र वद्-दुआ किताबुन्-निकाह किताबुत्- तलाक़ किताब तरबियते-औलाद वग़ैरह एक तरतीब से आ गयी है।

किताबी सूरत में लाने के लिये इसकी तरतीब और इसके बाब (अध्याय) बनाने का काम शुरू किया तो ख़्याल हुआ कि बहुत-सी हदीसें जो अल्-बलाग़ में शाया नहीं हुईं उनको भी किताब का हिस्सा बना दिया जाये, लिहाज़ा ऐसी बहुत-सी हदीसों का तर्जुमा व शरह लिखकर किताब का हिस्सा बना दिया जो अल्-बलाग़ में शाया नहीं हुई थीं। किताबुल- ईमान तो तक़रीबन सब ही बाद में लिखी है। यह किताब अपनी संपूर्णता के एतिबार से **"बहिश्ती ज़ेवर"** के बाद पहली बड़ी किताब है जिसका मौज़ू औरतें और उनके मसाइल हैं। (मुफ़ीद तो सबके लिये है) मगर ख़ुसूसी ख़िताब औरतों से है। किताब की तरतीब में इस बात का ख़ास ख़्याल रखा है कि हदीसों की रिवायत करने वाली सहाबी ख़्वातीन हों और मसाइल भी वे हों जो औरतों से मुताल्लिक़ हों, और कहीं-कहीं ज़रूरत व स्थान के मुताबिक़ सहाबी मर्दों रज़ियल्लाहु अन्हुम

की रिवायत की हुई हदीसें भी आ गयी हैं। कहीं-कहीं ज़रूरत की बिना पर बाज़े मज़ामीन को दोहराया भी गया है। चूँकि नसीहत और समझाना मक़सद है इसलिये तकरार (यानी दोबारा लाना और दोहराना) मुफ़ीद ही है।

हदीसों की ज़रूरी तशरीहात के साथ मौजूदा ज़माने के समाज पर जगह-जगह तब्सिरा किया गया है, और मौजूदा रिवाज और समाज में जो इस्लाम के ख़िलाफ़ राहें इख़्तियार कर ली गयी हैं ख़ास तौर से उनकी निशानदेही की गयी है, और यह सब इख़्लास पर मब्नी (आधारित) है किसी को बुरा-भला कहना या किसी पर ताना मारना मक़सद नहीं है।

अल्-बलाग़ में अहक़र के इस मज़मून का उनवान **"ख़्वातीने इस्लाम से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बातें"** था किताबी सूरत में लाने के बाद नाम को बाक़ी रखते हुए मुख़्तसर नाम **"तोहफ़ा-ए-ख़्वातीन"** भी इसके साथ जोड़ता हूँ और अब इसका पूरा नाम **"तोहफ़ा-ए-ख़्वातीन उर्फ़ मुसलमान औ़रतों से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बातें"** तजवीज़ कर रहा हूँ। अल्लाह का शुक्र व एहसान है कि बच्चियों के दहेज़ में देने के लिये बेहतरीन किताब तैयार हो गयी है। हज़रते अक़्दस मुफ़्ती साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि की ज़िन्दगी ही में इसकी तरतीब का काम शुरू हो गया था, मगर मैं अपनी सुस्ती और काहिली की वजह से उनके सामने पूरा न कर सका, हज़रत मुफ़्ती साहिब आज इस दुनिया में होते तो इस मजमूए को देखकर बहुत ख़ुश होते। अल्लाह तआ़ला हज़रत मुफ़्ती साहिब पर लाख-लाख रहमतों की बारिश बरसाये जिन्होंने "दारुल-उलूम कराची" क़ायम किया, फिर दारुल-उलूम का तर्जुमान मासिक रिसाला "अल्-बलाग़" जारी फ़रमाया, जिसमें इस किताब का अक्सर हिस्सा शाया हुआ, और अब मक्तबा दारुल-उलूम कराची से ही पहली बार यह किताब शाया हो रही है। (1)

दुनिया की सारी चहल-पहल और गहमा-गहमी तन्हा मर्दों के वजूद से नहीं है बल्कि इसके आबाद रखने और इसके चलाने की सूरतों पर ग़ौर करने में औ़रतों का भी बड़ा हिस्सा है। ज़िन्दगी के असबाब को बाक़ी रखने और दुनिया की ज़रूरतों को पूरा करने को हर औ़रत व मर्द (अपनी समझ और

(1) अल्लाह का शुक्र है कि इस किताब को नये अन्दाज़ में उर्दू और हिन्दी दोनों भाषाओं के अन्दर शाया करने का शर्फ़ **फ़रीद बुक डिपो (प्रा. लि.) दिल्ली** को हासिल हो रहा है।

मुहम्मद नासिर ख़ान

अक़्ल और हिम्मत के मुताबिक़) अपनी ज़िम्मेदारी समझता है। मकान, दुकान, जायदाद, आल व औलाद को सब अपनी चीज़ें समझते हैं हालाँकि ये चीज़ें फ़ानी और जुदा होने वाली हैं। दीन और दीन से संबन्धित चीज़ें भी मुसलमान का ज़ाती सरमाया हैं और ऐसा सरमाया है जो कभी बेवफ़ाई न करे और जिसकी मेहनत व कोशिश कभी बेकार और ज़ाया न हो।

जिस तरह दुनिया के लिये मेहनत व कोशिश तमाम मर्द व औरत करते हैं और दुनिया के कारोबार चलाने में एक-दूसरे की मदद और सहयोग करते हैं, इसी तरह बल्कि इससे भी ज़्यादा दीन और दीन को ज़िन्दगियों में जारी रखना और दीनी इल्म व अमल को बाकी रखना हर मर्द व औरत की ज़िम्मेदारी है। क़ुरआन शरीफ़ और हदीस शरीफ़ में बहुत-सी जगह औरतों को ख़ुसूसी ख़िताब भी फ़रमाया है, और अक्सर मौक़ों में मर्दों से ख़िताब में औरतों को भी शामिल कर लिया गया है। यह बात सब जानते हैं कि **"इस्लामी फ़िक़्ह"** में औरतों के लिये ख़ुसूसी अहकाम भी बहुत हैं, और ऐसे अहकाम तो बहुत ज़्यादा हैं जिनमें मर्द व औरत दोनों शामिल हैं। दीन का इल्म व अमल जब मर्दों और औरतों दोनों ही फ़रीक़ के लिये है और दीन का सीखना और सिखाना सबकी ज़िम्मेदारी है तो अपने फ़रीज़े को अदा करने के लिये हर मर्द व औरत को कोशिश करना ज़रूरी है। इस्लाम के इब्तिदाई दौर की औरतों ने दीन को फैलाने और दीन का परचार करने में बड़ी-बड़ी क़ुरबानियाँ दी हैं, तारीख़ की गवाही है कि सबसे पहले दीन इस्लाम क़बूल करने वाली शख़्सियत औरत ही थी, यानी हज़रत ख़दीजा रज़ियल्लाहु अन्हा, और जिसने सबसे पहले इस्लाम क़बूल करने की सज़ा में शहादत का जाम पिया वह भी औरत ही थी, (यानी हज़रत अम्मार रज़ियल्लाहु अन्हु की माँ हज़रत सुमय्या रज़ियल्लाहु अन्हा) अबू जहल बदबख़्त के नेज़ा मारने से हज़रत सुमय्या रज़ियल्लाहु अन्हा शहीद हुईं, उनसे पहले कोई भी मर्द व औरत शहीद न हुआ था।

यह भी मशहूर वाक़िआ है कि हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु के इस्लाम क़बूल करने का सबब उनकी बहन हज़रत फ़ातिमा बिन्ते ख़त्ताब रज़ियल्लाहु अन्हा बनी थीं। और यह भी सीरत व तारीख़ की किताबों में मौजूद है कि जब हिजरत का सिलसिला शुरू हुआ तो जहाँ अपने दीन व ईमान की

हिफ़ाज़त के लिये मर्दों ने हिजरत की तो औरतें भी साथ थीं, फिर उन पाकीज़ा औरतों ने जिहादों में भी हिस्से लिये और दीन का झण्डा बुलन्द देखने के लिये अपने शौहरों और बच्चों को जंग के मैदानों में ख़ुशी-ख़ुशी भेजा करती थीं। बल्कि तारीख़ गवाह है कि बाज़ औरतों ने अपने शौहर जिहाद के लिये उकसाकर और ताने देकर मैदाने जंग के लिये रवाना किये। क्या आजकल की औरतें इस्लाम का दम नहीं भरती हैं? क्या उनको इस्लाम से निस्बत और ताल्लुक़ नहीं है? क्या उनको हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की उम्मत होने का दावा नहीं है? अगर दावा है और ज़रूर है तो फिर इस्लाम को सीखने-सिखाने और अपने फ़राइज़ को पहचान कर अमल करने वाला बनने के लिये क्यों हरकत नहीं करती हैं? अक्सर देखा गया है कि लिबास और ज़ेवर में काफ़िर और मुशरिक औरतों की पैरवी करती हैं, अपनी बड़ाई के तसव्वुर में किसी को अपने सामने कुछ नहीं समझतीं, हालाँकि ग़ैर-इस्लामी कामों में आगे हैं, आख़िरत का ज़रा-भी फ़िक्र नहीं, ज़मीन का पैवन्द बनना ज़रूरी है मगर वहाँ के लिये क्या करके लेजा रही हैं, इसका कुछ ध्यान नहीं। नमाज़ पर नमाज़ ग़ारत करती रहती हैं, रोज़े पर रोज़ा छोड़ती चली जाती हैं, ज़ेवर की हिर्स है, मगर ज़कात का ध्यान नहीं, क्या यही मुसलमानी है? मुसलमान औरतों की गोद में सालाना हज़ारों बच्चे परवरिश पाते हैं मगर उन बच्चों को न दीन सिखाया जाता है न दीन के लिये बहादुरी पर उनको उभारा जाता है। लड़के अच्छी-ख़ासी लड़कियाँ बने हुए हैं। अफ़सोस कि लड़कियों को भी माँग- चोटी की इतनी फ़िक्र नहीं जिस क़द्र फ़ैशन और बाल टिप-टॉप का ख़्याल लड़कों को हो गया है। माँ-बाप, बच्चे सब इस धुन में हैं कि किसी तरह अंग्रेज़ ही बन जाते, काश! मुसलमान न होते, मुसलमान होकर मुल्ला-मौलवी के फ़तवों का निशाना बनना पड़ा, इस्लाम की नागहानी मुसीबत को क्योंकर रोका जाए, न मुसलमान होते न पर्दे की पाबन्दी के लिये कोई कहता, न क्लब जाने से कोई रोकता, न फ़िल्मी नायका बनने की मुमानअ़त की जाती, न तस्वीरें छापने से कोई बाज़ रखता, ये ख़्यालात हैं मुसलमान कहलाने वालों के। (अल्लाह अपनी पनाह में रखे)।

अच्छे-अच्छे दीनदार कहलाये जाने वाले जिनकी दीनदारी का चर्चा है और क़ुरआन व हदीस के पढ़ाने वाले अपनी औलाद को क़ुरआन व हदीस

पढ़ाने के लिये राज़ी नहीं हैं। ज़बान से अगरचे न कहें मगर अमल इस बात का गवाह है कि उनके अन्दर की आवाज़ यही है कि हम तो मुल्ला बनकर पछताये, दीन पढ़ाकर अपनी औलाद को तो नास न करना चाहिए, अल्लाह की पनाह। अगर अन्दरूने ख़ाना ज़िन्दगियों का जायज़ा लेकर देखा जाये तो दीनदारी की शोहरत रखने वालों का पूरा समाज अंग्रेज़ नज़र आयेगा। छोटे-बड़े सब इंगलिश के फ़ैशन में डूबे हुए मिलेंगे, लड़कियों के सरों पर दुपट्टा न होगा, फ़रॉक बिना आसतीन के होंगे, आधा सीना और कमर कपड़े से बाहर होगी। हक़ीक़त यह है कि इस्लाम का नाम लेने वाले और पैग़म्बरे इस्लाम मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तरफ़ निस्बत करके मुहम्मदी बनने वाले अपनी औलाद को जो आगे चलकर दूसरी नस्ल के माँ-बाप बनेंगे, बड़ी बेदर्दी से अल्लाह जल्ल शानुहू और सरताजे अम्बिया सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुहब्बत और इताअत से बहुत दूर करने की तदबीरें इख़्तियार कर रहे हैं, फिर उसपर नाज़ यह है कि नबी-ए-पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुहब्बत का दावा भी करते हैं। इस्लाम का दावा करने वालों को दीन का इल्म पढ़ाने और रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के नमूने पर चलने में शर्म महसूस होती है, बेसर-पैर के मुहब्बते रसूल के दावे क्योंकर सही हो सकते हैं, जिनके ज़ेहन और दिमाग़ दूसरों के तरीक़ों को अच्छा समझते हों और ज़िन्दगी गुज़ारने का तरीक़ा और आमाल व इख़्लास में यूरोप के बेदीनों और ख़ुदा को भूलने वालों नफ़्स-परस्त आदमी-नुमा भेड़ियों की पैरवी को फ़ख़्र समझते हों।

इस्लाम तो पाकीज़ा दीन है, ख़ुदा तआला की इबादत सिखाता है, आख़िरत के लिये दौड़-धूप करने की तल्क़ीन करता है, शर्म व हया की तालीम देता है, हराम व हलाल की तफ़सीलात से आगाह करता है, बेमुहार ऊँट की तरह आज़ाद नहीं छोड़ता कि इनसान जो चाहे करता फिरे, इनसान इनसान है, इनसानियत के बेशुमार तक़ाज़े हैं, इस्लाम उन तक़ाज़ों से बाख़बर करता है और हैवानियत, दरिन्दगी और जानवरों की ज़िन्दगी गुज़ारने से इनसान को बचाता है। नफ़्स-परस्तों को इस्लाम की यह गिरफ़्त नागवार होती है, और नफ़्स-परस्ती में सबको शरीक करना चाहते हैं। कहीं औरतों की आज़ादी के लिये मज़मून लिखे जा रहे हैं, कहीं पर्दे की मुख़ालफ़त हो रही है, और अजीब बात यह है कि इस्लामियात की डिग्रियाँ लेने वाले इस्लाम के

ख़िलाफ़ बोलते हैं। इस्लाम पर लेक्चर हो रहा है, लड़कियाँ-लड़के सब बेपर्दा होकर क्लास में बैठते हैं, और ऐन इस्लामी लेक्चर के वक़्त इस्लाम की ख़िलाफ़वर्ज़ी हो रही है। गुज़िश्ता सदियों में जहालत की वजह से इस्लाम और उसके आमाल से दूरी थी, और आजकल इल्म, रिसर्च और नाम की तरक़्क़ी और पश्चिम से हासिल की हुई नई तारीकी (अंधेरी) जिसे नई रोशनी कहते हैं, इस्लाम के समझने से और उसके उलूम से जुड़ा होने से और उसके तक़ाज़ों पर अमल करने से रोक रही है। आज जबकि हमारा समाज इस्लाम का दावेदार होते हुए दिन-ब-दिन इस्लाम से दूर होता जा रहा है और ज़िन्दगी के हर शोबे में बेदीनी जगह पकड़ती जा रही है, और रेडियो, टी. वी. गंदा लिट्रेचर, नाविलों, अफ़सानों की बोहतात ने पूरी तरह ज़ेहनों को ज़हरीला कर दिया है। ऐसे में बुराइयों और गंदगियों से बचने की सख़्त ज़रूरत है, हर शख़्स अपनी हिम्मत और कोशिश के मुताबिक़ इसके लिये कोशिश करे तो इन्शा-अल्लाह तआला फिर दीनी हवाएँ चलने लगेंगी। हर आदमी अपने स्तर पर इसकी पूरी कोशिश करे कि समाज से बुराइयों का ख़ात्मा हो हमारा समाज एक स्वस्थ समाज बन जाए। ख़ास तौर पर मुसलमानों को चाहिए कि वे क़ुरआन व हदीस की बताई हुई तालीमात पर अमल करने वाले बनें, इससे उनके दीन व दुनिया का सुधार भी होगा और एक अच्छा और साफ़-सुथरा समाज भी वजूद में आएगा। पत्रकार और मज़ामीन लिखने वाले अपने अख़्बारों और रिसालों में बुराइयों के ख़िलाफ़ अपना क़लम इस्तेमाल करें, जिस तरह सबने मिलकर समाज को बिगाड़ा है उसी तरह सब हिम्मत करके उसकी इस्लाह के लिये क़दम और क़लम उठायें और हर मुमकिन तदबीर काम में लायें।

यूँ तो पूरे ही समाज के सुधार की ज़रूरत है लेकिन ख़ुसूसियत के साथ औरतों की इस्लाह और सुधार पर ज़्यादा तवज्जोह देना ज़रूरी है, क्योंकि हर बच्चे का सबसे पहला स्कूल माँ की गोद है, माँ सही मुसलमान होगी तो बच्चे को भी इस्लाम सिखायेगी और इस्लाम के अहकाम व आदाब की तालीम देगी।

इस किताब में इस्लाम के तक़ाज़े समझाने की कोशिश की गयी है और जगह-जगह मौजूदा हालात पर तबसिरा (टिप्पणी) करते हुए मुसलमानों को झिंझोड़ा है, जो इख़्लास और हमदर्दी पर मब्नी (आधारित) है। अल्लाह जल्ल शानुहू से उम्मीद है कि यह किताब अंधेरे में रोशन चिराग़ साबित होगी और

हर तबके के मुसलमानों के लिये लाभदायक और मुफ़ीद होगी। जो हज़रात इससे फ़ायदा उठायें अहकर नाचीज़, मेरे माँ-बाप, उस्तादों, रिसाला ''अल्-बलाग़'' के संस्थापक हज़रत मुफ़्ती-ए-आज़म मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब और इस रिसाले के सम्पादक और इस किताब में हर तरह का सहयोग करने वाले और इसके प्रकाशन का बन्दोबस्त करने वालों को अपनी मख़्सूस दुआओं में ज़रूर याद फ़रमायें।

रब्बे करीम की रहमत का मोहताज

मुहम्मद आशिक़ इलाही बुलन्द शहरी
मदीना मुनव्वरा 1 रजब 1399 हिजरी

मुसलमान औरतों से

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बातें

* औरतों के लिए *

ईमान और अक़ीदों का बयान

लेखक

हज़रत मौलाना आशिक़ इलाही साहिब बुलन्द शहरी

रहमतुल्लाहि अलैहि

अनुवादक: मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा. लि.)

422, मटिया महल, उर्दू मार्किट, जामा मस्जिद

देहली-110006

ईमान और अक़ीदों का बयान

بِسۡمِ اللّٰهِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِيۡمِ

نَحۡمَدُهٗ وَ نُصَلِّیۡ عَلٰی رَسُوۡلِهِ الۡکَرِیۡمِ

हदीसः (1) हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हु ने बयान फ़रमाया कि एक दिन हम हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में बैठे हुए थे कि अचानक एक शख़्स पर नज़र पड़ी जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर होने के लिए चला आ रहा था, उसके कपड़े बहुत ज़्यादा सफ़ेद और बाल बहुत ज़्यादा काले थे। उसके हाल से सफ़र के आसार ज़ाहिर नहीं हो रहे थे, और उसे हममें से कोई पहचानता (भी) न था। (उसके इस हाल से हैरत इसलिए हुई कि मदीना मुनव्वरा का रहने वाला होता तो उसे हम पहचानते होते, और अगर मुसाफ़िर था तो उसपर सफ़र के आसार ज़ाहिर होते और कपड़े मैले होते। उस वक़्त तो ये भेद हमपर न खुला, बाद में नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बताने से इस भेद का पता चला) वह शख़्स चलते-चलते (मजलिस तक) आ पहुँचा यहाँ तक कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से इस क़द्र क़रीब होकर बैठ गया कि अपने घुटने नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के घुटनों से मिला दिये, और अपनी हथेलियाँ आपकी रानों पर रख दीं, और उसने सवाल कियाः

ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! मुझे बताइए कि इस्लाम क्या है? नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः इस्लाम यह है कि तू **"ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्-रसूलुल्लाहि"** की गवाही दे, और नमाज़ क़ायम करे, और ज़कात दे, और रमज़ान के रोज़े रखे, और बैतुल्लाह का हज करे, बशर्ते कि तुझे वहाँ तक पहुँचने की ताक़त व गुंजाइश हो।

इस जवाब को सुनकर उस शख़्स ने कहाः **आपने ठीक फ़रमाया।** हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि हमको उसकी इस बात पर ताज्जुब हुआ कि सवाल भी करता है और फिर ऐसे अन्दाज़ में ठीक बताता

है (जैसे पहले से जानता हो)। फिर उसने कहा कि बताइए ईमान क्या है? नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः ईमान यह है कि तू अल्लाह पर ईमान लाए और उसके फ़रिश्तों पर और उसकी किताबों पर और उसके रसूलों पर और आख़िरत के दिन पर, और तक़दीर पर, भली हो या बुरी। ये जवाब सुनकर उसने फिर वही कहाः **आपने ठीक फ़रमाया।**

फिर उसने सवाल किया, अच्छा बता दीजिए एहसान क्या है? नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः एहसान यह है कि तू अल्लाह की इस तरह इबादत करे जैसे तू उसे देख रहा है, सो अगर तू उसे नहीं देख रहा है (यानी अगर तुझे ऐसा ध्यान जमाने सोचने की कुव्वत हासिल नहीं है कि तू यह समझते हुए इबादत करे कि मैं अल्लाह को देख रहा हूँ तो कम-से-कम ये समझ कि) बेशक अल्लाह मुझे देख रहा है।

फिर उसने सवाल किया कि अच्छा यह बताइए कि क़ियामत कब आयेगी? नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि सवाल करने वाला और जिससे सवाल किया है दोनों इस बारे में बराबर हैं। (यानी न मुझे मालूम है न तुम वाक़िफ़ हो)।

फिर उसने कहा अच्छा तो उसकी निशानियाँ बता दीजिये? नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया उसकी (बाज़ निशानियाँ ये हैं) औरतें ऐसी लड़कियों को जन्म दें जो अपनी माँ की सरदार हों। और एक निशानी यह है कि तू नंगे पैर नंगे बदन वाले फ़क़ीरों और बकरियाँ चराने वालों को देखे कि ऊँचे-ऊँचे मकान बनाकर आपस में फ़ख़्र करें।

हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि इस सवाल और जवाब के बाद वह शख़्स चला गया और मैं बहुत देर तक (सवाल से) रुका रहा। फिर नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ख़ुद ही सवाल फ़रमाया कि ऐ उमर! क्या तुम जानते हो कि यह साईल कौन था? मैंने अ़र्ज़ किया, अल्लाह और उसका रसूल ही ख़ूब जानते हैं। नबी करीम सल्ल० ने फ़रमाया कि यह जिबराईल थे, इस ग़रज़ से आए थे कि (तुम्हारे सामने सवाल करके) तुम्हें तुम्हारा दीन सिखाएँ। (मुस्लिम शरीफ़)

तशरीहः यह हदीस **"हदीसे जिबराईल"** के नाम से मशहूर है, जो बहुत अहम बातों पर मुश्तमिल है। इसमें तमाम ज़ाहिरी और बातिनी आमाल आ गए। शरीअ़त के तमाम उलूम को हावी है। जिस तरह सूरः फ़ातिहा को

"उम्मुल कुरआन" कहा जाता है, इसी तरह इस हदीस को "उम्मुल हदीस" कहना मुनासिब है।

बहुत-सी बार हज़राते सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम दरबारे रिसालत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के रौब की वजह से कुछ दरियाफ़्त नहीं कर सकते थे, और यह चाहा करते थे कि कोई देहाती आ जाए और वह कुछ दरियाफ़्त कर ले तो हमको भी जानकारी हो जाए। इसी रौब को अल्लाह तआला ने हज़राते सहाबा रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम के मिज़ाजों से इस तरह दूर फ़रमाया कि हज़रत जिबराईल अलैहिस्सलाम को भेजा, ताकि वह अपने हाल से भी तालीम दें और सवाल से भी।

हज़रत जिबराईल मस्जिदे नबवी में तालिबे इल्म की हैसियत से

चूनाँचे सबसे पहले उन्होंने अपने अमल से यह तालीम दी कि साफ़-सुथरे कपड़े पहने हुए आए, और इस तरह बता दिया कि दीन का इल्म हासिल करने वाले को अपने शैख़ की ख़िदमत में अच्छे हाल में पहुँचना चाहिये। साथ ही उन्होंने अपने अमल से यह भी बताया कि उस्ताद के करीब बैठना चाहिये, जितना करीब हो जाए बेहतर है। उसके बाद उन्होंने सवालात शुरू किये।

अरकाने इस्लाम

हज़रत जिबराईल अलैहिस्सलाम ने सबसे पहले इस्लाम के बारे में सवाल किया। हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि व सल्लम ने उनके सवाल का जवाब देते हुए इस्लाम के पाँचों अरकान इरशाद फ़रमा दिये:

(1) कलिमा-ए-तैय्यब की गवाही देना (2) नमाज़ क़ायम करना (3) ज़कात देना (4) रमज़ान मुबारक के रोज़े रखना (5) बैतुल्लाह का हज करना, बशर्ते कि वहाँ तक पहुँचने की गुंजाइश और हिम्मत हो।

एक रिवायत में है (जो आगे आ रही है) कि इन पाँचों चीज़ों पर इस्लाम की बुनियाद है। इस्लाम गोया एक मकान है जो इन सतूनों पर क़ायम है।

इस्लाम के बुनियादी अक़ीदे

जब सवाल करने वाले ने ईमान के बारे में सवाल किया तो नबी करीम

सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने छह चीज़ों पर ईमान लाने का ज़िक्र फ़रमा दिया (जिसको हमारे उर्फ़ में "ईमाने मुफ़स्सल" कहा जाता है)।

(1) अल्लाह पर ईमान लाना, यानी उसकी ज़ात व सिफ़ात को उसी तरह मानना जिस तरह क़ुरआन और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बताया है।

(2) फ़रिश्तों पर ईमान लाना, उनको ख़ुदा की मख़्लूक़ और उसका फ़रमाँबरदार बन्दा समझना, और उनके वजूद का क़ायल होना।

(3) अल्लाह की किताबों पर ईमान लाना, उसकी तमाम किताबों को हक़ समझना और इसका क़ायल होना कि उसने अपने बन्दों की हिदायत के लिए मुख़्तलिफ़ पैग़म्बरों पर मुख़्तलिफ़ किताबें नाज़िल फ़रमाई हैं, और उनमें जो कुछ है सब हक़ है। अल्लाह ने जिस किताब पर जिस-जिस वक़्त अमल कराना चाहा अपने बन्दों को हुक्म दिया, और अब उसने क़ियामत तक सिर्फ़ अपनी आख़िरी किताब क़ुरआन मजीद को अमल के लिए तजवीज़ फ़रमाया है जो आख़िरी नबी हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर नाज़िल फ़रमाई।

(4) अल्लाह के पैग़म्बरों पर ईमान लाना कि अल्लाह ने अपने बन्दों की हिदायत के लिए बड़ी तायदाद में पैग़म्बर भेजे हैं, मैं उन सबपर ईमान रखता हूँ यानी सबको अल्लाह का पैग़म्बर मानता हूँ। सब सही रास्ता बताने वाले थे, वे सारी मख़्लूक़ से अफ़ज़ल हैं। उनकी ज़रा-सी गुस्ताख़ी करना भी कुफ़्र है। सबसे आख़िर में अल्लाह ने हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को ख़ातिमुन्-नबिय्यीन (यानी नबियों के सिलसिले को ख़त्म करने वाला) बनाकर भेजा। वह क़ियामत तक सारे आलम के वास्ते अल्लाह के रसूल हैं, उनका मानना और उनके लाए हुए अहकामों पर अमल करना फ़र्ज़ और ज़रूरी है, और उन्होंने जो अक़ीदे बताए हैं उनका मानना फ़र्ज़ है, उनके बाद कोई नबी नहीं हो सकता। जो शख़्स उनके बाद किसी को नबी या रसूल माने वह अल्लाह तआला के वाज़ेह इरशाद का इनकारी है, चाहे उसका नाम मुसलमानों के नामों की तरह हो। अल्लाह तआला का वह इरशाद यह है: व लाकिर्रसूलल्लाहि व ख़ातमन्नबिय्यी-न (यानी आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अल्लाह के रसूल और आख़िरी नबी हैं)।

(5) आख़िरत के दिन पर ईमान लाना, यानी क़ियामत आने और मरने

के बाद ज़िन्दा हो उठने और हिसाब-किताब, पुलसिरात, जन्नत और जहन्नम और वे वाक़िआत जिनका ज़िक्र क़ुरआन व हदीस में ख़ास क़ियामत के दिन और उसके बाद के हालात के सिलसिले में आया है, उन सबको हक़ जानना और मानना।

(6) तक़दीर पर ईमान लाना, यानी इसको मानना कि अल्लाह जल्ल शानुहू ने इस दुनियावी कारख़ाने के हर बनाव-बिगाड़ और अ़दम व वजूद (यानी किसी चीज़ के होने और न होने) के मुताल्लिक़ अन्दाज़े मुक़र्रर फ़रमाये हैं कि ऐसा-ऐसा होगा, जिसके हक़ में अल्लाह तआ़ला ने जो भी अच्छाई व बुराई मुक़र्रर फ़रमाई है वह होकर रहेगी।

इन छह चीज़ों पर ईमान लाना, इनको बग़ैर किसी शक और शुब्हे के सच्चे दिल से मानना ईमान है। जितने भी अ़क़ीदे और आमाल हैं वे इन छह में आ जाते हैं।

एहसान क्या है?

जब साईल ने दरियाफ़्त किया कि एहसान क्या है? तो दोनों जहान के सरदार सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला की इस तरह इबादत करो जैसे तुम उसको देख रहे हो, अगर यह मर्तबा तुमको हासिल नहीं तो कम-से-कम यह समझकर तो ज़रूर ही इबादत करो कि ख़ुदा मुझे देख रहा है। ऐसा तसव्वुर करने से इबादत सही अदा होगी और इबादत को बुरे दिल से सुस्ती के साथ अदा न किया जायेगा। जैसे कोई शख़्स अपना मकान मज़दूरों से बनवाये और ख़ुद सामने खड़े होकर काम कराये तो मज़दूर व मिस्त्री ख़ूब दिल लगाकर अच्छी तरह काम करेंगे।

सारे तसव्वुफ़ और तरीक़त का हासिल यही है कि एहसान की सिफ़त पैदा हो जाये। जिन हज़रात को यह सिफ़त हासिल है उनकी ख़िदमत में रहकर और उनकी हिदायात के मुवाफ़िक़ नफ़्स की तरबियत करके यह सिफ़त हासिल हो सकती है।

क़ियामत की चन्द निशानियाँ

उसके बाद उस साईल ने अ़र्ज़ किया की क़ियामत कब आयेगी? तो उसके जवाब में आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि इस सिलसिले में मैं और तुम बराबर हैं। उसने दोबारा सवाल किया कि उसकी

निशानियाँ बता दीजिये? तो आपने क़ियामत से पहले-पहले होने वाली (बेशुमार निशानियों में से) दो निशानियाँ बता दीं।

अव्वल यह कि औरतें ऐसी लड़कियाँ जनने लगें जो अपनी माँओं पर सरदारी करें, यानी ऐसी नाफ़रमान औलाद पैदा होने लगे जिनके अख़्लाक बहुत गिरे हुए हों, जो अपने माँ-बाप पर हुक्म चलाएँ और उनको गुलामों की तरह हुक्म देकर काम कराएँ (जैसा कि आजकल हम अपनी आँखों से देख रहे हैं)। लड़की को बतौर मिसाल ज़िक्र फ़रमाया है वरना इससे लड़की लड़का दोनों मुराद हैं। इसी तरह माँ का ज़िक्र भी बतौर मिसाल है क्योंकि माँ इसकी ज़्यादा हक़दार है कि उसके साथ अच्छा सुलूक और फ़रमाँबरदारी की जाए। जो उसके साथ हाकिमाना बर्ताव करे वह दूसरों के साथ किस तरह शराफ़त और तहज़ीब से पेश आ सकता है?

माँ ऐसी लड़की को जन्म देने लगें जो उनपर हुक्म चलाएँ के और मायने भी बयान किये गये हैं जो हदीस व फ़िक़्ह के जानने पर समझ में आ सकते हैं अ़वाम को उनका समझना मुश्किल है इसलिये यहाँ उनको छोड़ दिया गया, और जो मायने बयान किये हैं यह ज़्यादा स्पष्ट हैं।

इमारतों पर फ़ख़्र करने का रिवाज

क़ियामत की दूसरी निशानी नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह बताई कि नंगे पैर फिरने वाले और नंगे बदन रहने वाले और तंगदस्त लोग जिनके पास तन ढाँकने को न कपड़ा हो और न पैर में डालने को जूता हो और बकरियाँ चराने वाले ऊँचे-ऊँचे मकानात बनाकर फ़ख़्र करने लगेंगे। इसके दो मतलब हो सकते हैं- एक यह कि इन्क़िलाब ज़ाहिर होगा और ऐसे तंगदस्त लोग जिनके पास तन ढाँकने को कपड़ा न हो और पैर में डालने को जूता न हो और उनका गुज़ारा देहाती ज़िन्दगी पर हो, बकरियाँ चरा-चराकर गुज़ारा करते होंगे, उनके पास माल की बोहतात और अधिकता हो जायेगी और अपनी कम-समझी की वजह से उनके नज़दीक उस माल का मसरफ़ (ख़र्च करने की जगह) बस इससे ज़्यादा न होगा कि उसे मिट्टी और गारे में लगा-लगाकर मकानों की बुलन्दियों पर फ़ख़्र (घमण्ड और तकब्बुर) करें।

दूसरा मतलब यह हो सकता है कि इतने तंगदस्त और फ़क़ीर होते हुए भी कि उनके पास जूता और कपड़ा तक न होगा भीख माँग-माँगकर और

बकरियाँ चरा-चराकर थोड़ा-बहुत जमा करके और पेट काट-काटकर बुलन्द मकान बनायेंगे और आपस में फ़ख़्र करेंगे।

गूँगे बहरे नंगे बादशाह

लेकिन पहला मतलब दूसरी रिवायत के ज़्यादा करीब है, जो हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से नक़्ल की गयी है कि:- "जब तू नंगे पैर नंगे बदन वाले गूँगे बहरे लोगों को देखे कि वे ज़मीन के बादशाह बन गये" इस हदीस से मालूम हुआ कि तंगदस्त और मुफ़लिस लोग जो अख़्लाक़ में इतने गिरे हुए हों कि हक़ सुनने से बहरे और हक़ के बोलने से गूँगे होंगे उनको सरदारी और हुकूमत मिल जायेगी और दौलत मिलने पर बुलन्द मकान बना-बनाकर अपनी बड़ाई जताएँगे।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत में यह भी है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने आख़िर में फ़रमाया: 'क़ियामत का इल्म उन्हीं पाँच चीज़ों में है जिनको अल्लाह के सिवा कोई नहीं जानता, जिनका ज़िक्र सूरः लुक़मान की आख़िरी आयत में है।'

हदीसे जिबराईल से ईमान के बुनियादी अक़ीदे मुख़्तसर तौर पर मालूम हुए अब हम इस्लामी अक़ीदों को तफ़सील के साथ लिखते हैं, इनको समझिये और याद कीजिये और बच्चों को पढ़ाइये और समझाकर याद कराइये।

दीन इस्लाम के अलावा कोई दीन अल्लाह के नज़दीक मक़बूल नहीं है

हदीसः (2) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि क़सम है उस ज़ात की जिसके क़ब्ज़े में मुहम्मद की जान है, इस उम्मत (1) में जिस किसी शख़्स को मेरे बारे में यह इल्म होगा कि अल्लाह ने मुझे नबी बनाकर भेजा है और वह मुझपर ईमान लाये बग़ैर मर जाये तो वह ज़रूर दोज़ख़ी होगा, चाहे यहूदी हो चाहे ईसाई हो। (मिश्कात व मुस्लिम शरीफ़)

तशरीहः हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अल्लाह तआ़ला के

(1) इस उम्मत से "उम्मते दावत" यानी वे सब इनसान मुराद हैं जो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के नबी बनाकर भेजे जाने के वक़्त दुनिया में थे या उसके बाद क़ियामत तक पैदा होंगे।

आख़िरी नबी हैं, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बाद कोई नबी न आऐगा। जो (शख़्स) आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बाद किसी को नबी माने वह काफ़िर है चाहे कैसा ही इस्लाम का दावा करे। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को अल्लाह तआ़ला ने जब से नबी बनाकर भेजा है हर मर्द औ़रत इनसान और जिन्न पर आपकी नुबुव्वत पर ईमान लाना और आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लाये हुए दीन का मानना फ़र्ज़ हो गया। क़ियामत तक जितने भी इनसान और जिन्नात होंगे आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सबके नबी हैं और सबकी तरफ़ नबी बनाकर भेजे गये हैं। आपके नबी बनाकर दुनिया में भेजे जाने के बाद दीगर तमाम अम्बिया-ए-किराम अ़लैहिमुस्सलाम की शरीअ़तें मन्सूख़ (यानी निरस्त और रद्द) कर दी गईं। अब नजात का रास्ता सिर्फ़ और सिर्फ़ यही है कि हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर ईमान लायें और आपकी शरीअ़त पर चलें। कोई यहूदी हो या ईसाई, बुद्धिस्ट हो या पारसी, हिन्दू हो या और किसी मज़हब की पैरवी करने वाला, उसकी नजात सिर्फ़ हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर ईमान लाने और आपके दीन पर अ़मल करने में है। कोई कैसा ही इबादत गुज़ार और दुनिया से नाता तोड़ने वाला और रियाज़त व मुजाहदे वाला हो अगर हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर ईमान लाये बग़ैर मर गया तो हमेशा के लिये दोज़ख़ी होगा, उसकी नजात कभी न होगी। क़ुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमाः और हमने तो आपको तमाम लोगों के वास्ते पैग़म्बर बनाकर भेजा है, ख़ुशख़बरी सुनाने वाले और डराने वाले, लेकिन अक्सर लोग नहीं समझते। (सूरः सबा आयत 28)

आजकल लोग ईमान और ईमानियात के जानने और समझने की ज़रूरत महसूस नहीं करते, अक्सर तो ऐसे हैं जो दीन और दुनिया दोनों के इल्म से जाहिल और नादान हैं, और बहुत-से लोग ऐसे हैं जो दुनियावी उलूम (साईन्स आर्टस वग़ैरह) के पीछे दौड़ लगाते हैं और उनमें माहिर होकर बड़ी-बड़ी नौकरियाँ भी हासिल कर लेते हैं लेकिन ईमान और उसके तक़ाज़ों से बिलकुल नावाक़िफ़ होते हैं। नावाक़िफ़ों से इस्लाम की बातें सुनते हैं फिर उनपर एतिराज़ करते हैं, ईमानियात के समझने के लिये एक घन्टा भी ख़र्च नहीं करते। ऐसे लोगों को दीन के दुश्मन तरह-तरह की काफ़िराना और बेदीनी की

बातें समझा देते हैं। कोई तो "वहदते-अदयान" का क़ायल है, यानी अपनी जहालत से यह समझता है कि तमाम मज़ाहिब का मकसद एक ही है अगरचे रास्ते अलग-अलग हैं। इसलिये उनके ख़्याल में जो मज़हब भी इख़्तियार कर ले नजात पा जायेगा। (अल्लाह पाक इस तरह की गुमराही से अपनी पनाह में रखे)। और कुछ लोग मज़हब के क़ायल नहीं, ये लोग मज़हब को मज़हब वालों का गोरखधन्धा बताकर दुनिया की ऐश व मज़े में लगे रहते हैं। कुछ लोग माल व दौलत और औरत की ख़ातिर इस्लाम को छोड़कर ईसाइयत इख़्तियार कर लेते हैं।

हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने वाज़ेह अल्फ़ाज़ में बता दिया कि मेरे दुनिया में नबी बनाकर भेजे जाने के बाद मेरे दीन के अ़लावा जो भी कोई दूसरा दीन इख़्तियार करेगा, वह हमेशा के लिये दोज़ख़ में जायेगा, ख़ूब समझ लो और समझा दो। जो लोग किसी भी मज़हब के क़ायल नहीं वे भी इस्लाम के इनकारी हैं और हमेशा के लिये दोज़ख़ी हैं। इस बात के कहने में न झिझको, ख़ूब डंके की चोट बयान करो।

बहुत-से हिन्दू और ईसाई और बुद्धिस्ठ इस्लाम को हक़ जानते हैं लेकिन दुनियावी मुनाफ़ों और क़ौम व बिरादरी की नाराज़गी और बच्चों के विवाह शादी की समस्याओं को सोचकर और बाज़ यह मालूम करके कि इस्लाम पूरा का पूरा अमली मज़हब है और ज़िन्दगी के हर शोबे में मज़हब की पाबन्दी कैसे करेंगे, इस्लाम को क़बूल नहीं करते, उन लोगों ने इस्लाम को हक़ तो जाना लेकिन क़बूल नहीं किया और यह समझकर रह गये कि जैसे दूसरे रिवाजी दीन हैं ऐसे ही इस्लाम भी एक दीन है, हालाँकि इस्लाम क़बूल करने पर अल्लाह तआ़ला ने जो ख़ालिक़ व मालिक है आख़िरत की नजात का मदार रखा है। जो इस्लाम क़बूल करेगा और उसी पर मरेगा जन्नती होगा, और जो इस्लाम के अ़लावा किसी और दीन पर मरेगा या बद-अ़क़ीदा या बेदीन होगा वह हमेशा के लिये दोज़ख़ में जायेगा। मसला सिर्फ़ दुनिया का नहीं है हमेशा के अ़ज़ाब से बचने का है। क़ुरआन मजीद में इरशाद फ़रमायाः

तर्जुमाः जो शख़्स इस्लाम के अ़लावा किसी और दीन को इख़्तियार करेगा तो वह दीन उससे हरगिज़ क़बूल न किया जायेगा, और वह आख़िरत में घाटा उठाने वालों में से होगा। (सूरः आलि इमरान आयत 85)

ऐ ईमान वालो! इस्लाम सीखो, इसके अ़क़ीदे मालूम करो, ईमान की

हिफ़ाज़त करो और इस्लाम की दावत काफ़िरों को देते रहो। इस्लाम क़बूल करने में उनका भला है।

ईमान की मिठास और उसके अहम तक़ाज़े

हदीसः (3) हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि उसने ईमान का मज़ा पा लिया जो सच्चे दिल से इस बात पर राज़ी और ख़ुश है कि अल्लाह तआ़ला को अपना रब मानता है और इस्लाम को अपना दीन मानता है और मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) को अपना रसूल मानता है। (मिश्कात, मुसलिम)

हदीसः (4) हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि तीन चीज़ें जिस शख़्स में होंगी वह उनकी वजह से ईमान की मिठास महसूस कर लेगा। पहलीः यह कि उसके नज़दीक अल्लाह और उसके रसूल सबसे ज़्यादा महबूब हों। दूसरेः जिस किसी बन्दे से मुहब्बत हो सिर्फ़ अल्लाह के लिये हो। तीसरेः कुफ़्र में वापस जाना उसको ऐसे ही नागवार हो जैसे कि आग में डाला जाना नागवार है। (मिश्कात, बुख़ारी व मुसलिम)

तशरीहः इन दोनों हदीसों में मोमिन की चन्द ख़ास बुलन्द सिफ़तें बताई हैं और इरशाद फ़रमाया है कि मुसलमान आदमी को दिल की गहराई से यक़ीन की सच्चाई के साथ ईमान लाना चाहिये। ऐसा ईमान हो जो दिल में रच जाये, रग और जान में समा जाये। मुसलमान के घर पैदा होने की वजह से या मुसलिम समाज में रहने की वजह से अपने को सिर्फ़ सरसरी तौर पर मुसलमान न समझे बल्कि इस्लाम को एक बड़ी नेमत समझे, दिल की गहराई से क़बूल करे, अल्लाह तआ़ला को अपना रब और हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को अपना रसूल मानने पर ज़ाहिर व बातिन से और दिल व जान से राज़ी और ख़ुश हो, और इस दौलत को सबसे बड़ी दौलत समझे। जिस शख़्स के अन्दर यह बात होगी वह ईमान का मज़ा अपने अन्दर महसूस कर लेगा। उस मज़े के सामने दुनिया के किसी मज़े को नज़र में न लायेगा।

ईमान के तक़ाज़ों में सबसे बड़ा तक़ाज़ा यह है कि अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से इतनी ज़्यादा मुहब्बत हो जो किसी से भी न हो, न औलाद से, न माँ-बाप से, न किसी ओहदेदार से, न पद और

रुतबे से, न माल व दौलत से, न हुकूमत व बादशाहत से। और ताल्लुकात का रुख़ अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ताल्लुक की तरफ़ मोड़ दे, यानी जिस बन्दे से मुहब्बत हो अल्लाह के लिये हो, कि यह बन्दा अल्लाह से ताल्लुक रखता है, नमाज़ों का पाबन्द है, ज़िक्र व तिलावत में मशग़ूल रहता है, अल्लाह के दीन की ख़िदमत में लगा रहता है, इसको अल्लाह से ताल्लुक है और अल्लाह को इससे ताल्लुक है, इस ताल्लुक की बुनियाद पर मैं भी इससे मुहब्बत करता हूँ। इसी तरह बुग़्ज़ और नफ़रत का रुख़ भी इसी उसूल पर हो कि फ़लाँ शख़्स अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का बाग़ी है, मुझे उससे नफ़रत है और उसे दिल से ना-पसन्द करता हूँ। मोमिन के यक़ीन की पुख़्तगी का यह आ़लम हो कि कुफ़्र इख़्तियार करने पर जो कुरआन व हदीस में दोज़ख़ की सज़ा बताई है उसपर ऐसा यक़ीन हो कि जैसे दुनिया में आग सामने हो और उसमें कुफ़्र इख़्तियार करने वाले को आँखों के सामने डाला जाता हो, बल्कि जज़ा व सज़ा के तसव्वुर से ऊपर होकर सोचे तो उसे कुफ़्र इख़्तियार करना आग में डाले जाने के बराबर और ना-पसन्द मालूम होता हो। क्यूँकि जिसने वजूद दिया और जान बख़्शी, उसका, उसके रसूल, उसकी किताबों और उसके दीन का इनकार इतनी बड़ी हिमाक़त है जैसे कोई देखते-भालते दहकते अंगारों में कूद जाये। कुफ़्र की सज़ा दोज़ख़ तो है ही लेकिन कुफ़्र इख़्तियार करना भी समझदार और शरीफ़ इनसान के लिये जो अल्लाह के ख़ालिक और मालिक होने को जानता है दोज़ख़ से कम नहीं, यह बात ज़रा-से ग़ौर करने से समझ में आयेगी।

कियामत और तक़दीर पर ईमान लाना फ़र्ज़ है

हदीसः (5) हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि कोई बन्दा मोमिन नहीं हो सकता जब तक कि चार बातों पर ईमान न लाये- अव्वल इस बात की गवाही दे कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं है, और मेरे बारे में गवाही दे कि मैं अल्लाह का रसूल हूँ मुझे उसने हक़ के साथ भेजा है। दूसरे इस बात पर ईमान लाये की मरना ज़रूरी है। तीसरे मरने के बाद जी उठने पर। चौथे तक़दीर पर ईमान लाये। (मिश्कात, तिर्मिज़ी व इब्ने माजा)

तशरीहः इस हदीस में इरशाद फ़रमाया कि चार चीज़ों पर ईमान न लाये तो मोमिन नहीं हो सकता। उनमें सबसे अव्वल तौहीद व रिसालत की गवाही है जो ईमानियात की सबसे पहली और बुनियादी चीज़ है। अल्लाह तआ़ला शानुहू के माबूद बरहक़, एक होने और उसका कोई शरीक न होने की गवाही देना, और उसकी ज़ात व सिफ़ात को इस तरह मानना जिस तरह क़ुरआन व हदीस में बयान फ़रमाया है, और **ला-इला-ह इल्लल्लाहु** की गवाही में यह सब आ जाता है, और हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को अल्लाह के पैग़म्बर मानने में आपकी इरशाद फ़रमाई हुई तमाम चीज़ों पर ईमान लाना आ जाता है।

अगर कोई शख़्स यह कहे कि मैं **ला-इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्-रसूलुल्लाहि** की गवाही देता हूँ लेकिन क़ुरआन शरीफ़ की किसी बात को माने और किसी बात को न माने, या हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की किसी बात को ग़लत कहे या किसी बात का मज़ाक़ बनाये, या आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जो ग़ैब की ख़बरें दी हैं (जिनमें क़ब्र, मरने के बाद ज़िन्दा होना, क़ियामत का आना, हिसाब- किताब, पुलसिरात, जन्नत व दोज़ख़ के हालात भी शामिल हैं) इनमें से किसी एक में भी ज़रा-सा शक करें तो वह मुसलमान नहीं है चाहे कैसा ही कलिमा पढ़ने वाला होने का दावा करे। बहुत-से लोग ईसाइयों और यहूदियों से पी. एच. डी. की डिग्री लेते हैं और डिग्री भी इस्लामियात नाम की होती है, जब ये लोग यूरोप और अमेरिका उन डिग्रियों के लिये जाते हैं तो दीन के दुश्मन उनको इस्लाम पर एतिराज़ समझा देते हैं, इस्लामी अ़क़ीदों को उनके दिलों में मश्कूक कर देते हैं और उन लोगों ने डिग्रियों के यह धन्धे निकाले ही इसलिये हैं कि मुसलिम नौजवानों को इस्लाम के बारे में शक करने वाला बना दें, और उनके ईमान को उनके दिलों से खुरच दें। बाज़े जाहिल कहते हैं कि फ़लाँ चीज़ इस्लाम के बुनियादी अ़क़ीदों में से नहीं है, इसलिये उसका मुन्किर हो जाये तो काफ़िर न होगा, यह उनकी जाहिलाना बातें हैं। बुनियादी और बेबुनियादी का फ़र्क़ बेदीनों और मुश्रिकों ने समझाया है।

जब कोई शख़्स अल्लाह तआ़ला पर और उसके रसूलों पर ईमान ले आया तो अल्लाह और रसूल की हर बात का मानना ज़रूरी हो गया और इस्लामी अ़क़ीदों में दाख़िल हो गया। बाज़े लोग अपनी जहालत से कहते हैं कि

फ़लाँ चीज़ कुरआन में नहीं है, इसलिये उसका मानना ज़रूरी नहीं है। यह बात भी बेदीनों और गुमराहों ने चलाई है। अगर साफ़-साफ़ खुले तौर पर कोई चीज़ कुरआन में न हो लेकिन हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बताई हो तब भी उसपर ईमान लाना फ़र्ज़ है। हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को अल्लाह का नबी माना और आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की किसी बात को मानने से इनकारी हो गये, और यह बहाना कर दिया कि कुरआन में नहीं है, यह भी तो बेदीनी की बात है। और जब आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की किसी बात के सही होने में शक कर लिया तो फिर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के रसूल होने पर कहाँ यकीन रहा।

एक ज़माना था जब ईमान की हवाएँ और फ़िज़ायें थीं, उस वक़्त मुश्रिक व काफ़िर गिरोह-दर-गिरोह इस्लाम में दाख़िल होते थे, और आजकल बेदीनी और गुमराही का दौर है, मुसलमानों की नस्लें अन्दर- अन्दर कुफ्र-भरे अ़कीदे इख़्तियार कर रही हैं, उनको ईमानियात में शक रहता है और बज़ाहिर अपने को मुसलमान कहते हैं। माँ-बाप पर फ़र्ज़ है कि ईमान और ईमानियात तफ़सील से बच्चों को सिखायें और ऐसे माहौल से बचायें जिसमें जाकर उनके इस्लामी अ़कीदों में शक पैदा हो। ऊपर बयान हुई हदीस में नम्बर दो पर मौत पर ईमान लाना और नम्बर तीन पर मौत के बाद हिसाब-किताब के लिये ज़िन्दा हो जाने पर ईमान लाना ज़िक्र किया गया है, इन दोनों चीज़ों पर ईमान लाना भी फ़र्ज़ है।

सब लोग मरेंगे इसको तो लोग यूँ भी मान लेते हैं लेकिन मरने के बाद ज़िन्दा होना और हिसाब-किताब होना इसको नास्तिक और बेदीन नहीं मानते, और ऐसी बेदीनी की बातें वे लोग मुसलमान बच्चों में फैलाते रहते हैं और कहते हैं कि मर गया सो मर गया, फिर ज़िन्दा होना हिसाब- किताब और जन्नत व दोज़ख़ का वजूद उनकी समझ में नहीं आता, और ऐसी ही बेदीनी की बातें लड़कियों और लड़कों के ज़ेहन में डाल देते हैं। ऐ मुसलमानो! अपनी औलाद पर रहम करो और उनको बेदीनों और गुमराहों से बचाओ।

चौथी चीज़ जो इस हदीस में ज़िक्र हुई है वह तक़दीर पर ईमान लाना है, यह भी ईमानियात का बहुत बड़ा हिस्सा है। हदीसे जिबराईल में भी इसका ज़िक्र गुज़र चुका है, और इसका ख़ुलासा यह है कि अल्लाह तआ़ला ने अपनी मख़्लूक को पैदा फ़रमाने से पहले हर चीज़ के बारे में तय फ़रमा दिया कि

ऐसा-ऐसा होगा, यह तक़दीर है और इसपर ईमान लाना भी फ़र्ज़ है।

बहुत-से लोगों को तक़दीर में शक रहता है और उसके ख़िलाफ़ बातें बनाते रहते हैं और उसके सही होने में न सिर्फ़ यह कि शक करते हैं बल्कि उसका अक़ीदा रखने पर एतिराज़ भी करते हैं, हालाँकि तक़दीर का इनकार भी क़ुरआन व हदीस का इनकार है, जो कुफ़्र है। समझ में आए या न आए क़ुरआन व हदीस की हर बात पर ईमान लाना फ़र्ज़ है।

इब्ने दैलमी ने बयान किया कि मेरे दिल में तक़दीर की जानिब से कुछ वस्वसा आने लगा तो मैं हज़रत उब्बी बिन कअ़ब रज़ियल्लाहु अ़न्हु की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और उनसे वस्वसे की हालत बयान करके अ़र्ज़ किया कि मुझे कुछ बातें बताइये ताकि अल्लाह तआ़ला मेरे दिल से वस्वसे को निकाले। हज़रत उब्बी बिन कअ़ब रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला शानुहू (सबका पैदा करने वाला और सबका मालिक है, उसे अपनी मख़्लूक़ के बारे में हर तरह का पूरा-पूरा इख़्तियार है) अगर तमाम आसमानों के रहने वालों को और ज़मीन के रहने वालों को अ़ज़ाब दे तो वह ज़रा भर भी ज़ालिम न होगा (क्योंकि उसने अपनी मिल्कियत में तसर्रुफ़ फ़रमाया)। और अगर वह उन सबपर रहमत फ़रमाये तो उसकी रहमत उनके आमाल से बेहतर होगी। और अगर तू उहुद पहाड़ के बराबर (भी) अल्लाह के रास्ते में सोना ख़र्च कर दे तब भी अल्लाह तुझसे उस वक़्त तक क़बूल न फ़रमायेगा जब तक तू तक़दीर पर ईमान न लाये, और इस बात का यक़ीन न करे कि जो कुछ दुख-तकलीफ़ आराम-राहत नफ़ा-नुक़सान तुझको पहुँचा वह रुकने वाला ही न था यानी उसका पहुँचना ज़रूरी था, और जो कुछ तुझसे रह गया (यानी जो दुख-तकलीफ़ नफ़ा-नुक़सान आराम-राहत तुझको न पहुँचा) वह पहुँचने वाला ही न था। अगर तू इस अक़ीदे के ख़िलाफ़ दूसरे अक़ीदे पर मरा तो दोज़ख़ में जायेगा।

इब्ने दैलमी रहमतुल्लाहि अ़लैहि का बयान है कि उसके बाद मैं हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु के पास गया, उन्होंने भी वही जवाब दिया, फिर मैं हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की ख़िदमत में हाज़िर हुआ तो उन्होंने भी वही जवाब दिया, फिर मैं हज़रत ज़ैद बिन साबित रज़ियल्लाहु अ़न्हु के पास आया उन्होंने भी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से यही मज़मून नक़ल फ़रमाया। (मिश्कात, अहमद, अबू दाऊद व इब्ने माजा)

मुश्रिकों की बख़्शिश न होगी

हदीसः (6) हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि दो चीज़ें वाजिब करने वाली हैं। एक शख़्स ने अर्ज़ किया कि ऐ अल्लाह के रसूल! कौन-सी दो चीज़ें वाजिब करने वाली हैं? आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स इस हाल में मर गया कि अल्लाह के साथ शिर्क करता था वह दोज़ख़ में दाख़िल होगा, और जो शख़्स इस हाल में मरा कि अल्लाह के साथ शिर्क नहीं करता था बल्कि अल्लाह को एक मानता था और उसके दीन को क़बूल किये हुए था वह जन्नत में दाख़िल होगा। (मिश्कात व मुसलिम)

तशरीहः इस हदीस में इरशाद फ़रमाया कि जो शख़्स अल्लाह की ज़ात व सिफ़ात में किसी चीज़ को शरीक न करेगा बल्कि उसको एक ला-शरीक जानते और मानते हुए उसके दीन को क़बूल करेगा और उसी हाल में मरेगा वह जन्नती होगा। और जो शख़्स अल्लाह के साथ किसी चीज़ को शरीक बनायेगा और उसी हाल पर मरेगा वह दोज़ख़ी होगा। शिर्क न करने का मतलब यह है कि अल्लाह तआला शानुहू के बारे में यह अक़ीदा रखे कि वह अपनी ज़ात व सिफ़ात में तन्हा व यगाना है, उसकी तरह कोई भी चीज़ नहीं है, वह तन्हा इबादत के लायक़ है। यह अक़ीदा रखे और अमल भी इसी के मुताबिक़ करे और उसके सिवा किसी की परस्तिश और पूजा न करे, सब ग़ैबों का जानने वाला और हर जगह अपने इल्म व क़ुदरत से हाज़िर होने वाला और सारी मख़्लूक़ का ख़ालिक़ व मालिक सिर्फ़ उसी को समझे, और यह यक़ीन करे कि उसके इरादे और तसर्रुफ़ में किसी का कोई दख़ल नहीं हो सकता, न उसके कोई बराबर है न साझी है, न शरीक है न वज़ीर है, न मददगार है न सहायक है, न उसकी औलाद है न बीवी है, न उसका कोई बाप है न माँ है, न वह किसी का माँ-बाप है।

शिर्क यह है कि अल्लाह को छोड़कर किसी मख़्लूक़ की पूजा करे और परस्तिश करे, या अल्लाह की भी इबादत करे और किसी दूसरे की भी पूजा व परस्तिश करे, जैसे हिन्दू लोग ख़ुदा को भी मानते हैं और मख़्लूक़ की भी पूजा करते हैं, बुतों के सामने सज्दा करते हैं, उनके नाम की नज़्रें (यानी मन्नतें) मानते हैं, और उनपर चढ़ावे चढ़ाते हैं और उनके सामने जानवरों को

काटते हैं, और जैसे नसरानी (जिन्हें ईसाई कहा जाता है) अल्लाह के साथ हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम और उनकी माँ हज़रत मरियम अ़लैहस्सलाम को माबूद मानते हैं, और सलीब की भी पूजा करते हैं। हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम को अल्लाह का बेटा भी कहते हैं और उनकी माँ की इबादत भी करते हैं, यह बहुत बड़ा शिर्क है। देखने में ईसाई लोग कैसे तहज़ीबदार हैं, बड़े-बड़े मुल्कों को चलाते हैं और दुनिया की सियासत पर छाये हुए हैं, लेकिन अल्लाह के साथ शिर्क करने और आख़िरी नबी व रसूल हज़रत मुहम्मद सल्ल. का इनकार करने की वजह से काफ़िर और मुश्रिक हैं। चाँद पर पहुँच गये तो क्या हुआ, असल तो आख़िरत की हमेशा वाली ज़िन्दगी को देखना है, वहाँ दोज़ख़ में चला गया तो यहाँ का चाँद पर पहुँचना क्या काम देगा।

बहुत-से कच्चे ईमान वाले मुसलमान यहूद व ईसाइयों के तौर-तरीके देखकर रीझते हैं, काफ़िर और मुश्रिक जो हमेशा दोज़ख़ में रहेंगे उनके हाल पर रश्क करना बहुत बड़ी बेवक़ूफ़ी है। अल्लाह तआ़ला ने हमें जो ईमान की दौलत दी है उस नेमत के मिलने पर ख़ुश और मस्त रहना चाहिये। जब ईमान की मिठास नसीब हो जाये और उसकी ख़ुशी व मुसर्रत दिल में जमकर रच जाये तो पूरी दुनिया और दुनिया वाले मोमिन की नज़रों में बेहक़ीक़त होकर रह जाते हैं।

शैतान बहुत बड़ा दुश्मन है, वह जानता है कि कुफ़्र व शिर्क की कभी मग़फ़िरत न होगी, इसलिये लोगों को कुफ़्र व शिर्क पर लगाता है, और मुसलमानों के दिल में ईमान और ईमानियात के बारे में शक और शुब्हे डालता है, ताकि कुफ़्र पर मरकर हमेशा के लिये दोज़ख़ी हो जायें, जैसे ईसाइयों को कुफ़्र व शिर्क पर डाल रखा है और यह समझा रखा है कि आख़िरत में सिर्फ़ तुम्हारी नजात होगी, क्योंकि तुम हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम को अल्लाह का बेटा मानते हो। (अल्लाह तआ़ला अपनी पनाह में रखे)।

इसी तरह शैतान ने बहुत-से नाम के मुसलमानों को शिर्क वाले कामों पर लगा रखा है। बहुत-से लोग क़ब्रों को सज्दा करते हैं, क़ब्रों वालों के नाम पर मन्नतें मानते हैं, उनके नाम पर जानवर ज़िबह करते हैं और क़ब्र वालों के बारे में यह अ़कीदा रखते हैं कि वे ग़ैब का इल्म रखते हैं या हाजतें पूरी करने की क़ुदरत रखते हैं या यह कि वे दुनियावी मामलात में कुछ दख़ल और

तसर्रुफ़ करने की क्षमता रखते हैं, ये सब शिर्क वाले अक़ीदे और आमाल हैं।

औरतें बहुत कच्चे अक़ीदे की होती हैं, बहुत-से शिर्क वाले काम करती हैं, टोटके करना तो उनका ख़ास मश्ग़ला है जो शिर्क वाले काम होते हैं, अल्लाह हर मुसलमान को अपना सही दीन समझाये और शैतान से और उसके वस्वसों और उसके बताये हुए कामों से महफ़ूज़ फ़रमाये, (आमीन)।

ईमान का बहुत बड़ा और अहम तक़ाज़ा सबका भला चाहना है

हदीसः (7) हज़रत तमीम दारी रज़ियल्लाहु अ़न्हु रिवायत फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि दीन ख़ैर-ख़्वाही का नाम है। हमने अ़र्ज़ किया ऐ अल्लाह के रसूल! किसकी ख़ैर-ख़्वाही? फ़रमाया कि अल्लाह की और उसकी किताब की और उसके रसूल की और मुसलमानों के इमामों की और तमाम मुसलमानों की। (मुस्लिम)

तशरीहः "नसीहत" बहुत जामे लफ़्ज़ है, आ़लिमों ने लिखा है कि अ़रबी ज़बानन में कोई ऐसा लफ़्ज़ नहीं है कि इसके मफ़हूम और मतलब को तन्हा अदा कर सके, और इसके मायने में बड़ी तफ़सील है जो एक लफ़्ज़ में नहीं आ सकती। "नसीहत" का तर्जुमा "ख़ैर-ख़्वाही" जो हमने किया है उसके क़रीबी मायने हैं, किसी क़द्र तफ़सील से इसके मायने बयान किये जायें तो यूँ कहा जा सकता है कि हर शख़्स के मुताल्लिक़ यह कोशिश करना कि उसका पूरा-पूरा हक़ अदा हो जाये, जो मुझसे मुताल्लिक़ है और जो मेरी ज़ात से उसे हर मुमकिन फ़ायदा और राहत पहुँच जाये। अल्लामा ख़त्ताबी ने इस मतलब को अपनी इस इबारत में इस तरह अदा किया है कि "अल्लाह की नसीहत दर हक़ीक़त अपने ही लिये नसीहत यानी ख़ैर-ख़्वाही है" जिसका मतलब यह है कि अल्लाह की ज़ात व सिफ़ात को इस तरह माने जैसा कि इस्लाम ने बताया है, किसी को उसका शरीक न बनाये, उसको तमाम ऐबों और कमियों से पाक समझे, कामिल होने और बुज़ुर्गी की तमाम सिफ़ात में जो उसकी ज़ात में मौजूद हैं उनको माने, उसके अहकाम की पाबन्दी करे, नाफ़रमानियों से बचे, उसी के लिये मुहब्बत करे उसी के लिये बुग़्ज़ और दुश्मनी रखे, उसके मुनकिर से जिहाद करे, उसकी नेमतों की शुक्रगुज़ारी करे, हर मौके और हर हाल में उसकी रिज़ा के लिये अ़मल करे और तमाम इनसानों को इसकी दावत दे कि अल्लाह को एक मानें और उसी की इताअ़त

व फ़रमाँबरदारी करें। जो ज़िक्रशुदा अमल करेगा अपना ही भला करेगा, वरना ख़ुदा को किसी के मोमिन होने से कोई फ़ायदा नहीं पहुँचता और किसी के काफ़िर और मुन्किर होने से उसको कुछ नुकसान नहीं पहुँचता। इमाम ख़त्ताबी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने इसी मज़मून को तफ़सील से बयान किया है।

अल्लाह की किताब की ख़ैर-ख़्वाही यानी उसके हुकूक़ की अदायगी यह है कि उसे अल्लाह का कलाम माने और यह यक़ीन करे कि बन्दे उस जैसा कलाम नहीं बना सकते, उसका अदब करें, उसकी तिलावत ठीक-ठीक करे यानी तजवीद व क़िराअत के उसूल और क़ायदों का लिहाज़ रखते हुए दिल व दिमाग़ हाज़िर करके पढ़े, उसमें जो कुछ है उसे माने, उसके दोस्तनुमा दुश्मन जो उसके मायने बदलते हों उनकी गुमराह करने वाली और बेदीनी की बातों की तरदीद करे, उसके अहकाम पर अ़मल करे और जिन चीज़ों से उसने रोका है उनसे बाज़ रहे, उसके उलूम को फैलाये और सारी मख़्लूक़ को क़ुरआन के मानने की दावत दे।

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) की ख़ैर-ख़्वाही यानी आपके हुकूक़ की अदायगी यह है कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तस्दीक़ करे, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के रसूल होने पर ईमान लाये, यानी आपने जो कुछ फ़रमाया और जो अक़ीदे रखने की तालीम दी उनको जूँ-का-तूँ बिना चूँ-व-चरा सबको हक़ समझे और दिल से माने। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इरशादात का पालन करे, जिन चीज़ों से आपने मना फ़रमाया है उनको हरगिज़ न करे। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दुश्मनों से दुश्मनी और आपके दोस्तों से मुहब्बत करे। आपके तरीक़े को ज़िन्दा करने की कोशिश में लगा रहे। आपके उलूम सीखे और सिखाये। सुन्नत का इल्म रखने वालों से मुहब्बत करे। आपकी आल और आपके सहाबा की ताज़ीम व अदब करे। बिद्अ़तियों (यानी दीन में अपनी तरफ़ से नई बात निकालने वालों) से दूर रहे, जो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की शरीअ़त में अपनी तरफ़ से पंचर लगाते हैं।

मुसलमानों के इमामों (यानी इस्लाम के तरीक़े पर हुकूमत चलाने वाले मुसलमान हाकिमों) की ख़ैर-ख़्वाही यह है कि हक़ पर उनकी मदद और सहयोग करे और हक़ में उनकी बात माने, लोगों को उनकी फ़रमाँबरदारी करने और बात मानने पर आमादा करता रहे, उनको अ़वाम के हुकूक़ से

बाख़बर और मुत्तला करता रहे और जो उनमें ख़राबी देखे उसे नेक लोगों के तरीक़े पर दूर करे। ग़रज़ यह कि उनकी दुनिया और आख़िरत के मुताल्लिक़ जो भी भलाई उन तक पहुँचा सकता है उन तक पहुँचा दे।

आम मुसलमानों की ख़ैर-ख़्वाही यह है कि जब कोई मुसलमान बीमार हो जाये तो उसकी इयादत करे (यानी बीमारी का हाल-चाल पूछे) इन्तिक़ाल हो जाए तो उसके कफ़न-दफ़न और नमाज़े-जनाज़ा में शरीक हो। जब किसी ज़रूरत या मेहमान-नवाज़ी के लिये बुलाये तो उसके पास चला जाये। जब उससे मुलाक़ात हो तो सलाम करे, वह सलाम करे तो सलाम का जवाब दे, उसे छींक आये और वह **अल्हम्दु-लिल्लाह** कहे तो **यर्हमुकल्लाहु** कहे, उसके सामने और पीछे उसकी ख़ैर-ख़्वाही करे, हदिया लिया-दिया करे, वह क़र्ज़ में फंस जाए और अदा न कर सकता हो तो उसका क़र्ज़ा अदा कर दे, ख़ुद उसपर अपना क़र्ज़ा हो तो सख़्ती से तक़ाज़ा न करे, मोहलत दे दे और माफ़ भी कर दिया करे। किसी गुनाह पर उसे आर और शर्म न दिलाये, उसकी मुसीबत पर ख़ुश न हो, उसका मज़ाक़ न उड़ाये, उसके दुख-दर्द में काम आये, उसको हक़ीर न जाने, ज़रूरत के वक़्त उसकी (जानी व माली) मदद से मुँह न मोड़े। उससे अल्लाह के लिये मुहब्बत करे, जो अपने लिये पसन्द करे वही उसके लिये पसन्द करे, उसकी ग़ीबत न करे, न उसकी ग़ीबत सुने। दूसरा उसकी ग़ीबत करता हो तो उसकी तरफ़दारी करे, यानी जिसकी ग़ीबत हो रही हो उसकी हिमायत करे और उसकी तरफ़ से बोले और ग़ीबत करने वाले की बात को काट दे। उसके बारे में अच्छा गुमान रखे, उसकी ग़लती माफ़ कर दे, छोटों पर रहम करे, बड़ों का अदब व सम्मान करे, बूढ़े मुसलमान के अदब व इज़्ज़त और ख़िदमत का ख़ास ध्यान रखे, अपनी ज़रूरत को रोक कर मुसलमान भाई की हाजत पूरी कर दे, किसी के घर जाना हो तो उसके ख़ास स्थान और उसके ख़ास बैठने-लैटने की जगह पर न बैठे, और न उसके घर में इमाम बने। जब मुसलमान को अपनी मजलिस में आता हुआ देखे तो जगह होते हुए भी उसके एहतिराम के लिये ज़रा-सा हट जाये। माँ-बाप, औलाद, शौहर, शागिर्द ग़रज़ यह कि हर छोटे-बड़े के हुक़ूक़ मालूम करके अदा करे।

मामले में फ़रेब और धोखा न दे, न ख़ियानत करे। जो मामला करके पछताए उसका पछतावा दूर कर दे, यानी मामला तोड़ दे। बेचते वक़्त झुकाकर

तौले, ज़रूरत के वक़्त ग़ल्ला हरगिज़ न रोके। दूसरे भाई के भाव पर भाव न करे, न उसके निकाह के पैग़ाम पर अपना पैग़ाम भेजे, ख़रीदने की नीयत न हो तो दाम लगाकर दूसरे को धोखे में मत डाले, रास्ते में पानी के घाट पर और जहाँ लोग उठते-बैठते हों (साये में या सर्दी के मौसम में धूप में) वहाँ पाख़ाना-पेशाब न करे। दो आदमियों के दरमियान उनकी इजाज़त के बग़ैर या किसी को उठाकर ख़ुद उसकी जगह न बैठे, गर्दनों से फाँदकर मजलिसों में न आये. छुपकर किसी की बात न सुने जिसे वे सुनाना नहीं चाहते। गाली न दे, तोहमत न लगाये, चुग़लख़ोरी से बचे, किसी की चीज़ मज़ाक़ में लेकर न रख ले, बग़ैर इजाज़त किसी के घर में न दाख़िल हो न नज़र डाले। मश्विरा सही दे, हर शख़्स से उसके रुतबे और मक़ाम के मुवाफ़िक़ पेश आये, सबसे नरमी और अच्छे अख़्लाक़ का बर्ताव करे, बदगुमानी न करे, ज़ुल्म से बचे, ज़रूरतमन्द के लिये सिफ़ारिश कर दे, किसी को तकलीफ़ न पहुँचाये, किसी का ऐब न ढूँढे, जो ऐब किसी का मालूम हो जाये उसे छुपाये। इसी तरह की और भी बहुत-सी बातें हैं, यहाँ सबका बयान करना मक़सद नहीं, सिर्फ़ कुछ बातों की तरफ़ तवज्जोह दिलाना मक़सद है, जिसको ज़रूरत हो वह आलिमों से मालूम करके इस्लामी आदाब की किताबों में और ज़्यादा आदाब देख सकता है।

फ़ायदाः यह हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सिर्फ़ एक इरशाद की तशरीह (व्याख्या) है जो अभी पूरी हरगिज़ नहीं हुई। इससे समझ सकते हैं कि दो जाहान के सरदार सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को जो अल्लाह तआला ने "जवामिउल-कलिम" अता फ़रमाये थे उनकी जामिईयत किस क़द्र है।

कामिल ईमान की पहचान

हदीसः (8) हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि तुम में से कोई शख़्स उस वक़्त तक मोमिन न होगा जब तक उसकी ख़्वाहिश मेरे लाये हुए तरीक़े के ताबे न हो जाये। (मिश्कात शरीफ़)

तशरीहः हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की रिसालत का इक़रार कर लेने के बाद नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व

सल्लम के बताये हुए तरीक़ा-ए-ज़िन्दगी और तरीक़ा-ए-बन्दगी का इख़्तियार करना ज़रूरी हो जाता है। आपने जिस चीज़ से रोका है उसको छोड़ दे, अगरचे उसका छोड़ना नफ़्स के तक़ाज़े के ख़िलाफ़ हो, नफ़्स के तक़ाज़े को हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हुक्म और अमल के ताबे करना हर मोमिन का फ़रीज़ा है। हज़रत उबादा बिन सामित रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हमने रसूले-ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से इसपर बेअ़त की कि आपका इरशाद सुनेंगे और हुक्म मानेंगे, चाहे तंगी हो, चाहे फ़राख़ी हो और चाहे हमारा दिल चाहे, चाहे न चाहे। (हदीस, मिश्कात शरीफ़)

शरीअ़त तबीयत बन जाये

फ़ख़्रे आलम हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की पाक ज़ात मोमिनों के लिये अमल का नमूना है। ज़िन्दगी के तमाम शोबों में आपकी पैरवी करना लाज़िम है, और जो ख़ुदा के बन्दे नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से इन्तिहाई मुहब्बत रखते हैं, शरीअ़ते पाक उनकी दूसरी तबीयत बन जाती है, और इस दर्जे में पहुँच जाते हैं कि उनका नफ़्स भी वही चाहता है जो शरीअ़त उनसे कराना चाहती है। ईमान का कामिल दर्जा और इन्तिहाई ऊँचा मक़ाम जिसकी तरफ़ इस हदीसे पाक में रहबरी फ़रमाई गई है उसके लिये चिन्तित हों और तबीयत को नबी-ए-पाक की सुन्नत के ताबे बनायें।

अगर किसी का नफ़्स शरारत करता हो और नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के तरीक़े पर चलने से बचता हो तो मश्क़ करके और आलिमों व बुज़ुर्गों से इस सिलसिले में रहबरी हासिल करके नफ़्स को और उसकी ख़्वाहिशों को नबी-ए-पाक के तरीक़े का पाबन्द बना दे। अगरचे शुरू-शुरू में नफ़्स को इसमें दिक़्क़त होगी लेकिन आख़िरकार नफ़्स इन्शा-अल्लाह मग़लूब हो जायेगा और नफ़्स में जमी हुई ग़लत ख़्वाहिशें मिट जायेंगी, और नफ़्स भी वही चाहने लगेगा जो मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) के दीन की तालीमात हैं।

इस ज़माने के मुसलमान नफ़्स पर पाबन्द और नफ़्स के ग़ुलाम बने हुए हैं। नफ़्स की ख़्वाहिशों के सामने अल्लाह तआ़ला के अहकाम को पामाल और ज़ाया करने में बहुत निडर हैं। नफ़्स चाहता है कि मौजूदा माहौल में अच्छी नज़रों से देखे जाने के लिये बेपर्दा फिरें, अंग्रेज़ी लिबास पहनें, पश्चिम के

तरीक़े में खायें, ऐसे तमाम मौक़ों में नफ़्स की पाबन्दी करते हैं और नबी करीम हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की शक्ल व सूरत और तौर-तरीक़ों के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारने और दुनिया के सामने आने को ऐब समझते हैं, हालाँकि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के तरीक़े को नफ़्स की नागवारी के बावजूद इख़्तियार करना लाज़िम है। जो चीज़ें मोमिन के लिये फ़ख़्र (गर्व) का सबब थीं आज वे ऐब का सबब बनी हुई हैं "इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊ़न"।

शादी-विवाह में नाक ऊँची करने और बिरादरी में नाम पैदा करने तथा घर की औ़रतों को ख़ुश करने के लिये ऐसी-ऐसी रस्में बरतते हैं जो हराम हैं और दूसरी क़ौमों से लेकर अपने रिवाज में दाख़िल की हैं। और उनमें बहुत-सी तो ऐसी हैं जो कि शिर्क से भरी हुई हैं। बड़े-बड़े दीनदारी का दावा करने वाले यह समझते हैं कि आज शादी के दिन हम पर शरीअ़त की कोई पाबन्दी नहीं। अगर उस मौक़े पर कोई अल्लाह का सिपाही नसीहत करे और शादी-विवाह में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के तरीक़े को इख़्तियार करने पर ज़ोर दे तो उसे बुरी नज़रों से घूरते हैं, और दीने-ख़ुदावन्दी के मुताबिक़ शादी करने में बे-इ़ज़्ज़ती समझते हैं और नाक कट जाना ख़्याल करते हैं।

मुसलमानो! जब तुम दीन पर चलने में बे-इ़ज़्ज़ती समझते हो तो नफ़्स को दीन का पाबन्द क्योंकर बना सकते हो? रसूले अकरम सल्ल. जो हमारे लिये अल्लाह करीम की तरफ़ से नमूना बनकर तशरीफ़ लाये, उनका फ़रमाना तो यही है कि तुम मोमिन न होगे जब तक कि तुम्हारी ख़्वाहिश मेरे लाये हुए तरीक़े के ताबे न हो जाये। बार-बार ग़ौर करो और अपने हाल को इस कसौटी पर जाँचो। नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ख़िलाफ़ चलने में इ़ज़्ज़त तलाश करना हिमाक़त व जहालत और आख़िरत की ज़िल्लत का सबब है।

क़ब्र का अ़ज़ाब और आराम व राहत हक़ है

हदीसः (9) हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा के पास एक दिन एक यहूदी औरत आई और (गुफ़्तगू के दौरान में) उसने हज़रत आ़यशा से कहा कि अल्लाह तआ़ला तुम्हें क़ब्र के अ़ज़ाब से पनाह में रखे (चूँकि यह बात

एक ग़ैर-मुस्लिम औरत ने कही थी इसलिये) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने (उसका एतिबार न किया) और रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से क़ब्र के अज़ाब के बारे में दरियाफ़्त किया, आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया हाँ! क़ब्र का अज़ाब हक़ है (काफ़िरों और नाफ़रमानों को होता है)। हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा का बयान है कि उसके बाद मैंने नहीं देखा कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कोई भी नमाज़ पढ़ी हो और उसके बाद अल्लाह तआ़ला से यह दुआ न की हो कि अज़ाबे क़ब्र से पनाह में रखे। (मिश्कात शरीफ़, बुख़ारी व मुस्लिम)

तशरीहः जब इनसान मर जाता है तो दुनिया से **"आ़लमे बरज़ख़"** की तरफ़ मुन्तक़िल हो जाता है। मौत से लेकर क़ियामत आने तक का जो ज़माना गुज़रता है उसको **"बरज़ख़"** कहा जाता है। बरज़ख़ में बहुत-से लोग अच्छे हाल में रहते हैं और बहुत-से लोग वहाँ तकलीफ़ और अ़ज़ाब में मुब्तला होते हैं। दुनिया में जितने भी मज़हब हैं उनके मानने वाले आ़म तौर पर मुर्दे को दफ़न ही करते हैं, इसलिये बरज़ख़ की तकलीफ़ को **"क़ब्र के अ़ज़ाब"** ही के उनवान से ज़िक्र किया जाता है, इसका मतलब यह नहीं कि जो लोग जला दिये जाते हैं, या दरिया में डाल दिये जाते हैं, या जिनको दरिन्दे खा जाते हैं, वे अपने कुफ़्र व शिर्क के बावजूद बरज़ख़ के अ़ज़ाब से महफ़ूज़ रहते हैं। ख़ुदा तआ़ला को क़ुदरत है कि दरिन्दों के पेटों से और समुन्द्रों की तहों से ज़र्रों को जमा फ़रमाये और बरज़ख़ी ज़िन्दगी देकर अ़ज़ाब दे दे। नेक मोमिनों के लिये क़ब्र इन्तिज़ार करने की जगह (प्रतीक्षालय) है, ये हज़रात क़ियामत आने तक बरज़ख़ में आराम से रहते हैं, और काफ़िरों व मुनाफ़िक़ लोगों के लिये एक तरह की सख़्त हवालात है, जिसमें अ़ज़ाब ही अ़ज़ाब है। और जो लोग फ़ासिक़ हैं बड़े गुनाहों में लगे रहते हैं उनको भी क़ब्र का अ़ज़ाब दिया जाता है, इसलिए मोमिन बन्दे भी अ़ज़ाबे क़ब्र से पनाह में रहने की दुआ़ करते रहते हैं। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उम्मत को तालीम देने के लिये हर नमाज़ के बाद क़ब्र के अ़ज़ाब से पनाह माँगते थे।

हदीसों में ख़ूब वाज़ेह तरीक़े पर बता दिया गया है कि नेक आमाल वाले मोमिन बन्दे बरज़ख़ में आराम से रहते हैं, जहाँ तक नज़र पहुँचे वहाँ तक उनकी क़ब्र खुली हुई और रोशन कर दी जाती है, और ऐसे बन्दों के लिये क़ब्र में जन्नत का बिस्तर बिछा दिया जाता है, और जन्नत के कपड़े पहना

दिये जाते हैं, और क़ब्र की तरफ़ जन्नत का दरवाज़ा खोल दिया जाता है, और उस दरवाज़े से जन्नत की लतीफ़ हवा और ख़ुशबू आती रहती है। और काफ़िरों और बदकारों को क़ब्र में अ़ज़ाब होता है, उस अ़ज़ाब की बहुत-सी तफ़सीलात हदीसों में आई हैं जैसे ज़मीन का भींचना, साँपों का मुसल्लत होना नीचे आग का बिछा दिया जाना, गुर्ज़ों से मारा जाना, दोज़ख़ का दरवाज़ा क़ब्र की तरफ़ खोल दिया जाना, ताकि वहाँ की सख़्त गर्म हवा आती रहे।

क़ब्र के आराम और अ़ज़ाब व तकलीफ़ की ख़बर पिछले अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम ने भी दी है, उनकी उम्मतें भी इसका यक़ीन रखती थीं और क़ब्र के अ़ज़ाब से पनाह माँगती थीं। यहूदी लोग हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से अपना ताल्लुक़ ज़ाहिर करते हैं, उनके दीन को तो उन्होंने बदल दिया है मगर कुछ बातें जो उनकी तालीमात में से यहूद के पास रह गई हैं उनमें से एक अ़क़ीदा यह भी है कि नाफ़रमानों को क़ब्र में अ़ज़ाब होता है। जो एक यहूदी औरत हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा के पास आई थी, उसने अपनी मज़हबी मालूमात की बुनियाद पर क़ब्र के अ़ज़ाब का तज़किरा किया, हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से उसकी तस्दीक़ चाही तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि नाफ़रमानों को क़ब्र में अ़ज़ाब होने का अ़क़ीदा हक़ है।

यहूदी, ईसाई और वे तमाम लोग जो आख़िरी नबी हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दीन के इनकारी हैं, ये सब बरज़ख़ में अ़ज़ाब में रहेंगे और क़ियामत के दिन में भी सख़्त-से-सख़्त तकलीफ़ उठायेंगे, फिर हमेशा के लिये दोज़ख़ में दाख़िल होंगे। जो लोग कहते हैं कि हम मुसलमान हैं, मगर दीने-मुहम्मदी में तहरीफ़ (यानी अदल-बदल) करते हैं, या हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बाद किसी और को नबी मानते हैं, या रोज़ा-नमाज़ के फ़र्ज़ होने के इनकारी हैं, या दीन का मज़ाक़ उड़ाते हैं, ये भी सब काफ़िर हैं, जो काफ़िरों वाले अ़ज़ाब में मुब्तला होंगे। जो लोग नबी-ए-पाक से पहले आये अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम से अपना रिश्ता बताते हैं- जैसे यहूदी व ईसाई, ये लोग अव्वल तो उस दीन पर बाक़ी नहीं रहे जिस दीन पर हज़राते अम्बिया-ए-किराम अ़लैहिमुस्सलम ने उनको छोड़ा था, उनके दीन में कुफ़्र और शिर्क को दाख़िल कर लिया है। दूसरे यह कि अल्लाह के आख़िरी नबी हमारे सरदार हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व

सल्लम और अल्लाह की आख़िरी किताब क़ुरआन मजीद के इनकारी हैं, इसलिए ये लोग बद्तरीन काफ़िर हैं और अज़ाब के हक़दार हैं।

हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब (मोमिन) मय्यित को क़ब्र में दाख़िल कर दिया जाता है तो उसको ऐसा मालूम होता है जैसे सूरज छुप रहा हो, जब उसकी रूह (क़ब्र में) वापस लौटाई जाती है तो आँखें मलता हुआ उठकर बैठता है और (फ़रिश्तों से) कहता है कि मुझे छोड़ दो मैं नमाज़ पढ़ता हूँ (इब्ने माजा शरीफ़) गोया वह उस वक़्त अपने आपको दुनिया में तसव्वुर करते हुए फ़रिश्तों से कहता है कि सवाल व जवाब को रहने दो मुझे फ़र्ज़ अदा करना है, वक़्त ख़त्म हुआ जा रहा है। ज़ाहिर है कि यह बात वही कहेगा जो दुनिया में नमाज़ का पाबन्द था और उसको हर वक़्त नमाज़ का ख़्याल लगा रहता था। इससे बेनमाज़ी सबक़ हासिल करें और अपने हाल का अन्दाज़ा लगायें, और इस बात को ख़ूब सोचें की जब अचानक सवाल होगा तो कैसी परेशानी होगी?

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब मय्यित को क़ब्र में रख दिया जाता है तो उसके पास दो फ़रिश्ते आते हैं जिनका रंग काला और आँखें नीली होती हैं, जिनमें से एक को 'मुन्कर' और दूसरे को 'नकीर' कहा जाता है। वे दोनों उससे पूछते हैं कि तू क्या कहता है उन साहिब के बारे में (जो तुम्हारी तरफ़ भेजे गये)? वह अगर मोमिन है तो जवाब देता है कि वह अल्लाह के बन्दे और उसके रसूल हैं, मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं और बेशक मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अल्लाह के बन्दे और उसके रसूल हैं। यह सुनकर वे दोनों कहते हैं कि हम दोनों तो जानते थे कि तू ऐसा ही जवाब देगा। फिर उसकी क़ब्र सत्तर हाथ मुरब्बा कुशादा कर दी जाती है, फिर उससे कह दिया जाता है कि अब तू सो जा। वह कहता है कि मैं तो अपने घर वालों को (अपना हाल) बताने के लिये जाता हूँ। वे कहते हैं कि (यहाँ आकर जाने का क़ानून नहीं है) तू सो जा, जैसा कि दुल्हन सोती है, जिसे उसके शौहर के सिवा कोई नहीं उठा सकता। (लिहाज़ा वह आराम से क़ब्र में रहता है) यहाँ तक कि अल्लाह उसे क़ियामत के दिन उस जगह से उठायेगा।

अगर मरने वाला मुनाफ़िक होता है तो वह 'मुन्कर-नकीर' को जवाब देता है कि मैंने जो लोगों को कहते सुना वही कहा (इससे ज़्यादा मैं नहीं जानता)। वे दोनों कहते हैं कि हम तो ख़ूब जानते थे कि तू ऐसा ही जवाब देगा। फिर ज़मीन से कहा जाता है कि इसे भींच दे, चुनाँचे ज़मीन उसे भींच देती है, जिसकी वजह से उसकी पसलियाँ इधर की उधर चली जाती हैं, फिर वह क़ब्र के अन्दर अज़ाब में रहता है, यहाँ तक कि (क़ियामत को) ख़ुदा उसे वहाँ से उठायेगा। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

इन हदीसों से मालूम हुआ कि ईमान वाले बरज़ख़ी ज़िन्दगी में मुत्मईन होंगे और उनके होश व हवास सालिम रहेंगे, यहाँ तक कि उनको नमाज़ का ध्यान होगा और फ़रिश्तों के सवाल का जवाब देने में बेख़ौफ़ होंगे, और जब अपना अच्छा हाल देख लेंगे तो घर वालों को ख़ुशख़बरी देने के लिये फ़रिश्तों से कहेंगे कि मैं अभी नहीं सोता घर वालों को ख़बर देने जाता हूँ और अपना अच्छा अन्जाम देखकर इन्तिहाई ख़ुशी में फ़ौरन क़ियामत आ जाने का सवाल करेंगे, ताकि जल्द से जल्द जन्नत में पहुँचें। जिसपर ख़ुदा तआ़ला का करम हो उसके होश व हवास बाक़ी रहते हैं और उससे अल्लाह जल्ल शानुहू सही जवाब दिलाते हैं जैसा कि सूरः इब्राहीम में फ़रमायाः

तर्जुमाः ईमान वालो को अल्लाह इस पक्की बात (यानी कलिमा तय्यिबा) के साथ दुनिया व आख़िरत में मज़बूत रखता है। (सूरः इब्राहीम आयत 27)

हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया कि ऐ उमर! उस वक़्त तुम्हारा क्या हाल होगा जबकि तुम क़ब्र में रख दिये जाओगे, फिर तुम्हारे पास मुन्कर-नकीर आयेंगे, जिनका रंग सियाह होगा और बाल इस क़द्र लम्बे होंगे कि ज़मीन पर घिसट रहे होंगे, उनकी आवाज़ सख़्त गरज की तरह और आँखें उचक लेने वाली बिजली की तरह होंगी। दाँत इतने लम्बे होंगे कि उनसे ज़मीन खोद रहे होंगे, वे तुमको घबराहट के आ़लम में उठायेंगे (यानी उनका ढंग घबराहट में डाल देने वाला होगा) वे तुमको हिला डालेंगे और ख़ौफ़ज़दा करेंगे।

यह सुनकर हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! क्या उस वक़्त मेरे होश व हवास इसी तरह होंगे जैसे इस वक़्त हैं? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया हाँ! (तुम इसी तरह होश में होगे जिस तरह अब हो)। हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अ़र्ज़ किया या

रसूलल्लाह! मैं उनसे निमट लूँगा। (शरहे सुदूर, बैहक़ी)

यह होश व हवास की दुरुस्तगी पुख़्ता ईमान और नेक आमाल की वजह से होगी। अगर अमल सही नहीं तो सवाल व जवाब के डर से होश क्योंकर ठिकाने रहेंगे।

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का दो क़ब्रों पर गुज़र हुआ, आपने फ़रमाया इनको अज़ाब हो रहा है, और किसी बड़े मुश्किल काम के सबब अज़ाब नहीं हो रहा है (बल्कि ऐसी मामूली बातों पर अज़ाब हो रहा है जिनसे बच सकते थे। फिर आपने उन दोनों के गुनाहों की तफ़सील बयान की कि) उन दोनों में एक पेशाब करते वक़्त पर्दा नहीं करता था (और एक रिवायत में है कि पेशाब से नहीं बचता था) और दूसरा चुग़ली करता था। फिर आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक तर (यानी ताज़ी और हरी) टहनी मंगाकर बीच में से चीरकर आधी एक क़ब्र में गाड़ दी और आधी दूसरी क़ब्र में। सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम ने अर्ज़ किया ऐ अल्लाह के रसूल! आपने ऐसा क्यों किया? इरशाद फ़रमाया उम्मीद है कि इन दोनों का अज़ाब इसके सूखने तक हल्का कर दिया जाये। (मिश्कात शरीफ़, बुख़ारी व मुसलिम)

इस हदीस से मालूम हुआ कि चुग़ली खाने और पेशाब की छींटों से न बचने को अज़ाबे क़ब्र लाने में ज़्यादा दख़ल है। और एक रिवायत में है कि जिसको अज़ाब हो रहा था वह पेशाब करते वक़्त पर्दा नहीं करता था। जैसे ये चीज़ें क़ब्र के अज़ाब को लाने में ज़्यादा दख़ल रखती हैं इसके उलट (विपरीत) सूरः मुल्क (पारः न० 29) और सूरः अलिफ़- लाम-मीम सज्दा (पारः न० 21) इन दोनों को क़ब्र के अज़ाब से बचाने में ज़्यादा दख़ल है। (इनको रात को पढ़कर सोना चाहिये)।

हज़रत ज़ैद बिन साबित रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम एक बार अपने ख़च्चर पर सवार होकर बनू नज्जार के एक बाग़ में तशरीफ़ लेजा रहे थे और हम भी आपके साथ थे, अचानक आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का ख़च्चर बिदक गया और ऐसा बिदका कि क़रीब था कि आपको गिरा दे। वहीं पाँच या छह क़ब्रें थीं, उनके बारे में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने दरियाफ़्त किया कि इन क़ब्रों को कौन पहचानता है? एक शख़्स ने अर्ज़ किया कि मैं पहचानता हूँ,

आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उससे दरियाफ़्त फ़रमाया कि ये कब मरे थे? उसने कहा कि ये शिर्क के ज़माने में मरे थे। आपने इरशाद फ़रमाया कि इनसान को क़ब्र में अ़ज़ाब दिया जाता है (जो अ़ज़ाब का हक़दार होता है), सो अगर मुझे यह डर न होता कि तुम आपस में दफ़न करना छोड़ दोगे तो मैं ख़ुदा से ज़रूर दुआ़ करता कि तुमको (भी) इस क़ब्र के अ़ज़ाब का कुछ हिस्सा सुना दे जिसको मैं सुन रहा हूँ। (मुस्लिम शरीफ़)

बुख़ारी व मुस्लिम की एक हदीस में है कि क़ब्र में अ़ज़ाब देने के लिये जब गुरज़ों से मारा जाता है तो मारे जाने की वजह से मुर्दा इस ज़ोर से चीख़ता है कि इनसान व जिन्नात के सिवा हर चीज़ उसकी चीख़ व पुकार को सुनती है।

इनसान और जिन्नात को अ़ज़ाबे क़ब्र के हालात इसलिये नहीं दिखाये जाते और वहाँ की आवाज़ सुनाई नहीं जाती कि ये दोनों फ़रीक़ ग़ैब पर ईमान लाने के मुकल्लफ़ हैं, अगर इनको अ़ज़ाबे क़ब्र दिखा दिया जाये या कानों से वहाँ के मुसीबतज़दों की चीख़-पुकार सुना दी जाये तो आँखों देखा हाल सामने आने की वजह से सब ईमान ले आयें और नेक अ़मल करने लगें, हालाँकि ख़ुदा के यहाँ ग़ैब पर ईमान लाना मोतबर है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बात सुनकर मान लें, समझ में आये या न आये बहरहाल आपकी बात सही मानें, इसी को ईमान फ़रमाया गया है। सूरः मुल्क में इरशाद है:

तर्जुमाः बेशक जो लोग अपने रब से बिन देखे डरते हैं उनके लिये मग़फ़िरत है और बड़ा अज्र है। (सूरः मुल्क आयत 12)

अगर दोज़ख़ व जन्नत और बरज़ख़ के हालात आँखों से दिखा दिये जायें तो फिर 'ईमान बिलग़ैब' न रहे और सब मान लें और मोमिन हो जायें, मगर ख़ुदा के यहाँ आँखों से देखने के बाद ईमान लाना मोतबर नहीं है, इसी वजह से मरते वक़्त ईमान लाने का एतिबार नहीं है, क्योंकि उस वक़्त अ़ज़ाब के फ़रिश्ते नज़र आ जाते हैं।

सो उनको उनका ईमान लाना नफ़ा देने वाला न हुआ जबकि उन्होंने हमारा अ़ज़ाब देख लिया।

जब क़ियामत के दिन उठ खड़े होंगे और जन्नत-दोज़ख़ आँखों से देख लेंगे तो सब ही ईमान ले आयेंगे और रसूलों की बातों की तस्दीक़ करेंगे,

मगर उस वक़्त का ईमान लाना और तस्दीक करना मोतबर नहीं है।

इनसानों को क़ब्र का अ़ज़ाब न दिखाने और न उसकी आवाज़ सुनाने में यह हिक्मत भी है कि उसको देख लेंगे या वहाँ की चीख़ व पुकार सुन लेंगे तो डर के मारे मुर्दों को दफ़न करना छोड़ देंगे जैसा कि हदीस शरीफ़ में ज़िक्र किया गया है। और यह हिक्मत भी है कि इनसान उसका आँखों देखा हाल बरदाश्त नहीं कर सकते। अगर क़ब्र के अ़ज़ाब का हाल आँखों से देख लें या कानों से सुन लें तो बेहोश हो जायें।

नबी-ए-पाक की हदीसों की रोशनी में यहाँ क़ब्रों के कुछ हालात हमने लिख दिये हैं, तफ़सील के लिये हमारी किताब **"मरने के बाद क्या होगा"** को पढ़ें, उसमें बरज़ख़, हश्र, जन्नत व दोज़ख़ के हालात तफ़सील के साथ दर्ज किये गये हैं।

ग़ौर करने की बात है कि दुनिया में हमेशा रहना नहीं है, यहाँ की ज़िन्दगी थोड़ी-सी है, और यहाँ का आराम भी मामूली है, और तकलीफ़ भी काबिले बरदाश्त है। इस ज़िन्दगी के बाद बरज़ख़ी ज़िन्दगी यानी क़ब्र में सैकड़ों साल (जब तक कियामत आए) रहना है, अगर आमाल अच्छे न हों, नमाज़ें बरबाद करके रोज़े खाकर ज़कातें रोककर लोगों के हुक़ूक़ दबाकर क़ब्र में पहुँचे और बुरे आमाल की वजह से वहाँ अ़ज़ाब होने लगा तो क्या हाल बनेगा?

हम सबको मौत के बाद की फ़िक्र करना लाज़िम है। नेक काम करें गुनाहों से बचें ताकि क़ब्र की ज़िन्दगी आराम से गुज़रे और कियामत के दिन भी कामयाब हों। नमाज़ पढ़ने में ज़रा-सी मीठी नींद की वजह से सुस्ती कर जाना, चन्द रुपयों के लालच में फ़र्ज़ ज़कात न देना और अपने सर क़ब्र और आख़िरत का अ़ज़ाब लेना बड़ी नादानी है, अल्लाह तआ़ला हम सबको आख़िरत की फ़िक्र नसीब फ़रमाये और क़ब्र और हश्र और दोज़ख़ के अ़ज़ाब से दूर रखे। आमीन

इस्लामी अक़ीदों का तफ़सीली बयान

अब हम इस्लामी अक़ीदों को तफ़सील से लिखते हैं, इनको समझकर पढ़ें और दिल से इनका एतिकाद व यक़ीन रखें।

अक़ीदाः तमाम आ़लम बिलकुल नापैद था, अल्लाह तआ़ला के पैदा

है, जो सज़ा के काबिल हैं उनको सज़ा देता है, संसार में जो कुछ होता है उसी के हुक्म से होता है, उसके हुक्म के बग़ैर एक ज़र्रा भी नहीं हिल सकता, न वह सोता है और न वह ऊँघता है, वह तमाम आलम की हिफ़ाज़त से थकता नहीं, वही सब चीज़ों को थामे हुए है, वह तमाम अच्छी और कमाल की सिफ़तों का हमेशा मालिक है, उसकी सिफ़तें हमेशा रहेंगी और उसकी कोई सिफ़त कभी ख़त्म नहीं हो सकती।

अक़ीदाः मख़्लूक़ की सिफ़तों से वह पाक है, और क़ुरआन व हदीस में बाज़ी जगह जो ऐसी बातों की ख़बर दी गयी है जो मख़्लूक़ की सिफ़तों से मिलती-जुलती हैं तो उनके मायने अल्लाह के हवाले करें कि वही उसकी हक़ीक़त जानता है, और हम बिना खोद-कुरेद किये इसी तरह ईमान लाते हैं, और यक़ीन करते हैं कि जो कुछ इसका मतलब है वह ठीक है और हक़ है।

अक़ीदाः आलम में जो कुछ बुरा-भला होता है सबको ख़ुदा तआ़ला उसके होने से पहले हमेशा से जानता है, और अपने जानने के मुवाफ़िक़ उसको पैदा करता है, सारी मख़्लूक़ के बारे में उसने पहले से तय फ़रमा दिया कि ऐसा-ऐसा होगा, तक़दीर इसी का नाम है, और बुरी चीज़ों के पैदा करने में बहुत-से भेद और राज़ हैं जिनको वही जानता है।

अक़ीदाः बन्दों को अल्लाह तआ़ला ने समझ और अक़ीदा दिया है जिससे वे गुनाह और सवाब के काम अपने इख़्तियार से करते हैं, और अपने इख़्तियार से मोमिन और काफ़िर होते हैं, अलबत्ता ईमान व कुफ़्र नेकी व बदी सबका पैदा करने वाला अल्लाह तआ़ला है।

अक़ीदाः अल्लाह तआ़ला ने बन्दों को ऐसे काम का हुक्म नहीं दिया जो बन्दों से न हो सकें।

अक़ीदाः कोई चीज़ ख़ुदा के ज़िम्मे ज़रूरी नहीं, वह जो कुछ अपनी मेहरबानी से अ़ता फ़रमाये उसका फ़ज़्ल है।

अक़ीदाः अधिक संख्या में अल्लाह तआ़ला के भेजे हुए पैग़म्बर बन्दों को सीधी राह बताने आये और वे सब गुनाहों से पाक हैं, गिनती उनकी पूरी तरह अल्लाह तआ़ला ही को मालूम है, उनकी सच्चाई बताने के लिये अल्लाह तआ़ला ने उनके हाथों ऐसी चीज़ें ज़ाहिर कीं जो और लोग नहीं कर सकते, ऐसी बातों को **"मोजिज़ा"** कहते हैं। उनमें सबसे पहले आदम अ़लैहिस्सलाम थे और सबके बाद में हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम

फ़रमाने से मौजूद हुआ।

अक़ीदा: अल्लाह एक है, वह किसी का मोहताज नहीं, न उसने किसी को जन्म दिया न वह किसी से जना गया, न उसकी कोई बीवी है, और उसका कोई हमसर और बराबर नहीं।

अक़ीदा: वह हमेशा से है और हमेशा रहेगा।

अक़ीदा: कोई चीज़ उसके मिस्ल (यानी उस जैसी) नहीं, वह सबसे निराला है।

अक़ीदा: वह ज़िन्दा है, ज़िन्दा रहने वाला है, हर चीज़ पर उसको कुदरत है।

अक़ीदा: कोई चीज़ उसके इल्म से बाहर नहीं, वह सब कुछ देखता और सुनता है।

अक़ीदा: वह कलाम फ़रमाता है (यानी बोलता है) लेकिन उसका कलाम हम लोगों के कलाम की तरह नहीं है।

अक़ीदा: वह जो चाहता है करता है, कोई उसको रोक-टोक करने वाला नहीं।

अक़ीदा: वही पूजने के क़ाबिल है, उसका कोई साथी नहीं, वह अपने बन्दों पर मेहरबान है, बादशाह है, सब ऐबों से पाक है, ज़बरदस्त है, इज़्ज़त वाला है, बड़ाई वाला है, सारी चीज़ों का पैदा करने वाला है, उसका कोई पैदा करने वाला नहीं, गुनाहों का बख़्शने वाला है, बहुत देने वाला है, रोज़ी पहुँचाने वाला है, जिसकी रोज़ी चाहे तंग कर दे और जिसकी चाहे ज़्यादा कर दे, जिसको चाहे पस्त कर दे, जिसको चाहे बुलन्द कर दे, जिसको चाहे इज़्ज़त दे, जिसको चाहे ज़िल्लत दे। इन्साफ़ वाला है, बड़े तहम्मुल और बरदाश्त वाला है, इबादत की कद्र करने वाला है, दुआ का कबूल करने वाला है, वह सब पर हाकिम है उसपर कोई हाकिम नहीं, उसका कोई काम हिक्मत से ख़ाली नहीं, वह सबका काम बनाने वाला है, वही ज़िन्दा करता है वही मारता है, जो कुछ वजूद में है उसी के इरादे से है, आराम व राहत दुख व तकलीफ़ हर्ज व मर्ज़ शिफ़ा व तन्दुरुस्ती नफ़ा व नुकसान सब कुछ उसी के इरादे से होता है।

अक़ीदा: उसको निशानियों और सिफ़तों से सब जानते हैं, उसकी ज़ात को बिलकुल पूरी तरह हम नहीं जान सकते, गुनाहगारों की तौबा कबूल करता

तशरीफ़ लाये, बाकी अम्बिया-ए-किराम इन दोनों के दरमियान गुज़रे, उनमें बाज़े बहुत मशहूर हैं जैसे-- हज़रत नूह अलैहिस्सलाम, हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम, हज़रत इसहाक़ अलैहिस्सलाम, हज़रत इसमाईल अलैहिस्सलाम, हज़रत सुलैमान अलैहिस्सलाम, हज़रत अय्यूब अलैहिस्सलाम, हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम, हज़रत हारून अलैहिस्सलाम, हज़रत ज़करिया अलैहिस्सलाम, हज़रत यस्या अलैहिस्सलाम, हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम, हज़रत इलियास अलैहिस्सलाम, हज़रत यसअ़ अलैहिस्सलाम, हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम, हज़रत लूत अलैहिस्सलाम, हज़रत इदरीस अलैहिस्सलाम, हज़रत सालेह अलैहिस्सलाम, हज़रत हूद अलैहिस्सलाम, हज़रत शुऐब अलैहिस्सलाम।

अक़ीदा: सब पैग़म्बरों की गिनती अल्लाह तआ़ला ने किसी को नहीं बताई इसलिये यूँ अक़ीदा रखे कि अल्लाह तआ़ला के भेजे हुए जितने पैग़म्बर हैं हम उन सब पर ईमान लाते हैं, जो हमको मालूम हैं उनपर भी और जो हमको मालूम नहीं हैं उनपर भी।

अक़ीदा: पैग़म्बरों में बाज़ों का रुतबा बाज़ों से बड़ा है, सबसे बड़ा रुतबा हमारे पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का है, और आपके बाद कोई नया नबी नहीं आ सकता, क़ियामत तक जितने आदमी और जिन्न होंगे आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सबके पैग़म्बर हैं।

अक़ीदा: हमारे पैग़म्बर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को एक रात अल्लाह तआ़ला ने जागते में जिस्म के साथ मक्का से बैतुल-मक़दिस पहुँचाया, और फिर उसी रात में मक्का पहुँचा दिया इसको **"मेराज"** कहते हैं।

अक़ीदा: अल्लाह तआ़ला ने कुछ मख़्लूक़ात को नूर से पैदा फ़रमा- कर हमारी नज़रों से छुपा दिया है उनको **"फ़रिश्ते"** कहते हैं, बहुत-से काम उनके हवाले किये हैं, वे कभी अल्लाह के हुक्म के ख़िलाफ़ कोई काम नहीं करते, जिस काम में लगा दिया है उसमें लगे हैं। हज़रत जिबराईल अलैहिस्सलाम बहुत मशहूर हैं, हज़राते अम्बिया-ए-किराम अलैहिमुस्सलाम पर अल्लाह की तरफ़ से **'वह्य'** (यानी अल्लाह का पैग़ाम) लाते थे, क़ुरआन मजीद भी अल्लाह तआ़ला ने उन्हीं के ज़रिये नाज़िल फ़रमाया, उनको क़ुरआन मजीद में **"रूहुल-अमीन"** के लक़ब से भी पुकारा गया है।

अक़ीदा: अल्लाह तआ़ला ने कुछ मख़्लूक़ आग से बनाई है, वह भी हमको दिखाई नहीं देती, उनको **"जिन्न"** कहते हैं, उनमें मोमिन व काफ़िर

नेक व बद सब तरह के होते हैं, उनके औलाद भी होती है, उन सब में ज़्यादा मशहूर शरीर इबलीस शैतान है।

अक़ीदाः मुसलमान जब ख़ूब इबादत करता है और गुनाहों से बचता है और दुनिया से मुहब्बत नहीं रखता और हुज़ूर नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़ूब पैरवी करता है तो वह अल्लाह का दोस्त और प्यारा हो जाता है, ऐसे शख़्स को "वली" कहते हैं। उस शख़्स से कभी ऐसी बातें ज़ाहिर होने लगती हैं जो और लोगों से ज़ाहिर नहीं होतीं, उन बातों को **"करामत"** कहते हैं।

अक़ीदाः जो शख़्स शरीअत के ख़िलाफ़ हो वह ख़ुदा का दोस्त नहीं हो सकता, अगर उसके हाथ से अचंभे की कोई बात दिखाई दे तो वह जादू है, या नफ़्सानी और शैतानी धंधा है, ऐसा शख़्स गुमराह है, उससे अक़ीदा रखना और मुरीद होना गुमराही है।

अक़ीदाः अल्लाह और रसूल ने दीन की सब बातें क़ुरआन व हदीस में बन्दों को बता दीं, अब कोई नई बात दीन में निकालना दुरुस्त नहीं, ऐसी नई बात को **"बिद्‌अत"** कहते हैं, बिद्‌अत बहुत बड़ा गुनाह है।

अक़ीदाः अल्लाह तआला ने अपने पैग़म्बरों पर बहुत-सी छोटी-बड़ी किताबें नाज़िल फ़रमाईं ताकि वे अपनी-अपनी उम्मतों को पढ़ायें और दीनी बातें सुनायें, उनमें चार किताबें बहुत मशहूर हैं- **'तौरात'** हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम को मिली, **'ज़बूर'** हज़रत दाऊद अलैहिस्सलाम को, **'इन्जील'** हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम को, **'क़ुरआन मजीद'** हमारे पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को, और क़ुरआन मजीद आख़िरी किताब है अब कोई किताब आसमान से नाज़िल न होगी, क़ियामत तक क़ुरआन ही का हुक्म चलता रहेगा। दूसरी किताबों को गुमराह लोगों ने बहुत कुछ बदल डाला मगर क़ुरआन मजीद की हिफ़ाज़त व निगहबानी का अल्लाह तआला ने वायदा फ़रमाया है, इसको कोई नहीं बदल सकता।

अक़ीदाः हमारे पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को जिन लोगों ने ईमान की हालत में देखा, फिर ईमान पर उनको मौत आ गयी, उनको **"सहाबी"** कहते हैं, उनके बड़े दरजे और रुतबे हैं, उन सबसे मुहब्बत और अच्छा गुमान रखना लाज़िम है। उनमें चार सहाबी ज़्यादा मशहूर हैं और रुतबे में दूसरे सहाबियों से बड़े हैं- **हज़रत अबू बक्र**

सिद्दीक रज़ियल्लाहु अन्हु यह हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बाद पहले ख़लीफ़ा हुए जो तमाम उम्मत में सबसे अफ़ज़ल हैं। उनके बाद हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु सारी उम्मत से अफ़ज़ल हैं, यह दूसरे ख़लीफ़ा हैं जो हज़रत अबू बक्र रज़ियल्लाहु अन्हु के बाद ख़लीफ़ा हुए। उनके बाद हज़रत उस्मान रज़ियल्लाहु अन्हु सारी उम्मत से अफ़ज़ल हैं जो हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु के बाद ख़लीफ़ा हुए, यह तीसरे ख़लीफ़ा हैं। उनके बाद हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु सारी उम्मत से अफ़ज़ल हैं जो हज़रत उस्मान रज़ियल्लाहु अन्हु के बाद ख़लीफ़ा हुए, यह चौथे ख़लीफ़ा हैं।

अक़ीदाः सहाबी का इतना बड़ा रुतबा है कि बड़े-से-बड़ा वली भी किसी सहाबी के बराबर रुतबे और दरजे को नहीं पहुँच सकता।

अक़ीदाः हमारे नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तमाम औलाद और पाक बीवियाँ अदब व सम्मान के लायक़ हैं, और औलाद में सबसे बड़ा रुतबा और दर्जा हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा का है, और बीवियों में हज़रत ख़दीजा रज़ियल्लाहु अन्हा और हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा का है।

अक़ीदाः ईमान जब दुरुस्त होता है कि अल्लाह व रसूल को सब बातों में सच्चा समझे और उन सबको मान ले। अल्लाह व रसूल की किसी बात में शक करना, उसको झुठलाना, उसमें ऐब निकालना या उसका मज़ाक उड़ाना कुफ़्र है, इन सब बातों से ईमान जाता रहता है।

अक़ीदाः कुरआन व हदीस के खुले-खुले (यानी वाज़ेह और स्पष्ट) मतलब को न मानना और ऐंच-पैंच करके अपना मतलब बनाने को मायने घड़ना बद-दीनी है।

अक़ीदाः गुनाह को हलाल समझने से ईमान जाता रहता है।

अक़ीदाः गुनाह चाहे कितना बड़ा हो, जब तक उसको बुरा समझता रहे ईमान नहीं जाता, अलबत्ता गुनाह से ईमान कमज़ोर हो जाता है।

अक़ीदाः अल्लाह तआ़ला से निडर हो जाना या ना-उम्मीद हो जाना कुफ़्र है।

अक़ीदाः नजूमी (ज्योतिषी) वग़ैरह से ग़ैब की बातें पूछना और उसका यक़ीन कर लेना कुफ़्र की बात है।

अक़ीदाः ग़ैब का हाल सिवाय अल्लाह तआ़ला के कोई नहीं जानता, अलबत्ता नबियों को अल्लाह तआ़ला ने बहुत-सी ग़ैब की बातें बताई थीं,

हमारे रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को अल्लाह तआ़ला ने सबसे ज़्यादा इल्म दिया और बहुत ज़्यादा ग़ैब की बातों की ख़बर दी, मगर आ़लिमुल-ग़ैब (ग़ैब की और छुपी चीज़ों का जानने वाला) अल्लाह तआ़ला के सिवा किसी को कहना दुरुस्त नहीं है, और ग़ैब की सब बातों को अल्लाह तआ़ला के सिवा कोई नहीं जानता।

अ़क़ीदा: किसी का नाम लेकर काफ़िर कहना या लानत करना दुरुस्त नहीं। हाँ! यूँ कह सकते हैं कि ज़ालिमों पर लानत या झूठों पर अल्लाह की लानत, मगर जिनका नाम लेकर अल्लाह और रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने लानत की है या उनके कुफ़्र पर मरने की ख़बर दी है उनको काफ़िर व मलऊन कहना जायज़ है, और उनके कुफ़्र पर मरने का यक़ीन करना और क़तई तौर पर काफ़िर और दोज़ख़ी कहना दुरुस्त है।

अ़क़ीदा: जब आदमी मर जाता है, अगर दफ़न कर दिया जाये तो दफ़न के बाद और दफ़न न किया जाये तो जिस हाल में भी हो उसके पास दो फ़रिश्ते आते हैं, जिनमें एक को **मुन्कर** और दूसरे को **नकीर** कहते हैं, वे आकर पूछते हैं कि तेरा परवरदिगार कौन है? तेरा दीन क्या है? और हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बारे में पूछते हैं कि यह कौन हैं। अगर वह ईमान वाला हो तो ठीक-ठीक जवाब देता है, फिर उसके लिये वहाँ सब तरह का चैन है, जन्नत की तरफ़ खिड़की खोल देते हैं, जिससे जन्नत की उम्दा हवा और ख़ुशबू आती रहती है, और वह क़ियामत आने तक वहाँ ख़ूब मज़े में रहता है। और अगर वह मुर्दा ईमान वाला न हो तो वह सब बातों में यही कहता है कि "मुझे कुछ ख़बर नहीं" फिर उसे बड़ी सख़्ती का अ़ज़ाब क़ियामत तक होता रहता है, मगर ये सब बातें मुर्दे को मालूम होती हैं, ज़िन्दा लोग नहीं देखते नहीं सुनते हैं, जैसे सोता आदमी ख़्वाब में बहुत कुछ देखता है और जागता आदमी उसके पास बेख़बर बैठा रहता है।

अ़क़ीदा: मरने के बाद हर दिन सुबह-शाम मुर्दे का जो ठिकाना है वह दिखा दिया जाता है, जन्नती को जन्नत दिखाकर ख़ुशख़बरी (शुभ-सूचना) देते हैं और दोज़ख़ी को दोज़ख़ दिखाकर हसरत और रंज व ग़म बढ़ाते हैं।

अ़क़ीदा: अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जितनी निशानियाँ क़ियामत की बताई हैं सब ज़रूर होने वाली हैं। इमाम मेहदी

अ़लैहिस्सलाम ज़ाहिर होंगे और ख़ूब इन्साफ़ से बादशाही करेंगे, काना दज्जाल निकलेगा और दुनिया में बहुत फ़साद मचायेगा, उसको मार डालने के वास्ते हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम आसमान से उतरेंगे और उसको मार डालेंगे। याजूज-माजूज ज़मीन पर फैल पड़ेंगे और बड़ा फ़साद करेंगे, फिर खुदा के क़हर से हलाक हो जायेंगे। एक अ़जीब तरह का जानवर ज़मीन से निकलेगा और आदमियों से बातें करेगा, पश्चिम की तरफ़ से सूरज निकलेगा। मुसलमान बिलकुल ख़त्म हो जायेंगे और तमाम दुनिया काफ़िरों से भर जायेगी, और इसके अ़लावा और बहुत-सी बातें होंगी।

अ़क़ीदाः जब सारी निशानियाँ पूरी हो जायेंगी और एक मुसलामन भी ज़िन्दा न रहेगा और काफ़िर बहुत ऐश की ज़िन्दगी गुज़ार रहे होंगे, तब अल्लाह के हुक्म से हज़रत इसराफ़ील अ़लैहिस्सलाम सूर फूँकेंगे। उस सूर के फूँकने से आसमान फट जायेगा, सितारे बेनूर हो जायेंगे, चाँद-सूरज की रोशनी जाती रहेगी, ज़मीन में ज़लज़ला आ जायेगा, आसमान फटकर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा, पहाड़ रूई के गालों की तरह उड़ जायेंगे और सारी मख़्लूक़ मर जायेगी, और सब मरे हुए बेहोश हो जायेंगे, मगर जिसको अल्लाह चाहेगा बेहोशी से बचायेगा, और एक मुद्दत इसी कैफ़ियत पर गुज़र जायेगी।

अ़क़ीदाः फिर जब अल्लाह तआ़ला को मन्ज़ूर होगा फिर सूर फूँका जायेगा, उससे फिर सारा आ़लम पैदा हो जायेगा, मुर्दे ज़िन्दा हो जायेंगे और एक मैदान में हिसाब-किताब के लिये इकट्ठे होंगे, इसी को **'रोज़े क़ियामत'** (यानी क़ियामत का दिन) कहते हैं, उसकी तकलीफ़ों पर घबराकर सब लोग हज़रात अम्बिया-ए-किराम अ़लैहिमुस्सलाम के पास सिफ़ारिश करने जायेंगे। सब इनकार कर देंगे, आख़िरकार हमारे हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सिफ़ारिश करेंगे। हिसाब-किताब शुरू होगा, तराज़ू खड़ी की जायेगी, भले-बुरे अ़मल तौले जायेंगे, आमाल पर फ़ैसले होंगे, बाज़े बेहिसाब जन्नत में चले जायेंगे, नेकों का आमालनामा दाहिने हाथ में और बुरों का बायें हाथ में पीठ के पीछे से दिया जायेगा। हमारे हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अपनी उम्मत को **'होज़े-कौसर'** का पानी पिलायेंगे, जो दूध से ज़्यादा सफ़ेद और शहद से ज़्यादा मीठा होगा। फिर पुलसिरात पर चलना होगा, जो नेक लोग हैं वे उससे पार होकर जन्नत में पहुँच जायेंगे, जो काफ़िर और बदकार हैं वे

कटकर दोज़ख़ में गिर पड़ेंगे।

अक़ीदाः दोज़ख़ पैदा हो चुकी है, उसमें साँप और बिच्छू और तरह-तरह का अज़ाब है, दोज़ख़ियों में से जिनमें ज़रा-सा भी ईमान होगा वे अपने आमाल की सज़ा भुगतकर पैग़म्बरों और नेक बन्दों की सिफ़ारिश से निकलकर जन्नत में दाख़िल हो जायेंगे चाहे कितने ही बड़े गुनाहगार हों। और जो काफ़िर व मुश्रिक हैं वे उसमें हमेशा रहेंगे, न उसमें से निकलेंगे, न उनकी कभी बख़्शिश होगी और न उनको कभी मौत आयेगी, हमेशा अज़ाब में रहेंगे।

अक़ीदाः जन्नत भी पैदा हो चुकी है और उसमें तरह-तरह के चैन और नेमतें हैं। जन्नतियों को किसी तरह का डर और ग़म न होगा, और किसी तरह की कोई तकलीफ़-दुख या थकन न होगी, और उसमें हमेशा रहेंगे, न उससे निकलेंगे न निकाले जायेंगे न निकलना चाहेंगे, उनको भी कभी मौत न आयेगी, हमेशा ऐश व आराम में रहेंगे।

अक़ीदाः अल्लाह तआला को इख़्तियार है कि छोटे गुनाह पर सज़ा दे या बड़े गुनाह को अपनी मेहरबानी से माफ़ फ़रमा दे और उसपर बिलकुल सज़ा न दे।

अक़ीदाः शिर्क और कुफ़्र का गुनाह अल्लाह तआला कभी किसी को माफ़ नहीं करता, और इनके अलावा जो गुनाह हैं उनमें से जिसको चाहेगा अपनी मेहरबानी से माफ़ फ़रमा देगा।

अक़ीदाः जिन लोगों का नाम लेकर अल्लाह और रसूल सल्ल० ने उनका जन्नती होना बता दिया है, उनके सिवा किसी के जन्नती होने का हुक्म नहीं लगा सकते, अलबत्ता किसी के बारे में उसके अच्छे आमाल देखकर अच्छा गुमान रखना और अच्छी उम्मीद रखना दुरुस्त है।

अक़ीदाः दुनिया में जागते हुए अल्लाह को इन आखों से किसी ने नहीं देखा और न कोई देख सकता हैं।

अक़ीदाः उम्र-भर कोई कैसा ही भला या बुरा आदमी हो उसका फ़ैसला उस हालत के मुवाफ़िक़ होगा जिसपर ख़ात्मा होगा। ईमान पर मरा तो ईमान वालों में और कुफ़्र पर मरा है तो कुफ़्र वालों में शुमार होगा।

अक़ीदाः आदमी उम्र-भर में जब कभी तौबा करे या मुसलमान हो, अल्लाह तआला के यहाँ मक़बूल है, अलबत्ता मरते वक़्त जब दम टूटने लगे और अज़ाब के फ़रिश्ते दिखाई देने लगें उस वक़्त काफ़िर का ईमान और

मोमिन गुनाहगार की तौबा कबूल नहीं होती। काफ़िर की बख़्शिश न होगी, अलबत्ता मोमिन गुनाहगार को अल्लाह चाहेगा तो बग़ैर अज़ाब के बख़्श देगा, या सज़ा देकर जन्नत में भेज देगा।

बहुत ज़रूरी तंबीह

कोई शख़्स मुसलमान का बेटा होने से या इस्लाम का दावेदार होने से मुसलमान नहीं होता, जब तक कि उसके अक़ीदे क़ुरआन व हदीस के मुताबिक़ न हों। बहुत-से लोग हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बाद किसी दूसरे को रसूल मानते हैं, और कुछ लोग फ़राइज़ के इनकारी हैं, और बहुत-से लोग क़ुरआन में 'तहरीफ़' (यानी अदल-बदल और कमी-बेशी होने) के क़ायल हैं, ऐसे लोग मुसलमान नहीं अगरचे इस्लाम का दावा करें।

इस्लाम के पाँच अरकान

हदीसः (10) हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि इस्लाम की बुनियाद पाँच चीज़ों पर है- अव्वल इस बात की गवाही देना कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं, और यह कि हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अल्लाह के बन्दे और रसूल हैं। दूसरे नमाज़ क़ायम करना। तीसरे ज़कात देना। चौथे हज करना। पाँचवे रमज़ान के रोज़े रखना। (मिश्कात)

तशरीहः इस हदीस में पाँच चीज़ों पर इस्लाम की बुनियाद बताई गयी है।

पहला रुक्नः उनमें पहली चीज़ तो वही तौहीद व रिसालत की गवाही है जो ईमान की जड़ है, और ये दोनों गवाहियाँ देने से उन सब अक़ायद व अहकाम का मानना फ़र्ज़ हो जाता है जो अल्लाह तआ़ला ने और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बताये हैं, और उन तमाम ख़बरों की तस्दीक़ करना भी फ़र्ज़ हो जाता है जो पीछे गुज़रे हुए और आगे होने वाले वाक़िआ़त के बारे में क़ुरआन व हदीस में आई हैं। उन्हीं ख़बरों में क़ब्र व हश्र और जन्नत व दोज़ख़ और जन्नतियों और दोज़ख़ियों के हालात की सब तफ़सीलात आ जाती हैं। पिछले पन्नों में जो इस्लामी अक़ीदे हमने बयान किये हैं वे सब तौहीद व रिसालत के मानने के तहत में आ जाते हैं, क्योंकि क़ुरआन व हदीस में ये तफ़सीलात ज़िक्र की गयी हैं। नये दौर के पढ़े-लिखे नौजवान कालिजों में पढ़ते हैं और यहूदियों व ईसाइयों से इस्लामियात की डिग्री लेते हैं,

कुरआन व हदीस में बयान की गयी बहुत-सी चीज़ों में शक करते हैं, या उनका इनकार करते हैं, और खुद को मुसलामन भी कहते हैं, जाहिल रहते हुए मुसलमान रहते तो क्या ही अच्छा होता, ईमान तो बरक़रार रहता। ऐसे इल्म का नास हो जो ख़ुदा और रसूल की बातों में शक पैदा करे। ईमान सबसे ज़्यादा क़ीमती चीज़ है इसको ज़ाया न होने दो।

तौहीद व रिसालत (यानी खुदा को एक मानना और हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के अल्लाह का रसूल होने का सच्चे दिल से इक़रार करना) की गवाही के बाद अ़मली तौर पर पूरे इस्लाम को अपने ऊपर नाफ़िज़ और लागू करना ज़रूरी है। इस्लाम के अहकाम तो बहुत हैं जो ज़िन्दगी के हर शोबे पर हावी हैं, लेकिन उनमें नमाज़, ज़कात, हज, रमज़ान के रोज़ों को बुनियादी हैसियत हासिल है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इनकी अहमियत इस तरह ज़ाहिर फ़रमाई कि इस्लाम को एक ख़ेमे से तश्बीह दी, और उसके पाँच सतून बताये, सबसे पहला सबसे बड़ा सतून तौहीद व रिसालत की गवाही है, यह मुख्य और केन्द्रीय सतून हैं, जैसे ख़ेमे के दरमियान ऊँचा सतून होता है कि अगर वह न हो तो ख़ेमा किसी तरह क़ायम ही नहीं रह सकता। फिर उस सतून के बाद चार कोनों पर एक-एक सतून चाहिये, वे सतून नमाज़, ज़कात, हज और रमज़ान के रोज़े हैं।

दूसरा रुक्नः इनमें प्राथमिकता और सबसे ज़्यादा अहमियत नमाज़ को हासिल है। तौहीद व रिसालत की गवाही के बाद इस्लाम का सबसे अहम रुक्न नमाज़ है, जिसपर बाक़ी दीन का दारोमदार है। हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अपने गवर्नरों को सरकारी हुक्मनामे के तौर पर लिखकर भेजा थाः

"जिसने नमाज़ की हिफ़ाज़त की और उसके पढ़ने की पाबन्दी की वह अपने (बाक़ी) दीन की भी हिफ़ाज़त करेगा। और जिसने अपनी नमाज़ को ज़ाया कर दिया वह अपने (बाक़ी) दीन को उससे ज़्यादा ज़ाया करेगा। इस वजह से कि नमाज़ इस्लाम का सबसे बड़ा सतून है।"

एक हदीस में इरशाद फ़रमाया है कि जिसने नमाज़ की पाबन्दी न की वह क़ियामत के दिन फ़िरऔन, हामान, क़ारून, और उबई बिन ख़लफ़ के साथ होगा। (जबकि उसने काफ़िरों का अ़मल किया तो अ़क़्ल का तक़ाज़ा है कि काफ़िरों वाला हश्र हो)।

तीसरा रुक्नः नमाज़ के बाद ज़कात का ज़िक्र फ़रमाया, जो इस्लाम का

तीसरा रुक्न है। कुरआन शरीफ़ में इरशाद है:

तर्जुमाः और मुश्रिकों के लिये बड़ी ख़राबी है जो ज़कात नहीं देते और आख़िरत के इनकारी हैं। (सूरः हामीम सज्दा आयत 6-7)

इस आयते शरीफ़ा का आख़िरी हिस्सा इस तरफ़ इशारा कर रहा है कि ज़कात न देना मुश्रिकों का काम है, अल्लाह बचायें ज़कात रोकने से और नफ़्स की कन्जूसी से, जो इस्लाम के एक रुक्न को गिरा दे।

चौथा रुक्नः काबा शरीफ़ के हज के मुताल्लिक हुज़ूरे अक़्दसः सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया है कि:

हदीसः जिसके पास रास्ते का ख़र्च और खाने-पीने के लिए और सवारी का इन्तिज़ाम हो, जो उसे बैतुल्लाह यानी काबा शरीफ़ तक पहुँचा दे, और ऐसा शख़्स हज न करे, सो कुछ ताज्जुब नहीं कि यहूदियत या ईसाइयत की हालत में मरे, क्योंकि अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं कि 'और अल्लाह के लिये लोगों के ज़िम्मे बैतुल्लाह का हज करना है, जो वहाँ पहुँचने की गुन्जाइश रखता हो। (मिश्कात शरीफ़)

कैसे ज़ालिम लोग हैं जो हक़ीर और फ़ानी रुपये को बचाने के लिये हज को छोड़ देते हैं।

जिसपर हज फ़र्ज़ हो जाये जल्द-से-जल्द कर ले, कल पर न टाले। एक हदीस में इरशाद है:

हदीसः जो हज को जाना चाहे उसे जल्दी करना ज़रूरी है। (मिश्कात)

हज इतना बड़ा रुक्न है कि उसके छोड़ने वाले को हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यहूदियत ईसाइयत की मौत पर मरने वाला फ़रमाया है। (अल्लाह अपनी पनाह में रखे)।

पाँचवाँ रुक्नः रमज़ान मुबारक के रोज़े रखना भी इस्लाम के पाँच अरकान में से है। कुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमाः ऐ ईमान वालो! फ़र्ज़ किये गये तुमपर रोज़े, जिस तरह फ़र्ज़ किये गये थे उन लोगों पर जो तुमसे पहले थे, ताकि तुम परहेज़गार बन जाओ। ये (रोज़े) गिनती के चन्द हैं। (सूरः ब-क़रः आयत 183-184)

अफ़सोस! कि साल-भर में एक महीना अल्लाह के लिये रोज़ाना चन्द घन्टे खाना-पीना और नफ़्स की ख़्वाहिश के छोड़ने को बहुत-से लोग तैयार नहीं होते और इस्लाम के इस सतून को ढाने में लगे हुए हैं, फिर भी ख़ुद को

मुसलमान कहते हैं।

इस हदीस की तशरीह में हम यहाँ इसी क़द्र पर इक्तिफ़ा और बस करते हैं। नमाज़, ज़कात, हज, रमज़ान के रोज़ों के अहकाम की तफ़सीलात आगे अपने-अपने बाब (अध्याय) में आ रही हैं। (इन्शा- अल्लाह तआला)

इस्लाम कामिल व मुकम्मल दीन है, इसमें कमी-बेशी की गुन्जाइश नहीं

हदीसः (11) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा रिवायत फ़रमाती हैं कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो कोई हमारे इस दीन में वह काम जारी करे जो इसमें नहीं है तो वह काम मरदूद है।

तशरीहः इस्लाम मज़हब एक साफ़, सच्चा और मुकम्मल दीन है, जब तक दुनिया रहेगी उस वक़्त तक इसका हर हुक्म महफ़ूज़ है। कैसे ही हालात बदल जायें और कैसे ही इन्क़िलाबात आ जायें लेकिन इस्लाम अपनी जगह अटल रहेगा, इसकी किसी चीज़ में बदलने की गुन्जाइश नहीं। इनसानी ज़िन्दगानी के तमाम शोबों के क़वानीन इस्लाम ने ऐसे बना दिए और तैयार कर दिये हैं कि उनसे बेहतर कोई पेश नहीं कर सकता, और न आज तक कोई पेश कर सका। इस्लाम इस क़द्र कामिल है कि इस्लाम के न हुकूमती निज़ाम में तब्दीली की गुन्जाइश है न उसके आर्थिक ढाँचे में किसी इज़ाफ़े या कमी की ज़रूरत है, न उसकी समाजी व्यवस्था में किसी तब्दीली का मौक़ा है न उसके बनाये हुए मामलात के तरीक़ों के मुताल्लिक़ किसी तरमीम (संशोधन) की हाजत है। ग़रज़ यह कि ज़िन्दगी के तमाम शोबों में इस्लाम जारी व सारी है और इसमें कहीं भी किसी जगह बदलाव व तरमीम की ज़रूरत नहीं, और क्योंकर तब्दीली की ज़रूरत हो सकती है? जबकि अल्लाह जल्ल शानुहू इस बात का ऐलान फ़रमा चुके हैं कि "आज मैंने तुम्हारे लिए तुम्हारे दीन को कामिल कर दिया"।

फिर इस्लाम के हुक्मों में कोई उलझाव और पैचीदगी नहीं है, जिसकी वजह से समझने या अमल करने में दिक़्क़त पेश आये, बल्कि इसका हर फ़ैसला दो-टूक और हर एक हुक्म साफ़ और स्पष्ट और हर क़ानून ज़ाहिर और साफ़ वाज़ेह है।

"अत्-तरग़ीब वत्-तरहीब" में है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व

सल्लम ने फ़रमायाः

हदीसः अलबत्ता मैंने तुमको ऐसे साफ़ रास्ते पर छोड़ा है जिसका रात और दिन बराबर है, उससे वही हटेगा जो हलाक होगा। (यानी अपनी जान को दोज़ख़ में डालने को तैयार होगा)।

जबकि इस्लाम मज़हब कामिल व मुकम्मल और साफ़ व स्पष्ट मज़हब है। जिसमें ज़रा-सी भी तरमीम और इज़ाफ़े की गुन्जाइश नहीं है, तो अब इसमें किसी बिद्अ़त का निकालना और अपनी तरफ़ से किसी ऐसे काम को दीन में दाख़िल करना जो दीन में नहीं है, सरासर गुमराही होगी, और दीन में अपनी तरफ़ से पंचर लगाना होगा। हज़रत इमाम मालिक रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमायाः

जिसने बिद्अ़त का काम किया, गोया उसने यह समझा कि मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अल्लाह का हुक्म पहुँचाने में ग़लती की है और पूरा दीन नहीं पहुँचाया, और अहकाम ठीक-ठीक नहीं बतलाये हैं, लिहाज़ा मैं इसमें अपनी तरफ़ से कोई अ़मल जारी करके नाक़िस दीन की तकमील करता हूँ। (अल्लाह की पनाह)।

बिद्अ़त वाले यूँ तो हरगिज़ नहीं कहते कि हम बिद्अ़त कर रहे हैं, बल्कि अपने आमाल को दीन ही का हिस्सा समझते हैं, जिसकी वजह से उनको क़ुरआन व हदीस देखने की भी तौफ़ीक़ नहीं होती और हक़ व बातिल की तमीज़ नहीं रहती। चूँकि ग़लती और सरासर नाफ़रमानी को बिद्अ़ती लोग नेकी समझते हैं इसलिये बिद्अ़त से तौबा नहीं करते, न तौबा की उनको तौफ़ीक़ होती है।

बिद्अ़त के अ़लावा कोई कितना ही बड़ा गुनाह हो, चूँकि इनसान उसे गुनाह समझता है इसलिये उसके करने से डरता भी है और तौबा भी करता है, क़ियामत के दिन की पकड़ का भी ख़्याल उसके दिल में पैदा होता है, लेकिन बिद्अ़त को चूँकि नेकी समझकर किया जाता है इसलिये उससे तौबा करने का मौक़ा ही नहीं मिलता। शैतान की सबसे बड़ी चाल यही है कि इनसान को ऐसे अ़मल पर डाल दे जो हक़ीक़त में गुनाह हो और करने वाला उसे नेकी समझता हो। "तरग़ीब व तरहीब" में हैः

तर्जुमाः इबलीस (यानी शैतान) ने कहा कि मैंने लोगों को गुनाह कराके हलाक किया (यानी दोज़ख़ का मुस्तहिक़ बनाया) तो उन्होंने मुझे इस तरह

हलाक कर दिया कि गुनाह करके तौबा कर ली (और मेरी मेहनत पर तौबा करके पानी फेर दिया) जब मैंने यह माजरा देखा तो मैंने ऐसे अ़मल जारी कर दिये जो नफ़्सों की ख़्वाहिशों के मुवाफ़िक़ हैं (और हक़ीक़त में गुनाह हैं, अब वे उन कामों को चूँकि नेकी समझते हैं) इसलिये अपने को सही रास्ते पर जानते हैं, लिहाज़ा इस्तिग़फ़ार नहीं करते।

चूँकि सुन्नत के ख़िलाफ़ काम बिद्अ़त है इसलिये बिद्अ़त के आमाल मुक़र्रर नहीं हैं बल्कि बेशुमार हैं, और हर मुल्क और हर इलाक़े और हर राज्य में अलग-अलग बिद्अ़तें हैं। अ़वाम से मरऊ़ब होकर बहुत-से इलाक़ों में उलमा भी बिद्अ़तों में शरीक नज़र आते हैं। आ़लिमों की ज़िम्मेदारी है कि अ़वाम में जो भी कुछ अ़मल होता देखें उसे क़ुरआन व हदीस और ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन व सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम के अ़मल में तलाश करें, अगर न मिले तो पूरी कोशिश करें कि वह अ़मल छूट जाये और उसकी जगह हुज़ूरे पाक की सुन्नत पर अ़मल होने लगे। शादी- विवाह, मरने-जीने में हर जगह बेशुमार बिद्अ़तें होती हैं, क़ब्रों पर बेशुमार बेइन्तिहा गुनाह होते हैं, जिनको सवाब का काम समझा जाता है लेकिन हक़ीक़त में बिद्अ़त होते हैं। तीजा, दसवाँ, बीसवाँ, चालीसवाँ, बरसी सवाब पहुँचाने के लिए ख़ुद अपने बनाए हुए और घड़े हुए तरीक़े, क़ब्रों के उर्स, क़ब्रों पर चादरें या फूल चढ़ाना, क़ब्रों को गुस्ल देना, पुख़्ता बनाना, क़ब्रों पर रोटियाँ या ग़ल्ला बाँटना, शबे-बराअत का हल्वा, हज़रत जाफ़र के कूँडे, हज़रत पीराने-पीर की ग्यारहवीं, मौलूद में क़्याम, बीबी जी कि सहनक वग़ैरह बेशुमार बिद्अ़तें राईज हैं, और इनके मिटाने के लिये अल्लाह के सच्चे बन्दे जान तोड़ कोशिश कर चुके हैं, लेकिन चूँकि इन चीज़ों को नेकी समझकर किया जाता है इसलिये छोड़ने के बजाय उलमा-ए-किराम को ही बुरा कह दिया जाता है, और औरतें तो रस्मों और बिद्अ़तों की ऐसी पाबन्द हैं कि दुख-तकलीफ़, तंगी-तुर्शी, अमीरी-ग़रीबी हर हाल में उनके अन्जाम देने को फ़र्ज़ समझती हैं। फ़र्ज़ नमाज़ों को छोड़ देंगी मगर बिद्अ़तें और रस्में न छोड़ेंगी। अल्लाह तआ़ला समझ दे और हर मुसलमान को हर बिद्अ़त से बचाये। तफ़सील के लिये **'बहिश्ती ज़ेवर'** का छटा हिस्सा और **'इस्लाहुर्-रुसूम'** का मुतालआ करें।

हदीसः (12) हज़रत अबू सअ़लबा ख़ुश्नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि

बेशक अल्लाह ने (बहुत-से) फ़राइज़ मुक़र्रर फ़रमाये हैं, सो उनको तुम ज़ाया न करो। और उसने बहुत-सी चीज़ों को हराम क़रार दिया है सो उनको करने वाले न बनो। और उसने हदें मुक़र्रर फ़रमाई हैं सो उनसे आगे मत बढ़ो, और उसने बहुत-सी चीज़ों के बारे में ख़ामोशी इख़्तियार फ़रमाई है, यह ख़ामोशी भूलने की वजह से नहीं है, सो उनको मत कुरेदो। (मिश्कात शरीफ़)

तशरीहः इस हदीस पाक में हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने चार चीज़ों का हुक्म फ़रमाया है जो बहुत ही अहम हैं।

अव्वलः फ़राइज़ की पाबन्दी। **दूसरेः** जो चीज़ें हराम हैं उनसे बचना। **तीसरेः** अल्लाह की हदों से आगे न बढ़ना। **चौथेः** जिन चीज़ों के हलाल या हराम होने के बारे में कुछ नहीं फ़रमाया उनके कुरेदने से बचना।

फ़राइज़ की पाबन्दी और हराम चीज़ों से बचना सबसे ज़्यादा अहम है, लोग इससे बहुत ग़ाफ़िल हैं। ताज्जुब है कि बहुत-से लोग मख़्लूक़ के हुक्मों की पाबन्दी और ड्यूटी के अन्जाम देने को पूरी तरह करते हैं और अल्लाह तआ़ला जो सबका हाकिम, राज़िक़ और ख़ालिक़ है उसके फ़राइज़ की ड्यूटी अन्जाम देने और उसकी मना की हुई चीज़ों से बचने को कोई अहमियत नहीं देते, और बहुत-से लोग नवाफ़िल और ग़ैर-फ़राइज़ में पेश-पेश नज़र आते हैं और फ़राइज़ की अदायगी में ज़बरदस्त कोताही करते हैं और खुलेआम हराम चीज़ों में पड़े हुए हैं। मैंने ख़ुद बाज़े लोगों को देखा है कि तहज्जुद और ज़िक्र-तस्बीह के बहुत पाबन्द हैं लेकिन फ़र्ज़ नमाज़ें उनके ज़िम्मे क़ज़ा हैं। बाज़े लोगों को देखा जाता है कि नफ़िल सदक़ा-ख़ैरात करने और मिस्कीनों को खाना खिलाने और रोज़ेदारों के रोज़े खुलवाने में अपने माल में से बड़ा हिस्सा ख़र्च करते हैं लेकिन ज़कात सही हिसाब से नहीं देते और बाक़ायदा अदा नहीं करते, और हज भी छोड़े हुए होते हैं। बहुत-से लोग हराम कमाने से नहीं बचते और उसी से हज करते हैं और अपने दीनदार होने के गुमान में ही मुब्तला हैं।

बहुत-से पीरों और फ़क़ीरों ने लोगों को बहका रखा है कि सालाना नज़राना दिये जाओ तुम जन्नती हो, नमाज़-रोज़े की ज़रूरत नहीं, बस हमको नज़राना देने से अल्लाह के प्यारे हो जाओगे। ऐसे पीरों ने लोगों का नास कर रखा है, ख़ुद डूबे हैं मगर उनको भी ले डूबे हैं। हासिल यह कि अल्लाह के फ़राइज़ की पाबन्दी और हराम कामों से बचना बहुत ही ज़्यादा अहम और

ज़रूरी है। अल्लाह तआ़ला हम सबको इसकी तौफ़ीक़ दे, आमीन।

यह बात भी याद रखना ज़रूरी है कि फ़राइज़ और हराम चीज़ों का सब बयान कुरआन मजीद में भी है और हदीस शरीफ़ में भी। हदीस शरीफ़ का इनकार करने वाला फ़िर्क़ा जो यह कहता है कि कुरआन पर अ़मल करना काफ़ी है, यह उसकी जहालत है और बेदीनी की बात है। कुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमा: और रसूल जो कुछ तुमको दें वह ले लो, और जिस चीज़ से तुमको रोक दें उससे रुक जाओ। (सूरः हश्र आयत 7)

और फ़रमाया:

तर्जुमा: आप फ़रमा दीजिये कि अगर तुम अल्लाह तआ़ला से मुहब्बत रखते हो तो मेरा इत्तिबा करो (यानी मेरी पैरवी करो और मेरा कहना मानो) अल्लाह तआ़ला तुमसे मुहब्बत फ़रमायेंगे। (सूरः आलि इमरान आयत 31)

और हदीस शरीफ़ में है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

हदीसः क्या तुम में से कोई यह समझता है कि अपनी मस्नद पर तकिया लगाये अटकल से यूँ कहे कि अल्लाह ने उसके सिवा कुछ हराम नहीं किया जो इस कुरआन में है। ख़बरदार! यक़ीन जानो ख़ुदा की क़सम खाकर कहता हूँ कि मैंने बहुत-सी चीज़ों का हुक्म दिया है, नसीहतें की हैं, और बहुत-सी चीज़ों से मैंने रोका है, और यह सब तायदाद में कुरआन के अहकाम के बराबर हैं, बल्कि उससे भी ज़्यादा हैं।

और यह जो फ़रमाया कि "अल्लाह ने बहुत-सी हदें मुक़र्रर फ़रमाई हैं, उनसे आगे न बढ़ो" इस जुमले से बेशुमार अहकाम व मसाइल निकलते हैं, मिसाल के तौर पर चन्द चीज़ें ज़िक्र की जाती हैं।

अल्लाह की हदों से आगे बढ़ने की चन्द मिसालें

(1) अल्लाह तआ़ला ने जिन चीज़ों को हलाल किया है उनको अपने ऊपर हराम कर लेना- जैसे कुछ लोग बाज़े फलों के मुताल्लिक़ तय कर लेते हैं कि हम यह नहीं खायेंगे, या और किसी तरह से हराम कर लेते हैं। कुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमा: ऐ ईमान वालो! अल्लाह ने जो चीज़ें तुम्हारे वास्ते हलाल की हैं

उनको हराम मत करो, और हदों से आगे मत निकलो, बेशक अल्लाह तआला हद से आगे निकलने वालों से मुहब्बत नहीं फ़रमाते। (सूरः मायदा आयत 87)

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक बार शहद पीने के मुताल्लिक फ़रमा दिया था कि अब हरगिज़ नहीं पियूँगा, अल्लाह तआला ने आयत नाज़िल फ़रमाई:

तर्जुमाः ऐ नबी! तुम उस चीज़ को क्यों हराम करते हो जिसे अल्लाह ने तुम्हारे लिये हलाल किया है। (सूरः तहरीम आयत 1)

ऐसी बहुत-सी रस्में आज लोगों में मौजूद हैं जिनमें अमलन बल्कि एतिक़ाद के तौर पर बहुत-सी हलाल चीज़ों को हराम समझ रखा है- जैसे **'ज़ीक़ादा'** के महीने में (जिसे औरतें ख़ाली का महीना कहती हैं) और **'मुहर्रम'** और **'सफ़र'** के महीने में शरीअत में शादी करना ख़ूब हलाल और दुरुस्त है, लेकिन अल्लाह की इस हद से लोग आगे निकलते हैं और उनमें शादी करने से बचते हैं। मुहर्रम के महीने में मियाँ-बीवी वाले ताल्लुक़ात से बचते हैं, और बहुत-सी क़ौमों में बेवा (विधवा) औरत के दूसरे निकाह को ऐब की बात समझते हैं, और अमली तौर पर इसको हराम बना रखा है। यह सब हदों से आगे बढ़ जाना है।

जिस तरह हलाल को हराम करना मना है उसी तरह हराम को हलाल कर लेना भी मना है। हराम व हलाल मुक़र्रर फ़रमाने का इख़्तियार अल्लाह ही को है, चाहे उसने क़ुरआन में नाज़िल फ़रमाया हो या अपने नबी सल्ल० की ज़बानी बताया हो, क़ुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमाः और जिन चीज़ों के बारे में महज़ तुम्हारा ज़बानी झूठा दावा है, उनके बारे में यूँ मत कह दिया करो कि फ़लाँ चीज़ हलाल है और फ़लाँ चीज़ हराम है, जिसका हासिल यह होगा कि अल्लह पर झूठी तोहमत लगाओगे।

(सूरः नह्ल आयत 116)

(2) दूसरा तरीक़ा हद से आगे बढ़ने का यह है कि जो चीज़ अल्लाह के यहाँ निकटता और नज़दीकी का सबब न हो उसे अल्लाह की नज़दीकी का बाइस समझ लेना- जैसे क़ब्रों का तवाफ़, जो शिर्क है, या न बोलने का रोज़ा रख लेना, या धूप में खड़ा रहना वग़ैरह।

(3) एक तरीक़ा हद से आगे बढ़ने का यह है कि जो चीज़ शरीअत में ज़रूरी नहीं है अगरचे जायज़ हो, अमल से या एतिक़ाद के तौर पर उसे फ़र्ज़

का दर्जा दे दें, और जो उसे न करे उसे भला-बुरा कहें उसपर ताना मारें- जैसे शबे-बराअत का हल्वा और ईदुल-फ़ित्र की सवैयाँ कि शरअ़न इन दोनों की कोई असलियत नहीं है, मगर लोग इसे ज़रूरी समझते हैं, और जो न पकाये उसको ताने सहने पड़ते हैं। शादी-विवाह और मरने-जीने में बेशुमार ऐसी रस्में की जाती हैं जिनको फ़र्ज़ का दर्जा दिया जाता है, और शरीअ़त में उनकी कोई असल नहीं, बल्कि बाज़ी उनमें शिरकिया रस्में हैं।

(4) एक तरीक़ा हद से आगे बढ़ने का यह है कि उमूमी चीज़ को जो हर वक़्त मुस्तहब (पसन्दीदा और अच्छी) है, उसे किसी ख़ास वक़्त के साथ मख़्सूस कर लें- जैसे फ़ज्र और अ़स्र की नमाज़ के बाद इमाम से मुसाफ़ा करना और ईद व बक़र-ईद के दिन नमाज़े-दोगाना पढ़कर गले मिलना और मुसाफ़ा करना। मुसाफ़ा बड़े सवाब की चीज़ है और मुलाक़ात की सुन्नत है न कि ईद की, इसको किसी ख़ास वक़्त के लिये मुक़र्रर करना और अ़मल से फ़र्ज़ व वाजिब का दर्जा देना सही नहीं।

(5) हद से आगे बढ़ जाने की एक शक्ल यह है कि किसी अ़मल के बारे में वह फ़ज़ीलत तजवीज़ कर ली जाये जो क़ुरआन व हदीस से साबित नहीं- जैसे दुआ-ए-गन्जुल् अ़र्श और दुरूदे-लक्खी की फ़ज़ीलत घड़ रखी है।

(6) एक सूरत हद से आगे बढ़ जाने की यह है कि किसी अ़मल की कोई ख़ास तरकीब व तरतीब तजवीज़ कर ली जाये- जैसे मुख़्तलिफ़ रकअ़तों में मुख़्तलिफ़ सूरतें पढ़ना तजवीज़ कर लेना- जैसे तहज्जुद की नमाज़ के मुताल्लिक़ अ़वाम में मशहूर है कि पहली रकअ़त में बारह बार **क़ुल् हुवल्लाहु** पढ़ी जाये और फिर हर रकअ़त में एक-एक बार घटाता जाये। यह लोगों ने ख़ुद तजवीज़ किया है। इसी तरह हफ़्ते-भर के दिनों की नमाज़ें और उनकी ख़ास-ख़ास फ़ज़ीलतें और उनकी मख़्सूस तरकीबें लोगों ने बना ली हैं, यह भी हद से आगे बढ़ जाना है।

(7) किसी सवाब के काम को किसी ख़ास जगह के साथ मख़्सूस कर लेना (जिसको ख़ास करना शरीअ़त से साबित न हो) यह भी हद से आगे बढ़ जाना है- जैसे बाज़ी जगह दस्तूर है कि क़ब्र पर ग़ल्ला या रोटी तक़सीम करते हैं। सवाब हर जगह से पहुँच जाता है फिर इसमें अपनी तरफ़ से क़ब्र पर होने को तय कर लेना और यह समझना कि यहाँ तक़सीम करने से ज़्यादा सवाब मिलेगा, अल्लाह की हदों से आगे बढ़ जाना है।

(8) एक सूरत हद से आगे बढ़ जाने की यह है कि बाज़ी खाने की चीज़ों के मुताल्लिक़ अपनी तरफ़ से यह तजवीज़ कर लिया जाये कि उसे फ़लाँ शख़्स खा सकता है और फ़लाँ नहीं खा सकता है- जैसे मक्का के मुशरिक किया करते थे। कुरआन में उन लोगों के मुताल्लिक़ फ़रमाया गया है:

तर्जुमाः और वे अपने (बातिल) ख़्याल से यह भी कहते हैं कि (मख़्सूस) पशु और (मख़्सूस) खेत हैं, उनको कोई नहीं खा सकता सिवाय उनके जिनको हम चाहें, और (यह भी अपने बातिल ख़्याल से कहते हैं कि) ये (मख़्सूस) पशु हैं जिनपर सवारी या बोझ लादना हराम कर दिया गया है, और (मख़्सूस) पशु हैं जिनपर ये लोग अल्लाह का नाम नहीं लेते महज़ अल्लाह पर झूठ बाँधने के तौर पर, अल्लाह उनको जल्द ही झूठ बाँधने की सज़ा दे देगा। और वे (यह भी) कहते हैं कि जो चीज़ उन मवेशियों (यानी पशुओं) के पेट में है वह ख़ालिस हमारे मर्दों के लिये है और हमारी औरतों पर हराम है। और अगर वह मुर्दा है तो उसमें वे सब (मर्द-औरत) साझी हैं। अल्लाह तआ़ला उनको जल्द ही इस ग़लत-बयानी की सज़ा दे देगा, बेशक वह हिक्मत वाला है और इल्म वाला है। (सूरः अनआ़म आयत 138-139)

इसी क़िस्म की शक्लें आजकल फ़ातिहा व नियाज़ वाले लोगों ने बना रखी हैं। मिसाल के तौर पर हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा को सवाब पहुँचाने के लिये बीबी जी की सेहनक के नाम से कुछ रस्म की जाती है, उस रस्म में जो खाना पकता है उसमें यह क़ायदा बना रखा है कि उस खाने को मर्द और लड़के नहीं खा सकते सिर्फ़ लड़कियाँ खायेंगी, और उसके साथ-साथ यह भी फ़र्ज़ कर रखा है कि उस खाने के लिये कोरे बरतन हों, जगह लीपी-पोती हुई हो। यह सब ख़ुराफ़ात अपनी तरफ़ से ईजाद की हुई हैं, अल्लाह रब्बुल-इ़ज़्ज़त का इरशाद है:

तर्जुमाः आप उनसे कह दीजिये कि यह तो बतलाओ कि अल्लाह ने तुम्हारे लिये जो कुछ रिज़्क़ भेजा था फिर तुमने (अपनी मन-घड़त से) उसका कुछ हिस्सा हराम और कुछ हिस्सा हलाल क़रार दे लिया, आप उनसे पूछिये क्या तुमको ख़ुदा ने हुक्म दिया है या महज़ अल्लाह पर ही झूठ बाँधते हो।

(सूरः यूनुस आयत 59)

(9) एक सूरत हद से बढ़ जाने की यह है कि अपनी तरफ़ से किसी गुनाह का मख़्सूस अ़ज़ाब तजवीज़ कर लिया जाये जो अल्लाह की किताब

और नबी-ए-पाक की हदीस में मज़्कूर न हो, जैसा कि बहुत-से वाईज़ (तक़रीर करने वाले) बयान करते फिरते हैं।

(10) यह सूरत भी हद से बढ़ जाने की है कि किसी चीज़ के मुताल्लिक यह तय कर लिया जाये कि इसका हिसाब न होगा, जबकि हदीस में उसका सबूत न हो। जैसे मशहूर है कि रमज़ान शरीफ़ के आख़िरी जुमा को नया कपड़ा या नया जूता पहन लिया जाये तो वह बेहिसाब हो जाता है। इसी लिए बाज़े लोग बहुत-से जोड़े उस दिन पहन लेते हैं। यह सब ग़लत और बेहूदा है।

ये चन्द सूरतें हद से आगे बढ़ जाने की नाचीज़ ने लिख दी हैं, ग़ौर करने से और निकल सकती हैं। अल्लाह की हदों से आगे बढ़ना ज़बरदस्त जुर्म है, कुरआन मजीद में जगह-जगह इससे मना फ़रमाया गया है, चुनाँचे इरशाद हैः

तर्जुमाः ये अल्लाह की हदें हैं, इनसे निकलने के नज़दीक भी मत जाओ। (सूरः ब-क़रः आयत 187)

और फ़रमायाः

तर्जुमाः ये अल्लाह की हदें हैं, सो इनसे आगे मत निकलना, और जो अल्लाह की हदों से बाहर निकल जाये सो ऐसे ही लोग ज़ुल्म करने वाले हैं। (सूरः ब-क़रः आयत 229)

और फ़रमायाः

तर्जुमाः और जो शख़्स अल्लाह और उसके रसूल की फ़रमाँबरदारी न करे और उसकी हदों से आगे बढ़ जाये, अल्लाह उसको आग में दाख़िल फ़रमायेगा, जिसमें वह हमेशा रहेगा, और उसके लिये ज़लील करने वाली सज़ा है। (सूरः निसा आयत 14)

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह जो फ़रमाया कि "अल्लाह तआला शानुहू ने बहुत-सी चीज़ों के बारे में ख़ामोशी इख़्तियार फ़रमाई है, जो भूलने की वजह से नहीं है सो उनको मत कुरेदो" इसका मतलब यह है कि अल्लाह तआला ने जो चीज़ें हलाल बताई हैं उनको हलाल समझो, और जिन चीज़ों को हराम किया है उनको अक़ीदे और अमल से हराम समझो। हराम व हलाल के कायदे भी बता दिये गये हैं ज़रूरत के वक़्त उन कायदों से काम लो। और जिन चीज़ों के मुताल्लिक कोई हुक्म सादिर

नहीं फ़रमाया तुम ख़्वाह-मख़्वाह उनकी कुरेद में मत पड़ो। नुबुव्वत के ज़माने में बाज़ी बार सवाल करने पर अहकाम नाज़िल हो जाते थे, लिहाज़ा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिन चीज़ों के बयान से ख़ामोशी है उनको मत कुरेदो। अल्लाह ने जिस चीज़ की मनाही नहीं फ़रमाई उसके मुताल्लिक़ यह न समझो कि (अल्लाह की पनाह) अल्लाह तआ़ला को भूल लग गई है जो इसका हुक्म नाज़िल नहीं फ़रमाया, बल्कि उसने तुमपर रहम फ़रमाया कि उस चीज़ से नहीं रोका, उसके करने पर तुम्हारी पकड़ न होगी। जब अल्लाह मना फ़रमाना चाहेंगे मनाही नाज़िल हो जायेगी, तुम ख़ुद सवाल करके मुमानअ़त (मनाही) होने का सबब क्यों बनते हो? मुमकिन है कि सवाल करने पर ऐसा हुक्म नाज़िल हो जाये जिसके करने से जान चुराओ, उस वक़्त मुजरिम बनोगे। क़ुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमाः ऐ ईमान वालो! ऐसी बातें मत पूछो कि अगर तुमसे ज़ाहिर कर दिया जाये तो तुम्हारी नागवारी का सबब हो। और अगर तुम क़ुरआन पाक नाज़िल होने के ज़माने में उन बातों को पूछो तो तुमसे ज़ाहिर कर दी जायें। पीछे गुज़रे हुए सवालात अल्लाह ने माफ़ कर दिये और अल्लाह बड़ी मग़फ़िरत वाले बड़े हिल्म वाले हैं। ऐसी बातें तुमसे पहले लोगों ने भी पूछी थीं, फिर वे उन बातों का हक़ न बजा लाये। (सूरः मायदा आयत 101-102)

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद कोई नया हुक्म नाज़िल होने का एहतिमाल ख़त्म हो गया, जिस दीन पर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने छोड़ा है उस सब पर इत्तिबा लाज़िम है। हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु रिवायत फ़रमाते हैं कि (हज्जतुल-विदा के मौके पर) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हमको ख़ुतबा दिया और फ़रमाया कि ऐ लोगो! तुम पर हज फ़र्ज़ किया गया है, लिहाज़ा हज करो। एक शख़्स ने सवाल किया ऐ अल्लाह के रसूल! क्या हज हर साल फ़र्ज़ है? उसके जवाब में नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कुछ न फ़रमाया, यहाँ तक कि पूछने वाले ने तीन बार यही सवाल किया तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अगर मैं हाँ कह देता तो हर साल ही वाजिब हो जाता और तुम उसपर अ़मल न कर सकते, उसके बाद फ़रमायाः

हदीसः मैं जब तक (बग़ैर बताये तुमको छोड़े रखूँ) तुम मुझे छोड़े रखो, (यानी सवाल मत करो) क्योंकि तुमसे पहले लोग इसी लिये हलाक हुए कि

सवाल बहुत करते थे और अपने पैग़म्बरों के ख़िलाफ़ चलते थे। इसलिए मैं तुमको जब किसी चीज़ का हुक्म दूँ जहाँ तक हो सके उसे करो, जिससे रोकूँ उससे रुक जाओ।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पूरा दीन कामिल व मुकम्मल हमको देकर दुनिया से तशरीफ़ ले गये हैं, हलाल व हराम और जायज़ व नाजायज़ ख़ूब वाज़ेह (स्पष्ट) करके बता दिया है, और जिन चीज़ों के मुताल्लिक़ खुला हुक्म मौजूद नहीं है क़ायदों से उनके हलाल व हराम होने और जायज़ व नाजायज़ होने का पता चल जाता है, जो क़ुरआन व हदीस में बयान कर दिये गये हैं। इसलिए जिन चीज़ों का हुक्म खुले तौर पर और वाज़ेह अन्दाज़ में क़ुरआन व हदीस में न मिले उनको जायज़ समझा जायेगा, जैसे हम बहुत-सी तरकारियाँ खाते हैं जिनका ज़िक्र क़ुरआन व हदीस में नहीं है और शरई क़ायदों से उनका हराम होना भी साबित नहीं, इसलिये उनका खाना जायज़ है। इसी तरह रेल, हवाई जहाज़, बस की सवारी और उन दवाओं का हुक्म जिनकी मनाही ख़ुसूसी या क़ायदों की रू से नहीं निकलती, उनका इस्तेमाल करना दुरुस्त है।

मुसलमान औरतों से

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बातें

* औरतों के लिए *

गुस्ल और वुज़ू का बयान

लेखक

हज़रत मौलाना आशिक़ इलाही साहिब बुलन्द शहरी

रहमतुल्लाहि अलैहि

अनुवादक: मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा. लि.)

422, मटिया महल, उर्दू मार्किट, जामा मस्जिद

देहली-110006

गुस्ल और वुज़ू का बयान

वुज़ू, गुस्ल और तयम्मुम का बयान

पाकी के बग़ैर नमाज़ कबूल नहीं होती

हदीसः (13) हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि कोई नमाज़ बग़ैर तहारत (पाकी) कबूल नहीं की जाती, और कोई सदक़ा उस माल से क़बूल नहीं होता जो माल ग़नीमत से चुराया गया हो।

तशरीहः इस हदीस में दो बातें बताई हैं, अव्वल यह कि कोई नमाज़ तहारत के बग़ैर कबूल नहीं होगी। और माले-हराम से कोई सदक़ा कबूल नहीं होगा।

हदीस में 'ग़ुलूल' का लफ़्ज़ है, जो काफ़िरों का माल जिहाद में लूट लिया जाए उसको माले-ग़नीमत कहते हैं, और उसमें से ख़ियानत के तौर पर ले लेने और चोरी कर लेने को 'गुलूल' कहते हैं। यहाँ पर हराम माल मुराद है, जो भी हराम माल किसी के पास हो उसका सदक़ा करने से सदक़ा कबूल न होगा। कुछ आलिमों ने फरमाया है कि हराम माल से सदक़ा करने से कुफ़्र का ख़ौफ़ है।

तहारत यानी पाकी का इस्लाम में बड़ा मर्तबा है। कुरआन शरीफ में इरशाद है:

तर्जुमाः यक़ीन जानो कि अल्लाह ख़ूब तौबा करने वालों को और अच्छी तरह पाकी हासिल करने वालों को दोस्त रखता है। (सूरः ब-क़रः आयत 222)

नमाज़ सही होने के लिये बदन, कपड़े जाय-नमाज़ का पाक होना और बा-वुज़ू होना शर्त है। और जिसपर गुस्ल फ़र्ज़ है उसकी भी नमाज़ न होगी, जब तक गुस्ल न करे। गुस्ल फ़र्ज़ होते हुए वुज़ू से भी मतलूबा पाकी हासिल न होगी जिससे नमाज़ पढ़ना दुरुस्त हो जाए।

नीचे वुज़ू और गुस्ल का तरीक़ा और फ़राइज़ वग़ैरह लिखे जाते हैं, वुज़ू, गुस्ल और पाकी व नापाकी के तफ़सीली अहकाम जानने के लिए बहिश्ती

ज़ेवर के पहले हिस्से का मुताला कीजिए।

वुज़ू के चार फ़र्ज़: (1) पेशानी के बालों से लेकर ठोड़ी के नीचे तक और दोनों कानों की लौ तक एक बार मुँह धोना। (2) दोनों हाथ कोहनी समेत एक बार धोना। (3) एक बार चौथाई सर का मसह करना। (4) दोनों पाँव टख़्नों समेत धोना।

वुज़ू की सुन्नतें: (1) नीयत करना। (2) शुरू में बिस्मिल्लाह पढ़ना। (3) शुरू में दोनों हाथ कलाई तक धोना। (4) कुल्ली करना। (5) मिस्वाक करना। (6) नाक में तीन बार पानी डालना, यानी साँसों के साथ नरम जगह तक पानी ले जाना। (7) फिर तीन बार नाक झाड़ना। (8) तीन-तीन बार धोना। (9) सारे सर और कानों का मसह करना। (10) हाथों और पैरों की उंगलियों का ख़िलाल करना। (11) लगातार इस तरह धोना कि पहला अंग सूखने न पाये और दूसरा अंग धुल जाए। (12) तरतीबवार धोना कि पहले मुँह धोये, फिर कोहनियों समेत हाथ धोये, फिर सर का मसह करे, फिर पाँव धोये। सुन्नत छोड़ने से वुज़ू तो हो जाता है मगर सवाब कम मिलता है।

वुज़ू की मुस्तहब चीज़ें: (1) हाथ और पाँव धोने में दाहिने से शुरू करना। (2) गर्दन का मसह करना। (3) क़िब्ला-रू होकर बैठना। (4) पहले हाथ-पाँव तर हाथ से मल लेना (ताकि धोते वक़्त ख़ूब पानी पहुँच जाये)। (5) अंगूठी को ख़ूब हिला लेना, अगर बग़ैर हिलाये पानी पहुँच जाता हो। और अगर अंगूठी तंग हो, बग़ैर हिलाए पानी न पहुँचता हो तो उसको उतार कर या हिलाकर पानी पहुँचाना फ़र्ज़ है। (6) वुज़ू करते वक़्त दूसरे से मदद न लेना (यानी वुज़ू के अंगों पर दूसरे का हाथ इस्तेमाल न करना। (7) ऊँची जगह पर बैठना। (8) आँखों के कोनों का और हर उस जगह का ख़ास ख़्याल रखना जहाँ पानी न पहुँचने का कुछ एहतिमाल (यानी आशंका और अंदेशा) रह जाए। (9) पाँव बाएँ हाथ से धोना। (10) वुज़ू के ख़त्म पर दुआ पढ़ना।

वुज़ू में जो चीज़ें मक्रूह हैं, जिनसे बचना चाहिए

(1) नापाक जगह वुज़ू करना। (2) सीधे हाथ से नाक साफ़ करना। (3) वुज़ू करते वक़्त दुनिया की बातें करना। (4) ख़िलाफ़े सुन्नत वुज़ू करना। (5) पानी ज़्यादा बहाना, या इतना कम ख़र्च करना कि सुन्नत तरीक़े

पर वुज़ू न हो सके। (6) ज़ोर से छपके मारना।

वुज़ू को तोड़ने वाली चीज़ें

इन चीज़ों से वुज़ू टूट जाता है। (1) पाख़ाना करना। (2) पेशाब करना (3) हवा ख़ारिज होना। (4) ख़ून या पीप निकल कर बह जाना। (5) मुँह भरकर कै (यानी उल्टी) करना। (6) लेटकर या टेक लगा कर सो जाना। (7) मस्त या बेहोश हो जाना। (8) रुकूअ़-सज्दे वाली नमाज़ में बालिग़ मर्द या औरत का क़हक़हा मारकर यानी इस तरह हंसना कि क़रीब वाला सुन ले।

वुज़ू का तरीक़ा

वुज़ू करने का तरीक़ा यह है कि पाक बरतन में पाक पानी लेकर पाक जगह पर बैठो। अगर ऊँची जगह क़िब्ला-रू बैठने का मौक़ा हो तो यह बेहतर है। आस्तीन कोहनियों से ऊपर चढ़ा लो, फिर बिस्मिल्लाह पढ़ो, तीन बार गट्टों तक दोनों हाथ धोओ, फिर तीन बार कुल्ली करो और मिस्वाक करो, मिस्वाक न हो तो उंगली से दाँत मल लो, फिर तीन बार नाक में पानी डालकर यानी साँस के साथ पानी ऊपर को नरम जगह तक लेकर जाएँ, हाथ से तीन बार नाक साफ़ करो, फिर तीन बार मुँह धोओ, मुँह पर पानी ज़ोर से न मारे, पेशानी के बालों से ठोड़ी के नीचे तक और उधर दोनों कानों की लौ तक मुँह धो लो। फिर कोहनियों समेत दोनों हाथ धोओ, पहले दाहिना हाथ तीन बार फिर बायाँ हाथ तीन बार धोना चाहिये। फिर दोनों हाथ पानी से तर करके यानी भिगोकर सर का मसह करो, फिर कानों का मसह करो, फिर गर्दन का मसह करो, फिर तीन-तीन बार दोनों टख़्नों समेत पाँव धोओ। पहले दाहिना पाँव फिर बायाँ पाँव धोना चाहिए। फिर वुज़ू के बाद वाली दुआ पढ़ो, दुआओं के बयान में वुज़ू की दुआएँ भी आ रही हैं।

सर का मसह इस तरह करो कि दोनों हाथ पानी से तर करके दाएँ हाथ और बाएँ हाथ की उंगलियाँ बराबर मिलाकर पेशानी के बालों पर रखकर पूरे सर पर दोनों हाथ गुज़ारते हुए गुद्दी तक ले जाओ, फिर गुद्दी से दोनों हाथों की हथेलियों को कानों के पास से और उंगलियों को दरमियान से गुज़ारते हुए वापस पेशानी तक ले आओ। उसके बाद कानों के ज़ाहिरी हिस्से का अंगूठों से और अन्दरूनी हिस्से का शहादत की उंगली से इस तरह मसह करो कि कानों में हर जगह उंगली पहुँच जाए और सलवटों से गुज़र जाए, और दोनों

उंगलियाँ कानों के सूराख़ों में दाख़िल कर दो, और उंगलियों की पुश्त से गर्दन का मसह करो, अलबत्ता गले का मसह न करो, क्योंकि यह मना है।

गुस्ल का सुन्नत तरीक़ा

जब गुस्ल का इरादा करे तो पहले इस्तिन्जा करे, और अगर किसी जगह ज़ाहिरी गंदगी और नापाकी लगी हो तो उसको धो ले। फिर वुज़ू करते हैं, अगर पुख़्ता जगह हो तो पाँव धोना छोड़ दे, पूरा गुस्ल करके आख़िर में पाँव धो दे। वुज़ू में ख़ूब मुँह भरकर कुल्ली करे, अगर रोज़ा न हो तो ग़रारा भी करे, और नाक में पानी ख़ूब सफ़ाई करके साँस के साथ जहाँ तक नरम जगह है वहाँ तक तीन बार पानी पहुँचाए। वुज़ू के बाद थोड़ा-सा पानी लेकर सारे बदन को मल ले, उसके बाद तीन बार सर पर पानी डाले, फिर दाहिने काँधे पर फिर बाएँ काँधे पर तीन बार पानी डाले, और हर जगह ख़्याल करके पानी पहुँचाए, बाल बराबर जगह सूखी रह जाएगी तो गुस्ल न होगा।

मसलाः अगर गुस्ल के बाद मालूम हो कि फ़लाँ जगह सूखी रह गई है तो ख़ास उसी जगह को धो ले, फिर से पूरा गुस्ल दोहराने की ज़रूरत नहीं।

गुस्ल के फ़राइज़ः गुस्ल के तीन फ़र्ज़ हैं। (1) ख़ूब हलक़ तक पानी से मुँह भरकर एक बार कुल्ली करना। (2) नाक में साँस के साथ एक बार पानी चढ़ाना, जहाँ तक नरम जगह है। (3) तमाम बदन पर एक बार पानी बहाना।

गुस्ल की सुन्नतेंः गुस्ल की सुन्नतें ये हैं। (1) गुस्ल की नीयत करना। (2) पहले ज़ाहिरी नापाकी दूर करना और इस्तिन्जा करना। (3) फिर वुज़ू करना। (4) बदन को मलना। (5) सारे बदन पर तीन बार पानी बहाना (जिसमें तीन-तीन बार कुल्ली करना और नाक में पानी पहुँचाना भी शामिल है)।

गुस्ल में मकरूह बातेंः मकरूहाते गुस्ल ये हैं। (1) बिना ज़रूरत पानी बहाना। (2) या इतना कम पानी लेना कि जिससे अच्छी तरह सुन्नत के मुवाफ़िक़ गुस्ल न हो सके। (3) नंगे होने की हालत में किसी से बात करना। (नंगे होने की हालत में क़िब्ला की तरफ़ रुख़ होना या क़िब्ला की तरफ़ पुश्त करना)।

वुज़ू के ज़रूरी मसाइल

मसला: किसी के हाथ-पाँव फट गए और फटन में मोम, रोग़न या और कोई दवा भर ली, और उसके निकालने से नुकसान होगा, तो अगर उसके निकाले बग़ैर ऊपर ही ऊपर पानी बहा दिया तो वुज़ू हो जाएगा।

मसला: वुज़ू करते वक़्त ऐड़ी या किसी और जगह पानी नहीं पहुँचा, और जब पूरा वुज़ू हो चुका तब मालूम हुआ कि फ़लानी जगह सूखी है तो वहाँ पर फ़कत हाथ फेर लेना काफी नहीं है बल्कि पानी बहाना लाज़िम है।

मसला: अगर हाथ-पाँव वग़ैरह में कोई फोड़ा है जिसपर पानी डालने से कोई नुकसान होता है तो पानी न डाले, वुज़ू करते वक़्त उसपर भीगा हुआ हाथ फेर ले, इसको मसह कहते हैं। और अगर मसह करना भी नुक़सान करे तो हाथ भी न फेरे, उतनी जगह छोड़ दे (नुकसान करने न करने का फ़ैसला माहिर दीनदार डॉक्टर की राय और ज़ाती तजुर्बे से होगा)।

मसला: अगर ज़ख़्म पर पट्टी बंधी हो और पट्टी खोलकर ज़ख़्म पर मसह करने से कोई नुकसान हो या पट्टी खोलने बाँधने में ज़्यादा दिक़्क़त और तकलीफ़ हो तो पट्टी के ऊपर मसह कर लेना दुरुस्त है। और अगर ऐसा न हो तो पट्टी पर मसह करना दुरुस्त नहीं है, पट्टी खोलकर ज़ख़्म पर मसह करना चाहिए।

मसला: अगर पूरी पट्टी के नीचे ज़ख़्म नहीं है, तो अगर पट्टी खोलकर ज़ख़्म को छोड़कर बाकी सब जगह धो सके तो ऐसा ही करे। और अगर पट्टी खुद न खोल सके और कोई दूसरा खोलने-बाँधने वाला भी नहीं है तो सारी पट्टी पर मसह कर ले, जहाँ ज़ख़्म है वहाँ भी और जहाँ ज़ख़्म नहीं है वहाँ भी।

मसला: जिस चीज़ के निकलने से वुज़ू टूट जाता है वह चीज़ नापाक होती है, और जिससे वुज़ू नहीं टूटता वह नजिस और नापाक भी नहीं। तो अगर ज़रा-सा ख़ून निकला कि ज़ख़्म के मुँह से बहा नहीं, या ज़रा-सी कै हुई, मुँह भरकर नहीं हुई और उसमें खाना या पानी या पित्त या जमा हुआ ख़ून निकला तो यह ख़ून और कै नापाक नहीं है, उसका धोना वाजिब नहीं है। और अगर मुँह भरकर कै हुई तो वह नापाक है, किसी जगह कपड़े या बदन में लग जाए तो धोना वाजिब है। मुँह भरकर कै हो तो गिलास वग़ैरह को मुँह लगाकर कुल्ली न करे ताकि बरतन नापाक न हो, चुल्लू में पानी

लेकर कुल्लियाँ करे। दूध-पीता बच्चा अगर मुँह भरकर दूध डाल दे तो वह भी नापाक होगा।

मसलाः वुज़ू के बाद किसी का सतर (यानी बदन का वह हिस्सा जिसका छुपाना ज़रूरी है) देख लिया, या अपना सतर खुल गया, या नंगी होकर नहाई और नंगे ही वुज़ू किया, तो वुज़ू दुरुस्त है, इन सब सूरतों में वुज़ू दोहराने की ज़रूरत नहीं है, अलबत्ता किसी का सतर देखना या अपना दिखाना सख़्त गुनाह और हराम है।

मसलाः अगर वुज़ू करने के बाद नाख़ून काटे, या किसी जगह की खाल नोच डाली, तो उससे वुज़ू नहीं टूटता और उस जगह को दोबारा धोना भी ज़रूरी नहीं। अगर वुज़ू करना तो याद है और उसके बाद वुज़ू टूटना अच्छी तरह याद नहीं कि टूटा है कि नहीं तो उसका वुज़ू बाक़ी समझा जायेगा, उसी से नमाज़ दुरुस्त है, लेकिन वुज़ू दोबारा कर लेना बेहतर है।

मसलाः नाबालिग़ बच्चे जो क़ुरआन मजीद पढ़ते हैं उनको आदत डलवाई जाए कि वुज़ू के साथ क़ुरआन छुएँ। लेकिन इस बारे में उनपर सख़्ती न की जाये, वे बेवुज़ू भी क़ुरआन छू सकते हैं, क्योंकि मुकल्लफ़ नहीं हैं।

गुस्ल के ज़रूरी मसाइल

मसलाः फ़र्ज़ गुस्ल की अदायगी के लिए ख़ूब मुँह भरकर हलक़ तक पानी लेजाकर कुल्ली करना और जहाँ तक नाक का नरम हिस्सा है वहाँ तक पानी पहुँचाना और कान में पानी पहुँचाना फ़र्ज़ है।

मसलाः गुस्ल करते वक़्त शुरू में जब बड़ा इस्तिन्जा करें तो खुलकर बैठें ताकि जहाँ तक पानी जा सकता है चला जाए। ऐसे ही औरत अपने ख़ास मक़ाम की खाल में पानी पहुँचाए वरना गुस्ल न होगा।

मसलाः नथ और बालियों के सूराख़ों में भी ख़ूब ख़्याल करके पानी पहुँचाओ। अगर पानी न पहुँचा तो गुस्ल न होगा। अगर अंगूठी-छल्ले पहने हुए हों और वे तंग हों तो उनको भी पानी डालते वक़्त हिला लो ताकि पानी पहुँच जाए। बग़लों और जाँघों में भी ख़्याल करके पानी पहुँचाएँ।

मसलाः अगर गुस्ल में किसी जगह पानी पहुँचाना भूल जाए तो याद आने के बाद पूरा गुस्ल दोहराना ज़रूरी नहीं है, सिर्फ़ उसी जगह पर पानी बहा ले जो ख़ुश्क रह गयी थी।

मसलाः अगर नाख़ून में आटा भरकर सूख गया, फिर वुज़ू या गुस्ल किया और पानी अन्दर पहुँच गया तो वुज़ू व गुस्ल हो गया, वरना उसे निकाल कर हाथ धो डाले।

मसलाः अगर दाँतों पर मिस्सी की धड़ी जमी हुई है या दाँतों के अन्दर छालिया अटकी हुई है तो उसको निकालकर दाँत साफ़ करके गुस्ल करे, वरना गुस्ल न होगा।

मसलाः नील पॉलिश जो आजकल नाख़ूनों पर लगाई जाती है, उसके होते हुए वुज़ू और गुस्ल नहीं हो सकता, क्योंकि यह रंग नहीं है बल्कि गाढ़ी चीज़ है, जिसके अन्दर पानी नहीं पहुँचता।

मोज़ों पर मसह करना

हदीसः (14) हज़रत शुरैह रह. (ताबिअी) से रिवायत है कि मैं हज़रत उम्मुल-मोमिनीन आयशा रज़ियल्लाहु तआला अन्हा की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और उनसे मालूम किया कि मोज़ों पर मसह करने की क्या मुद्दत है? उन्होंने फ़रमाया कि तुम हज़रत अली के पास जाओ, क्योंकि अली रज़ियल्लाहु अन्हु हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के वुज़ू को सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम में सबसे ज़्यादा जानने वाले हैं। वह हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ सफ़र किया करते थे। चुनाँचे मैं अली रज़ियल्लाहु अन्हु की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और उनसे सवाल किया, उन्होंने बताया कि (मोज़ों के मसह की मुद्दत) मुक़ीम के लिए एक दिन एक रात और मुसाफ़िर के लिए तीन दिन तीन रात है। (शरह मआनिल-आसार व मुस्लिम शरीफ़)

तशरीहः अल्लाह पाक के दीन में बड़ी आसानियाँ हैं। उन्हीं में से एक यह आसानी है कि अगर चमड़े के मोज़े वुज़ू करके पहन ले फिर वुज़ू टूट जाए तो अब वुज़ू करते वक़्त मोज़े उतारकर पाँव धोना ज़रूरी नहीं है, बल्कि सर के मसह से फ़ारिग़ होकर पाँव धोने के बजाय मोज़ों पर मसह कर लेना काफ़ी है, मगर शर्त यह है कि ऐसे मोज़े हों जिनसे दोनों पाँव के टख़्ने छुपे हुए हों।

मसलाः जो शरई तौर पर मुसाफ़िर हो वह तीन दिन तीन रात और जो घर पर है वह एक दिन एक रात के अन्दर-अन्दर जितनी बार वुज़ू करे मोज़ों पर मसह कर ले। जब यह मुद्दत गुज़र गई तो अब मोज़े उतारकर पाँव धोए

बग़ैर वुज़ू न होगा। और यह एक दिन एक रात (मुक़ीम के लिए) और तीन दिन तीन रात (मुसाफ़िर के लिए) उस वक़्त से शुमार होंगे जिस वक़्त मोज़े पहनने के बाद वुज़ू टूट जाए।

शरई मुसाफ़िर से मुराद वह शख़्स है जो अड़तालीस (48) मील के सफ़र के लिए अपनी बस्ती या शहर से निकल जाए, अगरचे हवाई जहाज़ का सफ़र हो। अगर घर रहते हुए मोज़ों का मसह शुरू किया, फिर एक दिन एक रात पूरा होने से पहले सफ़र शुरू कर दिया तो तीन दिन तीन रात की मुद्दत पूरी कर ले। और अगर सफ़र में मोज़े पहन कर मसह शुरू किया था और एक दिन एक रात पूरा होने से पहले घर पहुँच गया तो एक दिन एक रात पूरा होने तक मसह करे। और अगर एक दिन एक रात पूरा हो चुका है तो मोज़े उतारकर पाँव धो ले, और हर सूरत में मुद्दत की इब्तिदा उसी वक़्त से होगी जब से पाँव धोकर मोज़े पहनने के बाद वुज़ू टूटा हो।

मसलाः मोज़े पर मसह करने का तरीक़ा यह है कि दोनों हाथ की उंगलियाँ तर करके पूरी उंगलियों को पाँव की उंगलियों पर रखकर पिंडली तक एक बार खींचकर ले जाए। कम-से-कम हाथ की तीन उंगलियों से मसह करे। अगर दो उंगलियों से मसह किया तो दुरुस्त न हुआ। मसह पूरी उंगलियों से करे सिर्फ़ पौरों से मसह न करे।

मसलाः अगर एक मोज़ा उतार दिया तो दोनों पैरों का मसह टूट गया, इसी तरह दोनों मोज़ों या एक मोज़े के अन्दर पानी भर गया तो भी दोनों पाँव का मसह टूट गया। और अगर मसह की मुद्दत ख़त्म हो गई तब भी मसह टूट गया। इन तीनों सूरतों में अगर वुज़ू नहीं टूटा है बल्कि सिर्फ़ मसह टूटा है तो सिर्फ़ पाँव धोकर ऊपर से मोज़े पहनकर उसी वुज़ू से नमाज़ पढ़ी जा सकती है, पूरा वुज़ू दोहराना लाज़िम नहीं।

मसलाः जिसपर गुस्ल फ़र्ज़ हो जाए उसके लिए मोज़ों का मसह दुरुस्त नही है। उसपर फ़र्ज़ है कि मोज़े उतारकर पाँव धोए अगरचे मसह की मुद्दत पूरी न हुई हो।

मसलाः आम तौर पर ऊनी, सूती या नाईलोन के मोज़े पहने जाते हैं, उनपर मसह दुरुस्त नहीं है। अलबत्ता अगर ख़ूब मोटे मोज़े हों तो उनपर मसह जायज़ होने पर बड़ी तफ़सील है, ज़रूरत के वक़्त आलिमों से मसला मालूम करें, कोई मोतबर आलिम क़रीब में न हो तो पाँव धोने का एहतिमाम

करें, ताकि यक़ीन के साथ वुज़ू हो जाए।

वुज़ू और गुस्ल के स्थान पर तयम्मुम करना

हदीसः (15) हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु तआला अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया है कि हमको (दूसरी उम्मतों के) लोगों पर तीन बातों में फ़ज़ीलत दी गई है- अव्वल यह कि हमारी (नमाज़ की) सफ़ें फ़रिश्तों की सफ़ों की तरह बना दी गईं। दूसरे यह कि सारी ज़मीन हमारे लिए मस्जिद बना दी गई है (ऐसी कोई पाबन्दी नहीं कि मस्जिद ही में नमाज़ होगी बल्कि घर, बाज़ार, जंगल किसी भी पाक जगह नमाज़ पढ़ लेंगे तो नमाज़ हो जाएगी)। तीसरे यह कि मिट्टी हमारे लिए पाक करने वाली बना दी गई है, जबकि हमको पानी न मिले। (मिश्कात शरीफ़)

तशरीहः इस हदीस से मालूम हुआ कि पानी मौजूद न हो तो वुज़ू और गुस्ल की जगह तयम्मुम कर लिया जाए। कुरआन मजीद में वुज़ू और गुस्ल का (मुख़्तसर) तरीक़ा बताकर इरशाद फ़रमाया है:

तर्जुमाः और अगर तुम बीमार हो (और पानी का इस्तेमाल नुक़सानदेह हो) या सफ़र की हालत में हो (और पानी न हो) या तुम में से कोई इस्तिन्जे से आया, या तुमने बीवियों से निकटता की हो, फिर पानी न पाओ तो पाक ज़मीन के इस्तेमाल का इरादा कर लो। पस अपने चेहरों और हाथों पर हाथ फेर लिया करो उस ज़मीन पर से (यानी ज़मीन पर हाथ मारने के बाद)।

(सूरः मायदः आयत 6)

हज़रत अबूज़र रज़ियल्लाहु तआला अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि बेशक पाक ज़मीन मुसलमानों का वुज़ू है, अगरचे दस साल पानी न पाए। पस जब पानी मिल जाए तो अपने बदन पर (वुज़ू या गुस्ल की ज़रूरत के एतिबार से) इस्तेमाल करे। (मश्कात शरीफ़)

जिस तरह **"हदसे असग़र"** (यानी बाज़ चीज़ों से वुज़ू टूट जाना) और **"हदसे अकबर"** (यानी बाज़ चीज़ों से गुस्ल फ़र्ज़ हो जाना) 'नजासते हुक्मी' है जो अ़क्ल से समझ में नहीं आती, इसी तरह उस नापाकी को वुज़ू या गुस्ल के ज़रिये दूर करना 'हुक्मी तहारत' है, जिसका समझ में आना ज़रूरी नहीं। अल्लाह जल्ल शानुहू और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के

फ़रमान के मुताबिक़ जिस तरह वुज़ू और गुस्ल से पाकी हासिल हो जाती है उसी तरह बग़ैर किसी शक के तयम्मुम से भी पूरी पाकी हासिल हो जाती है। मसाइल की किताबों में तफ़सील से तयम्मुम के मसाइल लिखे हैं। पस जिसको वुज़ू या गुस्ल करने की हाजत हो और पानी न मिले, या पानी तो हो लेकिन उसके इस्तेमाल से बीमार हो जाने का ग़ालिब ख़तरा हो, या रस्सी या डोल यानी कुएँ से पानी निकालने का सामान मौजूद न हो, या दुश्मन का ख़ौफ़ हो, या सफ़र में पानी एक मील के फ़ासले पर हो तो इन सब सूरतों में वुज़ू और गुस्ल की जगह तयम्मुम कर ले।

तयम्मुम का तरीका

तयम्मुम में नीयत फ़र्ज़ है। यानी नीयत करे कि मैं नापाकी दूर करने के लिए या नमाज़ पढ़ने के लिए तयम्मुम करती हूँ। नीयत के बाद दोनों हाथों को पाक मिट्टी पर मारे, फिर हाथ झाड़कर तमाम मुँह पर मले, और जितना हिस्सा मुँह का वुज़ू में धोया जाता है उतने हिस्से पर हर जगह हाथ पहुँचाए। फिर दोबारा मिट्टी पर हाथ मारकर हाथों को कोहनियों तक मले, दाहिने हाथ को बाएँ हाथ से और बाएँ हाथ को दाहिने हाथ से मले, जितनी जगह वुज़ू में धोते हैं, उन सब जगहों में हाथ पहुँचाये, उंगलियों का ख़िलाल भी करे और अंगूठी वग़ैरह उतारकर तयम्मुम करे ताकि हर जगह हाथ पहुँच जाए। नथनों के दरमियान जो जगह है उसपर भी हाथ फेरे।

वुज़ू और गुस्ल के तयम्मुम में कोई फ़र्क़ नहीं है। और जितनी पाकी वुज़ू और गुस्ल से होती है उतनी ही तयम्मुम से भी होती है, तयम्मुम में सर या पाँव पर मसह नहीं होता और न कुल्ली और नाक में पानी पहुँचाने की जगह कुछ किया जाता है।

तयम्मुम को तोड़ने वाली चीज़ें

जो चीज़ें वुज़ू को तोड़ देती हैं उनसे तयम्मुम भी टूट जाता है। तथा पानी का मिलना और उसके इस्तेमाल पर क़ादिर होना भी तयम्मुम को तोड़ देता है।

मसला: अगर किसी पर गुस्ल फ़र्ज़ है तो एक तयम्मुम ही काफ़ी है, वुज़ू और गुस्ल की नीयत करके अलग-अलग दो बार तयम्मुम करना लाज़िम नहीं, एक ही तयम्मुम करके नमाज़ पढ़ ले, उसके बाद कोई वुज़ू तोड़ने वाली चीज़

पेश आ जाए तो वुज़ू की जगह तयम्मुम कर ले। और अगर गुस्ल के लायक पानी मिले तो गुस्ल कर ले, क्योंकि गुस्ल के लायक मात्रा में पानी मिलने से गुस्ल फ़र्ज़ हो जाएगा।

यहाँ हमने वुज़ू, गुस्ल और तयम्मुम की ज़रूरी मालूमात लिख दी है, तफ़सील के लिए इसी किताब में ख़त्म के करीब "किताबे तहारत" देखो।

कुछ पेजों के बाद इन्शा-अल्लाह तआ़ला नमाज़ का तफ़सीली बयान शुरू होगा, लेकिन उससे पहले पाकी-नापाकी की तफ़सील और इस सिलसिले के ज़रूरी मसाइल लिख देते हैं, क्योंकि नमाज़ियों को इन मसलों का जानना ज़रूरी है।

नजासत की किस्में

हक़ीक़ी और हुक्मी, ग़लीज़ा और ख़फ़ीफ़ा और वह मात्रा जो माफ़ है

नजासते हुक्मीः नजासते हुक्मी उसे कहते हैं जो बज़ाहिर देखने में न आए लेकिन शरीअ़त का हुक्म होने की वजह से नापाकी मानकर पाकी हासिल करना फ़र्ज़ होता है। उसकी दो किस्में हैं:

हदसे अकबरः यानी गुस्ल फ़र्ज़ होना।

हदसे असग़रः यानी वुज़ू फ़र्ज़ होना। नमाज़ दुरुस्त होने के लिए हदसे अकबर और हदसे असग़र दोनों से पाक होना फ़र्ज़ है। वुज़ू तोड़ने वाली चीज़ें पहले बयान हो चुकी हैं।

नजासते हक़ीक़ीः नजासते हक़ीक़ी वह है जो देखने में आती है और शरीअ़त ने उसे नापाक करार दिया है, और ऐसी चीज़ों को आ़म तौर पर आदमी भी नापाक और गन्दगी समझते हैं- जैसे पेशाब, पाख़ाना, शराब वग़ैरह।

नजासते ग़लीज़ाः ख़ून, आदमी का पाख़ाना और पेशाब और सुअर के जिस्म का हर हिस्सा यहाँ तक कि उसके बाल भी, और घोड़े, गधे, ख़च्चर की लीद, गाय, बैल, भैंस का गोबर, बकरी-भेड़ की मैंगनी, मुर्ग़, बतख़, मुर्ग़ाबी की बीट, कुत्ते और बिल्ली का पाख़ाना और पेशाब, गधे और ख़च्चर और तमाम हराम जानवरों का पेशाब, ये सब चीज़ें नजासते ग़लीज़ा हैं। और

छोटे दूध पीते बच्चे का पाख़ाना पेशाब भी नजासते ग़लीज़ा है।

नजासते ख़फ़ीफ़ा: हराम परिन्दों की बीट और हलाल पशुओं जैसे बकरी, गाय, बैल, भैंस, ऊँट और घोड़े का पेशाब नजासते ख़फ़ीफ़ा है।

मसला: मुर्ग़ी, बतख़ और मुर्ग़ाबी के अलावा हलाल परिन्दों की बीट पाक है जैसे- कबूतर, चिड़िया, मैना वग़ैरह।

मसला: मछली का ख़ून नापाक नहीं, अगर कपड़े या बदन में लग जाए, चाहे जितना हो, बग़ैर धोए नमाज़ हो जाएगी। मक्खी, खटमल, मच्छर का ख़ून भी नापाक नहीं।

मसला: हलाल जानवर को शरीअ़त के मुताबिक़ ज़िबह करने के बाद जब उसका ख़ून निकलकर बह जाता है तो बोटियों पर जो थोड़ा-बहुत ख़ून लगा रह जाता है वह पाक है।

मसला: नजासते ग़लीज़ा में से अगर पतली और बहने वाली चीज़ कपड़े या बदन में लग जाए तो अगर फैलाव में रुपये के बराबर है या इससे कम हो तो माफ़ है, यानी उसको धोए बग़ैर नमाज़ पढ़ ले तो नमाज़ हो जाएगी, लेकिन न धोना और इसी तरह नमाज़ पढ़ते रहना मकरूह है। और अगर वह रुपये से ज़्यादा है तो माफ़ नहीं है, उसके बग़ैर धोए नमाज़ न होगी। और अगर नजासते ग़लीज़ा में से कोई गाढ़ी चीज़ लग जाए जैसे- पाख़ाना और मुर्ग़ी वग़ैरह की बीट, तो अगर वज़न में साढ़े चार माशे या उससे कम हो तो बे-धोए नमाज़ दुरुस्त है, और अगर उससे ज़्यादा लग जाए तो बे-धोए नमाज़ दुरुस्त नहीं है।

मसला: अगर नजासते ख़फ़ीफ़ा कपड़े या बदन में लग जाए तो जिस हिस्से में लगी है अगर उसके चौथाई से कम हो तो बग़ैर धोए नमाज़ हो जाएगी, और अगर पूरा चौथाई या उससे ज़्यादा भर गया हो तो माफ़ नहीं है। अगर आस्तीन में लगी है तो आस्तीन की चौथाई से कम हो, अगर कली में लगी है तो उसकी चौथाई से कम हो तब नमाज़ दुरुस्त है, अगर चौथाई या उससे ज़ायद में लगी है तो नमाज़ न होगी।

इसी तरह अगर नजासते ख़फ़ीफ़ा हाथ में लगी हो तो अगर चौथाई हाथ से कम में लगी हो तो माफ़ है, यानी उसको धोए बग़ैर नमाज़ हो जाएगी। इसी तरह अगर टाँग में लग जाए तो अगर चौथाई से कम में लगी हो तो उसके धोए बग़ैर नमाज़ हो जाएगी।

मसलाः कपड़े में अगर नापाक तेल लग गया, जो हथेली की गहराई से कम है तो उसको धोए बग़ैर नमाज़ हो जाएगी, लेकिन अगर एक-दो दिन में फैलकर ज़्यादा हो जाए तो अब उसको धोए बग़ैर नमाज़ न होगी।

झूठे का बयान

हर आदमी का झूठा पाक है, चाहे मर्द हो चाहे औरत, चाहे मुसलमान हो चाहे काफ़िर, चाहे हैज़ (यानी माहवारी की हालत वाली) व निफ़ास (यानी ज़चगी की हालत) वाली औरत हो, चाहे वह मर्द व औरत हो जिसपर गुस्ल फ़र्ज़ है। इसी तरह इन सबका पसीना भी पाक है, हाँ! अगर मुँह में कोई ज़ाहिरी नजासत (नापाकी) जैसे- ख़ून, शराब के हो तो जब तक ये चीज़ें कुल्ली करके पाक करने या थूक से साफ़ करने से ख़त्म न हो जाएँ उस वक़्त तक मुँह पाक न होगा, और मुँह पाक होने से पहले झूठा भी पाक न होगा।

मसलाः कुत्ता, सुअर, शेर, भेड़िया, बन्दर, गीदड़ और जितने हैवान चीर-फाड़कर खाने वाले हैं उन सब का झूठा नापाक है।

मसलाः बिल्ली और चूहे का झूठा पाक तो है लेकिन मकरूह है, हाँ! अगर बिल्ली ने चूहा खाया और फ़ौरन आकर बरतन में मुँह डाल दिया तो नापाक हो जाएगा, और अगर थोड़ी देर ठहर कर ज़बान से मुँह चाटकर बरतन में मुँह डाला तो नापाक नहीं होगा, बल्कि मकरूह ही रहेगा। बिल्ली के झूठे पानी से वुज़ू करना दुरुस्त है, लेकिन अगर दूसरा पानी मौजूद हो तो बेहतर यह है कि बिल्ली के झूठे पानी से वुज़ू न करे उसी दूसरे पानी से वुज़ू करे।

मसलाः बिल्ली अगर दूध या सालन में मुँह डाल दे तो अगर हैसियत वाला है तो वह खाना खाने से परहेज़ कर ले यह बेहतर है, और ग़रीब आदमी है तो खा-पी ले। अगर चूहे ने किसी जगह से रोटी को कुतर दिया तो वहाँ से थोड़ी-सी रोटी तोड़ डाले फिर खाए।

मसलाः खुली हुई मुर्ग़ी जो इधर-उधर फिरती है और हर तरह की पाक व नापाक चीज़ें खाती है उसका झूठा मकरूह है, बशर्ते कि उसकी चोंच पर नापाकी का यक़ीन न हो, और अगर उसकी चोंच नापाक हो तो चोंच डालने से पानी, सालन वग़ैरह नापाक हो जाएगा। और जो मुर्ग़ी बन्द रहती हो उसका झूठा मकरूह भी नहीं बल्कि बिना कराहत पाक है।

मसला: शिकार करने वाले परिन्दे जैसे बाज़ वग़ैरह इनका झूटा भी मक्रूह है, लेकिन उनमें से जो पालतू हो और बन्द रहता हो, मुर्दार न खाता हो और उसकी चोंच पर नापाकी न होने का यकीन हो तो उसका झूटा पाक है।

मसला: हलाल जानवर जैसे- मेंढा, बकरी, गाय, बैल, भैंस, हिरनी वग़ैरह और हलाल परिन्दे जैसे फ़ाख़्ता, तोता, मैना, चिड़िया इन सबका झूटा पाक है, और घोड़े का झूटा भी पाक है।

मसला: जिन जानवरों का झूठा पाक है उनका पसीना भी पाक है, और जिनका झूटा नापाक है उनका पसीना भी नापाक है। और जिनका झूटा मक्रूह है उनका पसीना भी मक्रूह है।

मसला: अगर बिल्ली ने किसी का हाथ चाट लिया तो उसको धोकर नमाज़ पढ़ना चाहिए लेकिन अगर बग़ैर धोए नमाज़ पढ़ ली तब भी नमाज़ हो जाएगी, अलबत्ता पानी होते हुए हाथ धोए बग़ैर नमाज़ पढ़ना अच्छा नहीं।

मसला: अपने शौहर और मेहरम मर्दों के अलावा दूसरे मर्दों का झूठा मक्रूह है, अगर धोखे से या मालूम न होने के सबब ऐसा हो जाए तो ख़ैर कोई डर नहीं।

मसला: कुत्ते का झूटा नापाक है, अगर पानी या सालन में मुँह डाल दे तो बरतन से सालन और पानी को फेंक दे, और बरतन को कम-से-कम तीन बार धोए, ऐसा करने से पाक हो जाएगा। लेकिन बेहतर यह है कि ऐसे बरतन को सात बार धोए और एक बार मिट्टी भी मले। अगर कुत्ते का थूक (यानी मुँह से चलने वाला पानी) कपड़ों में लग जाए तो वह भी तीन बार धोने से पाक हो जाएगा। अगर कुत्ता यूँ ही बदन या कपड़ों से छू जाए और उसके मुँह का पानी न लगे तो बदन और कपड़ा पाक रहेगा।

इस्तिन्जे का बयान

मसला: पेशाब-पाख़ाने के बाद ख़ूब अच्छी तरह धोए, जिससे नापाकी दूर हो जाने का यकीन हो जाए। कम-से-कम तीन बार तो ज़रूर धोए, और अगर नापाकी दूर न हो तो इससे ज़्यादा धोए। और दाहिने हाथ से इस्तिन्जा न करे, पेशाब-पाख़ाना और इस्तिन्जा करते वक़्त किब्ला की तरफ़ मुँह या पीठ करके न बैठे।

मसला: सूराख़ में भी पेशाब व पाख़ाना करने की मनाही आई है।

मसला: हड्डी से और लीद से और उन चीज़ों से इस्तिन्जा न करे जिनको आदमी और जानवर खाते हों।

कुएँ के मसाइल

मसला: कुएँ में अगर नजासते ग़लीज़ा या ख़फ़ीफ़ा गिर जाए, या कोई बहते ख़ून वाला जानवर गिरकर मर जाए, या ऐसा जानदार गिर जाए जिसका झूठा नापाक है तो कुआँ नापाक हो जाएगा और कुएँ का तमाम पानी निकाल देने से पाक हो जाएगा। अगर आदमी या बकरी या उनके बराबर या उनसे बड़ा कोई जानदार कुएँ में गिरकर मर जाए या बहते ख़ून वाला कोई जानदार कुएँ में मर जाए और फूल जाए या फट जाए अगरचे छोटा जानवर हो जैसे चूहा ही हो तो तमाम पानी निकाला जाए। तमाम पानी निकालने का यह मतलब है कि इतना निकालें कि पानी टूट जाए और आधा डोल भी न भरे।

मसला: कबूतर, बिल्ली, मुर्ग़ी या इतना ही बड़ा कोई जानदार कुएँ में गिरकर मर गया लेकिन फूला या फटा नहीं तो चालीस डोल पानी निकाला जाए और साठ डोल निकाल दें तो बेहतर है।

मसला: जितना पानी निकालना हो पहले नजासत (यानी गंदगी और नापाकी) को निकाल लें, अगर नजासत निकालने से पहले पानी निकाल दिया तो कुआँ पाक नहीं हुआ।

फ़ायदा: जिस कुएँ पर जो डोल पड़ा रहता है उसी के हिसाब से गिनती की जाए, और जितना पानी निकालना है उसके निकालने से कुआँ, डोल, रस्सी सब पाक हो जाएँगे।

मसला: अगर कुएँ में पेड़ों के पत्ते गिर जाएँ और पानी का रंग, बू और ज़ायक़ा बदल जाए तब भी उससे वुज़ू और गुस्ल दुरुस्त है, बशर्ते कि पानी का अपना पतलापन बाक़ी रहे।

पानी के ज़रूरी मसाइल

मसला: अगर जंगल में कहीं थोड़ा पानी मिला तो ख़्वाह-मख़्वाह महज़ वहम और वस्वसे की बुनियाद पर उसे नापाक न कहें, जब तक नापाकी का यक़ीन न हो जाए उसे पाक समझा जाएगा।

मसला: घड़े या लोटे में या मटके में अगर नजासते ग़लीज़ा या ख़फ़ीफ़ा गिर जाए तो वह बरतन और पानी नापाक हो जाएगा। और जो पानी बह

रहा हो जिसकी रफ़्तार कम-से-कम इतनी हो कि घास और तिनके लेजा सकता है, उसमें अगर नापाकी गिर जाए तो उस वक़्त तक नापाक न कहेंगे जब तक उसका रंग, बू और ज़ायक़ा न बदल जाए। और ऐसा बड़ा तालाब या हौज़ जो दस हाथ लम्बा दस हाथ चौड़ा हो और कम-से-कम इतना गहरा हो कि चुल्लू भरकर पानी लें तो ज़मीन न खुले, और पाक पानी से भरा हुआ हो तो यह भी बहते हुए पानी के हुक्म में है, ऐसे हौज़ और तालाब को **'दह-दर-दह'** कहते हैं। अगर उसमें ऐसी कोई नजासत (गंदगी और नापाकी) गिर जाए जो गिरने के बाद दिखाई न दे जैसे- पेशाब, शराब तो उसमें चारों तरफ़ वुज़ू करना दुरुस्त है, लेकिन ख़ास उसी जगह से पानी न ले जहाँ नापाकी का यक़ीन हो। और अगर उसमें ऐसी नजासत गिर जाए जो गिरने के बाद नज़र आती है जैसे मरा हुआ कुत्ता, तो वह जिस तरफ़ पड़ा हो उस तरफ़ वुज़ू न करे, उसमें दूसरी किसी तरफ वुज़ू किया जा सकता है, अगर इतने बड़े हौज़ या तालाब में नापाकी गिर जाए और उसकी वजह से पानी का रंग या मज़ा बदल जाए या बू (गंध) आने लगे तो यह भी नापाक हो जाएगा।

मसला: अगर कोई हौज़ या तालाब ऐसा है जो बीस हाथ लम्बा और पाँच हाथ चौड़ा हो ऐसा हौज़ भी 'दह-दर-दह' के हुक्म में है।

मसला: अगर कोई पानी 'दह-दर-दह' से कम हो जैसे घरों के बरतनों में रखा रहता है या आ़म तौर से टंकियों में भरा रहता है, अगर उसमें नापाकी गिर जाए तो वह नापाक हो जाएगा।

मसला: अगर पानी 'दह-दर-दह' से कम हो और उसमें कोई ऐसी चीज़ मर जाए जिसमें बहता ख़ून नहीं तो उससे पानी नापाक नहीं होता, जैसे मच्छर, मक्खी, भिड़, शहद की मक्खी वग़ैरह। और जो चीज़ पानी ही में पैदा हो और पानी ही में उसका रहना-सहना हो जैसे मछली, मेंढक, कछुआ, केकड़ा वग़ैरह, तो पानी में उसके मर जाने से पानी नापाक न होगा, लेकिन अगर ख़ुश्की में रहने वाला मेंढक पानी में मर जाए और उसमें ख़ून हो तो पानी नापाक हो जाएगा। और बतख़ या मुर्ग़ाबी अगर पानी में मर जाए तो भी पानी नापाक हो जाएगा।

विभिन्न मसाइल

मसलाः बिछौने का एक कोना नापाक है और बाक़ी सब पाक है तो पाक कोने पर नमाज़ पढ़ना दुरुस्त है।

मसलाः नापाक मेहंदी हाथों-पैरों में लगाई, तो तीन बार ख़ूब धो डालने से हाथ-पाँव पाक हो जाएँगे, रंग का छुड़ाना वाजिब नहीं।

मसलाः नापाक सुर्मा या काजल आँखों में लगाया तो उसका धोना और पोंछना वाजिब नहीं, हाँ! अगर फैलकर आँख के बाहर आ गया हो तो उसका धोना वाजिब है।

मसलाः अगर लकड़ी का तख़्ता एक तरफ़ से नजिस (नापाक) है और दूसरी तरफ़ से पाक है, तो अगर इतना मोटा है कि बीच से चिर सकता है तो उसको पलट कर दूसरी तरफ़ नमाज़ पढ़ना दुरुस्त है, और अगर इतना मोटा न हो तो जब तक पाक न कर लिया जाए उसपर नमाज़ दुरुस्त न होगी।

मसलाः दो तह का कपड़ा है, और एक तह नापाक है और दूसरी पाक है, तो अगर दोनों तहें सिली हुई न हों तो पाक तह की तरफ़ नमाज़ पढ़ना दुरुस्त है, और अगर दोनों तह सिली हुई हों तो पाक तह पर भी नमाज़ पढ़ना दुरुस्त नहीं है।

मसलाः छोटा बच्चा या कोई दीवाना (यानी पागल, जो अपनी अक़्ल खो बैठा हो) या बदकार या काफ़िर पानी में हाथ डाल दे तो उस पानी को पाक ही समझेगें। हाँ! अगर यह यक़ीन हो कि नापाक हाथ पानी में डाल दिया तो नापाक हो जाएगा। इसी तरह काफ़िरों की बनाई हुई मिठाई और उनका पकाया हुआ खाना और बनाया हुआ कपड़ा इन सब को उस वक़्त तक पाक समझेगें जब तक नापाकी का यक़ीन न हो, लेकिन अगर परहेज़ करे तो बेहतर है। अलबत्ता उन लोगों का पकाया हुआ गोश्त न खाए और न वह चीज़ खाए जिसमें गोश्त पड़ा हुआ हो।

मसलाः नजासतों (गंदी और नापाक चीज़ों) से जो बुख़ारात (यानी भाप) उठें और बदन और कपड़ों के ऊपर से गुज़रें तो उनकी वजह से नापाकी का हुक्म नहीं लगाया जाएगा।

मसलाः फलों में जो कीड़े पड़ जाते हैं वे पाक हैं, लेकिन अगर उनमें जान पड़ गई हो तो उनका खाना दुरुस्त नहीं है। बहुत-से लोग कीड़ों समेत

गूलर खा जाते हैं यह जायज़ नहीं। अगर सिरके में कीड़े पड़ जाएँ तो छानकर सिरका खा लें, कीड़ों को न खाएँ। अगर खाना, गोश्त, शोरबा, हल्वा वग़ैरह सड़ जाए तो सड़ने से नापाक नहीं होता, अलबत्ता जो नुक़सान दे उसका खाना दुरुस्त नहीं है।

मसलाः हलाल जानवर का अंडा भी पाक और हलाल है, लेकिन गन्दा अंडा खाना हलाल नहीं। अगर हलाल जानवर का अंडा गन्दा हो गया और उसी तरह सही-सालिम जेब में रखे हुए नमाज़ पढ़ ली तो नमाज़ हो जाएगी, लेकिन अगर वह टूट गया तो नापाक माना जाएगा और उससे कपड़ा और बदन भी नापाक हो जाएगा।

मसलाः दूध दूहते वक़्त अगर एक-दो मैंगनी या ज़रा-सा गोबर जो एक-दो मैंगनी की मात्रा में हो, दूध के बरतन में गिर जाए तो उससे दूध को नापाक न कहा जाएगा और उसका पीना जायज़ है, बशर्ते कि फ़ौरन निकाल दिया हो।

मसलाः जिस पानी से वुज़ू और गुस्ल कर लिया वह पाक है (शर्त यह है कि उससे हक़ीक़ी नजासत दूर न की गई हो) लेकिन बावजूद पाक होने के उससे दोबारा वुज़ू और गुस्ल नहीं हो सकता।

मसलाः अगर तन्दूर नापाक हो जाए तो उसमें आग जला देने से पाक हो जाएगा। शर्त यह है कि आग की वजह से नापाकी का असर ख़त्म हो जाए।

मसलाः नापाक तेल या नापाक चरबी से अगर साबुन बना लिया जाए तो वह साबुन पाक है।

मसलाः अगर किसी ने फ़सद खुलवाई या किसी जगह ऑप्रेशन कराया और उस जगह ख़ून या पीप लग गई, और पानी से धोना नुक़सान करता है तो तीन बार पानी में तर किए हुए कपड़े से पोंछ देने से पाक हो जाएगा, लेकिन हर बार दूसरा कपड़ा ले।

मसलाः अगर बीमार का बिस्तर नापाक है, लेकिन उसके बदलने में बहुत तक्लीफ़ होगी, तो उसी पर नमाज़ पढ़ लेना दुरुस्त है।

मसलाः साँप की कैंचुली पाक है।

मसलाः मुर्दा जानवर हलाल हो या हराम शरई तरीक़े पर ज़िबह किया गया हो या अपनी मौत मरा हो उसके सींग और बाल और हड्डी ये चीज़ें

पाक हैं, अगर पानी में गिर जाएँ तो पानी नापाक न होगा। अगर उनमें से कोई चीज़ जेब वग़ैरह में होते हुए नमाज़ पढ़ ली तो नमाज़ हो जाएगी। लेकिन इन चीज़ों को उस वक़्त पाक समझा जाएगा जबकि चिकनाई या ख़ून न लगा हो। और मुर्दा जानवर के बालों की जड़ें नापाक हैं, जो अन्दर से निकलती हैं, क्योंकि उनपर चरबी होती है।

मसलाः हाथी का दाँत भी पाक है, उसके चाकू वग़ैरह के दस्ते बनाकर इस्तेमाल करना दुरुस्त है।

मुख़्तलिफ़ चीज़ों के पाक करने के तरीक़े

नजासत (नापाकी और गंदगी) अगर कपड़े या बदन में लग जाए चाहे गाढ़ी हो जैसे पाख़ाना, चाहे पतली बहने वाली नजासत हो जैसे पेशाब और नापाक पानी, बहरहाल धोने से पाक हो जाती है।

मसलाः अगर जिस्म वाली नजासत लग जाए जो पानी पड़कर भी अलग नज़र आए और सूखकर जम जाए, जैसे पाख़ाना, ख़ून, तो इतना धोए कि नजासत छूट जाए और धब्बा जाता रहे, चाहे जितनी दफ़ा में छूटे। जब नजासत छूट जाएगी तब कपड़ा पाक हो जाएगा। और अगर बदन में ऐसी नजासत लग गई हो उसका भी यही हुक्म है। अलबत्ता अगर पहली ही दफ़ा में नजासत छूट गई हो तो दो बार धो लेना बेहतर है, और अगर दो बार में छूटी तो एक बार और धोए, ग़रज़ यह कि तीन बार पूरा कर लेना बेहतर है।

मसलाः अगर कई बार धोने और नजासत के छूट जाने पर भी बदबू नहीं गई, या कुछ धब्बा रह गया तब भी कपड़ा पाक हो गया। साबुन वग़ैरह लगाकर धब्बा छुड़ाना और बदबू दूर करना ज़रूरी नहीं।

मसलाः अगर ऐसी नजासत लग गई जो जिस्म वाली नहीं (यानी सूखकर नज़र नहीं आती और पानी पड़कर अलग नहीं देखी जा सकती, जैसे पेशाब और नापाक पानी) तो तीन बार धोए और हर बार निचोड़े, और तीसरी बार अपनी ताक़त-भर ख़ूब ज़ोर से निचोड़े, ऐसा करने से कपड़ा पाक हो जाएगा।

मसलाः अगर नजासत ऐसी चीज़ में लगी है जिसको निचोड़ा नहीं जा सकता जैसे लिहाफ़, क़ालीन, चटाई वग़ैरह तो उसके पाक करने का तरीक़ा यह है कि एक बार धोकर ठहर जाए जब पानी टपकना बन्द हो जाए फिर धोए, फिर जब पानी टपकना बन्द हो जाए तब फिर धोए, इसी तरह तीन

दफ़ा धोए तो वह चीज़ पाक हो जाएगी।

मसलाः अगर जूते और चमड़े के मोज़े में जिस्म वाली नजासत लगकर सूख जाए जैसे गोबर, पाख़ाना, ख़ून वग़ैरह तो ज़मीन पर ख़ूब घिसकर नजासत छुड़ा डालने से पाक हो जाता है। ऐसे ही खुरच डालने से भी पाक हो जाता है।

और अगर मज़्कूरा (यानी ज़िक्र हुई) नजासत सूखी न हो तब भी इतना रगड़ डाले और घिस दे कि नजासत का नाम व निशान बाक़ी न रहे, ऐसा करने से भी जूता और मोज़ा पाक हो जाएगा।

मसलाः और अगर पेशाब की तरह कोई नजासत जूते में या चमड़े के मोज़े में लग गई जो जिस्म वाली नहीं है तो धोये बग़ैर पाक न होगा।

मसलाः आईने का शीशा और छुरी-चाकू, चाँदी-सोने के ज़ेवर, ताँबे, लोहे, गिलट, शीशे की चीज़ें अगर नापाक हो जायें तो ख़ूब पोंछ डालने और रगड़ देने से या मिट्टी से माँझ देने से पाक हो जाती हैं। लेकिन अगर नक़्शीन चीज़ें हों तो धोये बग़ैर पाक न होंगी, क्योंकि नजासत नक़्श-व-निगार के अन्दर घुस जायेगी जो रगड़ने से नहीं निकलेगी।

मसलाः ज़मीन पर नजासत पड़ गयी, फिर ऐसी सूख गई कि नजासत का निशान बिलकुल जाता रहा, न नजासत का धब्बा है न बदबू आती है, तो इस तरह सूख जाने से ज़मीन पाक हो जाती है, लेकिन ऐसी ज़मीन पर तयम्मुम करना दुरुस्त नहीं, अलबत्ता नमाज़ पढ़ना दुरुस्त है। जो ईंटें या पत्थर चूने या गारे से ज़मीन में ख़ूब जमा दिये गये हों उनका भी यही हुक्म है कि सूख जाने और नजासत का निशान न रहने से पाक हो जायेंगे।

मसलाः जो ईंटें ज़मीन पर सिर्फ़ बिछा दी गई हैं, चूने या गारे से उनकी जुड़ाई नहीं की गई, वे सूखने से पाक न होंगी, पाक करने के लिए उनका धोना लाज़िम है।

मसलाः और अगर ज़मीन को धो दिया जाए यानी इतना पानी बहा दिया जाए जिससे नजासत के चले जाने का यक़ीन हो जाए तब भी पाक हो जाती है। अगर ज़मीन को इस तरह पाक किया जाए तो उसपर नमाज़ और तयम्मुम दोनों दुरुस्त हैं।

मसलाः नापाक चाकू-छुरी अगर दहकती हुई आग में डाल दिये जाएँ तो

भी पाक हो जायेंगे।

मसलाः नापाक रंग में कपड़ा रंगा तो इतना धोए कि पानी साफ आने लगे, ऐसा करने से वह पाक हो जाएगा। चाहे कपड़े से रंग छूटे या न छूटे।

मसलाः जो तेल या घी या चरबी किसी वजह से नापाक हो जाए और किसी कपड़े या जिस्म में लग जाए तो इस क़द्र धोया जाए कि साफ पानी आने लगे, इस तरह से बदन और कपड़ा पाक हो जायेगा, अगरचे चिकनाहट बाकी रह जाए।

मसलाः गोबर के उपले और लीद वग़ैरह नापाक चीज़ों की राख पाक है और उनका धुआँ भी पाक है, रोटी में लग जाए तो कुछ हर्ज नहीं।

मसलाः अगर किसी ने भीगा हुआ पाजामा पहन लिया और हवा ख़ारिज होकर गीले कपड़े को लग गई तो इससे कपड़ा नापाक न होगा।

मुसलमान औ़रतों से

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बातें

* औ़रतों के लिए *

नमाज़ का बयान

लेखक

हज़रत मौलाना आशिक़ इलाही साहिब बुलन्द शहरी

रहमतुल्लाहि अलैहि

अनुवादक: मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा. लि.)

422, मटिया महल, उर्दू मार्किट, जामा मस्जिद

देहली-110006

नमाज़ का बयान और ज़रूरी मसाइल

नमाज़ की फ़रज़ियत और अहमियत

हदीसः (16) फ़रमाया हुज़ूर सरवरे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि अपनी औलाद को नमाज़ पढ़ने का हुक्म दो जबकि वे सात साल के हो जायें, और नमाज़ न पढ़ने पर उनकी पिटाई करो जबकि वे दस साल के हो जायें। और उनके बिस्तर अलग-अलग कर दो (यानी लड़के और लड़कियों को साथ न सुलाओ)। (मिश्कात शरीफ़, अबू दाऊद)

नोटः यह नसीहत बहुत अहम है इसपर सख़्ती से अमल करें, तजुर्बेकार लोग इसकी अहमियत समझते हैं।

तशरीहः तिर्मिज़ी शरीफ़ की एक हदीस में है कि जब बच्चे सात साल के हो जायें तो उनको नमाज़ सिखाओ। और इस हदीस में इरशाद है कि जब सात साल के हो जायें तो उनको नमाज़ पढ़ने का हुक्म दो। दोनों हदीसों को मिलाकर मालूम हुआ कि जब बच्चे सात साल के हो जायें तो उनको नमाज़ सिखायें और पढ़ने की भी ताकीद करें, अलबत्ता सख़्ती उस वक़्त करें जब दस साल के हो जायें। उस वक़्त नमाज़ न पढ़ें तो उनकी पिटाई करें।

इस्लाम का दूसरा रुक्न नमाज़ है। कुरआन व हदीस में नमाज़ की सख़्त ताकीद आई है। इसके फ़र्ज़ होने का इनकार करने वाला काफ़िर है और इसका न पढ़ना बहुत बड़ा गुनाह है। सूरः रूम में इरशाद है:

तर्जुमाः नमाज़ कायम करो और मुश्रिकों में से मत बनो। (सूरः रूम)

एक और हदीस में इरशाद है:

हदीसः हमारे और काफ़िरों के दरमियान जो असली और वाक़ई फ़र्क़ है वह नमाज़ पढ़ने न पढ़ने का फ़र्क़ है। पस जिसने नमाज़ छोड़ दी उसने कुफ़्र का काम किया।

हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमायाः

रिवायतः मेरे दोस्त नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मुझे ख़ास तौर पर नसीहत फ़रमाई कि अल्लाह तआला के साथ किसी को शरीक

न ठहरना अगरचे तेरे टुकड़े कर दिये जायें और तू जला दिया जाये। और फ़र्ज़ नमाज़ को जान-बूझकर न छोड़ना क्योंकि जिसने (नमाज़ का वक़्त होते हुए) अपने इरादे से नमाज़ छोड़ दी तो उससे (अल्लाह का) ज़िम्मा बरी हो गया (यानी दुनिया व आख़िरत में उसे अज़ाब) और तकलीफ़ और ज़िल्लत से बचाने की कोई ज़िम्मेदारी अल्लाह पर नहीं रही। और शराब न पी, क्योंकि वह हर गुनाह की चाबी है। (इब्ने माजा)

इस्लाम के फ़राइज़ में नमाज़ का स्थान

इस्लाम के फ़राइज़ और आमाल तो बहुत हैं मगर नमाज़ को जो मक़ाम (स्थान) दिया गया है उसकी वजह से नमाज़ की अहमियत बहुत ज़्यादा है। नमाज़ का बुलन्द दर्जा और रुतबा इससे समझ लो कि दूसरे फ़राइज़ का यहीं ज़मीन पर रहते हुए हुक्म दे दिया गया और नमाज़ के लिये ख़ुदा-ए-पाक ने यह एहतिराम फ़रमाया कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मेराज कराकर आसमानी दुनिया में अ़ता फ़रमाई। और इस्लाम के फ़राइज़ में दुनिया में सबसे पहले नमाज़ फ़र्ज़ हुई और आख़िरत में सबसे पहले नमाज़ ही का हिसाब होगा, बल्कि आख़िरत की कामयाबी और बामुरादी का मदार ही नमाज़ के ठीक निकलने पर है। हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु रिवायत फ़रमाते हैं कि सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया:

हदीसः क़ियामत के दिन बन्दे के आमाल का जो हिसाब होगा उनमें सबसे अव्वल नम्बर पर नमाज़ है। सो अगर नमाज़ ठीक निकली तो (बन्दा) कामयाब और बामुराद होगा, और अगर नमाज़ ख़राब निकली तो नाकाम होगा और घाटे में पड़ेगा यानी नुक़सान उठायेगा। (मिश्कात)

ख़ुलासा यह कि नमाज़ सबसे पहले फ़र्ज़ हुई और सबसे पहले इसका हिसाब होगा, और मैदाने क़ियामत में कामयाबी और नाकामी का फ़ैसला नमाज़ के ठीक और बेठीक होने पर होगा।

बहुत-से लोग नमाज़ नहीं पढ़ते मगर अपने को नमाज़ियों से बेहतर और पक्का जन्नती समझते हैं, उनको शैतान ने यह धोखा दे रखा है कि नमाज़ नहीं पढ़ते तो क्या है दवा तो मुफ़्त देते हैं, गश्ती शिफ़ाख़ाने में मुफ़्त काम करते हैं और फ़लाँ तरीक़े पर मख़लूक़ की ख़िदमत अन्जाम देते हैं

वग़ैरह-वग़ैरह, हालाँकि नमाज़ नहीं तो कुछ भी नहीं, नमाज़ के बग़ैर दूसरे अमल मक़बूल ही न होंगे।

आख़िरत की कामयाबी सबसे बड़ी कामयाबी है

जो लोग दीन इस्लाम के पैरोकार हैं, क़ुरआन व सुन्नत को हक़ मानते हैं। उनके नज़दीक आख़िरत की कामयाबी से बढ़कर कोई चीज़ नहीं। जब यह मालूम हो गया कि आख़िरत की कामयाबी नमाज़ में है तो नमाज़ को पाबन्दी से पढ़ना सारे कामों से बढ़कर हुआ। नमाज़ की वजह से ज़रा-सा आराम में फ़र्क़ आता हो, किसी दुनियावी काम में थोड़ा-बहुत नुक़सान हो जाता हो तो अक़्लमन्द आदमी के लिये आख़िरत की असीमित कामयाबी के सामने उसकी कुछ हक़ीक़त नहीं। ज़रा जन्नत की नेमतों और वहाँ के महलों, बाग़ों और नहरों और सोने के दरख़्तों का ख़्याल करो, फिर दोज़ख़ की आग का तसव्वुर करो जो दुनिया की आग से 69 दरजे ज़्यादा गर्म है। यह ग़ौर करके हिसाब लगाओ कि ऐसी आग से बचने और ऐसी-ऐसी नेमतें मिलने के लिये अगर नमाज़ की पाबन्दी करने में कुछ नींद क़ुरबान हो जाये और खेल में फ़र्क़ आ जाये या मान लो कि हक़ीर दुनिया का कुछ कम या ज़्यादा नुक़सान हो जाये तो उसको बरदाश्त करके नमाज़ पढ़ लेना अक़्लमन्दी है या नहीं?

यह जो फ़रमाया कि "नमाज़ ठीक निकली तो आख़िरत में कामयाब और बामुराद होगा वरना नाकाम होगा और घाटे में रहेगा" इसका मतलब बहुत विस्तृत है, हिसाब के वक़्त नमाज़ का ठीक निकलना यह है कि बालिग़ होने के बाद से मौत आने तक सब नमाज़ें पाबन्दी से अदा की हों, वक़्त से बेवक़्त करके न पढ़ी हों। फ़राइज़, सुन्नतों और [illegible] का ख़्याल रखा हो। नमाज़ में जो कुछ पढ़ा जाता हो (सना, तशह्हुद, सूरः फ़ातिहा और दूसरी सूरतें) सही याद की हों ताकि नमाज़ सही हो सके। इन बातों का ख़्याल रखकर नमाज़ पढ़ना कामयाबी ही कामयाबी है। और इन बातों में जिस क़द्र कमी होगी उसी क़द्र नाकामी का सामना होगा। फ़राइज़ के छूट जाने से तो नमाज़ बिलकुल ही नहीं होती और वाजिबात के छूट जाने पर भी नमाज़ का दोबारा पढ़ना वाजिब है, और सुन्नतों और मुस्तहब चीज़ों और आदाब के कम होने या छूट जाने से सवाब में कमी हो जाती है।

एक नमाज़ की क़ीमत किस क़द्र है

सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है:

हदीसः जिसकी अस्र की (एक) नमाज़ जाती रही (उसका इस क़द्र नुक़सान हुआ कि) जैसे उसके घर वाले, बाल-बच्चे और सारा माल ख़त्म हो गया।

हज़रत नबी करीम सल्ल० ने फ़रमाया है कि पाँच नमाज़ें अल्लाह तआला ने फ़र्ज़ की हैं, जिसने उन नमाज़ों का वुज़ू अच्छी तरह किया और उनको वक़्त पर पढ़ा और उनका रुकूअ व सज्दा पूरी तरह अदा किया तो उसके लिये अल्लाह तआला का ज़िम्मा और उसका अहद है कि अल्लाह उसको बख़्श देगा। और जिसने ऐसा न किया तो उसके लिये (बख़्शिश का) कोई अहद नहीं, चाहे बख़्शे चाहे अज़ाब दे। (मिश्कात)

नमाज़ी का सारा जिस्म इबादत में लग जाता है

नमाज़ में बड़ी ख़ूबी यह है कि नमाज़ पढ़ते वक़्त नमाज़ी का सारा जिस्म इबादत में ही लग जाता है। हाथ, पाँव, सर, कमर, नाक, आँख, ज़बान सब इसी तरह मौक़ा-ब-मौक़ा रखने और इस्तेमाल करने पड़ते हैं जिस तरह हुक्म है। यूँ समझो कि नमाज़ी के बदन का हर हिस्सा ख़ुदा के हुक्म पर चलने की मश्क़ में लग जाता है, और कोई मर्द या औरत ठीक-ठीक नमाज़ पढ़े तो नमाज़ के बाहर भी गुनाहों से बचेगा। क़ुरआन शरीफ़ में इरशाद है:

तर्जुमाः नमाज़ बेहयाई से और बुरे कामों से रोकती है।

बेवक़्त करके नमाज़ पढ़ना मुनाफ़िक़ की नमाज़ है

हज़रत रसूले मक़बूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने नमाज़ को बेवक़्त करके पढ़ने वालों के बारे में फ़रमाया है कि यह मुनाफ़िक़ की नमाज़ है कि बैठ-बैठे सूरज का इन्तिज़ार करता रहता है और जब सूरज पीला पड़ जाये तो खड़े होकर (जल्दी-जल्दी मुर्ग़ की तरह) चार ठोंगे मार लेता है (और) ख़ुदा को उन (सज्दों) में (जो मुर्ग़ की ठोंगों की तरह झट-झट किये गये) बस ज़रा-सा याद करता है। (मिश्कात शरीफ़)

औरतों को नमाज़ की ख़ुसूसी ताकीद

हदीसः (17) हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूल

अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि औरत जब पाँचों वक़्त की नमाज़ पढ़े और रमज़ान के रोज़े रखे और पाकदामन रहे और शौहर की फ़रमाँबरदारी करे तो जन्नत के जिस दरवाज़े से चाहे जन्नत में दाख़िल हो जाये। (मिश्कात शरीफ़)

तशरीहः इस हदीसे मुबारक में औरत को चन्द काम अन्जाम देने पर जन्नत की ख़ुशख़बरी दी गयी है। हर मुसलमान औरत का इनपर अमल करना लाज़िम है। अव्वल पाँचों वक़्त की नमाज़ पढ़ने को फ़रमाया। नमाज़ हर बालिग़ मर्द व औरत पर रात-दिन में पाँच वक़्त फ़र्ज़ है। इन पाँचों वक़्तों को सब मुसलमान जानते हैं, हर्ज हो, मर्ज़ हो, सफ़र हो हज़र (यानी वतन में ठहरना) हो, दुख हो, तकलीफ़ हो, रंज हो, ख़ुशी हो, जिस हाल में हो जहाँ हो पाँचों वक़्त नमाज़ पढ़ना फ़र्ज़ है। हाँ! महीने के ख़ास दिनों में औरत पर नमाज़ पढ़ना फ़र्ज़ नहीं रहता, और उन दिनों में नमाज़ पढ़ना जायज़ भी नही है। आजकल नाफ़रमानी का दौर है, अल्लाह तआला के हुक्मों से ग़ाफ़िल रहने और गुनाहों में लत-पत रहने की फ़िज़ा है, बहुत कम मर्द व औरत ऐसे हैं जिनको ख़ुदा तआला के अहकाम पर अमल करने की फ़िक्र है। जब माँ-बाप ग़ाफ़िल हैं तो औलाद भी बेदीन हो जाती है। बहुत-से घराने ऐसे हैं कि उनमें 24 घन्टे में कभी किसी वक़्त भी न कोई नमाज़ पढ़ता है और न दुआ और कलिमा ज़बान पर आता है। कैसे रंज की बात है। मुसलमानों का मुल्क और पूरे-पूरे घर अल्लाह की याद से ख़ाली। हालत देखकर मालूम होता है कि मौहल्ले के मौहल्ले ख़ुदा के इनकारियों से आबाद हैं। जब किसी गली में गुज़रो तो गानों की आवाज़ें तो आती हैं मगर बच्चे के क़ुरआन पढ़ने की आवाज़ नहीं आती। इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन।

बेनमाज़ी का हश्र

नमाज़ की पाबन्दी हर बालिग़ मर्द व औरत पर लाज़िम है। सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है कि जिसने नमाज़ की पाबन्दी की (क़ियामत के दिन) नमाज़ उसके लिये नूर होगी और (उसके ईमान की) दलील और (उसके लिये) नजात का सामान होगी। और जिसने नमाज़ की पाबन्दी न की वह शख़्स क़ियामत के दिन क़ारून, हामान, फ़िरऔन और उबई बिन ख़लफ़ के साथ होगा (मिश्कात शरीफ़)

देखो जो नमाज़ की पाबन्दी न करे उसका हश्र कैसे बड़े काफ़िरों के साथ बताया जो कुफ़्र के सरदार थे और ख़ुदा के बाग़ियों के ज़िक्र में जिनका ज़िक्र सबसे पहले आता है, उनके साथ हश्र होने के काम करना बड़ी नासमझी है। बुज़ुर्गों ने बताया है कि इन चार शख़्सों का ज़िक्र इस वजह से किया है कि नमाज़ छोड़ने वाले उमूमन चार क़िस्म के होते हैं।

(1) जो हाकिम होने की वजह से नमाज़ छोड़ते हैं, ये लोग फ़िरऔन के साथी हुए क्योंकि वह हुकूमत की वजह से अल्लाह का बाग़ी बना था।

(2) जो मालदारी की वजह से नमाज़ नहीं पढ़ते, ये लोग क़ारून के साथी होंगे क्योंकि वह माल की वजह से अल्लाह का नाफ़रमान बना था।

(3) जो लोग नौकरी की वजह से नमाज़ नहीं पढ़ते, ये लोग हामान के साथ होंगे, क्योंकि उसने फ़िरऔन का वज़ीर होने की वजह से ख़ुदा तआला की बग़ावत और सरकशी इख़्तियार की थी।

(4) जो लोग तिजारत और दुकानदारी की वजह से नमाज़ नहीं पढ़ते, ये लोग उबई बिन ख़लफ़ के साथ होंगे। यह शख़्स एक बड़ा मुश्रिक था, तिजारत करता था, इसको हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने हाथ मुबारक से क़त्ल फ़रमाया था।

इन असबाब के अलावा और असबाब भी हैं जिनकी वजह से नमाज़ छोड़ी जाती है- जैसे बच्चों के रोने की वजह से, या उनको नहलाने-धुलाने की वजह से, और खिलाने-पिलाने की मशग़ूलियत की वजह से। या देर में सोने के सबब देर में आँख खुलने की वजह से, या जल्दी सोने के तक़ाज़े की वजह से, या सफ़र की वजह से, या दुख-तकलीफ़ की वजह से, इनमें से बहुत-सी चीज़ें वे हैं जो औरतों की नमाज़ क़ज़ा होने का सबब बनती हैं, हालाँकि जब तक जान में जान रहे और होश बाक़ी हो फ़र्ज़ नमाज़ छोड़ने की शरीअत में कोई गुन्जाइश नहीं है।

दुख-सुख, सफ़र-हज़र, हर्ज-मर्ज़ में नमाज़ की पाबन्दी फ़र्ज़ है

अगर दुख-तकलीफ़ और मर्ज़ हो और खड़े होकर नमाज़ पढ़ने की ताक़त न हो तो बैठकर नमाज़ पढ़े, बैठकर पढ़ने की भी ताक़त न हो तो लेटकर पढ़े। अगर सफ़र लम्बा हो जो कम-से-कम अड़तालीस (48) मील हो उसमें चार रकअत वाली फ़र्ज़ नमाज़ की दो रकअतें कर दी गयी हैं।

अगरचे यह सफ़र हवाई जहाज़ में हो या रेल में, तो मुअक्कदा सुन्नतें छोड़ने की गुन्जाइश है हाँ! वित्र की तीन रक्अतें पढ़ना ज़रूर वाजिब और लाज़िम है। बाज़ी अच्छी-ख़ासी नमाज़ी औरतें सफ़र में नमाज़ छोड़ देती हैं, बाज़ी तो सुस्ती कर जाती हैं जैसे बहुत-से पक्के नमाज़ी मर्द भी सफ़र में नमाज़ कज़ा कर देते हैं। और बाज़ी औरतें यह उज़्र पेश करती हैं कि पर्दा न होने की वजह से सफ़र में नमाज़ नहीं पढ़ी जाती, क्योंकि मर्दों के दरमियान बेपर्दगी हो जाती है, हालाँकि यह उज़्र बेहकीक़त है, क्योंकि जो बुर्क़ा पहनकर बैठी हैं वही पर्दा काफ़ी है, बुर्क़ा ओढ़े हुए मर्दों के सामने चल-फिर सकती हैं, पाख़ाना जा सकती हैं, भला नमाज़ क्यों नहीं पढ़ सकतीं? यह शैतानी उज़्र है। बाज़ी औरतें बच्चों के रोने की वजह से नमाज़ क़ज़ा कर देती हैं हालाँकि यह कोई उज़्र नहीं है। यूँ भी तो बच्चे रोते रहते हैं और दुनियावी काम जारी रखती हैं। एक नमाज़ ही ऐसी चीज़ है जिसके लिये मामूली बात भी बहाना बन जाती है और ज़रा-सा नज़ला-ज़ुकाम और मामूली बुख़ार भी पहाड़ के बराबर उज़्र बनकर सामने आ जाता है। दर-हकीक़त यकीन की कमी है, क़ब्र और हश्र के हालात और जन्नत के आराम और दोज़ख़ के अज़ाब का यकीन हो तो हर काम से ज़्यादा ज़रूरी नमाज़ ही को समझा जाये।

शादी के मौक़े पर औरतों की नमाज़ से ग़फ़लत

शादी-विवाह के मौक़े पर अक्सर औरतें नमाज़ कज़ा कर देती हैं। अपनी निकाली हुई रस्में तो ऐसी पाबन्दी से पूरी करती हैं कि गोया वे बिलकुल फ़र्ज़ हैं, और अल्लाह के फ़र्ज़ों से बिलकुल ग़फ़लत बरतती हैं। और दुल्हन जब तक दुल्हन रहती है नमाज़ पढ़ती ही नहीं, नमाज़ पढ़ने को बेशर्मी समझा जाता है। यह अजीब बात है कि खाने-पीने में शर्म नहीं और नमाज़ पढ़ने में शर्म आड़े आ जाती है, कैसी बेजा बात है।

दूसरी नसीहत रमज़ान के रोज़ों के बारे में फ़रमाई और औरत को तवज्जोह दिलाई की पाबन्दी से रमज़ान के रोज़े रखे। जिन चीज़ों पर इस्लाम की बुनियाद है उन चीज़ों में रमज़ान के रोज़े भी रखना है। पुरानी औरतों के बारे में यह बात मशहूर थी कि नमाज़ में तो कोताही करती हैं मगर रोज़ों में मर्दों से आगे रहती हैं, मगर आजकल की उभरती हुई नस्ल स्कूल व कालिज की पली हुई पौध रोज़ा-नमाज़ दोनों से ग़ाफ़िल है, ग़ाफ़िल ही नहीं नमाज़-रोज़े

का मज़ाक उड़ाती है, और इस्लाम के कामों पर फ़िक़रे कसे जाते हैं। दुनिया में हमेशा तो नहीं रहना आख़िर मरना है, क़ब्र की गोद में भी जाना है, यह फ़ैशन और मॉडर्न स्टाईल वहाँ क्या काम देगा। अफ़सोस! आख़िरत की फ़िक्र नहीं करते, गोया हमेशा इसी दुनिया में रहेंगे। यह समझते हैं कि उनका यह माल हमेशा उनके साथ रहेगा।

तीसरी नसीहत औरत को यह फ़रमाई कि पाकदामन रहे। इज़्ज़त व आबरू महफ़ूज़ रहे। औरत होने का ताल्लुक़ सिर्फ़ शौहर से रहे और बस! नामेहरमों से दूर रहना और पर्दे का एहतिमाम करना, नज़रें नीची रखना, बिना ज़रूरत घर से बाहर न निकलना और किसी मजबूरी से निकलना पड़े तो किसी मेहरम को साथ लेकर ख़ूब पर्दे का ख़्याल करते हुए निकलना। इन चीज़ों से औरत की पाकदामनी और आबरू महफ़ूज़ रह सकती है। आजके दौर में यही चीज़ें नापैद हो रही हैं। स्कूल और कालिजों में पढ़ने वाली बहुत-सी लड़कियाँ तो पर्दे का मज़ाक़ बनाती हैं और शर्म व हया को ऐब समझती हैं। कालिज के छात्र और छात्राएँ आपस में फ़्रैन्ड (दोस्त) बन जाते हैं, जो चीज़ें पाकदामनी के ख़िलाफ़ हैं वे दोस्ती में निभा जाते हैं, फिर अविवाहित (बिन-ब्याही) माओं की औलाद कूड़े के ढेरों और नालों की गहराइयों में पड़ी मिलती हैं। सब नज़रों के सामने है मगर आँखों पर ऐसे पर्दे पड़े हैं कि शरीअ़त की पाबन्दियों के मुताबिक़ बहू-बेटियों को चलाने पर मर्द भी राज़ी नहीं। आख़िर उनके ज़ेहन भी तो इस्लाम के दुश्मनों यहूद और ईसाइयों ने ज़हर से भर दिये हैं और आज़ादी का ज़हर पिलाकर सबके दिमाग़ों को बेकार कर दिया है। हक़ बात कोई असर नहीं करती। क़ुरआन पाक में इरशाद है:

तर्जुमाः और बहुत जल्द उन लोगों को मालूम हो जायेगा जिन्होंने (अल्लाह के हुक़ूक़ वग़ैरह में) ज़ुल्म कर रखा है कि कैसी जगह उनको लौटकर जाना है। (सूरः नम्ल आयत 227)

चौथी नसीहत औरतों को यह फ़रमाई कि अपने शौहर की फ़रमाँबरदारी करे। शरीअ़त में शौहर के बड़े हुक़ूक़ हैं। क़ुरआन शरीफ़ में फ़रमाया है:

तर्जुमाः मर्द हाकिम है औरतों पर, इस सबब से कि अल्लाह तआ़ला ने बाज़े को बाज़े पर फ़ज़ीलत दी है। (सूरः निसा आयत 34)

सूरः ब-क़रः में फ़रमायाः "और मर्दों का औरतों के मुक़ाबले में दर्जा

बढ़ा हुआ है।

इन आयतों में वाज़ेह तौर पर मर्दों को औरतों का सरपरस्त और सरदार बताया है, औलाद की परवरिश, घरेलू मामलात, मर्द व औरत दोनों ही के आपसी मैल, मुहब्बत और मश्विरे से अन्जाम पाते हैं, लेकिन शौहर का रुतबा बड़ा है। मर्दों को जहाँ अल्लाह तआला ने जिस्मानी ताक़त व क़ुव्वत ज़्यादा दी है वहाँ उन्हें समझ भी ज़्यादा दी है, होसला, हिम्मत और बहादुरी-दिलावरी मर्दों में ज़्यादा है। इल्ला माशा-अल्लाह।

इन ख़ूबियों की वजह से मर्द को बरतरी दी गयी है और उसे औरत का सरदार बताया गया है। जो सरदार है उसकी फ़रमाँबरदारी ज़रूरी होती है वरना कामों में ख़लल पैदा हो जाता है। आजके दौर की फ़ैशन-परस्त औरतें मर्द की सरदारी तस्लीम करने को तैयार नहीं हैं बल्कि बहुत-सी औरतें अपने को बीवी और शौहर को शौहर कहने को भी आबरू के ख़िलाफ़ समझती हैं, और कहती हैं कि मुझे बीवी नहीं फ्रैन्ड कहो, बीवी कहने में तौहीन है।

शरीअत ने औरत के लिये किसी एक मर्द से निकाह करके ख़ास उसी मर्द के मातहत रहने का जो क़ानून बनाया है इसी दोस्ती वाली बात ही को तो ख़त्म किया है। दोस्ती में 'ईजाब-क़बूल' निकाह, गवाह की कोई ज़रूरत नहीं होती, जिससे दिल मिला आँख लगी साथ हो लिये, यह तरीक़ा अम्बिया-ए-किराम अलैहिमुस्सलाम के रास्ते के ख़िलाफ़ है, बल्कि इंसानियत के भी ख़िलाफ़ है। आज इनसान अपनी इनसानियत की भी क़ीमत नही पहचानता, जिन्दगी के रुख़ को बिलकुल हैवानियत पर डालने को कमाल तरक़्क़ी समझने लगा है।

ख़ुलासा यह है कि जो औरत पाँचों वक़्त की नमाज़ की पाबन्द हो, और रमज़ान के रोज़े पूरे रखती हो, और अपनी इज़्ज़त व आबरू की हिफ़ाज़त करती हो, (यानी ग़ैर-शौहर से बीवी वाले ताल्लुक़ न रखती हो) और शौहर की फ़रमाँबरदारी करती हो, ऐसी औरत को सरकारे दो आलम ख़ातिमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ख़ुशख़बरी (शुभ-सूचना) दी है कि जन्नत के जिस दरवाज़े से चाहे जन्नत में चली जाये। अल्लाह पाक तमाम मुसलमान औरतों को जन्नत की तलब नसीब फ़रमाये और जन्नत में ले जाने वाले कामों पर लगाये, आमीन।

नमाज़ में ख़ुशू व ख़ुज़ू की अहमियत

हदीसः (18) हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा ने बयान फ़रमाया कि हमारा एक गुलाम था जिसे अफ़्लह कहते थे। एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसे नमाज़ पढ़ते हुए देखा, वह सज्दे में जाता तो (गुबार साफ़ करने के लिये सज्दे की जगह) फूँक मार देता था। यह देखकर नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि ऐ अफ़्लह! अपने चेहरे को मिट्टी में मिलाओ। (मिश्कात शरीफ़)

तशरीहः नमाज़ सब इबादतों से बड़ी इबादत है, और वजह इसकी यह है कि इसमें इनसान अपने रब्बे-करीम की बारगाह में अपनी ज़ात को बिलकुल ज़लील करके पेश कर देता है। और इनसानी जिस्म में जो सबसे ज़्यादा शरीफ़ अंग और हिस्सा है यानी 'सर' उसको सबसे ज़्यादा ज़लील उन्सुर यानी ज़मीन पर रख देता है। सज्दे में सर को ज़मीन पर रख देना आजिज़ी और इन्किसारी के इज़हार की हद है, आजिज़ी और कमज़ोरी ज़ाहिर करने के लिये इनसान के पास इससे बढ़कर और कोई ज़रीया नहीं है, जबकि नमाज़ बन्दगी के इज़हार के लिये है, और पूरी-की-पूरी आजिज़ी व इन्किसारी से भरी है, और बन्दगी-ही-बन्दगी है, तो इसमें यह कोशिश करना कि सज्दे में माथे पर मिट्टी न लगे क्योंकर मुनासिब हो सकता है? जब सर मिट्टी पर ही रखना है तो ख़ाक, धूल, और गर्द-गुबार साफ़ करना बेमानी है, बल्कि माथे पर मिट्टी लग जाना आजिज़ी व इन्किसारी के लिये ज़्यादा मुनासिब है। इसलिये सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत अफ़्लह रज़ियल्लाहु अन्हु से फ़रमाया कि अपने चेहरे को मिट्टी में मिलाओ, नमाज़ ख़ुदी को मिटाने के लिये है, तकब्बुर को तोड़ने के लिये और नफ़्स के गुरूर व घमण्ड को दबाने के लिये है। जब नमाज़ में भी यह ध्यान रहा कि कपड़े में सलवटें न पड़ जायें और माथे में मिट्टी न लग जाये तो अल्लाह की तरफ़ ध्यान कहाँ रहा? नमाज़ तो रब्बुल-आलमीन जल्ल शानुहू की बड़ाई दिल में बसाने के लिये है। जब रब्बे-अकबर की बड़ाई सामने आती है तो अपनी शान बिलकुल हैच (बे-हक़ीक़त) मालूम होती है।

हर वह चीज़ मक्रूह है जिससे नमाज़ में दिल बटे

इसलिये हर वह चीज़ जिससे नमाज़ी का दिल बटता हो और

ख़ुदा-ए-पाक की तरफ़ से ध्यान हटकर किसी मख़्लूक़ में दिल उलझता हो मकरूह करार दी गयी है। नमाज़ी के सामने दीवार या मुसल्ले पर फूल-बूटे होना, बदन या कपड़े से खेलना, यह सब मकरूह है। पूरी तरह मुतवज्जह होकर नमाज़ पढ़ना कि नमाज़ से बाहर ख़्याल न जाये यह **'ख़ुशू'** है।

ख़ुशू का सबसे बड़ा दर्जा क्या है

ख़ुशू का सबसे बड़ा दर्जा तो यह है कि इस तरह नमाज़ पढ़ी जाये गोया कि अल्लाह को देख रहे हैं, यह कैफ़ियत हासिल न हो सके तो यह ख़्याल करते हुए नमाज़ पढ़ें की अल्लाह तआला हमको देख रहा है। ख़ूब ध्यान करने और बार-बार इसी तरफ़ तवज्जोह लगाने से यह बात हासिल हो जाती है। ख़ुशू बहुत बड़ी चीज़ है, कुरआन शरीफ़ में फ़रमायाः

तर्जुमाः वे ईमान वाले कामयाब हुए जो अपनी नमाज़ में ख़ुशू करने वाले हैं। (सूरः मोमिनून आयत 1-2)

नमाज़ में दामन ठीक करना, मुसल्ले के दरवाज़े और मिनारे गिनना, ज़मीन पर गिरी हुई कंकरियाँ हाथ में लेना, यह सब मकरूह है, क्योंकि इससे ख़ुशू में फ़र्क़ आता है।

नमाज़ में कंकरियाँ छूने की मनाही

एक हदीस में है कि हुज़ूरे पाक ने इरशाद फ़रमायाः

तर्जुमाः जब तुम में से कोई शख़्स नमाज़ के लिये खड़ा हो तो (ज़मीन पर पड़ी हुई) कंकरियाँ न छुए यानी हाथ में न उठाये क्योंकि उसकी तरफ़ अल्लाह तआला की रहमत मुतवज्जह हो रही है। (रहमत की तरफ़ से तवज्जोह हटाकर किसी दूसरे काम में लगना बड़ी नादानी है)।

जिस नमाज़ का आख़िरत में सवाब लेना है और जिसे अल्लाह की बारगाह में पेश करके जन्नत हासिल करना है उसको बे-ध्यानी से पढ़ लेना बड़ी नालायकी की बात है। ख़ूब दिल लगाकर नमाज़ पढ़ो और नमाज़ को बहुत बड़ी नेमत और दौलत समझो। ज़िन्दगी का जो वक़्त नमाज़ में लग गया अनमोल हो गया, और ज़िन्दगी का यह हिस्सा ज़िन्दगी कहने के काबिल हो गया। यह मोमिन की शान है, ख़ूब मुस्तैदी के साथ दुनिया के झमेलों से दिल फ़ारिग़ करके नमाज़ पढ़े।

मुनाफ़िक़ की नमाज़ कैसी होती है

कुरआन मजीद में मुनाफ़िक़ों का हाल बयान करते हुए इरशाद फ़रमायाः

तर्जुमाः जब नमाज़ के लिये खड़े होते हैं तो सुस्ती की हालत में खड़े होते हैं। (सूरः निसा आयत 142)

नमाज़ पढ़ते वक़्त तबीयत पर बोझ और जिस्म पर सुस्ती और काहिली सवार होना मोमिन की शान नहीं है। नमाज़ ख़ुशू-ख़ुज़ू और सुकून व इत्मीनान के साथ पढ़नी चाहिये।

नमाज़ पढ़ने वालों के सवाब में कमी-बेशी

एक हदीस में है कि आँ-हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः

हदीसः इनसान नमाज़ से फ़ारिग़ होता है हालाँकि नमाज़ का सवाब (मुख़्तलिफ़ लिखा जाता है) सवाब का दसवाँ हिस्सा या नवाँ हिस्सा या आठवाँ हिस्सा या सातवाँ या छठा या पाँचवाँ हिस्सा या चौथाई हिस्सा या तिहाई हिस्सा या आधा हिस्सा लिखा जाता है। (अबू दाऊद शरीफ़)

यानी जिस दरजे का ख़ुशू और इख़्लास और सुन्नतों की रियायत नमाज़ में होती है उसी क़द्र अज्र व सवाब मिलता है। किसी को तिहाई किसी को चौथाई किसी को और कम व ज़्यादा सवाब मिलता है।

नमाज़ में झूमने पर हज़रत अबू बक्र सीद्दीक़ की डाँट

हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु की बीवी हज़रत उम्मे रोमान रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि मैं एक दिन नमाज़ पढ़ते हुए इधर-उधर को झूमने लगी। यह देखकर हज़रत अबू बक्र रज़ियल्लाहु अन्हु ने मुझे इस ज़ोर से डाँटा कि डर की वजह से क़रीब था कि मैं नमाज़ तोड़ दूँ। फिर हज़रत अबू बक्र रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि मैंने रसूलुल्लाह सल्ल से सुना है कि जब कोई शख़्स नमाज़ के लिये खड़ा हो तो अपने तमाम बदन को सुकून से रखे, यहूदियों की तरह इधर-उधर को न झुके, क्योंकि नमाज़ में जिस्मानी अंगों को सुकून से रखना नमाज़ के पूरे होने का अंग है। (दुर्रे-मन्सूर)

रुकूअ़-सज्दा पूरा न करना नमाज़ की चोरी है

हदीसः (19) हज़रत अबू क़तादा रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि

रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि सबसे बड़ा चोर वह है जो अपनी नमाज़ से चोरी करता है। हज़राते सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम ने सवाल किया या रसूलल्लाह! नमाज़ से कैसे चोरी करता है? फ़रमाया नमाज़ से चोरी करना यह है कि नमाज़ पढ़ने वाला अपनी नमाज़ का रुकूअ-सज्दा पूरा अदा न करे। (मिश्कात शरीफ़)

तशरीहः इस हदीस में यह बात बताई है कि नमाज़ का रुकूअ-सज्दा अगर पूरी तरह अदा न किया जाये तो यह नमाज़ की चोरी है, और चोरी भी सबसे बुरी है, क्योंकि चोर दूसरे का माल चुराते हैं और यह नमाज़ी अपनी ही दौलत ज़ाया करता है, और दौलत भी कौनसी? जो आख़िरत में काम आने वाली है और जिसकी बदौलत जन्नत जैसी अनमोल चीज़ मिलती है। जब नमाज़ पढ़नी ही है तो वक़्त-बेवक़्त करके क्यों पढ़े और रुकूअ-सज्दे को जल्दी-जल्दी फ़टाफ़ट "तू चल मैं आया" के उसूल पर क्यों ख़राब करे। जब नमाज़ पढ़ो इत्मीनान से पढ़ो, रुकूअ में जाकर इत्मीनान से रुकूअ करो और रुकूअ की तस्बीह कम-से-कम तीन बार पढ़ो, पाँच बार या सात बार पढ़ो तो और अच्छा है। फिर **"समिअल्लाहु लिमन् हमिदह्"** कहते हुए रुकूअ से उठकर खड़ी हो जाओ और खड़े-खड़े **"रब्बना लकल्-हम्दु"** कहो, फिर सज्दे में जाकर इत्मीनान से सज्दा करो और सज्दे की तस्बीह तीन बार पढ़ो, पाँच या सात बार पढ़ो तो और अच्छा है। फिर सज्दे से उठकर बैठ जाओ, इत्मीनान से बैठ जाने के बाद फिर दूसरे सज्दे में जाओ और दूसरा सज्दा भी इत्मीनान से अदा करो जैसे ऊपर ज़िक्र हुआ है ।

बहुत-से मर्द और औरतें ऐसी लप-झप नमाज़ पढ़ते हैं कि जैसे भगदड़ मच रही है या तूफ़ान से भाग रहे हैं, ऐसा करने से कोई रुक्न ठीक अदा न हुआ तो उसी को नमाज़ की चोरी फ़रमाया है।

बाज़े नमाज़ियों के लिये नमाज़ की बद्-दुआ

बाज़ रिवायतों में है कि जो शख़्स नमाज़ को बेवक़्त करके पढ़े और वुज़ू अच्छी तरह न करे, न उसमें पूरी तरह दिल लगाये, न रुकूअ-सज्दा पूरा अदा करे तो नमाज़ सियाह सूरत में वहाँ से रुख़्सत होती है और यह बद्-दुआ देती हुई जाती है कि अल्लाह तुझे ज़ाया करे जैसे तूने मुझे ज़ाया किया। फिर वह नमाज़ पुराने कपड़े में लपेटकर नमाज़ पढ़ने वाले के मुँह पर

मार दी जाती है।

अल्लाह तआला हम सबको इबादत का ज़ौक़ अता फ़रमाये और नमाज़ को हमारी आँखों की ठन्डक बनाये। आमीन।

पाँच नमाज़ों की फ़र्ज़ियत, उनके वक़्त और रकअ़तें

हदीसः (20) उबादा बिन सामित रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि पाँच नमाज़ें अल्लाह तआ़ला ने फ़र्ज़ फ़रमाई हैं जिसने इन नमाज़ों का वुज़ू अच्छी तरह किया और इनको वक़्त पर पढ़ा और इनका रुकूअ़ और सज्दा पूरी तरह अदा किया तो उसके लिये अल्लाह तआ़ला के ज़िम्मे यह अ़हद है कि अल्लाह तआ़ला उसको बख़्श देगा। और जिसने ऐसा न किया तो उसके लिये अल्लाह के ज़िम्मे कोई अ़हद (बख़्शिश का) नहीं, चाहे बख़्शे चाहे अ़ज़ाब दे। (मिश्कात शरीफ़)

तशरीहः इस हदीस से मालूम हुआ कि अल्लाह तआ़ला ने पाँच नमाज़ें फ़र्ज़ फ़रमाई हैं, और इसमें किसी मुसलमान का इख़्तिलाफ़ भी नहीं है, जो पाँच नमाज़ों के फ़र्ज़ होने का इनकारी हो वह काफ़िर है। इन पाँचों नमाज़ों के वक़्त और उनकी रकअ़तों की तफ़सील नीचे दर्ज की जाती है, साथ ही नमाज़ के फ़राइज़ और वाजिबात वग़ैरह भी लिखे जाते हैं, उसके बाद नमाज़ का तरीक़ा लिखेंगे। (इन्शा-अल्लाह)

पाँच नमाज़ों के वक़्तों की तफ़सील

फ़ज्र का वक़्त सुबह-सादिक होते ही शुरू हो जाता है और सूरज निकलना शुरू होने तक बाक़ी रहता है। और ज़ोहर का वक़्त सूरज ढल जाने के बाद शुरू हो जाता है और जब तक हर चीज़ का साया उससे दोगुना हो उस वक़्त तक बाक़ी रहता है, दोगुने साये से मुराद असली साये के अ़लावा है। असली साया वह है जो ऐन ज़वाल के वक़्त होता है। ज़ोहर का वक़्त ख़त्म होने के बाद अ़स्र का वक़्त शुरू हो जाता है और सूरज छुपने तक बाक़ी रहता है, लेकिन जब सूरज पीला पड़ जाये तो अ़स्र का वक़्त मक्रूह हो जाता है। जब सूरज छुप जाये तो मग़रिब का वक़्त शुरू हो जाता है जो सफ़ेद शफ़क़ ग़ायब होने तक बाक़ी रहता है, हिन्दुस्तान व पाकिस्तान के इलाक़ों में कम-से-कम सवा घन्टा और ज़्यादा-से-ज़्यादा डेढ़ घन्टा मग़रिब का वक़्त रहता है। मग़रिब का वक़्त ख़त्म होते ही इशा का वक़्त शुरू हो जाता

है जो सुबह-सादिक़ तक रहता है, लेकिन आधी रात के बाद इशा का वक़्त मक्रूह हो जाता है।

नमाज़ के फ़राइज़, वाजिबात, सुन्नतें और मक्रूहात

नमाज़ के फ़राइज़: नमाज़ के चौदह फ़र्ज़ हैं जिनमें से चन्द ऐसे हैं जिनका नमाज़ से पहले होना ज़रूरी है और उनको नमाज़ के बाहरी फ़राइज़ भी कहते हैं, और नमाज़ की शर्तें भी कहा जाता है। और चन्द फ़राइज़ ऐसे हैं जो नमाज़ के अन्दर के हैं, सबकी फ़ेहरिस्त (सूचि) यह है:

(1) बदन का पाक होना। (2) कपड़ों का पाक होना। (3) सतरे-औरत यानी मर्दों को नाफ़ से घुटनों तक और औरतों को चेहरे, हथेलियों और क़दमों के अलावा तमाम बदन का ढाँकना फ़र्ज़ है। (4) नमाज़ की जगह का पाक होना। (5) नमाज़ का वक़्त होना। (6) क़िब्ला की तरफ़ रुख़ करना। (7) नमाज़ की नीयत करना। (8) तकबीरे-तहरीमा यानी नीयत बाँधते वक़्त अल्लाहु अकबर कहना। (9) क़ियाम यानी खड़ा होना। (10) क़िराअत यानी एक बड़ी आयत या तीन छोटी आयतें या एक छोटी सूरत पढ़ना। (11) रुकूअ़ करना। (12) सज्दा करना। (13) क़अ़दा-ए-अख़ीरा यानी आख़िरी रकअ़त में बैठना। (14) अपने इरादे से नमाज़ ख़त्म करना।

अगर इनमें से कोई चीज़ भी जान-बूझकर या भूलकर रह जाये तो सज्दा-ए-सह्व करने से भी नमाज़ न होगी।

नमाज़ के वाजिबात

नीचे लिखी गई चीज़ें नमाज़ में वाजिब हैं:

(1) अल्हम्दु पढ़ना। (2) और उसके साथ कोई सूरः मिलाना। (3) फ़र्ज़ों की पहली दो रकअ़तों में क़िराअत करना। (4) अल्हम्दु को सूरः से पहले पढ़ना। (5) रुकूअ़ करके सीधा खड़ा होना। (6) दोनों सज्दों के दरमियान बैठना। (7) पहला क़अ़दा करना, यानी अगर तीन या चार रकअ़त वाली नमाज़ है तो दूसरी रकअ़त में बैठना। (8) अत्तहिय्यात पढ़ना। (9) सलाम शब्द से नमाज़ ख़त्म करना। (10) इमाम के लिये मग़रिब व इशा की पहली दो रकअ़तों में और फ़ज्र व जुमा और ईद और तरावीह की सब रकअ़तों में क़िराअत बुलन्द आवाज़ से पढ़ना। (11) वित्र में दुआ़-ए-क़ुनूत पढ़ना। (12) दोनों ईदों में छह ज़ायद तकबीर कहना।

वाजिबात में से अगर कोई वाजिब भूलकर छूट जाये तो सज्दा-ए- सह्व करना वाजिब होगा। अगर जान-बूझकर किसी वाजिब को छोड़ दिया तो दोबारा नमाज़ पढ़ना वाजिब है, सज्दा-ए-सह्व से भी काम न चलेगा। (सज्दा-ए-सह्व का बयान आगे आयेगा, इन्शा-अल्लाह तआला)

नमाज़ को फ़ासिद कर देने वाली चीज़ें

इन चीज़ों से नमाज़ फ़ासिद हो जाती है:

(1) बात करना, थोड़ी हो या बहुत, जान-बूझकर हो या भूलकर। (2) सलाम करना या सलाम का जवाब देना। (3) छींकने वाले के जवाब में ''यर्‌हमुकल्लाहु'' कहना। (4) रंज की ख़बर सुनकर ''इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन'' पूरा या थोड़ा-सा पढ़ना, या अच्छी ख़बर सुनकर ''अल्हम्दु लिल्लाहि'' कहना, या अजीब चीज़ सुनकर ''सुब्हानल्लाहि'' कहना। (5) दुख-तकलीफ़ की वजह से आह या उफ़ करना। (6) कुरआन शरीफ़ देखकर पढ़ना। (7) अल्हम्दु शरीफ़ या सूरः वग़ैरह में ऐसी ग़लती करना जिससे नमाज़ फ़ासिद हो जाती है, (जिसकी तफ़सील बड़ी किताबों में लिखी है)। (8) 'अ़मले-कसीर' जैसे ऐसा काम करना जिसे देखने वाला यह समझे कि यह शख़्स नमाज़ नहीं पढ़ रहा है, या जैसे दोनों हाथों से कोई काम करना। (9) जान-बूझकर या भूलकर कुछ खाना-पीना। (10) किब्ला की तरफ़ से सीना फिर जाना। (11) दर्द या मुसीबत की वजह से इस तरह रोना कि आवाज़ में हर्फ़ (यानी शब्द) निकल जाये। (12) नमाज़ में हंसना।

नमाज़ की सुन्नतें

ये चीज़ें नमाज़ में सुन्नत हैं: (1) तकबीरे- तहरीमा (यानी नीयत बाँधते वक़्त जो तकबीर कही जाती है) के वक़्त दोनों हाथ उठाना। (2) मर्दों को नाफ़ के नीचे और औरतों को सीने पर हाथ बाँधना। (3) सना यानी 'सुब्हानकल्लाहुम्-म' आख़िर तक पढ़ना। (4) 'अऊज़ु बिल्लाह' (पूरी) पढ़ना। (5) 'बिस्मिल्लाह' (पूरी) पढ़ना। (6) रुकूअ़ और सज्दे के वक़्त बल्कि हर एक रुक्न से दूसरे रुक्न में मुन्तक़िल होने तक 'अल्लाहु अकबर' कहना। (7) रुकूअ़ से उठते हुए 'समिअ़ल्लाहु लिमन् हमिदह्' और 'रब्बना लकल्-हम्दु' कहना। (8) रुकूअ़ में 'सुब्हा-न रब्बियल् अ़ज़ीम' कम-से-कम तीन बार कहना। (9) और सज्दे में कम-से-कम तीन बार 'सुब्हा-न रब्बियल्

अअ्ला' कहना। (10) दोनों सज्दों के दरमियान और अत्तहिय्यात के लिये मर्दों को बायें पाँव पर बैठना और दाहिने पाँव को खड़ा करना और औरतों को दोनों पाँव सीधी तरफ़ निकालकर धड़ के बायें हिस्से पर बैठना। (11) दुरूद शरीफ़ पढ़ना। (12) दुरूद के बाद दुआ पढ़ना। (13) सलाम के वक़्त दायें-बायें मुँह फेरना। (14) सलाम में मुक़्तदियों और फ़रिश्तों और जिन्नात जो हाज़िर हों उनकी नीयत करना।

नमाज़ की मुस्तहब चीज़ें

(1) जहाँ तक मुम्किन हो खाँसी को रोकना। (2) जिमाई आये तो मुँह बन्द करना। (3) खड़े होने की हालत में सज्दे की जगह और रुकूअ़ में क़दमों पर और सज्दे में नाक पर और बैठे हुए गोद में और सलाम के वक़्त काँधे पर नज़र रखना।

नमाज़ में मक्रूह चीज़ें

ये चीज़ें नमाज़ में मक्रूह हैं: (1) कोख पर हाथ रखना। (2) कपड़ा समेटना। (3) जिस्म या कपड़े से खेलना। (4) उंगलियाँ चटख़ाना। (5) दायें-बायें गर्दन मोड़ना। (6) अंगड़ाई लेना। (7) कुत्ते की तरह बैठना। (8) चादर वग़ैरह को लटका हुआ छोड़ देना, यानी लपेट न देना और बुकल न मारना। (9) बग़ैर उज़्र के चार-ज़ानूँ यानी आलती-पालती मारकर बैठना। (10) सामने या सर पर तस्वीर होना। (11) तस्वीर वाले कपड़े में नमाज़ पढ़ना। (12) पेशाब- पाख़ाना या भूख का तक़ाज़ा होते हुए नमाज़ पढ़ना। (13) आँखें बन्द करके नमाज़ पढ़ना।

पंजवक़्ता नमाज़ों की रक्अ़तें और नीयतें

ज़ोहर की नमाज़: ज़ोहर की नमाज़ में बारह रक्अ़तें हैं, चार सुन्नतें, चार फ़र्ज़, फिर दो सुन्नतें मुअक्कदा, फिर दो नफ़िल।

चार सुन्नतों की नीयत यूँ करे: नीयत करती हूँ चार रक्अ़त नमाज़ सुन्नत की, वक़्त ज़ोहर का, वास्ते अल्लाह तआ़ला के, मेरा रुख़ काबे शरीफ़ की तरफ़, अल्लाहु अकबर। (नीयत के ख़त्म पर **'अल्लाहु अकबर'** तकबीरे-तहरीमा है, इसको नमाज़ शुरू करने की नीयत से कहे)।

चार फ़र्ज़ों की नीयत: नीयत करती हूँ चार रक्अ़त नमाज़ ज़ोहर, वास्ते अल्लाह तआ़ला के, रुख़ मेरा काबे की तरफ़, अल्लाहु अकबर।

ज़ोहर की दो सुन्नतों की नीयतः नीयत करती हूँ दो रकअ़त नमाज़ ज़ोहर की, वास्ते अल्लाह तआ़ला के, रुख़ मेरा काबे की तरफ़, अल्लाहु अकबर।

दो नफ़्लों की नीयतः नीयत करती हूँ दो रकअ़त नमाज़ नफ़िल ज़ोहर की, वास्ते अल्लाह तआ़ला के, रुख़ मेरा काबे की तरफ़, अल्लाहु अकबर।

अ़स्र की नमाज़ः अ़स्र की आठ रकअ़तें होती हैं, चार सुन्नत ग़ैर-मुअक्कदा, चार फ़र्ज़।

चार सुन्नतों की नीयत यूँ करेः नीयत करती हूँ चार रकअ़त नमाज़ सुन्नत, वक़्त अ़स्र का, वास्ते अल्लाह तआ़ला के, रुख़ मेरा काबे शरीफ़ की तरफ़ अल्लाहु अकबर।

अ़स्र के फ़र्ज़ों की नीयतः नीयत करती हूँ चार रकअ़त नमाज़ फ़र्ज़ अ़स्र की, वास्ते अल्लाह तआ़ला के, रुख़ मेरा काबे शरीफ़ की तरफ़, अल्लाहु अकबर।

मग़रिब की नमाज़ः मग़रिब की सात रकअ़तें हैं, तीन फ़र्ज़, दो सुन्नत मुअक्कदा, फिर दो नफ़िल।

तीन फ़र्ज़ों की नीयतः नीयत करती हूँ तीन रकअ़त नमाज़ फ़र्ज़ मग़रिब की, वास्ते अल्लाह तआ़ला के, रुख़ मेरा काबे शरीफ़ की तरफ़, अल्लाहु अकबर।

इशा की नमाज़ः इशा की सत्रह रकअ़तें हैं, चार सुन्नतें ग़ैर- मुअक्कदा, फिर चार फ़र्ज़, फिर दो सुन्नतें मुअक्कदा, फिर दो नफ़िल, फिर तीन वित्र, फिर दो नफ़िल।

चार सुन्नतों की नीयतः नीयत करती हूँ चार रकअ़त नमाज़ सुन्नत इशा की, वक़्त इशा का, वास्ते अल्लाह तआ़ला के, रुख़ मेरा काबे शरीफ़ की तरफ़, अल्लाहु अकबर।

चार फ़र्ज़ों की नीयतः नीयत करती हूँ चार रकअ़त फ़र्ज़ इशा की, वास्ते अल्लाह के, रुख़ मेरा काबे शरीफ़ की तरफ़, अल्लाहु अकबर।

दो सुन्नतों की नीयतः नीयत करती हूँ दो रकअ़त नमाज़ सुन्नत की, वक़्त इशा का, रुख़ मेरा काबे शरीफ़ की तरफ़, अल्लाहु अकबर।

मग़रिब और इशा में नफ़्लों की नीयत उसी तरह करे जिस तरह ज़ोहर के बयान में गुज़रा, नफ़्लों की नीयत में वक़्त का ज़िक्र करने की ज़रूरत

नहीं।

वित्रों की नीयतः नीयत करती हूँ तीन रकअ़त नमाज़ वित्र वाजिबुल्लैल की, रुख़ मेरा काबे शरीफ़ की तरफ़, वास्ते अल्लाह तआ़ला के, अल्लाहु अकबर।

वित्र की नमाज़ वाजिब है, यानी इसका दर्जा फ़र्ज़ों के क़रीब है, लिहाज़ा वित्रों को कभी भी छोड़ना जायज़ नहीं है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि जो शख़्स वित्र न पढ़े वह हम में से नहीं है, तीन बार यूँ ही फ़रमाया। (अबू दाऊद)

फ़ज्र की नमाज़ः फ़ज्र की चार रकअ़तें हैं, दो सुन्नतें मुअक्कदा और दो फ़र्ज़।

दो सुन्नतों की नीयतः नीयत करती हूँ दो रकअ़त नमाज़ सुन्नत की, वक़्त फ़ज्र का, वास्ते अल्लाह तआ़ला के, रुख़ मेरा काबे शरीफ़ की तरफ़, अल्लाहु अकबर।

दो फ़र्ज़ों की नीयतः नीयत करती हूँ दो रकअ़त नमाज़ फ़ज्र की, वास्ते अल्लाह तआ़ला के, रुख़ मेरा काबे शरीफ़ की तरफ़, अल्लाहु अकबर।

नफ़्लों और ग़ैर-मुअक्कदा सुन्नतों का छोड़ना जायज़ है मगर इससे बहुत बड़े सवाब से महरूमी होती है। और मुअक्कदा सुन्नतों को छोड़ना दुरुस्त नहीं है, चूँकि उनकी ताकीद आई है इसी लिये उनको मुअक्कदा कहा जाता है। इसकी और ज़्यादा तफ़सील इन्शा-अल्लाह तआ़ला हदीस नम्बर ३३ की तशरीह के तहत आयेगी।

मुअक्कदा सुन्नतों में सबसे ज़्यादा ताकीद फ़ज्र की सुन्नतों की है, और उनके बाद उन सुन्नतों का दर्जा है जो ज़ोहर से पहले हैं, उनके बाद दूसरी सुन्नतों का दर्जा है। एहतिमाम (यानी पाबन्दी) तो सभी का करना चाहिये मगर फ़ज्र और ज़ोहर वाली ज़िक्र हुई सुन्नतों का ख़ास एहतिमाम करें।

नमाज़ के अज़्कार मय तर्जुमा

नमाज़ में जो चीज़ें पढ़ी जाती हैं अब हम उनको तर्जुमा के साथ लिखते हैं।

तकबीरे-तहरीमा...... अल्लाहु अकबर

तर्जुमाः अल्लाह सबसे बड़ा है।

नमाज़ शुरू करते वक़्त अल्लाहु अकबर कहा जाता है, इसको

तकबीरे-तहरीमा कहते हैं, और नमाज़ के दरमियान रुकूअ़ व सज्दा करने के लिये जाते-जाते भी तकबीर कही जाती है।

सना: सुब्हा-नकल्लाहुम्-म व बि-हम्दि-क व तबारकस्मु-क व तआ़ला जद्दु-क व ला इला-ह ग़ैरु-क।

तर्जुमा: ऐ अल्लाह! हम तेरी पाकी बयान करते हैं और तेरी तारीफ़ करते हैं, और तेरा नाम बहुत बरकत वाला है, और तेरी बुज़ुर्गी बहुत बरतर है, और तेरे सिवा कोई इबादत का हक़दार नहीं।

तअ़व्वुज़: अऊ़ज़ु बिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम।

तर्जुमा: मैं अल्लाह की पनाह लेता हूँ शैतान मरदूद से।

तस्मियह्: बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम।

तर्जुमा: अल्लाह के नाम से शुरू करता हूँ (या करती हूँ) जो बड़ा मेहरबान निहायत रहम वाला है।

सूरः फ़ातिहा या अल्हम्दु शरीफ़

अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल् आ़लमीन। अर्रह्मानिर्रहीम। मालिकि यौमिद्दीन। इय्या-क नअ्बुदु व इय्या-क नस्तअ़ीन। इह्दिनस्- सिरातल्-मुस्तक़ीम। सिरातल्लज़ी-न अन्अ़म्-त अ़लैहिम्। ग़ैरिल्-मग़्ज़ूबि अ़लैहिम् व लज़्ज़ाल्लीन।

तर्जुमा: हर क़िस्म की तारीफ़ अल्लाह ही के लिये है, जो तमाम जहानों का पालने वाला है, बड़ा मेहरबान निहायत रहम वाला है, रोज़े जज़ा का मालिक है। ऐ अल्लाह! हम तेरी ही इबादत करते हैं और तुझ ही से मदद माँगते हैं। हमको सीधे रास्ते पर चला, ऐसे लोगों के रास्ते पर जिनपर तूने इनाम फ़रमाया है, न उनके रास्ते पर जिनपर तेरा ग़ज़ब नाज़िल हुआ, और न गुमराहों के रास्ते पर चला।

सूरः कौसर

इन्ना अअ्तैनाकल्-कौ-सर्। फ़-सल्लि लिरब्बि-क वन्हर्। इन्-न शानि-अ-क हुवल्-अब्तर्।

तर्जुमा: (ऐ नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम!) हमने आपको कौसर अ़ता की है, पस तुम अपने रब के लिये नमाज़ पढ़ो और क़ुरबानी करो, बेशक तुम्हारा दुश्मन ही बेनाम-व-निशान होने वाला है।

सूरः इख़्लास

कुल् हुवल्लाहु अ-हद। अल्लाहुस्-समद्। लम् यलिद् व लम् यूलद्। व लम् यकुल्-लहू कुफ़ुवन् अ-हद।

तर्जुमाः (ऐ नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम!) कह दो कि वह (यानी) अल्लाह यगाना है, अल्लाह बेनियाज़ है, उससे कोई पैदा नहीं हुआ और न वह किसी से पैदा हुआ, और कोई उसके बराबर नहीं।

सूरः फ़-लक

कुल् अऊज़ु बिरब्बिल् फ़-लकि, मिन् शर्रि मा ख़-ल-क़, व मिन् शर्रि ग़ासिकिन् इज़ा व-क़ब्। व मिन् शर्रिन्-नफ़्फ़ासाति फ़िल्-उ-क़दि, व मिन् शर्रि हासिदिन् इज़ा ह-सद्।

तर्जुमाः (ऐ नबी! दुआ में यूँ) कहो कि मैं सुबह के रब की पनाह लेता हूँ तमाम मख़्लूक़ के शर (यानी बुराई) से, और अंधेरे के शर से, जब अंधेरा फैल जाये, और गिरहों पर दम करने वालियों के शर से, और हसद करने वाले के शर से, जब वह हसद करने पर आ जाये।

सूरः नास

कुल् अऊज़ु बिरब्बिन्नासि, मलिकिन्नासि, इलाहिन्नासि, मिन् शर्रिल् वस्वासिल्-ख़न्नास। अल्लज़ी युवस्विसु फ़ी सुदूरिन्नासि, मिनल्-जिन्नति वन्नास।

तर्जुमाः (ऐ नबी! दुआ में यूँ) कहो कि मैं आदमियों के रब, आदमियों के बादशाह, आदमियों के माबूद की पनाह लेता हूँ, उस वस्वसा डालने वाले पीछे हट जाने वाले के शर से जो लोगों के दिलों में वस्वसा डालता है, जिन्नात में से हो या आदमियों में से।

रुकूअ में पढ़ने की तस्बीहः सुब्हा-न रब्बियल् अज़ीम।

तर्जुमाः पाकी बयान करता हूँ अपने परवर्दिगार बुज़ुर्ग की।

रुकूअ से उठते वक़्त की तस्मीअः समिअल्लाहु लिमन् हमिदह्।

तर्जुमाः अल्लाह ने (उसकी) सुन ली जिसने उसकी तारीफ़ की।

क़ौमा की तस्मीदः रब्बना लकल् हम्दु।

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! तेरे ही लिये है हर तारीफ़।

सज्दे में पढ़ने की तस्बीहः सुब्हा-न रब्बियल् अअ्ला।

तर्जुमाः पाकी बयान करता हूँ मैं अपने परवर्दिगार बरतर की।

तशह्हुद या अत्तहिय्यात

अत्तहिय्यातु लिल्लाहि वस्स-लवातु वत्तय्यिबातु अस्सलामु अ़लै-क अय्युहन्नबिय्यु व रहमतुल्लाहि व ब-रकातुहू। अस्सलामु अ़लैना व अ़ला अिबादिल्लाहिस्-सालिहीन। अश्हदु अल्ला-इला-ह इल्लल्लाहु व अश्हदु अन्-न मुहम्मदन् अ़ब्दुहू व रसूलुहू।

तर्जुमाः तमाम क़ौली (यानी जो ज़बान से होती हैं) इबादतें और तमाम फ़ेली (यानी जो अ़मल से अन्जाम पाती हैं) इबादतें अल्लाह ही के लिये हैं। सलाम हो तुमपर ऐ नबी! और अल्लाह की रहमत और उसकी बरकतें, सलाम हो हमपर और अल्लाह के नेक बन्दों पर। मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं और गवाही देता हूँ कि मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अल्लाह के बन्दे और रसूल हैं।

इसको नमाज़ में हर दो रकअ़त के बाद और आख़िरी रकअ़त पर बैठकर पढ़ा जाता है।

दुरूद शरीफ़

अल्लाहुम्-म सल्लि अ़ला मुहम्मदिंव्-व अ़ला आलि मुहम्मदिन् कमा सल्लै-त अ़ला इब्राही-म व अ़ला आलि इब्राही-म इन्न-क हमीदुम्-मजीद। अल्लाहुम्-म बारिक अ़ला मुहम्मदिंव्-व अ़ला आलि मुहम्मदिन् कमा बारक्-त अ़ला इब्राही-म व अ़ला आलि इब्राही-म इन्न-क हमीदुम्-मजीद।

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! रहमत नाज़िल फ़रमा मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर और उनकी आल पर, जैसा कि रहमत नाज़िल फ़रमाई तूने इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम पर और उनकी आल पर, बेशक तू तारीफ़ का मुस्तहिक़ (पात्र) है, बड़ी बुज़ुर्गी वाला है।

ऐ अल्लाह! बरकत नाज़िल फ़रमा मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर और उनकी आल पर, जैसे बरकत नाज़िल फ़रमाई तूने इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम पर और उनकी आल पर, बेशक तू तारीफ़ का मुस्तहिक़ (पात्र) है, बड़ी बुज़ुर्गी वाला है।

दुरूद शरीफ़ को आख़िरी रकअ़त में अत्तहिय्यात के बाद पढ़ते हैं।

दुरूद शरीफ़ के बाद की दुआ

अल्लाहुम्-म इन्नी ज़लम्तु नफ़्सी ज़ुल्मन् कसीरंव्-व ला यग़्फ़िरुज़्-

जुनू-ब इल्ला अन्-त फ़ग़्फ़िर ली मग़्फ़ि-रतम् मिन् अिन्दि-क वर्हम्नी इन्न-क अन्तल् ग़फ़ूरुर्रहीम।

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! मैंने अपने नफ़्स पर जुल्म किया, और तेरे सिवा कोई गुनाहों को बख़्श नहीं सकता, पस तू अपनी तरफ़ से ख़ास बख़्शिश से मुझको बख़्श दे, और मुझपर रहम फ़रमा दे, बेशक तू ही बख़्शने वाला निहायत रहम वाला है।

इस दुआ को दुरूद शरीफ़ के बाद पढ़ते हैं, इसकी जगह दूसरी दुआयें भी पढ़ सकते हैं जो कुरआन व हदीस में आई हों।

सलामः अस्सलामु अलैकुम व रह्मतुल्लाहि।

तर्जुमाः सलाम हो तुमपर और अल्लाह की रहमत।

सलाम के ज़रिये नमाज़ से ख़ारिज (यानी बाहर) होते हैं।

सलाम के बाद की दुआः अल्लाहुम्-म अन्तस्सलामु व मिन्कस्सलामु तबारक्-त या ज़ल्-जलालि वल्-इकरामि।

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! तू ही सलामती वाला है और तेरी ही तरफ़ से सलामती मिल सकती है। तू बहुत बरकत वाला है। ऐ बड़ाई व बुजुर्गी वाले।

नमाज़ पढ़ने का तरीक़ा

वुज़ू के साथ पाक जगह क़िबला-रुख़ खड़े होकर नमाज़ की नीयत करें (उस वक़्त जो भी नमाज़ पढ़नी हो उसकी नीयत कर लें) नीयत दिल के इरादे का नाम है। अगर ज़बान से भी कह ले तो यह भी दुरुस्त है। नीयत करके 'अल्लाहु अकबर' कहे, इसको 'तकबीरे-तहरीमा' कहते हैं। तकबीरे-तहरीमा कहते हुए दोनों हाथ दुपट्टे से बाहर निकाले बग़ैर काँधों तक उठाये, फिर दोनों हाथों को सीने पर इस तरह बाँधे कि दाहिने हाथ की हथेली बायें हाथ की पुश्त पर आ जाये। उसके बाद 'सना' यानी 'सुब्हानकल्लाहुम्-म' आख़िर तक पढ़े, उसके बाद 'अऊज़ु बिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम' और उसके बाद 'बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम' पढ़े। फिर सूरः अल्हम्दु पढ़े, उसके बाद 'बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम' पढ़कर कुरआन मजीद की कोई सूरः पढ़े या कहीं से भी कुरआन मजीद की तीन आयतें पढ़ ले। उसके बाद अल्लाहु अकबर कहते हुए रुकूअ में जाये, यानी इस तरह झुक जाये कि दोनों हाथों की उंगलियाँ मिलाकर दोनों घुटनों पर रख दे और दोनों बाज़ू पहलू से मिलाये

रहे, और रुकूअ़ में कम-से-कम तीन बार 'सुब्हा-न रब्बियल् अ़ज़ीम' कहे। उसके बाद 'समिअ़ल्लाहु लिमन् हमिदह्' कहते हुए खड़ी हो जाये, फिर खड़े-ही-खड़े 'रब्बना लकल्-हम्दु' कहे। जब ख़ूब सीधी खड़ी हो जाये तो 'अल्लाहु अकबर' कहती हुई सज्दे में जाये। ज़मीन पर पहले घुटने रखे, फिर हाथ रखे, फिर दोनों हाथों के दरमियान इस तरह चेहरा रखे कि पहले नाक फिर माथा रखा जाये, और हाथ इस तरह रखे कि दोनों बाँहें ज़मीन पर बिछ जायें और हाथ-पाँव की उंगलियाँ क़िब्ला-रुख़ कर दे, मगर पाँव खड़े न रखे बल्कि दाहिनी तरफ़ को निकाल दे और ख़ूब सिमटकर सज्दा करे कि पेट दोनों रानों से और कोहनियाँ दोनों पहलुओं से मिल जायें, और सज्दे में कम-से-कम तीन बार 'सुब्हा-न रब्बियल् अअ़्ला' कहे, उसके बाद इस तरह बैठे कि दोनों पाँव दाहिनी तरफ़ को निकाल दे और पिछले धड़ के बायें हिस्से पर बैठ जाये और दोनों हाथ अपनी रानों पर इस तरह रखे कि उंगलियाँ ख़ूब मिली हुई हों और क़िब्ला-रुख़ हों। फिर अल्लाहु अकबर कहते हुए दूसरे सज्दे में जाये, उसमें भी कम-से-कम तीन बार 'सुब्हा-न रब्बियल् अअ़्ला' कहे, और यह सज्दा भी उसी तरह करे जिस तरह अभी ऊपर बयान हुआ। (दूसरे सज्दे के ख़त्म पर एक रकअ़त हो गई)।

दूसरे सज्दे के बाद दूसरी रकअ़त के लिये अल्लाहु अकबर कहती हुई सीधी खड़ी हो जाये और उठते वक़्त ज़मीन पर हाथ न टेके, सीधी खड़ी होकर 'बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम' पढ़कर सूरः फ़ातिहा यानी अल्हम्दु पढ़े और 'वलज़्ज़ाल्लीन' के फ़ौरन बाद 'आमीन' कहे। फिर कुरआन शरीफ़ की कोई सूरः या कम-से-कम तीन आयतें पढ़े, उसके बाद उसी तरह एक रुकूअ़ और दो सज्दे करे जिस तरह पहली रकअ़त में बयान हुआ। दूसरे सज्दे से फ़ारिग़ होकर उसी तरह बैठ जाये जिस तरह दोनों सज्दों के दरमियान बैठना बताया, यानी दोनों पाँव दाहिनी तरफ़ को निकाल दे और पिछले धड़ के बाएँ हिस्से पर बैठ जाये और दोनों हाथ अपनी रानों पर इस तरह रखे कि उंगलियाँ ख़ूब मिली हुई हों और क़िब्ला-रुख़ हों। जब बैठ जाये तो 'तशह्हुद' यानी अत्तहिय्यात आख़िर तक पढ़ते हुए 'अश्हदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाहु' पर पहुँचे तो दाहिने हाथ की बीच की उंगली और अंगूठे को मिलाकर गोल हल्क़ा बना दे और छंगुलिया और उसके पास वाली उंगली को बन्द कर ले, और जब

'ला इला-ह' कहे तो शहादत की उंगली उठाये और 'इल्लल्लाहु' कहे तो उस उंगली को झुका दे, मगर दोनों उंगलियाँ बन्द करने और अंगूठे से बीच की उंगली को मिलाने से जो शक्ल बन गयी है उसको नमाज़ के आख़िर तक बाक़ी रखे। अत्तहिय्यात से फ़ारिग़ होकर दुरूद शरीफ़ पढ़े, फिर कोई दुआ पढ़े जो क़ुरआन व हदीस में आई हो, उसके बाद दाहिनी तरफ़ को मुँह करते हुए 'अस्सलामु अ़लैकुम व रह्मतुल्लाहि' कहे और नमाज़ से निकलने की नीयत करे, और 'अ़लैकुम' (यानी तुमपर) कहते हुए उन फ़रिश्तों पर सलाम की नीयत करे जो दाहिनी तरफ़ हों, फिर इसी तरह बाईं तरफ़ मुँह फेरते हुए 'अस्सलामु अ़लैकुम व रह्मतुल्लाहि' कहे और उस वक़्त 'अ़लैकुम' के ख़िताब से उन फ़रिश्तों की नीयत भी करे जो बाईं तरफ़ हों। यह दो रकअ़त नमाज़ ख़त्म हो गई। (1)

दो रकअ़त फ़र्ज़, सुन्नत और नफ़िल सब नमाज़ों में पढ़ी जाती हैं, और तीन रकअ़त नमाज़े मग़रिब के फ़र्ज़ और इशा के बाद वित्र पढ़े जाते हैं, सुन्नतें और नफ़िल की तीन रकअ़तें नहीं होती हैं, और चार रकअ़त नमाज़ फ़र्ज़, सुन्नत और नफ़िल तीनों में होती है, अगर किसी को चार रकअ़त नमाज़ पढ़नी है तो दूसरी रकअ़त पर बैठकर सिर्फ़ 'अत्तहिय्यात' यानी 'अ़ब्दुहू व रसूलुहू' तक पढ़कर खड़ी हो जाये, उसके बाद दो रकअ़त और पढ़े, तीसरी रकअ़त 'बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम' पढ़कर शुरू कर दे। उसके बाद सूरः फ़ातिहा फिर और कोई सूरः पढ़े, फिर रुकूअ़ और दोनों सज्दे उसी तरह करे जिस तरह पहले बयान हुआ। तीसरी रकअ़त के दूसरे सज्दे से फ़ारिग़ होकर चौथी रकअ़त के लिये खड़ी हो जाये और खड़ी होते हुए ज़मीन पर हाथ से टेक न लगाये, इस रकअ़त को शुरू करते हुए 'बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम' पढ़े और उसके बाद सूरः फ़ातिहा पढ़े फिर कोई दूसरी सूरः पढ़े, फिर उसी तरह रुकूअ़ और दो सज्दे करे जिस तरह पहले बयान हुआ। चौथी रकअ़त के दूसरे सज्दे से फ़ारिग़ होकर उसी तरह बैठ जाये जैसे दूसरी रकअ़त में बैठी थी और अत्तहिय्यात पूरी पढ़कर दुरूद शरीफ़ पढ़े, फिर दुआ पढ़े और उसके बाद दोनों तरफ़ सलाम फेर दे।

(1) यह तरीक़ा औरतों के नमाज़ पढ़ने का है, मर्दों के लिये नमाज़ के तरीक़े में थोड़ा-सा फ़र्क़ है, तालीमुल-इस्लाम में देख लें।

दूसरी, तीसरी और चौथी रकअ़त में 'सुब्हानकल्लाहुम्-म' और 'अऊ़बिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम' नहीं पढ़ा जाता, बल्कि ये रकअ़तें 'बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम' से शुरू की जाती हैं, और फ़र्ज़ों की तीसरी और चौथी रकअ़त में सूरः फ़ातिहा के बाद कोई सूरः या आयत नहीं पढ़ी जाती सिर्फ़ 'बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम' और सूरः फ़ातिहा पढ़कर रुकूअ़ में चले जाते हैं। फ़र्ज़ों के अ़लावा हर नमाज़ की हर रकअ़त में सूरः फ़ातिहा के बाद कोई सूरः या कम-से-कम तीन आयतें पढ़ना वाजिब है।

यह तरीक़ा दो या चार रकअ़तें पढ़ने का मालूम हुआ। अगर किसी को तीन रकअ़तें फ़र्ज़ नमाज़ मग़रिब पढ़ना हो तो वह दूसरी रकअ़त पर बैठकर 'अ़ब्दुहू व रसूलुहू' तक 'अत्तहिय्यात' पढ़े, फिर खड़ी हो जाये और तीसरी रकअ़त में 'बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम' और उसके बाद सूरः फ़ातिहा पढ़े, उसके बाद रुकूअ़ और दोनों सज्दे करके बैठ जाये और पूरी अत्तहिय्यात और दुरूद शरीफ़ और दुआ तरतीबवार पढ़े और फिर सलाम फेर दे।

फ़ायदा (1) दूसरी रकअ़त के 'क़अ़दे' (यानी बैठने) में अत्तहिय्यात के बाद दुरूद शरीफ़ और दुआ उसी वक़्त पढ़ी जाती है जबकि इसी 'क़अ़दे' पर सलाम फेरकर नमाज़ से निकलना मक़सूद हो, अगर तीसरी और चौथी रकअ़त भी पढ़ना हो तो दूसरी रकअ़त पर बैठकर सिर्फ़ अत्तहिय्यात यानी 'अ़ब्दुहू व रसूलुहू' तक पढ़कर उठ जाते हैं और दुरूद शरीफ़ और दुआ उस 'क़अ़दे' (यानी बैठक) में पढ़ते हैं जिसमें सलाम फेरना हो।

फ़ायदा (2) नमाज़ फ़र्ज़ हो या वित्र, सुन्नत हो या नफ़िल सबमें क़ियाम यानी खड़े होने की हालत में हर रकअ़त में हाथ बाँधे जाते हैं, जिसका तरीक़ा पहली रकअ़त के बयान में गुज़रा।

फ़ायदा (3) नमाज़ में खड़े होने को 'क़्याम' और दोनों सज्दों के बीच में बैठने को 'जलसा' और रुकूअ़ से खड़े होकर थोड़ा-सा ठहर जाने को 'क़ौमा' और अत्तहिय्यात के लिये बैठने को 'क़अ़दा' कहते हैं। दो रकअ़त वाली नमाज़ में सिर्फ़ एक 'क़अ़दा' होता है और तीन या चार रकअ़तों वाली नमाज़ में दो 'क़अ़दे' होते हैं। पहले को 'क़अ़दा-ए-ऊला' और दूसरे को 'क़अ़दा-ए-अख़ीरा' कहते हैं।

चन्द ज़रूरी मसाइल

मसला: औरतों पर नमाज़े जुमा फ़र्ज़ नहीं है, वे अपने घर में उस रोज़ भी ज़ोहर की नमाज़ पढ़ें, लेकिन अगर कोई औरत नमाज़े जुमा के लिये चली गयी और इमाम के पीछे नमाज़े जुमा दो रकअत पढ़ ली तो अदा हो जायेगी और फिर उस वक़्त नमाज़े ज़ोहर न पढ़े।

मसला: अगर इमाम के पीछे नमाज़ पढ़े तो यह नीयत करना भी ज़रूरी है कि मैं इमाम की इक़्तिदा में पढ़ रही हूँ।

मसला: अगर इमाम के पीछे कोई नमाज़ पढ़े तो किसी भी रकअत में अल्हम्दु या कोई सूरः न पढ़े।

मसला: किसी भी नमाज़ के लिये कोई सूरः शरीअत में इस तरह मुक़र्रर नहीं है कि उस सूरः के बग़ैर नमाज़ ही न हो, लिहाज़ा किसी नमाज़ के लिये खुद कोई सूरः इस तरह मुक़र्रर कर लेना कि उसके सिवा कोई सूरः न पढ़े, यह मक्रूह है। अलबत्ता सूरः अल्हम्दु हर रकअत में पढ़ी जाती है।

औरतों के लिये बहुत ज़रूरी मसला

यह बात ख़ूब अच्छी तरह समझ लो कि नमाज़ की शर्तों में आज़ा (यानी जिस्म के अंगों) का छुपाना भी है। इसमें मर्द और औरत का हुक्म अलग-अलग है। नाफ़ से लेकर घुटने के ख़त्म तक मर्दों को छुपाना फ़र्ज़ है, और औरतों का सारा बदन छुपाना फ़र्ज़ है। पेट, पीठ, कमर, सर, सीना, बाज़ू, बाँहें, पिन्डलियाँ, मोंढे, गर्दन वग़ैरह सब ढके रहें। हाँ अगर चेहरा या क़दम या गट्टों तक हाथ खुले रहें तो नमाज़ हो जायेगी, क्योंकि ये तीनों चीज़ें 'सतर' से अलग हैं, और अगर ये भी ढकी रहें तब भी नमाज़ हो जायेगी।

और यह भी समझ लेना चाहिये कि बारीक कपड़ा पहनना न पहनना शरुअन बराबर है। यानी जिस कपड़े से बाल और खाल नज़र आती हो वह कपड़ा न पहनने के हुक्म में है, और उससे सतर नहीं होता। आजकल औरतों को फ़ैशन का जोश है और लिबास शरई तक़ाज़े के मुताबिक़ नहीं पहनती हैं बल्कि रिवाज के मुताबिक़ चलती हैं, बारीक दुपट्टे आम हालात में ओढ़े रहती हैं और नमाज़ भी उन्हीं से पढ़ लेती हैं, सर, गर्दन और हलक़ और हलक़ के नीचे का बहुत-सा हिस्सा उसमें नज़र आता रहता है, इस

तरह से नमाज़ बिलकुल नहीं होती।

बड़ी-बड़ी हज्जनें और मुल्लानियाँ और पीर व मुर्शिदों मौलवियों मुफ़्तियों के घराने की औरतें बारीक दुपट्टा न हो तो उसकी जान खाने लगती हैं, और दुपट्टे पर ही क्या मुन्हसिर है बिना आस्तीन या आधी आस्तीन के कुर्ते व फ़रॉक पहनती हैं, और बाज़ इलाक़ों में पिन्डलियाँ ढकने का भी एहतिमाम नहीं करतीं, ख़ुसूसन साड़ी बाँधने वाली औरतें जो देहातों में रहती हैं उ़मूमन पूरी बाँहें और आधी पिन्डलियाँ खोले रहती हैं, और चूँकि ब्लाऊज़ नाफ़ तक रहता है ख़ुसूसन जिसका पेट बड़ा हो तो उसका नाफ़ के नीचे का हिस्सा भी नज़र आता रहता है, फिर नमाज़ पढ़ने वालियाँ उसी तरह बाँहें व पिन्डलियाँ खोले हुए नमाज़ें पढ़ती रहती हैं, हालाँकि इस तरह नमाज़ बिलकुल नहीं होती। ख़ुदा न करे अगर बारीक कपड़े का फ़ैशन छोड़ना गवारा न करें (अगरचे वह भी शरीअ़त के ख़िलाफ़ है) और उनको गर्मी खाये जाती हो तो नमाज़ के वक़्त तो ख़ूब चौड़ी-चकली मोटी चादर ओढ़ लिया करें जिससे पूरा सर और पूरे सर के बाल गर्दन गला सीना और पूरी बाँहें ढक जाया करें। इसी तरह नीचे की जानिब टख़्नों समेत पूरा हिस्सा मोटे कपड़े से ढाँक लिया करें, नाफ़ के नीचे वाली जगह के ढाँकने का और रान और पिन्डलियाँ मोटे कपड़े से ढाँकने का एहतिमाम करें। यूँ तो हर वक़्त ही पूरे जिस्मानी अंगों को मोटे कपड़े से ढाँके रहना लाज़िम है लेकिन नमाज़ के वक़्त तो ख़ास एहतिमाम कर लिया करें ताकि नमाज़ तो ज़ाया न हो।

मसलाः अगर नमाज़ पढ़ते वक़्त चौथाई पिन्डली या चौथाई रान या चौथाई बाँह खुल जाये और इतनी देर खुली रहे जितनी देर में तीन बार सुब्हानल्लाह कह सके तो नमाज़ जाती रहेगी, फिर से पढ़े। अगर इतनी देर नहीं लगी बल्कि खुलते ही ढक लिया तो नमाज़ हो गयी। इसी तरह जितने बदन का ढाँकना वाजिब है उसमें से जब कोई चौथाई अंग खुल जायेगा तो नमाज़ न होगी, जैसे एक कान का चौथाई या चौथाई सर या चौथाई बाल या चौथाई पेट या चौथाई पीठ चौथाई गर्दन चौथाई सीना चौथाई छाती वग़ैरह खुल जाने से नमाज़ न होगी, (बशर्ते कि तीन बार सुब्हानल्लाह कहने के बक़द्र या उससे ज़्यादा देर तक चौथाई हिस्सा खुला रहे)।

फ़र्ज़ नमाज़ के बाद के ज़िक्र और दुआ

हदीसः (21) हज़रत सोबान रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने इरशाद फ़रमाया कि

हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जब (फ़र्ज़) नमाज़ से फ़ारिग़ होते थे तो तीन बार इस्तिग़फ़ार करते थे और (यह) दुआ पढ़ते थे:

अल्लाहुम्-म अन्तस्सलामु व मिन्कस्सलामु तबारक्-त या ज़ल्-जलालि वल्-इकरामि। (मिश्कात शरीफ़)

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! तू सलामत रहने वाला है, और तुझ ही से सलामती मिल सकती है, तू बरकत वाला है, ऐ बुज़ुर्गी और अ़ज़मत वाले।

तशरीहः फ़र्ज़ नमाज़ के बाद दुआ क़बूल होने का ख़ुसूसी वक़्त है, इस मौक़े पर ख़ूब इख़्लास के साथ दुआ करे। एक मुख़्तसर और जामे दुआ इस हदीस में ज़िक्र की गई है, इसके अ़लावा बहुत-सी दुआयें आई हैं जो इन्शा-अल्लाह अगले पेज पर आ रही हैं।

यहाँ यह बात क़ाबिले ज़िक्र है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम नमाज़ से फ़ारिग़ होकर इस्तिग़फ़ार करते थे, यानी अल्लाह तआ़ला से मग़फ़िरत तलब करते थे, शायद किसी के ज़ेहन में यह सवाल गुज़रे कि गुनाह हो जाये तो इस्तिग़फ़ार करना चाहिये, नमाज़ तो नेक अ़मल है इसके ख़त्म पर क्यों इस्तिग़फ़ार करते थे? बात यह है कि अल्लाह जल्ल शानुहू की ज़ाते पाक बहुत बुलन्द है, उसकी शान के मुताबिक़ कोई अ़मल किसी से अदा नहीं हो सकता, बन्दे के लिये इसी में बेहतरी है कि चाहे जो भी नेक अ़मल करे, ऊपर से मग़फ़िरत भी तलब करे, इससे उस कोताही की भी तलाफ़ी होगी जो अ़मल की अदायगी में हो जाया करती है, और जो अ़मल किया है वह भी क़बूल होने के लायक़ हो जायेगा, इन्शा-अल्लाह।

गुनाहगार गुनाह करके इस्तिग़फ़ार करते हैं और आ़बिद व ज़ाहिद और मुख़्लिस बन्दे नेकी करके इस्तिग़फ़ार करते हैं, क्योंकि वे समझते हैं कि अल्लाह तआ़ला की बारगाहे आ़ली के लायक़ हमसे अ़मल न हो सका। हर नमाज़ के बाद सुन्नत के मुताबिक़ तीन बार इस्तिग़फ़ार करें, यानी 'अस्तग़फ़िरुल्ला-ह' कहें और वह दुआ पढ़ें जो ऊपर गुज़री, और उसके अ़लावा नीचे लिखी जाने वाली दुआओं में से जो दुआ चाहे पढ़े या सबको पढ़ ले।

ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क लहू लहुल्-मुल्कु व लहुल्-हम्दु व हु-व अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर।

तर्जुमाः अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं, जो तन्हा है, उसका कोई

शरीक नहीं, उसी के लिये मुल्क है, उसी के लिये सब तारीफ़ें हैं, और वह हर चीज़ पर क़ादिर है।

अल्लाहुम्-म ला मानि-अ लिमा अअ्तै-त व ला मुअ्ति-य लिमा मनअ्-त व ला यन्फ़अु ज़ल्-जद्दि मिन्कल्-जद्दु।

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! जो तू दे उसको कोई रोकने वाला नहीं, और जो तू रोके उसका कोई देने वाला नहीं, और किसी मालदार को तेरे अ़ज़ाब से मालदारी बचा नहीं सकती।

अल्लाहुम्-म इन्नी अऊज़ु बि-क मिनल् जुब्नि व अऊज़ु बि-क मिनल् बुख़्लि व अऊज़ु बि-क मिन् अर्ज़लिल्-उम्रि व अऊज़ु बि-क मिन् फ़ित्नतिद्दुन्या व अ़ज़ाबिल् क़ब्रि।

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! मैं तेरी पनाह चाहता हूँ बुज़दिली से और कन्जूसी से, और निकम्मी उम्र से, और दुनिया के फ़ितने से और क़ब्र के अ़ज़ाब से।

अल्लाहुम्मग़फ़िर् ली मा क़द्दम्तु व मा अख़्ख़रतु व मा अस्ररतु व मा अअ्लन्तु व मा अस्रफ़्तु व मा अन्-त अअ्लमु बिही मिन्नी अन्तल् मुक़द्दिमु व अन्तल् मुअख़्ख़िरु ला इला-ह इल्ला अन्-त।

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! मेरे अगले-पिछले गुनाह और वे गुनाह जो मैंने पोशीदा तौर पर किये और ज़ाहिरन किये सबको बख़्श दे। और मेरे हद से बढ़ जाने को माफ़ फ़रमा दे, और उन गुनाहों को भी बख़्श दे जिनको तू मुझसे ज़्यादा जानता है, तू ही आगे बढ़ाने वाला है और तू ही पीछे हटाने वाला है, तेरे सिवा कोई माबूद नहीं।

अल्लाहुम्-म अअिन्नी अ़ला ज़िक्रि-क व शुक्रि-क व हुस्नि इबादति-क।

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! मेरी मदद फ़रमा कि मैं तेरा ज़िक्र करूँ और तेरी अच्छी इबादत करूँ।

फ़ायदाः हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद जो शख़्स आयतुल-कुर्सी पढ़ लिया करे उसके मुताल्लिक़ हदीस शरीफ़ में इरशाद है कि ऐसे शख़्स के जन्नत के दाख़िले से सिर्फ़ मौत ही रोके हुए है। (बैहक़ी व शुअबुल-ईमान)

हज़रत उक़बा बिन आ़मिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु का इरशाद है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मुझे हुक्म दिया कि हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद 'मुअ़व्वज़ात' यानी सूरः 'क़ुल या अय्युहल्-काफ़िरून' और सूरः 'क़ुल हुवल्लाहु अहद्' और सूरः 'क़ुल अऊज़ु बिरब्बिल् फ़-लक़ि' और सूरः 'क़ुल

अऊज़ु बिरब्बिन्नासि' पढ़ा करो। (मिश्कात शरीफ़)

हदीसः (22) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में एक ख़ादिम तलब करने के लिये हाज़िर हुईं। आप सल्ल० ने (ख़ादिम तो न दिया अलबत्ता यह) इरशाद फ़रमाया कि मैं तुम्हें वह चीज़ न बता दूँ जो ख़ादिम से बेहतर है, (और वह यह है) कि हर (फ़र्ज़) नमाज़ (से फ़ारिग़ होने) के वक़्त 33 बार सुब्हानल्लाहि पढ़ो और 33 बार अल्हम्दु लिल्लाहि पढ़ो और 34 बार अल्लाहु अकबर पढ़ो, और सोने के वक़्त भी यही अमल करो। (मिश्कात शरीफ़ व मुस्लिम शरीफ़)

तशरीहः इस हदीस में नमाज़ के बाद 33 बार सुब्हानल्लाहि 33 बार अल्हम्दु लिल्लाहि 34 बार अल्लाहु अकबर पढ़ने की तालीम दी गयी है। इसकी बहुत बड़ी फ़ज़ीलत है, यह गिनती में सौ होंगे मगर सवाब में हज़ार के बराबर होंगे, क्योंकि हर नेकी का सवाब कम-से-कम दस गुना कर दिया जाता है। इसको पढ़ने के और तरीक़े भी हदीस शरीफ़ में आये हैं। एक तरीक़ा यह है कि इन तीनों को 33-33 बार पढ़ें और पूरा सौ करने के लिये यह पढ़ लें 'ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क लहू लहुल्-मुल्कु व लहुल्-हम्दु व हु-व अला कुल्लि शैइन् क़दीर।'

तीसरा तरीक़ा यह है कि इन तीनों को पच्चीस-पच्चीस बार पढ़ें और पच्चीस बार 'ला इला-ह इल्लल्लाहु' पढ़ें। ये सब तरीक़े मिश्कात शरीफ़ में लिखे हैं।

हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा का ख़ादिम तलब करने का वाक़िआ इस हदीस में मुख़्तसर ज़िक्र फ़रमाया है, तफ़सील के साथ इन्शा-अल्लाह 'ज़िक्रुल्लाह' (यानी अल्लाह के ज़िक्र) के बयान में आ रहा है।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अमर बिन आस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया, दो चीज़ें हैं जो मुसलमान उनकी पाबन्दी करेगा जन्नत में दाख़िल होगा। ख़बरदार! वे दोनों चीज़ें आसान हैं मगर उनपर अमल करने वाले कम हैं।

(1) हर (फ़र्ज़) नमाज़ के बाद दस बार 'सुब्हानल्लाहि' कहे और दस बार 'अल्हम्दु लिल्लाहि' कहे और दस बार 'अल्लाहु अकबर' कहे। यह ज़बान पर (पाँचों वक़्त के सब मिलाकर) एक सौ पचास हुए और (क़ियामत के दिन

हर नेकी दस के हिसाब से) तराज़ू में डेढ़ हज़ार होंगे।

(2) और दूसरी चीज़ यह है कि जब सोने के लिये बिस्तर पर जाये तो सुब्हानल्लाहि और अल्हम्दु लिल्लाह और अल्लाहु अकबर सौ बार कहे, (सुब्हानल्लाहि 33 बार, अल्हम्दु लिल्लाहि 33 बार, अल्लाहु अकबर 34 बार) यह ज़बान पर सौ हुए और तराज़ू में (कियामत के दिन हज़ार होंगे)। यह सब पच्चीस सौ (2500) नेकियाँ हुईं। बताओ तुम में ऐसा कौन है जो रात-दिन में पच्चीस सौ गुनाह करता हो (लिहाज़ा जो इस अ़मल को करेगा उसकी नेकियाँ गुनाहों से ज़्यादा होंगी)। सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने अ़र्ज़ किया (यह तो कोई मुशकिल चीज़ नहीं है) कि हम इसकी पाबन्दी कैसे न कर सकेंगे? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया नमाज़ पढ़ने में तुम्हारे पास शैतान आकर कहेगा फ़लाँ चीज़ याद कर फ़लाँ चीज़ याद कर, यहाँ तक कि नमाज़ से फ़ारिग़ हो जाओगे और उसकी इस हरकत की वजह से (इनपर अ़मल न कर सकोगे) और इसी तरह सोने का वक़्त आ जायेगा और वह सुलाने की कोशिश करता रहेगा यहाँ तक कि सो जाओगे और इसको न करोगे। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

फ़ायदा: इस हदीस में सुब्हानल्लाहि अल्हम्दु लिल्लाहि अल्लाहु अकबर को हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद दस-दस बार पढ़ना आया है, यह कम-से-कम है, इसपर तो अ़मल कर ही लें, सुस्ती में इतना बड़ा सवाब खोना कैसी नादानी है।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि वह मुहाजिर सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम जो फ़क़ीर थे, रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए और अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! माल वाले तो बड़े दरजे और हमेशा की नेमतें ले उड़े, (और हम महरूम रह गये)। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कैसे? अ़र्ज़ किया कि वे भी नमाज़ पढ़ते हैं जैसे हम पढ़ते हैं, और वे रोज़े भी रखते हैं जैसा कि हम रखते हैं, और वे सदका करते हैं हम सदका नहीं करते, और वे गुलाम आज़ाद करते हैं हम नहीं करते, (लिहाज़ा माली इबादत में वे हमसे बढ़ गये)।

आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया क्या मैं तुमको ऐसी चीज़ न बताऊँ कि उसके सबब तुम उन लोगों को पकड़ लो, (यानी उनके बराबर हो जाओ) जो तुमसे पहले गुज़र गये, और उनसे आगे बढ़ जाओगे जो

तुम्हारे बाद होंगे, और कोई तुमसे अफ़ज़ल न होगा सिवाय उसके जो तुम्हारे जैसा अ़मल करे। उन हज़रात ने अ़र्ज़ किया जी हाँ इरशाद फ़रमाइये। फ़रमाया हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद 33 बार सुब्हानल्लाहि 33 बार अल्हम्दु लिल्लाहि 34 बार अल्लाहु अकबर पढ़ लिया करो। इस हदीस के रिवायत करने वाले कहते हैं कि वे हज़रात (ख़ुशी-ख़ुशी) चले गये। फिर आकर अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! हमारे मालदार भाइयों ने भी इसको सुन लिया और इसपर अ़मल कर लिया, लिहाज़ा हम फिर पीछे रह गये। आपने फ़रमाया यह अल्लाह का फ़ज़्ल है जिसको चाहे दे। (मिश्कात शरीफ़)

फ़ज्र और मग़रिब की नमाज़ के बाद पढ़ने के लिये

हज़रत मुस्लिम तमीमी रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया है कि मग़रिब की नमाज़ से फ़ारिग़ होकर किसी से बात करने से पहले सात बार यह कहो: "अल्लाहुम्-म अजिर्नी मिनन्नारि" (यानी ऐ अल्लाह! मुझे दोज़ख़ से महफ़ूज़ रखिये)।

जब तुम इसको कह लोगे फिर रात को तुम्हारी मौत आ जायेगी तो दोज़ख़ से महफ़ूज़ होगे। और अगर इस दुआ़ को फ़ज्र की नमाज़ के बाद किसी से बात किये बग़ैर कह लोगे और उस दिन मर जाओगे तो दोज़ख़ से महफ़ूज़ रहोगे। (मिश्कात शरीफ़ व अबू दाऊद)

दूसरी हदीस में है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि फ़ज्र और मग़रिब की नमाज़ से फ़ारिग़ होने के बाद उसी तरह तशह्हुद (यानी अत्तहिय्यात) की हालत में बैठे हुए जो शख़्स दस बार यह पढ़ ले: "ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क लहू लहुल् मुल्कु व लहुल् हम्दु बियदिहिल्-ख़ैरु युह्यी व युमीतु व हु-व अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर।

तर्जुमाः अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं, वह तन्हा है उसका कोई शरीक नहीं, उसके लिये मुल्क है और उसी के लिये सब तारीफ़ है, उसी के हाथ में ख़ैर है, वही ज़िन्दा करता है और वही मारता है, और वह हर चीज़ पर क़ादिर है।

तो उसके लिये हर बार के बदले दस नेकियाँ लिखी जायेंगी, और उसके दस गुनाह आमालनामे में से मिटा दिये जायेंगे, और उसके दस दर्जे बुलन्द कर दिये जायेंगे, और हर बुरी चीज़ से और शैतान मरदूद से महफ़ूज़ रहेगा,

और शिर्क के सिवा कोई गुनाह उसको हलाक न कर सकेगा, और अमल के एतिबार से सबसे अफ़ज़ल रहेगा, हाँ अगर कोई शख़्स उससे ज़्यादा पढ़कर उससे आगे बढ़ जाये तो और बात है। (मिश्कात शरीफ़)

वित्र की नमाज़

वित्र की नमाज़ तीन रक्अ़त है, इसका वक़्त वही है जो इशा का है, लेकिन इशा के फ़र्ज़ों से पहले नहीं पढ़ी जा सकती। वित्र की नमाज़ पढ़ने का तरीक़ा यह है कि तीन रक्अ़त वित्र की नमाज़ की नीयत करके शुरू कर दे और दो रक्अ़तें मामूल के मुताबिक़ पढ़कर क़अ़दे में बैठें और "अ़ब्दुहू व रसूलुहू" तक अत्तहिय्यात पढ़कर तीसरी रक्अ़त के लिये खड़ी हो जाये और तीसरी रक्अ़त में अल्हम्दु और सूरः से फ़ारिग़ होकर अल्लाहु अकबर कहते हुए काँधों तक हाथ उठाये और फिर उसी तरह हाथ बाँधकर दुआ़-ए-क़ुनूत पढ़े जैसे पहले बताया जा चुका है, उसके बाद रुकूअ़ में जाये और बाक़ी नमाज़ मामूल के मुताबिक़ पूरी करे।

दुआ़-ए-क़ुनूत यह है: 'अल्लाहुम्-म इन्ना नस्तईनु-क व नस्तग़फ़िरु-क व नुअ्मिनु बि-क व न-तवक्कलु अ़लै-क व नुस्नी अ़लैकल् ख़ै-र व नश्कुरु-क व ला नक्फ़ुरु-क व नख़्लअु व नत्रुकु मंय्यफ़्जुरु-क, अल्लाहुम्-म इय्या-क नअ्बुदु व ल-क नुसल्ली व नस्जुदु व इलै-क नस्अ़ा व नह्फ़िदु व नरजू रह्म-त-क व नख़्शा अ़ज़ाब-क इन्-न अ़ज़ाब-क बिल्कुफ़्फ़ारि मुल्हिक़'।

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! हम मदद चाहते हैं तुझसे, और माफ़ी माँगते हैं तुझसे, और ईमान लाते हैं तुझपर, और भरोसा रखते हैं तुझपर, और हम तेरी अच्छी तारीफ़ करते हैं, और तेरी नाशुक्री नहीं करते, और उससे अलग और अ़लाहिदा हो जाते हैं जो तेरी नाफ़रमानी करता है।

इलाही! हम तेरी ही इबादत करते हैं और तेरे ही लिये नमाज़ पढ़ते हैं और सज्दा करते हैं और तेरी ही तरफ़ हम दौड़ते हैं, और हम तेरी ही तरफ़ झपटते हैं और उम्मीदवार हैं तेरी रहमत के, और डरते हैं तेरे अ़ज़ाब से, बेशक तेरा अ़ज़ाब काफ़िरों को पहुँचने वाला है।

मसलाः अगर किसी को दुआ़-ए-क़ुनूत याद न हो तो (बजाय इसके) यह दुआ़ पढ़ ले: "रब्बना आतिना फ़िद्दुन्या ह-स-नतंव्-व फ़िल्-आख़िरति ह-स-नतंव्-व क़िना अ़ज़ाबन्नारि।"

लेकिन हमेशा इसी को न पढ़ती रहे बल्कि दुआ-ए-क़ुनूत जल्दी याद कर ले।

मुअक्कदा सुन्नतों की पाबन्दी करना भी ज़रूरी है

हदीसः (23) हज़रत उम्मे हबीबा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया जो शख़्स रात-दिन मे बारह रकअ़त नमाज़ पढ़ेगा जन्नत में उसके लिये एक घर बनाया जायेगा। (वे बारह रकअ़तें ये हैं) चार रकअ़तें ज़ोहर से पहले और दो रकअ़तें ज़ोहर के बाद और दो रकअ़तें मग़रिब के बाद और दो रकअ़तें इशा के बाद और दो रकअ़तें फ़ज्र की नमाज़ यानी सुबह की नमाज़ से पहले। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

तशरीहः फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद जो मुअक्कदा और ग़ैर-मुअक्कदा सुन्नतें पढ़ी जाती हैं उनकी भी बड़ी फ़ज़ीलत आई है, ख़ासकर मुअक्कदा सुन्नतों का तो बहुत ही एहतिमाम करना ज़रूरी है। इस हदीस में मुअक्कदा सुन्नतों का ज़िक्र है, चार रकअ़तें ज़ोहर के फ़र्ज़ों से पहले, दो रकअ़तें ज़ोहर के फ़र्ज़ों के बाद, और दो रकअ़तें मग़रिब के फ़र्ज़ों के बाद, और दो रकअ़तें इशा के फ़र्ज़ों के बाद, और दो रकअ़तें फ़ज्र के फ़र्ज़ों से पहले सुन्नते मुअक्कदा हैं।

इस हदीस की रिवायत करने वाली हज़रत उम्मे हबीबा रज़ियल्लाहु अन्हा हैं जो नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बीवी हैं। उन्होंने इस हदीस को बयान करने के बाद फ़रमाया "जब से मैंने यह हदीस सुनी है उसी वक़्त से इन रकअ़तों को एहतिमाम और पाबन्दी के साथ अदा करती हूँ।" हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़माने की औरतें ख़ूब दीनदार थीं, नेक कामों का बहुत ख़्याल रखती थीं, जैसे मर्द आख़िरत का सवाब और वहाँ के दर्जों को लेने की ख़ूब कोशिश करते थे उसी तरह औरतें भी ख़ूब बढ़-चढ़कर नमाज़, रोज़े, ज़िक्र, तिलावत और सवाब के कामों में लगी रहती थीं। इन मुअक्कदा सुन्नतों की फ़ज़ीलत हदीस शरीफ़ में यह फ़रमाई कि जो शख़्स इनकी पाबन्दी करेगा अल्लाह तआ़ला उसके लिये जन्नत में एक घर बना देगा। एक हदीस में है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि ज़ोहर से पहले (ऐसी) चार रकअ़तें जिनके दरमियान सलाम न फेरा हो उनके लिये आसमान के दरवाज़े खोल दिये जाते हैं, (यानी उनकी मक़बूलियत अल्लाह के यहाँ बहुत ज़्यादा है, आसमानों के दरवाज़े खोलकर उनका स्वागत किया जाता है)।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन साइब रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सूरज ढलने के बाद ज़ोहर से पहले चार रक्अ़तें पढ़ते थे और फ़रमाते थे कि यह ऐसी घड़ी है जिसमें आसमानों के दरवाज़े खोले जाते हैं, लिहाज़ा मैं चाहता हूँ कि मेरा कोई नेक अ़मल इस वक़्त ऊपर चढ़ जाये। (यानी आ़लमे-बाला में पहुँच जाये। ये दोनों रिवायतें मिश्कात शरीफ़ में मौजूद हैं)।

फ़ज्र के फ़र्ज़ों से पहले जो सुन्नतें हैं सब मुअक्कदा सुन्नतों से बढ़कर उनकी ताकीद आई है। हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने फ़रमाया कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लभ ग़ैर-फ़र्ज़ नमाज़ों में सबसे ज़्यादा पाबन्दी फ़ज्र की दो सुन्नतों की करते थे। (बुख़ारी)

इन दो सुन्नतों की फ़ज़ीलत भी बहुत ज़्यादा है, फ़रमाया सरवरे आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम नेः "फ़ज्र की दो सुन्नतें सारी दुनिया से और दुनिया में जो कुछ है उस सबसे बेहतर हैं।" (मुस्लिम शरीफ़)

हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने फ़रमाया कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ज़ोहर से पहले चार रक्अ़तें और फ़ज्र से पहले दो रक्अ़तें किसी हाल में नहीं छोड़ते थे। (मुस्नद इमाम अहमद)

फ़ायदाः फ़ज्र की सुन्नतों में पहली रक्अ़त में "कुल या अय्युहल् काफ़िरू-न" और दूसरी रक्अ़त में "कुल हुवल्लाहु अहद्" पढ़ना सुन्नत है। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

ग़ैर-मुअक्कदा सुन्नतें और दूसरे नवाफ़िल

मुअक्कदा सुन्नतों के अ़लावा ग़ैर-मुअक्कदा सुन्नतों और नफ़िल नमाज़ों का भी एहतिमाम करना चाहिये। बात यह है कि इनसान दुनिया में जो कुछ कर लेगा आख़िरत में उसका फल पा लेगा। आख़िरत की तिजारत में नुक़सान का कोई ख़तरा नहीं, जहाँ तक मुम्किन हो नफ़िल नमाज़ों में भी कोताही न की जाये। हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि क़ियामत के दिन बन्दे के आमाल में सबसे पहले नमाज़ का हिसाब होगा, अगर नमाज़ ठीक निकली तो कामयाब और बामुराद होगा। अगर नमाज़ ख़राब निकली तो सवाब से महरूम होगा और नुक़सान उठायेगा। अगर फ़र्ज़ों में कुछ कमी निकली तो अल्लाह तआ़ला फ़रमायेंगे (देखो) क्या मेरे बन्दे की कुछ ग़ैर-फ़र्ज़

नमाज़ें भी हैं? अगर ग़ैर-फ़र्ज़ नमाज़ें भी होंगी तो उनके ज़रिये फ़र्ज़ों की कमी पूरी कर दी जायेगी, फिर दूसरे आमाल (रोज़ा, ज़कात वग़ैरह) का हिसाब भी इसी तरह होगा, (यानी नवाफ़िल से फ़राइज़ की पूर्ती की जायेगी)। (मिश्कात)

अल्लाहु अकबर! क्या ठिकाना है अल्लाह तआला की इनायत का कि फ़राइज़ की कोताही को ग़ैर-फ़र्ज़ से पूरा फ़रमा देंगे। अब बन्दों की समझदारी है कि सुन्नतों और नफ़्लों को मामूली न समझें, फ़र्ज़ के आगे-पीछे जो मुअक्कदा व ग़ैर-मुअक्कदा सुन्नतें हैं उनका और नवाफ़िल का ख़ास ख़्याल रखें, यानी बराबर पढ़ते रहें ताकि आख़िरत के बुलन्द दरजे नसीब हों और फ़र्ज़ों की कमी भी पूरी हो सके। नफ़िल नमाज़ और ग़ैर-मुअक्कदा सुन्नतों के छोड़ने पर अ़ज़ाब की वईद (डाँट और सज़ा की धमकी) तो नहीं है लेकिन उनका नफ़ा बहुत ज़्यादा है, उससे महरूम हो जाना बड़ी नासमझी है। हर शख़्स अपनी आख़िरत की ख़ुद फ़िक्र करे, नफ़िल नमाज़ें जिस क़द्र भी पढ़े बेहतर है, लेकिन चाश्त, इश्राक़, अव्वाबीन और तहज्जुद पढ़ना बहुत ही ज़्यादा नफ़े की चीज़ है, इन नमाज़ों के फ़ज़ाइल इन्शा-अल्लाह अगली हदीस के बयान में लिखे जायेंगे।

फ़र्ज़ नमाज़ के बाद दो रक्अ़त का सवाब

एक हदीस फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद दो रक्अ़त पढ़ने के बारे में आई है, उसको सुन लीजिये। एक सहाबी रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि जब हम लोग ख़ैबर फ़तह कर चुके तो लोगों ने अपना-अपना माले ग़नीमत निकाला जिसमें मुतफ़र्रिक़ सामान था और क़ैदी (भी) थे, आपस में ख़रीद व फ़रोख़्त शुरू हो गई (कि हर शख़्स अपनी ज़रूरियात ख़रीदने लगा और दूसरी ज़ायद चीज़ों की फ़रोख़्त शुरू कर दी)। एक सहाबी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में पेश हुए और अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! आजकी इस तिजारत में मुझे इतना नफ़ा हुआ कि सारी जमाअ़त में किसी को भी इतना नफ़ा न मिल सका। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने पूछा कितना नफ़ा हुआ? अ़र्ज़ किया मैं सामान ख़रीदता और बेचता रहा यहाँ तक कि नफ़े में तीन सौ ओक़िया चाँदी बची। हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया तुम्हें (इससे बढ़कर) बेहतरीन नफ़े की चीज़ न बता दूँ? अ़र्ज़ किया ज़रूर बताइये, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि फ़र्ज़ नमाज़ों

के बाद दो रक्अ़त पढ़ लेना। (इस सारे नफ़े से बढ़कर है)। (अबू दाऊद)

देखो दो रक्अ़तों का कितना नफ़ा बताया है। एक ओक़िया चालीस दिर्हम का और एक दिर्हम तीन माशे पाँच रत्ती और 5/1 रत्ती का होता है। तीन सौ ओक़िया चाँदी की कीमत का हिसाब लगा लो फिर देखो आख़िरत का सौदा कितने नफ़े का है।

अ़स्र से पहले चार रक्अ़तों की फ़ज़ीलत

अ़स्र से पहले चार रक्अ़त पढ़ने के बारे में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया "अल्लाह रहम फ़रमाये उसपर जो अ़स्र से पहले चार रक्अ़त नमाज़ पढ़ ले। (मिश्कात शरीफ़)

मसलाः मुअक्कदा सुन्नत का दर्जा वाजिब के करीब है, उनके छोड़ने से गुनाह होता है। (शामी)

मसलाः लम्बे सफ़र में अगर रेल छूट जाने या बस के निकल जाने का अन्देशा हो या रेल में जगह मिलने की दुश्वारी हो तो मुअक्कदा सुन्नतों को छोड़ने की गुन्जाइश है, मगर फ़ज्र की सुन्नतें जहाँ तक मुमकिन हो पढ़ ही ले। अगर कोई शख़्स सख़्त बीमार हो तो वह भी मुअक्कदा सुन्नतें छोड़ सकता है, लेकिन वित्र कभी न छोड़े, क्योंकि वित्रों का दर्जा फ़र्ज़ों के करीब है, अगर इशा की नमाज़ क़ज़ा हो जाये तो फ़र्ज़ों के साथ वित्रों की क़ज़ा भी लाज़िम है।

मसलाः अगर फ़ज्र की नमाज़ क़ज़ा हो जाये और सूरज निकले आँख खुले तो सुन्नत और फ़र्ज़ दोनों की क़ज़ा पढ़े। अगर ज़ोहर का वक़्त आ गया और फ़ज्र की कज़ा नहीं पढ़ी तो अब सिर्फ़ फ़ज्र के फ़र्ज़ों की कज़ा पढ़े, सुन्नतों की क़ज़ा पढ़ने का वक़्त गुज़र गया।

मसलाः फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद जो सुन्नतें हैं उनको फ़र्ज़ों के साथ ही पढ़ ले, यानी मुख़्तसर-सी दुआ माँगकर सुन्नतों में मशगूल हो जाये, तस्बीहात और लम्बी दुआ सुन्नतों के बाद करे।

चाश्त, इश्राक़ और दूसरी नफ़िल नमाज़ों का सवाब

चाश्त की नमाज़

हदीसः (24) हज़रत मआ़ज़ह रहमतुल्लाहि अ़लैहा का बयान है (जो

हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा की ख़ास शागिर्द थीं) कि मैंने हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से सवाल किया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम चाश्त के वक़्त कितनी रक्अतें पढ़ते थे, इसपर उन्होंने जवाब दिया, चार रक्अतें पढ़ते थे, और (इस तायदाद पर कभी दो रक्अत कभी चार रक्अत का) इज़ाफ़ा भी अल्लाह की मर्ज़ी के मुताबिक़ हो जाता था। (मिश्कात)

हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा चाश्त की आठ रक्अतें पढ़ा करती थीं और फ़रमाती थीं कि अगर मेरे माँ-बाप (भी) क़ब्र से उठ आयें (और उनकी ख़िदमत में लगना पड़े) तब भी इनको न छोड़ूँगी। (किसी-न-किसी तरह वक़्त निकालकर पढ़ती ही रहूँगी)। (मुवत्ता इमाम मालिक)

तशरीहः नफ़िल नमाज़ें दो तरह की हैं- अव्वल वह नफ़िल जिसका कोई ख़ास वक़्त मुक़र्रर नहीं है जब चाहो और जितनी चाहो पढ़ लो। बाज़ हज़राते अकाबिर से रोज़ाना कई-कई सौ रक्अतें पढ़ने का सुबूत मिलता है। अगर किसी के पास वक़्त फ़ारिग़ हो तो नमाज़ उसके लिये बेहतरीन मश्ग़ला है। फ़राइज़ और मुअक्कदा सुन्नतों के अलावा जिस क़द्र हो सके नवाफ़िल का शुग़ल रखे, मगर शौहर या औलाद या माँ-बाप के हुक़ूक़ में कोई कमी और ख़राबी न डाले, और मर्द हो तो वह भी बीवी-बच्चों और माँ-बाप के हुक़ूक़ नवाफ़िल की मशग़ूलियत में ज़ाया न करे, क्योंकि शरीअत पर चलना मक़सद है न कि अपनी तबीयत और ख़्वाहिश पर।

दूसरी क़िस्म के नवाफ़िल वे हैं जिनके ख़ास-ख़ास वक़्त मुक़र्रर हैं और उनके ख़ास-ख़ास फ़ज़ाइल भी हदीसों में आए हैं, उन्हीं नवाफ़िल में चाश्त की नमाज़ भी है जिसका ऊपर की हदीस में ज़िक्र है। इस नमाज़ की बड़ी फ़ज़ीलत है इसी लिये तो हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने फ़रमाया कि मेरे माँ-बाप भी क़ब्रों से उठ आयें तब भी इस नमाज़ को न छोड़ूँ। दर हक़ीक़त जिनके दिलों में नमाज़ की मुहब्बत है और जिनको इबादत का ज़ौक़ है वे ऐसी ही बातें किया करते हैं। चाश्त की नमाज़ का वक़्त नौ बजे दिन में हो जाता है, और ज़वाल के वक़्त से पहले-पहले यह नमाज़ पढ़ी जा सकती है। इस नमाज़ की रक्अतों की तायदाद भी मुख़्तलिफ़ हदीसों में मुख़्तलिफ़ आई है, दो, चार, आठ जितनी रक्अतें पढ़ सके पढ़ ले।

एक हदीस में है कि नबी करीम सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिसने चाश्त के वक़्त दो रक्अत नफ़िल नमाज़ पढ़ने

की पाबन्दी कर ली उसके गुनाह माफ़ कर दिये जायेंगे। अगरचे समुद्र के झागों के बराबर हों। (तिर्मिज़ी वग़ैरह)

हज़रत अबूज़र रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि तुम में से हर शख़्स के जिस्म के जोड़ों की तरफ़ से (शुक्रिये के तौर पर रोज़ाना) सदक़ा (करना ज़रूरी) है, (क्योंकि ये जोड़ अल्लाह पाक की बहुत बड़ी नेमत हैं, अगर ये जोड़ न हों तो इनसान उठ-बैठ नहीं सकता, यूँ ही तख़्ता-सा पड़ा रह जायेगा)। फिर फ़रमाया कि सदक़े के लिये माली सदक़ा ही होना ज़रूरी नहीं है बल्कि 'सुब्हानल्लाहि' कहना सदक़ा है, 'अल्हम्दु लिल्लाहि' कहना भी सदक़ा है, 'ला-इला-ह इल्लल्लाहु' कहना भी सदक़ा है, 'अल्लाहु अकबर' कहना भी सदक़ा है। और अगर कोई शख़्स चाश्त की दो रकअ़तें पढ़ ले तो ये दो रकअ़तें जिस्म के जोड़ों की तरफ़ से शुक्रिये के तौर पर काफ़ी होंगी। (मुस्लिम)

इनसान के जिस्म में तीन सौ साठ (360) जोड़ हैं और रोज़ाना हर जोड़ की तरफ़ से सदक़ा करना कितना मुश्किल है? अल्लाह पाक ने बन्दों पर मेहरबानी फ़रमाकर बिना मेहनत व मुशक्कत के कामों को सदक़ा बना दिया है। 'सुब्हानल्लाहि' 'अल्हम्दु लिल्लाहि' 'ला इला-ह इल्लल्लाहु' और 'अल्लाहु अकबर' अगर कोई शख़्स तीन सौ साठ बार कह ले तो जिस दिन कह लेगा उस दिन का शुक्रिया जिस्म के सब जोड़ों की तरफ़ से अदा हो जायेगा, और चाश्त की दो रकअ़तें पढ़ लेने से भी तीन सौ साठ जोड़ों का शुक्रिया अदा हो जाता है। अल्लाहु अकबर! क्या ठिकाना है अल्लाह के फ़ज़्ल व इनाम का।

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिस शख़्स ने चाश्त के वक़्त बारह रकअ़तें पढ़ीं अल्लाह तआ़ला उसके लिये जन्नत में सोने का एक महल बना देंगे। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

ऊपर ज़िक्र हुई हदीसों से चाश्त के वक़्त दो चार या आठ रकअ़त पढ़ना साबित हुआ, जिससे जिस क़द्र हो सके पढ़ लिया करे।

इश्राक़ की नमाज़

यह नमाज़ भी उन नवाफ़िल में से है जिनकी ख़ास फ़ज़ीलत आई है,

इसका वक़्त सूरज निकलने से पन्द्रह मिन्ट बाद शुरू होता है। उस वक़्त दो या चार रक्अ़त जिस क़द्र मुम्किन हो पढ़े, बेहतर यह है कि फ़ज्र की नमाज़ जिस जगह पढ़ी है उसी जगह बैठे-बैठे ज़िक्र व तिलावत में मशग़ूल रहे। फिर जब सूरज निकल कर एक नेज़ा (यानी एक बल्लम) के बराबर बुलन्द हो जाये तो नमाज़े इश्राक़ पढ़ ले।

नमाज़े अव्वाबीन

आ़म तौर पर उन नवाफ़िल के लिये यह लफ़्ज़ बोला जाता है जो मग़रिब की नमाज़ के बाद पढ़े जाते हैं। मग़रिब के बाद फ़र्ज़ व सुन्नतों के बाद छह रक्अ़त नफ़िल पढ़ने का बड़ा सवाब है। एक हदीस में है कि जो शख़्स मग़रिब पढ़ने के बाद छह रक्अ़तें पढ़ ले जिनके दरमियान कोई बुरी बात न करे तो ये छह रक्अ़तें उसके लिये बारह साल की इबादत के बराबर होंगी। (मिश्कात शरीफ़)

अगर फ़ुरसत ज़्यादा न हो तो सुन्नतों को मिलाकर ही छह रक्अ़तें पढ़ ले। मग़रिब के बाद बीस रक्अ़त पढ़ने का ज़िक्र भी हदीस शरीफ़ में आया है। हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से रिवायत किया गया है कि नबी करीम फ़ख़्रे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिसने मग़रिब के बाद बीस रक्अ़तें पढ़ लीं अल्लाह तआ़ला उसके लिये जन्नत में एक घर बना देंगे। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

तहज्जुद की नमाज़ की अहमियत और फ़ज़ीलत

हदीसः (25) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया, अल्लाह तआ़ला उस मर्द पर रहम फ़रमाये जो रात को (तहज्जुद के लिये उठा) और उसने तहज्जुद की नमाज़ पढ़ी और अपनी बीवी को (भी) जगाया। फिर उसने भी नमाज़ पढ़ ली। अगर शौहर के जगाने पर उसने इनकार किया तो उसके चेहरे पर पानी छिड़क दिया (ताकि नींद टूट जाये और उठकर कुछ रक्अ़तें पढ़ ले)। फिर फ़रमाया, अल्लाह तआ़ला उस औ़रत पर रहम फ़रमाये जो रात को तहज्जुद के लिये उठी और उसने नमाज़ पढ़ी और अपने शौहर को (भी जगाया ताकि वह भी तहज्जुद की नमाज़ पढ़ ले) अगर बीवी के जगाने पर शौहर ने इनकार किया तो उसके चेहरे पर पानी छिड़क दिया (ताकि नींद का

गल्बा दूर हो जाये और जाग कर नमाज़ पढ़ सके)। (मिश्कात शरीफ़)

तशरीहः इस हदीस में नमाज़े तहज्जुद पढ़ने वालों को दुआ दी गयी है। यह अल्लाह के प्यारे नबी हज़रत ख़ातिमुन-नबिय्यीन सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की दुआ है जो ज़रूर लगकर रहेगी। नमाज़े तहज्जुद बहुत बड़ी दौलत है, बस ज़रा उठने की तकलीफ़ है और आ़दत हो जाने से वह भी जाती रहती है।

एक हदीस में है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

हदीसः रात की नमाज़ (यानी तहज्जुद) पढ़ा करो, क्योंकि तुमसे पहले गुज़री उम्मतों के नेक हज़रात (भी) इसको पढ़ते आये हैं। और यह नमाज़ तुम्हारे लिये अल्लाह तआ़ला से नज़दीक होने का सबब है, और गुनाहों का कफ़्फ़ारा करने वाली है और गुनाहों से रोकने वाली है। (तिर्मिज़ी)

एक शख़्स ने सवाल किया या रसूलल्लाह! कौनसी दुआ़ कबूल होने के एतिबार से सब दुआ़ओं से बढ़कर है? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया पिछली रात के दरमियानी हिस्से की दुआ़ और फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद की दुआ़। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि हर रात को जब तिहाई रात रह जाये तो अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं, क्या कोई है जो मुझसे दुआ़ करे और मैं उसकी दुआ़ क़बूल करूँ? क्या कोई है जो मुझसे माफ़ी तलब करे और मैं उसे माफ़ कर दूँ? कौन है जो ऐसे को क़र्ज़ दे जिसके पास सब कुछ है और वह ज़ुल्म करने वाला नहीं है, (जो उसकी राह में दोगे उसे कर्ज़ शुमार फ़रमायेगा हालाँकि माल उसी का दिया हुआ है, फिर उसका बदला देगा तो ख़ूब देगा कम-से-कम एक के दस तो कहीं गये ही नहीं, इससे ज़्यादा भी अल्लाह जिसको चाहेगा बहुत ज़्यादा बढ़ाकर अज्र अ़ता फ़रमायेगा)। यह हदीस मुस्लिम शरीफ़ में है।

हज़रत अबू मालिक अश्अ़री रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया, बेशक जन्नत में बालाख़ाने हैं जिनके साफ़-सुथरे और चमकदार होने का यह आ़लम है कि बाहर वाला हिस्सा अन्दर से और अन्दर वाला हिस्सा बाहर से नज़र आता है। ये बालाख़ाने अल्लाह तआ़ला ने उन लोगों के लिए तैयार फ़रमाये हैं जो नरमी

से बात करते हैं और (ज़रूरत मन्दों) को खाना खिलाते हैं, और जो रात को ऐसे वक़्त नमाज़ पढ़ते हैं कि लोग सो रहे हों, यानी तहज्जुद की नमाज़ अदा करते हैं। (मिश्कात शरीफ़)

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब कोई मर्द रात को अपनी बीवी को जगाये और दोनों नमाज़े तहज्जुद अदा कर लें तो उन दोनों मियाँ-बीवी का नाम अल्लाह की याद से ख़ास ताल्लुक रखने वालों में लिख दिया जायेगा। (मिश्कात शरीफ़)

एक बार रात को नबी करीम सल्ल० नींद से जागे और फ़रमाया: "कौन है जो हुजरों में सोने वालियों को जगा दे कि नमाज़े तहज्जुद पढ़ लें" यह बात कहकर अपनी बीवियों को जगाना मकसद था जो हुजरों में सो रही थीं। फिर फ़रमाया: "बहुत-सी औरतें ऐसी हैं कि दुनिया में कपड़े पहने हुए हैं लेकिन वे आख़िरत में नंगी होंगी। (बुख़ारी)

औरतों को लिबास और ज़ेवर से बहुत मुहब्बत होती है। तरह-तरह का लिबास पहनने का एहतिमाम करती हैं, मगर आख़िरत की फ़िक्र नहीं करतीं। हदीस शरीफ़ में आया है कि जब कियामत को खड़े होंगे तो सब मर्द व औरत नंगे होंगे, बाद में जन्नतियों को उम्दा रेशमी कपड़े मिलेंगे जिनकी उम्दा होने का हाल हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यूँ बयान फ़रमाया कि जन्नती औरत के सर का दुपट्टा सारी दुनिया और दुनिया में जो कुछ है उस सबसे बेहतर है। (बुख़ारी शरीफ़) और दोज़ख़ियों के कपड़े आग के होंगे जैसा कि सूरः हज में फ़रमाया है:

तर्जुमा: सो जो लोग काफ़िर थे उनके (पहनने के) लिए (कियामत में) आग के कपड़े तैयार किये जाएँगे। (सूरः हज आयत 19)

अल्लाह पनाह दे यह कपड़े कैसे होंगे? ग़ौर करें अल्लाह से पनाह माँगें।

अब देख लो दुनिया के लिबास से ज़्यादा आख़िरत के उम्दा लिबास की फ़िक्र ज़रूरी है या नहीं? अगर ज़रूरी है तो आख़िरत के आमाल अन्जाम देने चाहियें। नफ़िल नमाज़ें तो दूर की बात है औरतें फ़र्ज़ पढ़ने से भी जान चुराती हैं। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने आख़िरत की तरफ़ तवज्जोह दिलाई और वहाँ लिबास नसीब होने की फ़िक्र में लगाया।

तहज्जुद की नमाज़ बहुत बड़ी चीज़ है। मियाँ-बीवी ख़ुशी से पढ़ा करें

और आपस में तय कर लें कि जो पहले उठे दूसरे को उठा दिया करे, और यह भी तय कर लें कि जो उठाने से न उठेगा उसके मुँह पर पानी छिड़का जायेगा, ताकि जगाने और पानी छिड़कने के वक़्त नागवारी न हो। अगर शौहर की मर्ज़ी न हो तो उसे न जगाओ, ख़ुद ही तहज्जुद पढ़ लो, मगर सारी रात न पढ़ो, शौहर का भी हक़ पहचानो और अपनी तन्दुरुस्ती को भी देखो।

तहज्जुद के वक़्त उठना नसीब हो जाये तो उस वक़्त नफ़्लें भी पढ़ो और दुआ भी करो, जब तक तबीयत हाज़िर रहे तहज्जुद पढ़ो। अगर नींद का ग़ल्बा हो जाये तो सो जाओ मगर फ़ज्र की नमाज़ के लिये उठने की फ़िक्र करके सो जाओ। जैसे घड़ी में अलारम लगा दो। दो रक्अ़त से लेकर जिस क़द्र आसानी हो तहज्जुद के वक़्त पढ़ लो। औरतों में तहज्जुद की नमाज़ पढ़ने के कुछ तरीक़े मशहूर हैं कि इतनी-इतनी बार 'कुल हुवल्लाह शरीफ़' हर रक्अ़त में पढ़े, शरीअ़त में इसकी कोई असल नहीं है। जैसे दो या चार रक्अ़तें नफ़िल की पढ़ा करते हैं तहज्जुद भी उसी तरह पढ़ी जाती है।

मसलाः अगर तहज्जुद में उठने का ख़ूब पक्का यक़ीन हो तो वित्र की नमाज़ इशा के वक़्त न पढ़ो, तहज्जुद के बाद सबसे आख़िर में वित्र पढ़ो। अगर उस वक़्त उठने का यक़ीन न हो तो इशा के वक़्त ही वित्र पढ़ लो।

तहिय्यतुल-वुज़ू की फ़ज़ीलत

हदीसः (26) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि (एक दिन) फ़ज्र की नमाज़ के वक़्त हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अ़न्हु से फ़रमाया ऐ बिलाल! इस्लाम क़बूल करने के बाद ऐसा कौनसा अ़मल तुमने किया है जिसके बारे में तुम दूसरे आमाल के मुक़ाबले में (अल्लाह की रिज़ा की) ज़्यादा उम्मीद रखते हो? क्योंकि मैंने अपने आगे जन्नत में तुम्हारे जूतों की आहट सुनी। हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अ़र्ज़ किया कि मैंने तो कोई अ़मल इससे बढ़कर ज़्यादा उम्मीद दिलाने वाला नहीं किया कि जब कभी भी किसी वक़्त रात में या दिन में वुज़ू किया तो उस वुज़ू से कुछ-न-कुछ अपने मुक़द्दर की नमाज़ ज़रूर पढ़ ली।

(बुख़ारी शरीफ़)

तशरीहः एक हदीस में यूँ इरशाद है कि जो कोई मुसलमान वुज़ू करे

और अच्छी तरह वुज़ू करे, (सुन्नतों का ख़्याल रखे और पानी ख़ूब ध्यान से सब जगह पहुँचाये) फिर खड़े होकर इस तरह दो रकअ़त नमाज़ पढ़ ले कि ज़ाहिर व बातिन के साथ उन दोनों रकअ़तों की तरफ़ मुतवज्जह रहे तो उसके लिये जन्नत वाजिब होगी। (मुस्लिम शरीफ़)

मालूम हुआ कि वुज़ू के बाद दो रकअ़तें ख़ूब अच्छी तरह ध्यान से पूरे आदाब के साथ दिल लगाकर पढ़ने का बहुत बड़ा सवाब है, अगरचे बाज़ दीन के आ़लिमों ने यह भी लिखा है कि वुज़ू के बाद जो सुन्नत या फ़र्ज़ पढ़ ले उससे भी तहिय्यतुल-वुज़ू का सवाब मिल जायेगा। जैसे तहिय्यतुल-मस्जिद का सवाब इस तरह मिल जाता है, लेकिन दोनों हदीसें जो हमने ऊपर नक़ल की हैं उनके बयान के तरीक़े से यही मालूम होता है कि तहिय्यतुल-वुज़ू की रकअ़तें मुस्तकिल होनी चाहियें। तहिय्यतुल-वुज़ू पढ़े तो यह देख ले कि मक्रूह वक़्त तो नहीं है, ज़वाल के वक़्त नमाज़ पढ़ना दुरुस्त नहीं, और सुबह सादिक़ के बाद सूरज निकलकर बुलन्द हो जाने तक नफ़िल पढ़ना दुरुस्त नहीं है। इसी तरह अ़स्र की नमाज़ के बाद सूरज छुप जाने तक नफ़िल पढ़ना जायज़ नहीं है, इन वक़्तों में तहिय्यतुल-वुज़ू न पढ़े। ख़ूब समझ लो। बाज़ दीन के आ़लिमों ने लिखा है कि वुज़ू का पानी बदन के अंगों से सूखने से पहले तहिय्यतुल-वुज़ू पढ़ ले, इसका ख़्याल रखना भी बेहतर है।

हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ख़्वाब में हज़रत बिलाल के जूतों की आहट अपने आगे जन्नत में सुनी, क्योंकि हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अ़न्हु ख़ादिमे ख़ास के तौर पर जागने की हालत में नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ रहते थे और बाज़ ज़रूरी कामों के अन्जाम देने के लिये आगे-आगे चला करते थे। इसमें हज़रत बिलाल रज़ि० के जन्नती होने की और इस बात की ख़ुशख़बरी है कि वह जिस तरह दुनिया में हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बहुत ज़्यादा क़रीब रहने वाले थे आख़िरत में भी उनको ख़ुसूसी निकटता नसीब होगी।

चूँकि नबियों का ख़्वाब 'वह्य' होता है इसलिये इस अ़ज़ीम ख़ुशख़बरी के ज़ाहिर होने में कोई शक नहीं। सुब्हानल्लाहि वल्हम्दु लिल्लाहि व ला इला-ह इल्लल्लाहु वल्लाहु अकबर। (फ़त्हुलबारी)

कुछ रिवायतों में है कि जब हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने बताया कि सबसे ज़्यादा उम्मीद वाला अ़मल यह है कि जब मैं वुज़ू करता हूँ तो

अपने मुक़द्दर की नमाज़ पढ़ता हूँ तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि इसी अ़मल की वजह से तुमको यह फ़ज़ीलत हासिल हुई। चूँकि यह फ़ज़ीलत मख़्सूस अ़मल यानी हर वुज़ू के बाद नमाज़ का एहतिमाम करने से मिली इसलिये सब हज़रात को यह अ़मल इख़्तियार करना चाहिये।

सलातुत्-तस्बीह

नफ़िल नमाज़ों में इस नमाज़ की बहुत ज़्यादा फ़ज़ीलत आई है।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने चचा अ़ब्बास बिन अ़ब्दुल-मुत्तलिब रज़ियल्लाहु अ़न्हु से फ़रमाया कि ऐ अ़ब्बास! ऐ चचा जान! क्या मैं आपको एक तोहफ़ा दूँ? क्या मैं आपको बख़्शिश करू? क्या मैं आपको एक बहुत मुफ़ीद चीज़ से बाख़बर करूँ? क्या मैं तुमको ऐसी चीज़ दूँ कि जब तुम उसको कर लोगे तो अल्लाह तआ़ला तुम्हारे सब गुनाह पहले और पिछले, पुराने और नये, ग़लती से किये हुए और जान-बूझकर किये हुए, छोटे और बड़े, छुपकर किये हुए और ज़ाहिरन किये हुए सब माफ़ फ़रमा देगा। वह काम यह है कि चार रकअ़त नमाज़ (नफ़िल) सलातुत-तस्बीह इस तरह से पढ़ो कि जब अल्हम्दु शरीफ़ और सूरः पढ़ चुको तो खड़े ही खड़े रुकूअ़ से पहले (तीसरा कलिमा) पन्द्रह बार कहो, फिर रुकूअ़ करो तो रुकूअ़ में इन कलिमात को दस बार कहो, फिर रुकूअ़ से खड़े होकर (क़ौमा में) दस बार कहो, फिर सज्दे में जाकर दस बार कहो, फिर सज्दे से उठकर (दोनों सज्दों के दरमियान बैठकर) दस बार कहो, फिर दूसरा सज्दा करो और उस (दूसरे सज्दे) में दस बार कहो, फिर सज्दे से उठकर बैठ जाओ और दस बार कहो, इस तरह एक रकअ़त में पछत्तर (75) बार हुए। और चारों रकअ़तों में मिलाकर तीन सौ (300) बार हुए।

यह तरकीब बताकर रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अगर हो सके तो रोज़ाना एक बार इस नमाज़ को पढ़ लिया करो, यह न कर सको तो जुमा में (यानी हफ़्ते में) एक बार पढ़ लिया करो, यह भी न कर सको तो महीने में एक बार पढ़ लिया करो, यह भी न कर सको तो हर साल में एक बार पढ़ लिया करो, यह भी न कर सको तो उम्रभर में एक बार

(तो) पढ़ ही लो। (इब्ने माजा, अबू दाऊद)

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु यह नमाज़ हर जुमा को पढ़ा करते थे और अबुल-जौज़ा रहमतुल्लाहि अ़लैहि ताबिई रोज़ाना ज़ोहर की अज़ान होते ही मस्जिद में आ जाते थे और जमाअ़त खड़ी होने तक पढ़ लिया करते थे। हज़रत अ़ब्दुल अ़ज़ीज़ अबी रदाद रह. फ़रमाते थे कि जिसे जन्नत दरकार हो उसे चाहिये कि सलातुत-तस्बीह को मज़बूत पकड़े। अबू उस्मान हेरी रह. फ़रमाया करते थे कि मुसीबतों और ग़मों के दूर करने के लिये सलातुत-तस्बीह जैसी बेहतर चीज़ मैंने नहीं देखी।

सलातुत-तस्बीह की नीयत

नीयत करती हूँ चार रकअ़त नमाज़ नफ़्लि सलातुत-तस्बीह की, वास्ते अल्लाह तआ़ला के, रुख़ मेरा क़िब्ले की तरफ़, अल्लाहु अकबर।

सलातुत-तस्बीह से मुताल्लिक़ मसाइल

मसलाः इस नमाज़ के लिये कोई सूरः मुक़र्रर नहीं है, जो भी सूरः चाहें पढ़ लें। बाज़ रिवायतों में हैं कि बीस आयतों के क़रीब क़ुरआन पढ़ें।

मसलाः इन तस्बीहात को ज़बान से हरगिज़ न गिने, क्योंकि ज़बान से गिनने से नमाज़ टूट जायेगी, उंगलियाँ जिस जगह रखी हों उनको वहीं रखे-रखे उसी जगह दबाती रहे।

मसलाः अगर किसी जगह पढ़ना भूल जाये तो दूसरे रुक्न में उसको पूरा कर ले, अलबत्ता भूली हुई तस्बीहात की क़ज़ा रुकूअ़ से खड़े होकर और दोनों सज्दों के दरमियान न करे, इसी तरह पहली और तीसरी रकअ़त के बाद जब बैठे तो उसमें भी भूली हुई तस्बीहात की क़ज़ा न करे, (बल्कि उनकी तस्बीहात दस बार पढ़ ले) और उनके बाद जो रुक्न हो उसमें भूली हुई तस्बीहात अदा करे।

फ़ायदा (1) यह नमाज़ हर वक़्त हो सकती है सिवाय उन वक़्तों के जिनमें नफ़िल पढ़ना मक्रूह है।

फ़ायदा (2) बेहतर यह है कि इस नमाज़ को ज़वाल के बाद ज़ोहर से पहले पढ़ लिया करे जैसा कि एक हदीस में ज़वाल के अल्फ़ाज़ आये हैं, और ज़वाल के बाद मौक़ा न मिले तो जिस वक़्त चाहे पढ़ ले।

फ़ायदा (3) बाज़ रिवायतों में इन चार कलिमों यानी 'सुब्हानल्लाहि'

'वल्-हम्दु लिल्लाहि' 'व ला इला-ह इल्लल्लाहु' 'वल्लाहु अकबर' के साथ 'व ला हौ-ल व ला कुव्व-त इल्ला बिल्लाहिल् अ़लिय्यिल्-अ़ज़ीम' भी आया है, लिहाज़ा इसको भी मिला लिया जाये तो बेहतर है।

फ़ायदा (4) दूसरी और चौथी रक्अ़त में अत्तहिय्यात से पहले इन कलिमात को दस बार पढ़े और रुकूअ़ व सज्दे में पहली तस्बीह (यानी सुब्हा-न रब्बियल्-अ़ज़ीम और सुब्हा-न रब्बियल्-अअ़्ला) पढ़े, और बाद में इन कलिमात को पढ़े।

फ़ायदा (5) दूसरा तरीक़ा इस नमाज़ को पढ़ने का यह है कि पहली रक्अ़त में 'सुब्हानकल्लाहुम्-म' आख़िर तक पढ़ने के बाद अल्हम्दु शरीफ़ से पहले इन कलिमात को पन्द्रह बार पढ़े और फिर अल्हम्दु और सूरः के बाद दस बार पढ़े, और बाक़ी सब तरीक़ा उसी तरह है जो पहले गुज़रा।

अब इस सूरत में दूसरे सज्दे के बाद बैठकर पहली और तीसरी रक्अ़त के ख़त्म पर इन कलिमात को पढ़ने की ज़रूरत न रहेगी, और न दूसरी और चौथी रक्अ़त में अत्तहिय्यात से पहले इनको पढ़ा जायेगा। (क्योंकि हर रक्अ़त में दूसरे सज्दे तक पहुँचकर ही 75 की तायदाद पूरी हो जायेगी)। उलमा ने लिखा है कि बेहतर यह है कि दोनों तरीक़ों पर अ़मल कर लिया जाये। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मुबारक रहमतुल्लाहि अ़लैहि जो इमाम अबू हनीफ़ा रह. के शागिर्द और इमाम बुख़ारी रह. के उस्तादों के उस्ताद हैं, इस नमाज़ को इसी तरीक़े से पढ़ा करते थे जो अभी बाद में हमने ज़िक्र किया है।

मसलाः अगर किसी वजह से सज्दा-ए-सह्व पेश आ जाये तो उसमें ये तस्बीहात न पढ़ें, अलबत्ता किसी जगह भूले से तस्बीहात पढ़ना भूल आई हो जिससे 75 की तायदाद में कमी हो रही हो और अब तक कज़ा न की हो तो उसको सज्दा-ए-सह्व में पढ़ ले।

नफ़्ली इबादतों में दरमियानी राह इख़्तियार करने का हुक्म

हदीसः (27) हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि एक बार (रात को) हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मस्जिद में दाख़िल हुए (देखा कि) एक रस्सी दो सतूनों के दरमियान बंधी हुई है। फ़रमाया यह कैसी रस्सी है? जवाब में अ़र्ज़ किया गया यह 'हम्ना बिन्ते जहश' हैं (जो देर तक रात को नमाज़ पढ़ती रहती हैं, उन्होंने यह बाँधी है)। नमाज़ पढ़ते-पढ़ते

जब थक जाती हैं तो (सुस्ती उतारने के लिये) इससे लटक जाती हैं। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया जब तक ताकृत हो नमाज़ पढ़ती रहे, जब थक जाये तो बैठ जाये। फिर (आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक और रस्सी देखी) फ़रमाया यह क्या है? मौजूद लोगों ने अर्ज़ किया कि 'ज़ैनब' (ने बाँधी है, वह रात को) नमाज़ पढ़ती रहती हैं, जब रात को सुस्ती आ जाती है तो इसको पकड़ लेती हैं। आप सल्ल० ने फ़रमाया इसको खोल दो, फिर (मुस्तकिल तरीके पर कायदा बताते हुए) इरशाद फ़रमाया कि जब तक तबीयत में ताज़गी और चुस्ती रहे (नफ़िल) नमाज़ पढ़ते रहो, फिर जब सुस्ती आ जाये तो बैठ जाना चाहिये। (अबू दाऊद शरीफ़)

हदीसः (28) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने (अपने भानजे) हज़रत उरवा बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अन्हु को बताया कि (एक बार) हौला बिन्ते तवीत (सहाबी ख़ातून) मेरे पास से गुज़रीं, उस वक्त हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मेरे पास तशरीफ़ रखते थे। मैंने अर्ज़ किया कि यह हौला बिन्ते तवीत हैं, लोगों का बयान है कि यह रात को नहीं सोती हैं (और नमाज़ ही पढ़ती रहती हैं)। आपने (नागवारी का इज़हार करते हुए) फ़रमाया- रात भर नहीं सोती, (फिर फ़रमाया) कि इस कद्र अमल करो जितनी ताकृत हो, पस अल्लाह की कसम! अल्लाह तआला बद्-दिली वाला मामला नहीं फ़रमाते (अपने फ़ज़्ल व सवाब को नहीं रोकते) जब तक तुम बद्-दिल न हो जाओ। (मुस्लिम शरीफ़)

तशरीहः फ़र्ज़ इबादतों की पाबन्दी तो बहरहाल लाज़िम है और वाजिब व मुअक्कदा सुन्नतों की पाबन्दी भी ज़रूरी है। अब रहीं नफ़्ली इबादतें तो उनकी अदायगी भी बहुत फ़ायदेमन्द है, उनसे फ़राइज़ की कमी भी पूरी की जायेगी और उनका सवाब भी बहुत है जैसा कि हदीस की रिवायतों में ज़िक्र किया गया है, लेकिन नवाफ़िल के बारे में यह बात समझ लेनी चाहिये कि इनकी कसरत (यानी अधिकता और ज़्यादती) उसी हद तक ठीक है कि उनकी वजह से फ़राइज़ में फ़र्क न आये और बन्दों की हक़-तल्फ़ी न होती हो, और नींद के ग़ल्बे की वजह से बद्-दिली की हालत में अदायगी न हो।

ऊपर जो दो हदीसें ज़िक्र हुई हैं उनमें जहाँ सहाबी औरतों के तहज्जुद पढ़ने के ज़ौक़ का पता चला वहाँ हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की यह नसीहत भी सामने आ गयी कि तहज्जुद पढ़ने के लिये नफ़्स के साथ

सख़्ती करना दुरुस्त नहीं है। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब तक तबीयत में चुस्ती,-ताज़गी और ख़ुशी रहे उस वक़्त तक तहज्जुद में लगे रहो, नफ़्स के साथ ज़बरदस्ती करना कि रस्सी के साथ लटक जायें या आँखों में कोई चीज़ डाल लें जिससे नींद भाग जाये यह मना है। अगर तबीयत हाज़िर न हो, दिल में ताज़गी और ख़ुशी न हो, नफ़्स में सुस्ती हो, आँखों में नींद भरी हो, जिमाइयाँ आ रही हों, कहते कुछ हों और ज़बान से निकलता कुछ हो, इस हालत में तहज्जुद पढ़ने के बजाय आराम कर लेना और सो जाना बेहतर है।

हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से रिवायत है कि जब तुम में से किसी को नमाज़ पढ़ते हुए नींद आने लगे तो सो जाये यहाँ तक कि नींद चली जाये, क्योंकि नींद की हालत में नमाज़ पढ़ने से पता न चलेगा (कि क्या कह रहा है), हो सकता है कि वह (अपने इरादे से तो) मग़फ़िरत की दुआ करना चाहता हो और (नींद के ग़ल्बे की वजह से इस्तिग़फ़ार के बजाय) अपने हक़ में बुरा कह रहा हो। (मिश्कात शरीफ़)

और हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब तुम में से कोई शख़्स रात को (नमाज़ में) खड़ा हो और कुरआन पढ़ने से ज़बान लड़खड़ा रही हो (यानी नींद की वजह से अल्फ़ाज़ अदा न हो रहे हों) और पता न चले कि क्या कह रहा है तो लेट जाये (और आराम करे)। (अबू दाऊद शरीफ़)

हज़रत हौला बिन्ते तवीत रज़ियल्लाहु अ़न्हा के बारे में जब आँ- हज़रत सरवरे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने अ़र्ज़ किया कि यह पूरी-पूरी रात नमाज़ पढ़ती हैं और सोती नही हैं, तो आपने नागवारी का इज़हार फ़रमाया और इरशाद फ़रमाया कि ताक़त व हिम्मत के मुताबिक़ अ़मल करो।

एक बार तीन आदमी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पाक बीवियों के पास आये ताकि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की (घर के अन्दर वाली) इबादत के बारे में मालूम करें। जब उनको आपकी इबादत के बारे में बता दिया गया (जिसमें रात के सोने और इबादत करने का ज़िक्र था) तो उन्होंने उसको कम समझा और आपस में कहने लगे कि हम कहाँ और अल्लाह के रसूल कहाँ? (थोड़ी इबादत में हमारा काम कैसे चलेगा, रहे आप

सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तो आपकी तो बड़ी शान है) अल्लाह ने आपके अगले-पिछले ख़ता-क़ुसूर सब माफ़ फ़रमा दिये हैं। उसके बाद उनमें से एक ने कहा कि मैं पूरी-पूरी रात नमाज़ पढ़ूँगा (बिलकुल रात को न सोऊँगा)। दूसरे ने कहा कि मैं हमेशा रोज़ाना (नफ़्ली रोज़ा रखूँगा, बेरोज़ा न रहूँगा और रमज़ान के रोज़े रखना तो बहरहाल फ़र्ज़ हैं)। तीसरे ने कहा कि मैं औरतों से अलग रहूँगा, कभी निकाह न करूँगा। ये बातें हो रही थीं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ ले आये और फ़रमाया कि तुम लोगों ने ऐसा-ऐसा कहा है? ख़बरदार! ख़ुदा की क़सम! मैं तुम में सबसे ज़्यादा डरने वाला और अल्लाह (की रिज़ा) के लिये गुनाहों से बचने वाला हूँ। मैं रोज़े भी रखता हूँ और बेरोज़ा भी रहता हूँ। (रात को नफ़िल) नमाज़ भी पढ़ता हूँ सोता भी हूँ और औरतों से शादी भी करता हूँ। पस जो शख़्स मेरे तरीक़े से हटे वह मुझसे (ताल्लुक़ रखने वाला) नहीं है। (मिश्कात शरीफ़)

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़मर बिन आ़स रज़ियल्लाहु अ़न्हु पूरी-पूरी रात नमाज़ पढ़ते थे और रोज़ाना दिन को रोज़ा रखते थे। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इसका पता चला तो (आपने) फ़रमाया ऐ अ़ब्दुल्लाह! मुझे यह ख़बर मिली है कि तुम रोज़ाना दिन को रोज़ा रखते हो और रातभर नमाज़ में खड़े रहते हो, क्या यह ख़बर दुरुस्त है? वह फ़रमाते हैं कि मैंने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! यह ख़बर सही है। आपने फ़रमाया ऐसा न करो, (बल्कि) रोज़ा भी रखो और बेरोज़ा भी रहो, और रात को नमाज़ में खड़े भी हो और सो भी जाओ, क्योंकि तुम्हारे जिस्म का भी तुमपर हक़ है और तुम्हारी आँखों का भी तुमपर हक़ है, और तुम्हारी बीवी का भी तुमपर हक़ है। और तुम्हारे पास आने-जाने वालों (यानी मेहमानों) का भी तुमपर हक़ है। (अगर सारी उम्र रोज़ा रखने का सवाब लेना चाहते हो) तो तुमको यह काफ़ी है कि हर महीने में तीन रोज़े रख लिया करो, क्योंकि तुमको हर नेकी का बदला उसका दस गुना मिलेगा (और इस तरह तीन रोज़ों के तीस रोज़े हो जाया करेंगे)। पस यह सवाब के एतिबार से हमेशा रोज़ा रखना हुआ।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़मर रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि मैंने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! मैं अपने अन्दर इससे ज़्यादा की ताक़त पाता हूँ। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह के नबी दाऊद अ़लैहिस्सलाम के रोज़ों की तरह रोज़े रखो, और उसपर इज़ाफ़ा मत करो।

मैंने अर्ज़ किया अल्लाह के नबी दाऊद अलैहिस्सलाम के रोज़ों का क्या तरीक़ा था? फ़रमाया आधी उम्र के रोज़े रखना। (यानी एक दिन रोज़ा रखना और एक दिन बेरोज़ा रहना)।

हज़रत अब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अन्हु ने हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की इस रुख़सत (छूट) पर अमल न किया जो आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनको शुरू में बताई थी बल्कि यह कहते रहे कि मुझ में ज़्यादा कुव्वत है, फिर जब बुढ़ापे में पहुँचे तो फ़रमाया करते थे काश! मैं हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की रुख़सत पर अमल कर लेता। (बुख़ारी शरीफ़)

चूँकि आदमी आदमी ही है, यानी उसके साथ इनसानी ज़रूरतें और ख़्वास लगे हुए हैं इसलिये उसे अपने जिस्म और जिस्मानी अंगों की रियायत रखना भी ज़रूरी है। अगर कोई शख़्स नफ़्स के साथ सख़्ती करेगा तो नफ़्स जवाब दे देगा, और जो नेक आमाल शुरू कर रखे हैं वे बिलकुल ख़त्म हो जायेंगे। दो-चार साल इबादत की, फिर थक कर बैठ रहेगा, यह न दीनदारी है न समझदारी।

हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया "अल्लाह को सबसे ज़्यादा महबूब अमल वह है जो सबसे ज़्यादा पाबन्दी के साथ हो, अगरचे थोड़ा ही हो। (मुस्लिम)

अल्लामा नववी रहमतुल्लाहि अलैहि 'मुस्लिम शरीफ़ की शरह में लिखते हैं कि थोड़ा अमल जो हमेशा हो ज़्यादा अमल से जो बाद में छोड़ दिया जाये इसलिये बेहतर है कि थोड़ा-सा अमल जो हमेशा होता रहे उससे नेकी, ज़िक्र, मुराक़बा, नीयत, इख़्लास और अल्लाह की तरफ़ तवज्जोह हमेशा होती रहती है, और थोड़ा अमल हमेशगी वाला सवाब के एतिबार से बढ़ते-बढ़ते कई गुना होकर उस ज़्यादा अमल से बढ़ जाता है जो कुछ दिन होकर ख़त्म हो जाये।

नफ़्स को ज़्यादा रगड़ा जाये तो सेहत भी ख़राब हो जाती है और रोज़ाना रातभर जागे तो आँखों पर बहुत ज़्यादा असर पड़ता है।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अमर रज़ियल्लाहु अन्हु का वाक़िआ जो ऊपर ज़िक्र हुआ उसकी बाज़ रिवायतों में ये अल्फ़ाज़ भी आये हैं:

"जब तुम पूरी-पूरी रात नमाज़ में खड़े रहोगे और रोज़ाना रोज़ा रखोगे तो तुम्हारी आँखें अन्दर को धंस जायेंगी और नफ़्स थक कर रह जायेगा।"

(बुख़ारी शरीफ़)

और जब बुढ़ापे का दौर आयेगा तो इबादतों में मेहनत करने से वह शख़्स आजिज़ रह जायेगा जिसने जवानी में मयाना-रवी से काम न लिया और नफ़्स को बहुत ज़्यादा मेहनत में मशग़ूल रखा। इसी लिये तो अ़ब्दुल्लाह बिन अ़मर रज़ियल्लाहु अ़न्हु बुढ़ापे में अफ़सोस किया करते थे कि काश! मैं हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की इरशाद फ़रमाई हुई रुख़्सत (छूट और रियायत) को मान लेता। अगर मयाना-रवी (यानी दरमियानी राह) से चलता रहे तो जवानी और बुढ़ापे में बराबर काम चलता रहेगा और थोड़ा-थोड़ा बहुत हो जायेगा।

इबादत में बहुत ज़्यादा मेहनत करके बुढ़ापे में पड़ जाने और इबादत के छूट जाने के नुकसान के अ़लावा जिस्म और नफ़्स और आँख के हुक़ूक़ और घर वालों व बाल-बच्चों और मेहमानों के हुक़ूक़ की अदायगी का भी कोई मौक़ा ऐसा ग़ुलू करने (यानी हद से आगे बढ़ने) वाले आ़बिद को नहीं मिलता, इसी लिये हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़मर रज़ि० को मयाना-रवी (दरमियानी राह) का हुक्म फ़रमाते हुए इरशाद फ़रमाया कि तुम्हारे नफ़्स और बीवी और मेहमानों का भी तुमपर हक़ है।

बहुत-से मर्द और औरत अपनी बुज़ुर्गी और इबादत के घमण्ड में घर वालों और मेहमानों का हक़ नहीं पहचानते। मेहमान का हक़ इतना ही नहीं है कि बस उसको रोटी खिला दी जाये और बिस्तर देकर सुला दिया जाये, बल्कि उसके हुक़ूक़ में यह भी है कि उसके साथ बैठे-उठे, बात-चीत करे। अगर मेहमान को रोटी खिला दी और ख़ुद रोज़ा रख लिया और रात को उसे बिस्तर देकर ख़ुद लम्बी नमाज़ में लग गये तो उस बेचारे का क्या दिल ख़ुश होगा? क्या याद करेगा कि हम किसके घर गये थे। मेहमान दो बातें करने के लिये तरसता रहा और घर वाले बुज़ुर्ग साहिब रातभर नमाज़ पढ़ते रहे, वह साथ खाना खाने का इच्छुक रहा, हज़रत साहिब ने रोज़ा रख लिया, इस तरह से बेदिली के साथ मेहमान एक-दो दिन गुज़ार कर चला जायेगा। यह कोई बुज़ुर्गी का तरीक़ा नहीं है। मेहमान के साथ वक़्त गुज़ारना, उसके साथ हंसना-बोलना, पास बैठना, बात करना और उसके साथ खाना खाना, ख़ासकर जबकि क़रीबी रिश्तेदार हो, यह सब दीनदारी और बुज़ुर्गी में शामिल है। अलबत्ता औरतें नामेहरम मेहमान से न घुलें-मिलें, न बेपर्दा होकर सामने आयें न तन्हाई में उनके पास जायें।

और जब बुढ़ापे का दौर आयेगा तो इबादतों में मेहनत करने से वह शख़्स आजिज़ रह जायेगा जिसने जवानी में मयाना-रवी से काम न लिया और नफ़्स को बहुत ज़्यादा मेहनत में मशग़ूल रखा। इसी लिये तो अ़ब्दुल्लाह बिन अ़मर रज़ियल्लाहु अ़न्हु बुढ़ापे में अफ़सोस किया करते थे कि काश! मैं हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की इरशाद फ़रमाई हुई रुख़्सत (छूट और रियायत) को मान लेता। अगर मयाना-रवी (यानी दरमियानी राह) से चलता रहे तो जवानी और बुढ़ापे में बराबर काम चलता रहेगा और थोड़ा-थोड़ा बहुत हो जायेगा।

इबादत में बहुत ज़्यादा मेहनत करके बुढ़ापे में पड़ जाने और इबादत के छूट जाने के नुक़सान के अ़लावा जिस्म और नफ़्स और आँख के हुक़ूक़ और घर वालों व बाल-बच्चों और मेहमानों के हुक़ूक़ की अदायगी का भी कोई मौक़ा ऐसा ग़ुलू करने (यानी हद से आगे बढ़ने) वाले आ़बिद को नहीं मिलता, इसी लिये हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़मर रज़ि० को मयाना-रवी (दरमियानी राह) का हुक्म फ़रमाते हुए इरशाद फ़रमाया कि तुम्हारे नफ़्स और बीवी और मेहमानों का भी तुमपर हक़ है।

बहुत-से मर्द और औ़रत अपनी बुज़ुर्गी और इबादत के घमण्ड में घर वालों और मेहमानों का हक़ नहीं पहचानते। मेहमान का हक़ इतना ही नहीं है कि बस उसको रोटी खिला दी जाये और बिस्तर देकर सुला दिया जाये, बल्कि उसके हुक़ूक़ में यह भी है कि उसके साथ बैठे-उठे, बात-चीत करे। अगर मेहमान को रोटी खिला दी और ख़ुद रोज़ा रख लिया और रात को उसे बिस्तर देकर ख़ुद लम्बी नमाज़ में लग गये तो उस बेचारे का क्या दिल ख़ुश होगा? क्या याद करेगा कि हम किसके घर गये थे। मेहमान दो बातें करने के लिये तरसता रहा और घर वाले बुज़ुर्ग साहिब रातभर नमाज़ पढ़ते रहे, वह साथ खाना खाने का इच्छुक रहा, हज़रत साहिब ने रोज़ा रख लिया, इस तरह से बेदिली के साथ मेहमान एक-दो दिन गुज़ार कर चला जायेगा। यह कोई बुज़ुर्गी का तरीक़ा नहीं है। मेहमान के साथ वक़्त गुज़ारना, उसके साथ हंसना-बोलना, पास बैठना, बात करना और उसके साथ खाना खाना, ख़ासकर जबकि क़रीबी रिश्तेदार हो, यह सब दीनदारी और बुज़ुर्गी में शामिल है। अलबत्ता औ़रतें नामेहरम मेहमान से न घुलें-मिलें, न बेपर्दा होकर सामने आयें न तन्हाई में उनके पास जायें।

घर वालों और बाल-बच्चों का भी हक़ है। उनसे बोले, बात करे, दिलदारी करे, बीवी-शौहर का, शौहर बीवी का ख़्याल रखे, बहुत-से मर्द इबादत में हद से आगे बढ़ते हैं, पूरी-पूरी रात नमाज़ पढ़ते हैं और बीवी से झूठे-मुँह भी बात नहीं करते, हालाँकि उसकी दिलदारी करना, उससे बात करना, दिल्लगी करना, साथ उठना-बैठना लेटना, यह सब इबादत है, और यह बीवी के हुक़ूक़ में शामिल है। इसी तरह से बहुत-सी औरतें अपनी जहालत के सबब ज़रूरत से ज़्यादा दीनदार बन जाती हैं, पूरी-पूरी रात नमाज़ पढ़ने की आदत डाल लेती हैं, शौहर बेचारा मुँह तकता रहता है कि बीवी साहिबा की नमाज़ ख़त्म हो तो दो बातें कर लूँ। और बहुत-सी औरतें नफ़्ली रोज़े रखती चली जाती हैं, जिससे शौहर के हुक़ूक़ की अदायगी में बहुत फ़र्क़ आ जाता है, हालाँकि शौहर घर पर हो तो उसकी इजाज़त के बग़ैर नफ़्ली रोज़ा रखना मना है।

ख़ुलासा यह है कि नफ़्स, जिस्म, आँख, शौहर, बीवी, मेहमान, बाल-बच्चे सबका ख़्याल रखते हुए नफ़िल इबादत करनी चाहिये। लेकिन साथ ही यह भी जान लेना चाहिए कि इन चीज़ों को बहाना बनाकर नफ़्ली इबादत को बिलकुल छोड़ भी न बैठें, मयाना-रवी के साथ सब काम चलते रहें, जैसा कि हमारे हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उन तीन आदमियों से फ़रमाया जो आपकी पाक बीवियों से आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की घर की अन्दरूनी इबादत मालूम करने आये थे, कि मैं रोज़ा रखता हूँ बेरोज़ा भी रहता हूँ। रात को नमाज़ भी पढ़ता हूँ और सोता भी हूँ। ग़रज़ यह कि दीन में दरमियानी राह पसन्दीदा है।

एतिकाफ़ का एक वाक़िआ और इख़्लास के बारे में तंबीह

हदीसः (29) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा रिवायत फ़रमाती हैं कि (एक बार रमज़ान के महीने में) हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने आख़िरी दशक में एतिकाफ़ करने का इरादा ज़ाहिर फ़रमाया। हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने एतिकाफ़ करने की इजाज़त चाही, आपने उनको इजाज़त दे दी। हज़रत हफ़्सा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से कहा कि मेरे लिये भी इजाज़त ले लो, चुनाँचे उन्होंने उनके लिये भी इजाज़त ले ली। जब हज़रत ज़ैनब बिन्ते जहश रज़ियल्लाहु अ़न्हा को यह बात मालूम

हुई तो उन्होंने एक ख़ेमा लगाने का हुक्म फ़रमाया, चुनाँचे वह लगा दिया गया। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का तरीक़ा था कि जब नमाज़ से फ़ारिग़ होते तो अपनी एतिकाफ़ की जगह तशरीफ़ ले जाते थे। आप तशरीफ़ लाये तो देखा कि ख़ेमे लगे हुए हैं, फ़रमाया यह क्या है? मौजूद हज़रात ने अ़र्ज़ किया कि यह आयशा, हफ़्सा और ज़ैनब रज़ि. के ख़ेमे हैं। फ़रमाया क्या उन्होंने इसके ज़रिये नेकी का इरादा किया है? मैं एतिकाफ़ नहीं करता, चुनाँचे आपने इरादा बदल दिया। फिर जब ईद का महीना आया (उसमें) दस दिन का एतिकाफ़ फ़रमाया। (बुख़ारी शरीफ़)

तशरीह: हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा, हज़रत हफ़्सा और हज़रत ज़ैनब रज़ि. तीनों हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पाक बीवियाँ थीं। ऊपर ज़िक्र हुई हदीस से मालूम हुआ कि ज़माना-ए-नुबुव्वत की औरतों ख़ासकर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पाक बीवियों को इबादत का ख़ास ज़ौक़ था। मुक़ाबले का अगर जज़्बा था तो दीन में आगे बढ़ने का था, दुनिया की चीज़ों की रग़बत न थी, और दुनिया का सामान जमा करने का उनके यहाँ न एहतिमाम था न उसमें मुक़ाबला करने का तसव्वुर था। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एतिकाफ़ करने का इरादा फ़रमाया तो आपकी बीवियाँ भी उसके लिये तैयार हो गईं और अपने-अपने ख़ेमे एतिकाफ़ करने के लिये लगवा दिये। दर हक़ीक़त अगर किसी दीनी काम में नीयत साफ़ हो यानी सिर्फ़ अल्लाह की रिज़ा मक़सद हो और तसव्वुर सिर्फ़ यह हो कि मुझे दूसरों से ज़्यादा सवाब मिल जाये, किसी फ़र्द को गिराना या अपने नफ़्स को फुलाना मक़सद न हो तो मुक़ाबले में आगे बढ़ जाने का जज़्बा न सिर्फ़ दुरुस्त है बल्कि अच्छा और पसन्दीदा है।

और अगर मक़सद यह हो कि फ़लाँ को नीचा दिखा दूँ या अपनी तारीफ़ करा लूँ या नफ़्स को ख़ुश करना मक़सद हो कि नफ़्स अपनी इबादत और दीनी मेहनत करने के सबब फूला न समाता हो और दूसरों का अपमान करने और अपने बड़ाई के तसव्वुर में मुब्तला हो तो शरीअ़त की रू से यह बात बहुत बुरी है और गुनाह है, और इस तरह की नीयत करने से इबादत का सवाब तो क्या मिलता बल्कि उस इबादत के वबाल बनने का ख़तरा हो जाता है। इबादत-गुज़ारों को हर वक़्त अपने जज़्बात (यानी भावनाओं) की जाँच करते रहना चाहिये कि अल्लाह की रिज़ा मक़सद है या और कोई मक़सद है?

कहीं दूसरों को दिखाना या अपने नफ़्स को बढ़ाना और ग़ैरों को हक़ीर व ज़लील बनाना तो मक़सद नहीं? कहीं यह जज़्बा तो नहीं कि अपनी तारीफ़ हो और नफ़्स इबादत की ज़्यादती (अधिकता) पर मग़रूर हो जाये। अगर अपने आमाल का इस तरह जायज़ा न लें तो नफ़्स व शैतान इबादत-गुज़ार का नास करके रख देते हैं।

जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एतिकाफ़ का इरादा फ़रमाया तो हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने एतिकाफ़ के लिये ख़ेमा लगवा दिया, दूसरी बीवियों ने भी यही किया। नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह मन्ज़र देखा तो गोया ऐसा महसूस फ़रमाया कि उनके आपस में मुक़ाबले की जो शान है कहीं उसमें नफ़्स का हिस्सा तो नहीं है? लिहाज़ा आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सवाल के अन्दाज़ में तंबीह फ़रमाई और फ़रमायाः क्या उन्होंने नेकी का इरादा किया है? (या उसके सिवा कुछ और मक़सद है?) फिर उनको और ज़्यादा तंबीह फ़रमाने के लिये ख़ुद एतिकाफ़ करने का इरादा छोड़ दिया और उसके बजाय ईद के महीने में एतिकाफ़ फ़रमाया। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरादा बदल देने से बीवियों के इरादे और जज़्बात ठन्डे पड़ गये और एतिकाफ़ करने में नफ़्स का अगर कुछ दख़ल था तो वह फ़ना हो गया। आपने अ़मली तौर पर भी इस्लाह फ़रमा दी, आप पर लाखों दुरूद व सलाम हों। हम में से हर शख़्स को अपने-अपने आमाल का और नीयतों का जायज़ा लेते रहना चाहिये। अल्लाह तआ़ला हमें इसकी तौफ़ीक़ दे, आमीन।

सफ़र में नमाज़ पढ़ने के अहकाम

हदीसः (30) हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने बयान फ़रमाया कि मैंने रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ 'हज़र' (यानी घर पर रहने की हालत में) और सफ़र में नमाज़ पढ़ी है। 'हज़र' में मैंने आपके साथ ज़ोहर की नमाज़ चार रकअ़त (फ़र्ज़) पढ़ी, और उसके बाद दो रकअ़तें (सुन्नत) पढ़ीं, और (सफ़र में) आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ मैंने अ़स्र की नमाज़ (फ़र्ज़) दो रकअ़तें पढ़ीं, और मग़रिब की नमाज़ 'हज़र' और 'सफ़र' में बराबर तीन ही पढ़ीं। आप उनमें हज़र व सफ़र में कोई कमी नहीं फ़रमाते थे। यह दिन की वित्र नमाज़ है। इसके बाद आप

सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम दो रकअ़त पढ़ते थे। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

तशरीहः इस हदीस में सफ़र की नमाज़ का ज़िक्र है, जिसको 'नमाज़े कस्र' कहते हैं। अल्लाह तआ़ला ने महज़ अपने फ़ज़्ल व करम से सफ़र में फ़र्ज़ नमाज़ की दो रकअ़तों में कमी फ़रमा दी है, यानी चार रकअ़त वाली फ़र्ज़ नमाज़ सफ़र में दो रकअ़त पढ़ी जाती है, इस क़ानून में ज़ोहर, अ़स्र और इशा की फ़र्ज़ नमाज़ आती है। मग़रिब और फ़ज्र की नमाज़ में कोई 'क़स्र' नहीं है। ऊपर की हदीस में ज़ोहर और अ़स्र का ज़िक्र है, इशा के फ़र्ज़ों का ज़िक्र दूसरी रिवायतों में है।

कितने सफ़र के इरादे से रवाना होने से सफ़र के अहकाम जारी होते हैं, इसमें तफ़सील है।

अगर कोई शख़्स एक मन्ज़िल या दो मन्ज़िल का सफ़र करे तो उस सफ़र से शरीअ़त के अहकाम नहीं बदलते, और शरीअ़त के क़ायदे से उसको मुसाफ़िर नहीं कहते। चार रकअ़त वाली नमाज़ को चार रकअ़त ही पढ़े और रमज़ान के रोज़े भी पाबन्दी से रखे। अगर कोई मर्द या औरत तीन मन्ज़िल चलने का इरादा करके चले और अपने शहर की आबादी से बाहर निकल जाये तो शरीअ़त की रू से उसके लिये मुसाफ़रत (सफ़र की हालत) के अहकाम शुरू हो जायेंगे, और जब तक आबादी के अन्दर-अन्दर चले तब तक मुसाफ़रत का कोई हुक्म नहीं लगेगा और रेलवे स्टेशन और बस स्टॉप और हवाई अड्डा अगर आबादी के अन्दर है तो आबादी के हुक्म में है, और अगर आबादी से बाहर है तो वहाँ पहुँचकर सफ़र के अहकाम शुरू हो जायेंगे, अगरचे अपनी बस्ती और शहर से क़रीब हो।

मसलाः तीन मन्ज़िल यह है कि अक्सर पैदल चलने वाले वहाँ तीन दिन में पहुँचा करते हैं। हमारे मुल्क में इसका अन्दाज़ा अड़तालीस (48) मील अंग्रेज़ी है।

मसलाः अगर कोई जगह इतनी दूर है कि ऊँट और आदमी की चाल से तो तीन मन्ज़िल है लेकिन रेल, मोटर बस और हवाई जहाज़ में सफ़र करें तो जल्द पहुँच जायें, तब भी शरीअ़त में वह मुसाफ़िर है।

मसलाः जो कोई शरीअ़त की रू से मुसाफ़िर हो वह ज़ोहर, अ़स्र और इशा की फ़र्ज़ नमाज़ दो रकअ़त पढ़े। और सुन्नतों का यह हुक्म है कि अगर

जल्दी हो तो फ़ज्र की सुन्नतों के सिवा और सुन्नतें छोड़ देना दुरुस्त है, उनके छोड़ देने से कुछ गुनाह न होगा। और अगर जल्दी न हो और न अपने साथियों से बिछुड़ जाने का डर हो तो सुन्नतें न छोड़े। और सुन्नतें सफ़र में पूरी-पूरी पढ़े, उनमें कमी नहीं है। ऐसे मुसाफ़िर को यह भी इजाज़त है कि रमज़ान होते हुए फ़र्ज़ रोज़े न रखे, उस वक़्त क़ज़ा करके बाद में रख ले। इसकी तफ़सील रोज़े के बयान में आयेगी। इन्शा-अल्लाह।

मसलाः फ़ज्र और मग़रिब और वित्र की नमाज़ में कोई कमी नहीं है। जैसे हमेशा पढ़ती है वैसे ही सफ़र में पढ़ती रहे।

मसलाः शरई मुसाफ़िर ज़ोहर, अस्र और इशा की नमाज़ फ़र्ज़ दो रकअ़तों से ज़्यादा न पढ़े, उसको पूरी चार रकअ़तें पढ़ना गुनाह है।

मसलाः अगर भूले से चार रकअ़तें पढ़ लीं तो अगर दूसरी रकअ़त पर बैठकर अत्तहिय्यात पढ़ी है तब तो दो रकअ़तें फ़र्ज़ की हो गईं और दो रकअ़तें नफ़िल की हो जायेंगी। और अगर दो रकअ़त पर न बैठी तो चारों रकअ़तें नफ़िल हो गईं, फ़र्ज़ नमाज़ फिर से पढ़े।

मसलाः अगर रास्ते में कहीं ठहर गयी तो अगर पन्द्रह दिन या उससे ज़्यादा ठहरने की नीयत कर ली है तो अब वह मुसाफ़िर नहीं रही। फिर अगर नीयत बदल गयी और पन्द्रह दिन से पहले चले जाने का इरादा हो गया तब भी मुसाफ़िर न बनेगी, नमाज़ें पूरी-पूरी पढ़े। फिर जब यहाँ से चले तो अगर वह जगह यहाँ से तीन मन्ज़िल हो जहाँ जाना है तो फिर मुसाफ़िर हो जायेगी, और अगर इससे कम हो तो मुसाफ़िर नहीं बनेगी।

मसलाः तीन मन्ज़िल जाने का इरादा करके घर से निकली लेकिन घर ही से यह भी नीयत है कि फ़लाँ गाँव में पन्द्रह दिन ठहरूँगी, और यह गाँव तीन मन्ज़िल से कम है तो शरई मुसाफ़िर न होगी, पूरी नमाज़ें पढ़े। फिर उस गाँव में पहुँचकर नीयत करके पन्द्रह दिन ठहरना हो गया या न हुआ तब भी मुसाफ़िर न बनेगी।

मसलाः नमाज़ पढ़ते-पढ़ते नमाज़ के अन्दर पन्द्रह दिन ठहरने की नीयत हो गयी तो मुसाफ़िर नहीं रही, यह नमाज़ भी पूरी पढ़े।

मसलाः तीन मन्ज़िल के सफ़र की नीयत से अपनी आबादी से निकलने के बाद रास्ते में दो-चार दिन के लिये कहीं ठहरना पड़ा। लेकिन कुछ ऐसी बातें हो जाती हैं कि जाना होता ही नहीं, रोज़ाना यह नीयत होती है कि

कल-परसों चली जाऊँगी, लकिन रवाना होने की नौबत नहीं आती, इसी तरह पन्द्रह-बीस दिन या एक महीना या इससे भी ज़्यादा रहना हो गया, लेकिन पूरे पन्द्रह दिन रहने की कभी नीयत नहीं हुई, तब भी मुसाफ़िर रहेगी, चाहे जितने दिन भी इसी तरह गुज़र जायें।

मसलाः तीन मन्ज़िल जाने का इरादा करके चली, फिर कुछ दूर जाकर किसी वजह से इरादा बदल गया और फिर घर वापस लौट आई तो जब से लौटने का इरादा हुआ है उसी वक़्त से मुसाफ़िर नहीं रही।

मसलाः कोई औरत अपने शौहर के साथ है और उसी के ताबे है, रास्ते में वह जितना ठहरेगा उतना ही वह ठहरेगी, तो ऐसी हालत में शौहर की नीयत का एतिबार है। अगर शौहर का इरादा पन्द्रह दिन ठहरने का हो तो औरत भी मुसाफ़िर नहीं रही, चाहे ख़ुद ठहरने की नीयत करे या न करे। और अगर शौहर का इरादा कम ठहरने का हो तो औरत भी मुसाफ़िर रहेगी।

मसलाः तीन मन्ज़िल चलकर कहीं पहुँची तो अगर वह अपना घर है तो वह मुसाफ़िर नहीं रही, चाहे वह कम रहे या ज़्यादा। और अगर अपना घर नहीं है तो अगर पन्द्रह दिन ठहरने की नीयत हो तब भी मुसाफ़िर नहीं रही, अब नमाज़ें पूरी-पूरी पढ़े। और अगर न अपना घर है न पन्द्रह दिन के ठहरने की नीयत है तो वहाँ पहुँचकर भी मुसाफ़िर रहेगी, चार रक्अ़त फ़र्ज़ की दो रक्अ़त पढ़ेगी।

मसलाः रास्ते में कई जगह ठहरने का इरादा है, दस दिन यहाँ, पाँच दिन वहाँ, लेकिन पूरे पन्द्रह दिन कहीं ठहरने का इरादा नहीं, तब भी मुसाफ़िर रहेगी।

मसलाः किसी ने अपना शहर बिलकुल छोड़ दिया, किसी दूसरी जगह घर बना लिया और वहीं रहने-सहने लगी, अब पहले शहर से और पहले घर से कुछ मतलब नहीं रहा, तो अब वह शहर और परदेस दोनों बराबर हैं। अगर सफ़र करते वक़्त रास्ते में वह पहला शहर पड़े और दो-चार दिन वहीं रहना हो तो मुसाफ़िर रहेगी, शरई मुसाफ़िर की तरह नमाज़ें पढ़े।

मसलाः अगर किसी की नमाज़ें सफ़र में कज़ा हो गईं तो घर पहुँचकर भी ज़ोहर-अ़स्र-इशा की दो ही रक्अ़तें कज़ा पढ़े। और अगर सफ़र से पहले घर में (मिसाल के तौर पर) ज़ोहर की नमाज़ कज़ा हो गयी थी और सफ़र की हालत में उसकी कज़ा पढ़े तो चार रक्अ़त पढ़े। कानून यह है कि जैसी

अदा होनी चाहिये थी वैसी ही उसकी कज़ा होगी।

मसलाः शादी के बाद अगर औरत मुस्तकिल तौर पर अपनी ससुराल में रहने लगी तो अब उसका असली घर ससुराल है। पस अगर तीन मन्ज़िल चलकर मायके गयी और पन्द्रह दिन ठहरने की नीयत नहीं है तो वहाँ मुसाफ़िर रहेगी। मुसाफ़िर होने के कायदे से नमाज़ पढ़े। और अगर वहाँ का रहना हमेशा के लिये दिल में तय नहीं किया तो जो वतन पहले से असली था वह अब भी असली वतन ही रहेगा।

मसलाः दरिया में कश्ती चल रही है और नमाज़ का वक़्त आ गया, तो उसी चलती कश्ती पर किब्ला-रुख़ होकर नमाज़ पढ़ ले। अगर खड़े होकर पढ़ने में सर घूमे तो बैठकर पढ़ ले।

मसलाः रेल पर नमाज़ पढ़ने का भी यही हुक्म है कि किब्ला-रुख़ होकर चलती रेल में नमाज़ पढ़ ले। और अगर खड़े होकर सर घूमे या गिरने का वाकई ख़ौफ़ हो तो बैठकर पढ़े, ख़्वाह-मख़्वाह बिना वजह रेल में बैठकर नमाज़ पढ़ना या बिना किब्ले के पढ़ लेना जैसा कि लोग पढ़ लेते हैं, यह दुरुस्त नहीं, इस तरह से नमाज़ नहीं होती।

मसलाः नमाज़ पढ़ने की हालत में रेल या कश्ती घूम गयी और किब्ला दूसरी तरफ़ हो गया तो नमाज़ ही में घूम जाये और किब्ले की तरफ़ मुँह कर ले।

तंबीहः तीन मन्ज़िल यानी अड़तालीस (48) मील अंग्रेज़ी का सफ़र औरत को शौहर या मेहरम के बग़ैर जायज़ नहीं है, अगरचे हवाई जहाज़ का सफ़र हो। औरतें इसका लिहाज़ नहीं करती हैं। अगर तीन मन्ज़िल से कम का सफ़र हो तो उसमें भी बग़ैर मेहरम या शौहर के सफ़र में न जाये, अफ़ज़ल यही है, क्योंकि कुछ हदीसों में इसकी मुमानअत (मनाही) भी आई है। और तीन मन्ज़िल का सफ़र बिना मेहरम व शौहर के तो जायज़ ही नहीं।

मेहरम कौन है?

मेहरम उसको कहते हैं जिससे ज़िन्दगी भर कभी निकाह दुरुस्त न हो, और जिस मेहरम पर इत्मीनान न हो उसके साथ भी सफ़र करना जायज़ नहीं, ख़ूब समझ लो। इसकी और ज़्यादा तफ़सील इन्शा-अल्लाह हज के बयान में आयेगी।

बीमार की नमाज़ का बयान

हदीसः (31) हज़रत इमरान बिन हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है

कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि खड़े होकर नमाज़ पढ़, अगर इसकी ताक़त न हो तो बैठकर पढ़, अगर इसकी भी ताक़त न हो तो लेटकर पढ़। (मिश्कात शरीफ़, बुख़ारी के हवाले से)

तशरीहः नमाज़ इस्लाम का बहुत बड़ा फ़रीज़ा है और दीन इस्लाम में इसका बहुत बड़ा रुतबा है। सफ़र हो, बीमारी हो, रंज हो, ख़ुशी हो, दुख-तकलीफ़ हो या आराम हो, बहरहाल नमाज़ पढ़ना फ़र्ज़ है।

शरीअ़त में बीमार के लिये आसानियाँ रख दी गयी हैं जिनकी तरफ़ ऊपर की हदीस में मुख़्तसर तौर पर इशारा फ़रमाया है। हम उसको तफ़सील से ज़िक्र करते हैं। जब तक होश व हवास क़ायम हों नमाज़ छोड़ने का कोई मौक़ा नहीं है। जो लोग बीमारी और तकलीफ़ में नमाज़ छोड़ देते हैं बहुत बड़ा गुनाह करते हैं और अपनी आख़िरत ख़राब करते हैं।

मसलाः किसी की ऐसी नकसीर फूटी कि बन्द ही नहीं होती, या कोई ऐसा ज़ख़्म है कि बराबर बहता रहता है, किसी वक़्त बहना बन्द नहीं होता, या पेशाब की बीमारी है कि हर वक़्त क़तरा आता रहता है और इतना वक़्त नहीं मिलता कि वुज़ू से फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ सके, तो ऐसे शख़्स को "माज़ूर" कहते हैं। उसका हुक्म यह है कि हर नमाज़ के वक़्त वुज़ू कर लिया करे, जब तक वह वक़्त रहेगा वुज़ू बाक़ी रहेगा, अलबत्ता जिस बीमारी में मुब्तला है उसके सिवा अगर और कोई बात ऐसी पाई जाये जिससे वुज़ू टूट जाता है तो उससे वुज़ू टूट जायेगा और फिर से करना पड़ेगा। इसकी मिसाल यह है कि किसी की ऐसी नकसीर फूटी कि किसी तरह बन्द नहीं होती, उसने ज़ोहर के वक़्त वुज़ू कर लिया तो जब तक ज़ोहर का वक़्त बाक़ी रहेगा नकसीर के ख़ून की वजह से उसका वुज़ू न टूटेगा, अलबत्ता अगर पाख़ाना-पेशाब किया या सुई चुभ गयी उसकी वजह से ख़ून निकल आया तो वुज़ू जाता रहेगा फिर दोबारा वुज़ू करना लाज़िम है।

मसलाः माज़ूर ने जिस नमाज़ के लिये वुज़ू किया है जब उस नमाज़ का वक़्त चला गया तो अब दूसरी नमाज़ के लिये दूसरा वुज़ू करे, और इसी तरह हर नमाज़ के वक़्त वुज़ू कर लिया करे और वक़्त के अन्दर-अन्दर उस वुज़ू से फ़र्ज़, सुन्नत, वाजिब, क़ज़ा, अदा और नफ़िल नमाज़ जो चाहे पढ़े।

मसलाः 'माज़ूर' होने का हुक्म उस वक़्त लगाते हैं जबकि पूरा एक

नमाज़ का वक़्त इसी तरह गुज़र जाये कि ख़ून वग़ैरह इसी तरह बराबर बहता रहा और इतना भी वक़्त न मिला कि उस वक़्त की फ़र्ज़ नमाज़ वुज़ू से पढ़ ली जाती। अगर बग़ैर उज़्र की हालत के इतना वक़्त मिल गया कि उसमें तहारत (पाकी) से फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ी जा सकती थी तो उसको 'शरई माज़ूर' न कहेंगे। इसको ख़ूब समझ लो क्योंकि इसके बारे में बहुत-से लोग बड़ी ग़लत-फ़हमी में मुब्तला हैं।

मसलाः नमाज़ किसी हालत में न छोड़े, जब तक खड़े होकर पढ़ने की ताक़त रहे खड़े होकर पढ़े, और जब खड़ा न हुआ जाये तो बैठकर पढ़े, बैठे-बैठे रुकूअ़ और सज्दे करे।

मसलाः अगर रुकूअ़-सज्दा करने की भी ताक़त व हिम्मत न हो तो बैठे-बैठे रुकूअ़ और सज्दे को इशारे से अदा करे और सज्दे के लिये रुकूअ़ से ज़्यादा झुके।

मसलाः अगर ऐसी हालत हो कि खड़े होने की ताक़त हो लेकिन खड़े होने से बहुत तकलीफ़ होती है या बीमारी के बढ़ जाने का डर है, तब भी बैठकर नमाज़ पढ़ना दुरुस्त है।

मसलाः अगर खड़े होने की ताक़त हो लेकिन रुकूअ़-सज्दा करने की ताक़त नहीं तो चाहिये कि खड़े होकर नमाज़ पढ़े और रुकूअ़-सज्दा इशारे से अदा करे, और चाहे तो बैठकर नमाज़ पढ़े और रुकूअ़-सज्दे को इशारे से अदा करे, दोनों तरह इख़्तियार है, लेकिन बैठकर पढ़ना बेहतर है।

मसलाः अगर बैठने की भी ताक़त नहीं तो पीछे कोई गाव-तकिया वग़ैरह लगाकर इस तरह लेट जाये कि सर ख़ूब ऊँचा रहे, बल्कि क़रीब- क़रीब बैठने के रहे और पाँव क़िब्ले की तरफ़ फैला ले। और अगर कुछ ताक़त हो तो क़िब्ले की तरफ़ पैर न फैलाये बल्कि घुटने खड़े रखे, फिर सर के इशारे से नमाज़ पढ़े और सज्दे का इशारा रुकूअ़ के इशारे से ज़्यादा नीचा करे। और अगर गाव-तकिये से टेक लगाकर भी इस तरह न लेट सके कि सर और सीना ऊँचा रहे तो क़िब्ले की तरफ़ पैर करके चित लेट जाये, लेकिन सर के नीचे कोई ऊँचा तकिया रख दे ताकि मुँह क़िब्ले की तरफ़ हो जाये और आसमान की तरफ़ न रहे, फिर सर के इशारे से नमाज़ पढ़े। रुकूअ़ का इशारा कम करे और सज्दे का इशारा रुकूअ़ के इशारे से ज़्यादा करे। यानी सर को ज़्यादा आगे बढ़ा दे ताकि रुकूअ़ और सज्दे में फ़र्क़ हो जाये।

मसलाः अगर बेहोश हो जाये तो होश आने के बाद देखे कि बेहोशी एक दिन एक रात से ज़्यादा रही है या इससे कम, पस अगर एक दिन एक रात बेहोशी रही या इससे कम रही तो इतने वक़्तों की कज़ा नमाज़ें पढ़ना वाजिब हैं। और अगर एक दिन एक रात से ज़्यादा बेहोशी हो गयी तो वाजिब नहीं।

एक दिन एक रात का मतलब चौबीस घन्टे गुज़र जाना नहीं है बल्कि पाँच नमाज़ों के वक़्त गुज़र जायें तो यह एक दिन एक रात में शुमार है। और छह फ़र्ज़ नमाज़ों के वक़्त पूरे गुज़र जायें तो यह एक दिन एक रात से ज़्यादा शुमार होगा।

मसलाः जब नमाज़ शुरू की उस वक़्त तन्दुरुस्ती थी, फिर जब थोड़ी नमाज़ पढ़ ली तो नमाज़ ही में कोई ऐसी रग चढ़ गयी कि अब खड़ी नहीं रह सकती तो बाकी नमाज़ बैठकर पढ़े। अगर रुकूअ-सज्दा कर सके तो करे वरना रुकूअ-सज्दा सर के इशारे से करे। और अगर ऐसा हाल हो गया कि बैठने की भी ताक़त व हिम्मत नहीं है तो लेटकर बाकी नमाज़ पूरी करे।

मसलाः अगर बीमारी की वजह से थोड़ी नमाज़ बैठकर पढ़ी जिसमें रुकूअ की जगह रुकूअ और सज्दे की जगह सज्दा किया, फिर नमाज़ ही में तन्दुरुस्त हो गयी तो उसी नमाज़ को खड़े होकर पूरी करे।

मसलाः अगर बीमारी की वजह से रुकूअ-सज्दे की ताक़त न थी, इसलिये सर के इशारे से रुकूअ-सज्दा किया, फिर जब कुछ नमाज़ पढ़ ली तो अच्छी हो गयी कि अब रुकूअ-सज्दा करने की ताक़त आ गयी, तो अब यह नमाज़ जाती रही, इसको फिर से पढ़े।

मसलाः खुदा न करे फ़ालिज गिरा और ऐसी बीमारी हो गयी कि पानी से इस्तिन्जा नहीं कर सकती तो कपड़े या ढेले से पोंछ डाला करे। और अगर कपड़े या ढेले से भी पोंछने की ताक़त न हो तो तब भी नमाज़ कज़ा न करे, उसी तरह नमाज़ पढ़े।

सज्दा-ए-सह्व का बयान

हदीसः (32) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब तुम में से कोई नमाज़ पढ़ने के लिये खड़ा होता है तो शैतान उसके पास आ जाता है और (इधर-उधर की बातें सुझाकर) उसको शक व शुब्हे में डाल देता है, यहाँ तक

कि वह यह नहीं जानता कि उसने कितनी रकअ़त पढ़ी हैं। पस जब तुममें से कोई शख़्स इसको महसूस करे तो दो सज्दे बैठे-ही-बैठे करे। (मिश्कात शरीफ़)

तशरीहः नमाज़ बहुत बड़ी चीज़ है। शैतान को यह गवारा नहीं कि कोई मुसलमान नमाज़ पढ़े, और नफ़्स भी हीले-बहाने करता है, और जब शैतान को ज़लील करके किसी ने नमाज़ शुरू कर ही दी तो शैतान कोशिश करता है कि अच्छी तरह न पढ़ सके, ध्यान बटाता है, इधर-उधर के वस्वसे डालता है, जिससे नमाज़ में भूल-चूक और कमी-बेशी हो जाती है। इसकी तलाफ़ी के लिये आख़िरी क़अ़दे में 'अ़ब्दुहू व रसूलुहू' तक अत्तहिय्यात पढ़कर दो सज्दे किये जाते हैं, इसको सज्दा-ए-सह्व कहते हैं यानी 'भूल का सज्दा'। 'सह्व' के मायने भूल के हैं, इसी मज़मून को ऊपर बयान हुई हदीस में ज़िक्र फ़रमाया है।

किसी वाजिब के छूट जाने से या वाजिब या फ़र्ज़ में ताख़ीर (यानी देर) हो जाने से या किसी फ़र्ज़ को दोबारा अदा करने से (जैसे एक रकअ़त में दो रुकूअ़ अदा कर दिये या तीन सज्दे कर दिये) इन सब सूरतों में सज्दा-ए-सह्व वाजिब होता है, शर्त यह है कि भूले से ऐसा हुआ हो, और अगर जान-बूझकर ऐसा किया हो तो सज्दा-ए-सह्व से काम न चलेगा बल्कि नमाज़ दोहरानी पड़ेगी।

मसलाः फ़र्ज़ छूट जाने की सज्दा-ए-सह्व से तलाफ़ी नहीं होती। उस सूरत में नमाज़ को दोबारा पढ़ना फ़र्ज़ है, अगरचे भूलकर छूटा हो।

मसलाः अगर किसी नमाज़ में भूल की कई बातें ऐसी पेश आ गईं जिनसे सज्दा-ए-सह्व वाजिब होता है, तो सबकी तलाफ़ी के लिये सिर्फ़ एक ही बार सह्व (भूल) के दो सज्दे कर लेना काफ़ी है। सह्व के बहुत-से सज्दे न किये जायेंगे।

मसलाः जिन चीज़ों से फ़र्ज़ नमाज़ों में सज्दा-ए-सह्व वाजिब होता है उनसे नवाफ़िल, सुन्नतों और वित्रों में भी वाजिब होता है, (अलबत्ता नफ़्लों और ग़ैर-मुअक्कदा सुन्नतों में बाज़ी सूरतें इस क़ायदे से अलग हैं जिनका ज़िक्र आगे आयेगा। इन्शा-अल्लाह।

मसलाः नमाज़ में अल्हम्दु...... पढ़ना भूल गयी, सिर्फ़ सूरः पढ़ी, या पहले सूरः पढ़ी बाद में अल्हम्दु पढ़ी और बाद में किसी रकअ़त में याद आया

तो सज्दा-ए-सह्व करना वाजिब है।

मसला: फ़र्ज़ की पहली दो रक्अ़तों में सूरः मिलाना भूल गयी तो पिछली दोनों रक्अ़तों में सूरः मिला ले और सज्दा-ए-सह्व करे। और अगर पहली दो रक्अ़तों में से एक रक्अ़त में सूरः नहीं मिलाई तो पिछली एक रक्अ़त में सूरः मिलाये और सज्दा-ए-सह्व करे। और अगर पिछली रक्अ़तों में भी सूरः मिलाना याद न रहा (न पहली रक्अ़तों में सूरः मिलाई न पिछली रक्अ़तों में) और आख़िरी रक्अ़त में रुकूअ़ के बाद याद आया कि दो रक्अ़तों में या एक रक्अ़त में सूरः नहीं मिलाई, तब भी सज्दा-ए-सह्व करने से नमाज़ हो जायेगी।

मसला: सुन्नत और नफ़िल की सब रक्अ़तों में सूरः का मिलाना वाजिब है, इसलिये अगर उनकी किसी भी रक्अ़त में सूरः मिलाना भूल जाये तो सज्दा-ए-सह्व करे।

मसला: अल्हम्दु पढ़कर सोचने लगी कि कौनसी सूरः पढ़े और इस सोच-विचार में इतनी देर लग गयी जितनी देर में तीन बार सुब्हानल्लाहि कह सकती है, तो भी सज्दा-ए-सह्व वाजिब है।

मसला: अगर बिलकुल आख़िरी रक्अ़त में अत्तहिय्यात और दुरूद शरीफ़ पढ़ने के बाद शुब्हा हुआ कि मैंने चार रक्अ़त पढ़ी हैं या तीन, और इसी सोच में ख़ामोश बैठी रही और सलाम फेरने में इतनी देर लग गयी जितनी देर में तीन बार सुब्हानल्लाहि कह सकती थी, फिर याद आ गया कि मैंने चारों रक्अ़तें पढ़ लीं, तो इस सूरत में भी सज्दा-ए-सह्व करना वाजिब है।

मसला: जब अल्हम्दु और सूरः पढ़ चुकी तो भूले से कुछ सोचने लगी और रुकूअ़ करने में इतनी देर लग गयी जिसका ऊपर ज़िक्र हुआ तब भी सज्दा-ए-सह्व करना वाजिब है।

मसला: अगर पढ़ते-पढ़ते बीच में रुक गयी और कुछ सोचने लगी और सोचने में इतनी देर लग गयी, या दूसरी या चौथी रक्अ़त में अत्तहिय्यात के लिये बैठी तो फ़ौरन अत्तहिय्यात शुरू नहीं की, कुछ सोचने में उसी क़द्र देर लग गयी, या जब रुकूअ़ से उठी तो देर तक खड़ी कुछ सोचती रही और उसी क़द्र देर लगा दी तो इन सब सूरतों में सज्दा-ए- सह्व करना वाजिब है। ग़रज़ यह कि जब भूले से किसी फ़र्ज़ या वाजिब की अदायगी में तीन बार सुब्हानल्लाह कहने के बक़द्र (यानी इतनी मात्रा में) देर लग जायेगी तो सज्दा-ए-सह्व वाजिब है।

मसलाः तीन रकअ़त या चार रकअ़त वाली फ़र्ज़ नमाज़ या वित्रों में जब दो रकअ़त पर अत्तहिय्यात पर बैठी तो दो बार अत्तहिय्यात पढ़ गयी, तो भी सज्दा-ए-सह्व वाजिब है। और अगर दो रकअ़त पर बैठकर अत्तहिय्यात के बाद **"अल्लाहुम्-म सल्लि अ़ला मुहम्मदिन्"** तक दुरूद शरीफ़ पढ़ गयी या इससे भी ज़्यादा पढ़ गयी और उसके बाद उठ खड़ी हुई तब भी सज्दा-ए-सह्व वाजिब है। और अगर इससे कम पढ़ा तो भूल का सज्दा वाजिब नहीं। ज़ोहर की चार सुन्नतों का भी यही हुक्म है कि पहले क़अ़दे में अगर **"अल्लाहुम्-म सल्लि अ़ला मुहम्मदिन्"** के बक़द्र दुरूद शरीफ़ पढ़ लिया तो सज्दा-ए-सह्व वाजिब है।

मसलाः नफ़िल नमाज़ और ग़ैर-मुअक्कदा चार सुन्नतों में दो रकअ़त पर बैठकर अत्तहिय्यात के साथ दुरूद शरीफ़ भी पढ़ना जायज़ है, इसलिये इनके पहले क़अ़दे में दुरूद शरीफ़ पढ़ने से सज्दा-ए-सह्व वाजिब न होगा, अलबत्ता अगर क़अ़दा-ए-ऊला (यानी दो रकअ़त पूरी होने पर बैठने) में दो बार अत्तहिय्यात पढ़ ले तो नफ़िल और ग़ैर-मुअक्कदा सुन्नतों में भी सज्दा-ए-सह्व वाजिब होगा।

मसलाः अत्तहियात पढ़ने बैठी तो भूले से अत्तहिय्यात की जगह कुछ और पढ़ गयी, या अत्तहिय्यात की जगह सूरः अल्हम्दु पढ़ ली तो भी सह्व का सज्दा वाजिब होगा।

मसलाः नीयत बाँधने के बाद सुब्हानकल्लाहुम्-म की जगह दुआ़-ए-कुनूत पढ़ने लगी तो भूल का सज्दा वाजिब नहीं। इसी तरह फ़र्ज़ की तीसरी या चौथी रकअ़त में अगर अल्हम्दु की जगह अत्तहिय्यात या कुछ और पढ़ने लगी तो भी सज्दा-ए-सह्व वाजिब नहीं है। और अगर फ़र्ज़ों की तीसरी या चौथी रकअ़त में अल्हम्दु के बाद कोई सूरः मिला ली तब भी सज्दा-ए-सह्व वाजिब नहीं।

मसलाः तीन रकअ़त या चार रकअ़त वाली नमाज़ में बीच में बैठना भूल गयी और दो रकअ़त पढ़कर तीसरी रकअ़त के लिये खड़ी हो गयी, तो अगर नीचे का आधा धड़ अभी सीधा न हुआ हो तो बैठ जाये और अत्तहिय्यात पढ़ ले तब खड़ी हो, और ऐसी हालत में सज्दा-ए-सह्व करना वाजिब नहीं। और अगर नीचे का आधा धड़ सीधा हो गया हो तो अब न बैठे बल्कि खड़ी

होकर चारों रक्अ़तें पढ़ ले, सिर्फ़ आख़िर में बैठे, और इस सूरत में सज्दा-ए-सह्व वाजिब है। अगर सीधी खड़ी हो जाने के बाद फिर लौट आयेगी और बैठकर अत्तहिय्यात पढ़ेगी तो गुनाहगार होगी और सज्दा-ए-सह्व अब भी वाजिब होगा।

मसला: अगर चौथी रक्अ़त पर बैठना भूल गयी तो अगर नीचे का धड़ अभी सीधा नहीं हुआ तो बैठ जाये और अत्तहिय्यात और दुरूद वग़ैरह पढ़कर सलाम फेरे और सज्दा-ए-सह्व न करे। और अगर सीधी खड़ी हो गयी तब भी बैठ जाये, बल्कि अगर अल्हम्दु और सूरः पढ़ ली हो या रुकूअ़ भी कर लिया हो तब भी बैठ जाये और अत्तहिय्यात पढ़कर सज्दा-ए-सह्व कर ले।

और अगर रुकूअ़ के बाद भी याद न आया और पाँचवीं रक्अ़त का सज्दा कर लिया तो एक रक्अ़त और मिलाकर पूरी छह रक्अ़त करे और सज्दा-ए-सह्व न करे, और अब यह सब नमाज़ नफ़िल हो गयी, फ़र्ज़ नमाज़ फिर से पढ़े। और अगर एक रक्अ़त और न मिलाई बल्कि पाँचवीं रक्अ़त पर सलाम फेर दिया तो चार रक्अ़तें नफ़िल हो गयीं और एक रक्अ़त ज़ाया हो गयी, फ़र्ज़ नमाज़ उस सूरत में भी फिर से पढ़े।

मसला: अगर चौथी रक्अ़त पर बैठी और अत्तहिय्यात पढ़कर खड़ी हो गयी तो सज्दा करने से पहले-पहले जब याद आ जाये तो बैठ जाये और अत्तहिय्यात न पढ़े बल्कि बैठकर फ़ौरन सलाम फेर कर सज्दा-ए-सह्व कर ले। और अगर पाँचवीं रक्अ़त का सज्दा कर चुकी तब याद आया तो एक रक्अ़त और मिलाकर छह रक्अ़त पूरी कर ले और सज्दा-ए-सह्व भी करे, इस सूरत में चार रक्अ़त नमाज़ फ़र्ज़ और दो रक्अ़त नफ़िल हो जायेगी।

मसला: अगर चार रक्अ़त नमाज़ नफ़िल की नीयत करके नमाज़ शुरू की और बीच में बैठना भूल गयी तो जब तक तीसरी रक्अ़त का सज्दा न किया हो उस वक़्त तक याद आ जाने पर बैठ जाना चाहिये, अगर सज्दा कर लिया तो नमाज़ तब भी हो गयी लेकिन सज्दा-ए-सह्व इन दोनों सूरतों में वाजिब है।

मसला: अगर नमाज़ में शक हो गया कि तीन रक्अ़तें पढ़ी हैं या चार रक्अ़तें तो अगर यह शक इत्तिफ़ाक़न हो गया है, ऐसा शुब्हा पड़ने की उसकी आदत नहीं है तो फिर से नमाज़ पढ़े। और अगर शक में पड़ने की आदत है

यानी ऐसा शुब्हा पड़ता रहता है तो दिल में सोचकर देखे कि दिल ज़्यादा किधर जाता है, अगर ज़्यादा गुमान यही है कि मैंने चारों रक्अतें पढ़ ली हैं तो और कोई रक्अत न पढ़े।

और अगर सोचने के बाद भी दोनों तरफ़ बराबर ख़्याल रहे, न तीन रक्अत की तरफ़ ज़्यादा गुमान जाता है और न चार की तरफ़ तो तीन ही रक्अत समझे और एक रक्अत और पढ़ ले, लेकिन इस सूरत में यूँ करे कि जिस रक्अत के बारे में शक हुआ कि तीसरी है या चौथी है उस रक्अत पर भी बैठे और अत्तहिय्यात पढ़े, और उस रक्अत पर बैठकर अत्तहिय्यात और दुरूद शरीफ़ और दुआ पढ़े जिसके बारे में यक़ीन है कि यह चौथी है, और सज्दा-ए-सह्व भी करे।

मसलाः अगर यह शक हुआ कि यह पहली रक्अत है या दूसरी रक्अत तो उसका भी यही हुक्म है, कि अगर शक इत्तिफ़ाक़न हो गया है तो फिर से नमाज़ पढ़े, और अगर अक्सर शक पड़ जाता है तो जिधर ज़्याद गुमान हो जाये उसको इख़्तियार करे। और अगर दोनों तरफ़ बराबर गुमान है, किसी तरफ़ ज़्यादा न हो तो एक ही रक्अत समझे, लेकिन जिस रक्अत के बारे में शक हुआ है कि पहली है या दूसरी है उस पर बैठकर अत्तहिय्यात पढ़े, फिर उसके बाद जो रक्अत पढ़े उस पर भी बैठे और अत्तहिय्यात पढ़े और उसमें अल्हम्दु के साथ सूरः भी मिलाये, फिर उसके बाद वाली रक्अत पर भी बैठे, क्योंकि मुम्किन है कि वह चौथी हो, फिर एक और रक्अत पर बैठे और सज्दा करके आख़िरी सलाम फेरे।

मसलाः अगर यह शक हुआ कि दूसरी रक्अत है या तीसरी तो इसका भी यही हुक्म है कि अगर दोनों गुमान बराबर दरजे के हों तो उस शक वाली रक्अत पर बैठकर एक और रक्अत पढ़े और उस पर अत्तहिय्यात के लिये बैठे कि शायद यही चौथी हो, उसके बाद यक़ीनी तौर पर चार रक्अत करने के लिये एक और रक्अत पढ़े और सज्दा-ए-सह्व भी करे।

मसलाः अगर नमाज़ पढ़ चुकने के बाद यह शक हुआ कि न मालूम तीन रक्अत पढ़ीं या चार तो इस शक का कुछ एतिबार नहीं, नमाज़ हो गयी, अलबत्ता अगर ठीक याद आ जाये कि तीन ही हुईं तो फिर खड़े होकर एक रक्अत और पढ़ ले और सज्दा-ए-सह्व करे, शर्त यह है कि किसी से बोली न हो और कोई ऐसा काम न किया हो जिससे नमाज़ टूट जाती है। और

अगर सलाम फेर कर बोल पड़ी हो या कोई ऐसी बात पेश आई जिससे नमाज़ टूट जाती है तो दोबारा पूरी नमाज़ पढ़े। इसी तरह अगर अत्तहिय्यात पढ़ चुकने के बाद शक हुआ कि तीन रकअ़तें हुईं या चार तो उसका भी यही हुक्म है कि जब तक ठीक याद न आये उसका कुछ एतिबार नहीं, लेकिन एहतियातन फिर से नमाज़ पढ़ ले तो अच्छा है ताकि दिल की खटक निकल जाये और शुब्हा बाकी न रहे।

मसलाः सज्दा-ए-सह्व करने के बाद फिर कोई ऐसी बात हो गयी जिससे सज्दा-ए-सह्व वाजिब होता है तो वही पहला सज्दा-ए-सह्व काफ़ी है, अब फिर सज्दा-ए-सह्व न करे।

मसलाः नमाज़ में कुछ भूल गयी थी जिससे सज्दा-ए-सह्व वाजिब था लेकिन सज्दा-ए-सह्व करना भूल गयी और दोनों तरफ़ सलाम फेर दिया लकिन अभी उसी जगह बैठी है और सीना किब्ले की तरफ़ से नहीं फिरा, न किसी से कुछ बोली, न कोई ऐसी बात हुई जिससे नमाज़ टूट जाती है तो अब सज्दा-ए-सह्व कर ले, बल्कि अगर उसी तरह बैठे-बैठे कलिमा और दुरूद शरीफ़ वग़ैरह कोई वज़ीफ़ा भी पढ़ने लगी तब भी कुछ हर्ज नहीं, अब सज्दा-ए-सह्व कर ले तो नमाज़ हो जायेगी।

मसलाः सज्दा-ए-सह्व वाजिब था और उसने जान-बूझकर दोनों तरफ़ सलाम फेर दिया और यह नीयत की कि मैं सज्दा-ए-सह्व न करूँगी तब भी जब तक कोई ऐसी बात न हो जिससे नमाज़ जाती रहती है, सज्दा-ए-सह्व कर सकती है। सज्दा-ए-सह्व वाजिब होते हुए अगर सज्दा न किया तो नमाज़ का दोहराना वाजिब है।

मसलाः चार रकअ़त वाली या तीन रकअ़त वाली नमाज़ में भूले से दो रकअ़त पर सलाम फेर दिया तो अब उठकर उस नमाज़ को पूरा करे और सज्दा-ए-सह्व करे, अलबत्ता अगर सलाम फेरने के बाद कोई ऐसी बात हो गयी जिससे नमाज़ जाती रहती है तो फिर से नमाज़ पढ़े।

मसलाः भूले से वित्र की पहली या दूसरी रकअ़त में दुआ-ए-कुनूत पढ़ गयी तो उसका कुछ एतिबार नहीं, तीसरी रकअ़त में फिर पढ़े और सज्दा-ए-सह्व करे।

मसलाः वित्र की नमाज़ में शुब्हा हुआ कि न मालूम यह दूसरी रकअ़त है या तीसरी रकअ़त, और किसी बात की तरफ़ ज़्यादा गुमान नहीं है बल्कि

दोनों तरफ़ बराबर दर्जे का गुमान है तो उसी रक्अ़त में दुआ़-ए- कुनूत पढ़े और बैठकर अत्तहिय्यात भी पढ़े, फिर खड़े होकर एक रक्अ़त और पढ़े और उसमें भी दुआ़-ए-कुनूत पढ़े और आख़िर में सज्दा-ए-सह्व करे।

मसलाः वित्र में दुआ-ए-कुनूत की जगह सुब्हानकल्लाहुम्-म पढ़ गयी, फिर जब याद आया तो दुआ-ए-कुनूत पढ़ी तो सज्दा-ए-सह्व (यानी भूल का सज्दा) वाजिब नहीं।

मसलाः वित्र में दुआ-ए-कुनूत पढ़ना भूल गयी, सूरः पढ़कर रुकूअ़ में चली गयी तो सज्दा-ए-सह्व वाजिब है।

मसलाः अल्हम्दु पढ़कर दो सूरतें या तीन सूरतें पढ़ लीं तो कुछ डर नहीं, उस सूरत में सज्दा-ए-सह्व वाजिब नहीं।

मसलाः फ़र्ज़ नमाज़ की पिछली दोनों रक्अ़तों या एक रक्अ़त में अगर सूरः मिला ली तो सज्दा-ए-सह्व वाजिब नहीं।

मसलाः नमाज़ के शुरू में अगर **"सुब्हानकल्लाहुम्-म"** भूल गयी या सज्दे में **"सुब्हा-न रब्बियल् अज़ीम"** नहीं पढ़ा, या सज्दे में **"सुब्हा-न रब्बियल् अअ्ला"** नहीं पढ़ा, या रुकूअ़ से उठकर **"समिअ़ल्लाहु लिमन् हमि-दहू"** कहना याद नहीं रहा, या नीयत बाँधते वक़्त हाथ नहीं उठाये, या आख़िरी क़अ़दे में दुरूद शरीफ़ या दुआ नहीं पढ़ी यूँ ही सलाम फेर दिया तो इन सब सूरतों में सज्दा-ए-सह्व वाजिब नहीं है।

मसलाः फ़र्ज़ की दोनों पिछली रक्अ़तों में या एक रक्अ़त में अल्हम्दु पढ़ना भूल गयी और उतनी देर खड़ी रह गयी जितनी देर नमाज़ में **क़ियाम** (यानी खड़ा होना) फ़र्ज़ है, (यानी इतनी देर खड़ी रही कि जिसमें तीन बार सुब्हानल्लाह कहा जा सके। अगर इससे कम खड़ी रही तो फिर से नमाज़ पढ़े) उतनी देर खड़ी रहकर रुकूअ़ में चली गयी तो सज्दा-ए-सह्व वाजिब नहीं।

मसलाः जिन चीज़ों को भूलकर सज्दा-ए-सह्व वाजिब होता है अगर कोई नमाज़ी उनको जान-बूझकर छोड़ दे तो सज्दा-ए-सह्व वाजिब नहीं होता बल्कि उस सूरत में दोबारा नमाज़ पढ़ना वाजिब होता है। अगर सज्दा-ए-सह्व कर भी लिया तब भी नमाज़ दोहराना वाजिब होगा। और जो चीज़ें नमाज़ में न फ़र्ज़ हैं न वाजिब हैं उनके भूलकर छूट जाने से नमाज़ हो जाती है और सज्दा-ए-सह्व वाजिब नहीं होता, जिसकी कुछ मिसालें ऊपर गुज़र चुकी हैं।

सज्दा-ए-सह्व का तरीक़ा

सज्दा-ए-सह्व का तरीक़ा यह है कि 'क़अ़दा-ए-अख़ीरा' में (जिसमें सलाम फेरना होता है) तशह्हुद (यानी अत्तहिय्यात) अ़ब्दुहू व रसूलुहू तक पढ़कर दाहिनी तरफ़ को सलाम फेरे, फिर **'अल्लाहु अकबर'** कहकर सज्दे में जाये और सज्दे की तस्बीह पढ़े। फिर उस सज्दे से **'अल्लाहु अकबर'** कहते हुए उठकर बैठ जाये। उसके बाद **'अल्लाहु अकबर'** कहते हुए दूसरे सज्दे में जाये और सज्दे की तस्बीह पढ़ते हुए **'अल्लाहु अकबर'** कहते हुए उठकर बैठ जाये और दोबारा पूरी अत्तहिय्यात और दुरूद शरीफ़ और दुआ पढ़कर दोनों तरफ़ सलाम फेर दे।

सज्दा-ए-तिलावत का बयान

मसलाः क़ुरआन मजीद में तिलावत के सज्दे चौदह (१४) हैं। जहाँ-जहाँ क़ुरआन मजीद के किनारे पर लफ़्ज़ "अल-सज्दा" लिखा रहता है उस आयत को पढ़कर सज्दा करना वाजिब होता है और उस सज्दे को सज्दा-ए-तिलावत कहते हैं, अलबत्ता सूरः हज के ख़त्म के क़रीब जहाँ लफ़्ज़ "अल-सज्दा" लिखा है वहाँ हनफ़ी मज़हब में (यानी मसाइल में इमाम अबू हनीफ़ा रह. की पैरवी करने वालों के लिए) सज्दा नहीं है।

मसलाः सज्दा-ए-तिलावत करने का तरीक़ा यह है कि खड़े होकर अल्लाहु अकबर कहकर एक बार सज्दा करे और अल्लाहु अकबर कहते वक़्त हाथ न उठाये, सज्दे में कम-से-कम तीन बार "सुब्हा-न रब्बियल् अअ्ला" कहे, फिर अल्लाहु अकबर कहते हुए सर उठा ले, बस तिलावत का सज्दा अदा हो गया।

मसलाः बेहतर यही है कि खड़ी होकर पहले अल्लाहु अकबर कहे, फिर सज्दे में जाये, फिर अल्लाहु अकबर कहकर खड़ी हो जाये। और अगर बैठकर अल्लाहु अकबर कहकर सज्दे में जाये फिर अल्लाहु अकबर कहकर उठ बैठे खड़ी न हो, तब भी दुरुस्त है।

मसलाः सज्दे की आयत को जो शख़्स पढ़े उसपर भी सज्दा करना वाजिब है और जो सुने उसपर भी सज्दा करना वाजिब होता है, चाहे क़ुरआन शरीफ़ सुनने के इरादे से बैठी हो या किसी और काम में लगी हो और बग़ैर इरादे के सज्दे की आयत सुन ली हो। इसलिये बेहतर यह है कि

कुरआन पढ़ने वाला मर्द या औरत सज्दे की आयत को धीरे से यानी आहिस्ता आवाज़ से पढ़े ताकि किसी और पर सज्दा वाजिब न हो, अगर सुनने वाली ने अदायगी न की तो गुनाहगार होगी।

मसलाः जो चीज़ें नमाज़ के लिये शर्त हैं वे चीज़ें सज्दा-ए-तिलावत के लिये भी शर्त हैं- यानी वुज़ू का होना, जगह का पाक होना, बदन और कपड़े का पाक होना, क़िब्ले की तरफ़ सज्दा करना वग़ैरह।

मसलाः जिस तरह नमाज़ का सज्दा किया जाता है उसी तरह तिलावत का सज्दा भी करना चाहिये। बाज़ी औरतें यूँ ही बैठे-बैठे कुरआन शरीफ़ ही पर सर रखकर सज्दा कर लेती हैं, इससे सज्दा अदा नहीं होता और वाजिब ज़िम्मे में रह जाता है।

मसलाः अगर किसी का वुज़ू उस वक़्त न हो तो फिर किसी वक़्त वुज़ू करके सज्दा कर ले, फ़ौरन उसी वक़्त सज्दा करना ज़रूरी नहीं है, लेकिन बेहतर यह है कि उसी वक़्त वुज़ू करके सज्दा कर ले क्योंकि भूल जाने का ख़तरा है।

मसलाः अगर किसी के ज़िम्मे बहुत-से सज्दे तिलावत के बाक़ी हों अब तक अदा न किये हों तो अब अदा कर ले, उम्रभर में कभी-न-कभी ज़रूर अदा कर ले, ज़िन्दगी भर अदा न किये तो ज़िम्मे में वाजिब रह जायेंगे।

मसलाः अगर हैज़ (माहवारी) या निफ़ास (ज़च्चा होने) की हालत में किसी से सज्दे की आयत सुन ली तो उसपर सज्दा वाजिब नहीं हुआ। और अगर ऐसी हालत में सुना जबकि उसपर गुस्ल वाजिब था तो नहाने के बाद सज्दा करना वाजिब है।

मसलाः अगर नमाज़ में सज्दे की आयत पढ़े तो आयत पढ़ने के बाद फ़ौरन नमाज़ ही में सज्दा कर ले, फिर सज्दे से खड़े होकर बाक़ी सूरः पढ़कर रुकूअ में जाये। अगर सज्दे की आयत पढ़कर फ़ौरन सज्दा न किया बल्कि दो या तीन आयतें पढ़ लीं तब सज्दा किया तो यह भी दुरुस्त है। और अगर इससे ज़्यादा पढ़ गयी फिर सज्दा किया तो सज्दा तो अदा हो गया लेकिन गुनाह हुआ।

मसलाः अगर नमाज़ में सज्दे की आयत पढ़ी और नमाज़ ही में सज्दा न किया तो अब नमाज़ के बाद सज्दा करने से अदा न होगा, अब सिवाय तौबा और अल्लाह तआ़ला से माफ़ी माँगने के कोई सूरत माफ़ी की नहीं है।

मसलाः नमाज़ में अगर सज्दे की आयत पढ़कर फ़ौरन रुकूअ़ में चली जाए और रुकूअ़ में यह नीयत करे कि मैं तिलावत के सज्दे की तरफ़ से भी यही रुकूअ़ करती हूँ तब भी वह सज्दा अदा हो जायेगा। और अगर रुकूअ़ में यह नीयत नहीं की तो रुकूअ़ के बाद जब सज्दा करेगी तो उसी सज्दे से तिलावत का सज्दा भी अदा हो जायेगा, तिलावत के सज्दे की नीयत करे या न करे, शर्त यह है कि सज्दे की आयत पढ़ने के बाद तीन आयतों से ज़्यादा कुरआन न पढ़ा हो और उससे पहले ही रुकूअ़ व सज्दा कर लिया हो।

मसलाः नमाज़ पढ़ने की हालत में किसी दूसरे से सज्दे की आयत सुने तो नमाज़ में सज्दा न करे बल्कि नमाज़ के बाद करे। अगर नमाज़ ही में यह सज्दा करेगी तो सज्दा अदा न होगा, नमाज़ के बाद फिर करना पड़ेगा।

मसलाः एक ही जगह बैठे-बैठ सज्दे की एक ही आयत को कई बार पढ़े तो एक ही सज्दा वाजिब होगा, चाहे आख़िर में सज्दा कर ले चाहे पहली बार पढ़कर सज्दा करे, फिर उसी को बार-बार दोहराती रहे। और अगर जगह बदल गयी तब उसी आयत को दोहराया, फिर तीसरी जगह जाकर वही आयत पढ़ी, इसी तरह बार-बार जगह बदलती रही तो इस तरह जितनी बार दोहराती रहेगी उतनी ही बार सज्दा वाजिब होगा।

मसलाः अगर एक ही जगह बैठे-बैठे सज्दे की कई आयतें पढ़ीं तो भी जितनी आयतें पढ़े उतने ही सज्दे करे।

मसलाः बैठे-बैठे सज्दे की कोई आयत पढ़ी, फिर उठ खड़ी हुई लेकिन चली-फिरी नहीं, जहाँ बैठी थी वहीं खड़े-खड़े वह आयत फिर दोहराई तो एक ही सज्दा वाजिब होगा।

मसलाः एक जगह सज्दे की आयत पढ़ी और उठकर किसी काम को चली गयी, फिर उसी जगह आकर वही आयत पढ़ी तो दो सज्दे करे।

मसलाः अगर नमाज़ में सज्दे की एक ही आयत को कई बार पढ़े तब भी एक ही सज्दा वाजिब है चाहे सब दफ़ा पढ़कर आख़िर में सज्दा करे या एक दफ़ा पढ़कर सज्दा कर ले, फिर उसी रकअ़त या दूसरी रकअ़त में वही आयत पढ़े।

मसलाः सज्दे की कोई आयत पढ़ी और सज्दा नहीं किया, फिर उसी जगह नीयत बाँध ली और फिर वही आयत नमाज़ में पढ़ी और नमाज़ में सज्दा-ए-तिलावत किया तो यही सज्दा काफी है, दोनों सज्दे इसी से अदा हो

जायेंगे, अलबत्ता अगर जगह बदल गयी तो दूसरा सज्दा भी वाजिब होगा। और अगर सज्दे की आयत पढ़कर सज्दा कर लिया, फिर उसी जगह नमाज़ की नीयत बाँध ली और वही आयत नमाज़ में दोहराई तो अब नमाज़ में दोबारा सज्दा-ए-तिलावत करे।

मसला: पढ़ने वाली की जगह नहीं बदली, एक ही जगह बैठे-बैठे एक ही आयत को बार-बार पढ़ती रही, लेकिन सुनने वाली की जगह बदल गयी कि पहली बार और जगह सुना था और दूसरी बार दूसरी जगह और तीसरी बार तीसरी जगह तो पढ़ने वाली पर एक ही सज्दा वाजिब है और सुनने वाली पर कई सज्दे वाजिब होंगे, जितनी बार सुने उतने ही सज्दे करे।

मसला: अगर सुनने वाली की जगह बिलकुल नहीं बदली बल्कि पढ़ने वाली की बदल गयी तो पढ़ने वाली पर कई सज्दे वाजिब होंगे और सुनने वाली पर एक ही सज्दा वाजिब होगा।

मसला: सारी सूरः पढ़ना और सज्दे की आयत को छोड़ देना मक्रूह और मना है। सज्दे से बचने के लिये सज्दे की आयत न छोड़े क्योंकि इसमें अमली तौर पर गोया सज्दे से इनकार है जो मोमिन की शान के ख़िलाफ़ है। और अगर सज्दे की आयत पढ़े और उसके आगे-पीछे की आयत न पढ़े तो यह मक्रूह नहीं है, लेकिन इस सूरत में बेहतर यह है कि सज्दे की आयत के साथ उसके आगे या पीछे से एक दो आयत और मिला ले।

जनाज़े की नमाज़

हर मुसलमान मय्यित की नमाज़े जनाज़ा पढ़ना **'फ़र्ज़े किफ़ाया'** है। नमाज़े जनाज़ा उमूमन मर्द ही पढ़ लेते हैं इसलिये इस किताब में उसके लिखने की कोई ज़रूरत न थी लेकिन बहुत-से देहाती इलाक़ों में मर्दों को बग़ैर नमाज़े जनाज़ा इस वजह से दफ़न कर देते हैं कि नमाज़ पढ़ाने वाला कोई नहीं होता इसलिये हम यहाँ ग़लत-फ़हमी दूर करने के लिये ज़रूरी बातें लिखते हैं ताकि नमाज़े जनाज़ा के बग़ैर कोई मय्यित दफ़न न हो और ज़रूरत के वक़्त औरत भी नमाज़े जनाज़ा पढ़ सके, जिससे फ़र्ज़े किफ़ाया अदा हो जाये।

जानना चाहिये कि नमाज़े जनाज़ा के लिये जमाअत शर्त नहीं है। और यह भी शर्त नहीं है कि जो नमाज़ पढ़े वह मर्द ही हो। और यह भी शर्त नहीं है कि नमाज़े जनाज़ा में जो दुआएँ पढ़ी जाती हैं वे पढ़ी जायें क्योंकि

दुआयें सुन्नत हैं, शर्त या फ़र्ज़ और वजिब नहीं हैं, अलबत्ता नमाज़े जनाज़ा के लिये वुज़ू के साथ होना शर्त है, और नमाज़े जनाज़ा की नीयत से मय्यित को क़िब्ला की तरफ़ रुख़ करके सामने रखकर चार बार "अल्लाहु अकबर" कह देने से नमाज़े जनाज़ा अदा हो जाती है। यानी फ़र्ज़े किफ़ाया अदा हो जाता है। इस नमाज़ में क़ियाम (यानी खड़ा होना) और चार तकबीरें ही फ़र्ज़ हैं, जो दुआयें पढ़ी जाती हैं उनका पढ़ना सुन्नत है, उनके बग़ैर भी फ़र्ज़ की अदायगी हो जाती है।

पस अगर एक मर्द या एक औरत भी इस तरह नमाज़े जनाज़ा पढ़ ले तो किफ़ाया अदा हो जायेगा, अलबत्ता जिस क़द्र आदमी ज़्यादा हों उस क़द्र मय्यित के हक़ में अच्छा है, और जनाज़े की दुआयें भी याद कर लेनी चाहियें, ख़ुद याद करें और बच्चों को याद करायें।

पहली तकबीर के बाद "सुब्हानकल्लाहुम्-म" आख़िर तक और दूसरी तकबीर के बाद दुरूद शरीफ़ पढ़ते हैं, और तीसरी तकबीर के बाद मय्यित के लिये दुआ करते हैं, और चौथी बार तकबीर के बाद सलाम फेर देते हैं। पहली बार जब तकबीर कहें तो इसी तरह हाथ उठायें जैसे नमाज़ की नीयत बाँधते वक़्त हाथ उठाये जाते हैं, उसके बाद की तकबीरों में हाथ नहीं उठाये जाते। तीसरी तकबीर के बाद जो दुआयें पढ़ते हैं उनकी तफ़सील यह है कि अगर बालिग़ मर्द या औरत का जनाज़ा हो तो तीसरी तकबीर के बाद यह दुआ पढ़ते हैं:

अल्लाहुम्मग़्फ़िर् लि-हय्यिना व मय्यितिना व शाहिदिना व ग़ाइबिना व सग़ीरिना व कबीरिना व ज़-करिना व उन्साना। अल्लाहुम्-म मन् अह्यैतहू मिन्ना फ़-अह्यिही अ़लल् इस्लामि, व मन् तवफ़्फ़ैतहू मिन्ना फ़-तवफ़्फ़हू अ़लल् ईमान।

तर्जुमा: ऐ अल्लाह! तू हमारे ज़िन्दों को और हमारे मुर्दों को और हमारे हाज़िरों को और हमारे ग़ायबों को और हमारे छोटों को और हमारे बड़ों को और हमारे मर्दों को और हमारी औरतों को बख़्श दे। ऐ अल्लाह! हम में से तू जिसे ज़िन्दा रखे तू उसे इस्लाम पर ज़िन्दा रख, और हम में से तू जिसे मौत दे तू उसे ईमान पर मौत दे।

और अगर मय्यित नाबालिग़ लड़का हो तो यह दुआ पढ़ें:

अल्लाहुम्मज्अ़ल्हु लना फ़-रतंव्-वज्अ़ल्हु लना अज्रंव्-व ज़ुख़्रंव्-

वज्अल्हु लना शाफ़िअंव्-व मुशफ़्फ़आ।

तर्जुमा: ऐ अल्लाह! इस बच्चे को तू हमारे लिये पहले से जाकर इन्तिज़ाम करने वाला बना, और इसको हमारे लिये अज्र व ज़ख़ीरा और सिफ़ारिश करने वाला और सिफ़ारिश मन्जूर किया हुआ बना दे।

और अगर मय्यित नाबालिग़ लड़की हो तो यह दुआ पढ़ें:

अल्लाहुम्मज्अल्हा लना फ़-रतंव्-वज्अल्हा लना अज्रंव्-व ज़ुख़्रंव्-वज्अल्हा लना शाफ़िअतंव्-व मुशफ़्फ़-अतन्।

तर्जुमा: ऐ अल्लाह! तू इस बच्ची को हमारे लिए पहले से जाकर इन्तिज़ाम करने वाली बना और इसको हमारे लिये अज्र और ज़ख़ीरा और सिफ़ारिश करने वाली और सिफ़ारिश मन्ज़ूर की हुई बना।

देखो सिर्फ़ पाँच-छह लाइनों (पंक्तियों) में पूरी नमाज़े जनाज़ा आ गयी। सुब्हानकल्लाहुम्-म और दुरूद शरीफ़ तो सबको याद होता ही है, अगर उनको भी मिलाओ तो दस लाइनें हो गईं। ऐसी भी क्या डूब पड़ गयी कि दस लाइनें बच्चों और बच्चियों को याद न करायें और ख़ुद भी याद न करें और मुर्दों को नमाज़ पढ़ाये बग़ैर दफ़न करना मन्ज़ूर कर लें।

औरतों को घर में नमाज़ पढ़ने का हुक्म

हदीसः (33) हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊ़द रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि औरत की नमाज़ जो उसके कमरे में हो उस नमाज़ से बेहतर है जो उसके दालान में हो, और उसकी नमाज़ जो अन्दर वाले ख़ुसूसी कमरे में हो उस नमाज़ से बेहतर है जो किसी आ़म कमरे में हो। और एक रिवायत में है जो हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से रिवायत है कि औरत की नमाज़ जो उसकी हवेली में हो वह उस नमाज़ से बेहतर है जो उसके क़बीले की मस्जिद में हो। एक और हदीस में है जो हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि औरत छुपाकर रखने की चीज़ है और बेशक जब वह घर से बाहर निकलती है तो उसे शैतान तकने लगता है, और औरत उस वक़्त सबसे ज़्यादा अल्लाह से बहुत क़रीब होती है जबकि वह अपने घर के अन्दर होती है। (अत्तरग़ीब वत्तरहीब पेज 135 जिल्द 1)

तशरीहः इन रिवायतों में औरतों को बताया गया है कि वे नमाज़ पढ़ने

के लिये मस्जिद में जाने की फ़िक्र में न पड़ें क्योंकि घर से बाहर तरह-तरह के आदमी हैं, शैतान के लश्कर हैं। बुरे और बदकार लोग हैं जिनका शेवा बदनज़री व गुनाहगारी है। ये लोग बाहर निकलने वाली औरत पर शैतान की तवज्जोह दिलाने पर अपनी नज़रें गाड़ देते हैं। जेसे मर्दों के ज़िम्मे माल कमाना और ज़रूरत की चीज़ें उपलब्ध करके लाना है, क्योंकि वे बाहर निकलते हैं, इसी तरह से मस्जिदों में जाकर जमाअत के साथ नमाज़ की अदायगी भी उनके ज़िम्मे लाज़िम कर दी गयी है, और औरत के लिये यह फ़रमाया है कि वह अपने घर से बाहर न निकले, हाँ अगर कोई बहुत ही मजबूरी हो तो ख़ूब ज़्यादा पर्दे की पाबन्दी के साथ निकलने की इजाज़त दी गयी है।

देखिये हदीस में फ़रमाया है कि औरत को अल्लाह की नज़दीकी सबसे ज़्यादा उस वक़्त हासिल होती है जबकि वह अपने घर के अन्दर हो, और औरत की वह नमाज़ सबसे बेहतर है जो अन्दर-दर-अन्दर बिलकुल आख़िरी कमरे में हो, और मौहल्ले की मस्जिद में जाकर जमाअ़त में शरीक होकर नमाज़ पढ़ने से ज़्यादा बेहतर यह है कि अपने घर में सबसे ज़्यादा अन्दर वाले कमरे में नमाज़ पढ़े। एक हदीस में इरशाद है:

وَمَا عَبَدَتْ اِمْرَاَةٌ رَبَّهَا مِثْلَ اَنْ تَعْبُدَهُ فِیْ بَیْتِهَا

यानी औरत अपने रब की इबादत घर में करती है उससे बढ़कर उसके लिये कोई इबादत नहीं है। (तिबरानी)

हज़रत उम्मे हमीद को नबी-ए-पाक की हिदायत

हज़रत उम्मे हमीद रज़ियल्लाहु अ़न्हा एक सहाबी औरत थीं, उन्होंने अ़र्ज़ किया ऐ अल्लाह के रसूल! मैं आपके साथ नमाज़ पढ़ने को महबूब रखती हूँ। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया मुझे मालूम है कि तुम मेरे साथ नमाज़ पढ़ना चाहती हो हालाँकि तुम्हारा कमरे में नमाज़ पढ़ना दालान में नमाज़ पढ़ने से बेहतर है, और दालान में नमाज़ पढ़ना घर के आँगन में नमाज़ पढ़ने से बेहतर है, और तुम्हारे अपने कबीले की मस्जिद में नमाज़ पढ़ना इससे बेहतर है कि तुम मेरी मस्जिद में आकर नमाज़ पढ़ो। (रिवायत करने वाले का बयान है कि) यह बात सुनकर हज़रत उम्मे हमीद रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने अपने नमाज़ पढ़ने की जगह अपने घर के बिलकुल आख़िरी अन्दरूनी हिस्से में मुक़र्रर कर ली जहाँ ख़ूब अंधेरा था और मौत आने तक

बराबर उसी में नमाज़ पढ़ती रहीं। (अहमद, इब्ने ख़ुज़ैमा व इब्ने हिब्बान)

उस ज़माने की औरतों में दीन की बातों पर अ़मल करने का जज़्बा था, उन्होंने सरवरे आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बात सुनकर अपने घर में अन्दर-दर-अन्दर नमाज़ की जगह बना ली और वहीं नमाज़ पढ़ती रहीं, आजकल की औ़रतें हदीस भी सुनती हैं किताबें भी पढ़ती हैं और जो शरीअ़त में पर्दे की अहमियत है उसे भी जानती हैं लेकिन फिर भी अ़मल करने से गुरेज़ करती हैं। अव्वल तो औ़रतों को दीनी ज़िन्दगी गुज़ारने की ख़ास रग़बत ही नहीं रही और जिनको दीन की तरफ़ तवज्जोह है वे भी दीनी अहकाम को तबीयत के मुताबिक़ अदा करना चाहती हैं। शरीअ़त के मुताबिक़ अन्जाम देने का इरादा नहीं करतीं, हालाँकि तबीयत पर चलने में सवाब नहीं है, शरीअ़त पर चलने में सवाब मिलता है।

मस्जिदों में औ़रतों के जाने की मनाही

बाज़ी औ़रतों को नमाज़ का शौक़ और ज़ौक़ होता है जो बहुत मुबारक है, लेकिन मस्जिदों में जाकर नमाज़ें पढ़ने की रग़बत रखती हैं और बहुत-से मौक़े (जैसे शबे-बराअत, ख़त्मे कुरआन वग़ैरह) में मस्जिदों में पहुँच जाती हैं और उसमें सवाब समझती हैं हालाँकि बेपर्दगी हो जाती है और बच्चे साथ होने की वजह से मस्जिद की बेअदबी भी होती है। वहाँ बैठकर बातें बनाती हैं जिससे मर्दों की जमाअ़त में ख़लल आता है। ये सब चीज़ें ऐसी हैं जिनसे परहेज़ करना लाज़िम है।

हज़रत उम्मे हमीद रज़ियल्लाहु अ़न्हा की रिवायत से मालूम हुआ कि उन्होंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ नमाज़ पढ़ने की ख़्वाहिश ज़ाहिर की, इसपर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने घर के अन्दर वाले कमरे में नमाज़ पढ़ने की नसीहत फ़रमायी हालाँकि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मस्जिद की नमाज़ हज़ारों नमाज़ों से बेहतर है। मालूम हुआ की औ़रतों को घर ही में नमाज़ पढ़ना लाज़िम है।

हज़रत उम्मे हमीद रज़ियल्लाहु अ़न्हा के क़िस्से में यह जो फ़रमाया कि तुम्हारा अपने क़बीले की मस्जिद में नमाज़ पढ़ना मेरी मस्जिद में नमाज़ पढ़ने से बेहतर है, यह उस वक़्त की बात है जब औ़रतें पर्दे की पाबन्दी करते हुए ख़ुशबू लगाये बग़ैर मस्जिद में नमाज़ के लिये जाया करती थीं। एक हदीस में इरशाद है:

لاتقبل صلوة امراة تطيبت للمسجد حتى تغتسل غسلها من الجنابة

तर्जुमाः उस औरत की नमाज़ कबूल न होगी जो मस्जिद में जाने के लिये खुशबू लगाये, जब तक कि ऐसा गुस्ल न करे जैसा नापाकी दूर करने के लिये पूरा गुस्ल किया जाता है। (अबू दाऊद)

और इसपर कानून था कि फ़र्ज़ नमाज़ का सलाम फेर कर पहले औरतें चली जाती थीं (उनकी सफ़ सबके पीछे होती थी)। हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और आपके साथ दूसरे नमाज़ी अपनी जगह पर बैठे रहते थे। जब औरतें चली जातीं तब उठते थे। (बुख़ारी शरीफ़)

आजकल न तो पर्दे की पाबन्दी और ख़्याल है न मर्दों में परहेज़गारी व पाकीज़गी है, न औरतों में सादे लिबास का रिवाज है, ख़ूब बन-ठनकर ख़ुशबू लगाकर निकलती हैं, बुर्का पहनती हैं तो भड़कदार और फूलदार, और बहुत-सी औरतें मुँह खोलकर चलती हैं। कुछ ऐसी भी हैं जिनके नकाब में चेहरा झिलमिलाता रहता है। इन हालात में बाहर निकलने की कैसे इजाज़त हो सकती है? आसतीनें आधी बल्कि बिना आसतीन के कुर्ते फ़रॉक पहने हुए छोटे दुपट्टे की चार उंगली वाली एक कत्तर गले में डालकर चल देती हैं, मर्दों की नज़रें उनकी तरफ़ खिंचती हैं और ऐसे लिबास में नमाज़ भी नहीं होती। इस हालत में बाहर निकलना किसी तरह जायज़ नहीं।

हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा का इरशाद

हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने अपने ज़माने की औरतों के बारे में फ़रमाया था कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अगर औरतों का यह ढंग देख लेते जो इन्होंने आज बना लिया है तो इनको ज़रूर (सख़्ती के साथ) मस्जिद में आने से मना फ़रमाते जैसा कि (दूसरी उम्मतों में) बनी इस्राईल की औरतें रोक दी गयी थीं। (बुख़ारी शरीफ़)

जब औरतों को जमाअ़त की नमाज़ के लिये जाने से रोक दिया गया तो मेलों-ठेलों और पार्कों में और बाज़ारों में आने-जाने का सवाल ही पैदा नहीं होता। आजकल अजीब रिवाज हो गया है कपड़ा और सब्ज़ी-तरकारी वग़ैरह ख़रीदना और घरेलू ज़रूरियात की चीज़ें बाज़ार से लाना लोगों ने औरतों पर डाल दिया है या औरतों ने ज़बरदस्ती मर्दों के इस काम पर कब्ज़ा कर लिया है, जो मर्दों के लिये शर्म की बात है।

मुसलमान औ़रतों से

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बातें

* औ़रतों के लिए *

ज़कात व सदक़ात का बयान

लेखक

हज़रत मौलाना आ़शिक़ इलाही साहिब बुलन्द शहरी

रहमतुल्लाहि अ़लैहि

अनुवादक: मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा. लि.)

422, मटिया महल, उर्दू मार्किट, जामा मस्जिद

देहली-110006

ज़कात व सदक़ात के फ़ज़ाइल व मसाइल

रिश्तेदारों और पड़ोसियों पर ख़र्च करने का सवाब

औरतों को ज़कात और सदक़े का ख़ुसूसी हुक्म

हदीसः (34) हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु की बीवी हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अन्हा का बयान है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने औरतों को ख़िताब फ़रमाते हुए नसीहत फ़रमायी कि ऐ औरतो! सदक़ा दो अगरचे अपने ज़ेवर ही से हो क्योंकि क़ियामत के दिन दोज़ख़ वालों में से ज़्यादा तुम ही होगी। (मिश्कात शरीफ़, तिर्मिज़ी)

तशरीहः रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम कभी-कभी औरतों को भी सामूहिक तौर पर ख़िताब फ़रमाते थे। एक मौक़े पर यह बात इरशाद फ़रमाई जो ऊपर की हदीस में ज़िक्र की गयी है, यानी औरतों को सदक़ा करने का हुक्म फ़रमाया और साथ ही सदक़े का फ़ायदा भी बताया और वह यह कि सदक़े को दोज़ख़ से बचाने में बड़ा दख़ल है। चूँकि औरतों से भी तरह-तरह के गुनाह होते रहते हैं और बड़े-बड़े गुनाहों में मुब्तला रहती हैं इसलिये दोज़ख़ से बचने की तदबीर बताई कि सदक़ा दिया करो, अगर अलग से माल न हो तो ज़ेवर ही में से दे दो। क़ुरआन व हदीस में लफ़्ज़ 'सदक़ा' फ़र्ज़ ज़कात के लिये भी इस्तेमाल हुआ है और नफ़िल सदक़े के लिये भी बोला गया है। इस हदीस से फ़र्ज़ सदक़ा यानी ज़कात और नफ़िल सदक़ा यानी ख़ैर-ख़ैरात दोनों मुराद हो सकते हैं।

ज़कात किस पर फ़र्ज़ है

ज़कात हर उस बालिग़ मर्द और औरत पर फ़र्ज़ है जो 'शरई निसाब' के बराबर माल का मालिक हो, चाहे माल उसके पास हो चाहे बैंक में रखा

हो, चाहे नक़दी हो चाहे नोट हो, चाहे सोना-चाँदी हो। जितने रुपये या माल के बदले मे साढ़े बावन तौले चाँदी आ सकती हो उसको निसाब कहते हैं। लोग समझते हैं कि बड़े रईस कबीर और अमीर व दौलतमन्द पर ही ज़कात फ़र्ज़ है हालाँकि ज़कात के फ़र्ज़ होने के लिये बहुत बड़ा मालदार होना ज़रूरी नहीं है। ग़ौर कर लो कि साढ़े बावन तौला चाँदी कितने रुपये में आ सकती है। अगर दस रुपये तौला भी हो तो साढ़े पाँच सौ रुपये के अन्दर-अन्दर आ जायेगी। बहुत-सी औरतों के पास इतना माल होता है मगर ज़कात अदा नहीं करतीं और उम्र भर गुनाहगार रहती हैं और इसी गुनाह में मुब्तला होते हुए मर जाती हैं। अगर नक़दी न हो तो ज़ेवर तो होता ही है जो मायके या ससुराल से मिलता है, उसपर ज़कात फ़र्ज़ होती है मगर अदा नहीं की जाती, यह ज़ेवर आख़िर में वबाले जान बनेगा तो पछतावा होगा। अल्लाह तआ़ला हमें अपनी पनाह में रखे।

मसलाः तिजारत के सामान पर भी ज़कात फ़र्ज़ होती है। अगर साढ़े बावन तौला चाँदी की क़ीमत को पहुँच जाये।

मसलाः अगर न कुछ नक़दी मौजूद है न तिजारत का सामान है, न चाँदी है और सिर्फ़ सोना है, तो जब तक साढ़े सात तौला सोना न हो ज़कात फ़र्ज़ न होगी, लेकिन अगर कुछ चाँदी और कुछ सोना है या कुछ सोना है और कुछ नोट रखे हैं, या कुछ सोना या चाँदी है और कुछ तिजारत का सामान है और इन सूरतों में साढ़े बावन तौला चाँदी की मालियत हो जाती है तो ज़कात फ़र्ज़ हो जायेगी, इसको ख़ूब समझ लो। इस मसले की रू-से अक्सर औरतों पर ज़कात फ़र्ज़ है जिनपर थोड़ा बहुत ज़ेवर है। हर मुसलमान मर्द व औरत को चाहिये कि अपनी मालियत और ज़ेवर और दुकान के सामान और नक़द मालियत का हिसाब लगाये। यह जो बहुत-सी औरतें समझती हैं कि ज़ेवर इस्तेमाल करने की चीज़ है इसपर ज़कात वाजिब नहीं, यह ख़्याल सही नहीं है। इस सिलसिले में अभी एक हदीस भी आ रही है इन्शा-अल्लाह तआ़ला।

चाँदी-सोने की हर चीज़ पर ज़कात है चाहे सोने-चाँदी के बरतन हों चाहे गोटे की शक्ल में हो, चाहे ज़ेवर की सूरत में, चाहे इस्तेमाली हो चाहे यूँ ही रखा हो।

मसलाः शरई निसाब के बराबर मालियत का मालिक होने पर ज़कात

फ़र्ज़ हो जाती है, शर्त यह है कि एक साल उस माल पर गुज़र जाये।

मसलाः साल के अन्दर अगर माल घट जाये और साल ख़त्म होने से पहले उतना माल फिर आ जाये कि अगर उसको बाक़ी माल में जोड़ दें तो शरई निसाब के बराबर हो जाये तो इस सूरत में ज़कात की अदायगी फ़र्ज़ हो जायेगी और नये माल के आने से साल शुरू न होगा, बल्कि जब शुरू में माल आया था उसी वक़्त से साल का हिसाब लगेगा। यह मसला उससे मुताल्लिक़ है जिसपर एक बार ज़कात की अदायगी लाज़िम हो चुकी हो।

साहिबे निसाब को ज़कात देना

मसलाः जितनी मालियत पर ज़कात फ़र्ज़ है उस क़द्र माल किसी के पास हो, चाहे उतनी मालियत का ज़रूरत से ज़ायद सामान और सोना-चाँदी हो या उतनी नक़दी बैंक में हो तो उसको ज़कात लेना हराम है और उसको ज़कात दी जायेगी तो अदा न होगी। ज़कात लेने का हक़दार वह है जिसके पास शरई निसाब के बक़द्र माल न हो और सय्यिद न हो। बहुत-सी औरतें विधवा होती हैं, सिर्फ़ उनके विधवा होने पर नज़र करके ज़कात दे दी जाती है हालाँकि उनके पास निसाब के बराबर खुद ज़ेवर होता है, ऐसी सूरत में ज़कात अदा नहीं होती और उनको लेना भी हलाल नहीं होता। बन्दे का माल ज़कात देने से कम नहीं होता। (मिश्कात)

ज़कात के बारे में चाँद का साल मोतबर है

चाँद के हिसाब से माल पर एक साल गुज़र जाने से ज़कात की अदायगी फ़र्ज़ हो जाती है। अंग्रेज़ी साल का हिसाब लगाना दुरुस्त नहीं। अंग्रेज़ी साल से अदा करने में हर साल दस दिन के बाद ज़कात अदा होगी और 36 साल बाद एक साल की ज़कात कम हो जायेगी जो अपने ज़िम्मे बाक़ी रहेगी।

कितनी ज़कात अदा करे

चाँद के एतिबार से पूरा साल गुज़र जाने पर ढाई रुपये सैकड़ा या 25 रुपये प्रति हज़ार ज़कात अदा कर दे। यह चालीसवाँ हिस्सा बनता है। देखो खुदा पाक ने कितना कम फ़रीज़ा रखा है और वह भी तुम्हारे लिये ही है, खुदा के काम थोड़ा ही आता है, वह तो बेनियाज़ है। उसी ने तो सबको सब कुछ दिया है, तुम अपने माल का सवाब आख़िरत में खुद पा लोगी, और दुनिया में भी ज़कात देने के सबब माल की हिफ़ाज़त रहेगी और माल में

तरक़्क़ी होगी। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने क़सम खाकर फ़रमाया कि सदके से माल कभी कम नहीं होता।

बहुत-सी औ़रतें यह सवाल उठाती हैं कि ज़ेवर के अ़लावा हमारे पास माल कहाँ है? अगर उसमें से दें तो सब ख़त्म हो जायेगा। अव्वल तो बात यह है कि शौहर से लेकर अदा कर सकती है, जब वह बेजा चोंचलों के लिये देता है और फ़ैशन के फ़ुज़ूल ख़र्चे उठाता है तो तुम्हारे कहने से तुम्हें दोज़ख़ के अ़ज़ाब से बचाने के लिये साल भर में ढाई रुपये सैकड़ा क्यों न देगा। और अगर वह नहीं देता तो ज़ेवर बेचो। अभी-अभी हदीस से मालूम हुआ कि सदके से माल कम नहीं होता। अगर तुम ज़कात दोगी तो अल्लाह तआ़ला और ज़्यादा माल देगा और ज़ेवर बढ़ेगा, मगर तुम तो अल्लाह की तरफ़ बढ़ो। मान लो ज़कात देते-देते ज़ेवर ख़त्म हो जाये तो क्या हर्ज हुआ, दोज़ख़ के अ़ज़ाब से बच जाना और जन्नत की नेमतें मिल जाना क्या कम फ़ायदा है? अब एक सहाबी औ़रत का क़िस्सा सुनो।

ज़ेवर की ज़कात न देने पर सज़ा की धमकी

हदीसः (35) हज़रत अ़मर बिन शुऐब अपने वालिद और दादा के वास्ते से नक़ल करते हैं कि एक औ़रत रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में आई, उसके साथ उसकी एक लड़की थी जिसके हाथ में सोने के दो मोटे-मोटे कंगन थे। नबी करीम सल्ल० ने उस औ़रत से दरियाफ़्त फ़रमाया कि तुम इस ज़ेवर की ज़कात अदा करती हो? अ़र्ज़ किया नहीं! फ़रमाया क्या तुम यह पसन्द करती हो कि इनकी वजह से क़ियामत के दिन अल्लाह तआ़ला तुमको आग के दो कंगन पहना दे। यह सुनकर उस औ़रत ने वे दोनों कंगन (बच्ची के हाथ से) निकाले और आपकी ख़िदमत में पेश कर दिये और अ़र्ज़ किया कि ये दोनों अल्लाह व रसूल के लिये हैं। (मैं अपने पास नहीं रखती, आपको इख़्तियार है जहाँ चाहें ख़र्च फ़रमायें)।

तशरीहः हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सहाबी मर्द व औ़रत सब ही आख़िरत के बहुत फ़िक्रमन्द थे और वहाँ के अ़ज़ाब से बहुत डरते थे। देखा! एक सहाबी औ़रत ने दोज़ख़ की बात सुनकर दोनों कंगन ख़ैरात कर दिये और नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हवाले कर दिये कि जहाँ चाहें ख़ुदा की राह में ख़र्च फ़रमायें। अगरचे अ़ज़ाब से बचने

की यह सूरत भी थी कि वह अब तक की ज़कात अदा कर देतीं और आइन्दा ज़कात देने की पाबन्दी करतीं लेकिन उन्होंने यह पसन्द ही न किया कि वे कंगन पास रहें, क्योंकि शायद फिर कोताही न हो जाये, इसलिये वह चीज़ पास न रखी जिससे गिरफ़्त का अन्देशा हो सके। सुब्हानल्लाह सहाबी मर्द व औरत कैसे दीनदार और आख़िरत के फ़िक्रमन्द थे।

नफ़्ली सदके की फ़ज़ीलत

हदसीः (36) हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अन्हा का बयान है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मुझे ख़िताब करते हुए बयान फ़रमाया कि (ख़ुदा की राह में) ख़र्च करती रहो और गिन-गिनकर मत रखना वरना अल्लाह तआला भी तुझे गिन-गिनकर देंगे। (यानी ख़ूब ज़्यादा न मिलेगा) और माल को बन्द करके न रखना वरना अल्लाह तआला (भी) अपनी बख़्शिश रोक देंगे, जहाँ तक हो सके थोड़ा-बहुत (ज़रूरतमन्दों पर) ख़र्च करती रहो।

(मिश्कात शरीफ़, बुख़ारी व मुस्लिम)

तशरीहः हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अन्हा हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु की बड़ी बेटी थीं जो हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से दस साल बड़ी थीं, उन्होंने मक्का ही में इस्लाम क़बूल कर लिया था। तारीख़ लिखने वाले कहते हैं कि वह अट्ठारहवीं मुसलमान थीं। उस ज़माने में एक मुसलमान का बढ़ जाना बहुत बड़ी बात थी, इसलिये यूँ गिना करते थे कि फ़लाँ सातवाँ मुसलमान है और फ़लाँ दसवाँ मुसलमान है, वग़ैरह वग़ैरह।

उनकी रिवायत की हुई बहुत-सी हदीसें किताबों में मिलती हैं। उनके शौहर हज़रत ज़ुबैर बिन अवाम रज़ियल्लाहु अन्हु थे जिनको आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपना 'हवारी' यानी बहुत ख़ास आदमी बताया था। उनके लड़कों में अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर और उरवा बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अन्हुमा ने मक्के में हुकूमत क़ायम कर ली थी, जो उस वक़्त के बादशाह अब्दुल मलिक बिन मरवान के ख़िलाफ़ थी। अब्दुल मलिक का मशहूर ज़ालिम गवर्नर हज्जाज बिन यूसुफ़ गुज़रा है। उसने मक्का पर चढ़ाई करके हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अन्हु को शहीद कर दिया था। उस वक़्त उनकी वालिदा हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अन्हा ज़िन्दा थीं। हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अन्हु को शहीद करके हज्जाज उनकी वालिदा के पास

आया और उसने कहा कि तुमने देखा कि तुम्हारे लड़के का क्या हाल बना? यानी शिकस्त खाकर कत्ल हुआ। हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अन्हा ने बिना किसी डर और भय के फ़ौरन जवाब दिया कि:

"मेरे बेटे की और तेरी जंग का खुलासा मेरे नज़दीक यह है कि तूने मेरे बेटे की दुनिया ख़राब कर दी यानी उसकी दुनियावी ज़िन्दगी ख़त्म हो गयी और उसने तेरी आख़िरत ख़राब कर दी।" (मिश्कात शरीफ़)

क्योंकि एक बादशाह की हिमायत में पड़कर तूने एक सहाबी को शहीद कर दिया जो सही ख़िलाफ़त क़ायम किये हुए था। उस ज़माने की मुसलामन औरतें बड़ी बहादुर और दिलावर होती थीं। बात यह है कि ईमान मज़बूत हो तो दिल भी मज़बूत होता है और ज़बान भी हक़ कहते हुए लड़खड़ाती नहीं है। आपने देखा कि एक बूढ़ी औरत ने हिजाज़ और इराक़ के गवर्नर को कैसा मुँह-तोड़ जवाब दिया।

माल के बारे में हुज़ूर सल्ल. की तीन नसीहतें

हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अन्हा का हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में आना-जाना लगा रहता था और मसले-मसाइल दरियाफ़्त करती रहती थीं। एक बार नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनको अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करने और ग़रीबों यतीमों मिस्कीनों और बेवाओं की ख़बरगीरी की तरफ़ तवज्जोह दिलाई और चार बातें इरशाद फ़रमाईं।

पहली: ख़र्च करती रहा करो।

दूसरी: गिन-गिनकर न रखना। यानी जमा करने के फेर में न पड़ना कि जमा कर रहे हैं और गिनते जा रहे हैं, आज इतना हुआ और कल इतना बढ़ा। जमा करने के ख़्याल में अपनी ज़रूरतें भी रोके हुए हैं और दूसरे ज़रूरतमन्दों को भी नहीं देते, यह तरीक़ा ईमान वालों का नहीं बल्कि दुनिया से मुहब्बत करने वाले ऐसा करते हैं जिनकी जान ही पैसा है, पैसे के लिये ही जीते हैं और इसी के लिये मरते हैं। एक हदीस में ऐसे लोगों को **रुपये-पैसे का गुलाम** फ़रमाया। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को ऐसे लोग बहुत ना-पसन्द थे। एक बार आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

हदीस: बेमुराद हो रुपये-पैसे और चादर का गुलाम, जिसका यह हाल है कि अगर उसे मिल जाये तो राज़ी और न मिले तो नाराज़ हो जाये, ऐसे

शख़्स का बुरा हो और उसके लिये बरबादी हो। और अगर उसके काँटा लग जाये तो ख़ुदा करे कोई न निकाले। (मिश्कात शरीफ़)

गिन-गिनकर न रखना का दूसरा मतलब मुहद्दिसीन ने यह बताया है कि ज़रूरतमन्द और फ़क़ीर को देते वक़्त इसलिये न गिनना कि कहीं ज़्यादा तो नहीं जा रहा है और दिल खिंच रहा है। एक पैसा देने के लिये जेब में हाथ डाला था मगर दो पैसे का सिक्का हाथ में आ गया, अब सोच रहे हैं कि यह तो एक पैसा ज़्यादा है, फ़क़ीर की तरफ़ हाथ बढ़ने के बजाय वापस जेब में जा रहा है ताकि एक पैसे का सिक्का निकाला जाये, यह भी माल से मुहब्बत की दलील है।

फिर फ़रमाया अगर तुम गिन-गिनकर रखोगी और जमा करने की फ़िक्र में पड़ोगी या फ़क़ीर को देते वक़्त गिनती करोगी ताकि पैसा दो पैसा ज़्यादा न चला जाये तो इसके बदले में अल्लाह तआ़ला के यहाँ से भी गिनकर मिलने लगेगा। या अगर बहुत होगा तो उसकी बरकत ख़त्म कर दी जायेगी, बे-बरकती की वजह से बहुत ज़्यादा माल ऐसा पट हो जायेगा जैसे दो-चार पैसे होते हैं।

बाज़े हज़रात ने कहा है कि "अल्लाह के यहाँ से भी गिनकर मिलने लगेगा" का मतलब यह है कि अगर तुम ग़रीबों पर ख़र्च करते वक़्त यह ख़्याल करोगी कि कहीं ज़्यादा तो नहीं चला गया तो ऐसी सूरत में अल्लाह तआ़ला अपने दिये हुए माल का हिसाब लेते वक़्त सख़्ती फ़रमायेंगे और छान-बीन के साथ हिसाब लेंगे। फिर उस वक़्त कहाँ ठिकाना होगा। अल्लाह ने तुम्हें दिया है तुम उसकी मख़्लूक़ पर ख़र्च करो। क़ुरआन शरीफ़ में है:

तर्जुमाः अल्लाह की मख़्लूक़ के साथ अच्छा सुलूक करो जैसे अल्लाह तआ़ला ने तुम्हारे साथ एहसान किया है। (सूरः क़सस आयत 27)

तीसरीः यह नसीहत फ़रमाई कि जमा करके न रखना वरना अल्लाह तआ़ला भी अपने ग़ैब के ख़ज़ाने से तुम्हें न नवाज़ेंगे और अपनी तरफ़ से देने में कमी फ़रमा देंगे। बात यह है कि अल्लाह की मख़्लूक़ पर ख़र्च करने से अल्लाह के यहाँ से बहुत मिलता है और रोज़ी में बरकत और तरक़्क़ी होती है। और अगर थोड़ा हो तो उसमें बरकत बहुत होती है।

जिन लोगों को जमा करने का ज़ौक़ होता है अपनी ज़रूरतों को भी दबाते रहते हैं, बच्चों पर ख़र्च करने में कमी करते हैं, फिर दूसरे मोहताजों

को देने का सवाल ही क्या है? ऐसे लोग वे फ़राइज़ भी अदा नहीं करते जो माल से मुताल्लिक़ हैं। ज़कात, सदक़ा-ए-फ़ित्र, क़ुरबानी और बन्दों के वाजिब हुक़ूक़, माँ-बाप के ख़र्चों की तरफ़ बिलकुल ध्यान नहीं देते जिसकी सज़ा आख़िरत में बहुत बड़ी है। क़ुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमाः वह आग एसी दहकती हुई है जो खाल उतार देगी। वह उस शख़्स को बुलायेगी जिसने पीठ फेरी होगी और बेरुख़ी की होगी, और जमा किया होगा, फिर उसको उठा-उठाकर रखा होगा।

(सूरः मआरिज आयत 15-18)

चौथीः फ़रमाया कि थोड़ा-बहुत जो हो सके अल्लाह की राह में ख़र्च करती रहो। लफ़्ज़ "जो कुछ हो सके" बहुत आम है और हर अमीर-ग़रीब इसपर अमल कर सकता है। दर हक़ीक़त अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करने का ताल्लुक़ आख़िरत की मुहब्बत से है, मालदारी से नहीं है। ग़रीब भी ख़र्च कर सकता है मगर अपनी हिम्मत और हैसियत के मुताबिक़ ख़र्च करेगा, और अमीर भी ख़र्च कर सकता है वह अपनी हैसियत के मुताबिक़ पैसा उठायेगा। दुनियावी ज़रूरतों में भी तो सब ही ख़र्च करते हैं, आख़िरत की फ़िक्र हो तो उसमें भी अमीर-ग़रीब पैसा लगाये। हदीस की शरह लिखने वाले आलिमों ने बताया है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अन्हा से यह लफ़्ज़ कि "थोड़ा-बहुत जो हो सके ख़र्च करो" इसलिये फ़रमाया कि उस ज़माने में ग़ुरबत की हालत में थीं, और यह बात भी है कि शौहर के माल में से आम तौर पर थोड़ा-बहुत ही ख़र्च करने की इजाज़त होती है।

ईद के मौक़े पर सहाबी औरतों का अपने-अपने ज़ेवरों में से सदक़ा करने का वाक़िआ

हदीसः (37) हज़रत अब्दुर्रहमान बिन आबिस का बयान है कि हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से किसी ने पूछा क्या आप हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ ईद के मौक़े पर हाज़िर रहे हैं? उन्होंने जवाब दिया कि हाँ मैं आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ ईद में मौजूद था। आपने ईद की नमाज़ अदा फ़रमाई उसके बाद ख़ुतबा दिया, फिर औरतों के पास तशरीफ़ लाये और उनको नसीहत फ़रमाई और (आख़िरत की

तो उसकी ज़कात औरत अदा करे।

मसलाः जो ज़ेवर शौहर की मिल्कियत है उसे शौहर की इजाज़त के बिना सदक़ा करना जायज़ नहीं।

मसलाः नाबालिग बच्ची के लिये जो ज़ेवर बनाया गया हो अगर बच्ची ही की मिल्कियत करार दे दी है तो उसपर ज़कात नहीं, और अगर वह सिर्फ़ पहनती है और मालिक माँ या बाप या और कोई दूसरा 'वली' (अभिभावक) है तो उसपर ज़कात फ़र्ज़ है, इस फ़र्क़ को ख़ूब समझ लेना चाहिये।

माँ-बाप के साथ हमदर्दी और अच्छा सुलूक करने का हुक्म

हदीसः (38) हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अन्हा का बयान है कि मेरी वालिदा (माता) उस ज़माने में मदीना मुनव्वरा आईं जबकि हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मक्का के क़ुरैश से मुआहदा कर रखा था, उस वक़्त तक वह मुसलमान न हुई थीं बल्कि मुश्रिक थीं। मैंने अर्ज़ किया ऐ अल्लाह के रसूल! मेरी वालिदा आई हैं जो मुझसे मिलने की उम्मीदवार हैं, क्या मैं उनसे अच्छा बर्ताव और हमदर्दी करूँ (और उनको अपनी हैसियत व हिम्मत के मुताबिक़ कुछ दे दूँ)? आपने फ़रमाया हाँ उनके साथ हमदर्दी और अच्छा सुलूक करो। (बुख़ारी व मुस्लिम)

तशरीहः हज़रत असमा और उनके वालिद हज़रत अबू बक्र रज़ियल्लाहु अन्हुमा तो बहुत पहले मुसलमान हो गये थे बल्कि हज़रत अबू बक्र रज़ियल्लाहु अन्हु तो बालिग मर्दों में सबसे पहले मुसलमान हैं, लेकिन हज़रत असमा की वालिदा उस वक़्त तक मुसलमान न हुई थीं जिस वक़्त का यह क़िस्सा है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मक्का के काफ़िरों के तकलीफ़ पहुँचाने से तंग आकर अपने असल वतन और बाप दादाओं के देश यानी मक्का मुअज़्ज़मा को छोड़कर मदीना मुनव्वरा तशरीफ़ ले गये जिसको हिजरत कहते हैं। काफ़िरों ने वहाँ भी चैन न लेने दिया और लड़ाइयाँ लड़ते रहे, जिसके नतीजे में जंगे बदर और जंगे उहुद हुईं। इन दोनों जंगों के क़िस्से मशहूर हैं और इस्लामी तारीख़ में इनकी बड़ी अहमियत है। जब मुसलमानों ने काफ़िरों के मुक़ाबले में जवाबी कार्रवाई की तो काफ़िरों के दाँत खट्टे कर दिये और उनको लेने के देने पड़ गये। अगरचे मुसलमान उस ज़माने में बहुत ही कम थे और काफ़िरों की तायदाद बहुत ज़्यादा थी मगर मुसलमानों

की हिम्मत बहुत ज़्यादा और ईमान मज़बूत पक्का था, अल्लाह के लिये मरने से मुहब्बत करते थे, इसलिये काफ़िर लोग उनको नीचा न दिखा सके और खुद मजबूर होकर दस साल के लिये ख़ास-ख़ास शर्तों पर सुलह करने पर तैयार हो गये। यह सुलह सन् सात (7) हिजरी में हुई। उन शर्तों में यह भी तय हुआ था कि दोनों फ़रीक़ों में से कोई फरीक एक-दूसरे पर हमला न करेगा। चूँकि यह सुलह हुदैबिया के स्थान में हुई इसलिये "सुलह हुदैबिया" के नाम से मशहूर है। सुलह हो जाने के बाद दोनों फ़रीक़ों को अमन मिल जाने के सबब आपस में मिलना-जुलना और एक-दूसरे के पास आना-जाना शुरू हुआ। मज़हब के लिहाज़ से अगरचे दुश्मनी थी मगर दोनों फ़रीक़ों के आपस में ख़ून के रिश्ते थे जिनकी वजह से तबई तौर पर मुलाक़ातों को जी चाहता था। हाल यह था कि बेटा काफ़िर है तो बाप मुसलमान, और बाप काफ़िर है तो बेटा मुसलमान, माँ काफ़िर बेटी मोमिन, एक भाई हक़ दीन पर दूसरा शिर्क के दीन पर, एक बुतों का पुजारी दूसरा मालिके हक़ीक़ी का इबादत करने वाला। जो मुसलमान थे सारा धन मक्का में छोड़कर, रिश्तेदारी के तक़ाज़ों को पीठ पीछे डालकर मदीना मुनव्वरा में आकर बस गये थे क्योंकि उनके दिल में अल्लाह बस गया था।

सुलह हुदैबिया के ज़माने में जब अमन हुआ और मुलाक़ात का मौक़ा निकला तो बाज़ लोगों ने अपने अज़ीज़ों और रिश्तेदारों से मिलने का इरादा किया। उस ज़माने में हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अन्हा की वालिदा मक्का से मदीने में आईं। हदीस में "मक्का के क़ुरैश से मुआहदा कर रखा था" का यही मतलब है। अब तक मुसलमान न हुई थीं और चूँकि ज़रूरतमन्द थीं इसलिये उनको ख़्वाहिश थी कि बेटी से कुछ मिले, लेकिन बेटी अब सिर्फ़ बेटी न थी बल्कि हक़ की मतवाली और ईमान की रखवाली थी। सोचा कि माँ अगरचे माँ है मगर है तो मुश्रिक, इसपर ख़र्च करना अल्लाह की रिज़ा के ख़िलाफ़ तो नहीं? दिल में खटक हुई, नबी पाक की ख़िदमत में हाज़िरी दी और अर्ज़ किया ऐ अल्लाह के रसूल! मेरी वालिदा आयी हैं, उनकी तमन्ना है कि मैं उनकी माली इमदाद करूँ। इस बारे में जो कुछ इरशाद हो अमल करूँ। नबी-ए-पाक सल्ल० ने फ़रमाया कि उनकी मदद करो और 'सिला रहमी' (यानी रिश्तेदारी की वजह से अच्छे सुलूक) का बर्ताव करो।

दर हक़ीक़त इस्लाम अ़दल व इन्साफ़ का मज़हब है। कुफ़्र की वजह से जो मज़हबी दुश्मनी हो उसके होते हुए माँ-बाप की ख़िदमत और माली इमदाद का भी सबक़ देता है। माँ-बाप के कहने से कुफ़्र व शिर्क इख़्तियार करना या कोई दूसरा बड़ा गुनाह करने का तो इख़्तियार नहीं है मगर उनकी ख़िदमत करना और ज़रूरतमन्द हों तो उनपर ख़र्च करना ज़रूरी है अगरचे माँ-बाप काफ़िर हों। कुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमा: अगर वे दोनों (माँ-बाप) तुझे मजबूर करें इस बात पर कि तू मेरे साथ उन चीज़ों को शरीक करे जिनका तुझे इल्म नहीं तो उनकी फ़रमाँबरदारी न करना और उनके साथ दुनिया में अच्छे तरीक़े से गुज़ारा करना, और उसकी राह पर चलना जो मेरी तरफ़ रुख़ करे।

(सूर: लुक़मान आयत 15)

माँ-बाप का बड़ा हक़ है, मगर आजकल के लड़के और लड़कियाँ ऐसे हो गये हैं कि शादी होते ही माँ-बाप से इस तरह ताल्लुक़ ख़त्म कर लेते हैं कि जैसे जान-पहचान ही न थी। अल्लाह तआ़ला हिदायत दे।

अपनी औलाद पर ख़र्च करने का सवाब

हदीस: (39) हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा का बयान है कि मैंने अ़र्ज़ किया ऐ अल्लाह के रसूल! क्या मुझे सवाब मिलेगा अगर मैं (अपने पहले शौहर) अबू सलमा रज़ियल्लाहु अ़न्हु के बच्चों पर ख़र्च करूँ कि वह तो मेरी ही औलाद है। (क्या अपनी औलाद पर भी ख़र्च करने से अज्र व सवाब मिलता है)। नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि उनपर ख़र्च करती रहो तुमको उनपर ख़र्च करने का अज्र मिलेगा। (मिश्कात, बुख़ारी)

तशरीह: हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा भी हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पाक बीवी हैं। उनकी रिवायत की हुई सैकड़ों हदीसें किताबों में मिलती हैं। उन्होंने भी दीन का इल्म ख़ूब फैलाया। उनका नाम हिन्दा था। उनके पहले शौहर अबू सलमा रज़ियल्लाहु अ़न्हु थे। दोनों मियाँ-बीवी हिजरत से पहले मक्का मुअ़ज़्ज़मा ही में मुसलमान हो गये थे। इस्लाम की राह में दोनों ने बहुत तकलीफ़ें उठाईं। पहले दोनों ने इस्लाम की ख़ातिर 'हबशा'' को हिजरत की, बाद में मदीना मुनव्वरा को हिजरत की, लेकिन इस बार दोनों एक साथ हिजरत न कर सके। उस वक़्त मक्का में

काफ़िरों का ज़ोर था। जब दोनों मियाँ-बीवी हिजरत के लिये निकले तो हज़रत उम्मे सलमा को मायके वालों ने जाने न दिया। उसके एक साल बाद वह हिजरत कर सकीं। उनका एक बच्चा सलमा नाम का था। उसी की वजह से उनको उम्मे सलमा (यानी सलमा की माँ) और बच्चे के बाप को अबू सलमा (सलमा का बाप) कहते थे। अ़रब में इसका बहुत दस्तूर था। इसको 'कुन्नियत' कहते हैं। कई बार असल नाम भूल-भुलैयाँ हो जाता था और कुन्नियत ही से आदमी को जानते थे। सन् चार (4) हिजरी में जब उनके शौहर अबू सलमा रज़ियल्लाहु अ़न्हु वफ़ात पा गये तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इद्दत गुज़र जाने के बाद उनसे निकाह फ़रमा लिया। जब यह आपके के घर में आई तो पहले शौहर के बच्चे भी साथ आ गये। नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनकी परवरिश फ़रमाई। हज़रत उम्मे सलमा भी अपने ज़ाती माल में से उन बच्चों पर ख़र्च करती थीं। उनको ख़्याल हुआ कि मैं जो उनपर ख़र्च करती हूँ तो गोया औलाद का हक़ अदा करती हूँ इसमें शायद सवाब न हो। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से इस बारे में सवाल किया तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया तुम ख़र्च करती रहो ज़रूर सवाब मिलेगा, क्योंकि औलाद पर ख़र्च करना भी सवाब है।

बात यह है कि अल्लाह तआ़ला बड़े मेहरबान हैं। हलाल माल मुसलमान मर्द व औ़रत चाहे अपनी ज़ात पर ख़र्च करे चाहे औलाद पर, चाहे माँ-बाप पर चाहे दूसरे रिश्तेदारों पर, चाहे दूसरे पड़ोसियों और मोहताजों पर उसके ख़र्च करने में बड़ा सवाब मिलता है। अल्लाहु अकबर! अपनों ही पर ख़र्च करो और सवाब भी पाओ। अल्लाह तआ़ला का कितना बड़ा करम है। कुरआन पाक में इरशाद है:

तर्जुमा: सो जो शख़्स अपने रब पर ईमान ले आयेगा तो उसको न किसी कमी का अन्देशा होगा और न ज़्यादती का। (सूरः जिन्न आयत 13)

हज़रत आ़यशा ने एक खजूर सदके में दे दी

हदीसः (40) हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा का बयान है कि एक औ़रत मेरे पास आई जिसके साथ उसकी दो बच्चियाँ थीं। उसने मुझसे सवाल किया। मेरे पास एक खजूर के सिवा कुछ न था। मैंने वह खजूर ही उसको दे

दी। उसने खजूर के दो टुकड़े करके दोनों बच्चियों को एक-एक टुकड़ा दे दिया और ख़ुद ज़रा भी कुछ न खाया। उसके बाद जैसे ही वह निकली रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम घर में तशरीफ़ ले आये। मैंने आपको पूरा क़िस्सा सुनाया। आपने फ़रमाया कि जो शख़्स (मर्द व औरत) लड़कियों (की देखभाल और पालन-पोषण) के साथ मुब्तला किया गया (यानी उनकी ख़िदमत और परवरिश उसके ज़िम्मे पड़ गयी) और फिर उसने उनके साथ अच्छा सुलूक किया तो ये लड़कियाँ दोज़ख़ की आग से बचाने के लिये उसके वास्ते आड़ बन जायेंगी। (मिश्कात, बुख़ारी व मुस्लिम)

तशरीहः हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा के पास एक औरत सवाल करने आई। एक खजूर के सिवा कुछ मौजूद न था। उन्होंने एक खजूर ही दे दी, कम-ज़्यादा का ख़्याल न किया। दर हक़ीक़त इख़्लास के साथ दिया जाये तो एक खजूर और एक पैसा भी बहुत है। क़ुरआन शरीफ़ में फ़रमायाः

तर्जुमाः जो कुछ भी अपने लिये पहले से भेज दोगे उसे अल्लाह के पास पा लोगे। (सूरः मुज़्ज़म्मिल आयत 20)

एक हदीस में है कि सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि खजूर के बराबर भी हलाल कमाई से जो शख़्स सदक़ा दे दे तो अल्लाह तआला उसको बड़ी क़द्र के साथ कबूल फ़रमाते हैं। फिर जिसने सदक़ा दिया है उसके लिये उस सदक़े को बढ़ाते रहते हैं यहाँ तक कि वह पहाड़ के बराबर हो जाता है। (बुख़ारी व मुस्लिम)

बन्दे ने दिया खजूर के बराबर और ख़ुदा रहीम व करीम ने इनायत फ़रमाया पहाड़ के बराबर। ऐसा दाता अल्लाह ही है, सदक़े से कभी पीछे न रहो। इससे ज़रूरतमन्द की ज़रूरत भी पूरी होती है और सदक़ा करने वाले को सवाब भी मिलता है। कितना सवाब मिलता है इसका अन्दाज़ा अभी मालूम हुआ।

लड़कियों की परवरिश की फ़ज़ीलत

हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा की इस हदीस में जहाँ सदक़े का बयान है वहीं लड़कियों की परवरिश की भी फ़ज़ीलत और बड़ाई ज़िक्र की गई है। लड़की कमज़ोर वर्ग है और इससे कमाकर देने की उम्मीदें भी जुड़ी हुई नहीं होती हैं। इसलिये लड़कियाँ बहुत-से ख़ानदानों में ज़ुल्म व सितम भरी ज़िन्दगी

गुज़ारती हैं। उनके वाजिब हुक़ूक़ भी ज़ाया कर दिये जाते हैं कहाँ यह कि उनके साथ बेहतर सुलूक और अच्छा बर्ताव किया जाये। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने लड़कियों की परवरिश करने और ख़ैर-ख़बर रखने वाले को ख़ुशख़बरी (शुभ-सूचना) सुनाई कि ऐसा शख़्स दोज़ख़ से महफ़ूज़ रहेगा और लड़कियों की यह ख़िदमत उसके लिये दोज़ख़ से बचाने के लिये आड़ बन जायेगी।

अपनी लड़की हो या किसी दूसरे मुसलमान की यतीम बच्ची हो, उन सबकी परवरिश की यही फ़ज़ीलत है। बहुत-सी औरतें सौतेली लड़कियों पर ज़ुल्म करती हैं जिसका निकाह होने में किसी वजह से देर हो, और बाज़े मर्द नई बीवी की वजह से पहली बीवी की औलाद पर ज़ुल्म करते हैं, ऐसे लोगों को इस हदीस से सबक़ हासिल करना ज़रूरी है।

हज़रत सुराक़ा बिन मालिक रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तुम्हें सबसे अफ़ज़ल सदक़ा न बता दूँ? फिर ख़ुद ही जवाब दिया कि सबसे अफ़ज़ल सदक़ा यह है कि तुम अपनी लड़की पर ख़र्च करो जो तलाक़ की वजह से या बेवा (विधवा) होकर तुम्हारे पास (शौहर के घर से) वापस आ गयी और तुम्हारे अ़लावा कोई उसके लिये कमाई करने वाला नहीं है।

एक और हदीस में नबी पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिसने तीन लड़कियों या तीन बहनों के ख़र्चे बरदाश्त किये और उनको अदब सिखाया और रहम और शफ़क़त का बर्ताव किया यहाँ तक कि वे उसके ख़र्च से बेनियाज़ हो गईं (यानी उनको उसके ख़र्च देने की ज़रूरत न रही) तो अल्लाह तआ़ला उसके लिये जन्नत वाजिब फ़रमा देंगे। एक शख़्स ने अ़र्ज़ किया ऐ अल्लाह के रसूल! अगर दो लड़कियाँ या दो बहनें हों जिनकी परवरिश की हो तो इस बारे में क्या हुक्म है? फ़रमाया उसके लिये भी यही फ़ज़ीलत है। रिवायत करने वाले कहते हैं कि अगर एक लड़की के बारे में सवाल किया जाता तो आप एक के लिये भी यही फ़ज़ीलत बताते। (मिश्कात)

रिश्तेदारों के साथ अच्छे बर्ताव की फ़ज़ीलत

हदीसः (41) हज़रत मैमूना रज़ियल्लाहु अ़न्हा फ़रमाती हैं कि मैंने एक बाँदी नबी पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़माने में आज़ाद कर दी,

फिर इसका ज़िक्र आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से किया, आपने फ़रमाया (आज़ाद करने के बजाय) अगर अपने मामूँ को दे देती तो यह तेरे लिये ज़्यादा अज्र व सवाब का सबब होता। (मिश्कात शरीफ़)

तशरीहः हज़रत मैमूना रज़ियल्लाहु अ़न्हा 'उम्मुल मोमिनीन' हैं और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पाक बीवी हैं। उनका पहला नाम बर्रह था। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बदल कर मैमूना रख दिया। इनके अ़लावा और भी बाज़ सहाबी औ़रतों का नाम बर्रह था आपने बदल कर किसी का नाम ज़ैनब और किसी का जवैरिया रख दिया। लफ़्ज़ 'बर्रह' का तर्जुमा है- "नेक औ़रत" यह नाम आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इसलिये पसन्द न था कि इसमें बड़ाई और अपनी तारीफ़ निकलती है। जब किसी ने दरियाफ़्त किया कि कौन हो? और उसने जवाब दिया कि 'बर्रह' यानी नेक हूँ, तो इसका मतलब यह निकला कि अपने नेक होने का दावा कर दिया। एक बार एक औ़रत का यही नाम बदलते हुए आपने फ़रमाया किः

"अपनी पाकबाज़ी का दावा न करो। अल्लाह तआ़ला को ख़ूब मालूम है कि नेक कौन है।" (मिश्कात शरीफ़, बाबुल असामी)

हज़रत मैमूना रज़ियल्लाहु अ़न्हा की रिवायत की हुई बहुत-सी हदीसें हदीस की किताबों में मिलती हैं। ऊपर जो हदीस लिखी है उसका ख़ुलासा यह है कि हज़रत मैमूना रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने एक बाँदी आज़ाद कर दी थी। चूँकि गुलाम और बाँदी आज़ाद करने का बहुत बड़ा सवाब है इसलिये उन्होंने यह समझकर कि नेकी में मश्विरे की क्या ज़रूरत है? हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मश्विरा न किया। आज़ाद करने के बाद जब आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से तज़किरा किया तो आपने फ़रमाया कि तुम्हारे मामूँ ज़रूरतमन्द हैं, आज़ाद करने के बजाय हदिये के तौर पर उन लोगों को यह बाँदी दे देना बेहतर था जिससे सवाब ज़्यादा होता।

असल बात यह है कि नेकी करने के लिये भी बड़ी समझ की ज़रूरत है, मगर दीनी समझ होनी चाहिये जो ख़ुदा के नेक बन्दों और दीन पर चलने वालों और दीनी किताबों से हासिल होती है। अगर इनसान में दीनी समझ हो तो ज़्यादा से ज़्यादा सवाब कमा सकता है। शैतान की यह कोशिश होती है कि कोई मुसलमान मर्द व औ़रत नेकी न करने पाये, लेकिन अगर उसने हिम्मत बाँध ही ली और नेक काम करना तय ही कर लिया तो अब शैतान

की कोशिश यह होगी कि उसकी नेकी कमज़ोर और घटिया क़िस्म की हो। कहीं नीयत ख़राब कर देता है, कहीं किसी के साथ अच्छा सुलूक करने के बाद एहसान जताने पर उभार देता है, और भी शैतान के बहुत-से दाव-पैच हैं। अल्लाह तआ़ला हम सबको महफ़ूज़ रखे।

रिश्तेदारों में ख़र्च करने का दोहरा सवाब

इस हदीस से मालूम हुआ कि अपने अ़ज़ीज़ों और क़रीबी लोगों की ज़रूरतों का ख़्याल रखना और उनको देना-दिलाना बहुत सवाब की बात है। बहुत-से लोग सदक़ा और ख़ैरात के नाम से ग़रीबों को तो बहुत कुछ देते हैं, क्योंकि उसमें नाम भी होता है। दूसरे लोग सवाल करने आ जाते हैं और अपने लोग ग़ैरत और आबरू की वजह से सवाल नहीं करते लिहाज़ा उनकी हाजतें और ज़रूरतें रुकी रहती हैं हालाँकि अपने अ़ज़ीज़ों (रिश्तेदारों) पर ख़र्च करने से दो सवाब होते हैं- एक सदक़ा करने का, दूसरा अ़ज़ीज़ों की ख़बर लेने और ख़िदमत करने का। चुनाँचे नबी पाक का इरशाद है:

"मिस्कीन को सदक़ा देना सिर्फ़ एक सदक़ा (ही) है और रिश्तेदार पर सदक़ा करने में दोहरा सवाब है, क्योंकि यह सदक़ा भी है और रिश्तेदारी के हुक़ूक़ की देखभाल भी।" (मिश्कात शरीफ़)

यहाँ पहुँचकर यह बात बता देना बहुत ज़रूरी है कि सदक़े को सदक़ा व ख़ैरात बताकर देना ज़रूरी नहीं है। अगर अपने किसी अ़ज़ीज़ (रिश्तेदार) को सदक़े के नाम से कुछ देंगे तो वह न लेगा, और उसका दिल भी बुरा होगा, इसलिये हदिये के नाम से दीजिये, बल्कि हदिये का लफ़्ज़ बोलना भी ज़रूरी नहीं, सिर्फ़ यह कह दीजिये कि यह कुछ पैसे हैं ख़र्च कर लेना, या कपड़े बना दीजिये, या और किसी तरह से उनकी जायज़ ज़रूरत में ख़र्च कर दीजिये। ज़कात की रक़म का भी यह मसला है कि अपने अ़ज़ीज़ों को देने से दोहरा सवाब होता है। अलबत्ता अपनी औलाद और औलाद की औलाद को जहाँ तक सिलसिला चले, और माँ-बाप और दादा-परदादा, नाना-परनाना, दादी-परदादी, नानी-परनानी को ज़कात देने से ज़कात अदा न होगी। और शौहर व बीवी भी एक-दूसरे को अपनी ज़कात नहीं दे सकते। और दूसरे अ़ज़ीज़ों (रिश्तेदारों) जैसे बहनों, भाइयों, भतीजों, भान्जों, भान्जियों और फूफी व ख़ाला व चचा व सास ससुर वग़ैरह को ज़कात दी जा सकती है। ज़कात

की अदायगी के लिये भी यह ज़रूरी नहीं है कि जिसे दी जाये उसे बता दिया जाये, बल्कि हदिया और क़र्ज़ बताकर भी दे सकते हैं, हाँ अपने दिल में ज़कात की नीयत कर लें और देख लें कि जिसको दे रहे हैं किसी एतिबार से वह 'साहिबे निसाब' नहीं और सैयद भी नहीं है।

यह भी समझ लेना चाहिये कि ज़कात तब अदा होगी जब ज़कात के हक़दार को ज़कात का माल देकर मालिक बना दिया जाये। अगर उसको न दिया और ऊपर-से-ऊपर उसका क़र्ज़ अदा कर दिया या फ़ीस अदा कर दी तो ज़कात अदा न होगी। हाँ माल ख़र्च करने का सवाब मिल जायेगा।

उम्मुल मोमिनीन हज़रत ज़ैनब रज़ि. दस्तकारी से पैसे हासिल करके सदक़ा करती थीं

हदीसः (42) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बाज़ी बीवियों ने अर्ज़ किया कि ऐ अल्लाह के रसूल! आपकी वफ़ात के बाद हम में से कौन-सी बीवी सबसे पहले आपसे जाकर मिलेगी। (यानी सबसे पहले किसकी वफ़ात होगी)। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया तुम में जिसके हाथ सबसे ज़्यादा लम्बे हैं (वह सबसे पहले इस दुनिया से रुख़्सत होगी, दरियाफ़्त करने वाली बीवियों ने इस बात का ज़ाहिरी मतलब समझा और) एक बाँस लेकर सबके हाथ नापने लगीं, परिणाम स्वरूप हज़रत सौदा रज़ियल्लाहु अन्हा के हाथ सबके हाथों से ज़्यादा लम्बे निकले (और यही समझ लिया गया कि सबसे पहले हज़रत सौदा रज़ियल्लाहु अन्हा की वफ़ात होगी, लेकिन हुआ यह कि सबसे पहले हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अन्हा ने वफ़ात पाई, लिहाज़ा) अब पता चला कि (सबसे पहले वफ़ात पाने वाली के हाथों के लम्बे होने का मतलब यह न था कि नापने में हाथ लम्बे होंगे बल्कि लम्बे हाथों का मक़सद ज़्यादा सदक़ा करना था। सबसे पहले हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अन्हा की वफ़ात हुई। वह सदक़ा करने को (दूसरी बीवियों के मुक़ाबले में ज़्यादा) पसन्द करती थीं।

तशरीहः हज़रत सौदा और हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अन्हुमा भी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बीवियों में से थीं। हज़रत सौदा रज़ियल्लाहु अन्हा से मक्का ही में हज़रत ख़दीजा रज़ियल्लाहु अन्हा की वफ़ात के बाद आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का निकाह हो गया था। दूसरी

बीवियों के मुक़ाबले में उनके हाथ लम्बे थे। हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अन्हा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की फूफीज़ाद बहन थीं। पहले उनका निकाह हज़रत ज़ैद बिन हारसा रज़ियल्लाहु अन्हु से हुआ था। आपस में निबाह न हुआ तो उन्होंने तलाक़ दे दी। उनकी तलाक़ और इद्दत के बाद अल्लाह पाक ने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अन्हा का निकाह कर दिया था। सूरः अहज़ाब में फ़रमायाः

तर्जुमाः फिर जब ज़ैद से उसका दिल भर गया तो हमने आप (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) से निकाह कर दिया। (सूरः अहज़ाब आयत 37)

इसी वजह से हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अन्हा दूसरी बीवियों के मुक़ाबले में फ़ख़्र के तौर पर फ़रमाया करती थीं कि तुम्हारा निकाह तुम्हारे सरपरस्तों और रिश्तेदारों ने किया और मेरा निकाह अल्लाह तआला ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से किया। उनसे सन् 5 हिजरी में आपका निकाह हुआ और आपकी वफ़ात के बाद सबसे पहले सन् 20 या 21 हिजरी में उनकी वफ़ात हुई। उनकी रिवायत की हुई हदीसें भी हदीस शरीफ़ की किताबों में मिलती हैं। हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने उनसे बाज़ रिवायतें बयान की हैं।

नोटः हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अन्हा के ये सब हालात 'अल इस्तीआब' और 'अल इसाबा' से लिये गये हैं।

हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अन्हा के बारे में हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने फ़रमायाः

''कोइ औरत दीनदारी और परहेज़गारी और ख़ुदा से डरने और सच्चाई और रिश्तेदारों से अच्छा सुलूक करने और सदक़ा करने में ज़ैनब रज़ि. से बढ़कर न थी। सदक़े के ज़रिये अल्लाह तआला की नज़दीकी हासिल करने के लिये ख़ूब मेहनत से माल हासिल करती थीं और इसमें उनसे बढ़कर कोई औरत न थी।'' (अल इस्तीआब)

इस ऊपर बयान हुई इबारत को ग़ौर से पढ़ो और देखो कि यह एक सौतन की गवाही है। इससे जहाँ हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अन्हा के दीनी कमालात ज़ाहिर हुए वहाँ हज़रत आयशा की सच्चाई बे-नफ़्सी भी मालूम हुई। अपनी सौतन के कमालात का इक़रार करना बहुत बड़ी बात है। आजकल की औरतें ज़रा सीने पर हाथ रखकर सोचें कि उनमें हक़ बात कहना और

बे-नफ़्सी कहाँ तक है, ख़ासकर अपनी सौतन के बारे में या जिससे कीना-कपट हो उसके बारे में क्या तारीफ़ का कोई कलिमा कह सकती हैं। हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अन्हा को सदका करने की हिर्स थी और इस हिर्स को पूरा करने के लिये दस्तकारी के ज़रिये माल हासिल करती थीं और उससे सदका दिया करती थीं। आजकल की औरतें तो सैकड़ों-हज़ारों की मालियत में से भी फूटी कौड़ी देने को तैयार नहीं। एक वह भी औरत ही थी जिसके पास पैसा न हुआ तो दस्तकारी से कमाकर सदका कर दिया। रज़ियल्लाहु अन्हा।

हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अन्हा की दूसरी सौतन उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा की गवाही भी सुन लो, वह फ़रमाती हैं:

"ज़ैनब नेक औरत थीं, पूरी-पूरी रात नमाज़ में खड़ी रहती थीं और ख़ूब अधिकता के साथ रोज़े रखती थीं और दस्तकार भी थीं। उससे माल हासिल करके सब सदका कर देती थीं। (अल इसाबा)

नबी करीम की पाक बीवियों का आपस में हाथ नापना कि किसके हाथ ज़्यादा लम्बे हैं

हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बीवियों नें जब पूछा कि हम में से आपके बाद सबसे पहले कौन आख़िरत को रवाना होगी? तो आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिसके हाथ सब में ज़्यादा लम्बे हैं इस दुनिया से रवाना होने में पहले उसी का नम्बर आएगा। यह बात बतौर निशानी और भविष्यवाणी के फ़रमांई थी। इस बात का ज़ाहिरी मतलब समझकर आपस में हाथ नापने लगीं। हाथ नापे तो हज़रत सौदा रज़ियल्लाहु अन्हा के हाथ सबसे ज़्यादा लम्बे निकले। फिर जब हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अन्हा की वफ़ात पहले हुई तो भेद खुला और हाथों की लम्बाई का मतलब समझ में आया।

बात यह है कि जो सख़ी (दानवीर) होता है हकीकत में उसी के हाथ लम्बे होते हैं जो ख़ैर-ख़ैरात के वक्त ज़रूरतमन्दों की तरफ़ बढ़ते हैं। एक हदीस में है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि बख़ील (कन्जूस) और सदका करने वाले की मिसाल ऐसी है जैसे दो शख़्स लोहे के कुर्ते यानी ज़िरहें पहने हुए हों (जिनको पहले ज़माने में लड़ाई में पहनकर जाते थे और लोहे के टुकड़ों से बनाई होती थी) और ये दोनों कुर्ते

इतने तंग हों कि हाथ उनके हंस्लियों और छातियों से चिपके हों। जब भी सदक़ा करने वाला सदक़ा करने लगता है तो वह लोहे का कुर्ता खुलता चला जाता है (और उसका हाथ बढ़ता चला जता है) और जब बख़ील सदक़ा करने का इरादा करता है तो उसका हाथ सुकड़ जाता है और लोहे के कुर्ते का हर कड़ा मज़बूती से अपनी जगह पर जाम हो जाता है। (बुख़ारी व मुस्लिम)

बीबियो! तुम सख़ी बनो। सदक़ा करने की आदत डालो। जो कुछ बचे आख़िरत के लिये भेजती रहो जब वहाँ जाओगी तो वहाँ उसे पा लोगी। जैसे कोई शख़्स प्रदेस में जाकर कमाई करता है और अपने घर मनी-आर्डर से रक़म भेजता रहता है। यह दुनिया प्रदेस है और आख़िरत हमारा देस है। जब कभी ज़रूरतमन्द के हाथ पर हम इख़्लास और नेक-नीयती के साथ कोई रुपया -पैसा रखते हैं तो अपने देस के लिये मनी-आर्डर करते हैं, ख़ूब समझ लो।

हज़रत ज़ैनब रज़ि. यतीमों और बेवाओं का ख़ास ख़्याल रखती थीं

हज़रत अ़ता का बयान है कि हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अ़न्हा का सालाना वज़ीफ़ा (वार्षिक पेंशन) बैतुलमाल (इस्लामी सरकारी ख़ज़ाने) से हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने 12 हज़ार दिर्हम मुक़र्रर किया था जिसे उन्होंने सिर्फ़ एक साल क़बूल किया और लेने के साथ ही अपने अ़ज़ीज़ों और ज़रूरतमन्दों में तक़सीम कर दिया। यह वाक़िआ सुनकर हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फिर से एक हज़ार की रक़म भेजी और फ़रमाया कि इसको अपनी ज़रूरतों के लिये रखना। हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने उसको भी तक़सीम फ़रमा दिया। मौत से पहले वसीयत फ़रमाई कि मैंने अपने लिये कफ़न तैयार किया है और एक कफ़न हज़रत उमर अपने पास से भेजेंगे लिहाज़ा एक कफ़न सदक़ा कर देना चुनाँचे उनकी बहन ने वह कफ़न सदक़ा कर दिया जो उन्होंने ख़ुद तैयार किया था। जब वफ़ात हो गयी तो हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने फ़रमाया:

"ज़ैनब दुनिया से इस तरह रुख़्सत हो गयी कि अच्छे अख़्लाक़ के सबब उसकी तारीफ़ की जाती है और इबादत गुज़ारी में रुख़्सत हुई और यतीमों और बेवाओं को घबराहट में डाल गयी क्योंकि उनपर ख़र्च करती थी।"

शौहर को कमाने का और बीवी को ख़र्च करने का सवाब मिलता है

हदीसः (43) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब औरत अपने (शौहर के) खाने में से ख़र्च करे और बिगाड़ का तरीक़ा इख़्तियार करने वाली न हो तो उसको ख़र्च करने की वजह से सवाब मिलेगा और शौहर को कमाने की वजह से सवाब मिलेगा। और जो ख़ज़ानची है जिसके पास रक़म और माल सुरक्षित रहता है अगरचे वह मालिक नहीं है मगर उस माल में से मालिक के हुक्म के मुताबिक़ जब अल्लाह की राह मे ख़र्च करेगा तो उसको भी उसी तरह से सवाब मिलता है (जैसे मालिक को मिला। ग़रज़ एक माल से तीन शख़्सों को सवाब मिल गया- कमाने वाला, उसकी बीवी जिसने सदक़ा किया और उसका ख़ज़ानची और कैशियर जिसने माल निकाल कर दिया) और एक की वजह से दूसरे के सवाब में कोई कमी न होगी, यानी सवाब बटकर नहीं मिलेगा बल्कि हर एक को अपने अमल का पूरा सवाब दिया जाएगा। (मिश्कात शरीफ़)

तशरीहः जो शख़्स कमाकर लाया है उसके माल से सदक़ा दिया जाये तो उसको सवाब होगा लेकिन उसकी बीवी जो उस माल में से सदक़ा देगी वह भी सवाब पायेगी। बहुत-सी औरतें तबीयत की कन्जूस होती हैं, अगर शौहर किसी ग़रीब को देना चाहता है तो बुरा मानती हैं और मुँह बनाती हैं। अगर उनके पास कुछ रखा हो और शौहर किसी को देने के लिये कहे तो बुरे दिल से निकाल कर देती हैं। मालूम होता है कि जैसे रुपये के साथ कलेजा निकला आ रहा है, भला ऐसा करके अपना सवाब खोने मे क्या फ़ायदा? बाज़ नेकबख़्त लोग किसी ज़रूरतमन्द का खाना मुक़र्रर करना चाहते हैं मगर बीवी आड़े आ जाती है। अगर शौहर ने मुक़र्रर कर ही दिया तो हर दिन खाना निकालते वक़्त झिकझिक करती हैं जिससे शौहर को भी तकलीफ़ होती है और खाना लेने वाले का भी दिल दुखता है और अपना सवाब भी खोती है।

हदीस शरीफ़ में शौहर के माल से औरत के सदक़ा-ख़ैरात करने का सवाब बताते हुए **"बिगाड़ की राह पर चलने वाली न हो"** का लफ़्ज़ बढ़ाया है। इस लफ़्ज़ का मतलब बहुत आम है जो बहुत-सी बातों को शामिल है।

जैसे यह कि शौहर की इजाज़त के बग़ैर उसके माल में से ख़र्च करती हो। इजाज़त के लिये साफ़ ज़बानी इजाज़त होना ज़रूरी नहीं है, अगर यह मालूम है कि शौहर ख़र्च करने पर दिल से राज़ी है तो यह भी इजाज़त के दर्जे में है। और यह भी बिगाड़ की राह है कि अपने रिश्तेदारों और अज़ीज़ों को नवाज़ती हो और शौहर के रिश्तेदार और क़रीबी हज़रात, माँ-बाप और आल-औलाद (ख़ासकर पहली बीवी के बच्चों को) ख़र्च से परेशान रखती हो। या जैसे सवाब समझकर बिद्अ़तों पर ख़र्च करती हो, या वह चीज़ ख़र्च करती हो जो मालियत के एतिबार से ज़्यादा है उसका ख़र्च करना शौहर को खल जाता हो। ज़्यादा माल के ख़र्च में साफ़ इजाज़त की ज़रूरत है। बहुत-सी औरतों को सदक़े का जोश होता है मगर मर्द की इजाज़त का ध्यान नहीं रखती हैं यह ग़लती है, हाँ अपना ज़ाती माल हो तो शौहर की इजाज़त की पाबन्दी नहीं मगर मश्विरा कर लेना उस सूरत में भी मुफ़ीद (लाभदायक) है क्योंकि मर्दों को समझ ज़्यादा होती है।

एक औरत ने अ़र्ज़ किया ऐ अल्लाह के रसूल! अपने बापों और बेटों और शौहरों के मालों में से क्या कुछ ख़र्च करना (यानी सदक़ा करना और हदिया लेना-देना) हमारे लिये हलाल है? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"हरी गीली चीज़ (उनकी इजाज़त के बग़ैर भी) खा लिया करो और हदिया दे दिया करो।"

क्योंकि उमूमन ऐसी चीज़ों में से ख़र्च करने की इजाज़त होती है, हाँ अगर साफ़ मना कर दें तो रुक जाना। हरी गीली चीज़ से वे चीज़ें मुराद हैं जिनके रखे रह जाने से ख़राब होने का अन्देशा हो जैसे शोरबा, सब्ज़ी बाज़े फल वग़ैरह।

माँगने वाले को ज़रूर देना चाहिए

हदीसः (44) हज़रत उम्मे बुजैद रज़ियल्लाहु अ़न्हा का बयान है कि मैंने रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अ़र्ज़ किया ऐ अल्लाह के रसूल! मेरे दरवाज़े पर मिस्कीन आ खड़ा होता है (उसे कुछ दिये बग़ैर वापस करने में शर्म आती है) और देने के लिये (कोई ख़ास क़ाबिले ज़िक्र) चीज़ घर में होती नहीं (तो उस सूरत में क्या करूँ)। फ़रमाया (जो कुछ हो सके) उसके

हाथ पर रख दो अगरचे (बकरी वग़ैरह का) जला हुआ खुर ही हो। (मिश्कात)

तशरीहः जैसे हदिया लेने-देने में नफ़्सानी तौर पर यह ख़्याल होता है कि ज़रा-सी चीज़ है किसी को क्या दें? और थोड़ी चीज़ हदिया देने को शर्म और ऐब समझा जाता है। इसी तरह सदका ख़ैरात करने में भी बहुत-से लोगों पर नफ़्सानियत सवार हो जाती है। ज़्यादा देने को होता नहीं, या ज़्यादा देने को दिल नहीं चाहता और थोड़ा देना शान के ख़िलाफ़ समझते हैं इसलिए सदका करने से महरूम रहते हैं। हज़रत उम्मे बुजैद रज़ियल्लाहु अन्हा ने यही सवाल किया कि कोई काबिले ज़िक्र चीज़ घर में देने को नहीं होती और साईल आ खड़ा होता है, उसको ख़ाली हाथ वापस करना ना-मुनासिब मालूम होता है, लिहाज़ा ऐसी सूरत में क्या किया जाए? नबी पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो कुछ हो उसको दे दो, थोड़े-बहुत का ख़्याल न करो, अगर कुछ भी न हो तो बकरी का जला हुआ खुर ही दे दो। यह बतौर मिसाल के फ़रमाया क्योंकि बकरी के पावों का आख़िरी हिस्सा जो ज़मीन पर लगता है उसमें न गोश्त होता है न कुछ और चीज़ खाने के मतलब की निकलती है, फिर जबकि वह जला हुआ हो तो बिलकुल ही किसी काम का नहीं। मतलब यह है कि ग़रीब की गुरबत का ख़्याल करो, उसे कुछ न कुछ ज़रूर दो, मामूली चीज़ हो तो वही दे दो, अपनी शान घटने और नाक कटने का ख़्याल करते हुए थोड़ी चीज़ को न रोको, बूँद-बूँद दरिया हो जाता है। रोज़ाना ज़रा-ज़रा-सा सदका करो तो आख़िरत में बहुत कुछ मिलेगा और यहाँ मिस्कीन की हाजत किसी दर्जे में पूरी हो जाएगी। बुज़ुर्गों ने बताया है कि जिस्मानी इबादतें जन्नत में दाख़िले का ज़रिया हैं और माली सदका व ख़ैरात दोज़ख़ से बचाने के लिए अक्सीर है। जो कुछ हो ख़र्च कर देना चाहिए। एक हदीस में इरशाद है कि "दोज़ख़ से बचो अगरचे आधी खजूर ही के ज़रिये हो"। (मिश्कात शरीफ़)

फ़ायदाः पेशेवर साईल (भिखारी और माँगने वाले) जो माँगते फिरते हैं वे उमूमन मालदार होते हैं, उनके बजाय उन ज़रूरतमन्दों को दो जो वाकई ग़रीब हों। असली मिस्कीनों और ग़रीबों की तलाश रखो और उनकी माली ख़िदमत करो।

सदके से आने वाली मुसीबत रुक जाती है

आने वाली मुसीबत भी सदके की वजह से रुक जाती है। रसूले अकरम

सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया हैः

"मुसीबत आने से पहले सदक़ा दे दो क्योंकि (सदक़ा दीवार की तरह आड़े आ जाता है और मुसीबत उसको फाँदकर नहीं आ सकती।" (मिश्कात)

रुपया-पैसा जो कुछ सदक़ा करें मुसीबत दूर करने के लिए बहुत ही फ़ायदे की चीज़ है।

जारी रहने वाले सदक़े का सवाब

हदीसः (45) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब इनसान मर जाता है तो उसके सब आमाल ख़त्म हो जाते हैं लेकिन तीन चीज़ों का नफ़ा पहुँचता रहता है-

(1) जारी रहने वाला सदक़ा।

(2) ऐसा इल्म जिससे लोग नफ़ा हासिल करते हैं।

(3) नेक औलाद जो उसके लिए दुआ करती है। (मिश्कात, मुस्लिम)

तशरीहः जब तक आदमी ज़िन्दा रहता है ख़ुद नेकियाँ कमाता है और अपने लिए आख़िरत में ज़ख़ीरा जमा करता रहता है, लेकिन जब मौत आ जाती है तो आमाल ख़त्म हो जाते हैं और सवाब जारी रहने का सिलसिला भी ख़त्म हो जाता है, अलबत्ता तीन चीज़ें ऐसी हैं जो उसके अ़मल का नतीजा हैं और उनका सवाब मौत के बाद भी जारी रहता है।

(1) **जारी रहने वाला सदक़ा** उसको कहते हैं जिसका नफ़ा वक़्ती तौर पर ख़त्म न हो जाए बल्कि उससे लोग फ़ायदा उठाते रहें और सदक़ा करने वाले को सवाब मिलता रहे। जैसे कोई मस्जिद बनवा दी, दीनी मदरसे की तामीर में हिस्सा लिया, किसी दारुल उलूम में तफ़सीर व हदीस और फ़िक़्ह व फ़तावा की किताबें वक़्फ़ कर दीं, कहीं कुआँ खुदवा दिया, मुसाफ़िर ख़ाना बनवा दिया, या कोई ऐसा काम कर दिया जिससे अ़वाम व ख़्वास को नफ़ा होता है। एक आदमी इस तरह के किसी काम पर पैसा ख़र्च करके जिनका ज़िक्र ऊपर हुआ क़ब्र में चला गया, लोग उसके सदक़ा व ख़ैरात से फ़ायदा उठा रहे हैं और उसके आमालनामे में बराबर सवाब लिखा जा रहा है और दर्जे बुलन्द हो रहे हैं। जहाँ तक हो सके ज़िन्दगी में ऐसा काम ज़रूर कर देना चाहिए।

(2) वह इल्म जिससे नफ़ा उठाया जाता हो। यह भी वह चीज़ है जिसका सवाब मौत के बाद जारी रहता है। किसी को कुरआन मजीद हिफ़्ज़ या नाज़रा पढ़ा दिया, किसी को नमाज़ सिखा दी, किसी को मौलवी बना दिया या कोई दीनी किताब लिख दी, या अपने पैसे से किसी दीनी किताब को शाया (प्रकाशित) कर दी, यह इल्मी 'सदक़ा जारिया' (यानी जारी रहने वाला सदक़ा) है। कुरआन पढ़ने वाला जब तक कुरआन मजीद पढ़ेगा या पढ़ाएगा फिर उसके शागिर्द और शागिर्दों के शागिर्द पढ़ाएँगे, मौलवी साहिब तफ़सीर व हदीस पढ़ाएँगे, मसला बताएँगे, लोग उनसे फ़ायदा उठायेंगे और आगे उनके शागिर्द और शागिर्दों के शागिर्द इल्म फैलाएँगे, जिसको नमाज़ सिखा दी वह नमाज़ पढ़ता रहेगा और दूसरों को सिखाएगा, तो उसका सवाब सदियों तक उस शख़्स को मिलता रहेगा जिसने दीनी इल्म को आगे बढ़ाया या आगे बढ़ाने का ज़रिया बन गया। और जितने लोग उसका ज़रिया और वास्ता बनते जाएँगे उन सब का सवाब मिलता रहेगा और किसी के सवाब में कमी न होगी।

(3) नेक औलाद जो दुआ करती हो उसकी दुआ का फ़ायदा भी माँ-बाप को पहुँचता रहता है। दुआ में तो कुछ जान-माल ख़र्च नहीं होता, वक़्त-वक़्त पर अगर माँ-बाप के लिए मग़फ़िरत और दरजों की बुलन्दी की दुआ कर दी जाए तो माँ-बाप को बहुत बड़ा नफ़ा पहुँचता रहेगा और औलाद का कुछ भी ख़र्च न होगा। औलाद की पैदाइश का ज़रिया बनना और उसको पालना-पोसना चूँकि माँ-बाप का अमल है और माँ-बाप की परवरिश के बाद औलाद दुआ के क़ाबिल हुई है इसलिए औलाद की दुआ को माँ-बाप का अमल शुमार कर लिया गया, बल्कि अगर औलाद को दीन का इल्म सिखाया और दीनी आमाल पर डाला, उसकी ज़िन्दगी इस्लामी ज़िन्दगी बनाई तो वह जो नेक अमल करेगा माँ-बाप को भी उसका सवाब मिलेगा, क्योंकि वे उसकी नेकियों का ज़रिया बने। फिर औलाद अपनी औलाद को नेक बनाएगी तो उसमें भी दादा-दादी और नाना-नानी की शिरकत (हिस्सेदारी) होगी।

पड़ोसियों को लेने-देने की फ़ज़ीलत

हदीसः (46) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मुसलमान औरतों से ख़िताब करके

फ़रमाया कि कोई पड़ोसन अपनी पड़ोसन के लिए किसी भी चीज़ (के लेने-देने) को हक़ीर न जाने अगरचे बकरी का खुर ही हो। (मिश्कात)

तशरीहः इस्लाम में पड़ोसी के बड़े हुकूक़ हैं जिनकी सुरक्षा बहुत ज़रूरी है। हज़रत रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि पड़ोसी के साथ अच्छी तरह मिलजुल कर रहने और उसके हुकूक़ की रियायत के बारे में मुझे जिब्राईल (अ़लैहिस्साम) ने इस क़द्र बार-बार तवज्जोह दिलाई जिससे मुझे यह गुमान हो गया कि (शायद) पड़ोसी को (दूसरे पड़ोसी के माल से) मीरास दिलाकर छोड़ेंगे। (बुख़ारी व मुस्लिम)

एक हदीस में इरशाद हैः

हदीसः एक साथ रहने-सहने वालों में सबसे बेहतर वह है जो अपने साथियों के लिए बेहतर हो, और पड़ोसियों में सबसे बेहतर वह है जो अपने पड़ोसियों के लिए सबसे बेहतर हो। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

मालूम हुआ कि इनसान के अच्छा-बुरा होने का मदार साथियों और पड़ोसियों के साथ अच्छा सुलूक करने न करने पर है, इनसान का अच्छे अख़्लाक़ वाला होना उसी वक़्त क़ाबिले तारीफ़ है जबकि हर वक़्त के साथ रहने वालों से अच्छी तरह पेश आता रहे, क्योंकि कभी-कभार जिससे मुलाक़ात हुई हो उससे मीठे-मुँह बात कर लेना और ज़बानी अलक़ाब व आदाब से पेश आ जाना कोई बड़ी बात नहीं है। जिनसे अक्सर वास्ता पड़ता हो, बल्कि थोड़ी-बहुत तकलीफ़ भी पहुँच जाती हो उनके साथ अच्छा बर्ताव करना कठिन काम है और इसी वजह से इसका दर्जा भी बहुत बड़ा है।

आजकल तो रिश्तेदारों और बहन-भाइयों में अच्छे तरीक़े के साथ रहने और बेहतर ताल्लुक़ात रखने का रिवाज नहीं रहा, कहाँ यह कि पड़ोसी से अच्छी तरह पेश आएँ। यह ईमानी ज़िन्दगी के अन्दर बहुत बड़ा 'ख़ला' (ख़ाली जगह) है। मोमिन बन्दे तो दुश्मन को भी खुश करने की कोशिश करते हैं। शैख़ सअ़दी रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं:

شنیدم کہ مردانِ راہِ خدا دلِ دشمناں ہم نہ کردند تنگ
ترا کے میسر شود ایں مقام کہ بادوستانت خلاف ست و جنگ

तर्जुमाः मैंने सुना है कि नेक लोग दुश्मनों का दिल भी नहीं दुखाते। तुझे

यह बात कहाँ हासिल हो सकती है इसलिए कि तू तो अपने दोस्तों से ही लड़ता-भिड़ता रहता है।

मर्दों से ज़्यादा औरतों में अख़्लाक़ की कमज़ोरी होती है और वे पास-पड़ोस की दूसरी औरतों के साथ निबाह करके रह सकती ही नहीं। पड़ोसनों में वह कीड़े डाले जाते हैं और ऐसी-ऐसी बुराइयाँ निकाले जाती हैं कि जिनकी क़ल्मी तसवीर खींचने से भी उंगलियाँ इनकार करती हैं। एक औरत का क़द छोटा है तो उसी पर ताना दिया जा रहा है। दूसरी का रंग काला है तो उसका नाम धरा जाता है। तीसरी ज़रा लंगाड़ा कर चलती है तो उसी की ग़ीबत की जा रही है। हालाँकि ये चीज़ें इनसान के अपने इख़्तियार से बाहर हैं जो पैदाइशी हैं, उनपर एतिराज़ करना ख़ुदा तआ़ला पर एतिराज़ करना है। खुलासा यह कि औरतों को ताल्लुक़ात अच्छे और मधुर रखने से ज़्यादा बिगाड़ने के ढंग आते हैं, उनके इस मिज़ाज को सामने रखते हुए हुज़ूर सल्ल० ने आपस में हदिये का लेन-देन रखने की तरग़ीब दी। हदिया लेना-देना बड़ी अच्छी आ़दत है। एक हदीस में इरशाद है: 'आपस में हदिया लिया दिया करो, क्योंकि वह कीनों को दूर करता है। (मिश्कात शरीफ़)

किसी का हदिया हक़ीर न जानो

इस बेहतरीन आ़दत को इख़्तियार करने में भी शैतान बहुत-सी बाधाएँ खड़ी कर देता है और ऐसी नफ़्सानियत की बातें समझाता है जो हदिया देने से रोक देती हैं। चुनाँचे बहुत-सी औरतों पर यह नफ़्सानियत सवार हो जाती है और कहती हैं कि ज़रा-सी चीज़ का क्या देना? किसी को कुछ दे तो ठिकाने की चीज़ तो दे, दो जलेबी क्या भेजें, कोई क्या कहेगा? इससे तो न भेजना ही बेहतर है।

इसी तरह हदिया क़बूल करने में भी शैतान छोटाई-बड़ाई का सवाल सुझा देता है। अगर किसी पड़ोसन ने मामूली चीज़ हदिये में भेज दी तो कहती हैं कि निगोड़ी ने क्या भेजा है, न अपनी हैसियत का ख़्याल किया न हमारी इ़ज़्ज़त का, भेजने में शर्म भी न आई। गोया भेजने का शुक्रिया तो दरकिनार तानों की बौछार शुरू हो जाती है और कई-कई दिन ग़ीबतें होती रहती हैं। अगर कई साल के बाद किसी बात पर अनबन हो गई तो यह बात भी दोहरा दी कि तूने क्या भेजा था, ज़रा-सी कढ़ी में एक फुल्की डाल कर।

क़ुरबान जाइये उस हकीम व मुआलिज (नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) के जिसको इस कायनात के पैदा करने वाले ने दिलों की बीमारियों से आगाह फ़रमाया और साथ ही उनके इलाज भी बताए। मुआलिज (इलाज करने वाले) ने दुखती रग पर हाथ रखा और अन्दर का चोर पकड़ा और फ़रमायाः "कोई पड़ोसन किसी पड़ोसन के लिए किसी चीज़ के हदिये को हक़ीर (मामूली और बेक़द्र) न जाने।"

अल्लाह-अल्लाह कैसा जामे जुमला (वाक्य) है। हदीस की शरह लिखने वाले आलिमों ने बताया है कि इस हदीस के अल्फ़ाज़ से दोनों तरह का मतलब निकल सकता है, देने वाली देते वक़्त कम न समझे, जो मयस्सर हो दे दे। और जिसके पास पहुँचे वह भी हक़ीर और कम न जाने चाहे कैसा ही कम और मामूली हदिया हो। मिसाल के तौर पर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अगर बकरी का खुर ही एक औरत दूसरी औरत के पास भेज सकती हो तो भेजने वाली कम समझकर रुक न जाए और दूसरी औरत उसके क़बूल करने को अपनी शान के ख़िलाफ़ न समझे। हर छोटा-बड़ा हदिया ख़ुशी से क़बूल करो और दिल व ज़बान से शुक्र अदा करो। भेजने वाली को दुआ दो, अल्लाह से उसके लिए बरकत की दुआ माँगो, और यह भी ख़्याल रखो कि हमको भी भेजना चाहिए। मौक़ा लगे तो ज़रूर भेजो और बहनों में बैठकर तज़किरा करो कि फ़लानी ने मुझे यह हदिया भेजा है ताकि उसका दिल ख़ुश हो। और इस हदीस का मतलब यह न समझना कि हदिया कम ही भेजा करें बल्कि ज़्यादा मयस्सर हो तो ज़्यादा भेजो और कम की वजह से यह न हो कि भेजो ही नहीं।

हदिया देने में कौनसे पड़ोसी को ज़्यादा तरजीह है

हदीसः (47) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि मैंने अर्ज़ किया ऐ अल्लाह के रसूल! मेरे दो पड़ोसी हैं उनमें से किसको हदिया दूँ? आपने इरशाद फ़रमाया दोनों में से जिसका दरवाज़ा तुम से ज़्यादा क़रीब हो।

(मिश्कात शरीफ़)

तशरीहः हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जब हदिया लेने-देने की तरग़ीब दी और इसको उलफ़त व मुहब्बत और आख़िरत में सवाब मिलने का ज़रिया बताया तो इस सिलसिले में बाज़ बातें दरियाफ़्त

करने के क़ाबिल सामने आ गईं, जिनमें से एक यह सवाल भी है जो ऊपर वाली हदीस में ज़िक्र हुआ है। हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने नबी करीम सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से दरियाफ़्त किया कि अगर मेरे दो पड़ोसी हों (यह मिसाल के तौर पर है) और मुझे कुछ हदिया देना हो, और दोनों को देने के लिए न हो तो किसको दूँ? मतलब यह है कि दोनों में कौन पहले है? और पहले किसका ख़्याल करूँ। आपने फ़रमाया जिसका दरवाज़ा सबके दरवाज़ों से ज़्यादा क़रीब हो उसको दो। इस हदीस से पड़ोसियों को हदिया देने का एक तरीक़ा भी मालूम हुआ और यह भी पता चला कि नेकी करने के लिए समझ चाहिए और उसके लिए इल्म की भी ज़रूरत है और होश की भी।

सदक़ा-ए-फ़ित्र के अहकाम

हदीसः (48) हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सदक़ा-ए-फ़ित्र को ज़रूरी क़रार दिया। (प्रति आदमी) एक **'साअ'** (एक साअ कुछ ऊपर साढ़े तीन सेर का होता था) खजूरें या उतनी ही मात्रा में **'जौ'** दिए जाएँ। गुलाम और आज़ाद, 'मुज़क्कर और मुअन्नस' (यानी मर्द और औरत) और हर छोटे-बड़े मुसलमान की तरफ़ से, और ईद की नमाज़ के लिए लोगों के जाने से पहले अदा करने का हुक्म फ़रमाया। (मिश्कात शरीफ़)

सदक़ा-ए-फ़ित्र किस पर वाजिब है

सदक़ा-ए-फ़ित्र उस शख़्स पर वाजिब है जिस पर ज़कात फ़र्ज़ है या साढ़े बावन तौला चाँदी या उसकी क़ीमत उसकी मिल्कियत में हो। या अगर सोना-चाँदी और नक़द रक़म न हो और ज़रूरत से फ़ालतू सामान मौजूद हो जिसकी क़ीमत साढ़े बावन तौला चाँदी की बन सकती हो तो उसपर भी सदक़ा-ए-फ़ित्र वाजिब है। ज़कात फ़र्ज़ होने के लिए यह ज़रूरी है कि **निसाब** के माल पर चाँद के हिसाब से एक साल गुज़र जाए, लेकिन सदक़ा-ए-फ़ित्र वाजिब होने के लिए यह शर्त नहीं है। अगर रमज़ान की तीस तारीख़ को किसी के पास माल आ गया जिस पर सदक़ा-ए-फ़ित्र वाजिब हो जाता है तो ईदुल-फ़ित्र की सुबह सादिक़ होते ही उसपर सदक़ा-ए-फ़ित्र वाजिब हो जाएगा।

सदक़ा-ए-फ़ित्र के फ़ायदे

सदक़ा-ए-फ़ित्र अदा करने से एक शरई हुक्म के अन्जाम देने का सवाब तो मिलता ही है उसके साथ दो और भी फ़ायदे हैं- **अव्वल** यह कि सदक़ा-ए-फ़ित्र रोज़ों का पाक साफ़ करने का ज़रिया है, रोज़े की हालत में जो फ़ुज़ूल बातें कीं और जो ख़राब और गन्दी बातें ज़बान से निकलीं सदक़ा-ए-फ़ित्र के ज़रिये रोज़े उन चीज़ों से पाक हो जाते हैं। **दूसरा** फ़ायदा यह है कि ईद के दिन ग़रीबों और मिस्कीनों की ख़ुराक का इन्तिज़ाम हो जाता है, और इसी लिए ईद की नमाज़ को जाने से पहले सदक़ा-ए-फ़ित्र अदा करने का हुक्म दिया गया है। देखो कितना सस्ता सौदा है कि सिर्फ़ दो सेर गेहूँ देने से तीस रोज़े पाक हो जाते हैं, यानी बेकार की और गन्दी बातों की रोज़े में जो मिलावट हो गई उसके असरात से रोज़े पाक हो जाते हैं।

गोया सदक़ा-ए-फ़ित्र अदा कर देने से रोज़ों की क़बूलियत की राह में कोई अटकाने वाली चीज़ बाक़ी नहीं रह जाती है। इसी लिए बाज़ बुज़ुर्गों ने फ़रमाया है कि अगर मसले की रू-से किसी पर सदक़ा-ए-फ़ित्र वाजिब न हो तब भी दे देना चाहिए। ख़र्च बहुत मामूली है और नफ़ा बहुत बड़ा है।

किसकी तरफ़ से सदक़ा-ए-फ़ित्र अदा किया जाए

सदक़ा-ए-फ़ित्र बालिग़ औरत पर अपनी तरफ़ से देना वाजिब है। शौहर के ज़िम्मे उसका सदक़ा-ए-फ़ित्र अदा करना ज़रूरी नहीं। और जो नाबालिग़ औलाद है उसकी तरफ़ से वालिद (बाप) पर सदक़ा-ए-फ़ित्र देना वाजिब है। बच्चों की माँ के ज़िम्मे बच्चों का सदक़ा-ए-फ़ित्र देना लाज़िम नही है। अगर बीवी कहे कि मेरी तरफ़ से अदा कर दो और शौहर बीवी की तरफ़ से अदा कर दे तो अदा हो जाएगा अगरचे उसके ज़िम्मे बीवी की तरफ़ से अदा करना लाज़िम नहीं है।

जब मुसलमान जिहाद किया करते थे तो उनके पास जो काफ़िर क़ैदी होकर आते थे उनको ग़ुलाम और बाँदी बना लिया जाता था, जिसकी मिल्कियत में ग़ुलाम या बाँदी होता उसके ऊपर ग़ुलाम या बाँदी की तरफ़ से भी सदक़ा-ए-फ़ित्र देना वाजिब होता था, आजकल कहीं अगर जंग होती है तो देश और मुल्क की लड़ाई होती है शरई जिहाद होता नहीं लिहाज़ा मुसलमान ग़ुलाम और बाँदी से महरूम हैं।

सदका-ए-फ़ित्र में क्या दिया जाए

हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सदका-ए-फ़ित्र देने के सिलसिले में दीनार व दिर्हम यानी सोने-चाँदी का सिक्का ज़िक्र नहीं फ़रमाया बल्कि जो चीज़ें घरों में आम तौर से खाई जाती हैं उन्हीं के ज़रिये सदका-ए-फ़ित्र की अदायगी बताई। ऊपर वाली हदीस में जिसका तर्जुमा अभी हुआ एक 'साअ़ खजूर' या एक 'साअ़ जौ' प्रति आदमी सदका-ए-फ़ित्र की अदायगी के लिए देने का ज़िक्र है। दूसरी हदीसों में एक 'साअ़ पनीर' या एक 'साअ़ ज़बीब' यानी किशमिश देने का भी ज़िक्र आया है। और बाज़ रिवायतों में एक साअ़ गेहूँ दो आदमियों की तरफ़ से बतौर सदका-ए-फ़ित्र देना भी आया है। हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अलैहि का यही मज़हब है। लिहाज़ा अगर सदका-ए- फ़ित्र में जौ दे तो कए साअ़ दे और गेहूँ दे तो आधा साअ दे।

हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़माने में जौ और गेहूँ वग़ैरह नाप कर फ़रोख़्त किया करते थे और इन चीज़ों को तौलने के बजाय नापने का रिवाज था। उस ज़माने में नापने का जो एक पैमाना था उसी हिसाब से हदीस शरीफ़ में सदका-ए-फ़ित्र की मिक़्दार (मात्रा) बताई है। एक साअ़ कुछ ऊपर साढ़े तीन सेर का होता था। हिन्दुस्तान के बुज़ुर्गों ने जब उसका हिसाब लगाया तो एक शख़्स का सदका-ए-फ़ित्र गेहूं के एतिबार से अस्सी के सेर से एक सेर साढ़े बारह छटाँक हुआ। आम तौर से किताबों में अवाम की रियायत से यही तौल वाली बात लिखी जाती है। अगर एक घर में मियाँ-बीवी और चन्द नाबालिग़ बच्चे हों मो मर्द पर अपनी तरफ़ से और हर नाबालिग़ औलाद की तरफ़ से सदका-ए-फ़ित्र में प्रति आदमी एक सेर साढ़े बारह छटाँक गेहूँ या उसका दुगना जौ या छुहारे या किशमिश या पनीर देना वाजिब है। बीवी की तरफ़ से सदका-ए-फ़ित्र देना वाजिब नहीं है और माँ जितनी भी मालदार है नाबालिग़ औलाद का सदका-ए-फ़ित्र उसको अदा करना वाजिब नहीं, यह सदका बाप पर वाजिब होता है।

सदका-ए-फ़ित्र की अदायगी का वक़्त

सदका-ए-फ़ित्र ईद के दिन की सुबह के निकलने पर वाजिब होता है। अगर कोई शख़्स उससे पहले मर जाए तो उसकी तरफ़ से सदका-ए-फ़ित्र

वाजिब नहीं।

मसलाः सदका-ए-फ़ित्र ईद से पहले अदा किया जा सकता है। अगर पहले अदा न किया तो ईद की नमाज़ के लिए जाने से पहले अदा कर दिया जाए। अगर किसी ने ईद की नमाज़ से पहले या बाद में न दिया तो उसके ज़िम्मे से ख़त्म न होगा, उसकी अदायगी बराबर ज़िम्मे रहेगी।

मसलाः जो बच्चा ईदुल-फ़ित्र की सुबह सादिक हो जाने के बाद पैदा हुआ हो उसकी तरफ़ से सदका-ए-फ़ित्र देना वाजिब नहीं।

नाबालिग़ के माल से सदका-ए-फ़ित्र

अगर किसी नाबालिग़ की मिल्कियत में ख़ुद अपना माल हो जिस पर सदका-ए-फ़ित्र वाजिब होता है तो उसका वारिस उसी के माल से उसका सदका-ए-फ़ित्र अदा करे। इस सूरत में अपने माल से देना वाजिब नहीं।

सवालः बच्चे की मिल्कियत में माल कहाँ से आएगा?

जवाबः इस तरह से आ सकता है कि किसी की मीरास से उसको माल पहुँच जाए या कोई शख़्स उसको कुछ माल दे दे।

जिसने रोज़े न रखे हों उसपर भी सदका-ए-फ़ित्र वाजिब है

अगर किसी बालिग़ मर्द व औरत ने किसी वजह से रोज़े न रखे हों तब भी सदका-ए-फ़ित्र का निसाब होने पर सदके की अदायगी वाजिब है।

सदका-ए-फ़ित्र में नकद कीमत या आटा वग़ैरह

सदका-ए-फ़ित्र में गेहूँ का आटा भी दिया जा सकता है, वज़न वही है जो ऊपर गुज़रा। और जौ का आटा भी दे सकते हैं, उसका वज़न भी वही है जो जौ का वज़न है।

मसलाः सदका-ए-फ़ित्र में जौ या गेहूँ की नकद कीमत भी दी जा सकती है, बल्कि उसका देना अफ़ज़ल है। अगर गेहूँ और जौ के अलावा किसी दूसरे अनाज से सदका-ए-फ़ित्र अदा करे जैसे चना, चावल, उडद, जवार और मकई वग़ैरह देना। चाहे तो इतनी मात्रा में दे कि उसकी कीमत एक सेर साढ़े बारह छटाँक गेहूँ या उससे दुगने जौ की कीमत के बराबर हो जाए।

सदका-ए-फ़ित्र की अदायगी में कुछ तफ़सील

मसलाः एक शख़्स का सदका-ए-फ़ित्र एक मोहताज को दे देना या

थोड़ा-थोड़ा करके कई मोहताजों को देना दोनों सूरतें जायज़ हैं। और यह भी जायज़ है कि चन्द आदमियों का सदक़ा-ए-फ़ित्र एक ही मोहताज को दे दिया जाए।

निसाब के मालिक को सदक़ा-ए-फ़ित्र देना जायज़ नहीं

जिस पर ज़कात खुद वाजिब हो या ज़कात वाजिब होने की मात्रा में उसके पास माल हो या ज़रूरत से फ़ालतू सामान हो जिसकी वजह से सदक़ा-ए-फ़ित्र वाजिब हो जाता है तो ऐसे शख़्स को सदक़ा-ए-फ़ित्र देना जायज़ नहीं। जिसकी हैसियत इससे कम हो शरीअ़त के नज़दीक उसे फ़क़ीर कहा जाता है, उसे ज़कात और सदक़ा-ए-फ़ित्र दे सकते हैं।

रिश्तेदारों को सदक़ा-ए-फ़ित्र देने में तफ़सील

अपनी औलाद को या माँ-बाप और नाना-नानी दादा-दादी को ज़कात और सदक़ा-ए-फ़ित्र नहीं दे सकते, अलबत्ता दूसरे रिश्तेदारों को जैसे भाई-बहन चचा मामूँ ख़ाला वग़ैरह को दे सकते हैं। शौहर बीवी को या बीवी शौहर को सदक़ा-ए-फ़ित्र दे तो अदायगी न होगी। और सय्यिदों को भी सदक़ा-ए-फ़ित्र देना जायज़ नहीं।

फ़ायदाः बहुत-से लोग पेशेवर माँगने वालों के ज़ाहिरी फटे-पुराने कपड़े देखकर या किसी औरत को बेवा (विधवा) पाकर ज़कात और सदक़ा-ए-फ़ित्र दे देते हैं, हालाँकि कई बार बेवा औरत के पास शरई निसाब के बराबर ज़ेवर होता है। इसी तरह रोज़ाना के माँगने वालों के पास अच्छी-ख़ासी मालियत होती है, हालाँकि जिसके पास निसाब के बराबर माल हो उसको देने से अदायगी नहीं होती। ज़कात और सदक़ा-ए-फ़ित्र की रक़म ख़ूब सोच-समझकर देना लाज़िम है।

रिश्तेदारों को देने से दोहरा सवाब होता है

जिन रिश्तेदारों को ज़कात और सदक़ा-ए-फ़ित्र देना जायज़ है उनको देने से दोहरा सवाब होता है क्योंकि उसमें **'सिला रहमी'** (रिश्तेदारी की वजह से अच्छा बर्ताव) भी हो जाती है।

नौकरों को सदक़ा-ए-फ़ित्र देना

अपने ग़रीब नौकरों को भी ज़कात और सदक़ा-ए-फ़ित्र दे सकते हैं मगर

उनकी तन्ख़्वाह में लगाना दुरुस्त नहीं।

बालिग़ औरत अगर निसाब की मालिक हो?

अगर बालिग़ औरत इस क़ाबिल है कि उसको सदक़ा-ए-फ़ित्र दिया जा सके तो उसे दे सकते हैं अगरचे उसके मायके वाले मालदार हों।

मुसलमान औ़रतों से

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बातें

* औ़रतों के लिए *

क़ुरबानी का बयान

लेखक

हज़रत मौलाना आ़शिक़ इलाही साहिब बुलन्द शहरी

रहमतुल्लाहि अ़लैहि

अनुवादक: मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा. लि.)

422, मटिया महल, उर्दू मार्किट, जामा मस्जिद

देहली-110006

क़ुरबानी की फ़ज़ीलत

हदीसः (49) हज़रत अबू सईद रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हज़रत रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने (अपनी बेटी) हज़रत सय्यिदा फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से (क़ुरबानी के वक़्त) फ़रमाया ऐ फ़ातिमा! खड़ी हो अपनी क़ुरबानी के पास हाज़िर हो जाओ, क्योंकि उसके ख़ून की पहली बूँद की वजह से तुम्हारे पिछले गुनाह माफ़ हो जायेंगे। हज़रत सय्यिदा फ़ातिमा रज़िल्लाहु अ़न्हा ने सवाल किया या रसूलल्लाह! क्या यह फ़ज़ीलत सिर्फ़ हमारे लिये (यानी हुज़ूरे पाक के घर वालों और ख़ानदान वालों के वास्ते) मख़्सूस है या सब मुसलमानों के लिये है? आपने फ़रमाया यह फ़ज़ीलत हमारे लिये और तमाम मुसलमानों के लिये है। (बज़्ज़ार व अत्तरग़ीब वत्तरहीब)

हदीसः (50) हज़रत ज़ैद बिन अरक़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि एक बार हज़राते सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने सवाल किया ऐ अल्लाह के रसूल! इन क़ुरबानियों की हक़ीक़त क्या है? आपने फ़रमाया यह तरीक़ा तुम्हारे बाप इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम से जारी हुआ है और यह उनका तरीक़ा चला आ रहा है। सहाबा ने अ़र्ज़ किया हमको इनमें क्या मिलता है? फ़रमाया हर बाल के बदले एक नेकी। अ़र्ज़ किया ऊन वाले जानवर यानी भेड़ दुंबा के ज़िबह करने पर क्या मिलता है? फ़रमाया हर बाल के बदले एक नेकी मिलती है।

(मिश्कात शरीफ़)

हदीसः (51) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा का बयान है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि बक़रईद की दस तारीख़ को कोई भी नेक काम अल्लाह के नज़दीक (क़ुरबानी का) ख़ून बहाने से ज़्यादा महबूब और पसन्दीदा नहीं है। और क़ियामत के दिन क़ुरबानी वाला अपने जानवर के बालों और सींगों और खुरों को लेकर आयेगा (और ये चीज़ें बहुत बड़े सवाब का ज़रिया बनेंगी)। और फ़रमाया कि क़ुरबानी का ख़ून ज़मीन पर गिरने से पहले अल्लाह तआ़ला के यहाँ क़बूल हो जाता है। लिहाज़ा तुम दिल की ख़ुशी के साथ क़ुरबानी किया करो। (मिश्कात शरीफ़)

क़ुरबानी की शुरूआत

हज़रत इब्राहीम ख़लीलुल्लाह अलैहिस्सलाम ने ख़्वाब में देखा था कि मैं अपने बेटे को ज़िबह कर रहा हूँ। नबियों का ख़्वाब सच्चा होता था और अल्लाह की तरफ़ से होता था, ऐसी बात गोया अल्लाह तआला की तरफ़ से हुक्म का दर्जा रखती थी इसलिये उन्होंने अपने बेटे से कहा कि मैंने ऐसा ख़्वाब देखा है, तुम्हारी क्या राय है? बेटे ने जवाब दियाः

तर्जुमाः ऐ अब्बा जान! आपको जो हुक्म हुआ है उसपर अमल कर लीजिये, आप मुझे इन्शा-अल्लाह तआला सब्र करने वालों में से पायेंगे।

(सूरः साफ़्फ़ात आयत 102)

चुनाँचे हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम अपने बेटे हज़रत इसमाईल अलैहिस्सलाम को मक्का से लेकर चले और मिना में जाकर ज़िबह करने की नीयत से एक छुरी साथ ली, (मिना मक्का मुअज़्ज़मा से तीन मील दूर दो पहाड़ों के दरमियान बहुत लम्बा मैदान है)। जब मिना में दाख़िल होने लगे तो उनके बेटे को शैतान बहकाने लगा। हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को जब पता चला तो **अल्लाहु अकबर** कहकर सात कंकरियाँ मारीं जिसकी वजह से वह ज़मीन में धंस गया। दोनों बाप बेटे आगे बढ़े तो ज़मीन ने शैतान को छोड़ दिया। कुछ दूर जाकर फिर बहकाने लगा तो हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने फिर उसपर अल्लाहु अकबर कहकर सात कंकरियाँ मारीं, वह फिर ज़मीन में धंस गया। ये दोनों आगे बढ़े तो फिर ज़मीन ने उसको छोड़ दिया। फिर आकर बहकाने लगा, हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने फिर उसे अल्लाहु अकबर कहकर सात कंकरियाँ मारीं फिर वह ज़मीन में धंस गया और उसके बाद आगे बढ़कर हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने अपने बेटे को माथे के बल लिटा दिया। अभी ज़िबह करने न पाये थे कि अल्लाह की तरफ़ से आवाज़ आईः

तर्जुमाः ऐ इब्राहीम! तुमने अपना ख़्वाब सच कर दिखाया।

(सूरः साफ़्फ़ात आयत 105)

फिर अल्लाह पाक ने मेंढा भेजा जिसे अपने बेटे की तरफ़ से हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने ज़िबह कर दिया।

जैसा कि अल्लाह तआला ने फ़रमाया है "और हमने एक बड़ा ज़बीहा

(कुरबानी का जानवर) उसके बदले में दे दिया।''

ज़िबह तो किया मेंढा और सवाब मिल गया बेटे की कुरबानी का क्योंकि दोनों बाप बेटे अपने दिल व जान से उस काम के अन्जाम देने को तय कर चुके थे जिसका अल्लाह की तरफ़ से हुक्म हुआ था। बाप ने बेटे को माथे के बल लिटा दिया और बेटा ज़िबह होने के लिये ख़ुशी से लेट गया। अपनी तरफ़ से कोई कसर नहीं छोड़ी। अल्लाह तआला के यहाँ नीयत देखी जाती है, अपनी नीयत में ये दोनों सच्चे थे। जैसा कि अल्लाह पाक ने फ़रमाया है:

तर्जुमा: जब दोनों ने ख़ुदा के हुक्म को मान लिया और बाप ने बेटे को ज़िबह करने के लिए करवट के बल लिटाया। (सूर: साफ़्फ़ात आयत 103-104)

यह वाक़िआ कुरबानी की शुरूआत है और हज के मौक़े पर मिना में जो कंकरियाँ मारी जाती हैं उनकी शुरूआत भी इसी वाक़िए से हुई है। उन्हीं तीन जगहों में कंकरियाँ मारते हैं जहाँ शैतान ज़मीन में धंस गया था। जगह की निशानदेही के लिये पत्थर के मीनार बना दिये गये हैं। उसके बाद से अल्लाह ताआला की रिज़ा के लिये जानवरों की कुरबानी करना इबादत में शुमार हो गया चुनाँचे उम्मते मुहम्मदिया के लिये भी कुरबानी वाजिब हो गयी। हैसियत वाले पर कुरबानी वाजिब है और अगर किसी की इतनी हैसियत न हो और कुरबानी कर दे तब भी बहुत बड़े सवाब का हक़दार होगा।

कुरबानी की अहमियत

चूँकि असल मक़सद ख़ून बहाना है, यानी जान को ज़ान के पैदा करने वाले के सुपुर्द करना है इसलिये कुरबानी के दिनों में अगर कोई शख़्स कुरबानी की कीमत सदक़ा कर दे या उसकी जगह ग़ल्ला या कपड़ा मोहताजों को दे दे तो उससे हुक्म की तामील न होगी और कुरबानी को छोड़ने का गुनाह होगा और हर बाल के बदले नेकी मिलने की जो सआदत थी उससे महरूमी होगी। एक हदीस में इरशाद है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया:

तर्जुमा: जो शख़्स गुन्जाइश होते हुए कुरबानी न करे वह हमारी ईदगाह में न आये। (हाकिम, अत्तरग़ीब वत्तरहीब)

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मदीना में दस साल क़याम फ़रमाया

(यानी ठहरे) और हर साल क़ुरबानी फ़रमाई। (मिश्कात)

इन हदीसों से क़ुरबानी की बहुत ज़्यादा ताकीद मालूम हुई। हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पाबन्दी से क़ुरबानी करने और उसके लिये ताकीद फ़रमाने की वजह से हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अलैहि ने गुन्जाइश और हिम्मत रखने वालों पर क़ुरबानी को वाजिब कहा है और फ़रमाया है कि साहिबे निसाब पर क़ुरबानी वाजिब है। (वाजिब का दरजा फ़र्ज़ के क़रीब है बल्कि अमल में फ़र्ज़ के बराबर है)।

क़ुरबानी किस पर वाजिब है

जिस शख़्स पर ज़कात फ़र्ज़ हो या जिसके पास साढ़े बावन तौले चाँदी या उसकी क़ीमत का तिजारत का माल हो या फ़ाज़िल सामान पड़ा हो उसपर क़ुरबानी और सदक़ा-ए-फ़ित्र वाजिब हो जाते हैं। बहुत-से लोग समझते हैं कि जिसपर ज़कात वाजिब नहीं उसपर क़ुरबानी भी वाजिब नहीं, यह बात सही नहीं है। यूँ कहना तो दुरुस्त है कि जिसपर ज़कात फ़र्ज़ है उसपर क़ुरबानी भी वाजिब है लेकिन यह कहना सही नहीं कि जिसपर ज़कात फ़र्ज़ नहीं उसपर क़ुरबानी भी फ़र्ज़ नहीं। इसलिये कि उनके पास सोना चाँदी, या तिजारत का माल या नक़दी निसाब के बक़द्र नहीं होती लेकिन बहुत-सा फ़ाज़िल (ज़रूरत से ज़ायद) सामान पड़ा होता है (जैसे इस्तेमाल किया हुआ ज़रूरत से ज़्यादा फ़र्नीचर वग़ैरह)। अगर यह फ़ाज़िल सामान साढ़े बावन तौले चाँदी की क़ीमत को पहुँच जाये तो क़ुरबानी वाजिब हो जाती है लेकिन ज़कात फ़र्ज़ नहीं होती।

और एक फ़र्क़ और भी है, वह यह कि ज़कात का अदा करना उस वक़्त फ़र्ज़ होता है जब निसाब पर चाँद के एतिबार से बारह महीने गुज़र जायें और क़ुरबानी के वाजिब होने के लिये क़ुरबानी की तारीख़ आने से पहले चौबीस घण्टे गुज़रना भी ज़रूरी नहीं है। अगर किसी के पास एक-आध दिन पहले ही ऐसा माल आया जिसके होने से क़ुरबानी वाजिब हो जाती है तो उसपर कल को क़ुरबानी वाजिब हो जायेगी। यह भी मालूम हुआ कि जो 'साहिबे निसाब' हो उसपर क़ुरबानी वाजिब होती है। ज़कात के फ़र्ज़ होने और क़ुरबानी के वाजिब होने और सदक़ा-ए- फ़ित्र के वाजिब होने के बारे में हर एक की मिल्कियत अलग-अलग देखी जायेगी। अगर किसी घर में बाप,

बेटे और बेटों की माँ हर एक की मिल्कियत में इतना माल हो जिसपर कुरबानी वाजिब होती है तो हर एक पर अलग-अलग कुरबानी वाजिब होगी। अलबत्ता नाबालिग़ की तरफ़ से किसी हाल में कुरबानी करना लाज़िम नहीं। औरतों के पास उमूमन इतना ज़ेवर होता है जिसपर कुरबानी वाजिब हो जाती है अगरचे वे बेवा ही क्यों न हों।

मसलाः शरई मुसाफ़िर यानी जो शख़्स अपने शहर या बस्ती से अड़तालीस (48) मील के सफ़र के इरादे से कुरबानी के दिनों से पहले निकला हो उसपर कुरबानी वाजिब नहीं। हाँ अगर कुरबानी के दिनों में से किसी दिन घर पहुँच जाये या किसी जगह पन्द्रह दिन ठहरने की नीयत कर ले तो उसपर कुरबानी वाजिब हो जायेगी।

कुरबानी के जानवर

कुरबानी के जानवर शरअ़न मुक़र्रर हैं। गाय, बैल, भैंस, भैंसा, ऊँट, ऊँटनी, बकरा, बकरी, भेड़, दुम्बा, दुम्बी की कुरबानी हो सकती है, इनके अ़लावा और किसी जानवर की कुरबानी दुरुस्त नहीं, अगरचे कितना ही क़ीमती हो और खाने में कितना ही पसन्दीदा भी हो, लिहाज़ा हिरन की कुरबानी नहीं हो सकती। इसी तरह दूसरे हलाल जानवर कुरबानी में ज़िबह नहीं किये जा सकते।

मसलाः गाय, बैल, भैंस, भैंसा, ऊँट, ऊँटनी में सात हिस्से हो सकते हैं, उनमें से एक जानवर में सात कुरबानियाँ हो सकती हैं, चाहे एक ही आदमी एक गाय लेकर अपने घर के आदमियों के वकील बनाने से उनका वकील बनकर सात हिस्से तजवीज़ करके ज़िबह कर दे या मुख़्तलिफ़ घरों के आदमी एक-एक या दो-दो हिस्से लेकर सात हिस्से पूरे कर लें, दोनों सूरतों में कुरबानी दुरुस्त हो जायेगी।

मसलाः चूँकि अ़क़ीक़ा भी सवाब का काम है इसलिये कुरबानी की गाय या ऊँट में अगर कुछ हिस्से कुरबानी के और कुछ अ़क़ीक़े के हों तो यह भी जायज़ है।

मसलाः अगर छह आदमियों ने कुरबानी का हिस्सा लिया और एक शख़्स ने एक हिस्सा गोश्त खाने या तिजारत करने की नीयत से ले लिया, मक़सद कुरबानी का सवाब लेना न था, तो किसी की भी कुरबानी न होगी।

अगर क़ुरबानी की गाय में किसी दीन से फिर जाने वाले, क़ादयानी या बद्-दीन को शरीक कर लिया तब भी किसी की क़ुरबानी दुरुस्त न होगी।

मसलाः अगर किसी का हिस्सा सातवें हिस्से से कम हो तब भी किसी की क़ुरबानी दुरुस्त न होगी। न उसकी जिसका सातवाँ हिस्सा या उससे ज़्यादा था न उसकी जिसका हिस्सा सातवें हिस्से से कम था।

मसलाः और अगर गाय, ऊँट, भैंस में सात हिस्सों से कम कर लिया जैसे छह हिस्से करके छह आदमियों ने एक-एक हिस्सा ले लिया तो क़ुरबानी दुरुस्त हो जायेगी। बशर्ते कि किसी का हिस्सा सातवें हिस्से से कम न हो। और अगर आठ हिस्से बना लिये और आठ क़ुरबानी वाले शरीक हो गये तो किसी की भी क़ुरबानी दुरुस्त न होगी।

मसलाः छोटे जानवर, यानी बकरा-बकरी वग़ैरह में शिरकत नहीं हो सकती। एक शख़्स की तरफ़ से एक ही जानवर हो सकता है।

मसलाः गाय, बैल, भैंस, भैंसा की उम्र कम-से-कम दो साल और ऊँट और ऊँटनी की उम्र कम-से-कम पाँच साल और बाक़ी जानवरों की उम्र कम-से-कम एक साल होना ज़रूरी है। हाँ अगर भेड़ या दुम्बा साल भर से कम का हो लेकिन मोटा-ताज़ा हो कि साल भर वाले जानवरों में छोड़ दिया जाये तो फ़र्क़ महसूस न हो तो उसकी भी क़ुरबानी हो सकती है बशर्ते कि छह महीने से कम का न हो। अगर इतना मोटा-ताज़ा न हो जिसका अभी ज़िक्र हुआ तो किसी मुफ़्ती को दिखा लें, फिर उनके क़ौल के मुताबिक़ अमल करें।

कैसे जानवर की क़ुरबानी दुरुस्त है

चूँकि क़ुरबानी का जानवर ख़ुदा तआला की बारगाह में पेश किया जाता है इसलिये जानवर ख़ूब उम्दा, मोटा-ताज़ा, सही-सालिम, ऐबों से पाक होना ज़रूरी है। हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु का इरशाद है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हमें हुक्म दिया कि क़ुरबानी के जानवर के आँख-कान अच्छी तरह देख लें और ऐसे जानवर की क़ुरबानी न करें जिसका कान चिरा हुआ हो या जिसके कान में सूराख़ हो। (तिर्मिज़ी शरीफ़) और हज़रत बरा बिन आज़िब रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से पूछा गया कि क़ुरबानी में किन-किन जानवरों

से परहेज़ किया जाये। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इशारा करते हुए इरशाद फ़रमाया कि (ख़ुसूसियत के साथ) चार तरह के जानवरों से परहेज़ करो:

1. वह लंगड़ा जानवर जिसका लंगड़ापन ज़ाहिर हो।
2. वह काना जानवर जिसका कानापन ज़ाहिर हो।
3. ऐसा बीमार जानवर जिसकी बीमारी ज़ाहिर हो।
4. ऐसा दुबला जानवर जिसकी हड्डियों में मेंग यानी गूदा न हो।

(तिर्मिज़ी शरीफ़, अबू दाऊद वग़ैरह)

हज़रात फ़ुक़हा-ए-किराम ने इन हदीसों की तफ़सीर व तशरीह (व्याख्या और खुलासा) करते हुए लिखा है कि जो जानवर बिलकुल अन्धा हो या एक आँख की तिहाई रोशनी या उससे ज़्यादा रोशनी जाती रही हो, या कान का तिहाई हिस्सा या उससे ज़्यादा कट गया हो, या दुम कट गयी हो, या दुम का एक तिहाई हिस्सा या उससे ज़्यादा कट गया हो या इतना ज़्यादा दुबला जानवर हो कि उसकी हड्डियों में बिलकुल गूदा न रहा हो उसकी क़ुरबानी जायज़ नहीं। अगर जानवर दुबला हो मगर इतना ज़्यादा दुबला न हो तो उसकी क़ुरबानी हो जायेगी लेकिन वह सवाब कहाँ मिलेगा जो मोटे-ताज़े जानवर की क़ुरबानी में मिलता है। हिम्मत और गुन्जाइश होते हुए अल्लाह की बारगाह में पेश करने के लिये गिरी-पड़ी हैसियत का जानवर इख़्तियार करना ना-समझी है और नाशुक्री भी।

मसला: जो जानवर तीन पाँव से चलता है और चौथा पाँव रखता ही नहीं या चौथा पाँव रखता है मगर उससे चल नहीं सकता यानी चलने में उससे सहारा नहीं लेता तो उसकी क़ुरबानी दुरुस्त नहीं। अगर चारों पाँव से चलता है और एक पाँव में कुछ लंग है तो उसकी क़ुरबानी दुरुस्त है।

मसला: जिस जानवर के बिलकुल दाँत न हों उसकी क़ुरबानी दुरुस्त नहीं, और अगर कुछ दाँत गिर गये लेकिन जो बाक़ी हैं वे तायदाद में गिर जाने वाले दाँतों से ज़्यादा हैं तो उसकी क़ुरबानी दुरुस्त है।

मसला: अगर किसी जानवर के पैदाइश ही से कान नहीं तो उसकी क़ुरबानी दुरुस्त नहीं और अगर दोनों कान हैं और सही-सालिम हैं लेकिन ज़रा छोटे-छोटे हैं तो उसकी क़ुरबानी हो सकती है।

मसला: जिस जानवर के पैदाइश ही से सींग नहीं लेकिन उम्र इतनी हो

चुकी है जितनी क़ुरबानी के जानवर की होनी लाज़िम है तो उसकी क़ुरबानी दुरुस्त है। और अगर सींग निकल आये और उनमें से एक या दोनों कुछ टूट गये तो ऐसे जानवर की क़ुरबानी हो सकती है, हाँ अगर बिलकुल जड़ से टूट गये और अन्दर की मेंग भी ख़त्म हो गयी तो उसकी क़ुरबानी दुरुस्त नहीं।

मसलाः ख़स्सी जानवर की क़ुरबानी न सिर्फ़ यह कि दुरुस्त है बल्कि अफ़ज़ल है, क्योंकि उसका गोश्त अच्छा होता है, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ख़ुद ऐसे जानवरों की क़ुरबानी की है। जैसा कि अबू दाऊद शरीफ़ की रिवायत में इसकी वज़ाहत है।

मसलाः अगर मादा जानवर की क़ुरबानी और उसके पेट में से बच्चा निकल आया तब भी क़ुरबानी हो गयी। अगर बच्चा ज़िन्दा निकले तो उसको भी ज़िबह कर दे।

मसलाः अगर क़ुरबानी का जानवर ख़रीद लिया फिर उसमें कोई ऐसा ऐब पैदा हो गया जिसकी वजह से क़ुरबानी दुरुस्त नहीं होती तो उसके बदले दूसरा जानवर ख़रीद कर क़ुरबानी करे, हाँ अगर ग़रीब आदमी हो जिसपर क़ुरबानी वाजिब नहीं थी और उसने सवाब के शौक़ में जानवर ख़रीद लिया था तो उसी की क़ुरबानी कर दे।

क़ुरबानी का वक़्त

बक़रईद की दसवीं तारीख़ से लेकर बारहवीं तारीख़ की शाम तक क़ुरबानी करने का वक़्त है, चाहे जिस दिन क़ुरबानी करे, लेकिन क़ुरबानी करने का सबसे अफ़ज़ल दिन बक़रईद का दिन है, फिर गयारहवीं तारीख़ फिर बारहवीं तारीख़।

मसलाः बक़रईद की नमाज़ होने से पहले क़ुरबानी करना दुरुस्त नहीं है। ईद की नमाज़ पढ़ चुकें तब क़ुरबानी करें। अलबत्ता अगर कोई देहात में या गाँव में, या जहाँ ईद की नमाज़ नहीं होती ऐसी जगह हो तो वहाँ दसवीं तारीख़ को फ़ज्र की नमाज़ के बाद क़ुरबानी कर देना दुरुस्त है।

मसलाः बारहवीं तारीख़ का सूरज डूबने से पहले-पहले क़ुरबानी कर लेना दुरुस्त है, जब सूरज डूब गया तो अब क़ुरबानी करना दुरुस्त नहीं।

मसलाः दसवीं से बारहवीं तक जब जी चाहे क़ुरबानी करे चाहे दिन में चाहे रात में, लेकिन रात को ज़िबह करना बेहतर नहीं कि शायद कोई रग न

कटे और कुरबानी न हो, अगर ख़ूब ज़्यादा रोशनी हो जैसी शहरों में बिजली या टयूब लाईट की रोशनी होती है तो रात को क़ुरबानी कर लेने में कोई हर्ज नहीं।

कुरबानी की मन्नत और वसीयत

मसलाः जिसने कुरबानी करने की मन्नत मानी फिर वह काम पूरा हो गया जिसके वास्ते मन्नत मानी थी तो अब कुरबानी करना वाजिब है चाहे मालदार हो या न हो, और मन्नत की क़ुरबानी का सब गोश्त फ़क़ीरों को ख़ैरात कर दे, न आप खाये न अमीरों को दे। उसमें से जितना आप खाया हो या अमीरों को दिया हो उतना फिर ख़ैरात करना पड़ेगा।

मसलाः अगर कोई वसीयत करके मर गया कि मेरे 'तरके' (यानी छोड़े हुए माल) में से मेरी तरफ़ से कुरबानी की जाये और उसकी वसीयत के मुताबिक़ उसी के माल से कुरबानी की गयी तो उस कुरबानी का तमाम गोश्त वग़ैरह ख़ैरात कर देना वाजिब है। (जानना चाहिए कि वसीयत मय्यित के 'तरके' के तिहाई 1/3 के अन्दर-अन्दर नाफ़िज़ हो सकती है)।

ग़ायब की तरफ़ से कुरबानी

कोई शख़्स यहाँ मौजूद नहीं है और दूसरे शख़्स ने उसकी तरफ़ से बग़ैर उसके कहने या ख़त लिखने के कुरबानी कर दी तो यह कुरबानी दुरुस्त नहीं हुई। और अगर किसी जानवर में किसी ग़ायब का हिस्सा उसकी इजाज़त के बग़ैर तजवीज़ कर लिया तो और हिस्सेदारों की कुरबानी भी सही न होगी। अलबत्ता अगर ग़ायब आदमी ख़त लिखकर वकील बना दे तो उसकी तरफ़ से कुरबानी कर सकते हैं। जिनके लड़के ऐशिया के किसी दूर के शहर में हैं या यूरोप व अमेरिका में मुलाज़िम हैं अगर वे लिख दें कि हमारी तरफ़ से कुरबानी कर दी जाये तो उनकी तरफ़ से कुरबानी करने से अदा हो जायेगी।

कुरबानी के गोश्त और खाल को ख़र्च करने की जगह

हदीसः (52) हज़रत अ़म्रह बिन्ते अ़ब्दुर्रहमान बयान फ़रमाती हैं जो हज़रत आ़यशा की शार्गिद हैं कि मैंने हज़रत आ़यशा रज़िल्लाहु तआ़ला अ़न्हा से सुना कि एक बार देहात के रहने वाले कुछ लोग हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़माने में बक़रईद के मौके पर मदीना मुनव्वरा में चले आये, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कुरबानी करने वालों को हुक्म

फ़रमाया कि (अपनी कुरबानियों का गोश्त) सिर्फ़ तीन दिन तक बतौर ज़ख़ीरा रख सकते हो और जो बचे उसको सदक़ा कर दो, फिर उसके बाद (अगले साल) बक़रईद का मौक़ा आया तो अर्ज़ किया गया ऐ अल्लाह के रसूल! इससे पहले लोग अपनी कुरबानियों से) अनेक किस्म के फ़ायदे हासिल करते थे, उनकी चरबी पिघला कर काम में लाने के लिये रख लेते थे और उनकी खालों के मश्कीज़े बना लेते थे। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया वह क्या बात है (जो अब पैदा हो गयी)? अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! आपने इस बात से मना फ़रमाया था कि कुरबानियों का गोश्त तीन दिन से ज़्यादा ज़ख़ीरे के तौर पर न रखा जाये। आपने फ़रमाया! पिछले साल मैंने सिर्फ़ उस जमाअत की वजह से मना किया था जो बक़रईद के मौक़े पर तुम्हारे पास आ गयी थी, बस अब खाओ और सदक़ा करो और आइन्दा काम आने के लिये भी बतौर ज़ख़ीरा रख लो। (अबू दाऊद शरीफ़ पेज 388)

तशरीह: अल्लाह तआला की रिज़ा के लिये कुरबानी का जानवर ज़िबह कर देने से कुरबानी अदा हो जाती है। उसका गोश्त और पोस्त अल्लाह के यहा नहीं पहुँचता (क्योंकि अल्लाह को किसी चीज़ की हाजत नहीं है) उसके यहाँ इख़्लास और नेक-नीयती पर सवाब मिलता है। कुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमा: अल्लाह तआला के पास न उनका गोश्त पहुँचता है और न उनका ख़ून, लेकिन उसके पास तुम्हारा तक़वा (परहेज़गारी) पहुँचता है, इस तरह अल्लाह तआला ने उन जानवरों को तुम्हारे हुक्म के ताबे कर दिया कि तुम इस बात पर अल्लाह की बड़ाई (बयान) करो कि उसने तुमको (इस तरह कुरबानी की) तौफ़ीक़ दी और इख़्लास वालों को ख़ुशख़बरी दीजिये।

(सूर: हज आयत 37)

जो कोई शख़्स कुरबानी करता है वह कुरबानी के गोश्त और खाल और हड्डी हर चीज़ का मालिक होता है, अगर वह किसी फ़क़ीर मिस्कीन को कुछ भी न दे तब भी कुरबानी अदा हो जाती है, क्योंकि असल मक़सद अल्लाह की रिज़ा के लिये ख़ून बहाना और जान को उसके पैदा करने वाले हवाले करना है। लेकिन जब कुरबानी कर ली तो फ़क़ीरों व मिस्कीनों का भी ख़्याल रखना चाहिये। अपने बाल-बच्चों को खिलाये ख़ुद खाये जब तक मुनासिब जाने बाद में ख़र्च करने के लिये ज़ख़ीरा कर ले। फ्रीज में रखे, सुखाकर

महफ़ूज़ करके साल दो साल अगर क़ुरबानी का गोश्त रखा रहे तो भी कोई गुनाह नहीं। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक साल आरज़ी (अस्थाई) तौर पर तीन दिन से ज़्यादा बतौर ज़ख़ीरा रखने को मना फ़रमाया था और उसकी वजह वह थी जो ऊपर हदीस में ज़िक्र हुई कि कुछ लोग देहात में से आ गये थे उनकी ख़ुराक का इन्तिज़ाम फ़रमाना मक़सद था, फिर बाद में आइन्दा के लिये उसके ज़ख़ीरा करने की इजाज़त दे दी और पहले वाले हुक्म को निरस्त फ़रमा दिया, और फ़रमायाः

"खाओ, सदक़ा करो और ज़ख़ीरा करो"

हज़रत नबीशा हज़ली रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत किया गया है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि मैंने तुमको इस बात से मना किया था कि क़ुरबानियों का गोश्त तीन दिन से ज़्यादा खाओ, जिसका मक़सद यह था कि इस गोश्त में तुम सबके लिये गुन्जाइश हो जायें (यानी क़ुरबानी करने वालों और क़ुरबानी न करने वालों सबको पहुँच जाये)। अल्लाह तआ़ला ने रिज़्क़ में गुन्जाइश दे दी लिहाज़ा तुम खाओ और ज़ख़ीरा करके रखो और सदक़ा करके सवाब हासिल करो, और यह भी फ़रमाया कि ख़बरदार! ये दिन खाने-पीने और अल्लाह का ज़िक्र करने के हैं। (अबू दाऊद)

क़ुरबानी के गोश्त से सदक़ा करना ऊपर वाली हदीस से मालूम हुआ और जब गोश्त पकाये तो पड़ोसियों और रिश्तेदारों का ख़्याल रखना भी मुनासिब है, उन लोगों की दावत कर दे या घर भेज दे।

जैसा कि ऊपर अर्ज़ किया गया कि गोश्त और खाल वग़ैरह सब क़ुरबानी करने वालों की मिल्कियत होती है इसलिये उसे जिस तरह तमाम गोश्त ख़ुद रख लेने का इख़्तियार है उसी तरह अगर वह क़ुरबानी के जानवर की खाल ख़ुद ही रख ले और अपने काम में ले आये तो यह भी जायज़ है, क़ुरबानी के जानवर की खाल को 'दबाग़त' कर ले (यानी नमक वग़ैरह लगाकर सड़ने से महफ़ूज़ कर दे और सुखा ले) और फिर जायनमाज़ बना ले या कोई ऐसी चीज़ बना ले जो घर की ज़रूरत में आती हो तो यह जायज़ है, अलबत्ता क़ुरबानी की खाल को फ़रोख़्त न करे, और अगर मान लो फ़रोख़्त कर दी तो उसकी क़ीमत को काम में लाना जायज़ नहीं, उसका सदक़ा कर देना वाजिब है। ज़कात हो या सदक़ा-ए-फ़ित्र या क़ुरबानी की खाल की रक़म सय्यिद को और उस शख़्स को नहीं दे सकते जिसे ज़कात

लेना जायज़ नहीं।

बहुत-से लोग कुरबानी की खाल मस्जिदों की ज़रूरत के लिये या ईदगाह बनाने के लिये या क़ब्रिस्तान की चार दीवारी खींचने के लिये दे देते हैं ताकि खालों को बेचकर इन कामों में रक़म ख़र्च कर दी जाये। वाज़ेह रहे कि इन कामों में कुरबानी की खाल की रक़म ख़र्च नहीं हो सकती, यह रक़म सिर्फ़ उन्हीं लोगों को दी जा सकती है जिनको ज़कात लेना जायज़ हो। बाज़ इलाक़ों में मशहूर है कि कुरबानी की खाल बेवाओं का हक़ है तो शरअ़न इसकी कोई हक़ीक़त नहीं। हाँ अगर कोई बेवा ज़कात लेने की मुस्तहिक़ हो तो वह भी दूसरे फ़क़ीरों और मिस्कीनों की तरह कुरबानी की खाल की रक़म ले सकती है, मगर हक़ जताने की कोई हैसियत नहीं। और इससे भी ज़्यादा ग़लत बात यह है जो बहुत-से इलाक़ों में रिवाज पाये हुए है कि इमामों को कुरबानी की खालें या उनकी क़ीमत इमामत की उजरत में दे देते हैं, जिसकी सूरत यह होती है कि इमामों की तन्ख़्वाह मामूली होती है, वे ईद-बक़रईद की आस लगाये बैठे रहते हैं, मौहल्ले का सदक़ा, फ़ित्रा और कुरबानी की खालें सब उनके सुपुर्द कर दी जाती हैं और उनको अपनी इमामत का बदला समझ कर सालाना ख़िदमत के बदले में सब वसूल कर लेते हैं, यह बिलकुल नाजायज़ है। क्योंकि सदक़ा-ए-फ़ित्र और कुरबानी की खाल किसी मुआवज़े में देना दुरुस्त नहीं, इमामत की उजरत भी एक मुआवज़ा है। आजकल सस्ता चन्दा देखकर बहुत-सी अन्जुमनें वैलफ़ेयर ऐसोसिएशन और हमदर्द क्लब और इमदादी कमेटियाँ बक़रईद के ज़माने में निकल आती हैं, ये लोग खालों की रक़म के ज़रिये चुनाव तक लड़े जाते हैं, उनको खालें देकर ज़ाया न करें और अपनी शरई ज़िम्मेदारी को पहचानें।

ईद के दिन खाने-पीने और अल्लाह का ज़िक्र करने के लिये हैं

ऊपर जो हमने नबीशा की हदीस नकल की है उसमें फ़रमाया है कि बक़रईद के दिन खाने-पीने और अल्लाह का ज़िक्र करने के दिन हैं, इसका मतलब यह है कि ये दिन अल्लाह पाक की मेहमानी के हैं, इन दिनों में, खायें पियें अल्लाह का शुक्र अदा करें रोज़ा न रखें। 10,11,12,13 ज़िलहिज्जा को रोज़ा रखना हराम है और ईदुल-फ़ित्र के दिन भी रोज़ा रखना हराम है, वह दिन भी अल्लाह की मेहमानी का दिन है, बन्दे को हुक्म मानना चाहिये,

खाने पीने का हुक्म हो तो खाये पिये और जब खाने-पीने से रोक दिया जाये तो रुक जाये। रमज़ान के दिनों में खाना-पीना हराम है यानी रोज़ा रखना फ़र्ज़ है और ईद के दिन रोज़ा रखना हराम है। इसी तरह से बक़रईद के शुरू के नौ (9) दिन रोज़े रखने की बड़ी फ़ज़ीलत आई है और ख़ुसूसन नवीं तारीख़ के रोज़े की तो बहुत ही ज़्यादा फ़ज़ीलत आई है। लेकिन नवीं तारीख़ के बाद चार दिन रोज़े रखना हराम क़रार दिया गया है, बन्दे को हुक्म के ताबे रहना लाज़िम है।

हदीस में यह भी फ़रमाया कि ये दिन अल्लाह का ज़िक्र करने के हैं। आजकल के लोगों ने खाने-पीने को तो याद रखा है लेकिन आख़िरी बात यानी अल्लाह का ज़िक्र जो ईद की रूह है उससे ग़ाफ़िल रहते हैं। इन दिनों में ख़ूब ज़्यादा अल्लाह का ज़िक्र करना चाहिये। 'तकबीरे तशरीक़' जो हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद पढ़ी जाती है वह भी अल्लाह का नाम बुलन्द करने के लिये शरीअ़त ने मुक़र्रर की है और ईद की नमाज़ भी पूरा-का-पूरा ज़िक्र है, बल्कि उसमें दूसरी नमाज़ों के मुक़ाबले में ज़्यादा तकबीर शामिल कर दी गयी हैं, और ख़ुत्बा भी पूरा-का-पूरा ज़िक्र है, उसमें भी तकबीर की कसरत करना मुस्तहब क़रार दिया गया है। दीन के आ़लिमों ने लिखा है कि जब ईदुल-फ़ित्र की नमाज़ के लिये जायें तो 'तकबीरे तशरीक़' आहिस्ता कहते हुए जायें और जब ईदुल-अज़्हा की नमाज़ के लिये जायें तो ज़रा आवाज़ से तकबीरे तशरीक़ पढ़ते हुए जायें। यह सब ज़िक्र की अधिकता के प्रतीक हैं। अल्लाह का ज़िक्र ही मोमिन के लिये असल ख़ुशी की चीज़ है, इसकी रूह अल्लाह के ज़िक्र ही से इत्मीनान हासिल कर सकती है।

ईद को गुनाहों से मुलव्वस न करें

अफ़सोस है कि इस ज़माने के मुसलमान ज़िक्र की तरफ़ तो क्या मुतवज्जह होते ईद के दिन ख़ूब अच्छी तरह गुनाह करते हैं, उस दिन सिनेमा देखना बहुत-से लोगों ने अपने ज़िम्मे फ़र्ज़ कर रखा है, ईद की ख़ुशी को सिनेमा के नापाक अमल से मिट्टी में मिला देते हैं। क्योंकि गुनाह में कोई ख़ुशी नहीं, अल्लाह को नाराज़ करने वाली चीज़ कैसे ख़ुशी का सबब बन सकती है, बहुत-से लोग ईद के कपड़े बनाते हैं तो उसमें भी हराम हलाल का ख़्याल नहीं करते, मर्द टख़्नों से नीचे कपड़े पहनते हैं, औरतें बारीक कपड़े

पहनती हैं, और बहुत-से लोग ख़ूब अच्छी तरह दाढ़ी मुंडाकर अंग्रेज़ी बाल तराशकर ईद की नमाज़ के लिये आते हैं। जो ईद पूरी-की-पूरी नेकी और फ़रमाँबरदारी का मुज़ाहरा करने के लिये थी, उसे गुनाहों से मुलव्वस कर दिया तो ईद कहाँ रही? ईद तो इस्लामी चीज़ है, उस दिन हर काम ख़ुसूसियत के साथ अच्छा और नेक होना चाहिये, उस दिन गुनाहों से बचने का ख़ास एहतिमाम किया जाये और तबीयत को आमादा किया जाये कि आइन्दा भी गुनाह न करेंगे। मोमिन की ज़िन्दगी गुनाहों वाली ज़िन्दगी नहीं होती।

ज़िलहिज्जा के पहले दशक में नेक आमाल की फ़ज़ीलत

हदीसः (53) हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हज़रत रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि बक़रईद के दस दिनों में जिस क़द्र नेक अ़मल अल्लाह को महबूब है उससे बढ़कर किसी ज़माने में भी इस क़द्र महबूब नहीं। (यानी ये दिन फ़ज़ीलत में दूसरे सब दिनों से बढ़े हुए हैं)। सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! क्या अल्लाह के रास्ते में जिहाद भी इन दिनों की इबादत से अफ़ज़ल नहीं है? आपने इरशाद फ़रमाया अल्लाह के रास्ते में जिहाद भी इन दिनों से अफ़ज़ल नहीं। हाँ मगर यह कि कोई शख़्स अपनी जान व माल लेकर निकले और उनमें से कुछ भी वापस लेकर न लौटे।

(मिश्कात शरीफ़, बुख़ारी शरीफ़)

हदीसः (54) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि बक़रईद के पहले दस दिनों में रोज़ा रखने से एक रोज़े का सवाब एक साल के रोज़ों के बराबर मिलता है, इन दिनों की रातों में (नमाज़ में) खड़ा होने से शबे क़द्र में (नमाज़ में) खड़ा होने के बराबर सवाब मिलता है। (मिश्कात शरीफ़)

आ़लिमों ने बताया है कि रमज़ान के आख़िरी दशक की रातें अफ़ज़ल हैं और ज़िलहिज्जा के पहले दशक के दिन अफ़ज़ल हैं क्योंकि उनमें 'अरफ़ा का दिन' भी है। रमज़ान का आख़िरी दशक हो या ज़िलहिज्जा का पहला दशक इनमें रात-दिन इबादत में लगना चाहिये क्योंकि इन दोनों दशकों की हर घड़ी बहुत मुबारक है।

नवीं तारीख़ का रोज़ा

हज़रत अबू क़तादा रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बक़रईद की नवीं तारीख़ के रोज़े के बारे में फ़रमाया कि मैं अल्लाह पाक से पुख़्ता उम्मीद रखता हूँ कि इसकी वजह से एक साल पहले और एक साल बाद के गुनाहों का कफ़्फ़ारा फ़रमा देंगे। और फ़रमाया कि मुहर्रम की दसवीं तारीख़ के रोज़े के बारे में अल्लाह तआ़ला से पुख़्ता उम्मीद रखता हूँ कि इसकी वजह से एक साल पहले के गुनाहों का कफ़्फ़ारा फ़रमा देंगे। (मुस्लिम शरीफ़)

मुतफ़र्रिक़ मसाइल

मसलाः क़ुरबानी के जानवर को अपने हाथ से ज़िबह करना बेहतर है और दूसरे से ज़िबह कराना भी जायज़ है। अगर दूसरे से ज़िबह कराये और ख़ुद वहाँ मौजूद हो तो बेहतर है जैसा कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत सैयदा फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा को क़ुरबानी के वक़्त जानवर के क़रीब हाज़िर होने को फ़रमाया, मगर औ़रत को परदे की पाबन्दी करनी लाज़िम है।

मसलाः मालदार को भी क़ुरबानी का गोश्त दे सकते हैं और अपने नौकर-चाकर को देना भी दुरुस्त है, लेकिन काम के बदले और मेहनत-मज़दूरी के मुआ़वज़े में नहीं दे सकते। अगर कोई नौकर ग़ैर-मुस्लिम है उसको भी क़ुरबानी का गोश्त दे सकते हैं बल्कि नौकर के अ़लावा भी कोई पास-पड़ोस में काफ़िर गोश्त तलब करे तो उसको भी देना दुरुस्त है।

मसलाः क़ुरबानी के दिनों में जानवर की क़ुरबानी ही करना लाज़िम है, अगर जानवर को ज़िन्दा सदक़ा कर दिया तो क़ुरबानी अदा नहीं हुई। हाँ अगर क़ुरबानी के दिनों में कोई शख़्स ज़िबह न कर सका जैसे जानवर न मिला या कोई और बात पेश आ गयी तो तीन दिन गुज़र जाने के बाद अगर जानवर मौजूद है तो उसको सदक़ा कर दे वरना किसी मोहताज को क़ीमत दे दे।

मसलाः क़ुरबानी सिर्फ़ अपनी तरफ़ से वाजिब है, अपनी औलाद या अपनी बीवी की तरफ़ से या माँ-बाप की तरफ़ से क़ुरबानी करना वाजिब

नहीं, अलबत्ता अगर मालियत के एतिबार से उन लोगों पर अलग-अलग क़ुरबानी वाजिब होती हो तो हर एक शख़्स अपनी-अपनी तरफ़ से क़ुरबानी कर दे।

मसलाः अगर किसी के ज़िम्मे मसले की रू-से क़ुरबानी वाजिब न थी यानी उसके पास इतना माल न था जिस पर क़ुरबानी वाजिब होती लेकिन उसने जानवर ख़रीद लिया तो अब उसकी क़ुरबानी वाजिब हो गई।

मसलाः क़ुरबानी के जानवर के थनों में अगर दूध उतर आये और ज़िबह का वक़्त नहीं आया तो थनों पर ठंडा पानी छिड़क दें ताकि दूध उतरना रुक जाये, और अगर दूध निकाल लिया तो उसको सदक़ा कर दें। इसी तरह ज़िबह करने से पहले अगर ऊन काट ली तो उसको भी सदक़ा कर दे, हाँ अगर ज़िबह के बाद दूध निकाल लिया या ऊन काटी तो उसको अपने काम में ला सकते हैं। अगर क़ुरबानी नज़्र (मन्नत) की हो तो अगरचे ज़िबह के बाद दूध निकाल लिया या ऊन काटी हो तब भी दोनों चीज़ों को सदक़ा कर दें।

मसलाः क़ुरबानी का जानवर ज़िबह कर दे तो उसकी झोली और रस्सी सदक़ा करे।

मसलाः मुर्तद, (यानी जो दीन इस्लाम से फिर गया हो) ज़िन्दीक़, (यानी गुमराह) क़ादयानी, बेदीन का ज़िबह किया हुआ जानवर हराम है। उनसे ज़िबह न करायें, न क़ुरबानी के मौक़े पर और न किसी और मौक़े पर। अगर उनसे ज़िबह करा लिया तो न क़ुरबानी होगी न गोश्त हलाल होगा।

तकबीरे तशरीक़

मसलाः बक़रईद के दिनों में 'तकबीरे तशरीक़' ज़रूरी है यानी हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद एक बार यह पढ़ें:

अल्लाहु अकबरु अल्लाहु अकबरु ला इला-ह इल्लल्लाहु वल्लाहु अकबरु अल्लाहु अकबरु व लिल्लाहिल्-हम्दु।

मर्द ज़ोर से पढ़ें, औरतें आहिस्ता से पढ़ें। नवीं तारीख़ की फ़ज्र की नमाज़ से लेकर तेरहवीं तारीख़ की अ़स्र की नमाज़ तक यह तकबीर हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद पढ़ी जाये। सलाम फेरकर फ़ौरन पढ़ें।

ईद की रात की इबादत

जिस रात के बाद सुबह को ईद या बकरईद होने वाली हो उस रात को ज़िन्दा रखने यानी नमाज़ों में गुज़ारने की बड़ी फ़ज़ीलत आई है। हज़रत अबू उमामा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिसने दोनों ईदों की रातों को सवाब का यक़ीन रखते हुए ज़िन्दा रखा उसका दिल उस दिन न मरेगा जिस दिन लोगों के दिल मुर्दा होंगे, (यानी क़ियामत के दिन ख़ौफ़ व घबराहट से महफ़ूज़ रहेगा)। (अत्तरग़ीब वत्तरहीब)

बाल व नाख़ून का मसला

हदीसः (55) उम्मुल मोमिनीन हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो शख़्स ज़िलहिज्जा महीने का चाँद देख ले और उसका क़ुरबानी करने का इरादा हो तो उसे चाहिये कि अपने बाल और नाख़ून से कुछ भी न काटे। (जब क़ुरबानी कर ले तब काटे)। (मिश्कात शरीफ़)

तशरीहः यह हुक्म एक मुस्तहब और पसन्दीदा अमल के तौर पर है, अमल करे तो अफ़ज़ल है, अगर उन दिनों में बाल या नाख़ून कटवा दिये तो गुनाह न होगा। हदीस पर अमल करने के लिये काटने से बाज़ रहे तो सवाब मिलेगा।

मुसलमान औरतों से

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बातें

* औरतों के लिए *

रमज़ान का बयान

लेखक

हज़रत मौलाना आशिक़ इलाही साहिब बुलन्द शहरी

रहमतुल्लाहि अलैहि

अनुवादक: मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा. लि.)

422, मटिया महल, उर्दू मार्किट, जामा मस्जिद

देहली-110006

रमज़ान के फ़ज़ाइल व मसाइल

रमज़ान की बरकत और फज़ाइल व मसाइल

रमज़ान मुबारक की आमद सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का ख़ुतबा-ए-इस्तिक़बालिया

हदीसः (56) हज़रत सलमान फ़ारसी रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने बयान फ़रमाया कि हुज़ूर सरवरे आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने शाबान की आख़िरी तारीख़ में हमको ख़ुतबा (संबोधन) फ़रमाया कि "ऐ लोगो! एक बड़ाई वाला महीना आ पहुँचा है, जो मुबारक महीना है। उसमें एक रात है जो हज़ार महीनों से बेहतर है। इस महीने के रोज़े अल्लाह तआ़ला ने फ़र्ज़ फ़रमाये हैं और इसकी रातों में 'क़ियाम करना' (यानी नमाज़ों में खड़ा होना) ततव्वोअ़ (ग़ैर फ़र्ज़) क़रार दिया है। इस महीने में जो शख़्स कोई नेक काम करेगा उसको ऐसा अज्र व सवाब मिलेगा जैसे उसके अ़लावा दूसरे महीने में फ़र्ज़ अदा करता, और फ़र्ज़ का सवाब मिलता। और जो शख़्स इस महीने में एक फ़र्ज़ अदा करे तो उसको सत्तर फ़र्ज़ों के बराबर सवाब मिलेगा।

यह सब्र का महीना है और सब्र का बदला जन्नत है और यह आपस की ग़मख़्वारी का महीना है, इसमें मोमिन का रिज़्क़ बढ़ा दिया जाता है। इस महीने में जो शख़्स किसी रोज़ेदार का रोज़ा इफ़्तार करा दे तो यह उसकी मग़फ़िरत का और दोज़ख़ से उसकी गर्दन की आज़ादी का सामान बन जायेगा और उसको उसी क़द्र सवाब मिलेगा जितना रोज़ेदार को मिलेगा, मगर रोज़ेदार के सवाब में से कुछ कमी न होगी।

हज़रत सलमान रज़ियल्लाहु अ़न्हु का बयान है कि हमने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! हममें से हर शख़्स को इतना मयस्सर नहीं जो रोज़ा इफ़्तार करा दें, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला यह सवाब उसको (भी) देगा जो पानी मिले हुए थोड़े-से दूध या एक खजूर या एक घूँट पानी से इफ़्तार करा दे। (आपने आगे यह भी फ़रमाया कि) जो

शख़्स (इफ़्तार के बाद) किसी रोज़ेदार को पेट भर के खाना खिला दे उसको अल्लाह तआला मेरे हौज़ से ऐसा सैराब करेंगे कि जन्नत में दाख़िल होने तक प्यासा न होगा, (और फिर जन्नत में तो भूख-प्यास का नाम ही नहीं)। इस महीने का पहला हिस्सा रहमत है, दूसरा हिस्सा मग़फ़िरत है, तीसरा हिस्सा दोज़ख़ से आज़ादी का है। जिसने इस महीने में अपने गुलाम का काम हल्का कर दिया तो अल्लाह तआला उसकी मग़फ़िरत फ़रमा देंगे।

बाज़ रिवायात में यह भी आया है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस मौके पर यह भी फ़रमाया कि इस महीने में चार कामों की कसरत करो, इनमें से दो काम ऐसे हैं कि उनके ज़रिये तुम अपने परवर्दिगार को राज़ी करोगे, दो काम ऐसे हैं जिनसे तुम बेपरवाह नहीं हो सकते हो। वे दो काम जिनके ज़रिये अल्लाह की ख़ुशनूदी हासिल होगी ये हैं: (1) **ला इला-ह इल्लल्लाहु** का विर्द रखना (2) अल्लाह से मग़फ़िरत तलब करते रहना। और वे दो चीज़ें जिनसे तुम बेपरवाह नहीं रह सकते ये हैं: (1) जन्नत का सवाल करना (2) दोज़ख़ से पनाह माँगना।

तशरीह: इनसान की पैदाइश इबादत और सिर्फ़ इबादत के लिए है, जैसा कि सूर: ज़ारियात में फ़रमाया गया:

तर्जुमा: और मैंने इनसान और जिन्न को नहीं पैदा किया मगर इस वास्ते कि वे मेरी इबादत करें। (सूर: ज़ारियात आयत 56)

रोज़ा बदनी इबादत है जो पहली उम्मतों पर भी फ़र्ज़ था जैसा कि सूर: ब-क़र: में फ़रमाया है:

तर्जुमा: ऐ ईमान वालो! तुम पर रोज़े फ़र्ज़ किए गये जैसा कि तुमसे पहले लोगों पर फ़र्ज़ किए गये थे, ताकि तुम परहेज़गार बनो। ये रोज़े चन्द दिन के हैं। (सूर: ब-क़र: आयत 183,184)

रोज़े कि हिकमत

"ताकि तुम परहेज़गार बनो" में रोज़े की हिकमत की तरफ़ इशारा फ़रमाया है। तक़्वा छोटे बड़े, ज़ाहिरी और बातिनी गुनाहों से बचने का नाम है। आयते करीमा ने बताया कि रोज़े का फ़र्ज़ होना तक़्वा (परहेज़गारी) हासिल करने के लिए है। बात यह है कि इनसान के अन्दर हैवानी जज़्बात हैं, नफ़्सानी ख़्वाहिशें साथ लगी हैं, जिनसे नफ़्स का उभार गुनाहों की तरफ़ होता

रहता है। रोज़ा एक ऐसी इबादत है जिससे हैवानी जज़्बात कमज़ोर होते हैं और नफ़्स का उभार (जोश) कम हो जाता है। और शहवतों व लज़्ज़तों की उमंग घट जाती है।

पूरे महीने रमज़ान के रोज़े रखना हर आक़िल, बालिग़ मुसलमान पर फ़र्ज़ हैं। एक महीने खाने पीने और जिन्सी (सैक्सी) ताल्लुक़ात के तक़ाज़ों पर अमल करने से अगर रुका रहे तो बातिन के अन्दर एक निखार और नफ़्स के अन्दर सुधार पैदा हो जाता है। अगर कोई शख़्स रमज़ान के रोज़े उन अहकाम व आदाब की रोशनी में रख ले जो क़ुरआन व हदीस में बयान किये गये हैं तो वाक़ई नफ़्स साफ़ सुथरा हो जाता है। फिर नफ़्स में उभार (यानी गुनाहों की तरफ़ रुझान और मैलान) होता है तो अगला रमज़ान आ मौजूद होता है।

रमज़ान मुबारक के रोज़ों के अलावा नफ़्ली रोज़े भी शरीअत में रखे गये हैं, उन रोज़ों का मुस्तक़िल सवाब है जो हदीस में ज़िक्र किया गया है। और सवाब के अलावा नफ़्ली रोज़ों का यह फ़ायदा भी है कि रमज़ान मुबारक के रोज़े रखते वक़्त जो अमली कोताहियाँ हुईं और आदाब की रियायत का ख़्याल न रहा उस कोताही की तलाफ़ी हो जाती है। जो गुनाह इनसान से हो जाते हैं उनमें सबसे ज़्यादा दो चीज़ें गुनाह का सबब बनती हैं- एक मुँह, दूसरी शर्मगाह। चुनाँचे इमाम तिर्मिज़ी रहमतुल्लाहि अलैहि ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से नक़ल किया कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से दरियाफ़्त किया गया कि सबसे ज़्यादा कौनसी चीज़ दोज़ख़ में दाख़िल कराने का ज़रिया बनेगी? आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जवाब दियाः **मुँह और शर्मगाह।** इन दानों को दोज़ख़ में दाख़िल कराने में ज़्यादा दख़ल है। रोज़े में मुँह और शर्मगाह दोनों पर पाबन्दी होती है और ज़िक्र हुई दोनों राहों से जो गुनाह हो सकते हैं, रोज़ा उनसे रोकने का बहुत बड़ा ज़रिया है इसी लिये तो एक हदीस में फ़रमायाः **रोज़ा ढाल है** (गुनाह से और दोज़ख़ की आग से भी बचाता है)। (बुख़ारी व मुस्लिम)

रोज़े की हिफ़ाज़त

अगर रोज़े को पूरी पाबन्दी और अहकाम व आदाब की पूरी रियायत के साथ पूरा किया जाये तो बिला शुब्हा गुनाहों से महफ़ूज़ रहना आसान हो जाता है। ख़ास रोज़े के वक़्त भी और उसके बाद भी, हाँ अगर किसी ने

रोज़े के आदाब का ख़्याल न किया और गुनाहों में मशग़ूल रहते हुए रोज़े की नीयत कर ली और खाने-पीने और नफ़्सानी ख़्वाहिश से बाज़ रहा मगर हराम कमाने और ग़ीबत करने में लगा रहा तो उससे फ़र्ज़ तो अदा हो जायेगा मगर रोज़े की बरकतें और उसके फल से मेहरूमी रहेगी जैसा कि हदीस की किताब निसाई शरीफ़ में नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद नकल किया है:

हदीसः रोज़ा ढाल है जब तक उसको फाड़ न डाले।

और एक हदीस में इरशाद फ़रमाया:

हदीसः जो शख़्स रोज़ा रखकर झूठी बात और ग़लत काम न छोड़े तो अल्लाह को कुछ हाजत नहीं कि वह (गुनाहों को छोड़े बग़ैर) सिर्फ़ खाना-पीना छोड़ दे।

मालूम हुआ कि खाना, पीना और जिन्सी ताल्लुक़ात छोड़ने ही से रोज़ा कामिल नहीं होता बल्कि रोज़े को बुरे कामों और गन्दी बातों और हर तरह के गुनाहों से महफ़ूज़ रखना लाज़िम है। रोज़ा मुँह में हो और आदमी बद-कलामी करे, यह उसके लिये ज़ेब नहीं देता। इसी लिये तो दो जहाँ के सरदार सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया:

हदीसः जब तुम में से किसी का रोज़ा हो तो गन्दी बातें न करे, शोर न मचाये, अगर कोई शख़्स गाली-गलोज या लड़ाई-झगड़ा करने लगे (तो उसको गाली-गलोज या थप्पड़ से जवाब न दे) बल्कि यूँ कह दे कि मैं रोज़ेदार आदमी हूँ। (गाली-गलोज करना या लड़ाई लड़ना मेरा काम नहीं)।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि फ़रमाया नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि बहुत-से रोज़ेदार ऐसे हैं जिनके लिए (हराम खाने या हराम काम करने या ग़ीबत वग़ैरह करने की वजह से) प्यास के अ़लावा कुछ भी नहीं। और बहुत-से तहज्जुद गुज़ार ऐसे हैं जिनके लिए (रियाकारी की वजह से) जागने के सिवा कुछ नहीं। (दारमी)

रोज़ा और सेहत

रोज़े में जहाँ ज़ाहिर व बातिन की सफ़ाई होती है वहाँ सेहत व तन्दुरुस्ती भी हासिल होती है, चुनाँचे हाफ़िज़ मुन्ज़री रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने "अत्तरग़ीब वत्तरहीब" में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यह इरशाद नकल किया है:

हदीसः जिहाद करो ग़नीमत (दुश्मन का माल व दौलत) हासिल होगी, रोज़े रखो तन्दुरुस्त रहोगे, सफ़र करो मालदार हो जाओगे।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जो कुछ फ़रमाया बिल्कुल हक़ है। आँखों के सामने है, डॉक्टर व हकीम लोग भी यह बात बताते हैं कि रोज़े का जिस्मानी सेहत से ख़ास ताल्लुक़ है, और रमज़ान में जो माजरा सब अपनी आँखों से देखते हैं कि बारह चौदह घण्टे ख़ाली पेट रहकर इफ़्तार के वक़्त नरम-गरम दाल, पकौड़े, कच्चे-पक्के चने और तरह-तरह की चीज़ें चन्द मिनट के अन्दर मेदे (पेट) में पहुँच जाती हैं, और कुछ भी किसी को तकलीफ़ नहीं होती, यह सिर्फ़ रोज़े की बरकत है। अगर तिब्बी नुक़्ता-ए-नज़र से देखा जाये तो इस तरह ख़ाली पेट अनाप-शनाप भरती कर लेने की वजह से मेदा सख़्त बीमार हो जाना चाहिए।

रोज़े की फ़ज़ीलत

एक रोज़ा रख लेने से खुदा पाक की तरफ़ से क्या इनाम मिलता है? इसके बारे में हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः

हदीसः जो शख़्स अल्लाह की ख़ुशनूदी के लिए एक दिन रोज़ा रखे अल्लाह तआला उसको दोज़ख़ की आग से इतनी दूर कर देंगे जितनी दूर कोई शख़्स सत्तर साल तक चलकर पहुँचे। (बुख़ारी व मुस्लिम)

इस हदीस में नफ़िल या फ़र्ज़ रोज़े की तख़्सीस नहीं की गयी है, और ख़ास रमज़ान के रोज़े के बारे में नबी करीम सल्ल० का इरशाद हैः

हदीसः शरअन जिसे रोज़ा छोड़ने की इजाज़त न हो और आजिज़ करने वाला मर्ज़ भी उसे न लगा हो, उसने अगर रमज़ान का एक रोज़ा छोड़ दिया तो उम्र भर रोज़े रखने से भी उस एक रोज़े की तलाफ़ी न होगी, अगरचे बतौर क़ज़ा उम्र भर भी रोज़े रख ले। (अहमद, तिर्मिज़ी)

बात यह है कि हर चीज़ का एक मौसम होता है, और मौसम के एतिबार से चीज़ों और ग़ल्लों वग़ैरह की क़ीमत बढ़ती और चढ़ती है, माह रमज़ान मुबारक फ़र्ज़ रोज़ों के लिये मख़्सूस कर दिया गया है। अगर किसी ने अपनी बदबख़्ती से रमज़ान का एक रोज़ा छोड़ दिया, उसके आमालनामे में 'गुनाहे-कबीरा' (बड़ा गुनाह) तो लिखा ही गया और रोज़ा रखने पर जो बहुत बड़ा सवाब और बहुत बड़ी ख़ैर व बरकत से मेहरूमी हुई यह इसके अलावा है जो बहुत बड़ा नुकसान है। उस एक रोज़े के बदले अगर उम्र भर भी रोज़े

रखे तब भी वह बात हासिल न होगी जो रमज़ान में रोज़ा रखने से हासिल होती, हाँ एक रोज़ा कज़ा की नीयत से रख देने से मसले के एतिबार से तो यह कह देंगे कि कज़ा रखने की ज़िम्मेदारी से 'सबुकदोशी' (मुक्ति और छुटकारा) हो गयी, और ज़ाबते की कज़ा रखने से कज़ा रखने का जो हुक्म है उसका पालन समझ लिया जायेगा, लेकिन यह ख़्याल कर लेना कि इससे उस सवाब की तलाफ़ी हो जायेगी जो रमज़ान में रोज़ा रखने से मिलता और वे बरकतें भी नसीब हो जायेंगी जो माह रमज़ान में रोज़ा रखने से हिस्से में आ जातीं, यह ग़लत ख़्याल है।

आजकल बहुत-से हट्टे-कट्टे तन्दुरुस्त व ताक़तवर और अच्छे-ख़ासे लोग रमज़ान शरीफ़ के रोज़े नहीं रखते, ज़रा-सी भूख व प्यास और मामूली-सी बीड़ी, सिगरेट और पान तम्बाकू की तलब पूरी करने की वजह से रोज़े खा जाते हैं और सख़्त गुनाहगार होते हैं, यह ज़बरदस्त बुज़दिली और बेहिम्मती बल्कि बहुत बड़ी बेवफ़ाई है, कि जिसने जान दी, हाथ-पैर दिये, इनसानियत का शर्फ़ (सम्मान) बख़्शा, उसके लिये ज़रा-सी तकलीफ़ गवारा नहीं। रमज़ान के रोज़े रखना उन पाँच अरकान में से है जिनपर इस्लाम की बुनियाद है, जिसने रमज़ान के रोज़े न रखे उसने इस्लाम का एक रुक्न गिरा दिया और सख़्त मुजरिम हुआ।

रोज़े की एक ख़ास ख़ूबी

हुज़ूरे अकरम सल्ल० ने रोज़े के बारे में यह भी इरशाद फ़रमाया किः

हदीसः इनसान के हर अ़मल का अज्र (कम से कम) दस गुना बढ़ा दिया जाता है, (लेकिन) रोज़े के बारे में अल्लाह तआ़ला का इरशाद है कि रोज़ा इस क़ानून से अलग है क्योंकि वह ख़ास मेरे लिये है और मैं ही उसका अज्र दूँगा। बन्दा मेरी वजह से अपनी ख़्वाहिशों को और खाने पीने को छोड़ देता है। (बुख़ारी व मुस्लिम)

इबादतें तो सब अल्लाह के लिए हैं, फिर रोज़े को ख़ास अपने लिए क्यों फ़रमाया? इसके बारे में उम्मत के आ़लिमों ने बताया है कि चूँकि दूसरी इबादतें ऐसी हैं जिनमें अ़मल किया जाता है और अ़मल नज़रों के सामने आ सकता है, इसलिए उनमें दिखावे का एहतिमाल (शक और संदेह) रहता है, मगर रोज़ा अ़मल और काम नहीं है बल्कि फ़ेल और काम को छोड़ना है, इसमें कोई काम नज़र के सामने नहीं आता इसलिए रिया (दिखावे) से दूर है।

रोज़ा वही रखेगा जिसे खुदा-ए-पाक का डर होगा, और रोज़ा रखकर रोज़े को वही बाक़ी रखेगा जिसका सिर्फ़ सवाब के लेने का इरादा हो। अगर कोई शख़्स रोज़ा रखकर तन्हाई में कुछ खा-पी ले और लोगों के सामने आ जाये तो बन्दे तो उसे रोज़ेदार ही समझेंगे, रोज़ा रखकर रोज़े को वही पूरा करता है जो ख़ालिस अल्लाह की रिज़ा का तालिब होता है, इसी लिए "अस्सौमु ली" (यानी रोज़ा ख़ास मेरे लिए है) फ़रमाया, फिर जिस अ़मल में रिया (दिखावे) का एहतिमाल भी न हो उसका सवाब भी विशेष और नुमायाँ होना चाहिये, चुनाँचे खुदा तआ़ला दूसरी इबादतों का सवाब फ़रिश्तों से दिला देते हैं और रोज़े का सवाब खुद इनायत फ़रमायेंगे जो बे-इन्तिहा होगा।

मुल्ला अ़ली क़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने अपनी किताब मिरक़ात में फ़रमाया है कि रोज़े के सवाब का अन्दाज़ा और उसकी मात्रा अल्लाह पाक के अ़लावा और किसी को मालूम नहीं इसलिए कि रोज़े के अन्दर कुछ ऐसी खुसूसियतें और विशेषताएँ हैं जो दूसरी इबादतों में नहीं पाई जातीं इसी लिए अल्लाह तआ़ला ने इसका अज्र अपनी ज़ात से मुताल्लिक़ रखा, फ़रिश्तों को इसका अज्र देने पर मामूर नहीं फ़रमाया।

रोज़ेदारों के लिए जन्नत का एक ख़ास दरवाज़ा

हज़रत सहल बिन सअ़द रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जन्नत में आठ दरवाज़े हैं, जिनमें से एक का नाम **रय्यान** (1) है, इससे सिर्फ़ रोज़ेदार ही दाख़िल होंगे। (मिश्कात शरीफ़ पेज: 173)

रोज़ेदार को दो खुशियाँ

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि:

हदीस: रोज़ेदार के लिये दो खुशियाँ हैं- एक खुशी इफ़्तार के वक़्त होती है और एक खुशी उस वक़्त होगी जब अपने रब से मुलाक़ात करेगा।

दर हक़ीक़त रब की मुलाक़ात ही तो इबादत का असल मक़सद है, उस वक़्त की खुशी का क्या कहना जब आ़जिज़ बन्दे अपने माबूद से मुलाक़ात करेंगे। अल्लाह तआ़ला हम सब को यह मुलाक़ात नसीब फ़रमाये। आमीन।

(1) रय्यान के मयने हैं सैराबी वाला, चूँकि रोज़ेदारों ने रोज़े की हालत में दुनिया में प्यास की तकलीफ़ उठायी जिसका अज्र जन्नत की सैराबी होगी, इसलिए उस दरवाज़े का नाम रय्यान रखा गया है जिससे रोज़ेदार जन्नत में दाख़िल होंगे।

रमज़ान और कुरआन

अल्लाह के कलाम को रमज़ान मुबारक से ख़ास ताल्लुक़ है जैसा कि सूरः ब-क़रः में इरशाद फ़रमाया है:

شَهْرُ رَمَضَانَ الَّذِيْٓ اُنْزِلَ فِيْهِ الْقُرْاٰنُ

तर्जुमाः माह रमज़ान है जिसमें कुरआन नाज़िल किया गया।

"क़यामे रमज़ान" यानी तरावीह की नमाज़, यह भी कुरआन शरीफ़ पढ़ने और सुनने के लिये है। दिन को रोज़े में मशग़ूलियत और रात को तरावीह में खड़े होकर ज़ौक़ व शौक़ से कुरआन पढ़ना या सुनना इससे मोमिन के दिल में एक अजीब सुरूर पैदा होता है, और ये दोनों शग़ल क़ियामत के दिन मोमिन के काम आयेंगे। हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है:

हदीसः रोज़ा और कुरआन बन्दे के लिये बारगाहे ख़ुदावन्दी में सिफ़ारिश करेंगे। रोज़ा कहेगा कि ऐ रब! मैंने इस बन्दे को दिन में खाने पीने और दूसरी ख़्वाहिशों से रोक दिया था। लिहाज़ा इसके बारे में मेरी सिफ़ारिश क़बूल फ़रमा लीजिये। और कुरआन मजीद अ़र्ज़ करेगा कि मैंने इसे रात को सोने नहीं दिया लिहाज़ा इसके बारे में मेरी सिफ़ारिश क़बूल फ़रमा लीजिये, चुनाँचे दोनों की सिफ़ारिश क़बूल कर ली जायेगी। (मिश्कात शरीफ़ पेज 173)

हर साल रमज़ान मुबारक में हजरत जिबराईल अ़लैहिस्सलाम हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से कुरआन मजीद का दौर किया करते थे। आँ हजरत जिबराईल अ़लैहिस्सलाम को सुनाते और वह नबी पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को सुनाते थे। जिस साल आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात हुई उस साल दो बार दौर किया इससे पहले एक बार दौर किया करते थे। (बुख़ारी)

इससे मालूम हुआ कि रमज़ान मुबारक में कुरआन के हाफ़िज़ हज़रात का एक-दूसरे को सुनाने का जो राईज तरीक़ा है यह सुन्नत है, रमज़ान में हिम्मत करके हाफ़िज़ व 'नाज़िरा' (देखकर पढ़ने वाले) ख़ूब कुरआन की तिलावत करें, दस पाँच तो ख़त्म कर ही लें।

रमज़ान में रोज़े और तरावीह व नवाफ़िल

हदीसः (57) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हज़रत रसूले अकरम सल्ल० ने इरशाद फ़रमाया कि जिसने ईमान के साथ

और सवाब का यकीन रखते हुए रमज़ान के रोज़े रखे, उसके पिछले गुनाह माफ़ कर दिये जायेंगे। और जिसने रमज़ान (की रातों) में ईमान के साथ और सवाब का यकीन रखते हुए क़्याम किया (तरावीह और नफ़िल में मशग़ूल रहा) उसके पिछले गुनाह माफ़ कर दिये जायेंगे। और जिसने शबे-क़द्र में ईमान के साथ सवाब समझते हुए क़्याम किया उसके पिछले गुनाह माफ़ कर दिये जायेंगे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 173)

तशरीहः इस मुबारक हदीस में रमज़ान शरीफ़ के रोज़े पर पिछले गुनाहों की माफ़ी का वायदा फ़रमाया है, और रमज़ान की रातों में क़्याम (तरावीह व नवाफ़िल पढ़ने) और शबे-क़द्र में क़्याम करने की फ़ज़ीलत बतायी है, और रमज़ान में रात को अल्लाह के सामने नमाज़ में खड़े होने इसी तरह शबे-क़द्र में इबादत करने पर भी पिछले गुनाहों की माफ़ी का ऐलान फ़रमाया।

रमज़ान मुबारक में रातों को नमाज़ें पढ़ते रहना **"क़्यामे-रमज़ान"** कहलाता है। तरावीह भी इसमें दाख़िल है, और तरावीह के अ़लावा जितने नवाफ़िल पढ़ सकें, पढ़ते रहें। हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अ़लैहि से नक़ल किया गया है कि वह रोज़ाना तरावीह जमाअ़त के साथ से फ़ारिग़ होकर सुबह तक एक क़ुरआन मजीद नमाज़ में खड़े होकर ख़त्म कर लेते थे, और एक क़ुरआन मजीद रोज़ाना दिन में ख़त्म करते थे, इस तरह से रमज़ान में उनके इकसठ (61) ख़त्म हो जाते थे।

तरावीह

तरावीह की नमाज़ मर्दों, औरतों सबके लिये बीस रकअ़त सुन्नते मुअक्कदा है, और मर्दों के लिये यह भी मसनून है कि मस्जिद में जमाअ़त के साथ तरावीह पढ़ें। हाफ़िज़ हों तो ख़ुद क़ुरआन सुनायें वरना दूसरों का क़ुरआन सुनें। रमज़ान में क़ुरआन पढ़ने और सुनने का ज़ौक़ बढ़ जाना मोमिन के ईमान का तक़ाज़ा है। जो लोग तरावीह की नमाज़ में सुस्ती करते हैं या बेहिसाब तेज़ पढ़ने वाले हाफ़िज़ को तरावीह पढ़ाने के लिये तजवीज़ करते हैं ताकि जल्दी फ़ारिग़ हो जायें (अगरचे उस तेज़ पढ़ने में क़ुरआन के हुरूफ़ कट जायें और मायने बदल जायें) ऐसे लोग सख़्त ग़लती पर हैं। साल में एक महीने के लिये तो यह मौक़ा नसीब होता है इसमें भी मस्जिद और नमाज़ से लगाव न हो और जल्दी भागने की कोशिश करें जैसे जेल से भाग रहे हों बहुत बड़ी मेहरूमी है। ऐसे लोग तरावीह के अ़लावा क्या नफ़िल पढ़ते

होंगे, तरावीह जो सुन्नते मुअक्कदा है उसी को बद्-दिली से पढ़ते हैं, बल्कि पढ़ने का नाम करके जल्दी से होटल में जाकर खेल-तमाशे और बेकार के मशग़लों में मशग़ूल हो जाते हैं, **इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन।**

बहुत-सी औरतें रोज़े तो ख़ूब रखती हैं और शबे-क़द्र में भी ख़ूब जाग लेती हैं लेकिन तरावीह पढ़ने में सुस्ती करती हैं।

ऐ माँओ-बहनो! आख़िरत के कामों में ग़फ़लत न बरतो। तरावीह पूरी बीस रकअ़त पढ़ा करो। अगर किसी वजह से जैसे बच्चों के रोने चीख़ने या उनके बीमार होने की वजह से शुरू रात में पूरी तरावीह न पढ़ सको तो जब सेहरी के लिये उठो उस वक़्त पूरी कर लो, बल्कि अगर शुरू रात में पूरी ही नमाज़े तरावीह रह जाये तो पूरी बीस रकअ़तें सेहरी के वक़्त पढ़ लो।

रमज़ान आख़िरत की कमाई का महीना है इसमें ख़ूब ज़्यादा इबादत करें

हदीसः (58) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि फ़रमाया हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि जब रमज़ान (का महीना) दाख़िल होता है तो आसमान के दरवाज़े खोल दिये जाते हैं, और बाज़ रिवायतों में है कि जन्नत के दरवाज़े खुलवा दिये जाते हैं और दोज़ख़ के दरवाज़े बन्द कर दिये जाते हैं और शैतानों को (ज़ंजीरों में) जकड़ दिया जाता है। (और एक रिवायत में है कि) रहमत के दरवाज़े खोल दिये जाते हैं)।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 173)

हदीसः (59) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब रमज़ान के महीने की पहली रात होती है तो शयातीन और सरकश जिन्न जकड़ दिये जाते हैं, और दोज़ख़ के दरवाज़े बन्द कर दिये जाते हैं। फिर (रमज़ान के ख़त्म होने तक) उनमें से कोई एक दरवाज़ा भी नहीं खोला जाता। और जन्नत के दरवाज़े खोल दिये जाते हैं फिर (रमज़ान के ख़त्म होने तक) उनमें का एक दरवाज़ा भी बन्द नहीं किया जाता। और एक पुकारने वाला पुकारता है कि ऐ ख़ैर की तलाश करने वाले! आगे बढ़, और ऐ बुराई के तलाश करने वाले! रुक जा। (मिश्कात शरीफ़ पेज 173)

तशरीहः इन दोनों हदीसों से चन्द बातें मालूम हुईं:

पहली: यह कि रमज़ान के शुरू महीने से ही जन्नत के और रहमत के दरवाज़े खोल दिये जाते हैं, जो महीने के ख़त्म तक बन्द नहीं किये जाते, और दोज़ख़ के दरवाज़े बन्द कर दिये जाते हैं जो महीना ख़त्म होने तक नहीं खोले जाते।

दूसरी: रमज़ान का महीना आने पर शैतानों और सरकश जिन्नात को जकड़ दिया जाता है।

तीसरी: एक पुकारने वाला रोज़ाना रमज़ान की रातों में पुकार कर कहता है कि ऐ नेकी के तलाश करने वाले! आगे बढ़, और ऐ बुराई करने वाले! रुक जा।

चौथी: रमज़ान में रोज़ाना रात को अल्लाह जल्ल शानुहू बहुत-से लोगों को दोज़ख़ से आज़ाद फ़रमाते हैं।

रमज़ान मुबारक बहुत ही ख़ैर व बरकत का महीना है, और आख़िरत की कमाई का बहुत बड़ा सीज़न है, जैसे सर्दी के ज़माने में गर्म कपड़े वालों की ख़ूब कमाई होती है और जैसे बारिश में टैक्सी वालों की ख़ूब चाँदी बन जाती है, इसी तरह आख़िरत की कमाई के लिये भी ख़ास-ख़ास मौके आते रहते हैं।

रमज़ान मुबारक नेकियों का महीना है, इसमें अज्र व सवाब ख़ूब ज़्यादा बढ़ा दिया जाता है। नफ़्ल का सवाब फ़र्ज़ के बराबर और एक फ़र्ज़ का सत्तर फ़र्ज़ों के बराबर सवाब मिलता है। जैसा कि नबी-ए-पाक के ख़ुतबे में गुज़र चुका है। इस महीने में नेकियों की ऐसी हवा चलती है कि ख़ुद-ब-ख़ुद तबीयतें नेकी पर आ जाती हैं और अल्लाह का मुनादी भी नेकी करने वालों को थपकी दे-देकर आगे बढ़ता है, आख़िरकार ऐसी सूरत में मोमिन बन्दे ख़ूब ज़ोर शोर से नेकियों में लग जाते हैं। जो शख़्स दूसरे महीनों में दो रक्अ़त नमाज़ पढ़ने से जान चुराता है वह रमज़ान मुबारक में पंज-वक़्ता नमाज़ और तिलावत का पाबन्द हो जाता है, और न सिर्फ़ पंज-वक़्ता फ़र्ज़ पढ़ता है बल्कि इशा के फ़र्ज़ों के बाद तरावीह की ख़ूब लम्बी-लम्बी बीस रक्अ़तें ख़ुशी-ख़ुशी के साथ अदा कर लेता है। बहुत-से शराबियों को देखा गया है कि इस माह में शराब छोड़ देते हैं और हराम-ख़ोर हराम खाने से बाज़ आ जाते हैं।

फ़र्ज़ों की पाबन्दी तो बहरहाल ज़रूरी है, नफ़िल नमाज़, ज़िक्र, तिलावत और दूसरी इबादतों की तरफ़ भी ख़ुसूसी तवज्जोह करना चाहिये। इस माह में

कोशिश करें कि कोई मिनट ज़ाया न हो। ला इला-ह इल्लल्लाहु और इस्तिग़फ़ार की कसरत करें (यानी ख़ूब ज़्यादा करें) और जन्नत का सवाल और दोज़ख़ से महफ़ूज़ रहने की दुआ भी कसरत से करें, जैसा कि नबी पाक के ख़ुतबे में गुज़र चुका है।

शायद किसी के दिल में यह ख़्याल गुज़रे कि जब शैतान बन्द हो जाते हैं तो बहुत-से लोग रमज़ान में भी गुनाहों में मुब्तला क्यों नज़र आते हैं? बात असल यह है कि इनसान का नफ़्स गुनाह कराने में शैतान से कम नहीं है, जिन लोगों को गुनाहों की ख़ूब आदत हो जाती है, उन्हें गुनाहों का चस्का पड़ जाता है, शैतान के तरग़ीब दिये बग़ैर भी उनकी ज़िन्दगी की गाड़ी गुनाहों की पटरी पर चलती रहती है। गुनाह तो इनसान से हो ही जाता है, मगर गुनाह का आदी बनना और उसपर क़ायम रहना और रमज़ान जैसे महीने में गुनाह करना बहुत ही ज़्यादा ख़तरनाक है। जहाँ गुनाह कराने के लिये शैतान के बहकाने की भी ज़रूरत न पड़े वहाँ नफ़्स की शरारत का क्या हाल होगा?

रमज़ान और तहज्जुद

रमज़ान में तहज्जुद पढ़ना बहुत आसान हो जाता है क्योंकि तहज्जुद के वक़्त सेहरी खाने के लिये तो उठते ही हैं, सेहरी खाने से पहले या बाद में (जब तक सुबह सादिक न हो) जिस क़द्र मयस्सर हो सके नवाफ़िल पढ़ लिया करें, इस तरह पूरे रमज़ान में तहज्जुद नसीब हो सकती है, फिर आदत पड़ जाये तो बाद में भी जारी रख सकती हैं, वरना कम-से-कम रमज़ान में तो तहज्जुद की पाबन्दी कर ही लें।

रमज़ान और सख़ावत

रमज़ान मुबारक सख़ावत का महीना है। इसमें जिस क़द्र अल्लाह के रास्ते में ख़र्च किया जाये कम है, क्योंकि यह महीना आख़िरत की कमाई का महीना है, इसमें रोज़ा इफ़्तार कराने और रोज़ा खोलने के बाद रोज़ेदार को पेट भर के खिलाने की भी ख़ास फ़ज़ीलत आई है और इस महीने को **"शहरुल-मुवासात"** (ग़म खाने का महीना) फ़रमाया है, जैसा कि नबी पाक सल्ल० के ख़ुतबे में गुज़रा। ग़रीबों की इमदाद और उनका ख़्याल रखना इस महीने के कामों मे एक अहम काम है। एक हदीस में इरशाद है:

हदीसः जब रमज़ान का महीना आ जाता था तो हज़रत रसूले अकरम

सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हर कैदी को आज़ाद फ़रमाते थे और हर सवाल करने वाले को अ़ता फ़रमाते थे। (मिश्कात शरीफ़)

एक और हदीस में है:

हदीसः हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सब लोगों से ज़्यादा सख़ी थे और आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सख़ावत रमज़ान मुबारक में तमाम दिनों से ज़्यादा हो जाती थी। रमज़ान में हर रात को हज़रत जिबराईल अ़लैहिस्सलाम आप से मुलाक़ात करते थे (और) आप उनको कुरआन शरीफ़ सुनाते थे। जब आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से जिबराईल अ़लैहिस्सलाम मुलाक़ात करते थे तो आप उस हवा से भी ज़्यादा सख़ी हो जाते थे जो बारिश लाती है। (बुख़ारी व मुस्लिम)

रोज़ा इफ़्तार कराना

फ़रमाया ख़ातिमुल्-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि जिसने रोज़ेदार का रोज़ा खुलवाया या मुजाहिद को सामान दे दिया तो उसको रोज़ेदार और मुजाहिद जैसा अज्र मिलेगा। (बैहक़ी ज़ैद बिन ख़ालिद से) और ग़ाज़ी व रोज़ेदार के सवाब में कुछ कमी न होगी, जैसा कि दूसरी हदीस से साबित है।

रोज़े में भूलकर खा-पी लेना

फ़रमाया नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि जो शख़्स रोज़े में भूलकर खा-पी ले तो रोज़ा पूरा कर ले क्योंकि (उसका कुछ कुसूर नहीं) उसे अल्लाह ने खिलाया और पिलाया। (बुख़ारी व मुस्लिम)

सेहरी खाना

फ़रमाया नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि सेहरी खाया करो क्योंकि सेहरी में बरकत है। (बुख़ारी व मुस्लिम)

और यह भी फ़रमाया कि हमारे और अहले किताब के रोज़ों में सेहरी खाने का फ़र्क़ है। (मुस्लिम)

और एक हदीस में है कि नबी करीम सल्ल० ने फ़रमाया कि सेहरी खाने वालों पर ख़ुदा और उसके फ़रिश्ते रहमत भेजते हैं। (तिबरानी)

इफ़्तार में जल्दी करना

फ़रमाया नबी-ए-रहमत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि लोग हमेशा ख़ैर पर रहेंगे जब तक इफ़्तार में जल्दी करते रहेंगे, यानी सूरज छुपते ही

फ़ौरन रोज़ा खोल लिया करेंगे। (बुख़ारी व मुस्लिम)

और फ़रमाया नबी पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं कि बन्दों में मुझे सबसे ज़्यादा प्यारा वह है जो इफ़्तार में सबसे ज़्यादा जल्दी करने वाला है, यानी सूरज के छुपते ही फ़ौरन इफ़्तार करता है, और उसे उसमें जल्दी का ख़ूब एहतिमाम रहता है। (तिर्मिज़ी)

और फ़रमाया दोनों जहान के सरदार सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि जब उधर से (यानी पूरब से) रात आ गयी और इधर से (यानी पश्चिम से) दिन चला गया तो रोज़ा इफ़्तार करने का वक़्त हो गया। (आगे इन्तिज़ार करना फ़ुज़ूल है बल्कि मक्रूह है)। (मुस्लिम)

खजूर और पानी से इफ़्तार

फ़रमाया रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि जब तुम रोज़ा खोलने लगो तो खजूरों से इफ़्तार करो क्योंकि खजूर पूरी की पूरी बरकत है। अगर खजूर न मिले तो पानी से रोज़ा खोल लो, क्योंकि वह (अन्दर व बाहर को) पाक करने वाला है। (तिर्मिज़ी)

रोज़ा जिस्म की ज़कात है

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि फ़रमाया ख़ातिमुल्-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि हर चीज़ की ज़कात होती है और जिस्म की ज़कात रोज़ा है। (इब्ने माजा)

सर्दी में रोज़ा

हज़रत आ़मिर बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि फ़रमाया सरवरे आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि सर्दी के मौसम में रोज़ा रखना मुफ़्त का सवाब है। (तिर्मिज़ी)

मुफ़्त का सवाब इसलिये फ़रमाया कि उसमें प्यास नहीं लगती और दिन भी छोटा होता है।

नापाकी की हालत रोज़े के ख़िलाफ़ नहीं

फ़रमाया हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने कि रमज़ान मुबारक में हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को नापाकी की हालत में सुबह हो जाती थी, और यह नापाकी एहतिलाम (स्वपनदोष) की नहीं (बल्कि बीवियों के साथ ताल्लुक़ क़ायम करने की वजह से होती थी) फिर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व

सल्लम गुस्ल फ़रमाकर रोज़ा रखते थे। (बुख़ारी व मुस्लिम)

मतलब यह है कि सुबह सादिक़ से पहले गुस्ल नहीं फ़रमाया और रोज़े की नीयत फ़रमा ली, फिर सूरज निकलने से पहले गुस्ल फ़रमाकर नमाज़ पढ़ ली। इस तरह से रोज़े का कुछ हिस्सा नापाकी की हालत में गुज़रा, इसलिये कि रोज़ा सुबह सादिक़ के बिल्कुल आरंभ से शुरू हो जाता है। इसी तरह अगर रोज़े में एहतिलाम (सोने की हालत में नहाने की ज़रूरत) हो जाये तो भी रोज़ा फ़ासिद नहीं होता क्योंकि नापाकी रोज़े के मुनाफ़ी (विपरीत और ख़िलाफ़) नहीं है।

रोज़े में मिस्वाक

फ़रमाया हज़रत आमिर बिन रबी रज़ियल्लाहु अन्हु ने कि मैंने रसूले ख़ुदा सल्ल० को रोज़े की हालत में इतनी बार मिस्वाक करते हुए देखा है कि जिसका मैं शुमार नहीं कर सकता। (तिर्मिज़ी)

मिस्वाक गीली हो या ख़ुश्क रोज़े में हर वक़्त कर सकते हैं, अलबत्ता मंजन, टूथपाउडर, टूथपेस्ट या कोयला वग़ैरह से रोज़े में दाँत साफ़ करना मक्रूह है।

रोज़े में सुर्मा

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि एक शख़्स ने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! मेरी आँख में तकलीफ़ है, क्या मैं सुर्मा लगा लूँ? फ़रमाया, लगा लो। (तिर्मिज़ी)

रमज़ान के आख़िरी दशक में इबादत की ख़ास पाबन्दी की जाये

हदीसः (60) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा रिवायत फ़रमाती हैं कि जब रमज़ान का आख़िरी अश्रा (दशक) आता था तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अपने तहबन्द को मज़बूत बांध लेते थे और रात भर इबादत करते थे, और अपने घर वालों को (भी इबादत के लिये) जगाते थे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 182)

तशरीहः एक हदीस में है कि महबूबे ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम रमज़ान के आख़िरी दस दिनों के अन्दर जितनी मेहनत से इबादत करते थे, उसके अ़लावा दूसरे दिनों में उतनी मेहनत न करते थे। (मुस्लिम)

हज़रत आयशा ने यह जो फ़रमाया कि रमज़ान के आख़िरी दशक में

आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तहबन्द कस लेते थे, आलिमों ने इसके दो मतलब बताये हैं- एक यह कि ख़ूब मेहनत और कोशिश से इबादत करते थे और रातों-रात जागते थे। यह ऐसा ही है जैसे उर्दू के मुहावरे में मेहनत का काम बताने के लिये बोला जाता है कि "ख़ूब कमर कस लो"। और दूसरा मतलब तहबन्द कसकर बाँधने का यह बताया कि रात को बीवियों के पास लेटने से दूर रहते थे क्योंकि सारी रात इबादत में गुज़र जाती थी, और एतिकाफ़ भी होता था, इसलिये रमज़ान के आख़िरी दशक में मियाँ-बीवी वाले ख़ास ताल्लुक़ का मौक़ा नहीं लगता था।

हदीस के आख़िर में जो **"अपने घर वालों को भी जगाते थे"** फ़रमाया इसका मतलब यह है कि रमज़ान के आख़िरी दशक में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ख़ुद भी बहुत मेहनत और कोशिश से इबादत करते थे और घर वालों को भी इस मक़सद के लिये जगाते थे, बात यह कि जिसे आख़िरत का ख़्याल हो, मौत के बाद के हालात का यक़ीन हो, अज्र व सवाब के लेने का लालच हो वह क्यों न मेहनत और कोशिश से इबादत में लगेगा। फिर जो अपने लिये पसन्द करे वही अपने घर वालों के लिये भी पसन्द करना चाहिये।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम आम रातों में नमाज़ों के अन्दर इतने खड़े होते थे कि क़दम मुबारक सूज जाते थे, फिर रमज़ान के अन्दर और ख़ुसूसन आख़िरी दशक में तो और ज़्यादा इबादत बढ़ा देते थे, क्योंकि यह महीना और ख़ासकर आख़िरी दस दिन आख़िरत की कमाई का ख़ास मौक़ा है। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की कोशिश होती थी कि घर वाले भी इबादत में लगे रहें, लिहाज़ा आख़िरी दस दिनों की रातों में उनको भी जगाते थे। बहुत-से लोग ख़ुद तो बहुत ज़्यादा इबादत करते हैं लेकिन बाल बच्चों की तरफ़ से ग़ाफ़िल रहते हैं, घर के लोग फ़र्ज़ नमाज़ भी नहीं पढ़ते। अगर बाल बच्चों को हमेशा दीन पर डालने और इबादत में लगाने की कोशिश की जाती रहे और उनको हमेशा फ़राईज़ का पाबन्द रखा जाये तो रमज़ान में नफ़्लों के लिये उठाने और शबे-क़द्र में जगाने की भी हिम्मत हो। जब बाल बच्चों का ज़ेहन दीनी नहीं बनाया तो उनके सामने रात को जागकर इबादत करने की बात करते हुए डरते हैं। अल्लाह तआ़ला हम सबको अपनी मुहब्बत अ़ता फ़रमाए और इबादत की लगन और ज़िक्र के ज़ौक़ से नवाज़े। आमीन।

शबे-क़द्र और उसकी दुआ:

हदीसः (61) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा फ़रमाती हैं कि मैंने अ़र्ज़ किया, या रसूलल्लाह! इरशाद फ़रमाइये कि अगर मुझे पता चल जाये कि फ़लाँ रात को शबे-क़द्र है तो मैं क्या दुआ करूँ? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया यह दुआ करोः

अल्लाहुम्-म इन्न-क अ़फ़ुव्वुन् तुहिब्बुल् अ़फ़्-व फ़अ़्फ़ु अ़न्नी

शबे-क़द्र की फ़ज़ीलतः

रमज़ान मुबारक का पूरा महीना आख़िरत की दौलत कमाने का है, फिर इस महीने में आख़िरी दस दिन और भी ज़्यादा मेहनत और कोशिश से इबादत में लगने के हैं। इस दशक (आख़िरी दस दिन) में शबे-क़द्र होती है जो बड़ी बरकत वाली रात है। क़ुरआन मजीद में इरशाद फ़रमायाः

لَيْلَةُ الْقَدْرِ خَيْرٌ مِّنْ أَلْفِ شَهْرٍ

तर्जुमाः शबे-क़द्र हज़ार महीनों से बेहतर है।

हज़ार महीने के 83 साल और 4 महीने होते हैं, फिर शबे-क़द्र को हज़ार महीनों के बराबर नहीं बताया बल्कि हज़ार महीनों से बेहतर बताया है। हज़ार महीने से शबे-क़द्र किस क़द्र बेहतर है इसका इल्म अल्लाह ही को है। मोमिन बन्दों के लिये शबे-क़द्र बहुत ही ख़ैर व बरकत की चीज़ है। एक रात जागकर इबादत कर लें और हज़ार महीनों से ज़्यादा इबादत का सवाब पा लें, इससे बढ़कर और क्या चाहिये? इसी लिए तो हदीस शरीफ़ में फ़रमायाः

हदीसः जो शख़्स शबे-क़द्र से मेहरूम हो गया (गोया) पूरी भलाई से मेहरूम हो गया, और शबे-क़द्र की ख़ैर से वही मेहरूम होता है जो पूरी ही तरह मेहरूम हो। (इब्ने माजा)

मतलब यह है कि चन्द घण्टे की रात होती है और उसमें इबादत कर लेने से हज़ार महीने से ज़्यादा इबादत करने का सवाब मिलता है, चन्द घण्टे जागकर नफ़्स को समझा-बुझाकर इबादत कर लेना कोई ऐसी बड़ी तकलीफ़ नहीं जो बरदाश्त से बाहर हो, तकलीफ़ ज़रा-सी और सवाब बहुत बड़ा।

अगर कोई शख़्स एक नया पैसा तिजारत में लगा दे और बीस करोड़ का नफ़ा पाये उसको कितनी ख़ुशी होगी? और जिस शख़्स को इतने बड़े नफ़े का मौक़ा मिला फिर उसने तवज्जोह न की उसके बारे में यह कहना बिल्कुल

सही है कि वह पूरा और पक्का मेहरूम है।

पहली उम्मतों की उम्रें ज़्यादा थीं, इस उम्मत की उम्र बहुत से बहुत 70, 80 साल होती है, अल्लाह पाक ने यह एहसान फ़रमाया कि इनको शबे-क़द्र अता फ़रमा दी, और एक शबे-क़द्र की इबादत का दरजा हज़ार महीनों की इबादत से ज़्यादा कर दिया। मेहनत कम हुई, वक़्त भी कम लगा और सवाब में बड़ी-बड़ी उम्र वाली उम्मतों से बढ़ गये। अल्लाह तआला का फ़ज़्ल व इनाम है कि इस उम्मत को सबसे ज़्यादा नवाज़ा, अब देखो! बन्दों की कैसी नालायक़ी होगी कि अल्लाह की बहुत ज़्यादा नवाज़िश और इनायत हो और ग़फ़लत में पड़े सोया करें। रमज़ान का कोई लम्हा ज़ाया न होने दो, ख़ुसूसन आख़िरी दस दिनों में इबादत की ख़ास पाबन्दी करो, और उसमें भी शबे-क़द्र में जागने की बहुत ज़्यादा फ़िक्र करो, बच्चों को भी इसका शौक़ दिलाओ।

दुआ

हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने जब पूछा कि या रसूलल्लाह! शबे-क़द्र में क्या दुआ करूँ? तो आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह दुआ तालीम फ़रमा दी:

अल्लाहुम्-म इन्न-क अफ़ुव्वुन् तुहिब्बुल् अफ़्-व फ़अ्फ़ु अन्नी

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! इसमें शक नहीं कि आप माफ़ करने वाले हैं, माफ़ करने को पसन्द फ़रमाते हैं, लिहाज़ा मुझे माफ़ फ़रमा दीजिये।

देखिये कैसी दुआ इरशाद फ़रमाई, न माल माँगने को बताया न ज़मीन न धन न दौलत, क्या माँगा जाये? माफ़ी! बात असल यह है कि आख़िरत का मामला सबसे ज़्यादा कठिन है। वहाँ अल्लाह के माफ़ फ़रमाने से काम चलेगा। अगर माफ़ी न हुई और ख़ुदा न करे अज़ाब में गिरफ़्तार हुए तो दुनिया की हर नेमत और लज़्ज़त और माल व दौलत बेकार होगी, असल चीज़ माफ़ी और मग़फ़िरत ही है। एक हदीस में इरशाद है:

हदीसः जो शख़्स शबे-क़द्र में ईमान के साथ और सवाब की नीयत से (इबादत के लिये) खड़ा रहा उसके पिछले तमाम गुनाह माफ़ कर दिये जायेंगे।

(बुख़ारी व मुस्लिम)

खड़ा होने का मतलब यह है कि नमाज़ में खड़ा रहे और इसी हुक्म में यह भी है कि तिलावत और ज़िक्र में मशग़ूल हो। और सवाब की उम्मीद

रखने का मतलब यह है कि रियाकारी और दिखावे वग़ैरह किसी तरह की ख़राब नीयत से इबादत में मशग़ूल न हो, बल्कि इख़्लास के साथ सिर्फ़ अल्लाह की रिज़ा और सवाब की नीयत से इबादत में लगा रहे।

बाज़ उलमा ने फ़रमाया कि सवाब की नीयत का मतलब यह है कि सवाब का यक़ीन करके दिल की ख़ुशी से खड़ा हो, बोझ समझकर बद-दिली के साथ इबादत में न लगे, कि सवाब का यक़ीन और एतिक़ाद जिस क़द्र ज़्यादा होगा उतना ही इबादत में मशक़्क़त का बरदाश्त करना आसान होगा। यही वजह है कि जो शख़्स अल्लाह तआ़ला की नज़दीकी में जिस क़द्र तरक़्क़ी करता जाता है इबादत में उसका लगना ज़्यादा होता जाता है।

साथ ही यह भी मालूम हो जाना ज़रूरी है कि ऊपर वाली हदीस और इस जैसी दूसरी हदीसों में गुनाहों की माफ़ी का ज़िक्र है। आ़लिम हज़रात इस बात पर एक-राय हैं कि "कबीरा गुनाह" (बड़े गुनाह) बग़ैर तौबा के माफ़ नहीं होते। पस जहाँ हदीसों में गुनाहों के माफ़ होने का ज़िक्र आता है वहाँ छोटे गुनाह मुराद होते हैं, और छोटे गुनाह ही इनसान से बहुत ज़्यादा होते हैं। इबादत का सवाब भी और हज़ारों गुनाहों की माफ़ी भी हो जाये किस क़द्र बड़ा नफ़ा है।

शबे-क़द्र की तारीख़ें

शबे-क़द्र के बारे में हदीसों में आया है कि रमज़ान के आख़िरी दशक (आख़िरी दस दिनों) की 'ताक' (यानी बेजोड़ जैसे 21, 23 वग़ैरह) रातों में तलाश करो, लिहाज़ा रमज़ान की 21 वीं 23 वीं 25 वीं 27 वीं 29 वीं रात को जागने और इबादत करने की ख़ास पाबन्दी करें, ख़ासकर 27 वीं रात को तो ज़रूर जागें क्योंकि उस दिन शबे-क़द्र होने की ज़्यादा उम्मीद होती है।

हज़रत उबादा रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम एक दिन इसलिए बाहर तशरीफ़ लाये कि हमें शबे-क़द्र की इत्तिला फ़रमा दें, मगर दो मुसलमानों में झगड़ा हो रहा था, नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि मैं इसलिये आया था कि तुम्हें शबे-क़द्र की इत्तिला दूँ मगर फ़लाँ-फ़लाँ शख़्सों में झगड़ा हो रहा था जिसकी वजह से उसका मुक़र्ररा वक़्त मेरे ज़ेहन से उठा लिया गया। हो सकता है कि यह उठा लेना अल्लाह के इल्म में बेहतर हो। (बुख़ारी)

लड़ाई-झगड़े का असर

इस मुबारक हदीस से मालूम हुआ कि आपस का झगड़ा इस क़द्र बुरा अ़मल है कि इसकी वजह से अल्लाह पाक ने नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दिल मुबारक से शबे-क़द्र का मुतैयन वक़्त उठा लिया, यानी किस रात को शबे-क़द्र है मख़्सूस कराके उसका इल्म जो दे दिया गया था वह दिल से उठा लिया गया। अगरचे बाज़ कारणों से इसमें भी उम्मत का फ़ायदा हो गया, जैसा कि इन्शा-अल्लाह हम अभी ज़िक्र करेंगे, लेकिन सबब आपस का झगड़ा बन गया, जिससे आपस में झगड़े की बुराई और निन्दा का पता चला।

शबे-क़द्र की को मुतैयन न करने में मस्लेहतें

दीन के आ़लिमों ने शबे-क़द्र को पोशीदा रखने यानी मुक़र्रर करके यूँ न बताने के बारे में कि फ़लाँ रात को शबे-क़द्र है चन्द मस्लेहतें बतायी हैं:

पहली: यह कि अगर इसका मुतैयन वक़्त बाकी रहता तो बहुत-से तबीयत के काहिल दूसरी रातों का एहतिमाम बिल्कुल छोड़ देते, और मौजूदा सूरत में इस उम्मीद और शुब्हे पर कि शायद आज ही शबे-क़द्र हो अनेक रातों में इबादत की तौफ़ीक़ नसीब हो जाती है।

दूसरी: यह कि बहुत-से लोग ऐसे होते हैं जो गुनाह किए बग़ैर नहीं रहते, अगर यह मुतैयन हो जाती तो अगर बावजूद मालूम होने के गुनाहों की जुर्रत की जाती तो यह बात सख़्त ख़तरनाक थी।

तीसरी: यह कि शबे-क़द्र मुतैयन होने की सूरत में अगर किसी शख़्स से वह रात छूट जाती तो आईन्दा रातों में तबीयत के बुझ जाने की वजह से फिर किसी रात का जागना दिल की ख़ुशी और तबीयत की ताज़गी के साथ नसीब न होता, और दिल की ख़ुशी और तबीयत की ताज़गी के साथ रमज़ान की चन्द रातों की इबादत शबे-क़द्र की तलाश में नसीब हो जाती हैं।

चौथी: यह कि जितनी रातें तलब में ख़र्च होती हैं उन सब का मुस्तक़िल सवाब अलग मिलता है।

पाँचवीं: यह कि रमज़ान की इबादत में हक़ तआ़ला जल्ल शानुहू फ़रिश्तों पर तफ़ाख़ुर (गर्व) फ़रमाते हैं, इस सूरत में गर्व का मौक़ा ज़्यादा है कि बावजूद मालूम न होने के सिर्फ़ एहतिमाल, अन्देशे और उम्मीद पर रात-रात भर जागते हैं, और इबादत में मशग़ूल रहते हैं। और इनके अ़लावा और भी मस्लेहतें हो सकती हैं। मुम्किन है झगड़े की वजह से ख़ास रमज़ान

मुबारक में इसका मुतैयन वक़्त भुला दिया गया हो, और उसके बाद ज़िक्र हुई मस्लेहतों या दीगर मस्लेहतों की वजह से हमेशा के लिये इसका मुतैयन वक़्त उठा लिया गया हो। अल्लाह तआला ही को असल इल्म है।

रमज़ान के आख़िरी दस दिनों में एतिकाफ़

हदीसः (62) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा रिवायत फ़रमाती हैं कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम रमज़ान के आख़िरी दशक में एतिकाफ़ फ़रमाते थे, वफ़ात होने तक आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह मामूल रहा, आपके बाद आपकी बीवियाँ एतिकाफ़ करती थीं। (मिश्कात पेज 183)

तशरीहः रमज़ान मुबारक की हर घड़ी और मिनट व सैकण्ड को ग़नीमत जानना चाहिये। जितना मुम्किन हो इस महीने में नेक काम कर लो और सवाब लूट लो। फिर रमज़ान में भी आख़िरी दस दिन की अहमियत बहुत ज़्यादा है। रमज़ान के आख़िरी दस दिन (जिनको अश्रा-ए-आख़ीरा कहा जाता है) उनमें एतिकाफ़ भी किया जाता है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हर साल इन दिनों का एतिकाफ़ फ़रमाते थे और आपकी बीवियाँ भी एतिकाफ़ करती थीं। आपकी वफ़ात के बाद भी आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बीवियों ने एतिकाफ़ की पाबन्दी की, जैसा कि ऊपर हदीस में ज़िक्र हुआ। यह हम बार-बार लिख चुके हैं कि नुबुव्वत के ज़माने की औरतें नेकियाँ कमाने की धुन में पीछे न रहती थीं।

एतिकाफ़ में बहुत बड़ा फ़ायदा है, इसमें इनसान यक्सू होकर अपने अल्लाह से लौ लगाये रहता है, और चूँकि रमज़ान की आख़िरी दस रातों में कोई न कोई रात शबे-क़द्र भी होती है इसलिये एतिकाफ़ करने वाले को उमूमन वह भी नसीब हो जाती है।

मर्द ऐसी मस्जिद में एतिकाफ़ करें जिसमें पाँचों वक़्त जमाअत से नमाज़ होती हो, और औरतें अपने घर की मस्जिद में एतिकाफ़ करें, अपने घर में जो जगह नमाज़ के लिये मुक़र्रर कर रखी हो उनके लिये वही मस्जिद है, औरतें उसी में एतिकाफ़ करें।

रमज़ान की बीसवीं तारीख़ का सूरज छुपने से पहले एतिकाफ़ की जगह में दाख़िल हो जायें और ईद का चाँद नज़र आने तक एतिकाफ़ की नीयत से औरतें घर की मस्जिद में और मर्द पंज-वक़्ता नमाज़ बा जमाअत वाली मस्जिद में जमकर रहें, इसी को एतिकाफ़ कहते हैं। जमकर रहने का मतलब

यह है कि ईद का चाँद नज़र आने तक मस्जिद ही की हद में रहे, वहीं सोये, वहीं खाये, कुरआन पढ़े, नफ़्लें पढ़े, तसबीहों में मशग़ूल रहे, जहाँ तक मुमकिन हो रातों को जागे और इबादत करे, ख़ासकर जिन रातों में शबे-क़द्र की उम्मीद हो उन रातों में रात को जागने की ख़ास पाबन्दी करे।

मसलाः एतिकाफ़ में मियाँ-बीवी के ख़ास ताल्लुक़ात वाले काम जायज़ नहीं हैं, न रात में न दिन में, और पेशाब पाख़ाने के लिये एतिकाफ़ की जगह से निकलना दुरुस्त है।

मसलाः यह जो मशहूर है कि जो एतिकाफ़ में हो वह किसी से न बोले-चाले यह ग़लत है, बल्कि एतिकाफ़ में बोलना-चालना अच्छी बातें करना, किसी को नेक बात बता देना और बुराई से रोक देना, बाल बच्चों और नौकरों व नौकरानियों को घर का काम-काज बता देना यह सब दुरुस्त है। और औरत के लिये इसमें आसानी भी है कि अपने घर की मस्जिद में एतिकाफ़ की नीयत से बैठी रहे और वहीं से बैठे-बैठे घर का काम-काज बताती रहे।

मसलाः अगर एतिकाफ़ में औरत को माहवारी शुरू हो जाये तो उसका एतिकाफ़ वहीं ख़त्म हो गया। रमज़ान के आख़िरी दशक के एतिकाफ़ में अगर ऐसा हो जाये तो किसी आलिम से मसाइल मालूम करके क़ज़ा कर लें।

हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है कि एतिकाफ़ मोतकिफ़ (एतिकाफ़ करने वाले) को गुनाहों से रोकता है और उसके लिये (उन) सब नेकियों का सवाब (भी) जारी रहता है (जिन्हें एतिकाफ़ के सबब अन्जाम देने से मेहरूम रहता है)। (मिश्कात शरीफ़)

फ़ायदाः जिस दिन सुबह को ईद या बक़र-ईद हो उस रात को भी ज़िक्र, इबादत और नफ़िल नमाज़ से ज़िन्दा रखने की फ़ज़ीलत आयी है। हदीस शरीफ़ में है कि जिसने दोनों ईदों की रातों को इबादत के ज़रिये ज़िन्दा रखा, उस दिन उसका दिल मुर्दा न होगा जिस दिन दिल मुर्दा होंगे, (यानी क़ियामत के दिन)। (अत्तरग़ीब वत्तरहीब)

आख़िरी रात की बख़्शिशें

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि रमज़ान की आख़िरी रात में उम्मते मुहम्मदिया की मग़फ़िरत कर दी जाती है। अर्ज़ किया गया या

रसूलल्लाह! क्या इससे शबे-क़द्र मुराद है? फ़रमाया नहीं! (यह फ़ज़ीलत आख़िरी रात की है, शबे-क़द्र की फ़ज़ीलतें इसके अलावा हैं)। बात यह है कि अमल करने वाले का अज्र उस वक़्त पूरा दे दिया जाता है जब वह काम पूरा कर देता है (और आख़िरी रात में अमल पूरा हो जाता है लिहाज़ा बख़्शिश हो जाती है)। (मिश्कात शरीफ़)

ईद का दिन

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब शबे-क़द्र होती है तो जिबराईल अलैहिस्सलाम फ़रिश्तों की एक जमाअत के साथ उतरते हैं जो हर उस बन्दे के लिए ख़ुदा तआला से रहमत की दुआ करते हैं जो खड़े बैठे अल्लाह तआला का ज़िक्र कर रहा हो। फिर जब ईद का दिन होता है तो अल्लाह तआला फ़रिश्तों के सामने फ़ख़्र से फ़रमाते हैं (कि देखो इन लोगों ने एक माह के रोज़े रखे और हुक्म माना) और फ़रमाते हैं कि ऐ मेरे फ़रिश्तो! उस मज़दूर का क्या बदला है जिसने अमल पूरा कर दिया हो? वे अर्ज़ करते हैं कि ऐ हमारे रब! उसक बदला यह है कि उसका अज्र पूरा दे दिया जाये, अल्लाह तआला फ़रमाते हैं ऐ मेरे फ़रिश्तो! मेरे बन्दों और बन्दियों ने मेरा फ़रीज़ा पूरा कर दिया जो उनपर लाज़िम था, और अब दुआ में गिड़गिड़ाने के लिए निकले हैं, कसम है मेरी इज़्ज़त व जलाल की और करम की और मेरी किब्रियाई और बुलन्दी की, मैं ज़रूर उनकी दुआ कबूल करूँगा। फिर (बन्दों को) अल्लाह तआला का इरशाद होता है कि मैंने तुमको बख़्श दिया और तुम्हारी बुराइयों को नेकियों में बदल दिया, लिहाज़ा उसके बाद (ईदगाह से) बख़्शे-बख़्शाये वापस होते हैं। (बैहकी)

मसलाः ईद के दिन रोज़ा रखना हराम है। आज के दिन रोज़ा न रखना इबादत है।

सदका-ए-फ़ित्रः ईद के दिन सदका-ए-फ़ित्र भी अदा करें, जो निसाब के बकद्र माल का मालिक हो उसपर वाजिब है। हदीस शरीफ़ में है कि सदका-ए-फ़ित्र रोज़ों को बेकार और गन्दी बातों से पाक करने के लिए और मिस्कीनों की रोज़ी के लिए मुकर्रर किया गया है। (अबू दाऊद)

सदका-ए-फ़ित्र के मसाइल ज़कात के बयान में गुज़र चुके हैं।

किन लोगों को रमज़ान का रोज़ा छोड़कर बाद में रखने की इजाज़त है

हदीसः (63) हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व-सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह तआला ने मुसाफ़िर के लिए नमाज़ का एक हिस्सा माफ़ फ़रमा दिया है और रमज़ान के रोज़े न रखने की भी मुसाफ़िर को इजाज़त दी है। और इसी तरह दूध पिलाने वाली औरत और हमल वाली (गर्भवती) औरत को इजाज़त है कि रोज़ा न रखे। (और बाद में कज़ा कर ले)। (मिश्कात पेज 178 जिल्द 1)

तशरीहः रमज़ान का एक रोज़ा छोड़ देना भी बहुत बड़ा गुनाह है और जो फ़र्ज़ रोज़ा छोड़ने का जुर्म करे वह फ़ासिक़ है।

बीमारः अलबत्ता जो शख़्स ऐसा बीमार हो कि रोज़ा रखने से उसकी जान पर बन आने का प्रबल अन्देशा हो या जो सख़्त बीमारी में मुब्तला हो और रोज़े रमज़ान में न रखे और उसके बाद जब अच्छा हो जाये कज़ा रख ले, यह कोई ऐसा मसला नहीं है जिसे आम तौर से लोग न जानते हों, लेकिन इसमें बहुत-सी ग़लतियाँ होती हैं- पहली यह कि मामूली बीमारी में रोज़ा छोड़ देते हैं अगरचे उस बीमारी के लिए रोज़ा नुकसानदेह भी न हो। दूसरी यह कि फ़ासिक़ और बे-दीन बल्कि बद्-दीन डाक्टरों के कौल का एतिबार कर लेते हैं। डाक्टर कह देते हैं कि रोज़ा न रखियेगा। उन डाक्टरों को रोज़ों की न कीमत मालूम है न शरई मसले की सही सूरत का इल्म है। न ख़ुद रोज़ा रखने की आदत है न उनके दिल में किसी मोमिन के रोज़े का दर्द है। ऐसे लोगों के कौल का कोई एतिबार नहीं है। चूँकि उमूमन डाक्टर आजकल फ़ासिक़ ही हैं इसलिए मरीज़ को अपनी ईमानी समझ-बूझ से और किसी ऐसे डाक्टर से मश्विरा करके फ़ैसला करना चाहिये जो ख़ुदा का ख़ौफ़ रखता हो, और जो शरई मसले से वाकिफ़ हो। तीसरी यह कोताही आम है कि बीमारी की वजह से रमज़ान के रोज़े छोड़ देते हैं और फिर रखते ही नहीं, और बहुत बड़ी गुनाहगारी का बोझ लेकर कब्र में चले जाते हैं।

मुसाफ़िरः मुसाफ़िर जो कस्र की दूरी के इरादे से अपने शहर या बस्ती से निकला, जब तक सफ़र में रहेगा मर्द हो या औरत चार रक्अतों वाली नमाज़ों की जगह दो रक्अतें फ़र्ज़ पढ़ेगा। हाँ! अगर किसी ऐसे इमाम के पीछे

जमाअ़त में शरीक हो जाये जो मुसाफ़िर न हो तो पूरी नमाज़ पढ़नी होगी। और अगर किसी जगह पन्द्रह दिन ठहरने की नीयत कर ली तो मुसाफ़िर के हुक्म में नहीं रहेगा और पूरी नमाज़ पढ़नी होगी। कस्र की दूरी 48 मील है, इतनी दूर का इरादा करके रवाना हो जाने पर शरई मुसाफ़िर है जबकि अपने वतन से निकल जाये, इतनी दूर का मुसाफ़िर चाहे पैदल सफ़र करे चाहे बस से चाहे हवाई जहाज़ से या और किसी तेज़ रफ़्तार सवारी से, शरई मुसाफ़िर माना जायेगा। शरीअ़त ने नमाज़े कस्र की बुनियाद कस्र की दूरी पर रखी है अगरचे तकलीफ़ न हो तब भी 48 मील का मुसाफ़िर चार रकअ़त वाले फ़र्ज़ की जगह दो रकअ़तें पढ़ेगा। अगर पूरी चार रकअ़तें पढ़ ले तो बुरा किया। यह मसला नमाज़े कस्र के बयान में भी गुज़र चुका है यहाँ रोज़े के बारे में सफ़र की दूरी बताने के अन्तर्गत दोहरा दिया गया है।

मसलाः जिस मुसाफ़िर के लिए चार रकअ़त वाली फ़र्ज़ नमाज़ की जगह दो रकअ़त पढ़ना ज़रूरी है, उसके लिए यह भी जायज़ है कि रमज़ान शरीफ़ के मौक़े पर सफ़र में हो तो रोज़ा न रखे और बाद में घर आकर छोड़े हुए रोज़ों की क़ज़ा कर ले। चाहे हवाई जहाज़ या मोटर कार से सफ़र किया हो और चाहे कोई तकलीफ़ महसूस न होती हो। अगर किसी जगह पन्द्रह दिन ठहरने की नीयत कर लेगा तो मुसाफ़िर न होगा, जैसा कि ऊपर बयान हुआ। यह बात क़ाबिले ज़िक्र है कि बहुत-से लोग जिस तरह बीमारी की हालत में रोज़ा छूट जाने पर बाद में क़ज़ा नहीं रखते उसी तरह बहुत-से लोग सफ़र में रोज़े छोड़कर बाद में घर आकर क़ज़ा नहीं रखते और गुनाहगार मरते हैं। क़ुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमाः जो शख़्स इस माह में मौजुद हो वह ज़रूर इसमें रोज़ा रखे और जो शख़्स बीमार हो या सफ़र में हो तो दूसरे दिनों का शुमार रखना है। अल्लाह तआ़ला को तुम्हारे साथ आसानी करना मन्ज़ूर है और तुम्हारे साथ दुश्वारी मन्ज़ूर नहीं। (सूरः ब-क़रः आयत 185)

इस आयत से मालूम हुआ कि बीमार और मुसाफ़िर से रोज़ा माफ़ नहीं है, अलबत्ता अल्लाह तआ़ला ने उसको रमज़ान में रोज़ा छोड़ने की इजाज़त दे दी है लेकिन बाद में छूटे हुए रोज़ों की क़ज़ा फ़र्ज़ है। अगर ज़्यादा तकलीफ़ न हो तो रमज़ान ही में रोज़ा रख लेना बेहतर और अफ़ज़ल है। क़ुरआन मजीद में इरशाद है:

وَاَنْ تَصُوْمُوْا خَيْرٌ لَّكُمْ

यानी अगरचे बीमारी और सफ़र में बाद में रखने की नीयत से रमज़ान का रोज़ा छोड़ने की इजाज़त है लेकिन रमज़ान ही में रोज़ा रख लेना बेहतर है।

और वजह इसकी यह है कि अव्वल तो रमज़ान की बरकत और नूरानियत से मेहरूमी न होगी। दूसरे सब मुसलमानों के साथ मिलकर रोज़ा रखने में आसानी भी होगी और बाद में तन्हा रोज़े रखना मुश्किल होगा।

मसला: 48 मील से कम सफ़र में रोज़ा छोड़ना दुरुस्त नहीं।

दूध पिलाने वाली

जिस तरह बीमार और मुसाफ़िर को रमज़ान में रोज़ा छोड़ने की इजाज़त है (जिसकी शर्तें ऊपर लिखी गयीं) उसी तरह दूध पिलाने वाली औरत के लिए भी जायज़ है कि रमज़ान में रोज़ा न रखे और बाद में क़ज़ा कर ले। अगर बच्चा माँ के दूध के अलावा दूसरी गिज़ा के ज़रिये गुज़ारा कर सकता हो, जैसे ऊपर का दूध पीने से या दलिया चावल वग़ैरह खाने से बच्चे की गिज़ा का काम चल सकता है तो दूध पिलाने वाली औरत को रोज़ा छोड़ना हराम है। और यह मसला भी बच्चे की उम्र दो साल होने तक है, जब बच्चे की उम्र दो साल हो जाए तो उसको औरत का दूध पिलाना ही मना है, उसमें रोज़ा छोड़ने का सवाल ही पैदा नहीं होता।

मसला: दूध पिलाने वाली को ज़िक्र हुई शर्त के साथ रमज़ान का रोज़ा न रखना उस सूरत में जायज़ है जबकि बच्चे का बाप दूसरी औरत को मुआवज़ा देकर दूध पिलाने से आजिज़ हो या वह बच्चा माँ के अलावा किसी दूसरी औरत का दूध लेता ही न हो।

हामिला: जो औरत हमल (गर्भ) से हो उसको भी रमज़ान शरीफ़ में रोज़े छोड़ने की इजाज़त है, फ़ारिग़ होने के बाद छोड़े हुए रोज़े रख ले, मगर शर्त वही है कि रोज़े रखने से बहुत ज़्यादा तकलीफ़ में पड़ने या अपने बच्चे की जान का अन्देशा हो।

फ़िदये का हुक्म

वह औरत या मर्द जो मुस्तक़िल ऐसा बीमार हो कि रोज़ा रखने से जान पर बन आने का सख़्त ख़तरा हो और ज़िन्दगी में अच्छा होने की उम्मीद ही न हो, या वह मर्द व औरत जो बहुत ज़्यादा बूढ़ा है रोज़े रख ही नहीं

सकता, और रोज़े पर क़ादिर होने की कोई उम्मीद नहीं, ये लोग रोज़े के बजाए फ़िदया दें, लेकिन बाद में कभी रोज़े रखने के क़ाबिल होंगे तो गुज़रे हुए रोज़ों की कज़ा करनी होगी और आईन्दा रोज़े रखने होंगे, और जो फ़िदया दिया है वह सदके में शुमार होगा।

मसला: हर रोज़े का फ़िदया यह है कि एक किलो 633 ग्राम गेहूँ या उसकी क़ीमत किसी मिस्कीन को दे, या हर रोज़े के बदले एक मिस्कीन को सुबह-शाम पेट भरकर खाना खिला दे।

माहवारी वाली औरत न रोज़ा रखे न नमाज़ पढ़े लेकिन बाद में रोज़ों की कज़ा करे

हदीस: (64) हज़रत मुआज़ा फ़रमाती हैं कि मैंने हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से सवाल किया कि यह क्या बात है कि (रमज़ान के महीने में) किसी औरत को हैज़ (माहवारी) आ जाये तो (उन दिनों के) रोज़ों की कज़ा रखती है और (उमूमन हर महीने हैज़ आता रहता है रमज़ान हो या गैर-रमज़ान उन दिनों की) नमाज़ों की कज़ा नहीं पढ़ती (यह नमाज़ और रोज़े में फ़र्क़ क्यों है)। यह सुनकर हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने फ़रमाया क्या तू नैचरी हो गयी है? (जो शरीअत के अहकाम में टाँग अड़ाती है)। मैंने कहा मैं नैचरी नहीं हूँ सिर्फ़ मालूम कर रही हूँ। इस पर हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने जवाब दिया कि हम तो इतनी बात जानते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मौजूदगी में हमको हैज़ (माहवारी) आता था तो नमाज़ों की कज़ा का हुक्म न दिया जाता था और रोज़ों की कज़ा का हुक्म होता था। (मुस्लिम शरीफ़ पेज 153 जिल्द 1)

तशरीह: हज़रत मुआज़ा एक ताबिई औरत थीं, बड़ी आलिमा फ़ाज़िला थीं। हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा की ख़ास शार्गिदी का शर्फ़ हासिल है। उन्होंने हज़रत आयशा से ऊपर ज़िक्र शुदा सवाल किया तो उन्होंने उनसे पूछा "क्या तू हरूरिय्यह हो गयी है?" हरूर एक गाँव था वहाँ ख़ारजियों का जमावड़ा था। ये लोग दीन और शरीअत को अपनी अक़्ल के मेयार से जाँचने की कोशिश करते थे और अपनी समझ की तराज़ू में तौलते थे। इसी लिये हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने हज़रत मुआज़ा से फ़रमाया कि तू दीन में अपनी अक़्ल का दख़ल दे रही है। यह तो उन लोगों का तरीक़ा है जो हरूर

बस्ती में रहते हैं, इसी लिये हमने इस लफ़्ज़ का तर्जुमा लफ़्ज़ "नैचरी" से कर दिया है। बहुत-से लोग दीन को अपनी अक़्ल की कसौटी पर परखना चाहते हैं और समझ में नहीं आता तो इन्कारी होते हैं या एतिराज़ करते हैं। ऐसे लोग हमारे बुज़ुर्गों की ज़बान में नैचरी कहलाते हैं क्योंकि अपने नैचर की पंचर दीन में लगाने की नापाक कोशिश करते हैं। दर हक़ीक़त यह एक बहुत बड़ा रोग है जो दिल में हक़ीक़ी ईमान को जमने और मज़बूत होने नहीं देता।

शरीअ़त के अहकाम को हिक्मत और वजह मालूम किये बग़ैर मानना लाज़िम है

अहकाम की हिक्मतें मालूम करने में कुछ हर्ज नहीं है, लेकिन हिक्मत समझ में न आये तो हुक्म ही को न माने और उसके ख़िलाफ़ रिसाले लिखने लगे और मज़ामीन छापने लगे, यह बहुत बड़ी जहालत है। शरीअ़त के किसी हुक्म की हिक्मत मालूम हो गयी तो बहुत अच्छी बात है और मालूम न हो सके या समझ में न आये तो उसको उसी तरह सच्चे दिल से मानना ज़रूरी है जैसा कि हिक्मत समझ में आने पर मानते। और यह बात भी जान लेना चाहिए कि किसी मसले की अगर कोई हिक्मत समझ में आ जाये तो उसको यूँ न समझे कि इसकी वाक़ई और असली यही हिक्मत है, मुमकिन है कि अल्लाह के नज़दीक दूसरी कोई हिक्मत हो।

जब हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने अपनी शार्गिद मुआ़ज़ा को तंबीह की और धमकाया तो उन्होंने जवाब दिया मैं नेचरी नहीं हूँ यानी दीन में टाँग अड़ाना मेरा मक़सद नहीं अलबत्ता हिक्मत मालूम करने को जी चहाता है, इस पर हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने हिक्मत न बताई बल्कि एक मोमिनाना मज़बूत जवाब दिया कि अ़मल करने के लिये बस इतना काफ़ी है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़माने में हम लोगों को हैज़ आता था तो नमाज़ों की क़ज़ा का हुक्म नहीं दिया जाता था और रमज़ान में हैज़ आ जाता था तो उन दिनों के रोज़ों की क़ज़ा का हुक्म दिया जाता था। दर हक़ीक़त एक मोमिन बन्दे के लिये यह जवाब बिल्कुल काफ़ी है, क्योंकि ज़िन्दगी का मक़सद अल्लाह के हुक्म का पालन है न कि वजह, सबब और हिक्मत की तलाश। इसलिये हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने इस पर बस किया। अलबत्ता दीन इस्लाम के आ़लिमों ने इसमें एक हिक्मत यह बताई

है कि नमाज़ें रोज़ाना की पाँच की तयादाद में जमा होकर बहुत ज़्यादा हो जाती हैं, औरत को घरेलू काम-काज और बच्चों की परवरिश के मशग़लों की वजह से इन सब की कज़ा पढ़ना सख़्त मुश्किल है इसलिये अल्लाह ने यह करम फ़रमाया कि हैज़ (माहवारी) के ज़माने की नमाज़ों को बिल्कुल ही माफ़ फ़रमा दिया, और रोज़े चूँकि बारह महीनों में सिर्फ़ एक बार आते हैं और हैज़ की वजह से जो रोज़े छूटते हैं वे ज़्यादा होते भी नहीं उनकी कज़ा रख लेना आसान है इसलिये उनकी कज़ा का हुक्म दिया गया है। और यह बात तो सब को मालूम है कि औरतें उमूमन रोज़े रखने में माहिर होती हैं और नमाज़ों से जान चुराती हैं। अगर माहवारी के दिनों की नमाज़ों की कज़ा लाज़िम कर दी जाती तो कज़ा न पढ़तीं और गुनाहगार रहतीं और अदा करना भी मुश्किल था।

क़ुरबान जाइये उस ज़ात के जिसने इनसान को उसकी हिम्मत से ज़्यादा का मुकल्लफ़ नहीं बनाया।

नफ़्ली रोज़ों का सवाब और औरत को शौहर की इजाज़त के बग़ैर नफ़्ली रोज़े न रखने का हुक्म

हदीसः (65) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि औरत के लिये यह हलाल नहीं कि (नफ़िल) रोज़ा रखे जबकि उसका शौहर घर पर हो, हाँ! उसकी इजाज़त से रख सकती है। और औरत के लिये यह जायज़ नहीं है कि किसी को घर में आने की इजाज़त दे हाँ! अगर शौहर किसी के बारे में इजाज़त दे तो औरत भी इजाज़त दे सकती है। (क्योंकि मुसलमान शौहर जिसके आने की इजाज़त देगा वह औरत का मोहसिन होगा)। (मुस्लिम शरीफ़)

तशरीहः दीन इस्लाम कामिल और मुकम्मल दीन है, इसमें दोनों तरह के हुक़ूक़ यानी अल्लाह के हुक़ूक़ और बन्दों के हुक़ूक़ की रियायत रखी गयी है। जिस तरह अल्लाह के हुक़ूक़ की अदायगी इबादत है उसी तरह बन्दों के हुक़ूक़ का अदा करना भी इबादत है। इस हदीस पाक में बन्दों के हुक़ूक़ की हिफ़ाज़त करने और ख़्याल रखने की हिदायत फ़रमायी गयी है। शौहर और बीवी के एक-दूसरे पर हुक़ूक़ हैं और आपस में एक ऐसा ताल्लुक़ है जो रोज़े में नहीं होता। अगर कोई औरत रोज़े पर रोज़े रखती चली जाये और शौहर

के ख़ास ताल्लुक़ का ख़्याल न रखे तो गुनाहगार होगी। शौहर को ख़ुश रखना और उसके हुकूक़ का ध्यान रखना भी इबादत है। बाज़ी औरतों को देखा गया है कि वे रोज़ा रखती चली जाती हैं और रोज़ाना रोज़ा रखने की आदत डाल लेती हैं। दिन में रोज़ा रात को थककर पड़ गयीं, शौहर बेचारे का कोई ध्यान नहीं। यह तरीक़ा शरीअ़त की निगाह में दुरुस्त नहीं है।

औरतों के लिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तंबीह फ़रमाई कि किसी औरत के लिये यह हलाल नहीं है कि शौहर घर पर मौजूद हो तो उसकी इजाज़त के बग़ैर नफ़्ली रोज़ा रखे। शौहर अगर इजाज़त दे तो नफ़्ली रोज़ा रखे। अलबत्ता रोज़ाना रोज़ा रखना फिर भी मना है।

रोज़ाना रोज़ा रखने की मनाही

नबी पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिसने रोज़ाना रोज़ा रखा उसने न रोज़ा रखा न बेरोज़ा रहा। (मुस्लिम शरीफ़)

मतलब यह है कि रोज़ाना रोज़ा रखने से नफ़्स को आदत हो जाती है, आदत हो जाने से मशक़्क़त नहीं होती। जब मशक़्क़त न हुई तो रोज़े का मक़सद ख़त्म हो गया। अब यूँ कहा जायेगा कि खाने-पीने के वक़्तों को बदल दिया। इस सूरत में इबादत की शान बाक़ी न रहेगी। अगर किसी से हो सके तो एक दिन रोज़ा रखे एक दिन बेरोज़ा रहे, यह बहुत फ़ज़ीलत की बात है लेकिन शर्त वही है कि शौहर की इजाज़त हो और इस क़द्र बे-ताक़त न हो जाये कि दूसरी इबादतों और हुकूक़ की अदायगी में फ़र्क़ आये।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़मर बिन आ़स रज़ियल्लाहु अ़न्हु बड़े दरजे के सहाबी थे, यह रोज़ाना रोज़ा रखते थे और रातों-रात नफ़िल पढ़ते थे। सरवरे आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मालूम हुआ तो आपने फ़रमाया कि ऐसा न करो बल्कि रोज़ा भी रखो और बेरोज़ा भी रहा करो। रातों में नफ़िल नमाज़ में भी खड़े रहा करो और सोया भी करो क्योंकि तुम्हारे जिस्म का भी तुम पर हक़ है और तुम्हारी आँख का भी तुम पर हक़ है और तुम्हारी बीवी का भी तुम पर हक़ है और जो लोग तुम्हारे पास आयें उनका भी तुम पर हक़ है। (बुख़ारी व मुस्लिम)

इससे मालूम हुआ कि इबादत का कमाल यह है कि अपने बदन और जिस्मानी अंगों और बीवी बच्चों और मेहमानों के हुकूक़ की रियायत करते हुए नफ़िल इबादत की जाये। मेहमान आया उसे नौकर चाकर के ज़रिये खाना

खिलवाया या सोने लगे तो वह अकेला सो गया और घर का मालिक नमाज़ में लग गया, वह बेचारा इन्तिज़ार ही करता रहा कि दो बातें कब करूँ? यह कोई सही इबादत नहीं, अलबत्ता नफ़्स की शरारत को भी मौक़ा नहीं देना चाहिये। यानी मौक़ा होते हुए नफ़्स बहाने न निकाल ले कि आज मेहमान है कैसे नमाज़ पढ़ूँ और दो रक्अ़त पढ़ लूँगी तो बूढ़ी हो जाऊँगी। और अगर एक नफ़्लि रोज़ा रख लिया तो कमज़ोरी के पहाड़ टूट पड़ेंगे। ख़ुलासा यह कि शरीअ़त की हदों में नफ़्स व शैतान के फ़रीब से बचते हुए नफ़्लि नमाज़ें पढ़ो और नफ़्लि रोज़े रखो, क़ुरआन की तिलावत भी करो और ज़िक्र भी करो और किसी मख़्लूक़ का वाजिब हक़ भी ज़ाया न होने दो।

फ़र्ज़ रोज़ों के अदा करने और क़ज़ा में शौहर की इजाज़त की ज़रूरत नहीं

तंबीह: फ़र्ज़ नमाज़ और फ़र्ज़ रोज़े की अदायगी में शौहर की इजाज़त की हरगिज़ ज़रूरत नहीं है, वह इजाज़त न दे तब भी उनकी अदायगी फ़र्ज़ है। अगर वह इससे रोकेगा तो सख़्त गुनाहगार होगा। इसी तरह रमज़ान के जो रोज़े माहवारी की मजबूरी की वजह से रह जायें तो उनकी क़ज़ा रखना भी फ़र्ज़ है अगर शौहर रोके तब भी क़ज़ा रख ले। अगर वह रोकेगा तो सख़्त गुनाहगार होगा।

पीर और जुमेरात और चाँद की 13, 14, 15 तारीख़ के रोज़े

रमज़ान शरीफ़ के रोज़ों के अ़लावा दूसरे महीनों में भी रोज़े रखना चाहिये। रोज़ा बहुत बड़ी इबादत है और इसका बहुत बड़ा सवाब है। ईद के महीने के छः (6) रोज़ों का ज़िक्र अगली हदीस की तशरीह (व्याख्या) में आ रहा है। पीर और जुमेरात को नफ़्ली रोज़े रखने की भी फ़ज़ीलत आयी है। हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि पीर और जुमेरात को अल्लाह की बारगाह में आमाल पेश किये जाते हैं लिहाज़ा मैं चाहता हूँ कि मेरा अ़मल इस हाल में पेश किया जाये कि मैं रोज़े से हूँ। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

चाँद की तेरह, चौदह, पन्द्रह तारीख़ को रोज़ा रखने की भी बड़ाई आई है। नबी करीम सल्ल० ने इन दिनों के रोज़े रखने की रग़बत दिलाई है।

बक़र-ईद की नवीं तारीख़ का रोज़ा

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मैं अल्लाह से

पुख़्ता उम्मीद रखता हूँ कि बक़र-ईद की नवीं तारीख़ का रोज़ा रखने की वजह से अल्लाह तआ़ला एक साल पहले और एक साल बाद के गुनाहों का कफ़्फ़ारा फ़रमा देंगे।

आ़शूरा का रोज़ा

और आ़शूरा के दिन (यानी मोहर्रम की दस तारीख़) के बारे में अल्लाह से पुख़्ता उम्मीद रखता हूँ कि उसके रखने की वजह से एक साल पहले के गुनाहों का कफ़्फ़ारा फ़रमा देंगे। (मिश्कात शरीफ़)

बक़र-ईद की नवीं तारीख़ से पहले जो आठ दिन हैं उनका रोज़ा रखने की भी फ़ज़ीलत और बड़ाई आयी है। उन रोज़ों के अ़लावा और जिस क़द्र नफ़िल रोज़े कोई शख़्स मर्द या औ़रत रख लेगा उसके हक़ में अच्छा होगा। क़ियामत के दिन नवाफ़िल के ज़रिये फ़राईज़ की कमी पूरी की जायेगी इसलिये इस इबादत से ग़ाफ़िल न हों, लेकिन दो बातें याद रखनी चाहियें- पहली यह कि उस इबादत की वजह से किसी की हक़-तल्फ़ी न हो जैसे मर्द ज़्यादा नफ़्ली रोज़े रखकर इस क़द्र कमज़ोर न हो जाये कि बीवी बच्चों को कमाकर न दे सके। और दूसरी यह कि दूसरे हुक़ूक़ में कोताही होने लगे, जैसे कोई औ़रत रोज़े रखने की वजह से शौहर और बच्चों के हुक़ूक़ ज़ाया न कर दे।

ईद के महीने में छह रोज़े रखने की फ़ज़ीलत

हदीसः (66) हज़रत अबू अय्यूब अन्सारी रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिसने रमज़ान के रोज़े रखे और उसके बाद छह (नफ़िल) रोज़े शव्वाल (यानी ईद) के महीने में रख लिये तो (पूरे साल के रोज़े रखने का सवाब होगा। अगर हमेशा ऐसा ही करेगा तो) गोया उसने सारी उम्र रोज़े रखे। (मुस्लिम शरीफ़)

तशरीहः इस मुबारक हदीस में रमज़ान मुबारक गुज़रने के बाद शव्वाल के महीने में छह नफ़्ली रोज़े रखने की तरग़ीब दी गयी है और इसका बड़ा सवाब बताया गया है। सवाब देने के बारे में अल्लाह पाक ने यह मेहरबानी फ़रमायी है कि हर अ़मल का सवाब कम-से-कम दस गुना मुक़र्रर फ़रमाया है। जब किसी ने रमज़ान के तीस रोज़े रखे और फिर छह रोज़े और रख लिये तो यह छत्तीस रोज़े हो गये। छत्तीस को दस में गुणा करने से तीन सौ साठ हो जाते हैं। चाँद के हिसाब से एक साल तीन सौ साठ दिन का होता है

लिहाज़ा छत्तीस रोज़े रखने पर अल्लाह के नज़दीक तीन सौ साठ रोज़े शुमार होंगे और इस तरह पूरे साल के रोज़े रखने का सवाब मिलेगा। अगर हर साल कोई शख़्स ऐसा ही कर लिया करे तो वह सवाब के एतिबार से सारी उम्र रोज़े रखने वाला मान लिया जायेगा। अल्लाहु अकबर! बेइन्तिहा रहमत और आख़िरत की कमाई के अल्लाह पाक ने कैसे क़ीमती मौक़े दिये हैं।

फ़ायदाः अगर रमज़ान के रोज़े चाँद की वजह से उन्तीस ही रह जायें तब भी ये तीस ही शुमार होंगे क्योंकि हर मुसलमान की नीयत होती है कि चाँद नज़र न आये तो तीसवाँ रोज़ा भी रखेगा। इस एतिबार से उन्तीस रोज़े रमज़ान के और छह ईद के कुल पैंतीस रोज़े रखने से पूरे साल रोज़े रखने का सवाब मिलेगा। हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सिर्फ़ रमज़ान और छह शव्वाल के रोज़े रखने पर इस सवाब की ख़ुशख़बरी सुनाई। लिहाज़ा हमें यह सवाल करने की ज़रूरत नहीं कि एक रोज़ा चाँद की वजह से रह गया तो सवाब पूरे साल का होगा या नहीं।

फ़ायदाः बाज़ी औरतें समझती हैं कि यह सवाब उसी वक़्त मिलेगा जबकि ईद के बाद दूसरे दिन कम-से-कम एक रोज़ा रख ले, यह ग़लत है। अगर दूसरी तारिख़ से रोज़े शुरू न किये और पूरे शव्वाल में छह रोज़े रख लिये तब भी सवाब मिल जायेगा।

नफ़्ली रोज़ा रखकर तोड़ देने से उसकी क़ज़ा लाज़िम होती है

हदीसः (67) हज़रत इब्ने शिहाब ज़ोहरी (ताबिई) ने बयान फ़रमाया कि एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की दो बीवियों यानी हज़रत आयशा और हज़रत हफ़्सा रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा ने नफ़्ली रोज़ा रख लिया और उसी हाल में सुबह हो गयी। उसके बाद उनकी ख़िदमत में बतौर हदिया खाना पेश कर दिया गया जिसे उन्होंने खा लिया और रोज़ा तोड़ दिया। उसके बाद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ लाये। हज़रत आयशा फ़रमाती हैं कि हमने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मसला मालूम करने का इरादा किया और हफ़्सा बात करने में मुझसे आगे बढ़ गयी और वह अपने बाप की बेटी थी (1) और अर्ज़ किया

(1) इसका मतलब यह है कि हफ़्सा रज़ियल्लाहु अ़न्हा के वालिद हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु बात करने और सवाल जवाब करने में जुर्रत रखते थे, यही हाल उनकी बेटी का था, इसी लिये उन्होंने सवाल करने की पहल कर ली।

या रसूलल्लाह! मैंने और आयशा ने नफ़्ली रोज़ा रख लिया था, इस हाल में सुबह हुई कि हम दोनों रोज़ेदार थीं, हमारे लिये खाने का हदिया पेश किया गया हमने वह खा लिया और रोज़ा तोड़ लिया (तो अब हम क्या करें)। इसके जवाब में हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि इस रोज़े की जगह एक रोज़ा रख लेना। (मोवत्ता इमाम मालिक)

तशरीहः नफ़िल नमाज़ हो या रोज़ा उसकी अदायगी बन्दे के ज़िम्मे लाज़िम नहीं है, लेकिन अगर कोई शख़्स नफ़िल नमाज़ शुरू करके तोड़ दे या नफ़्ली रोज़ा रखकर सूरज छुपने से पहले जान-बूझकर कुछ खा पी ले या ऐसा कोई अमल कर ले जिससे रोज़ा टूट जाता है तो फिर उस नमाज़ और रोज़े की कज़ा लाज़िम हो जाती है, और वजह इसकी यह है कि जब तक नफ़िल नमाज़ या नफ़्ली रोज़ा शुरू न किया था उस वक़्त तक वह नफ़िल था और जब शुरू कर दिया तो उसका पूरा करना वाजिब हो गया, क्योंकि शुरू कर लेने से नेक काम की शुरूआत हो जाती है और दरमियान में छोड़ देने से वह अमल ख़त्म हो जाता है। शुरू करने के बाद पूरा करने से पहले छोड़ देना पसन्दीदा नहीं है। कुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमाः ऐ ईमान वालो! फ़रमाँबरदारी करो अल्लाह की और बात मानो उसके रसूल की, और अपने आमाल ज़ाया न करो। (सूरः मुहम्मद आयत 23)

ऊपर जो हदीस ज़िक्र हुई उससे यह कानून मालूम हो गया कि नफ़िल की शुरूआत करने से वह लाज़िम हो जाता है। नमाज़ रोज़े के अलावा अगर कोई मर्द या औरत उमरे का या नफ़्ली हज का एहराम बाँध ले तो उसको भी बीच में ख़त्म कर देना जायज़ नहीं है। अगर किसी ने ऐसी हरकत कर ली जिससे उमरा और हज फ़ासिद हो जाता है तो हज और उमरे की कज़ा लाज़िम हो गयी, और हज आईन्दा साल ही हो सकेगा, अलबत्ता उमरा पूरे साल में हो सकता है। सिर्फ़ हज के पाँच दिनों में उमरा करने की मनाही है।

मसलाः नफ़िल नमाज़ की हर दो रकअत अलग नमाज़ शुमार होती है। अगर चार रकअत की नीयत बाँधकर नमाज़ शुरू की तो जब तक तीसरी रकअत शुरू न कर दे दो रकअत का पूरा करना वाजिब होगा। लिहाज़ा अगर किसी ने चार रकअत नफ़िल की नीयत की, फिर दो रकअत पढ़कर सलाम फेर दिया तो कोई गुनाह नहीं।

मसलाः अगर किसी ने चार रकअत नफ़िल की नीयत बाँधी और अभी दो रकअतें पूरी न हुई थीं कि नमाज़ तोड़ दी तो सिर्फ़ दो रकअत की कज़ा पढ़े।

मसलाः अगर चार रक्अ़त की नीयत बाँधी और दो रक्अ़तें पढ़ लीं फिर तीसरी या चौथी रक्अ़त में नमाज़ तोड़ दी तो अगर दूसरी रक्अ़त पर बैठकर उसने अत्तहिय्यात वग़ैरह पढ़ी है तो फ़कत दो रक्अ़त की कज़ा पढ़े, और अगर दूसरी रक्अ़त पर नहीं बैठी अत्तहिय्यात पढ़े बग़ैर भूले से खड़ी हो गयी या जान-बूझकर खड़ी हो गयी तो पूरी चार रक्अ़तों की कज़ा पढ़े।

मसलाः ज़ोहर की चार रक्अ़त सुन्नत की नीयत अगर टूट जाये तो पूरी चार रक्अ़तें फिर से पढ़े, चाहे दो रक्अ़त पर बैठकर अत्तहिय्यात पढ़ी हो या न पढ़ी हो।

मसलाः अगर किसी औ़रत ने नफ़िल नमाज़ शुरू की फिर उसको नमाज़ के अन्दर वह मजबूरी शुरू हो गयी जो औ़रत को हर महीने पेश आती है तो नमाज़ तोड़ दे और बाद में उस नमाज़ की क़ज़ा पढ़े। इसी तरह अगर किसी औ़रत ने नफ़्ली रोज़ा रख लिया और कुछ वक़्त गुज़रने के बाद हर महीने वाली मजबूरी पेश आ गयी तो रोज़ा ख़त्म हो गया, पाक होने के बाद उसकी क़ज़ा करे।

मसलाः नफ़िल नमाज़ रोज़ा शुरू करके खुद से तोड़ देना जायज़ नहीं है अगरचे इस नीयत से हो कि बाद में क़ज़ा कर लेंगे। हाँ! अगर किसी के यहाँ कोई मेहमान आ गया और वह अड़ गया कि जब तक मकान मालिक साथ न खाये मैं न खाऊँगा तो उसकी दिलदारी के लिये रोज़ा तोड़ देना जायज़ है, लेकिन बाद में उसकी क़ज़ा रखना लाज़िम है।

अगर रोज़ेदार के पास कोई खाने लगे तो रोज़ेदार के लिये फ़रिश्ते दुआ़ करते हैं

हदीसः (68) हज़रत उम्मे अ़म्मारा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने बयान फ़रमाया कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मेरे पास तशरीफ लाये। मैंने आपके लिये खाना मंगाया, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तुम (भी) खाओ! मैंने अ़र्ज़ किया मैं रोज़े से हूँ। यह सुनकर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि बेशक जब रोज़ेदार के पास खाया जाये तो उसके लिये फ़रिश्ते मग़फ़िरत की दुआ़ करते रहते हैं, जब तक कि खाने वाले फ़ारिग़ हों। (मिश्कात शरीफ)

तशरीहः रोज़ा खुद सब्र का नाम है। इनसान जब रोज़े की नीयत कर

लेता है तो यह तय कर लेता है कि सूरज छुपने तक कोई चीज़ नहीं खाऊँगा। फिर जब रोज़ेदार के सामने कोई शख़्स खाने लगे तो रोज़ेदार के सब्र की और ज़्यादा फ़ज़ीलत बढ़ जाती है, क्योंकि दूसरे को खाता देखकर जो नफ़्स में ख़ुसूसी तकाज़ा पैदा होता है वह उसको दबाता है और रोज़ा पूरा किये बग़ैर कुछ नहीं खाता-पीता, उसके इस ख़ुसूसी सब्र की वजह से यह ख़ुसूसी फ़ज़ीलत दी गयी कि खाने वाला जब तक उसके पास खाये उसके लिये फ़रिश्ते बख़्शिश की दुआ करते रहते हैं।

फ़ायदा: हज़रत उम्मे अम्मारा (अम्मारा की वालिदा) रज़ियल्लाहु अन्हा बड़ी फ़ज़ीलतों वाली सहाबिया हैं जिनसे ऊपर वाली हदीस की रिवायत की गयी है। उन्होंने जिहादों में भी शिरकत की। अपने शौहर ज़ैद बिन आसिम रज़ियल्लाहु अन्हु के साथ उहुद की लड़ाई में शरीक हुईं, फिर बैअ़ते-रिज़वान में शरीक हुईं। फिर यमामा की जंग में शिरकत की और दुश्मनों से ऐसी लड़ाई लड़ी कि ख़ुद उनके अपने जिस्म में बारह जगह ज़ख़्म आ गये। बहुत-से लोगों ने उनसे हदीस की रिवायत की है। रज़ियल्लाहु तआ़ला अन्हा

शाबान के महीने के रोज़े और दूसरे आमाल

शाबान के महीने में रोज़ों की कसरत:

हदीस: (69) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम लगातार (नफ़्ली) रोज़े रखते चले जाते थे यहाँ तक कि हमें ख़्याल होने लगता था कि अब आप बे-रोज़ा नहीं रहेंगे। और जब रोज़े रखना छोड़ते तो इतने दिन छोड़ते चले जाते थे कि हमें ख़्याल गुज़रने लगता था कि अब आप नफ़्ली रोज़े नहीं रखेंगे। और फ़रमाती हैं कि मैंने नहीं देखा कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने किसी महीने के पूरे रोज़े रखे हों सिवाय रमज़ान के महीने के, और मैंने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को नहीं देखा कि शाबान के महीने से ज़्यादा किसी दूसरे महीने में (नफ़्ली) रोज़े रखे हों। और एक रिवायत में है कि आप चन्द दिनों के अ़लावा पूरे शाबान महीने के रोज़े रखते थे। (मिश्कात शरीफ़)

शबे बरात में रहमत व मग़फ़िरत की बारिश और ख़ास-ख़ास गुनाहगारों की बख़्शिश न होना

हदीस: (70) हज़रत मुआज़ बिन जबल रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है

कि हुज़ूरे अक्दस सल्ल० ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला शाबान की पन्द्रहवीं रात को अपनी तमाम मख़्लूक़ की तरफ़ मुतवज्जह होते हैं और पूरी मख़्लूक़ की मग़फ़िरत फ़रमाते हैं लेकिन मुश्रिक और कीना-कपट रखने वाला नहीं बख़्शा जाता। (तिबरानी व इब्ने हब्बान) बैहक़ी की रिवायत में यह भी है कि रिश्ता तोड़ने वाले और तहबन्द या पाजामा टख़्नों से नीचे लटकाने वाले और शराब की आ़दत रखने वाले और किसी का नाहक़ क़त्ल करने वाले की (भी) इस रात में मग़फ़िरत नहीं होती। (तारग़ीब व तरहीब पेज 80 जिल्द 2)

हदीसः (71) हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा का बयान है कि एक बार रात को (सोते-सोते मेरी आँख खुली तो) हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को घर में न पाया (आपकी तलाश करने के लिये निकली तो) आप बक़ीअ़ यानी मदीना मुनव्वरा के क़ब्रिस्तान में मिले। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया क्या तुझे इस बात का ख़तरा गुज़रा कि अल्लाह और उसका रसूल तुझ पर ज़ुल्म करेंगे यानी रसूलुल्लाह तेरी बारी की रात होते हुए किसी दूसरी बीवी के पास तशरीफ़ ले गये होंगे। मैंने अ़र्ज़ किया हाँ! मुझे तो यही ख़्याल गुज़रा कि आप अपनी किसी दूसरी बीवी के पास तशरीफ़ ले गये। आपने फ़रमाया (मैं किसी के पास नहीं गया, यहाँ बक़ीअ़ आया हूँ, यह दुआ़ करने की रात है क्योंकि) बेशक अल्लाह जल्ल शानुहू शाबान के महीने की पन्द्रहवीं तारीख़ की रात को क़रीब वाले आसमान की तरफ़ ख़ुसूसी तवज्जोह फ़रमाते हैं और क़बीला बनी कल्ब की बकरियों के बालों से ज़्यादा तायदाद में लोगों की मग़फ़िरत फ़रमाते हैं। (मिश्कात शरीफ़ पेज 115)

शबे बरात में आईन्दा साल के फ़ैसले

हदीसः (72) हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा रिवायत फ़रमाती हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मुझसे फ़रमाया कि तुम जानती हो इस रात में यानी माह शाबान की पन्द्रहवीं रात में क्या होता है? अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! इरशाद फ़रमाइये क्या होता है। फ़रमाया इस रात में हर ऐसे बच्चे का नाम लिख दिया जाता है जो आने वाले साल में पैदा होने वाला है, और हर उस शख़्स का नाम लिख दिया जाता है जो आने वाले साल में मरने वाला है। (अल्लाह को तो सब पता है अलबत्ता इन्तिज़ाम में लगने वाले फ़रिश्तों को इस रात में उन लोगों की फ़ेहरिस्त दे दी जाती है) और इस रात में नेक आमाल ऊपर उठाये जाते हैं (यानी मक़्बूलियत के दरजे में ले लिये

जाते हैं) और इस रात में लोगों के रिज़्क नाज़िल होते हैं।

हज़रत आयशा फ़रमाती हैं कि मैंने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! यही बात है ना कि जन्नत में कोई भी दाख़िल न होगा मगर अल्लाह तआला की रहमत से, आपने तीन बार फ़रमाया हाँ! कोई ऐसा नहीं है जो अल्लाह तआला की रहमत के बग़ैर जन्नत में दाख़िल हो जाये। मैंने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! और आप (भी) अल्लाह की रहमत के बग़ैर जन्नत में न जायेंगे? यह सुनकर आप ने अपने सर पर हाथ रख लिया और फ़रमाया कि मैं भी जन्नत में न जाऊँगा मगर इस तरह से कि अल्लाह तआला मुझे अपनी रहमत में ढाँप ले। तीन बार यही फ़रमाया। (मिश्कात शरीफ़ पेज 115)

रात को दुआ और इबादत और दिन को रोज़ा

हदीसः (73) हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब शाबान की पन्द्रहवीं रात हो तो उस रात को नमाज़ में खड़े हो और रात गुज़ारने के बाद सुबह को नफ़्ली रोज़ा रखो, इसलिये कि अल्लाह तआला इस रात में सूरज छुपने के वक़्त ही से क़रीब वाले आसमान की तरफ़ ख़ुसूसी तवज्जोह फ़रमाते हैं, और फ़रमाते हैं कि क्या कोई मग़फ़िरत तलब करने वाला है जिसकी मैं मग़फ़िरत करूँ, क्या कोई रिज़्क तलब करने वाला है जिसको मैं रिज़्क दूँ। क्या कोई मुसीबत का मारा है जिसे मैं चैन-सुकून दूँ। और इसी तरह फ़रमाते रहते हैं कि क्या कोई फ़लाँ चीज़ माँगता है, क्या कोई फ़लाँ चीज़ माँगता है, सुबह सादिक़ होने तक ऐसा ही फ़रमाते रहते हैं। (मिश्कात पेज 115)

रिवायतों का ख़ुलासा और शबे बरात के आमाल

इन दो रिवायतों से यह बात मालूम हुई कि:

(1) शाबान के महीने में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम दूसरे महीनों के मुक़ाबले में नफ़्ली रोज़े ज़्यादा रखा करते थे बल्कि दो चार दिन छोड़कर यह माह नफ़्ली रोज़ों में गुज़ारते थे।

(2) शाबान की पन्द्रहवीं रात नफ़्ली नमाज़ों में गुज़ारनी चाहिये।

(3) शाबान की पन्द्रहवीं तारीख़ को रोज़ा रखना चाहिये।

(4) इस रात में हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम क़ब्रिस्तान तशरीफ़ ले गये मगर वहाँ न मेला लगा न चिराग़ जलाया न बहुत-से लोग गये।

(5) शाबान की पन्द्रहवीं रात में क़रीब वाले आसमान की जानिब ख़ुदा तआ़ला की ख़ास तवज्जोह होती है और भारी तायदाद में गुनाहगारों की बख़्शिश कर दी जाती है, लेकिन इन लोगों की बख़्शिश नहीं होती- कीना रखने वाला, रिश्ता और ताल्लुक़ात तोड़ने वाला, तहबन्द या पाजामा टख़्नों से नीचे लटकाने वाला, माँ-बाप की नाफ़रमानी करने वाला, शराब की आ़दत रखने वाला, किसी का नाहक़ क़त्ल करने वाला।

साथ ही हदीस की रिवायतों से यह भी मालूम हुआ कि अल्लाह तआ़ला शाबान की पन्द्रहवीं रात में आने वाले साल के पैदा होने वालों और मरने वालों के बारे में फ़ैसला फ़रमाते हैं। अल्लाह को तो हमेशा से ही मालूम है कि कब किसकी मौत व ज़िन्दगी होगी, लेकिन इस रात में फ़रिश्तों को मरने-जीने वालों की फ़ेहरिस्त दे दी जाती है और इस रात में नेक आमाल क़बूलियत के दरजे में उठा लिये जाते हैं, और इस रात में रिज़्क़ भी नाज़िल होते हैं। (यानी कितना रिज़्क़ साल भर में किसको मिलेगा इसका इल्म फ़रिश्तों को दे दिया जाता है)।

इसके अ़लावा हदीस की रिवायतों से यह भी मालूम हुआ कि इस रात में अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं कि है कोई जो मुझसे रिज़्क़ तलब करे? मैं उसे रिज़्क़ दूँ। है कोई मुसीबत में मुब्तला जिसे मैं आफ़ियत दूँ। है कोई मग़फ़िरत तलब करने वाला जिसे मैं बख़्श दूँ! वग़ैरह।

हदीस की रिवायतों से शाबान के महीने और इस महीने की पन्द्रहवीं रात और पन्द्रहवें दिन के बारे में जो कुछ मालूम हुआ उसका ख़ुलासा अभी आपके सामने लिख दिया गया। मोमिन बन्दों को चाहिये कि शाबान के पूरे महीने में ख़ूब ज़्यादा नफ़्ली रोज़े रखें और पन्द्रहवीं रात ज़िक्र दुआ़ और नमाज़ में गुज़ारें और पन्द्रहवीं तारीख़ को रोज़ा रखें।

कोई मर्द क़ब्रिस्तान में चला जाये तो वह भी ठीक है मगर इजतिमाई (सामूहिक) तौर पर न जाये, न चिराग़ जलाये।

शाबान की पन्द्रहवीं रात में जो बिद्अ़तें और ख़ुराफ़ात अन्जाम दी जाती हैं उनका बयान

इस मुबारक रात के फ़ज़ाइल व बरकतें लिखने के बाद अफ़सोस के साथ लिखना पड़ता है कि आज हमारे ग़लत आमाल ने इसके सवाब को अ़ज़ाब से

और बरकतों को दीनी और दुनियावी नुकसान से बदल दिया है, और हमने बरकत वाली रात को पूरी तरह गुनाह और मुसीबत बना लिया है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़िन्दगी का पाक नमूना छोड़कर किस्म-किस्म की बिद्अतें और तरह-तरह की रस्में ईजाद कर ली गयी हैं जिनको फ़राईज़ की तरह पाबन्दी से अदा किया जाता है जिनमें से बाज़ी ये हैं:

आतिशबाज़ी और रोशनी

यह रस्म न सिर्फ़ एक बे-लज़्ज़त गुनाह है बल्कि इसकी दुनियावी तबाहियाँ भी आँखों के सामने आती हैं। इसमें एक तो अपने माल को ज़ाया करना है और बेजा फ़ुज़ूल ख़र्ची है जो बरबादी का ज़रिया है। कुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमाः बेशक फ़ुज़ूल ख़र्ची करने वाले शैतान के भाई हैं।

(सूरः बनी इस्राईल आयत 17)

और इरशाद है:

तर्जुमाः और फ़ुज़ूल ख़र्ची न करो क्योंकि बिला शुब्हा अल्लाह तआला फ़ुज़ूल ख़र्ची करने वालों को दोस्त नहीं रखता। (सूरः आराफ़ आयत 31)

जिस कौम की आर्थिक हालत नाज़ुक और ख़तरनाक हो और ग़रीबी ने दूसरी कौमों का ग़ुलाम बना रखा हो उसका इतना रुपया-पैसा इस तरह फ़ुज़ूल और बेहूदा रस्म में ज़ाया हो तो उसकी कौमी ज़िन्दगी की तरक्की की क्या उम्मीद की जा सकती है? हर साल इस रात में यह ग़रीब व मुफ़लिस कौम लाखों रुपया आतिशबाज़ी अनार और पटाख़े वग़ैरह छोड़ने पर ख़र्च कर देती है और गाढ़ी कमाई को आग में झोंक करके मुबारक रात की बरकतों को भस्म कर डालती है। यह अमल शरीअत के ख़िलाफ़ होने के साथ-साथ अक्ल के भी ख़िलाफ़ है।

बच्चों को आतिशबाज़ी फुलझड़ी अनार पटाख़े छोड़ने के लिये पैसे दिये जाते हैं और उनको बचपन ही से ख़ुदा तआला के अहकाम की ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) की मश्क कराई जाती है। बहुत-से बड़े और बच्चे जल जाते हैं बल्कि बाज़ मर्तबा दुकानों और मकानों तक में आग लग जाती है, फिर भी यह बुरी रस्म नहीं छोड़ते। अल्लाह समझ दे।

बहुत-सी मस्जिदों और घरों में ज़रूरत से ज़्यादा चिराग़ जलाये जाते हैं, कुमकुमे रोशन किये जाते हैं, लाईट का इज़ाफ़ा किया जाता है, बहुत ज़्यादा

रोशनी की जाती है, घरों से बाहर दरवाज़ों पर कई-कई चिराग़ रोशन किये जाते हैं, और बाज़ जगह मकानों की मुन्डेरों पर और दीवारों पर कतार के साथ चिराग़ जलाकर रख दिये जाते हैं। यह सब फ़ुज़ूल ख़र्ची है जिसके बारे में कुरआन का हुक्म अभी ऊपर मालूम हो चुका है।

यह चिराग़ाँ हिन्दुस्तान के मुश्रिकों और हिन्दुओं की दीवाली की नक्ल है और सख़्त हराम है। आग से खेलना और आग का शौक़ रखना आतिश-परस्तों (आग को पूजने वालों) के यहाँ से चला है। बाज़ बुज़ुर्गों ने फ़रमाया है कि यह शबे बरात में ज़्यादा रोशनी करने का सिलसिला बरामिका से शुरू हुआ है। ये लोग पहले आतिश-परस्त थे, जब इस्लाम के नामलेवा बने तो उन्होंने उस वक़्त भी यह रस्म जारी रखी ताकि मुसलमानों के साथ नमाज़ पढ़ते वक़्त आग सामने रहे। कैसे अफ़सोस की बात है कि मुसलमानों ने आतिश-परस्तों (आग को पूजने वालों) की चीज़ अपना ली।

अ़जीब बात है कि आसमान से रहमतों का नुज़ूल होता है और नीचे रहमतों का मुकाबला आतिशबाज़ी और फ़ुज़ूल ख़र्ची और तरह तरह के गुनाहों के ज़रिये किया जाता है। अल्लाह का इरशाद होता है, कोई है जो मुझसे माँगे? और यहाँ माँगने के बजाय बुराई, गुनाह और खेल-तमाशे में गुज़ारते हैं।

मस्जिदों में इकट्ठा होना

रात को जागने के लिये अगर इत्तिफ़ाकन दो-चार आदमी मस्जिद में इकट्ठे हो गये और अपनी नमाज़ व तिलावत में मश्ग़ूल रहे तो इसमें कोई हर्ज नहीं, लेकिन बाज़ शहरों में इसको भी इस हद तक पहुँचा दिया गया है कि इसको रोकने की ज़रूरत है- जैसे बुला-बुलाकर पाबन्दी से लोगों को जमा करते हैं, शबीना करते हैं जिसमें नवाफ़िल जमाअ़त के साथ पढ़े जाते हैं जो नाजायज़ है। मर्द व औरत और बच्चे आते हैं और शोर-शराबा होता है, बे-पर्दगी होती है हालाँकि औरतों को फ़र्ज़ नमाज़ के लिये भी मस्जिद जाने से रोका गया है फिर नफ़्लें पढ़ने के लिये जाने की गुंजाइश कैसे हो सकती है। हज़राते सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम जिनसे ज़्यादा इबादत का कोई शौक़ीन नहीं हो सकता कभी इस तरह जमा न हुए थे। ग़फ़लत और जहालत की वजह से बहुत-सी बातें मसाजिद के आदाब के ख़िलाफ़ हो जाती हैं और अल्लाह के फ़रिश्तों की तकलीफ़ का सबब होकर बजाय नफ़े के नुक़सान और घाटे का सबब बन जाती हैं। इन सब बिद्अ़तों और नाजायज़ बातों में मश्ग़ूल होने से बेहतर है कि आदमी पैर फैलाकर सो जाये।

हलवे की रस्म

इसको ऐसा लाज़िम कर लिया गया है कि इसके बग़ैर शबे बरात ही नहीं होती, फ़राईज़ व वाजिबात के छोड़ देने पर इतना अफ़सोस नहीं होता जितना हलवा न पकाने पर होता है। और जो शख़्स नहीं पकाता उसको कंजूस वहाबी बख़ील वग़ैरह के अलक़ाब दिये जाते हैं। एक ग़ैर ज़रूरी चीज़ को फ़र्ज़ और वाजिब का दर्जा देना गुनाह और बिद्अ़त है। बाज़ लोग कहते हैं कि हज़रत रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के जब दाँत मुबारक शहीद हुए तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हलवा खाया था यह उसकी यादगार है। और कोई कहता है कि हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु इस तारीख़ में शहीद हुए थे उनके लिये सवाब पहुँचाना है। अव्वल तो सिरे से यही ग़लत है कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दाँत मुबारक इन दिनों में शहीद हुए थे या हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु इस तारीख़ में शहीद हुए, क्योंकि दोनों हादसे शव्वाल के महीने में पेश आए हैं, फिर अगर मान लो कि शाबान में होने का सुबूत ख़्वाह-मख़्वाह मान भी लिया जाये तब भी इस किस्म की यादगारें बग़ैर किसी शरई हुक्म के क़ायम करना बिद्अ़त और नाजायज़ है। और यह अ़जीब तरह का सवाब पहुँचाना है कि ख़ुद ही पकाया और ख़ुद ही खा गये, या दो-चार अपने यार-दोस्तों को खिला दिया।

ग़रीब और मिस्कीन लोग जो ख़ैरात के असल हक़दार हैं वे यहाँ भी देखते ही रह जाते हैं, किसी फ़क़ीर को एक चपाती और ज़रा-सा हलवा देकर पूरे हलवे के सवाब पहुँचने का यक़ीन कर लेते हैं और यह बात भी अ़जीब है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तो (अगर मान लो) दाँत मुबारक शहीद होने की वजह से हलवा खाया मगर नालायक़ उम्मती बग़ैर किसी दुख-दर्द के हलवा उड़ा रहे हैं। अल्लाह ही समझ दे। "अल्-मदख़ल" किताब के मुसन्निफ़ इस रात की फ़ज़ीलत बयान करने के बाद कहते हैं:

तर्जुमाः फिर कुछ लोग (बिद्अ़ती मिज़ाज के) आ गये जिन्होंने असल सूरत को उलट दिया, जैसा कि शबे बरात के अ़लावा दूसरे उमूर में भी उन्होंने ऐसा किया है जिसका नतीजा यह है कि जो भी मुबारक ज़माना ऐसा है जिसकी बरकतें हासिल करने की और अल्लाह तआ़ला की रहमतें लेने की शरीअ़त ने तरग़ीब दी है, शैतान ने अपनी तमाम कोशिशें और मक्कारियाँ

इस पर ख़र्च कर दीं कि जो लोग उसकी बात पर कान धरते हैं उनको बड़े-बड़े सवाब से आ़म ख़ैर से मेहरूम कर देता है, अल्लाह अपने फ़ज़्ल व करम से हमें शैतानी तरीक़ों से महफ़ूज़ फ़रमाये।

फिर शैतान ने इसी पर बस नहीं किया कि अपनी शैतानियत के कारण उनको अपनी तरफ़ लगा लिया और उनको बड़ी ख़ैर से मेहरूम कर दिया बल्कि उनको इबादत और ख़ैर की जगह ऐसे कामों में लगा दिया जो इबादत की ज़िद हैं (यानी इबादत के ख़िलाफ़ हैं) उनके लिये बिदअ़तें जारी कर दीं और नफ़्स की ख़्वाहिशों में मुब्तला कर दिया और खाने-पीने की चीज़ें और मिठाइयाँ ऐसी निकाल दीं जो मूर्तियों की शक्ल में होती हैं, शरअ़न जिनका बनाना और घर में रखना हराम है।

मसूर की दाल

बाज़ लोग इस तारीख़ में मसूर की दाल ज़रूर पकाते हैं। इसकी ईजाद की वजह अब तक मालूम नहीं हुई। इसमें भी वही ख़राबियाँ मौजूद हैं जो हलवे की रस्म में ज़िक्र की गयी हैं जैसे फ़र्ज़ की तरह लाज़िम कर लेना और जो न पकाये उसको बुरा समझना और बुरा-भला कहना।

बरतनों का बदलना और घर का लीपना

बाज़ लोगों ने इस रात में घर लीपने और बरतन बदलने की आ़दत डाल रखी है, यह भी महज़ बेकार और बे-असल है और हिन्दुओं के साथ मुशाबहत है जिसकी हदीस व कुरआन में सख़्त मनाही है।

हासिल यह कि शाबान की पन्द्रहवीं रात मुबारक रात है इसमें नमाज़ें पढ़ना और ज़िक्र व तिलावत में लगना चाहिये और सुबह को रोज़ा रखना और भी ज़्यादा सवाब का काम है। और हलवे की पाबन्दी करना और बत्तियाँ ज़्यादा जलाना, क़ब्रिस्तान में मेले लगाना, चिराग़ाँ करना, आतिशबाज़ी फुलझड़ी पटाख़े छोड़ना ये सब बातें शरीअ़त के ख़िलाफ़ हैं और बिदअ़त हैं।

अल्लाह तआ़ला ने मुबारक रात नसीब फ़रमायी इसका तक़ाज़ा यह था कि हम शुक्रगुज़ार बन्दे बनते और इबादत व नेकियों में लगते लेकिन शैतान ने इबादतों से हटाकर बिदअ़तों में लगा दिया। शैतान हमेशा अपनी कोशिश में लगा रहता है। अल्लाह तआ़ला हम सब की हिफ़ाज़त फ़रमाए आमीन।

मुसलमान औ़रतों से

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बातें

* औ़रतों के लिए *

हज और उमरे का बयान

लेखक

हज़रत मौलाना आशिक़ इलाही साहिब बुलन्द शहरी

रहमतुल्लाहि अ़लैहि

अनुवादक: मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा. लि.)

422, मटिया महल, उर्दू मार्किट, जामा मस्जिद

देहली-110006

हज और उमरे के फ़ज़ाइल

और अहकाम व मसाइल

हज की फ़रज़ियत और अहमियत

हदीसः (74) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु तआला अन्हा फ़रमाती हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से जिहाद में शरीक होने की इजाज़त चाही, आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया तुम्हारा यानी औरतों का जिहाद हज है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 221)

तशरीहः हज इस्लाम का पाँचवाँ रुक्न है और हर उस आक़िल बालिग़ मर्द व औरत पर फ़र्ज़ है जिसके पास मक्का शरीफ़ तक आने जाने का सवारी का ख़र्च हो, और ज़ादे-राह यानी सफ़र का तोशा मौजूद हो। और हज उम्र भर में सिर्फ़ एक बार फ़र्ज़ है इससे ज़्यादा जो हज किया जाये वह नफ़िल होगा। लेकिन नफ़िल हज का सवाब भी बहुत ज़्यादा है। फ़र्ज़ हज अदा करने में जल्दी करनी चाहिये क्योंकि मौत का कोई भरोसा नहीं कब आ जाये। जिस पर हज फ़र्ज़ हो इरशाद है:

وَلِلّٰهِ عَلَى النَّاسِ حِجُّ الْبَيْتِ مَنِ اسْتَطَاعَ إِلَيْهِ سَبِيلًا،
وَمَنْ كَفَرَ فَإِنَّ اللّٰهَ غَنِيٌّ عَنِ الْعٰلَمِينَ

यानी लोगों के ज़िम्मे बैतुल्लाह शरीफ़ का हज करना है जिसको बैतुल्लाह शरीफ़ तक पहुँचने की ताक़त हो। और जो शख़्स इनकार करे तो बिला शुब्हा अल्लाह पाक सारे जहानों से बेनियाज़ है।

हज न करने पर वईद

हदीसः हज़रत अबू उमामा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्ल० ने इरशाद फ़रमाया कि जिस शख़्स को कोई बहुत मजबूरी (जैसे तंगदस्ती) या सफ़र से रोकने वाला मर्ज़ या ज़ालिम हाकिम हज को जाने से न रोके और वह फिर भी हज न करे तो उसे चाहिये कि चाहे

तो यहूदी होकर मर जाये चाहे ईसाई होकर मर जाये। (तरग़ीब व तरहीब)

कैसी बड़ी वईद (धमकी और डाँट) है। हज का इन्तिज़ाम होते हुए हज न करने पर यहूदी या ईसाई होने की हालत में मर जाने की वईद है। बहुत-से मर्दों और औरतों पर हज फ़र्ज़ होता है लेकिन दुनिया के धन्धों और औलाद की शादी के झमेलों को बहाने बनाये रहते हैं और हज का इरादा ही नहीं करते। फिर बाज़ी मर्तबा रकम ख़त्म हो जाती है और ज़िन्दगी भर हज नसीब नहीं होता और सख़्त गुनाहगार होकर मरते हैं।

हज और उमरे की फ़ज़ीलत

हज की बहुत बड़ी फ़ज़ीलत है। एक हदीस में इरशाद है कि जिसने हज किया और उसमें गन्दी बातें न करीं और गुनाह करने का जुर्म न किया तो वह अपने गुनाहों से (पाक होकर) ऐसा लौटता है जैसा उस दिन था जबकि अपनी माँ के पेट से पैदा हुआ था। (बुख़ारी व मुस्लिम)

एक हदीस में फ़रमाया कि: हज उन सब गुनाहों को ख़त्म कर देता है जो हज से पहले हुए। (तरग़ीब व तरहीब)

हज की तरह उमरा भी एक मुस्तकिल इबादत है, वह भी मक्का में होता है। उसमें काबा शरीफ़ का तवाफ़ और सफ़ा-मरवा के दरमियान सई की जाती है। उमरा सुन्नते मुअक्कदा है और उमरा करने वालों का भी बड़ा रुतबा है। जब हज को जाते हैं तब बहुत-से उमरे करने का मौक़ा मिल जाता है।

हज और उमरा करने वालों की फ़ज़ीलत

हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया: हज और उमरा करने वाले अल्लाह की बारगाह में हाज़िर होने वाले लोग हैं, उनका रुतबा इतना बड़ा है कि अगर अल्लाह से दुआ करें तो क़बूल फ़रमाये और अगर उससे मग़फ़िरत तलब करें तो वह उनको बख़्श दे। (तरग़ीब व तरहीब)

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने दुआ की: ऐ अल्लाह! हज करने वाले की मग़फ़िरत फ़रमा और जिसके लिये वह मग़फ़िरत की दुआ कर दे उसकी भी मग़फ़िरत फ़रमा। (अत्तरग़ीब वत्तरहीब)

हज्जे मबरूर

हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हु से रिवायत है

कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि हज और उमरा साथ-साथ किया करो, यानी हज के बाद उमरा भी करो क्योंकि ये दोनों तंगदस्ती को और गुनाहों को इस तरह दूर कर देते हैं जैसे भट्टी लोहे और सोने चाँदी के मैल को दूर कर देती है। और फ़रमाया कि हज्जे मबरूर का सवाब बस जन्नत ही है। (तिर्मिज़ी)

हज्जे मबरूर वह है जो हलाल माल से किया जाये और जिस में गुनाहों से परहेज़ किया जाये, और हज में जिन चीज़ों से मना किया गया है उनसे दूर रहे।

औरतों का जिहाद हज है

हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने जब नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से जिहाद में शरीक होने की ख़्वाहिश का इज़हार किया और इसके बारे में इजाज़त माँगी तो आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जवाब में फ़रमाया कि औरतों का जिहाद हज है। इसका मतलब यह है कि जिहाद में बहुत-सी तकलीफ़ें होती हैं उनका बरदाश्त करना औरतों के बस का काम नहीं, यह काम मर्दों का है औरतें अगर इन कामों से बढ़कर ज़्यादा सवाब का काम करना चाहें जो अपने घर में रहकर कर सकती हैं तो उनको हज करना चाहिये। हाँ! अगर जिहाद फ़र्ज़े-अ़ैन हो जाये तो मर्द व औरत सब पर लाज़िम होगा। "सही इब्ने ख़ुज़ैमा" में है कि हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! क्या औरतों पर भी किसी तरह का जिहाद है? आपने फ़रमाया औरतों पर एक ऐसा जिहाद है जिसमें जंग नहीं यानी उमरा व हज। (तरग़ीब व तरहीब)

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि बड़ी उम्र वाले और ज़ईफ़ (बूढ़े और कमज़ोर) और औरत का जिहाद हज और उमरा है। (निसाई शरीफ़)

हज के शरई ख़र्चों में मदीने के सफ़र और तबर्रुकात का ख़र्च शामिल नहीं। हिसाब लगायें कि हमारे पास जायदाद और ज़ेवर और नक़द की किस क़द्र मालियत है। अगर हज फ़र्ज़ हो तो उसकी अदायगी में बिल्कुल कोताही न करें। हज के फ़र्ज़ होने के लिये मक्का शरीफ़ तक सवारी से आने-जाने का ख़र्च और रास्ते के ख़र्चों का होना शर्त है। यह रकम बहुत ज़्यादा नहीं होती।

तबर्रुकात जो ख़रीद कर लाते हैं और जो माल व असबाब या रिश्तेदारों को तोहफ़े देने के लिये ख़रीद कर लाते हैं उन सब को हज ही के ख़र्च में शुमार करते हैं यह ग़लत है, बल्कि अगर मदीना मुनव्वरा आने-जाने का ख़र्च न हो और मक्का तक आने-जाने की हिम्मत व गुंजाइश हो तो उस सूरत में भी हज फ़र्ज़ हो जाता है, अलबत्ता मुअल्लिम की फ़ीस और वे ख़र्चे जो हुकूमतों ने कानूनन लाज़िम कर रखे हैं, उनका ख़र्च हज के ख़र्चे में शुमार होगा। अगरचे बाज़े टैक्स ऐसे हैं जो हुकूमतों को उनका लेना दुरुस्त नहीं लेकिन उनके बग़ैर चूँकि हुकुमतें जाने नहीं देतीं इसलिये मजबूरन उनका ख़र्च भी हज की ज़रूरत में शामिल होगा।

हज के सफ़र में नज़र की हिफ़ाज़त और पर्दे की पाबन्दी और ख़ास ख़्याल

हदीसः (75) हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि (नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के) आख़िरी हज के मौक़े पर (मुज़दलिफ़ा से मिना को वापस होते हुए) फ़ज़ल बिन अ़ब्बास रज़ि. हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सवारी पर पीछे बैठे हुए थे, इसी दौरान क़बीला बनी ख़स्अ़म की एक औ़रत (मसला मालूम करने के लिये) नबी पाक की ख़िदमत में हाज़िर हुई। फ़ज़ल बिन अ़ब्बास उस औ़रत को देखने लगे और वह औ़रत उनको देखने लगी। (चूँकि बद्-नज़री मर्दों और औ़रतों दोनों के लिये सख़्त मना है और हज जैसी इबादत के मौक़े पर गुनाह का करना और ज़्यादा संगीन है इसलिये) हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत फ़ज़ल का रुख़ दूसरी तरफ़ फेर दिया। उस औ़रत ने आपसे सवाल किया कि बेशक अल्लाह के फ़रीज़े यानी हज ने मेरे बूढ़े बाप को पा लिया है (और वह इस क़द्र बूढ़े और कमज़ोर हैं कि) सवारी पर जमकर नहीं बैठ सकते तो क्या मैं उनकी तरफ़ से हज कर लूँ? नबी करीम सल्ल० ने जवाब दिया कि हाँ! (बाप की तरफ़ से हज कर लो)। (बुख़ारी शरीफ़ पेज 205)

तशरीहः इस हदीस से मालूम हुआ कि हज के सफ़र में मर्दों और औ़रतों को बद-नज़री से बचने की ख़ास पाबन्दी करनी लाज़िम है। मुस्नद अहमद में यह हदीस इस तरह नक़ल की गयी है कि (हज के मौक़े पर) अ़रफ़ा के दिन (एक नौजवान) शख़्स नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम

के साथ आपकी सवारी पर आपके पीछे बैठा हुआ था, वह नौजवान औ़रतों पर नज़रें डालने लगा तो नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि ऐ भतीजे! बेशक यह वह दिन है कि जो शख़्स (आज) अपने कानों और आँखों को और अपनी ज़बान को क़ाबू में रखेगा (यानी इन जिस्मानी अंगों को गुनाहों से बचाएगा) अल्लाह तआ़ला उसकी मग़फ़िरत फ़रमा देगा। (तरग़ीब व तरहीब)

आजकल हज और उमरा के सफ़र में बद-नज़री और बेपर्दगी हद से ज़्यादा होती है, अच्छी-ख़ासी पर्दे वाली औ़रतें बुर्क़ा उतार कर रख देती हैं और गोया यह समझती हैं कि हज में पर्दा शरअ़न नहीं है। यह बड़ी जहालत की बात है। हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हा का बयान है कि (हज के सफ़र में) हमारे करीब से हाजी लोग गुज़रते थे और हम रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ एहराम बाँधे हुए थे। (चूँकि एहराम में औ़रत को मुँह पर कपड़ा लगाना मना है इसलिए हमारे चेहरे खुले हुए थे और चूँकि पर्दा करना हज में भी लाज़िम है) इसलिए जब हाजी लोग हमारे बराबर से गुज़रते तो हम बड़ी सी चादर को सर से गिराकर चेहरे के सामने लटका लेते और जब हाजी लोग आगे बढ़ जाते तो हम लोग चेहरा खोल लेते थे। (अबू दाऊद)

मालूम हुआ कि हज के सफ़र में भी पर्दे का ख़ास ख़्याल और पाबन्दी करनी लाज़िम है। औ़रत जब हज का एहराम बाँध ले तो एहराम खोलने तक चेहरे पर कपड़ा लगाना मना है, लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि चेहरा खोले हुए हाजियों के सामने फिरती रहें। ऐसी सूरत इख़्तियार करना ज़रूरी है कि चेहरे पर कपड़ा भी न लगे और नामेहरमों से पर्दा भी हो जाए। जिस तरह हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने अपने हज के सफ़र का वाकिआ़ बयान फ़रमाया जो अभी ज़िक्र हुआ।

इस वाक़िए से वे लोग जो पश्चिम के तौर-तरीक़ों के गरवीदा हैं उनकी तरदीद भी हो जाती है जो कहते हैं कि चेहरा खोलना नामेहरमों के सामने जायज़ है। इसी लिए नक़ाब वाला बुर्क़ा अपनी औ़रतों को नहीं उढ़ाते। अगर नामेहरमों से चेहरा छुपाना लाज़िम न होता तो हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा और दीगर सहाबी औ़रतें हाजी लोगों से चेहरा छुपाने का एहतिमाम क्यों करतीं?

आजकल हाजी लोग आपस में अ़रफ़ाती भाई और हाजी और हज्जन अ़रफ़ाती भाई-बहन कहलाने लगते हैं और पूरे सफ़रे हज में हज्जनें नामेहरम हाजियों के सामने बिला तकल्लुफ़ बेपर्दा आती और उठती-बैठती हैं, यह बिल्कुल शरीअ़त के ख़िलाफ़ है। बेपर्दगी हज के सफ़र में भी मना है और उसके बाद भी मना है। नामेहरम बहरहाल नामेहरम है चाहे सूफ़ी जी हो चाहे पीर जी, चाहे नमाज़ी जी हो चाहे हाजी जी।

औ़रत को बग़ैर मेहरम के हज के लिए जाना गुनाह है

हदीसः (76) हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि हरगिज़ कोई मर्द किसी (अजनबी) औ़रत के पास तन्हाई में न रहे। और हरगिज़ कोई औ़रत सफ़र न करे मगर यह कि उसके साथ मेहरम हो। यह सुनकर एक शख़्स ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! मेरा नाम फ़लाँ-फ़लाँ जिहाद में लिखा गया है और मेरी बीवी हज के लिए निकल चुकी है। (चूँकि यह जिहाद फ़र्ज़े अ़ैन नहीं था इसलिए) आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जाओ अपनी बीवी के साथ हज करो। (मिश्कात शरीफ़)

तशरीहः औ़रत कमज़ोर भी है और फ़ितने का सबब भी इसलिए शरीअ़ते पाक ने यह क़ानून रखा है कि सफ़र दीनी हो या दुनियावी, दूर के सफ़र पर औ़रत बग़ैर शौहर या बग़ैर मेहरम के न जाए।

मेहरम किसे कहते हैं

मेहरम उसे कहते हैं जिससे उम्र भर कभी भी किसी हाल में निकाह दुरुस्त न हो- जैसे बाप, भाई, बेटा, चचा, मामूँ वग़ैरह। और जिस से कभी भी निकाह दुरुस्त हो जैसे जेठ, देवर या मामूँ-फूफी का लड़का या ख़ाला का बेटा और बहनोई, ये लोग मेहरम नहीं हैं, इनके साथ हज का या कोई और सफ़र जायज़ नहीं है। जब इन लोगों के साथ सफ़र जायज़ नहीं तो जो लोग बिल्कुल रिश्तेदार नहीं उनके साथ सफ़र कैसे जायज़ हो सकता है? बहुत-सी औ़रतें महज़ शौक़ और ज़ौक़ को देखती हैं, शरीअ़त के क़ानून को नहीं देखतीं और ग़ैर-मेहरम के साथ हज के लिए चल देती हैं, यह सरासर हराम है। भला जिस हज में शुरू से आख़िर तक शरीअ़त की ख़िलाफ़वर्ज़ी (अहकाम का उल्लंघन) की गयी हो वह कैसे मबरूर और मक़बूल हो सकता है? बग़ैर

मेहरम के 48 मील का सफ़र औरतों के लिए जायज़ नहीं अगरचे वह हवाई जहाज़ या रेल से हो। दूर के सफ़र से इतनी दूरी मुराद है।

औरत के हज के सफ़र के मुताल्लीक़ चन्द मसाइल

जिस औरत के पास इतनी मालियत हो कि जो मक्का मुअज़्ज़मा तक अपने ख़र्चे से आ-जा सकती हो लेकिन उसके साथ जाने वाला शौहर या कोई मेहरम न हो तो उसपर हज के लिये जाना फ़र्ज़ नहीं। अगर मेहरम के बग़ैर हज को चल देगी तो गुनाहगार होगी, जब मेहरम मिल जाये या शौहर के साथ जाने की सूरत हो जाये तब हज के लिये रवाना हो। मेहरम का आक़िल बालिग़ और दीनदार होना शर्त है। अगर बदकार हो और उससे ख़तरा हो तो उसके साथ न जाये।

मसलाः अगर मेहरम या शौहर अपने ख़र्च से साथ जाने पर तैयार न हो तो उसका ख़र्च भी औरत के ज़िम्मे है, हाँ! अगर वह अपना ख़र्च ख़ुद बरदाश्त करे तो कुछ हर्ज नहीं।

मसलाः अगर औरत पर हज फ़र्ज़ हो गया और मेहरम भी साथ जाने को तैयार है तो शौहर को रोकने का हक़ नहीं है।

मसलाः औरत को दूसरी औरतों के साथ मिलकर भी बिना मेहरम या बिना शौहर दूर के सफ़र पर जाना जायज़ नहीं है।

मसलाः अगर औरत के पास हज का ख़र्च है और मेहरम या शौहर भी मौजूद है लेकिन इद्दत में है तो उसको हज के लिये जाना जायज़ नहीं है चाहे इद्दत निकाह टूटने की हो या तलाक़ की या शौहर की मौत की। अगर इद्दत में हज को चली गयी तो गुनाहगार होगी।

मसलाः अगर औरत के पास हज का ख़र्च है लेकिन मेहरम या शौहर नहीं है और उम्र भर मेहरम न मिला तो मरने से पहले वसीयत कर जाना वाजिब है कि मेरी तरफ़ से हज करा दिया जाये और यह वसीयत उसके तिहाई माल में लागू और जारी होगी।

बच्चे को हज कराने का सवाब

हदीसः (77) हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से रौहा मुक़ाम में चन्द मुसाफ़िरों की मुलाक़ात हुई। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने

दरियाफ़्त फ़रमाया कि तुम कौन लोग हो? उन्होंने कहा कि हम मुसलमान हैं, फिर उन्होंने आपसे दरियाफ़्त किया कि आप कौन हैं? आपने फ़रमाया कि मैं अल्लाह का रसूल हूँ। उसी वक़्त एक औरत ने अपना बच्चा ऊपर उठाया (और आपको दिखाकर) कहने लगी क्या इसका हज हो सकता है? आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया हाँ! इसका हज हो जायेगा और तुझको (भी) सवाब मिलेगा। (मिश्कात शरीफ़ पेज 221)

तशरीहः इस हदीस से सहाबी औरतों के दीनी शग़फ़ और रुझान का इल्म हुआ। सफ़र की हालत में जब एक औरत को पता चला कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ लेजा रहे हैं तो उसने मौका ग़नीमत जाना और फ़ौरन यह मसला दरियाफ़्त कर लिया कि बच्चे का हज हो सकता है या नहीं? आपने फ़रमाया हाँ! इसका हज हो जायेगा और जो तुम इसका एहराम बाँधोगी और जो चीज़ें एहराम में मना हैं उनसे बचाओगी और हज में जहाँ-जहाँ ठहरते हैं वहाँ-वहाँ इसको साथ लेजा कर ठहराओगी और दूसरे हज के अरकान अदा कराओगी तुमको (भी) सवाब मिलेगा।

इस हदीस से मालूम हुआ कि हज के सही होने के लिए बालिग़ होना शर्त नहीं है, नाबालिग़ का भी हज हो जाता है लेकिन यह हज फ़र्ज़ हज के क़ायम-मुक़ाम न होगा, अगर बालिग़ होकर बच्चा हैसियत व गुंजाइश वाला हुआ तो दोबारा हज करना फ़र्ज़ होगा।

दूसरे की तरफ़ से हज करना

हदीसः (78) हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हज्जतुल्-विदा के मौके पर कबीला बनी ख़सअम की एक औरत ने अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! फ़रीज़ा हज का वक़्त ऐसे मौके पर आया है कि मेरे वालिद ख़ूब बूढ़े हैं जो सवारी पर जमकर नहीं बैठ सकते, क्या मैं उनकी तरफ़ से हज कर लूँ? आपने फ़रमाया हाँ। (मिश्कात पेज 221)

तशरीहः इस हदीस से भी नबी पाक के ज़माने की औरतों के दीनी शौक़ और दीनी मालूमात हासिल करने के सच्चे जज़्बे का पता चला। नुबुव्वत के ज़माने की औरतें इबादत करने में और मसाइल पूछने में बहुत-से मर्दों से कम न थीं। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देखकर बनी ख़सअम की एक औरत ने यह मालूम कर लिया कि मैं अपने वालिद की

तरफ़ से हज कर सकती हूँ या नहीं? आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि हाँ! कर सकती हो। इससे मालूम हुआ कि "हज्जे-बदल" में यह कोई फ़र्ज़ नहीं कि मर्द की तरफ़ से मर्द और औरत की तरफ़ से औरत ही हज करे, बल्कि मर्द की तरफ़ से औरत भी हज्जे-बदल कर सकती है, और इसका उल्टा भी हो सकता है यानी औरत की तरफ़ से मर्द भी हज्जे-बदल कर सकता है।

जिस शख़्स पर हज फ़र्ज़ हो और वह सख़्त बीमारी या बहुत ज़्यादा कमज़ोरी या बुढ़ापे की वजह से हज करने पर क़ादिर न रहा तो अपनी तरफ़ से किसी को भेजकर हज अदा करा दे। लेकिन अगर कभी तन्दुरुस्त हो गया और ख़ुद हज करने की ताक़त आ गयी तो दोबारा हज करना लाज़िम होगा और पहली मर्तबा जो हज कराया है उसका भी सवाब पायेगा। और अगर किसी शख़्स पर हज फ़र्ज़ नहीं था या हज कर लिया है और फिर कोई शख़्स उसकी तरफ़ से बतौर नफ़िल हज करना चाहे तो उसमें यह शर्त नहीं है कि जिसकी तरफ़ से हज किया जाये वह ख़ुद जाने से आजिज़ हो।

हज्जे बदल से मुताल्लिक़ कुछ मसाइल

जिस पर हज फ़र्ज़ हो और उसने ग़फ़लत और कोताही की वजह से हज नहीं किया यहाँ तक कि मौत आने लगे तो उसपर लाज़िम है कि अपनी तरफ़ से हज कराने की वसीयत करे और यह वसीयत उसके तिहाई माल में नाफ़िज़ होगी और दो तिहाई माल वारिसों को मिलेगा।

मसलाः अगर मरने वाले ने वसीयत न की हालाँकि उसपर हज फ़र्ज़ था तब भी उसका बेटा-बेटी या दूसरे वारिस अपनी ख़ुशी से अपने माल से या उसकी छोड़ी हुई रक़म से उसकी तरफ़ से हज कर लें या किसी को करा दें तब भी अल्लाह पाक से उम्मीद है कि उसका हज अदा हो जायेगा, अलबत्ता जो वारिस नाबालिग़ हों या जो ग़ायब हों या जो ख़ुशदिली से इजाज़त न दें उनके हिस्से में जो तर्का (मय्यित का छोड़ा हुआ माल) आता हो उसको इस काम में न लगायें। नाबालिग़ अगर इजाज़त दे तब भी उसका माल हज्जे-बदल में न लगायें क्योंकि उसकी इजाज़त मोतबर नहीं है।

मसलाः हज्जे-बदल नफ़्ली हज से बेहतर है।

मसलाः जिस शख़्स ने पहले हज न किया हो उसको हज्जे-बदल के लिये

भेजना मकरूह है, लेकिन अगर किसी ऐसे शख़्स को हज्जे-बदल के लिए भेज दिया जिसने ख़ुद हज नहीं किया था और उसने दूसरे की तरफ़ से हज करने की नीयत करके हज कर लिया तो हज्जे-बदल अदा हो जायेगा।

रमज़ान में उमरा करना हज करने के बराबर है

हदीसः (79) हज़रत अबू बक्र बिन अ़बदुर्रहमान रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि एक सहाबी औरत हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुई और अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! मैंने हज को जाने की तैयारी की थी फिर उज़्र पेश आ गया जिसकी वजह से न जा सकी, (अब हज का सवाब हासिल करने के लिये कोई रास्ता बताइये)। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसके जवाब में फ़रमाया कि तुम रमज़ान में उमरा कर लो क्योंकि रमज़ान में उमरा करने का सवाब हज करने के बराबर है।

(मुवत्ता इमाम मालिक पेज 134)

तशरीहः उमरा भी मुस्तक़िल इबादत है और बहुत बड़ी नेक-बख़्ती है, जिसको हिम्मत और गुंजाइश हो उसके लिए सुन्नते मुअक्कदा है। हज की तरह यह भी मक्का ही में अदा होता है। अगर अपने वतन से उमरा के लिए जा रहे हों तो रास्ते में जो एहराम बाँधने की जगह आती है (जिसे मीक़ात कहते हैं) वहाँ से एहराम बाँध लें, और अगर मक्का में होते हुए उमरा का इरादा करें तो उमरा का एहराम बाँधने के लिऐ हरम शरीफ़ से बाहर जाना पड़ता है। सबसे क़रीब जगह जहाँ हरम की हद ख़त्म होती है **तनूअ़ीम** है जो मक्का मुकर्रमा से तीन मील है। अकसर लोग वहाँ जाते हैं और वहाँ से क़ायदे के मुताबिक़ एहराम बाँधकर मक्का मुअ़ज़्ज़मा आकर उमरा कर लेते हैं। तनूअ़ीम में मस्जिद बनी हुई है जिसे मस्जिदे आ़यशा कहते हैं। हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपनी बीवी हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा को उनके भाई हज़रत अ़बदुर्रहमान बिन अबू बक्र रज़ियल्लाहु अ़न्हु के साथ मक्का मुकर्रमा से यहाँ भेजा था, वह अपने भाई के साथ जाकर तनूअ़ीम से एहराम बाँधकर आई और मक्का मुकर्रमा में आकर उमरा अदा किया।

उमरे का एहराम बाँधकर जब मक्का मुकर्रमा पहुँचे तो काबा शरीफ़ का तवाफ़ करे, फिर दो रकअ़त वाजिब तवाफ़ पढ़े और सफ़ा-मरवा की सई करे, उसके बाद एक पौरवे की मात्रा में बाल कटाकर एहराम से निकल जाये।

कम-से-कम चौथाई सर के बाल कट जायें। बस उमरे की हक़ीक़त इसी क़द्र है। इसके अलावा उमरे के बयान में जो बातें किताबों में लिखी हैं सुन्नत या मुस्तहब हैं, उनका भी ख़्याल रखना चाहिये।

उमरे के लिए कोई वक़्त मुक़र्रर नहीं है, साल भर में जब चाहे उमरा करे। अलबत्ता पाँच दिन ऐसे हैं जिनमें उमरे का एहराम बाँधना मना है, वे पाँच दिन ये हैं: बक़र-ईद की नवीं तारीख़ और उसके बाद दसवीं, ग्यारहवीं, बारहवीं तेरहवीं तारीख़। रमज़ान मुबारक में उमरा करने का बहुत बड़ा सवाब है, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया रमज़ान का उमरा मेरे साथ हज करने के बराबर है। (तरग़ीब)

जिन हज़रात को मौक़ा मिल जाये इस ख़ैर व बरकत को हाथ से न जाने दें ख़ुसूसन जबकि मक्का में या सऊदी अ़रब के किसी भी शहर या बस्ती में मुक़ीम हों तो इस सआ़दत से ज़रूर मालामाल हों और बराबर उमरा करें। याद रहे कि रमज़ान के उमरे से हज का सवाब मिल जायेगा लेकिन उसकी वजह से फ़र्ज़ हज ज़िम्मे से नहीं उतरेगा। उसकी अदायगी बहरहाल फ़र्ज़ रहेगी जब तक अदा न करे, ख़ूब समझ लो।

हैज़ और निफ़ास वाली औ़रत एहराम के वक़्त क्या करे?

हदीसः (80) हज़रत जाबिर बिन अ़ब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हु से रिवायत है कि (हिजरत के बाद) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मदीना मुनव्वरा में नौ साल क़्याम फ़रमाया (और इस मुद्दत में किसी साल भी) हज नहीं किया। फिर दसवें साल आपने लोगों में हज का ऐलान फ़रमाया कि रसूलुल्लाह सल्ल० इस साल हज फ़रमाने वाले हैं। ऐलान सुनकर बहुत बड़ी तायदाद में लोग मदीना मुनव्वरा हाज़िर हो गये (ताकि आपके साथ हज के लिए रवाना हों)। चुनाँचे हम लोग आपके साथ (हज के इरादे से) रवाना हुए। जब ज़ुलहुलैफ़ा मुक़ाम पर पहुँचे (जो मदीने वालों की मीक़ात है) तो वहाँ अस्मा बिन्ते उमैस के पेट से मुहम्मद बिन अबू बक्र पैदा हो गये। उन्होंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में सवाल भेजा कि मैं अब क्या करूँ? आपने फ़रमाया तुम ग़ुस्ल कर लो और किसी कपड़े से लंगोट कस लो और एहराम बाँध लो। (मिश्कात शरीफ़ पेज 224)

तशरीहः मदीना मुनव्वरा को हिजरत करने के बाद सन् 8 हिजरी में

मक्का मुअज़्ज़मा फ़तह हुआ और सन् 9 हिजरी में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ख़ुद हज का इरादा फ़रमाया और हज के लिए रवाना होने की इत्तिला आम मुसलमानों को दे दी। इत्तिला पाते ही आपके साथ चलने के लिऐ भारी तायदाद में मदीना मुनव्वरा में आदमी जमा हो गये। फिर सबने मिलकर आपके साथ मक्का मुअज़्ज़मा का सफ़र शुरू किया। जब कोई मक्का मुअज़्ज़मा में दाख़िल हो तो उसको मीक़ात से एहराम बाँधना चाहिये। हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पाँच मीक़ातें बताई हैं। मदीना मुनव्वरा के रहने वालों की मीक़ात ज़ुल्-हुलैफ़ा है। यह मदीना मुनव्वरा से करीब छह मील है। आजकल इसको **बीरे-अ़ली** कहते हैं। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपनी पाक बीवियों और दीगर सहाबा के साथ जिनमें मर्द व औरत सब ही थे, ज़ुल्-हुलैफ़ा पहुँचे यहाँ एक रात ठहरे, फिर यहाँ से एहराम बाँधकर मक्का मुअज़्ज़मा के लिये रवाना हुए।

जब ज़ुल्-हुलैफ़ा में क़याम फ़रमा थे हज़रत अस्मा बिन्ते उमैस रज़ि० के पेट से लड़का पैदा हो गया। हज़रत अस्मा हज़रत अबू बक्र सद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु की बीवी थीं, इस मौक़े पर जो लड़का पैदा हुआ उसका नाम मुहम्मद रखा गया और यह बच्चा तारीख़ में मुहम्मद बिन अबू बक्र के नाम से मशहूर हुआ।

पैदाइश के बाद ख़ून जारी हो जाता है जिसको **निफ़ास** कहते हैं और उसके अहकाम भी वही हैं जो हैज़ (औरतों की हर महीने वाली मजबूरी) के अहकाम हैं। जब हैज़ (माहवारी) व निफ़ास (ज़चगी) का ज़माना हो तो कई इबादतें मना हो जाती हैं, चूँकि यह एक अहम इबादत का सफ़र था और मक्का मुअज़्ज़मा पहुँचकर हज करना था और इससे पहले इस तरह का कोई वाक़िआ पेश नहीं आया था इसलिए मसला जानने की ज़रूरत थी कि इस हालत में हज का एहराम बाँधें या न बाँधें। और फिर एहराम बाँधने के बाद हज कैसे करें। लिहाज़ा ज़रूरी हुआ कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से इस बारे में दरियाफ़्त किया जाये और मसला मालूम हो जाये कि जो औरत इस हाल में हो वह एहराम के मौक़े पर क्या करे? जब आप से मसला मालूम किया गया तो आपने इरशाद फ़रमाया कि ग़ुस्ल कर लो और लंगोट कस लो और एहराम बाँध लो, चुनाँचे उन्होंने ऐसा ही किया और एहराम बाँधकर हज के अरकान व अफ़आल अदा किये।

इससे मालूम हुआ कि चाहे ज़चगी की हालत हो या माहवारी की, ये दोनों हालतें एहराम से रोकने वाली नहीं हैं। गुस्ल करके और लंगोट करके हज या उमरे की नीयत करके **लब्बैक अल्लाहुम्-म लब्बैक** आख़िर तक पढ़ ले। ऐसा करने से औरत एहराम में दाख़िल हो जायेगी, अलबत्ता एहराम की रकअ़तें न पढ़े क्योंकि हर नमाज़ के लिए पाक होना शर्त है। एहराम के मौक़े पर जो गुस्ल किया जाता है यह गुस्ले नज़ाफ़त है यानी इससे सफ़ाई-सुथराई मक़सूद होती है। हैज़ या निफ़ास के दिनों में कोई औरत अगर गुस्ल करे तो उससे पाक न होगी लेकिन सफ़ाई सुथराई हो जायेगी। इसलिए हज़रत अस्मा रज़ियल्लाहु अ़न्हा को आपने गुस्ल करने का हुक्म फ़रमाया। और जानना चाहिये कि एहराम के मौक़े पर गुस्ल करना फ़र्ज़ व वाजिब नहीं अलबत्ता मसनून है। सवाब की चीज़ है। अगर कोई मर्द या औरत बिना किसी उज़्र भी बग़ैर गुस्ल के एहराम बाँध ले तो तब भी उसका एहराम सही हो जायेगा।

हज में सिर्फ़ एक ऐसी चीज़ है जो **हैज़** व **निफ़ास** (यानी माहवारी और ज़चगी) की हालत में नहीं हो सकती बाक़ी दूसरे अहकाम जो अ़रफ़ात, मुज़दलिफ़ा, मिना में अदा किए जाते हैं उनके लिऐ पाक होना शर्त नहीं है। और वह हैज़ और निफ़ास की हालत में और **जनाबत** (गुस्ल फ़र्ज़ होने की हालत में) और बे-वुज़ु अदा हो सकते हैं। जब कोई औरत हज का एहराम हैज़ व निफ़ास के दिनों में बाँध ले तो मक्का मुअ़ज़्ज़मा पहुँचने के बाद पाक होने तक **तवाफ़े-क़ुदूम** न करे जो मसनून है। जब पाक हो जाये तो तवाफ़ कर ले। यह तवाफ़ मिना अ़रफ़ात जाने से पहले होता है। और अ़रफ़ात, मुज़दलिफ़ा, मिना के सब अहकाम अदा करे। बारहवीं तारीख़ का सूरज छुपने से पहले-पहले पाक हो जाये तो गुस्ल करके **तवाफ़े-ज़ियारत** करे। तवाफ़े-ज़ियारत फ़र्ज़ है। जो बारहवीं तारीख़ के अन्दर-अन्दर हो जाना वाजिब है। यह तवाफ़ दस, ग्यारह, बारह तीनों तारीख़ों में से किसी दिन कर लेना लाज़िम है। लेकिन अगर कोई औरत इन तीनों दिनों में भी हैज़ व निफ़ास से पाक न हो तो मक्का मुअ़ज़्ज़मा में ठहरी रहे और पाक होने के बाद तवाफ़े-ज़ियारत करे उसके बाद **तवाफ़े-विदा** करके वतन के लिए रवाना हो क्योंकि यह देरी शरई मजबूरी की वजह से होगी इसलिए तवाफ़े-ज़ियारत को बारहवीं तारीख़ से लेट करने की वजह से कोई **दम** वग़ैरह वाजिब न होगा।

अगर किसी औरत ने हज का सफ़र शुरू कर दिया और एहराम बाँधने

से पहले माहवारी के दिन शुरू हो गये तो मीक़ात पर पहुँचकर एहराम बाँध ले, फिर मक्का मुअ़ज़्ज़मा पहुँचकर पाक होने का इन्तिज़ार करे, जब पाक हो जाये तो ग़ुस्ल करके तवाफ़े-क़ुदूम करे। इसी तरह अगर एहराम बाँधने के बाद **ये ख़ास दिन** शुरू हो जायें तो कोई हर्ज की बात नहीं, बस मक्का मुअ़ज़्ज़मा पहुँचकर पाक होने का इन्तिज़ार होगा, पाक होकर तवाफ़ करे। हज की तारीख़ चूँकि मुक़र्रर है इसलिए अगर पाक न हो तब भी तवाफ़े-क़ुदूम को छोड़कर आठ ज़िलहिज्जा को मिना के लिये और वहाँ से अ़रफ़ात के लिये रवाना हो जाना दुरुस्त है। और उमरे की चूँकि कोई तारीख़ मुक़र्रर नहीं है, जितने भी दिन गुज़र जायें वह न क़ज़ा होगा न छूटेगा इसलिये माहवारी के दिन शुरू होने की सूरत में पाक होने का इन्तिज़ार करे, जब भी पाक हो जाये ग़ुस्ल करके उमरे का तवाफ़ और सफ़ा-मरवा की सई करे।

औ़रतों को अपना हाल मालूम होता है और अन्दाज़ा रहता है कि माहवारी के दिन कब शुरू हो जायेंगे, सीट पहले से सोच-समझकर तजवीज़ करें। बहुत-सी औ़रतें वापसी में तवाफ़े-ज़ियारत के दिनों में हैज़ में मुब्तला हो जाती हैं और सीट पहले से O. K. हुई होती है लिहाज़ा तवाफ़े-ज़ियारत को छोड़कर वतन को वापस चली जाती हैं। तवाफ़े ज़ियारत हज में फ़र्ज़ है इसका छोड़ना ऐसा है जैसे कोई शख़्स ज़ोहर की चार रक्अ़त की बजाय तीन रक्अ़त पढ़ ले। और चूँकि ज़िन्दगी का पता नहीं है कि फिर वापस आकर तवाफ़े ज़ियारत कर सकेंगे या नहीं इसका कोई यक़ीन नहीं किया जा सकता लिहाज़ा अ़रफ़ात और मिना मुज़्दलिफ़ा और मिना के कामों से फ़ारिग़ होकर मक्का मुअ़ज़्ज़मा में क़्याम करके पाक रहने का इन्तिज़ार करे और पाक होकर तवाफ़े ज़ियारत और तवाफ़े विदा करके जाये। और एक यह बात समझ लेना ज़रूरी है कि जब तक तवाफ़े ज़ियारत न हो जाये मियाँ-बीवी वाला ख़ास काम हलाल नहीं होता। अगर तवाफ़े ज़ियारत छोड़कर चले गये तो जज़्बात की रौ में आकर अन्देशा है कि मीयाँ-बीवी वाला काम कर गुज़रें। अगर ख़ुदा न करे ऐसा हो जाये तो उसकी तलाफ़ी करना है इसको आ़लिमों से पूछ लें।

हैज़ की वजह से तवाफ़े-विदा छोड़ देना

हदीसः (81) हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से रिवायत है कि उन्होंने (हज के अरकान से फ़ारिग़ होकर मदीना मुनव्वरा को वापस होने के मौक़े पर) अ़र्ज़ किया कि या रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! सफ़िया

(रज़ियल्लाहु अन्हा) को माहवारी के दिन शुरू हो गये। आपने फ़रमाया शायद कि वह हमको सफ़र से रोकेगी। फिर आपने दरियाफ़्त किया: उसने तुम्हारे साथ तवाफ़ (यानी तवाफ़े-ज़ियारत) नहीं किया? अर्ज़ किया हाँ! तवाफ़े-ज़ियारत तो कर चुकी है। फ़रमाया बस तो (उससे) कहो (मदीना मुनव्वरा के लिये) रवाना हो जाये। (बुख़ारी शरीफ़ पेज 47 जिल्द 1)

तशरीह: हज में तीन तवाफ़ हैं:

(1) तवाफ़े-क़ुदूम (जो सुन्नत है और मक्का मुअज़्ज़मा पहुँचकर मिना व अरफ़ात की रवानगी से पहले किया जाता है।

(2) तवाफ़े-ज़ियारत जिसको तवाफ़े-रुक्न भी कहते हैं। यह अरफ़ात में अस्र के बाद ज़िलहिज्जा की दस ग्यारह बारह तारीख़ों में से किसी भी तारीख़ में कर लिया जाता है, यह तवाफ़ फ़र्ज़ है।

(3) तवाफ़े-विदा यानी रुख़्सत होने का तवाफ़। हज के अहकाम से फ़ारिग़ होने के बाद जब वतन के लिये रवाना होने लगे उस वक़्त तवाफ़े-विदा किया जाता है, और यह तवाफ़ वाजिब है। अगर इस तवाफ़ को छोड़कर कोई हज करने वाला मर्द या औरत वतन चला जाये तो एक दम वाजिब होता है, यानी हरम की हदों में एक बकरी एक साल की उम्र वाली ज़िबह करना लाज़िम होता है। हाँ! अगर कोई शख़्स वतन से वापस आकर तवाफ़ करे तो यह दम उसके ज़िम्मे से ख़त्म हो जाता है। लेकिन अगर तवाफ़े-ज़ियारत के बाद ही किसी औरत को हैज़ आ गया और उस वक़्त पाक होने से पहले किसी तक़ाज़े की वजह से तवाफ़े-विदा छोड़कर वतन के लिये रवाना हो गयी और मक्का की हदों से निकलकर पाक हुई और वह चली जाये तो उसपर तवाफ़ छोड़ने की वजह से कोई दम वाजिब नहीं होगा, न कोई गुनाह होगा।

फ़ायदा: अगर तवाफ़े-ज़ियारत के बाद किसी औरत ने कोई नफ़्लि तवाफ़ कर लिया तो वह तवाफ़े-विदा के क़ायम-मुक़ाम हो जायेगा। इसी तरह अगर तवाफ़े-ज़ियारत के बाद तवाफ़े-विदा की नीयत से कोई तवाफ़ कर लिया तब भी तवाफ़े-विदा अदा हो गया। अगर उसके बाद मक्का मुअज़्ज़मा में रही और हैज़ आ गया जिसकी वजह से रवानगी के वक़्त तवाफ़ न कर सकी तो यूँ न समझा जायेगा कि तवाफ़े-विदा छूट गया क्योंकि तवाफ़े-विदा की अदायगी के लिये यह शर्त नहीं है कि बिल्कुल रवानगी ही के वक़्त हो। ख़ूब समझ लें।

मुसलमान औरतों से

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बातें

* औरतों के लिए *

अल्लाह के ज़िक्र

और कुरआन मजीद के फ़ज़ाइल व मसाइल

लेखक

हज़रत मौलाना आशिक़ इलाही साहिब बुलन्द शहरी

रहमतुल्लाहि अलैहि

अनुवादक: मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा. लि.)

422, मटिया महल, उर्दू मार्किट, जामा मस्जिद

देहली-110006

अल्लाह के ज़िक्र और क़ुरआन मजीद के फ़ज़ाइल व मसाइल

क़ुरआन पढ़ना पढ़ाना और तिलावत में मशग़ूल रहना

हदीसः (82) हज़रत उसमान रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि तुम में से सबसे बेहतर वह है जो क़ुरआन सीखे और सिखाये। (मिश्कात पेज 183 जिल्द 1)

हदीसः (83) हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूर पुरनूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि मेरी उम्मत के शरीफ़ लोग वे हैं जो क़ुरआन के उठाने वाले हैं और रात (को जागने) वाले हैं। (मिश्कात शरीफ़ पेज 110 जिल्द 1)

तशरीहः इन दोनों हदीसों में क़ुरआन करीम के पढ़ने पढ़ाने और इसकी तालीम व प्रसार में लगने की फ़ज़ीलत बयान फ़रमायी है। दुनिया में करोड़ों आदमी बसते हैं, छोटा-बड़ा और अच्छा-बुरा और शरीफ़ वग़ैरह। शरीफ़ (सम्मानित और बड़ाई वाला) होने के बहुत-से मेयार हैं। इस बारे में लोगों की मुख़्तलिफ़ रायें हैं। कोई शख़्स दौलतमन्द (धनवान) को बड़ा समझता है, कोई राष्ट्रपति और प्रधान मन्त्री को शरीफ़ जानता है। कोई अच्छे बंगले में रहने वाले को अच्छा जानता है, कोई बड़ी फ़र्म और मोटर-कार वग़ैरह का मालिक होने को बड़ाई का मेयार यक़ीन करता है। ख़ुदा तआ़ला के सच्चे रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इन ज़िक्र हुए ख़्यालात को ग़लत क़रार दिया और शराफ़त का मेयार क़ुरआन मजीद में मशग़ूल होना बताया। और जो इसकी तालीम में लगे उसके बारे में फ़रमाया कि वह सबसे बेहतर आदमी है।

हज़रत अबू सईद रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं कि जिस शख़्स को क़ुरआन मेरे ज़िक्र से और मुझसे सवाल करने से मशग़ूल करे (कि उसको क़ुरआन शरीफ़ पढ़ने की वजह से दूसरे किसी ज़िक्र

और दुआ की फ़ुरसत न मिले) मैं उसको सवाल करने वालों से अफ़ज़ल (नेमतें) दूँगा। और कलामुल्लाह की फ़ज़ीलत (दूसरे) सारे कलामों पर ऐसी है जैसी अल्लाह की फ़ज़ीलत मख़्लूक पर है। (तिर्मिज़ी)

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने इरशाद फ़रमाया कि जो शख़्स अल्लाह की किताब से एक हर्फ़ पढ़े तो उसके लिये उस हर्फ़ के बदले एक नेकी मिलेगी और हर नेकी दस नेकियों के बराबर (लिखी जाती) है। (फिर फ़रमाया) मैं नहीं कहता कि **अलिफ़-लाम-मीम** एक हर्फ़ है, बल्कि मैं कहता हूँ कि **अलिफ़** एक हर्फ़ है और **लाम** एक हर्फ़ है और **मीम** एक हर्फ़ है। (तिर्मिज़ी)

पस अगर किसी ने लफ़्ज़ **अल्हम्दु** कहा तो उसके कहने से पचास नेकियाँ मिल जायेंगी क्योंकि इसमें पाँच हर्फ़ हैं।

कुरआन मजीद अल्लाह की किताब है इसमें अहकाम हैं। कायनात की हकीकतें और इल्म व ज्ञान की बातें हैं, अख़्लाक व आदाब हैं, इसने दुनिया व आख़िरत की कामयाबी के आमाल बताये हैं, यह दुनिया के इन्क़िलाबात के असबाब और कौमों के उठने, पस्त होने, बुलन्दी हासिल करने और बरबाद होने के राज़ों और उसूलों की तरफ़ रहबरी करता है। इसकी बरकतें बेइन्तिहा हैं। ख़ुदा-ए-पाक की रहमतों का सरचश्मा (स्रोत) है, नेमत व दौलत का ख़ज़ाना है। इसकी तालीमात पर अमल करना दुनिया व आख़िरत की सरबुलन्दी और कामयाबी का ज़रिया है। इसके अलफ़ाज़ भी बहुत मुबारक हैं। यह सबसे बड़े बादशाह का कलाम है। ख़ालिक़ (पैदा करने वाले यानी ख़ुदा तआला) व मालिक का प्याम है, जो उसने अपने बन्दों और बन्दियों के लिये भेजा है। इसके अलफ़ाज़ बहुत बरकत वाले हैं, इसकी तिलावत करने वाला आख़िरत के बेइन्तिहा अज्र व फल का हकदार तो होता ही है दुनियावी ज़िन्दगी में भी रहमत व बरकत और इज़्ज़त व ख़ुदाई मदद उसके साथ रहती है और यह शख़्स दिल के सुकुन और ख़ुशहाली के साथ ज़िन्दगी गुज़ारता है।

कलामुल्लाह की एक अजीब शान यह है कि इसके पढ़ने से कभी सैरी नहीं होती (यानी तबीयत नहीं भरती) और बरसों पढ़ते रहो कभी पुराना मालूम नहीं होता। यानी तिलावत करने वाले की तबीयत का लगाव इस बुनियाद पर ख़त्म नहीं होता कि बार-बार एक ही चीज़ पढ़ रहा है बल्कि बात यह है कि जितनी बार पढ़ते हैं नयी चीज़ मालूम होती है। कितनी

अज़ीम है वह ज़ात जिसका कलाम इस कद्र ख़ूबियों वाला है।

कुरआन मजीद की तिलावत और अल्लाह का ज़िक्र ज़बान पर जारी रखने से बहुत-से फ़ायदे हासिल होते हैं। एक बार नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत अबू बक्र रज़ियल्लाहु अ़न्हु को चन्द वसीयतें फ़रमाईं जिनमें से एक यह है कि:

तर्जुमाः तुम कुरआन पाक की तिलावत और अल्लाह के ज़िक्र को अपने ऊपर लाज़िम कर लो क्योंकि इससे आसमान में तुम्हारा तज़किरा होगा और ज़मीन में तुम्हारे लिये नूर होगा। (मिश्कात शरीफ़ पेज 415 जिल्द 1)

आख़िरी मन्ज़िल पर

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि कियामत के दिन कुरआन वाले से कहा जायेगा कि पढ़ता जा और (जन्नत के दरजों में) चढ़ता जा। क्योंकि तेरी मन्ज़िल उस आयत के पास है जिसको तू सबसे आख़िर में पढ़े। (मिश्कात शरीफ़)

यानी चढ़ते-चढ़ते जहाँ तेरी किराअत (कुरआन का पढ़ना) ख़त्म होगी वहीं तेरी मन्ज़िल है। लिहाज़ा जिसको जितना कुरआन शरीफ़ याद होगा उतना ही उसको बुलन्द दरजा मिलेगा।

वीरान घर

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूले ख़ुदा सल्ल० ने इरशाद फ़रमाया कि जिस शख़्स के दिल में कुरआन का कुछ हिस्सा (भी) नहीं वह वीरान घर की तरह से है। (तिर्मिज़ी)

फ़ायदाः मालूम हुआ कि दिल एक इमारत है जिसकी आबादी कुरआन शरीफ़ से है।

काबिले रश्क

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि रश्क सिर्फ़ दो आदमियों पर है- एक वह जिसको ख़ुदा ने कुरआन दिया वह उसमें रात-दिन लगा रहता है। नमाज़ों में पढ़ता है, तिलावत करता है उसपर अ़मल करता है। दूसरे वह जिसको ख़ुदा ने माल दिया हो सो वह उसमें से रात-दिन अल्लाह

की रिज़ा में ख़र्च करता रहता है। (बुख़ारी शरीफ़)

औरतों को सूरः ब-करः की आख़िरी दो आयतें याद कराने का हुक्म

हदीसः (84) हज़रत जुबैर बिन नुफ़ैर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने ऐसी दो आयतों पर सूरः ब-क़रः ख़त्म फ़रमायी है जो अल्लाह ने मुझे अपने उस ख़ज़ाने से दी हैं जो उसके अ़र्श के नीचे है लिहाज़ा तुम उन आयतों को सीखो और अपनी औरतों को सिखलाओ (ताकि वे भी तिलावत करें और उनके सीखने-सिखाने की ज़रूरत इसलिये है) कि ये रहमत (का ज़रिया) हैं और (अल्लाह की) नज़दीकी हासिल होने का सबब हैं और पूरी-की-पूरी दुआ हैं। (मिश्कात शरीफ़ पेज 189)

तशरीहः इस रिवायत में सूरः ब-क़रः की आख़िरी दो आयतों की फ़ज़ीलत बयान फ़रमायी और हुक्म दिया है कि इनको सीखें और औरतों को भी सीखायें ताकि सभी इनकी बरकतों से मालामाल हों। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि सूरः ब-क़रः की आख़िरी दो आयतें (आ-मनर्रसूलु से लेकर सूरः के ख़त्म तक) अल्लाह ने मुझे अपने उस ख़ज़ाने से दी हैं जो उसके अ़र्श के नीचे है। और यह भी फ़रमाया कि ये दोनों आयतें रहमत का ज़रिया और अल्लाह की नज़दीकी हासिल होने का सबब हैं और पूरी की पूरी दुआ हैं। इन आयतों को याद करें बार-बार पढ़ें और ख़ुसूसियत के साथ सोते वक़्त ज़रूर पढ़ा करें। इनकी और फ़ज़ीलत अभी-अभी इन पन्नों में इन्शा-अल्लाह आयतुल-कुर्सी की फ़ज़ीलत के बाद बयान होगी।

औरतों को ज़िक्र व तिलावत में मर्दों से पीछे नहीं रहना चाहिये। आख़िरत की दौड़-धूप में सब बराबर हैं, जो जितना कर लेगा उसका अज्र पा लेगा, मर्द हो या औरत हो। आख़िरत बेइन्तिहा है वहाँ की नेमतें भी बेइन्तिहा हैं, उम्रें भी बेइन्तिहा होंगी। नेमतों की नवाज़िश होगी, जो मर्द व औरत जिस क़द्र नेक आमाल की पूंजी साथ ले जायेगा वहाँ सवाब पायेगा।

सूरः ब-करः और सूरः आलि इमरान की फ़ज़ीलत

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि नबी करीम सल्लल्लाहु

अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अपने घरों को क़ब्रें न बनाओ। (यानी घरों में ज़िक्र व तिलावत का चर्चा रखो और ज़िक्र व तिलावत से ख़ाली रखकर घरों को क़ब्रिस्तान न बना दो कि जैसे वहाँ ज़िक्र व तिलावत की आवाज़ नहीं ऐसे ही तुम्हारे घर भी इससे ख़ाली हो जायें और ज़िन्दा लोग मुर्दों की तरह बन जायें) फिर फ़रमाया कि बेशक शैतान उस घर से भागता है जिसमें सूरः ब-क़रः पढ़ी जाती है। (मुस्लिम शरीफ़)

हज़रत अबू उमामा रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि क़ुरआन पढ़ा करो क्योंकि वह क़ियामत के दिन अपने लोगों के लिये (जो पढ़ते-पढ़ाते हैं और इसकी तिलावत का ज़ौक़ रखते हैं) सिफ़ारिशी बनकर आयेगा। फिर फ़रमाया कि दो रोशन सूरतें पढ़ो (यानी सूरः ब-क़रः और सूरः आलि इमरान क्योंकि ये दोनों क़ियामत के दिन दो सायबानों की तरह आयेंगी और अपने लोगों को बख़्शवाने और दरजे बुलन्द कराने के लिये ख़ुदा पाक के हुज़ूर में) ख़ूब ज़ोरदार सिफ़ारिश करेंगी। फिर फ़रमाया कि सूरः ब-क़रः को पढ़ो क्योंकि इसका हासिल कर लेना बरकत का सबब है और इसका छोड़ देना हसरत का सबब है और यह बातिल वालों के बस की नहीं। (मुस्लिम)

आयतुल्-कुर्सी की फ़ज़ीलत

आयतुल्-कुर्सी भी सूरः ब-क़रः की एक आयत है जो तीसरे पारे के पहले पृष्ठ पर है। इसके पढ़ने की बहुत फ़ज़ीलत आयी है। एक हदीस में है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत उब्बी बिन कअ़ब रज़ियल्लाहु अ़न्हु से दरियाफ़्त फ़रमाया कि बताओ अल्लाह की किताब में कौनसी आयत सबसे ज़्यादा बड़ी है? हज़रत उब्बी बिन कअ़ब ने अ़र्ज़ किया अल्लाह व रसूल ही ज़्यादा जानते हैं। आपने फिर यही सवाल किया तो उन्होंने अ़र्ज़ किया कि सबसे बड़ी आयत यह है:

اَللّٰهُ لَاۤ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ اَلْحَیُّ الْقَیُّوْمُ..........................وَهُوَ الْعَلِیُّ الْعَظِیْمُ

(सूरः ब-क़रः आयत 255)

यह सुनकर उनकी तसदीक़ फ़रमाते हुए नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनके सीने पर हाथ मारकर फ़रमायाः तुमको इल्म मुबारक हो। (मुस्लिम शरीफ़)

बाज़ हदीसों में आयतुल-कुर्सी को क़ुरआन की तमाम आयतों की सरदार फ़रमाया है। (हिस्ने-हसीन)

एक हदीस में है कि जब तुम रात को सोने के लिये अपने बिस्तर पर जाओ तो आयतुल-कुर्सी:

अल्लाहु ला इला-ह इल्ला हु-व अल्-हय्युल् क़य्यूमु ला तअ्ख़ुज़ुहू सि-नतुंव्-व ला नौम, लहू मा फ़िस्समावाति व मा फ़िल्-अर्ज़ि मन् ज़ल्लज़ी यश्फ़अु अिन्दहू इल्ला बिइज़्निही यअ्लमु मा बै-न ऐदीहिम् व मा ख़ल्फ़हुम् व ला युहीतू-न बिशैइम्-मिन् इल्मिही इल्ला बिमा शा-अ वसि-अ कुर्सिय्युहुस्समावाति वल्-अर्-ज़ व ला यऊदुहू हिफ़्ज़ुहुमा व हुवल् अ़लिय्युल्-अ़ज़ीम।

पढ़ लो। अगर ऐसा कर लोगे तो अल्लाह की तरफ़ से तुम्हारे ऊपर एक निगरानी करने वाला मुक़र्रर हो जायेगा और तुम्हारे क़रीब शैतान न आयेगा। (बुख़ारी शरीफ़)

फ़र्ज़ नमाज़ के बाद आयतुल-कुर्सी

फ़र्ज़ नमाज़ के बाद भी आयतुल-कुर्सी पढ़नी चाहिये। हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि मैंने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सुना है कि जो शख़्स हर (फ़र्ज़) नमाज़ के बाद आयतुल्-कुर्सी पढ़ ले उसको जन्नत में जाने के लिये मौत ही आड़ बनी हुई है। और जो शख़्स इस आयत को अपने बिस्तर पर लेटते वक़्त पढ़ ले तो अल्लाह उसके घर में और पड़ोसी के घर में और आस-पास के घरों में अमन रखेगा। (बैहक़ी)

शैतान के असर, आसेब, भूत-परेत से बचने के लिये आयतुल्-कुर्सी का पढ़ना आज़माया हुआ है।

सूरः ब-क़रः की आख़िरी दो आयतों की फ़ज़ीलत

सूरः ब-क़रः की आख़िरी दो आयतें (आ-मनर्रसूलु से लेकर सूरः के ख़त्म तक) इनके पढ़ने की भी बहुत फ़ज़ीलत है। आख़िरी आयत में दुआएँ हैं जो बहुत ज़रूरत की दुआएँ हैं। और इन दुआओं के क़बूल होने का वायदा भी है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक दिन फ़रमाया कि इस वक़्त आसमानों का एक दरवाज़ा खोला गया है जो इससे पहले कभी नहीं खोला गया था। उस दरवाज़े से एक फ़रिश्ता नाज़िल हुआ। आपने फ़रमाया

कि यह एक फ़रिश्ता नाज़िल हुआ है जो आज से पहले ज़मीन की तरफ़ कभी नाज़िल नहीं हुआ। उस फ़रिश्ते ने आपको सलाम किया और कहा: आप खुशख़बरी कबूल फ़रमायें ऐसी दो चीज़ों की जो सरापा (यानी पूरी तरह) नूर हैं। आप से पहले किसी नबी को नहीं दी गई:

(1) फ़ातिहतुल किताब (यानी सूरः अल्हम्दु शरीफ़)

(2) सूरः ब-क़रः की आख़िरी दो आयतें। (इन दोनों में दुआएँ हैं)। अल्लाह का यह वायदा है कि इनमें से दुआ का जो भी हिस्सा आप पढ़ेंगे उसके मुताबिक़ अल्लाह आपको ज़रूर अ़ता फ़रमायेंगे। (मुस्लिम शरीफ़)

सूरः ब-क़रः की आख़िरी दो आयतें रात को पढ़ना

हज़रत इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्ल० ने इरशाद फ़रमाया कि जिसने सूरः ब-क़रः की आख़िरी दो आयतें रात को पढ़ लीं तो ये आयतें उसके लिये काफ़ी होंगी। (यानी रातभर यह शख़्स जिन्नात और इनसानों की शरारतों से महफ़ूज़ रहेगा। हर नागवार चीज़ से इसकी हिफ़ाज़त होगी)। (बुख़ारी व मुस्लिम)

हज़रत नौमान बिन बशीर रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह पाक ने दो आयतें नाज़िल फ़रमायी हैं जिन पर सूरः ब-क़रः ख़त्म की है। जिस किसी घर में तीन रात पढ़ी जायेंगी तो शैतान उस घर के क़रीब न आयेगा। (तिर्मिज़ी व दारमी)

एक हदीस में है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि सूरः ब-क़रः के ख़त्म पर जो आयतें हैं अल्लाह तआ़ला ने अपनी रहमत के ख़ज़ानों से दी हैं जो अ़र्श के नीचे हैं। (उनमें जो दुआएँ हैं ऐसी जामे और मुकम्मल हैं कि) उन्होंने दुनिया व आख़िरत की कोई भलाई नहीं छोड़ी जिसका सवाल उनमें न किया हो। (मिश्कात शरीफ़)

जुमा के दिन सूरः आलि इमरान की तिलावत करना

हज़रत मकहोल ताबिई ने फ़रमाया कि जो शख़्स सूरः आलि इमरान जुमा के दिन पढ़ ले उसके लिये रात आने तक फ़रिश्ते दुआ करते रहेंगे। (मिश्कात शरीफ़)

हर रात को सूरः वाक़िआ पढ़ने से कभी फ़ाक़ा न होगा

हदीसः (85) हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु से

रिवायत है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो शख़्स रोज़ाना रात को सूरः वाक़िआ पढ़ लिया करे उसे कभी फ़ाका न होगा। (हदीस को रिवायत करने वाले अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु के शार्गिद का बयान है कि) हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु अपनी लड़कियों को हुक्म देकर रोज़ाना रात को सूरः वाक़िआ पढ़वाया करते थे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 189)

हदीसः हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि तुम अपनी औ़रतों को सूरः वाक़िआ सिखाओ क्योंकि वह मालदारी (लाने) वाली सूरः है। (कन्ज़ुल्-उम्माल पेज 145 जिल्द 1)

तशरीहः हदीस नम्बर 93 में फ़रमाया कि जो शख़्स हर रात सूरः वाक़िआ पढ़ लिया करे उसे कभी फ़ाका न होगा। और उसके बाद वाली हदीस में फ़रमाया कि सूरः वाक़िआ औ़रतों को सिखाओ क्योंकि यह मालदारी लाने वाली सूरः है, इसी लिए अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु रोज़ाना अपनी लड़कियों को पाबन्दी के साथ सूरः वाक़िआ पढ़वाया करते थे।

हाफ़िज़ इब्ने कसीर रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने अपनी तफ़सीर में इब्ने अ़साकिर रहमतुल्लाहि अ़लैहि के हवाले से लिखा है कि हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु की मौत वाली बीमारी में हज़रत उसमान बिन अ़फ़्फ़ान रज़ियल्लाहु अ़न्हु उनकी बीमार-पुरसी के लिए तशरीफ़ ले गये और दरियाफ़्त फ़रमाया कि आपको क्या तकलीफ़ है? हज़रत अ़ब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने जवाब दिया अपने गुनाहों के वबाल की तकलीफ़ है। हज़रत उसमान रज़ि० ने फ़रमाया आपकी ख़्वाहिश क्या है? हज़रत अ़ब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया अपने परवर्दिगार की रहमत चाहता हूँ। आपके लिये कोई डाक्टर भेज दूँ? हज़रत उसमान ने पूछा। डाक्टर ने ही तो मुझे बीमार किया है, हज़रत अ़ब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने जवाब दिया। तो फिर आख़िर ख़र्चों के लिये कुछ रकम भिजवा दूँ? हज़रत उसमान रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया। नहीं! मुझे इसकी ज़रूरत नहीं, हज़रत अ़ब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने जवाब दिया। यह रकम आपके बाद आपकी लड़कियों के काम आ जायेगी, हज़रत उसमान रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया। क्या आपको मेरी बेटियों पर फ़ाके व तंगदस्ती का अन्देशा है? मैंने तो उन्हें हर रात सूरः वाक़िआ की तिलावत की

ताकीद कर रखी है, क्योंकि मैंने नबी करीम सल्ल० को यह फ़रमाते हुए सुना है कि जो शख़्स हर रात सूरः वाक़िआ पढ़े उसे कभी फ़ाक़े की मुसीबत नहीं आयेगी। (तफ़सीर इब्ने कसीर पेज 281 जिल्द 4)

लोग आजकल पैसा कमाने और मालदार बनने के लिये बहुत कुछ कोशिशें करते हैं लेकिन अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बताये हुए नुस्ख़े पर अ़मल करने का इरादा ही नहीं करते। आजकल हम ऐसे दौर से गुज़र रहे हैं कि मर्दों और औरतों को, छोटों बड़ों को, बच्चों और बूढ़ों को क़ुरआन मजीद की तिलावत करने और अल्लाह का ज़िक्र करने को फ़ुरसत ही नहीं मिलती। सुबह होती है तो सबसे पहले रेडियो और अख़बारात में मशग़ूल हो जाते हैं। घण्टे आधे घण्टे के बाद नाश्ता करके बनाव सिंघार करके बच्चे स्कूल की राह लेते हैं और बड़े नौकरियों के लिये चल देते हैं। औरतें और छोटे बच्चे रेडियो से गाना-बजाना सुनते रहते हैं। जब स्कूल वाले बच्चे वापस आते हैं तो वे भी गाना सुनने में लग जाते हैं, कहाँ का ज़िक्र कहाँ की तिलावत, सब दुनिया की मुहब्बत में मस्त रहते हैं। बहुत कम किसी घर से कलामुल्लाह पढ़ने की आवाज़ आती है। अल्लाह के ज़िक्र और क़ुरआन पाक की तिलावत के लिये लोगों की तबीयतें आमादा ही नहीं। मौहल्ले के मौहल्ले ग़फ़लत-कदे बने हुए हैं, इक्का-दुक्का किसी घर में कोई नमाज़ी है और इस अफ़सोसनाक माहौल की वजह से अल्लाह की रहमतों और बरकतों से मेहरूम हैं।

हर मुसलमान के लिये ज़रूरी है कि क़ुरआन मजीद पढ़े और अपने हर बच्चे को लड़का हो या लड़की क़ुरआन शरीफ़ पढ़ाये और रोज़ाना सुबह उठकर नमाज़ से फ़ारिग़ होकर घर का हर फ़र्द कुछ न कुछ तिलावत ज़रूर करे ताकि उसकी बरकत से ज़ाहिर व बातिन दुरुस्त हो और दुनिया व आख़िरत की ख़ैर नसीब हो।

अल्लाह के ज़िक्र और तिलावते क़ुरआन मजीद की बरकतें और सआ़दतें ऐसी बेइन्तिहा हैं जिनका पता उन्हीं नेक बन्दों को है जो अपनी ज़िन्दगी का हिस्सा उनमें लगाये रहते हैं।

सूरः वाक़िआ और सूरः आलि इमरान और सूरः ब-क़रः के फ़ज़ाइल अभी-अभी गुज़र चुके हैं। तरग़ीब के लिये इनके अ़लावा दीगर सूरतों के ख़ास-ख़ास फ़ज़ाइल और ख़ासियतें ज़िक्र की जाती हैं ताकि नफ़्स को तिलावत

के लिये आमादा करना आसान हो।

सूरः फ़ातिहाः सूरः फ़ातिहा कुरआन मजीद की पहली सूरः है जो बहुत बड़ी फ़ज़ीलत वाली सूरः है। एक हदीस में इसको कुरआन की सबसे बड़ी सूरः फ़रमाया है। (बुख़ारी) लम्बी सूरतें तो और भी हैं मगर बड़ाई के एतिबार से यह सबसे बड़ी है, इसकी बहुत बरकत है। नमाज़ की हर रक्अ़त में पढ़ी जाती है। एक हदीस में फ़रमाया कि सूरः फ़ातिहा जैसी सूरः न तो तौरात में नाज़िल हुई न इन्जील में, न ज़बूर में न कुरआन में। (तिर्मिज़ी)

सूरः फ़ातिहा का विर्द रखना, दुनिया व आख़िरत की भलाइयों से नवाज़े जाने का बहुत बड़ा ज़रिया है। एक हदीस में इरशाद है कि सूरः फ़ातिहा में हर मर्ज़ से शिफ़ा है। (दारमी) सूरः फ़ातिहा के दस नाम हैं जिनमें से एक नाम काफ़िया और दूसरा शाफ़िया है, इसको पढ़ती रहा करो, बच्चों को सिखाओ और पढ़ो और पढ़ाओ।

सूरः यासीन की फ़ज़ीलत

हज़रत अ़ता बिन अबी रिबाह (ताबिई) फ़रमाते हैं कि मुझे यह हदीस पहुँची है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिसने दिन के अव्वल हिस्से में सूरः यासीन शरीफ़ पढ़ ली उसकी हाजतें पूरी कर दी जायेंगी। (मिश्कात शरीफ़)

एक और हदीस में है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिसने सूरः यासीन अल्लाह पाक की रिज़ा की नीयत से पढ़ी उसके पिछले गुनाह माफ़ हो जायेंगे लिहाज़ा तुम इसे अपने मुर्दों के पास पढ़ा करो। (मिश्कात शरीफ़) यानी जिसकी मौत का वक़्त करीब हो उसके पास बैठकर पढ़ो।

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि हर चीज़ का दिल होता है और कुरआन का दिल सूरः यासीन है। जिसने यासीन (एक बार) पढ़ी, अल्लाह उसके पढ़ने की वजह से उसके लिये दस बार पूरा कुरआन शरीफ़ पढ़ने का सवाब लिख देगा। (मिश्कात शरीफ़)

सूरः कह्फ़ की फ़ज़ीलत

सूरः कह्फ़ पन्द्रहवें पारे के आधे अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी से शुरू होती

है। इस सूरः के पढ़ने की बहुत फ़ज़ीलत बयान हुई है। हज़रत अबू सईद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिसने जुमा के दिन सूरः कह्फ़ पढ़ ली उसके लिये दोनों जुमों के दरमियान नूर रोशन रहेगा। (दअ्वाते कबीर) यानी उसका दिल नूर से भरा रहेगा। या यह मतलब है कि जुमा के दिन एक बार के पढ़ लेने से उसकी क़ब्र में बक़द्र एक हफ़्ते के रोशनी रहेगी। अगर कोई हर जुमा को पढ़ लिया करे तो उसे मौत के बाद भी नूर ही नूर नसीब होगा। (अगरचे तमाम नेक आमाल रोशनी का सबब हैं)।

हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्ल० ने इरशाद फ़रमाया कि जिसने सूरः कह्फ़ के अव्वल की तीन आयतें पढ़ लीं वह दज्जाल के फ़ितने से महफ़ूज़ रहेगा। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

सूरः तबारकल्लज़ी और अलिफ़-लाम-मीम सज्दः की फ़ज़ीलत

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि क़ुरआन शरीफ़ में एक सूरः है जिसमें तीस आयतें हैं। उसने एक शख़्स की यहाँ तक सिफ़ारिश की कि वह बख़्श दिया गया। यह सूरः तबारकल्लज़ी बियदिहिल् मुल्कु है (जो उन्तीसवें पारे की पहली सूरः है)। (तिर्मिज़ी, निसाई)

हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम रात को उस वक़्त तक नहीं सोते थे जब तक कि सूरः **अलिफ़-लाम-मीम सज्दा** और सूरः **तबारकल्लज़ी बियदिहिल् मुल्कु** न पढ़ लेते थे। (तिर्मिज़ी, दारमी)

क़ब्र के अज़ाब से बचाने वाली दो सूरतें

सूरः सज्दा इक्कीसवें पारे में है जिसे अलिफ़-लाम-मीम सज्दा भी कहते हैं। यह सूरः लुक़मान और सूरः अहज़ाब के दरमियान है। सूरः तबारकल्लज़ी और सूरः सज्दा को क़ब्र के अज़ाब से बचाने में ख़ास दख़ल है जैसा कि चुग़ली और पेशाब की छींटों से एहतियात न करने को क़ब्र का अज़ाब लाने में ज़्यादा दख़ल है।

हज़रत ख़ालिद बिन मअ्दान (ताबिई) ने फ़रमाया कि मुझे यह बात मालूम हुई है कि एक शख़्स सूरः अलिफ़ लाम मीम सज्दा को पढ़ा करता था

इसके सिवा (बतौर विर्द) कोई दूसरी सूरः न पढ़ता था और था भी बहुत गुनाहगार, जब क़ब्र में अ़ज़ाब होने लगा तो इस सूरः ने उस शख़्स पर अपने पर फैला दिये और अ़र्ज़ किया कि ऐ रब! इसकी मग़फ़िरत फ़रमा दे क्योंकि यह मुझे ज़्यादा पढ़ा करता था। चुनाँचे खुदा तआ़ला ने उसकी सिफ़ारिश क़बूल फ़रमाई और फ़रमाया कि इसके लिये हर गुनाह के बदले एक-एक नेकी लिख दो और एक-एक दरजा बुलन्द कर दो। उन्होंने यह भी फ़रमाया कि यह सूरः अपने पढ़ने वाले की जानिब से क़ब्र में झगड़ा करेगी और अल्लाह पाक से अ़र्ज़ करेगी कि ऐ अल्लाह! अगर मैं तेरी किताब से हूँ तो इसके बारे में मेरी सिफ़ारिश क़बूल फ़रमा, अगर मैं तेरी किताब से नहीं हूँ तो मुझे अपनी किताब से मिटा दे। यह भी फ़रमाया कि यह सूरः परिन्दे की तरह अपने पर फैला देगी और सिफ़ारिश करेगी और क़ब्र के अ़ज़ाब से बचा देगी। जो-जो फ़ज़ीलत सूरः अलिफ़ लाम मीम सज्दा की बतायी यह फ़ज़ीलत और खुसूसियत सूरः तबारकल्लज़ी बियदिहिल मुल्कु की भी बतायी है। (मिश्कात)

एक हदीस में है कि एक सहाबी ने एक क़ब्र पर ख़ेमा लगाया उन्हें पता न था कि यहाँ क़ब्र है, वहाँ से उनको सूरः तबारकल्लज़ी बियदिहिल् मुल्कु पढ़ने की आवाज़ आयी। पढ़ने वाले ने जो क़ब्र वाला था यह सूरः पढ़ते-पढ़ते ख़त्म कर दी, हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर होकर यह वाक़िआ़ अ़र्ज़ किया तो आपने फ़रमाया कि "यह सूरः अ़ज़ाब को रोकने वाली है, अल्लाह के अ़ज़ाब से उसे नजात दिला देगी।" (तिर्मिज़ी)

सूरः हश्र की आख़िरी तीन आयतें

हज़रत मअ़क़ल बिन यसार रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स सुबह को तीन बारः **अऊज़ु बिल्लाहिस्समीअ़िल् अ़लीमि मिनश्शैतानिर्रजीमि** पढ़कर सूरः हश्र की आख़िरी तीन आयतें पढ़ ले तो अल्लाह तआ़ला उसके लिये सत्तर हज़ार फ़रिश्ते मुक़र्रर फ़रमा देंगे जो उस दिन शाम तक उसके लिये रहमत की दुआ़ करते हैं। और अगर उस दिन में मर जायेगा तो शहीद होने का दर्जा पायेगा। और जिसने यह अ़मल शाम को कर लिया तो उसको भी यही नफ़ा होगा (यानी सुबह होने तक सत्तर हज़ार फ़रिश्ते उसके लिये रहमत की दुआ़ करते रहेंगे और उस रात में मर जायेगा तो) शहादत का दरजा पायेगा। (तिर्मिज़ी)

सूरः हश्र अट्ठाईसवें पारे में है, उसकी आख़िरी तीन आयतें: -हुवल्लाहुल्लज़ी ला इला-ह इल्ला हु-व से सूरः के ख़त्म तक है, तलाश करके निकाल लो, समझ में न आये तो किसी हाफ़िज़ से पूछ लो।

सूरः इज़ा ज़ुलज़िलत्, क़ुल या अय्युहल् काफ़िरून और सूरः इख़्लासः

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि सूरः इज़ा ज़ुलज़िलतिल् अर्ज़ु आधे क़ुरआन के बराबर है, और सूरः क़ुल हुवल्लाहु अहद् तिहाई क़ुरआन के बराबर है, और सूरः क़ुल या अय्युहल् काफ़िरून चौथाई क़ुरआन के बराबर है। (तिर्मिज़ी)

सूरः इख़्लास की अतिरिक्त फ़ज़ीलत

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है कि जिसने रोज़ाना दो सौ बार सूरः क़ुल हुवल्लाहु अहद पढ़ ली उसके पचास साल के (छोटे) गुनाह आमालनामे से मिटा दिये जायेंगे। हाँ! अगर उसके ऊपर किसी का क़र्ज़ हो तो वह तो माफ़ न होगा। (तिर्मिज़ी)

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु ही ने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह इरशाद नक़ल किया है कि जो शख़्स बिस्तर पर जाने का इरादा करे और दाहिनी करवट पर लेटकर सौ बार क़ुल हुवल्लाहु अहद् पढ़ ले तो क़ियामत के दिन अल्लाह तआला का इरशाद होगा के ऐ मेरे बन्दे! तू अपनी दाईं तरफ़ से जन्नत में दाख़िल हो जा। (तिर्मिज़ी)

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक शख़्स को सूरः क़ुल हुवल्लाहु अहद् पढ़ते हुए सुन लिया। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया (इसके लिये) वाजिब हो गयी। मैंने पूछा क्या? फ़रमायाः जन्नत। (तिर्मिज़ी)

एक शख़्स ने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! मैं सूरः क़ुल हुवल्लाहु अहद् से मुहब्बत रखता हूँ। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया इसकी मुहब्बत ने तुझे जन्नत में दाख़िल कर दिया। (तिर्मिज़ी)

हज़रत सईद बिन मुसैयब से रिवायत है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिसने दस बार सूरः कुल हुवल्लाहु अहद् पढ़ ली उसके लिये जन्नत में एक महल बना दिया जायेगा, और जिसने बीस बार पढ़ ली उसके लिये जन्नत में दो महल बना दिये जायेंगे, और जिसने तीस बार पढ़ ली उसके लिये जन्नत में तीन महल बना दिये जायेंगे। यह सुनकर हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! अल्लाह की क़सम! इस सूरत में तो हम अपने बहुत ज़्यादा महल बना लेंगे। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया अल्लाह बहुत बड़ा दाता है जितना अ़मल कर लोगे उसके पास से बहुत ज़्यादा इनाम है। (दारमी)

सूरः अल्हाकुमुत्तकासुर

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने बयान फ़रमाया कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा से फ़रमाया कि क्या तुम से यह नहीं हो सकता कि रोज़ाना हज़ार आयतें पढ़ लो। उन्होंने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! किसे ताक़त है कि रोज़ाना हज़ार आयतें (पाबन्दी से बिला नाग़ा) पढ़े। आपने फ़रमाया कि क्या तुम से यह नहीं हो सकता कि सूरः अल्हाकुमुत्तकासुर पढ़ लो। (शुअ़बुल् ईमान)

कुल अऊज़ु बिरब्बिल् फ़-लक़ और कुल अऊज़ु बिरब्बिन्नास

ये सूरतें क़ुरआन पाक की आख़िरी दो सूरतें हैं। इनको मुअ़व्वज़तैन कहते हैं। इनकी बड़ी फ़ज़ीलत आयी है। तकलीफ़ देने वाली चीज़ों और मख़्लूक़ की शरारतों से महफ़ूज़ रहने के लिये इनका पढ़ना बहुत ही ज़्यादा लाभदायक और मुफ़ीद है। हज़रत उक़बा बिन आ़मिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि मैं सरवरे आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ सफ़र में था कि अचानक आँधी आ गयी और सख़्त अन्धेरा हो गया। हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सूरः कुल अऊज़ु बिरब्बिल् फ़-लक़ और कुल अऊज़ु बिरब्बिन्नास के ज़रिये उस मुसीबत से अल्लाह की पनाह माँगने लगे, यानी इनको पढ़ने लगे और फ़रमाया कि उक़बा! इन सूरतों के ज़रिये अल्लाह की पनाह हासिल करो क्योंकि इन जैसी और कोई चीज़ नहीं है जिसके ज़रिये कोई पनाह वाला पनाह हासिल करे। (अबू दाऊद)

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ख़बीब फ़रमाते हैं कि एक बार हम ऐसी रात में

जिसमें बारिश हो रही थी और सख़्त आँधी भी थी, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को तलाश करने के लिये निकले, चुनाँचे हमने आपको पा लिया। आपने फ़रमाया कहो, मैंने अर्ज़ किया, क्या कहूँ? फ़रमाया जब सुबह हो और शाम हो सूरः कुल हुवल्लाहु अहद् और सूरः कुल अऊ़ज़ु बिरब्बिल् फ़-लक़ और सूरः कुल अऊ़ज़ु बिरब्बिन्नास तीन-तीन बार पढ़ लो, यह अमल कर लोगे तो हर ऐसी चीज़ से तुम्हारी हिफ़ाज़त होगी जिससे पनाह ली जाती है। (यानी हर तकलीफ़ देने वाली और हर बुराई और हर बला से महफ़ूज़ हो जाओगे)। (तिर्मिज़ी)

बात यह है कि जब कोई शख़्स सूरः कुल अऊ़ज़ु बिरब्बिल् फ़-लक़ पढ़ता है तो हर उस चीज़ के शर से अल्लाह की पनाह लेता है जो अल्लाह ने पैदा की है। और रात के शर से भी पनाह लेता है और गिरहों में दम करने वाली औरतों से शर से भी पनाह लेता है जो जादू करती हैं, और हसद करने वाले के शर से भी पनाह लेता है। और कुल अऊ़ज़ु बिरब्बिन्नास पढ़ने वाला सीनों में वस्वसे डालने वाले के शर से पनाह लेता है। इतनी चीज़ों के शर (बुराई और फ़ितने) से बचने के लिये दुआ की जाती है इसी लिये ये दोनों सूरतें हर तरह के शर से और बला और मुसीबत और जादू-टोने टोटके से महफ़ूज़ रहने के लिये मुफ़ीद हैं और आज़माई हुई हैं। इनको और सूरः इख़्लास को सुबह शाम तीन-तीन बार पढ़े और दूसरे वक़्तों में भी विर्द रखे। किसी बच्चे को तकलीफ़ हो, नज़र लग जाये तो इन दोनों को पढ़कर दम करे या इनको लिखकर गले में डाल दे। बच्चों को याद करा दें, दुख-तकलीफ़ में उनसे भी पढ़वाएँ।

रात को सोते वक़्त करने का एक अ़मल

हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा का बयान है कि रोज़ाना रात को जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम बिस्तर पर तशरीफ़ लाते तो सूरः कुल हुवल्लाहु अहद् और सूरः कुल अऊ़ज़ु बिरब्बिल् फ़-लक़ और सूरः कुल अऊ़ज़ु बिरब्बिन्नास पढ़कर हाथ की दोनों हथेलियों को मिलाकर उनमें इस तरह फूँक मारते थे कि कुछ थूक भी फूँक के साथ निकल जाता था। फिर दोनों हथेलियों को पूरे बदन पर जहाँ तक मुमकिन होता था फैर लेते थे। यह हाथ फैरना सर और चेहरे से और सामने के हिस्से से शुरू फ़रमाते थे और

यह अमल तीन बार फ़रमाते थे। (बुख़ारी व मुस्लिम)

बीमारी का एक अमल

हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ही यह भी फ़रमाती हैं कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को जब कोई तकलीफ़ होती थी तो अपने जिस्म मुबारक पर सूरः कुल अऊज़ु बिरब्बिल् फ़-लक और सूरः कुल अऊज़ु बिरब्बिन्नास पढ़कर दम किया करते थे। (जिसका तरीक़ा अभी ऊपर गुज़रा है) फिर जिस बीमारी में आपकी वफ़ात हुई उसमें मैं यह करती थी कि दोनों सूरः पढ़कर आपके हाथ पर दम कर देती थी फिर आपके हाथ को आपके जिस्म मुबारक पर फैर देती थी। (बुख़ारी)

दम सिर्फ़ फूँकने को नहीं कहते, दम यह है कि फूँक के साथ थूक का भी कुछ हिस्सा निकल जाये।

कुरआन के हिफ़्ज़ करने की ज़रूरत और अहमियत

कुरआन मजीद बहुत बड़ा मोजिज़ा (चमत्कार) है और कई एतिबार से माजिज़ा है। इसका एक खुला हुआ मोजिज़ा जो हर मुस्लिम और ग़ैर मुस्लिम के और हर दोस्त व दुश्मन के सामने है, यह है कि छोटे-छोटे बच्चे और जवान और बड़ी उम्रों के लोग इसको हिफ़्ज़ याद कर लेते हैं। कुरआन का हाफ़िज़ होना अच्छा ज़ेहन और ताक़तवर दिमाग़ होने पर मौक़ूफ़ नहीं, बड़े-बड़े ज़हीन और हाफ़ज़े की कुव्वत रखने वाले अपनी ज़बान में लिखी हुई किताब के पचास पृष्ठ भी याद नहीं कर सकते और रोज़ाना थोड़ा-सा वक़्त निकालने से कुरआन मजीद कम ज़ेहन वालों को भी याद हो जाता है जो अपनी ज़बान में भी नहीं है। जब तक अल्लाह तआला को मन्ज़ूर है कि कुरआन दुनिया में रहे इसके हिफ़्ज़ करने वाले भी रहेंगे। जो शख़्स या जो कुंबा और जो बिरादरी और जो इलाक़ा इसकी तरफ़ से ग़फ़लत बरतेगा ख़ुद इसकी ख़ैर से मेहरूम ही रहेगा। कुरआन के याद रखने वाले मौजूद रहे हैं और मौजूद रहेंगे इन्शा-अल्लाह।

हमें चाहिये कि कुरआन की तरफ़ बढ़ें ताकि उसकी बरकतों से मालामाल हों। अपनी औलाद को कुरआन मजीद हिफ़्ज़ कराने की बहुत ही ज़्यादा कोशिश करें।

हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस

सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिस शख़्स ने क़ुरआन शरीफ़ पढ़ा और उसको ख़ूब याद कर लिया और उसके हलाल को हलाल रखा और उसके हराम को हराम रखा तो ख़ुदा तआ़ला उसको जन्नत में दाख़िल कर देगा और उसके घर वालों में से दस ऐसे लोगों के बारे में उसकी सिफ़ारिश कबूल फ़रमायेगा जिनके लिये दोज़ख़ में जाना वाजिब हो चुका होगा। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

हलाल को हलाल रखा और हराम को हराम रखा, इसका मतलब यह है कि क़ुरआन ने जिन चीज़ों को हलाल बताया है उनको हलाल समझकर उनपर अ़मल किया और जिन चीज़ों को हराम किया है उनको हराम समझकर छोड़ दिया, क़ुरआन के अहकाम का उल्लंघन नहीं किया।

हज़रत मुआ़ज़ जुहनी रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया जिसने क़ुरआन पढ़ा और उसपर अ़मल किया कियामत के दिन उसके माँ-बाप को ऐसा ताज पहनाया जायेगा जिसकी रोशनी सूरज की रोशनी से भी बेहतर होगी जबकि सूरज दुनिया के घरों में हो। यह फ़रमाकर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः "जब माँ-बाप के सम्मान और इकराम का यह हाल है तो अब तुम्हारा क्या ख़्याल है उसके बारे में जिसने यह काम किया यानी क़ुरआन पढ़ा, उसपर अ़मल किया)। (अबू दाऊद शरीफ़)

यानी उसका इनाम तो और भी ज़्यादा होगा।

अपने बच्चों को क़ुरआन के हिफ़्ज़ में लगाओ यह बहुत आसान काम है, जाहिलों ने मशहूर कर दिया है कि क़ुरआन हिफ़्ज़ करना लोहे के चने चबाने के बराबर है, यह बिल्कुल जाहिलाना बात है। क़ुरआन हाफ़्ज़े से याद नहीं होता मोजिज़ा होने की वजह से याद होता है। हमने कितनी ही बार तजुर्बा किया है कि दुनिया के काम-काज करते हुए और स्कूल व कालिज में पढ़ते हुए बहुत-से बच्चों ने क़ुरआन शरीफ़ हिफ़्ज़ कर लिया। बहुत-से लोगों ने सफ़ेद बाल होने के बाद हिफ़्ज़ करना शुरू किया, अल्लाह तआ़ला ने उनको भी कामयाबी अ़ता की।

जो बच्चा हिफ़्ज़ कर लेता है उसकी यादगारी की क़ुव्वत और समझ में बहुत ज़्यादा इज़ाफ़ा हो जाता है और वह आईन्दा जो भी तालीम हासिल करे हमेशा अपने साथियों से आगे रहता है। क़ुरआन की बरकत से इनसान

दुनिया व आख़िरत में तरक्क़ी करता है कि लोगों ने क़ुरआन को समझा ही नहीं कोई क़ुरआन की तरफ़ बढ़े तो उसकी बरकत का पता चले।

बहुत-से जाहिल कहते हैं कि तोते की तरह रटने से क्या फ़ायदा? ये लोग रुपये-पैसे को फ़ायदा समझते हैं। हर हर्फ़ पर दस नेकियाँ मिलना और आख़िरत में माँ-बाप को ताज पहनाया जाना और क़ुरआन पढ़ने वाले का अपने घर के लोगों की सिफ़ारिश करके दोज़ख़ से बचवा देना फ़ायदे में शुमार ही नहीं करते। कहते हैं कि हिफ़्ज़ करके मुल्ला बनेगा तो कहाँ से खायेगा। मैं कहता हूँ कि हिफ़्ज़ करने के बाद तिजारत और नौकरी कर लेने से कौन रोकता है, मुल्ला हो तो बहुत बड़ी सआदत है, जिसे यह सआदत नहीं चाहिए वह अपने बच्चों को क़ुरआन के हिफ़्ज़ से तो मेहरूम न करे। जब हिफ़्ज़ कर ले तो उसे दुनिया के किसी भी हलाल मशग़ले में लगा दे। और यह बात भी मालूम होनी चाहिये कि जितने साल में यह बच्चा हिफ़्ज़ करेगा उसके ये साल दुनियावी तालीम के एतिबार से ज़ाया न होंगे क्योंकि हिफ़्ज़ कर लेने वाला हिफ़्ज़ से फ़ारिग़ होकर चन्द महीने की मेहनत से छठी-सातवीं जमाअत का इम्तिहान आसानी से दे सकता है। यह सिर्फ़ दावा नहीं तजुर्बा किया गया है।

अल्लाह के ज़िक्र के फ़ज़ाइल और उससे ग़फ़लत पर वईदें

तसबीह पढ़ने और कलिमा तय्यिबा का विर्द करने का हुक्म और उंगलियों पर पढ़ने की फ़ज़ीलत

हदीसः (86) हज़रत युसैरा रज़ियल्लाहु अन्हा बयान फ़रमाती हैं (जो उन मुक़द्दस औरतों में से हैं जिन्होंने राहे ख़ुदा में हिजरत की थी) कि दोनों जहान के सरदार सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हम (चन्द औरतों) से ख़िताब करके फ़रमाया कि तुम **तसबीह** व **तहलील** (यानी ला इला-ह इल्लल्लाह कहना) और **तक़दीस** (यानी अल्लाह की पाकी बयान करने) की पाबन्दी रखो और उंगलियों पर पढ़ा करो क्योंकि इनसे पूछा जायेगा (और जवाब देने के लिये) इनको बोलने की ताक़त दी जायेगी और तुम (अल्लाह के ज़िक्र से) ग़ाफ़िल न हो जाना वरना रहमत से भुला दी जाओगी।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 202)

तशरीहः आक़ा-ए-दो जहाँ सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तमाम मर्दों और औरतों के लिये नबी बनाकर भेजे गये और आप क़ियामत तक पैदा होने वाले तमाम इनसानों के लिये सुधारक और रहनुमाई करने वाले हैं अगरचे उमूमन शरई अहकाम क़ुरआन व हदीस में उमूमी ख़िताब से ज़िक्र किये गये हैं जिसमें 'मुज़क्कर के सीग़े' (इस्तेमाल किये गये हैं और सिवाए ख़ास अहकाम के सब अहकाम मर्दों और औरतों के लिये बराबर हैं बावजूद यह कि उमूमी ख़िताब में औरतें भी बराबर की शरीक हैं फिर भी क़ुरआन व हदीस में जगह-जगह औरतों को ख़ुसूसी ख़िताब से सम्मान बख़्शा गया है। ऊपर ज़िक्र हुई हदीस भी इस सिलसिले की एक कड़ी है।

अल्लाह के ज़िक्र में मशग़ूल रहना हर मुस्लिम मर्द व औरत के लिये गुनाहों की मग़फ़िरत और दरजों के बुलन्द होने का सबब है और बेशुमार

आयतों व हदीसों में ज़िक्र की तरग़ीब दी गयी है। इस हदीस में ख़ासकर औरतों से ख़िताब फ़रमाया है और इस ख़ुसूसी ख़िताब की वजह ग़ालिबन यह है कि औरतों में तेरी-मेरी बुराई करने और लगाई-बुझाई के ज़रिये फ़साद फैलाने की ख़ास आदत होती है। औरतों की शायद कोई मजलिस शिकवा-शिकायत और ग़ीबत व बोहतान से ख़ाली होती हो। ज़बान ख़ुदा पाक का बहुत बड़ा इनाम और उसकी अ़ता है इसके ज़रिये जन्नत के बुलन्द दरजों तक रसाई हो सकती है। इस मुबारक बख़्शिश और इनाम को बे-मक़सद बातों और नेकियाँ बरबाद करने वाली गुफ़्तगू में लगाना पूरी तरह नुक़सान और बहुत बड़ा घाटा है। एक हदीस में इरशाद है:

हदीसः अल्लाह के ज़िक्र के बग़ैर ज़्यादा न बोला करो, क्योंकि ज़िक्रे इलाही के बग़ैर ज़्यादा बोलने से दिल सख़्त हो जाता है और यक़ीनी बात है कि अल्लाह तआ़ला से सबसे ज़्यादा दूर वही शख़्स है जिसका दिल सख़्त हो। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

औरतें ज़बान के मामले में बहुत ज़्यादा बे-एहतियात होती हैं, उनको ख़ुसूसी ख़िताब फ़रमाया कि:

(1) **तसबीह** (सुब्हानल्लाह कहना, अल्लाह का ज़िक्र करना) व **तहलील** (ला इला-ह इल्लल्लाहु कहना) और **तक़दीस** (अल्लाह की पाकी बयान करने) में लगी रहा करो। तसबीह **सुब्हानल्लाह** कहने को और तहलील **ला इला-ह इल्लल्लाहु** कहने को कहते हैं। इन दोनों के बड़े-बड़े अज्र व सवाब हदीसों में बयान हुए हैं। तक़दीस ख़ुदा-ए-पाक की पाकी बयान करने को कहते हैं। क़ुद्दूस अल्लाह तआ़ला के पाक नामों में से है, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम वित्रों का सलाम फैरकर तीन बार **सुब्हानल् मलिकिल् क़ुद्दूस** कहा करते थे। और तीसरी बार आवाज़ बुलन्द फ़रमाते थे। **अल्-क़ुद्दूस** की **दाल** को ज़रा ज़्यादा खींचते थे। जब तहज्जुद के लिये जागते थे तो दस बार **अल्लाहु अकबर** और दस बार **सुब्हानल्लाहि व बिहम्दिही** और दस बार **अस्तग़फ़िरुल्ला-ह** और दस बार **ला इला-ह इल्लल्लाहु** और दस बार **सुब्हानल्-मलिकिल् क़ुद्दूसि** पढ़ा करते थे।

(2) दूसरी नसीहत यह फ़रमायी कि अल्लाह तआ़ला का ज़िक्र करते वक़्त उंगलियों पर गिना करो। फिर इसकी हिकमत बतायी कि क़ियामत के दिन उंगलियों को बोलने की ताक़त दी जायेगी और इनसे सवाल होगा। जिसने

इनको अल्लाह के ज़िक्र के लिये इस्तेमाल किया होगा उसके हक़ में गवाही देंगी। दूसरी हदीसों और बाज़ क़ुरआनी आयतों से मालूम होता है कि उंगलियों के अलावा दूसरे जिस्मानी अंग (हाथ पाँव रान वग़ैरह) भी गवाही देंगे। इनसान की समझदारी इसी में है कि अपने जिस्मानी अंगों को अपने हक़ में अच्छे गवाह बनाये, यानी नेक आमाल में मशग़ूल हो और बुरे आमाल से बचे ताकि उसके अपने हाथ-पाँव उसके ख़िलाफ़ गवाही न दे सकें।

(3) तीसरी नसीहत यह फ़रमायी कि अल्लाह के ज़िक्र से ग़ाफ़िल न होना चाहिये वरना रहमत से भुला दी जाओगी, यानी अल्लाह तआ़ला की ख़ुसूसी रहमतों और बरकतों से मेहरूम हो जाओगी।

दर हक़ीक़त यह नसीहत पहली ही नसीहत की ताकीद है और दोबारा इसमें अल्लाह के ज़िक्र की तरग़ीब दी गयी है। अल्लाह का ज़िक्र बड़ी अनमोल नेमत है और आख़िरत के बड़े दरजे इसके ज़रिये मिल सकते हैं और इसमें ख़र्च भी कुछ नहीं होता। काम-काज में लगे हुए भी पहला कलिमा, तीसरा कलिमा, दुरूद शरीफ़ और इस्तिग़फ़ार वग़ैरह में मशग़ूल रह सकती हैं, वुज़ू के साथ होना भी शर्त नहीं बल्कि अगर ग़ुस्ल फ़र्ज़ हो या ख़ास दिनों का ज़माना हो तब भी अल्लाह तआ़ला का ज़िक्र कर सकती हैं। हाँ! इन दोनों हालतों में क़ुरआन शरीफ़ पढ़ने की इजाज़त नहीं है।

ज़िक्र के फ़ज़ाइल ज़रा तफ़सील से लिखे जाते हैं ताकि ज़िक्र के अज्र व सवाब और इसके ज़बरदस्त नफ़े का पता रहे और अ़मल की तरफ़ दिल बढ़े।

ज़िक्र करने वाले हर भलाई ले गये

एक शख़्स ने सवाल किया या रसूलल्लाह! (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) कौनसे मुजाहिद का बड़ा अज्र है? आपने फ़रमाया जो उनमें से ख़ुदा तआ़ला को बहुत याद करता हो। फिर उन साहिब ने दरियाफ़्त किया कि नेक लोगों में किसका बड़ा अज्र है? आपने फ़रमाया कि उनमें जो अल्लाह तआ़ला को बहुत याद करता हो। फिर उन साहिब ने नमाज़ियों, ज़कात देने वालों, हाजियों और सदक़ा देने वालों के मुताल्लिक़ भी यही सवाल किया और आपने यही जवाब दिया।

यह सवाल व जवाब सुनकर हज़रत अबू बक्र रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु को ख़िताब करके फ़रमाया कि ऐ अबू हफ़्स! ज़िक्र

करने वाले तो हर भलाई ले उड़े। इस पर रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः जी हाँ। (तरग़ीब)

ख़ुदा तआ़ला का साथ

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु का बयान है कि रसूले ख़ुदा सल्ल० ने इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं कि मैं उस वक़्त तक बन्दे के साथ रहता हूँ जब तक वह मुझको याद करता है और मेरी याद में उसके होंठ हिलते हैं। (बुख़ारी)

दिल की सफ़ाई

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु का बयान है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इरशाद फ़रमाते थे कि हर चीज़ की सफ़ाई होती है और दिल की सफ़ाई अल्लाह की याद है, और ज़िक्र से ज़्यादा कोई चीज़ अल्लाह के अ़ज़ाब से बचाने वाली नहीं।

सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! क्या अल्लाह के रास्ते में जिहाद भी इस क़द्र अल्लाह के अ़ज़ाब से नहीं बचाता जिस क़द्र ज़िक्र के ज़रिये बचाव होता है? आपने फ़रमाया हाँ! अल्लाह के रास्ते में जिहाद भी इस क़द्र अल्लाह के अ़ज़ाब से नहीं बचाता अगरचे मारते-मारते मुजाहिद की तलवार क्यों न टूट जाये। (दअ़वाते कबीर)

दुनिया में जन्नत का दीदार

हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि ग़ाफ़िलों में ख़ुदा तआ़ला का ज़िक्र करने वाले की मिसाल ऐसी है जैसे (मैदाने जंग से) भाग जाने वालों के बाद कोई जिहाद करने वाला हो। और ग़ाफ़िलों में अल्लाह का ज़िक्र करने वाले की मिसाल ऐसी है जैसे कि हरी टहनी किसी सूखे दरख़्त में हो। और ग़ाफ़िलों में अल्लाह का ज़िक्र करने वाले की मिसाल ऐसी है जैसे अन्धेरे में चिराग़ रखा हो। और ग़ाफ़िलों में रहते हुए ख़ुदा की याद में मशग़ूल रहने वाले को अल्लाह ज़िन्दगी में उसका जन्नत का मुक़ाम दिखा देगा। और ग़ाफ़िलों में ख़ुदा की याद करने वाले की मग़फ़िरत हर **फ़सीह** और हर **अअ़्जम** की तायदाद में होती है। (मिश्कात शरीफ़)

फ़सीह से जिन्नात और इनसान और **अअ़्जम** से जानवर मुराद हैं।

ख़ुदा की बारगाह में तज़किरा

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह तआला फ़रमाते हैं कि मैं बन्दे के गुमान के पास हूँ। (जो गुमान वह मुझसे रखे) और उसके साथ होता हूँ जब वह मुझको याद करता है। सो अगर वह मुझको तन्हाई में याद करता है तो मैं भी उसको तन्हाई में याद करता हूँ और जब वह मुझको जमाअत में याद करता है तो मैं भी उसको जमाअत में याद करता हूँ जो उसकी जमाअत से बेहतर होती है। (बुख़ारी)

"मैं भी उसको तन्हाई में याद करता हूँ" इसका मतलब यह है कि सिर्फ़ ख़ुद ही उसका ज़िक्र करता हूँ फ़रिश्तों के सामने उसका ज़िक्र नहीं करता। और यह जो फ़रमाया कि "जमाअत में याद करता हूँ जो उसकी जमाअत से बेहतर होती है" यानी मुक़र्रब फ़रिश्तों और रसूलों की रूहों में उसका तज़किरा करता हूँ जो सब मिलकर आम इनसानों से बेहतर और अफ़ज़ल हैं। (तर्ग़ीबी)

"मैं बन्दे के गुमान के पास होता हूँ" इसका मतलब यह है कि मेरे मुताल्लिक़ जो बन्दा मग़फ़िरत और अज़ाब का गुमान करता है तो मैं ऐसा ही करता हूँ। अगर वह गुमान रखता है कि ख़ुदा मुझको बख़्श देगा तो उसको बख़्श देता हूँ और अगर इसके ख़िलाफ़ गुमान रखता है तो नहीं बख़्शता हूँ। (लमआत)

एक रोज़ हज़रत साबित बनानी रह० कहने लगे कि मुझको मालूम हो जाता है जब मुझको मेरा ख़ुदा याद करता है। लोगों ने पूछा वह कैसे? फ़रमाया जब मैं उसको याद करता हूँ तो वह मुझको याद करता है लिहाज़ा जब कोई शख़्स अल्लाह की बारगाह में अपना ज़िक्र चाहे वह ख़ुदा का ज़िक्र शुरू कर दे।

तहज्जुद गुज़ारी के बदले

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० का बयान है कि जो शख़्स तुम में से रात को जागकर तकलीफ़ बरदाश्त करने से आजिज़ हो और माल ख़र्च करने में कन्जूसी करता हो और दुश्मन के साथ जिहाद करने से बुज़दिली करता हो उसको चाहिये कि अल्लाह का ज़िक्र बहुत करे। (तिबरानी)

बिना ख़र्च वाला नशीं

हज़रत अबू मूसा रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु

अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अगर एक शख़्स की गोद में रुपये हों जिनको वह तकसीम करता हो और दूसरा शख़्स ख़ुदा का ज़िक्र करता हो तो यह ज़िक्र करने वाला ही अफ़ज़ल रहेगा। (तरग़ीब)

बिस्तर पर बुलन्द दर्जे

हज़रत अबू सईद रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि दुनिया में बहुत-से लोग बिछे हुए बिस्तरों पर ज़रूर बिज़्ज़रूर अल्लाह का ज़िक्र करेंगे और (वह ज़िक्र) उनको बुलन्द दर्जों में दाख़िल करवा देगा। (तरग़ीब)

दीवाना बन जाओ

हज़रत रसूले करीम सल्ल० ने इरशाद फ़रमाया कि ख़ुदा का ज़िक्र इस क़द्र ज़्यादा करो कि लोग तुमको दीवाना कहने लगें। (तरग़ीब)

रियाकारी की परवाह न करो

नबी पाक सल्ल० ने इरशाद फ़रमाया है कि इस क़द्र अल्लाह का ज़िक्र करो कि मुनाफ़िक़ लोग तुमको रियाकार कहने लगें। (तरग़ीब)

नम्बर ले गये

एक बार रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का मक्का शरीफ़ के रास्ते में जुमदान पहाड़ पर गुज़र हुआ तो आपने फ़रमाया कि चलो यह जुमदान है, आगे बढ़ गये (अपने नफ़्सों को) तन्हा करने वाले, सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम ने अर्ज़ किया कि हज़रत तन्हा करने वाले कौन हैं? आपने इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह को कसरत से याद करने वाले मर्द और अल्लाह को कसरत से याद करने वाली औरतें। (मुस्लिम शरीफ़)

और एक रिवायत में है कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम के जवाब में फ़रमाया कि हमेशा यादे ख़ुदा की हिर्स करने वाले अपने नफ़्सों को तन्हा करने वाले हैं। ख़ुदा का ज़िक्र उनका बोझ उतार देगा लिहाज़ा वे हल्के-फुल्के (मैदाने हश्र में) आयेंगे। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

"अपने नफ़्सों को तन्हा करने वाले" यानी अपने ज़माने के लोगों से बिल्कुल अलग रवैया रखने वाले, कि सब लोग तो दुनियावी बकवास, बेहूदा ख़ुराफ़ात और बेकार की बातों में मशग़ूल हों मगर वे लोग सिर्फ़ अल्लाह की

याद में वक़्त गुज़ारते हैं। (मिरक़ात)

मग़फ़िरत की निदा

हुज़ूर सरवरे आलम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि जब कुछ लोग अल्लाह का ज़िक्र करने के लिये जमा हो जायें और उनकी ग़रज़ उससे सिर्फ़ रिज़ा-ए-ख़ुदा हो तो (ख़ुदा का) मुनादी (आवाज़ देने वाला) आसमान से आवाज़ देता है कि उठ जाओ बख़्शे-बख़्शाये और मैंने तुम्हारी बुराइयों को नेकियों से बदल दिया। (तरग़ीब)

मोती के मिम्बर

सरवरे दो जहाँ सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि क़ियामत के दिन ख़ुदा तआ़ला ज़रूर ऐसे लोगों को उठायेगा जिनके चेहरों पर नूर होगा (और) वे मोतियों के मिंबरों पर बैठे होंगे और ये हज़रात न नबी होंगे न शहीद होंगे (और) सब लोग उनपर रश्क करते होंगे। (यह सुनकर) एक देहाती (रसूले ख़ुदा सल्ल० के सामने) दोज़ानूँ बैठ गये और अ़र्ज़ किया कि हज़रत! उनकी सिफ़तें बता दीजिये। (ताकि) हम उनको पहचान लें। आपने फ़रमाया कि ये वे हज़रात होंगे (जिनमें कोई रिश्ता-नाता न होगा और) जो मुख़्तलिफ़ क़बीलों और मुख़्तलिफ़ शहरों के होंगे (और इसके बावजूद) अल्लाह के लिये आपस में मुहब्बत करते थे (और) अल्लाह की याद के लिये जमा हुआ करते थे। (तरग़ीब)

दुनिया व आख़िरत की भलाई

हज़रत रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि चार चीज़ें जिसको दी गईं उसको दुनिया और आख़िरत की भलाई दी गयी। (वे चीज़ें ये हैं) (1) शुक्रगुज़ार दिल (2) ख़ुदा का ज़िक्र करने वाली ज़बान (3) बला पर सब्र करने वाला बदन (4) और अपने नफ़्स और उसके माल की हिफ़ाज़त करने वाली बीवी। (तरग़ीब)

सिर्फ़ एक चीज़

अ़ब्दुल्लाह बिन बसर रज़ियल्लाहु अ़न्हु का बयान है कि एक शख़्स ने रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! इस्लाम की चीज़ें तो बहुत हैं (जिनकी ज़िम्मेदारी भी) मुझ पर (बहुत है और

सबकी अदायगी भी नहीं होती) लिहाज़ा मुझको आप एक ही चीज़ बता दीजिये जिसमें मैं लगा रहूँ। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया तेरी ज़बान हमेशा यादे ख़ुदा में तर रहे। (मिश्कात)

जिहाद से अफ़ज़ल

हज़रत सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से किसी ने सवाल किया कि क़ियामत के दिन ख़ुदा के नज़दीक कौन शख़्स सबसे अफ़ज़ल और सबसे बुलन्द दरजे वाला होगा? आपने फ़रमाया कि अल्लाह को कसरत से याद करने वाले मर्द और अल्लाह को कसरत से याद करने वाली औरतें। (इस पर) एक सहाबी रज़ियल्लाहु अन्हु ने अर्ज़ किया कि क्या ज़िक्र करने वाले अल्लाह के रास्ते में जिहाद करने वाले से भी अफ़ज़ल और बुलन्द दरजे वाले हैं? आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अगर (जिहाद करने वाला) अपनी तलवार से काफ़िरों और इनकारियों को इस क़द्र मारे कि तलवार टूट जाये और (वह शख़्स या तलवार) ख़ून में रंग जाये तब भी अल्लाह का ज़िक्र करने वाला ही अफ़ज़ल रहेगा। (मिश्कात शरीफ़)

हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने (सहाबा रज़ि० को ख़िताब करके) फ़रमाया कि क्या तुमको तुम्हारा वह अमल न बता दूँ जो तुम्हारे मालिक (ख़ुदा तआ़ला) के नज़दीक तमाम आमाल से बेहतर और पाकीज़ा है। और जो तुम्हारे दरजों को सब आमाल से ज़्यादा बुलन्द करने वाला है और तुम्हारे लिये सोना-चाँदी ख़र्च करने से बेहतर है और जो इससे (भी) बेहतर है कि तुम दुश्मन से बढ़ जाओ और उनकी गर्दनें उड़ाओ और वे तुम्हारी गर्दन उड़ायें? सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम ने जवाब में अर्ज़ किया कि जी हाँ! इरशाद फ़रमाइये। आपने फ़रमाया (वह अमल) अल्लाह का ज़िक्र है। (जो उन सबसे आला व अफ़ज़ल है)। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

दुनिया से रुख़्सत होने के वक़्त

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन बसर रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में एक देहाती (सहाबी रज़ियल्लाहु अन्हु) ने हाज़िर होकर सवाल किया कि हज़रत! सब लोगों से बेहतर कौन है? आपने फ़रमाया ख़ुशी है उस शख़्स के लिये जिसकी उम्र

लम्बी हो और अमल अच्छे हों। उन साहिब ने फिर अर्ज़ किया सबसे ज़्यादा कौनसा अमल अफ़ज़ल है? आपने फ़रमाया यह कि तू दुनिया से इस हालत में जुदा हो कि तेरी ज़बान अल्लाह के ज़िक्र में तर हो। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

जन्नत के बाग़ीचे

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि हुज़ूर नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने (अपने सहाबी रज़ियल्लाहु अन्हुम से) इरशाद फ़रमाया कि जब जन्नत के बाग़ीचों पर गुज़रो तो खाया-पिया करो। सहाबा रज़ि० ने अर्ज़ किया कि जन्नत के बाग़ीचे कौनसे हैं? आपने फ़रमाया कि ज़िक्र की मजलिसें हैं। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

फ़ायदाः खाने-पीने का मतलब यह है कि उन बाग़ीचों में जाकर बाग़ीचों वालों के अमल में शरीक हो जाओ। यानी ज़िक्र करने लगा करो।

फ़रिश्तों के सामने फ़ख़्र

हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि एक बार रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपने सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम की एक जमाअत के पास तशरीफ़ लाये (जो बैठे हुए थे)। आपने उनसे दरियाफ़्त फ़रमाया कि तुमको यहाँ किस चीज़ ने बैठा रखा है? सहाबा ने अर्ज़ किया कि हम बैठे हुए ख़ुदा का ज़िक्र कर रहे हैं और उसकी तारीफ़ बयान कर रहे हैं कि उसने हमको इस्लाम की हिदायत दी और इसकी वजह से हमपर एहसान किया। आपने फ़रमाया ख़ुदा की क़सम! क्या तुमको सिर्फ़ इसी चीज़ ने बैठा रखा है? सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम ने अर्ज़ किया ख़ुदा की क़सम! हमको सिर्फ़ इसी चीज़ ने बैठा रखा है। आपने फ़रमाया कि ख़ूब समझ लो मैंने तुमको झूठा समझकर क़सम नहीं खिलाई लेकिन बात दर असल यह है कि (अभी) मेरे पास जिबराईल आये थे और मुझको यह बता गये कि अल्लाह पाक फ़रिश्तों के सामने तुमको फ़ख़्र (गर्व) के तौर पर पेश फ़रमा रहे हैं। (मुस्लिम शरीफ़)

अल्लाह के अज़ाब से नजात

रहमतुल्लिल् आलमीन सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः कोई अमल बन्दे को इस क़द्र ख़ुदा के अज़ाब से नहीं बचाता जिस क़द्र ख़ुदा की याद बचाती है। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

फ़ायदाः यानी सारे नेक आमाल ख़ुदा के अज़ाब से नजात दिलाने का

ज़रिया हैं मगर उन सबमें से अफ़ज़ल अल्लाह का ज़िक्र है जिसके बराबर कोई भी अ़मल नहीं। इससे बढ़कर अ़ज़ाबे इलाही से बचाने वाला और कोई अ़मल नहीं।

अ़र्शे इलाही के साये में

हुज़ूर नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का फ़रमान है कि सात शख़्स ऐसे हैं जिनको ख़ुदावन्द तआ़ला अपने साये में रखेगा जबकि उसके साये के अ़लावा कोई साया न होगाः

(1) इन्साफ़ करने वाला मुसलमान बादशाह।

(2) वह जवान जो अल्लाह तआ़ला की इबादत में पला-बढ़ा।

(3) वह शख़्स जिसका दिल मस्जिद में अटका रहता है।

(4) वे दो शख़्स जिन्होंने आपस में अल्लाह के लिये मुहब्बत रखी और उसी पर मुलाक़ात की और उसी पर जुदा हुए।

(5) वह शख़्स जिसको किसी रुतबे वाली और हसीन औ़रत ने (बुरे काम की) दावत दी और उसने (साफ़) जवाब दिया कि मैं तो अल्लाह से डरता हूँ।

(6) वह शख़्स जिसने दाहिने हाथ से सदक़ा किया और उसको पौशीदा रखा यहाँ तक कि उसका बाँया हाथ भी नहीं जानता कि दाहिने हाथ ने क्या ख़र्च किया।

(7) वह शख़्स जिसने तन्हाई में ख़ुदा को याद किया और उसके आँसू बह पड़े। (बुख़ारी शरीफ़)

मुर्दा और ज़िन्दा

हज़रत अबू मूसा रज़ियल्लाहु अ़न्हु का बयान है कि हज़रत सरवरे आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि मिसाल उस शख़्स की जो अपने रब को याद करे और उसकी मिसाल जो अपने रब को याद न करे ज़िन्दा और मुर्दा की मिसाल है। (बुख़ारी)

फ़ायदाः यानी ख़ुदा की याद में मशग़ूल रहने वाला ज़िन्दा है और इससे ग़ाफ़िल रहने वाला मुर्दा है। ज़िक्र करने वालों को हमेशा की ज़िन्दगी नसीब होती है। उनको ख़ुदा तआ़ला का ख़ास ताल्लुक़ हासिल होता है। वे दोनों जहान में अमन व चैन की ज़िन्दगी बसर करते हैंः

हरगिज़ न मीरद आँ कि दिलश ज़िन्दा शुद ब-इश्क़
सबत अस्त बर जरीदा-ए-आलम दवामे मा

तर्जुमाः वे लोग कभी नहीं मरते जिनका दिल अल्लाह के इश्क़ से ज़िन्दा हो गया। जब तक यह दुनिया बाक़ी रहेगी हम भी बाक़ी रहेंगे।

ज़िक्र करने वाले के विपरीत वे लोग हैं जिनको दुनिया व आख़िरत का होश नहीं। उनका बातिन मुर्दा और गन्दा और ज़ाहिर मुरझाया हुआ रहता है। बज़ाहिर वे जानदार मालूम होते हैं मगर बन्दगी की रूह से कोरे और ख़ाली होते हैं।

इनसानी सूरत और ढाँचा ज़रूर उनके पास होता है मगर उनकी ज़िन्दगी बे-सौदा और बे-फ़ायदा होती है। जिस तरह मुर्दा कुछ कमाई और काम-धन्धा नहीं करता और अमली तरक़्क़ी के ज़ीने पर नहीं चढ़ता उसी तरह अल्लाह का ज़िक्र न करने वाले का हाल है। उनमें से कभी किसी को थोड़ी-बहुत दुनिया तो मिल जाती है मगर आख़िरत की ग़फ़लत उनको दुनिया में रहते हुए मुर्दा बना देती है।

हुज़ूरे अकरम सल्ल० का जवाब

हुज़ूर सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि मेरे रब ने मुझ पर यह बात पेश की कि (अगर तुम चाहो तो) मक्का के संगरेज़ों (पत्थर के टुकड़ों) को तुम्हारे लिये सोना बना दूँ। मैंने अर्ज़ किया कि ऐ मेरे परवर्दिगार! (मैं) नहीं (चाहता) लेकिन (मैं तो यह चाहता हूँ) कि एक रोज़ पेट भरकर खा लूँ और दूसरे रोज़ भूखा रहूँ। सो जब भूखा रहूँ तो तेरी तरफ़ आजिज़ी करूँ और तेरी याद में लगूँ और जब पेट भर लूँ तो तेरी तारीफ़ बयान करूँ और तेरा शुक्र करूँ। (तिर्मिज़ी)

करवट में कबूल

हज़रत रसूले मक़्बूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया है कि जो शख़्स पाक होने की सूरत में (यानी वुज़ु के साथ) अपने बिस्तर पर पहुँचा और नींद आने तक अल्लाह को याद करता रहा तो रात को जिस वक़्त भी करवट बदलते हुए अल्लाह से किसी दुनिया और आख़िरत की भलाई का सवाल करेगा तो ख़ुदा तआला वह भलाई उसको ज़रूर देगा।

(मिश्कात शरीफ़)

शैतान की नाकामी

हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया है कि जब इनसान अपने घर में दाख़िल हो और दाख़िल होते वक़्त अल्लाह को याद किया तो शैतान (अपने साथियों से कहता है चलो) यहाँ न रात को ठहर सकते हो और न खा सकते हो। और जब (इनसान) अपने घर में दाख़िल हुआ और दाख़िल होते वक़्त अल्लाह को याद न किया तो शैतान (अपने साथियों से) कहता है कि तुम (यहाँ) रात को ठहरने में कामयाब हो गये। और जब खाते वक़्त अल्लाह को याद न किया तो शैतान अपने साथियों से कहता है कि तुम यहाँ रात को ठहरने और खाना खाने में कामयाब हो गये। (मुस्लिम शरीफ़)

फ़ज्र और अस्र की नमाज़ के बाद ज़िक्र का सवाब

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि हुज़ूर नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स सुबह की नमाज़ जमाअत के साथ पढ़े फिर सूरज निकलने तक बैठा हुआ अल्लाह को याद करता रहे फिर दो रक्अतें पढ़ ले तो उसको पूरे एक हज और एक उमरे का सवाब मिलेगा। (तिर्मिज़ी)

रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फ़ज्र की नमाज़ के बाद सूरज निकलने तक पालती मारकर बैठे रहते थे, और आपने फ़ज्र की नमाज़ और अस्र की नमाज़ के बाद अल्लाह की याद में मशग़ूल होने की तरग़ीब दी है। और इस बारे में बहुत-सी फ़ज़ीलतों से बा-ख़बर किया है चुनाँचे एक हदीस में है कि आपने फ़रमाया है मुझे इसमाईल अलैहिस्सलाम की औलाद में से चार गुलाम आज़ाद करने से ज़्यादा महबूब है कि ज़रूर उन लोगों के साथ बैठ जाऊँ जो फ़ज्र की नमाज़ के बाद सूरज निकलने तक अल्लाह तआला को याद करते रहें। और चार गुलाम आज़ाद करने से मुझको यह बहुत ज़्यादा पसन्द है कि ज़रूर उन लोगों के साथ बैठ जाऊँ जो अस्र की नमाज़ से सूरज छुपने तक अल्लाह को याद करते हैं। (अबू दाऊद शरीफ़)

दूसरी हदीस में है कि जो शख़्स फ़ज्र की नमाज़ पढ़ ले फिर बैठा बैठा सूरज निकलने तक अल्लाह को याद करता रहे तो उसके लिये जन्नत वाजिब हो गयी। (तरग़ीब व तरहीब)

एक बार रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने (मुजाहिदीन का) दस्ता नज्द की तरफ़ भेजा जिनको बहुत ज़्यादा ग़नीमत (दीन की लड़ाई में जो माल दुश्मन से हासिल हो उसको ग़नीमत कहते हैं) के माल हाथ लगे और जल्दी वापस आ गये। यह देखकर हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने कहा कि हमने कोई दस्ता ऐसा नहीं देखा जो इस दस्ते के मुक़ाबले में ज़्यादा ग़नीमत का माल लाया हो और इस क़द्र जल्दी वापस आया हो। इस पर रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि ऐ अबू बक्र! क्या मैं तुझको ऐसा शख़्स न बताऊँ जो इस दस्ते से भी ज़्यादा जल्दी वापस होने वाला और माले ग़नीमत हासिल करने वाला हो। (सुनो!) यह वह शख़्स है जो जमाअ़त के साथ नमाज़ पढ़े फिर सूरज निकलने तक अल्लाह को याद करता रहे। (तरग़ीब व तरहीब)

फ़ायदाः बाज़ रिवायत में है कि जिस जगह फ़ज्र की नमाज़ जमाअ़त के साथ पढ़ी हो उसी जगह बैठा हुआ ज़िक्र करता रहे। औरतें घर में बिना जमाअ़त के नमाज़ पढ़ती हैं वे भी ज़िक्र का एहतिमाम करें, मुसल्ले पर बैठी-बैठी ज़िक्र करती रहें और इशराक़ पढ़कर बहुत बड़ा अज्र पायेंगी इन्शा-अल्लाह तआ़ला। अगर किसी वजह से मुसल्ला छोड़ना पड़े तो भी ज़िक्र करती रहें। फ़ज्र और अ़स्र के बाद ज़िक्र का ख़ास वक़्त है और इसकी बहुत ही फ़ज़ीलत है।

निफ़ाक़ से बरी

हुज़ूर नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया है कि जिसने ख़ुदा का ज़िक्र बहुत किया वह निफ़ाक़ (कीना-कपट और दिल के खोट) से बरी हो गया। (तरग़ीब)

ज़िक्र छोड़ने की वईदें

अब वे मुबारक हदीसें दर्ज की जाती हैं जिनमें अल्लाह के ज़िक्र से ग़ाफ़िल होने वालों के लिये वईदें (तंबीह, डाँट-डपट और सज़ा की धमकी) बयान की गयी हैं।

मुर्दा गधे के पास से उठे

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब कुछ लोग किसी

जगह (बैठे फिर वहाँ) से उठकर खड़े हुए और उस मजलिस में अल्लाह का ज़िक्र न किया तो वे गोया मुर्दा गधे को छोड़कर उठे और यह मजलिस (आख़िरत में) उनके लिये हसरत व अफ़सोस का सबब होगी। (अबू दाऊद)

ज़बरदस्त नुक़सान

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो शख़्स किसी बैठने की जगह बैठा और उसने उस जगह अल्लाह का ज़िक्र न किया तो अल्लाह जल्ल शानुहू की तरफ़ से उसका यह बैठना उसके लिये नुक़सान का सबब होगा। और जो शख़्स किसी जगह लेटा और उसने उस लेटने में (शुरू से आख़िर तक किसी वक़्त भी) अल्लाह का ज़िक्र न किया तो उसका यह लेटना अल्लाह की तरफ़ से नुक़सान का सबब होगा। (अबू दाऊद शरीफ़)

और जो शख़्स किसी जगह चला और उस चलने के दरमियान अल्लाह का ज़िक्र नहीं किया तो उसके लिये यह चलना नुक़सान का सबब होगा। (तरग़ीब में यह हिस्सा ज़्यादा है)।

हर बात वबाल है

हज़रत उम्मे हबीबा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि इनसान की हर बात उसके लिये वबाल है (और) उसके लिये नफ़े की चीज़ नहीं है मगर (नफ़े की चीज़ें ये हैं) (1) किसी भलाई का हुक्म करना (2) किसी बुराई से रोक देना (3) या अल्लाह तआला का ज़िक्र करना। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

लानत से कौन महफ़ूज़ है?

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि ख़बरदार! इसमें कोई शुब्हा नहीं कि सारी दुनिया मलऊन है और इसमें जो कुछ है वह भी मलऊन है सिवाए अल्लाह तआला के ज़िक्र के, और जो अल्लाह के ज़िक्र के ताबे हो, और दीन का आलिम और (दीन का) तालिब-इल्म (यानी दीन का इल्म सीखने वाला)। (तिर्मिज़ी)

मतलब यह कि दुनिया की हर चीज़ मरदूद है, अल्लाह तआला की रहमत से दूर है, बारगाहे ख़ुदावन्दी में ना-मक़बूल है चाहे कैसी ही ख़ूबसूरती

और कारीगरी के साथ बनी हुई हो और दुनिया वालों को कैसी ही भाती हो, अलबत्ता अल्लाह तआ़ला का ज़िक्र और वे चीज़ें ख़ुदा तआ़ला के यहाँ मकबूल हैं जो ज़िकरुल्लाह के ताबे हों यानी अल्लाह की फ़रमाँबरदारी और ख़ुश्नूदी के लिये जो कुछ हो वह सब अल्लाह के यहाँ मक़बूल है जैसे अल्लाह की रिज़ा के लिये हलाल माल ख़र्च करना, दीनी मदरसा खोलना, मस्जिद बनाना, ग़रीबों को खाना खिलाना, किताबें लिखना, बाल-बच्चों की परवरिश करना, माँ-बाप के हुक़ूक़ अदा करना वग़ैरह वग़ैरह। और दीन का आ़लिम और दीन का सीखने वाला भी ख़ुदा की लानत से महफ़ूज़ है, और ख़ुदा तआ़ला के यहाँ मक़बूल व महबूब है। आ़लिमों ने बताया है कि जो शख़्स भी अल्लाह की फ़रमाँबरदारी में लगा हुआ है वह ज़ाकिर है यानी ज़बान से या दिल से या अ़मल से अल्लाह के काम में या अल्लाह के नाम में जो मशग़ूल है वह ज़ाकिर (ज़िक्र करने वाला) है, ग़ाफ़िलों में शुमार नहीं। अल्लाह तआ़ला हमें भी अपना ज़्यादा से ज़्यादा ज़िक्र करने की तौफ़ीक़ नसीब फ़रमाये, आमीन।

सुब्हानल्लाह, अल्हम्दु लिल्लाहि, ला इला-ह इल्लल्लाहु अल्लाहु अकबर का विर्द रखने के फ़ज़ाइलः

हदीसः (87) हज़रत उम्मे हानी रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने बयान फ़रमाया कि एक दिन हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मेरे पास से गुज़रे मैंने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! मैं बूढ़ी और कमज़ोर हो गयी हूँ (मेहनत और मुजाहदे वाले आमाल करना दुश्वार है)। आप मुझे ऐसा अ़मल बता दें जिसे मैं बैठे-बैठे करती रहा करूँ। आपने फ़रमाया सौ बार अल्लाह की तसबीह बयान कर (जैसे सुब्हानल्लाह कह ले) यह अ़मल तेरे लिये (सवाब में) ऐसे सौ गुलामों के आज़ाद करने के बराबर होगा जो हज़रत इसमाईल अ़लैहिस्सलाम की औलाद से हों। और सौ बार अल्लाह की तारीफ़ बयान कर (जैसे अल्हम्दु लिल्लाह कह ले) यह अ़मल तेरे लिये (सवाब में) ऐसे सौ घोड़े अल्लाह की राह में जिहाद करने वालों को देने के बराबर होगा जिन पर ज़ीन कसी हुई हो और लगाम लगी हुई हो। और सौ बार अल्लाह की बड़ाई बयान कर (जैसे अल्लाहु अकबर कह ले) यह अ़मल तेरे लिये कुरबानी के ऐसे सौ बड़े जानवर (गायें, ऊँट) सदक़ा करने के बराबर होगा जिनके गलों में क़लादे पड़े

हों और वे अल्लाह की बारगाह में मक़बूल हो जायें। और सौ बार ला इला-ह इल्लल्लाहु कह ले, इस अ़मल का सवाब आसमान व ज़मीन के दरमियान को भर देगा। और जिस दिन तू यह अ़मल कर लेगी उस दिन मक्का में कोई शख़्स ऐसा न होगा जिसका अ़मल तेरे अ़मल से बढ़कर हो और अल्लाह की बारगाह में पेश करने के लिये ऊपर उठाया जा रहा हो। हाँ! अगर कोई शख़्स तेरे जैसा अ़मल कर ले तो उसका अ़मल भी तेरे बराबर होगा।

(तरग़ीब व तरहीब जिल्द 2 पेज 245)

तशरीह: हर ऐब और नुक़सान से अल्लाह तआ़ला पाक है, इसके बयान करने को **तसबीह** कहा जाता है। और अल्लाह तआ़ला तमाम कमालात की सिफ़ात वाला है वह तारीफ़ ही का हक़दार है, इसके बयान करने को **तहमीद** कहा जाता है। और अल्लाह की बड़ाई बयान करने को (कि वह सबसे बड़ा है) **तकबीर** कहा जाता है। **ला इला-ह इल्लल्लाहु** (अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं) इसको **तहलील** कहा जाता है। **सुब्हानल्लाहि, अल्हम्दु लिल्लाहि, ला इला-ह इल्लल्लाहु, अल्लाहु अकबर** में चारों चीज़ें यानी **तसबीह** और **तहमीद** और **तकबीर** और **तहलील** बयान की जाती हैं।

हदीस: (88) हज़रत सअ़द बिन अबी वक़्क़ास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने बयान फ़रमाया है कि मैं हुज़ूर नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ एक औ़रत के पास गया जिनके सामने गुठलियाँ या कंकरियाँ पड़ी हुई थीं और वह उनपर अल्लाह की तसबीह पढ़ रही थीं। आपने फ़रमाया क्या मैं तुम्हें इससे आसान सूरत न बतला दूँ? या फ़रमाया क्या इससे अफ़ज़ल बात न बता दूँ? जिसमें अलफ़ाज़ मुख़्तसर हों और सवाब ज़्यादा हो। तुम यह पढ़ा करो:

सुब्हानल्लाहि अ़-द-द मा ख़-ल-क फ़िस्समा-इ

तर्जुमा: मैं अल्लाह की पाकी बयान करती हूँ जिस क़द्र आसमानों में उसकी मख़्लूक़ है। और:

सुब्हानल्लाहि अ़-द-द मा ख़-ल-क फ़िल्-अर्ज़ि

तर्जुमा: मैं अल्लाह की पाकी बयान करती हूँ जिस क़द्र ज़मीन में उसकी मख़्लूक़ है। और:

सुब्हानल्लाहि अ़-द-द मा बै-न ज़ालि-क

तर्जुमा: मैं अल्लाह की पाकी बयान करती हूँ जिस क़द्र आसमान व

ज़मीन के दरमियान मख़्लूक़ है। और:

सुब्हानल्लाहि अ़-द-द मा हु-व ख़ालिक़ुन्

तर्जुमा: मैं अल्लाह की पाकी बयान करती हूँ उस मख़्लूक़ की मात्रा में जिसे अल्लाह तआ़ला आईन्दा पैदा फ़रमायेंगे। और:

ला इला-ह इल्लल्लाहु भी इसी तरह पढ़ो। और **ला हौ-ल व ला क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाहि** भी इसी तरह पढ़ो। इसका मतलब यह है कि हर एक के साथ वे अलफ़ाज़ बढ़ाती जाओ जो सुब्हानल्लाहि के साथ बढ़ाए जैसे यूँ कहो:

अल्लाहु अकबरु अ़-द-द मा ख़-ल-क फ़िस्समा-इ। अल्लाहु अकबरु अ़-द-द मा ख़-ल-क फ़िल्-अर्ज़ि। अल्लाहु अकबरु अ़-द-द मा बै-न ज़ालि-क। अल्लाहु अकबरु अ़-द-द मा हु-व ख़ालिक़ुन्।

इसी तरह **ला इला-ह इल्लल्लाहु** और **अल्हम्दु लिल्लाहि** और **ला हौ-ल व ला क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाहि** के साथ मिलाकर पढ़ो। **ला इला-ह इल्लल्लाहु, अल्लाहु अकबरु** की बहुत फ़ज़ीलत आई है। इस सिलसिले में चन्द और हदीसों का तर्जुमा लिखा जाता है।

जन्नत में दाख़िला

हुज़ूर सरवरे आलम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने (एक बार) इरशाद फ़रमाया कि जिसने इख़्लास के साथ **ला इला-ह इल्लल्लाहु** कह लिया वह जन्नत में दाख़िल होगा। किसी ने अ़र्ज़ किया कि इसका इख़्लास क्या है? आपने फ़रमाया इसका इख़्लास यह है कि पढ़ने वाले को ख़ुदा की मना की हुई चीज़ों से रोक दे। (तिबरानी)

यानी इस कलिमे को इख़्लास के साथ पढ़ने का मतलब यह है कि इसको ख़ूब समझकर पढ़े और सच्चे दिल से यक़ीन के साथ ख़ुदा के माबूद होने का इक़रार करे। और यह यक़ीन करे कि अल्लाह तआ़ला हाज़िर व नाज़िर है, क़ुदरत वाला है, बहुत जल्द हिसाब लेने वाला और सख़्त सज़ा देने वाला है। इसका पुख़्ता यक़ीन करने से फिर अपने आप से गुनाह न होंगे।

अ़र्श तक

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया है कि जब कभी भी कोई

शख़्स इख़्लास के साथ **ला इला-ह इल्लल्लाहु** कहेगा तो उसके लिये आसमान के दरवाज़े खोल दिये जायेंगे। यहाँ तक कि वह अ़र्श तक पहुँच जायेगा जब तक कि बड़े गुनाहों से बचता रहे। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

अल्लाह तआ़ला तक पहुँचना

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया है कि **तसबीह** (सुब्हानल्लाहि) आधी तराज़ू है और **अल्हम्दु लिल्लाहि** तराज़ू को भर देता है, **और ला इला-ह इल्लल्लाहु** के लिये कोई पर्दा नहीं है यहाँ तक कि वह ख़ुदा के पास पहुँचे। (तिर्मिज़ी)

सुब्हानल्लाहि आधी तराज़ू है यानी क़ियामत के दिन सुब्हानल्लाहि का सवाब आधी तराज़ू को भर देगा और अल्हम्दु लिल्लाहि का सवाब पूरी तराज़ू को भर देगा।

मिश्कात शरीफ़ (किताबुत्तहारत) में है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्हम्दु लिल्लाहि तराज़ू को भर देता है और सुब्हानल्लाहि वल्हम्दु लिल्लाहि भर देते हैं ज़मीन व आसमान के दरमियान को। (मुस्लिम शरीफ़)

दुनिया और जो कुछ दुनिया में है, से अफ़ज़ल

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु का बयान है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि मुझको **सुब्हानल्लाहि वल्हम्दु लिल्लाहि व ला इला-ह इल्लल्लाहु वल्लाहु अकबरु** कहना उन तमाम चीज़ों से ज़्यादा प्यारा है जिन पर सूरज निकलता है। (मुस्लिम)

यानी इसका एक बार पढ़ लेना उस सबसे बेहतर है जो आसमान के नीचे है।

रोज़ाना हज़ार नेकियाँ

हज़रत सअ़द बिन अबी वक़्क़ास रज़ियल्लाहु अ़न्हु का बयान है कि (एक बार) हम रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास मौजूद थे। आपने फ़रमाया क्या तुम से यह नहीं हो सकता कि हज़ार नेकियाँ रोज़ाना कमा लो? यह सुनकर मजलिस में मौजूद हज़रात में से एक साईल ने सवाल किया: हम में से कोई शख़्स कैसे हज़ार नेकियाँ कमाये? आपने फ़रमाया सौ मर्तबा

सुब्हानल्लाहि कह ले तो उसके लिये हज़ार नेकियाँ लिख दी जायेंगी और उसके हज़ार (छोटे) गुनाह ख़त्म कर दिये जायेंगे। (मुस्लिम)

हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम को हिदायत

हज़रत अबू सईद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक मर्तबा ज़िक्र फ़रमाया कि हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने ख़ुदा तआ़ला से अ़र्ज़ किया कि ऐ मेरे परवर्दिगार! मुझे कोई ऐसी चीज़ बता दीजिये जिसके ज़रिये (वज़ीफ़े के तौर पर) आपको याद किया करूँ और आपको पुकारूँ। रब्बुल्-आलमीन ने इरशाद फ़रमाया कि ऐ मूसा! **ला इला-ह इल्लल्लाहु** पढ़ा करो। यह सुनकर हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने अ़र्ज़ किया ऐ मेरे परवर्दिगार! इसको तो तेरे सब ही बन्दे पढ़ते हैं। मैं तो ऐसी चीज़ चाहता हूँ जो ख़ास आप मुझको बतायें। रब तआ़ला शानुहू ने इरशाद फ़रमाया कि ऐ मूसा! (इसको मामूली न समझो) सातों आसमान और जो मेरे अ़लावा उनके आबाद करने वाले हैं और सातों ज़मीनें अगर एक पलड़े में रख दी जायें और **ला इला-ह इल्लल्लाहु** दूसरे पलड़े में रख दिया जाये तो **ला इला-ह इल्लल्लाहु** (का पलड़ा वज़नी होने की वजह से) उन सबके मुक़ाबले में झुक जायेगा। (मिश्कात शरीफ़)

हज़रत इब्राहीम ख़लीलुल्लाह अ़लैहिस्सलाम का पैग़ाम

हज़रत इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया है कि जिस रात मुझको सैर कराई गई (यानी मेराज की रात में) हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम से मिला तो उन्होंने मुझसे फ़रमाया कि ऐ मुहम्मद! अपनी उम्मत को मेरा सलाम कह दीजियो (हज़रत इब्राहीम के सलाम का जवाब देना चाहिए) और उनको बतला दीजियो कि जन्नत की अच्छी मिट्टी है और मीठा पानी है, और वह चटियल मैदान है, और उसके पौधे ये हैं: **सुब्हानल्लाहि वल्हम्दु लिल्लाह व ला इला-ह इल्लल्लाहु वल्लाहु अकबरु।** (मिश्कात शरीफ़)

मतलब यह है कि जन्नत में अगरचे दरख़्त भी हैं फल और मेवे भी हैं मगर उनके लिये चटियल मैदान ही है जो नेक अमल से ख़ाली हैं। जन्नत की ऐसी मिसाल है जैसे कोई ज़मीन खेती के लायक़ हो उसकी मिट्टी अच्छी हो, उसके पास बेहतरीन मीठा पानी हो और जब उसको बो दी जाये तो उसकी

मिट्टी में अपनी सलाहियत (क्षमता) और बेहतरीन पानी सिंचाव की वजह से अच्छे दरख़्त और बेहतरीन ग़ल्ले पैदा हो जायें। बिल्कुल इसी तरह जन्नत को समझ लो कि जो कुछ यहाँ बो दोगे वहाँ काट लोगे, और बे-अ़मल के लिये ख़ाली ज़मीन की तरह है।

पूरे सौ

नबी करीम सरवरे आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह भी इरशाद फ़रमाया कि जो शख़्स सुबह को सौ बार **सुब्हानल्लाहि** कहे और शाम को सौ बार **सुब्हानल्लाहि** कहे उसको सौ हज करने का सवाब मिलेगा। और जो शख़्स सौ बार सुबह को ख़ुदा की हम्द (तारीफ़ बयान) करे (अल्हम्दु लिल्लाहि कहे) और सौ बार शाम को ख़ुदा की हम्द करे तो उसको मुजाहिदीन को सौ घोड़े देने का सवाब मिलेगा। और जिसने सौ बार सुबह को और सौ बार शाम को **ला इला-ह इल्लल्लाहु** कहा उसको हज़रत इसमाईल अ़लैहिस्सलाम की औलाद में से सौ गुलाम आज़ाद करने का सवाब मिलेगा। और जिसने सौ बार सुबह को और सौ बार शाम को **अल्लाहु अकबरु** कहा तो उस दिन कोई दूसरा शख़्स उसके बराबर अ़मल करने वाला न होगा सिवाय उस शख़्स के जिसने उसके बराबर या उससे ज़्यादा (ये ज़िक्र हुए) कलिमात कहे हों। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

पतझड़ की तरह

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु का बयान है कि एक बार रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम एक ऐसे दरख़्त पर गुज़रे जिसके पत्ते सूखे हुए थे। आपने उसमें लाठी मारी जिसकी वजह से पत्ते झड़ गये। आपने फ़रमाया कि **अल्हम्दु लिल्लाह** और **सुब्हानल्लाह** और **ला इला-ह इल्लल्लाह** और **अल्लाहु अकबर** बन्दे के गुनाहों को इस तरह गिरा देते हैं जिस तरह इस दरख़्त के पत्ते गिर रहे हैं। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

तमाम ज़िक्रों में अफ़ज़ल

हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से रिवायत है कि सरवरे आलम ने इरशाद फ़रमाया कि सब ज़िक्रों में अफ़ज़ल ज़िक्र **ला इला-ह इल्लल्लाहु** है, और सब दुआ़ओं से अफ़ज़ल दुआ़ **अल्हम्दु लिल्लाह** है। (तिर्मिज़ी व इब्ने माजा)

जन्नत की कुन्जियाँ

हज़रत मुआज़ बिन जबल रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया जन्नत की कुन्जियाँ **ला इला-ह इल्लल्लाहु** की गवाही देना है। (तरग़ीब)

99 दफ़्तर

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रहमतुल्लिल्-आलमीन सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला क़ियामत के दिन मेरे एक उम्मती को तमाम मख़्लूक़ों के सामने बुलायेंगे, फिर उसके गुनाहों के निन्नानवे (99) दफ़्तर खोल देंगे। हर दफ़्तर इतनी दूर तक फैला होगा जितनी दूर तक नज़र पहुँचती होगी। फिर अल्लाह तआ़ला उससे फ़रमायेंगे कि क्या इन लिखे हुए आमाल में से तू किसी चीज़ का इनकार करता है? क्या मेरे लिखने वाले पहरेदारों ने तुझ पर ज़ुल्म किया है? वह शख़्स अ़र्ज़ करेगा कि ऐ मेरे रब! (मैं इनकारी नहीं हूँ और पहरेदारों ने ज़ुल्म) नहीं! (किया)। रब्बुल्-आलमीन इरशाद फ़रमायेंगे तो क्या तेरे पास कुछ उ़ज़्र है? वह कहेगा नहीं! अल्लाह तआ़ला फ़रमायेंगे हाँ! हमारे पास तेरी एक नेकी मौजूद है और बेशक आज तुझ पर कोई ज़ुल्म न होगा। उसके बाद एक पर्चा निकाला जायेगा जिसमें **अश्हदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाहु व अश्हदु अन्-न मुहम्मदन् अ़ब्दुहू व रसूलुहू** लिखा होगा। अल्लाह तआ़ला फ़रमायेंगे कि अपने आमाल का वज़न देख! वह अ़र्ज़ करेगा कि ऐ रब! इन दफ़्तरों के सामने इस पर्चे की क्या हक़ीक़त है, अल्लाह तआ़ला फ़रमायेंगे बेशक आज तुझ पर ज़ुल्म न होगा (कि सिर्फ़ तेरी बुराइयाँ तौल दी जायें और नेकी को छुपा लिया जाये)। चुनाँचे उन दफ़्तरों को एक पलड़े में और उस पर्चे को दूसरे पलड़े में रख दिया जायेगा। सो वे सब दफ़्तर (उस पर्चे के मुक़ाबले में) हल्के हो जायेंगे। (मिश्कात शरीफ़)

360 जोड़ों का शुक्रिया

हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि हर इनसान के जिस्म में तीन सौ साठ 360 जोड़ों को पैदा किया है (और हर जोड़ की तरफ़ से बतौर शुक्रिया सदक़ा करना लाज़िम है)। पस जिसने **अल्लाहु अकबर** कहा

और **अल्हम्दु लिल्लाह** कहा और **ला इला-ह इल्लल्लाह** कहा और **सुब्हानल्लाह** कहा और **अस्तग़फ़िरुल्लाह** कहा और कोई पत्थर या काँटा या हड्डी लोगों के रास्ते से हटाई या भलाई का हुक्म कर दिया या बुराई से (किसी को) रोक दिया (और उनमें सब या थोड़ा मिलाकर या एक ही की तायदाद 360 हो गयी, वह उस दिन उस हाल में चलता-फिरता होगा कि उसने अपनी जान को दोज़ख़ से बचा लिया। (मुस्लिम शरीफ़)

ढाल ले लो

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि एक मर्तबा रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अपनी ढाल संभाल लो। सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम ने अर्ज़ किया क्या दुश्मन आ गया? आपने फ़रमाया (दुश्मन से बचाने वाली ढाल को नहीं कह रहा हूँ बल्कि) दोज़ख़ की ढाल संभाल लो! **सुब्हानल्लाहि वल्हम्दु लिल्लाहि व ला इला-ह इल्लल्लाहु वल्लाहु अकबर्** क्योंकि यह कियामत के दिन आगे पीछे आयेंगे और ये बाकी रहने वाली नेकियाँ हैं। (तरग़ीब)

उहुद पहाड़ के बराबर

हज़रत इमरान बिन हसीन रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि एक बार रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि क्या तुमसे यह नहीं हो सकता कि रोज़ाना उहुद (पहाड़) की बराबर अमल कर लिया करो। सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम ने अर्ज़ किया वह क्या अमल है? फ़रमाया **सुब्हानल्लाह** उहुद से बड़ा है और **अल्हम्दु लिल्लाह** उहुद से बड़ा है, और **ला इला-ह इल्लल्लाहु** उहुद से बड़ा है, और **अल्लाहु अकबर** उहुद से बड़ा है। (तरग़ीब)

चार कलिमों का चयन

हज़रत अबू सईद और हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हुमा का बयान है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि ख़ुदा तआला ने सारे कलाम से चार कलिमे छाँटे हैं: **सुब्हानल्लाहि, अल्हम्दु लिल्लाहि, ला इला-ह इल्लल्लाहु, अल्लाहु अकबर।** जिसने एक बार सुब्हानल्लाह कहा उसके लिये बीस नेकियाँ लिख दी जायेंगी और उसके बीस गुनाह माफ़ कर दिये जायेंगे। और जिसने एक मर्तबा अल्लाहु अकबर कहा तो

उसका सवाब भी यही है और जिसने एक मर्तबा ला इला-ह इल्लल्लाह कहा तो भी यही सवाब है। और जिसने अपने दिल से अल्हम्दु लिल्लाही रब्बिल् आलमीन कहा उसके लिये तीस नेकियाँ लिख दी जायेंगी और उसके तीस गुनाह माफ़ कर दिये जायेंगे। (तरग़ीब)

ईमान ताज़ा किया करो

एक हदीस में है कि सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़राते सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम से इरशाद फ़रमाया कि अपना ईमान ताज़ा किया करो। सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम ने सवाल किया कि हम अपना ईमान कैसे ताज़ा करें? आपने फ़रमाया कि कसरत से **ला इला-ह इल्लल्लाहु** पढ़ा करो। (तरग़ीब व तरहीब)

तसबीहाते फ़ातिमा

सोते वक़्त और फ़र्ज़ नमाज़ के बाद तसबीह तहमीद और तकबीर

हदीसः (89) हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि (एक बार) हज़रत फ़ातिमा (रज़ियल्लाहु अन्हा) नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुईं और चक्की पीसने के निशान जो उनके हाथों में थे उनको दिखाकर अपनी तकलीफ़ ज़ाहिर करने का इरादा किया। (मक़सद यह था कि कोई गुलाम या बाँदी मिल जाये) और वजह यह थी कि हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा ने सुना था कि आजकल आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास गुलाम-बाँदी आए हुए हैं। हज़रत फ़ातिमा नबी करीम के घर पहुँची तो वहाँ आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ न रखते थे, लिहाज़ा मुलाक़ात न हो सकी। (जिसकी वजह से) अपनी दरख़्वास्त हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से कह आईं। जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ लाये तो हज़रत आयशा ने अर्ज़ कर दिया कि हज़रत फ़ातिमा तशरीफ़ लायी थीं वह ऐसी-ऐसी बात कह गयी हैं (कि मुझे चक्की पीसने की वजह से तकलीफ़ है, अगर ख़िदमत के लिये कोई गुलाम या बाँदी मिल जाये तो मेहनत के काम से नजात मिल जाये)।

हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि यह बात सुनकर आप रात को हमारे पास तशरीफ़ लाये, उस वक़्त हम (दोनों मियाँ-बीवी) सोने के लिये लेट चुके थे। (आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के अदब व सम्मान के लिये) उठने लगे तो फ़रमाया: तुम दोनों अपनी-अपनी जगह पर रहो। हमारे क़रीब तशरीफ़ लाये और मेरे और सय्यदा फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा के दरमियान बैठ गये, और इतने क़रीब मिलकर बैठ गये कि मुबारक क़दम की ठण्डक मुझे अपने पेट पर महसूस हो गयी। फिर आपने इरशाद फ़रमाया कि क्या मैं तुम दोनों को उससे बेहतर न बता दूँ जो तुमने मुझसे सवाल किया? तुम ऐसा किया करो कि (रात को) सोने के लिये लेटो तो 33 बार सुब्हानल्लाह और 33 बार अल्हम्दु लिल्लाह और 34 बार अल्लाहु अकबर कह लिया करो। यह तुम्हारे लिये ख़ादिम से बेहतर है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 209)

तशरीहः मुस्लिम शरीफ़ की एक रिवायत में है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्ल० ने हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा को इस मौक़े पर (फ़र्ज़) नमाज़ के बाद भी यह तसबीहात पढ़ने को इरशाद फ़रमाया। फ़र्ज़ नमाज़ के बाद और सोते वक़्त इन तसबीहात को पाबन्दी से पढ़ना चाहिये। बुज़ुर्गों ने बताया है और तर्जुबा किया गया है कि चूँकि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ख़ादिम देने के बजाय सोते वक़्त इन तसबीहात के पढ़ने का इरशाद फ़रमाया था इसलिये सोते वक़्त इनके पढ़ने से एक तरह की क़ुव्वत हासिल होती है और दिन भर की थकान, मेहनत और काम-काज की दुखन दूर हो जाती है।

हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि जब से मैंने यह वज़ीफ़ा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सुना कभी इसको नहीं छोड़ा। अलबत्ता जंगे सिफ़्फ़ीन (1) के मौक़े पर भूल गया था, फिर आख़िर रात में याद आया तो इन कलिमात को पढ़ लिया। (अबू दाऊद)

हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु के इस अ़मल से यह भी मालूम हुआ कि अगर शुरू रात में सोते वक़्त पढ़ने से यह तसबीहात रह जायें तो बाद में जब भी मौक़ा लगे रात को किसी भी वक़्त पढ़ ली जायें।

---

(1) सिफ़्फ़ीन एक जगह का नाम है वहाँ हज़रत मुआ़विया और हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु के दरमियान जंग हुई थी इसलिये इसे जंगे सिफ़्फ़ीन कहते हैं। बड़ी ज़बरदस्त जंग हुई थी।

हज़रत फ़ातिमा रज़ि० घर का काम-काज ख़ुद करती थीं

ऊपर जो हमने पूरी हदीस तर्जुमे के साथ नक़ल की है उसमें इस बात का ज़िक्र है कि हज़रत सय्यदा फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा अपने हाथों पर चक्की पीसने के निशानात दिखाकर ग़ुलाम या बाँदी हासिल करने के लिये नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुई थीं। दूसरी रिवायत में है कि सय्यदा फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा सिर्फ़ चक्की ही नहीं पीसती थीं बल्कि पानी का मशक भी भरकर लाती थीं, जिससे कपड़े ग़ुबार में भर जाते थे, और हांडी के नीचे आग भी ख़ुद ही जलाती थीं जिससे उनके कपड़ों का रंग धुएं के असर से सियाही माईल हो जाता था। जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अपनी मेहनत व मशक़्क़त और तकलीफ़ की शिकायत करके ग़ुलाम या बाँदी की दरख़्वास्त की तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनको न बाँदी अ़ता फ़रमाई न ग़ुलाम दिया, बल्कि आपने यह फ़रमाया कि जो ग़ुलाम बाँदी आये थे वे तुमसे पहले बदर के शहीदों के यतीम बच्चे ले गये। (अबू दाऊद शरीफ़)

दूसरी रिवायत में यह है कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु से फ़रमाया ख़ुदा की क़सम! ऐसा न करूँगा कि यह ग़ुलाम या बाँदी तुमको दे दूँ और सुफ़्फ़ा के सहाबा को छोड़ दूँ जिनके पेट भूख से परेशान हैं। इनकी क़ीमत सुफ़्फ़ा के सहाबा पर ख़र्च करूँगा। फिर रात को उनके पास तशरीफ़ ले गये, उस वक़्त दोनों एक ऐसी छोटी चादर में लेटे हुए थे कि सर ढाँकते तो पाँव खुल जाते थे और पाँव ढाँकते तो सर खुल जाते थे। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को देखकर दोनों उठने लगे, आपने फ़रमाया अपनी-अपनी जगह रहो और फ़रमाया क्या तुम्हें उस चीज़ से बेहतर न बताऊँ जो तुमने सवाल किया है? अ़र्ज़ किया ज़रूर इरशाद फ़रमाइये। इसपर आपने नमाज़ के बाद और सोते वक़्त ऊपर ज़िक्र हुई तसबीहात पढ़ने को बताईं। (अल्-इसाबा)

हाफ़िज़ मुन्ज़री की किताब "अत्तरग़ीब वत्तरहीब" में यह भी है कि एक ग़ुलाम मिल जाने की आरज़ू ज़ाहिर करने पर हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

तर्जुमा: ऐ फ़ातिमा! अल्लाह से डरो और अपने रब के फ़राइज़ अदा

करती रहो और अपने शौहर के काम-काज में लगी रहो।

घर में सामान की कमी कोई ऐब नहीं

हज़रत सय्यदा फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा घर का काम-काज खुद ही करती थीं, जैसा कि ऊपर ज़िक्र हुई हदीस से साबित हुआ। खाने-पीने की भी कमी रहती थी, घर में सामान बस बहुत ही मामूली था। हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक मर्तबा देखा कि हज़रत सय्यदा फ़ातिमा ने ज़ीनत के लिये उम्दा क़िस्म के कपड़े का पर्दा दरवाज़े पर लटका रखा है तो इस पर नाराज़गी का इज़हार फ़रमाया और इरशाद हुआ कि ये मेरे घर वाले हैं, मैं यह पसन्द नहीं करता कि अपने हिस्से की उम्दा चीज़ें इसी ज़िन्दगी के अन्दर खा लें। (मिश्कात)

हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का फ़क्र (तंगदस्ती और गुरबत) इख़्तियारी था। अपने घर वालों के लिये भी इसी को पसन्द फ़रमाते थे।

एक मर्तबा हज़रत सय्यदा फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा आपकी ख़िदमत में हाज़िर हुई और अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! मेरे और अली के पास सिर्फ़ मेंढे की एक खाल है जिस पर हम रात को सोते हैं और दिन को उसपर ऊँट को चारा खिलाते हैं। नबी करीम सल्ल० ने फ़रमाया कि ऐ मेरी बेटी! सब्र कर, क्योंकि मूसा (अलैहिस्सलाम) दस साल तक अपनी बीवी के साथ रहे और दोनों के पास सिर्फ़ एक अबा (जुब्बा, लम्बा कोट, जो पैरों तक आ जाए) थी। उसी को ओढ़ते और उसी को बिछाते थे। (शरह मवाहिबे लदुन्निया)

हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अगर चाहते तो अपनी बेटी को एक गुलाम या बाँदी अता फ़रमा देते, मगर आपने ज़रूरियात का एहसास फ़रमाया और आपकी खुदा-दाद रहमत और नरम-दिली ने इसी पर आपको आमादा किया कि सुफ़्फ़ा में रहने वाले मेरी बेटी से ज़्यादा ज़रूरत मन्द हैं। किसी न किसी तरह दुख-तकलीफ़ से मेहनत व मशक़्क़त करते हुए बेटी की ज़िन्दगी गुज़र तो रही है मगर सुफ़्फ़ा वाले तो बहुत ही बुरे हाल में हैं, जिनको फ़ाक़ों पर फ़ाक़े गुज़र जाते हैं। उनकी रियायत पहले है, और बेटी को ऐसा अमल बताया जो आख़िरत में बेइन्तिहा अज्र व सवाब का ज़रिया बने, दुनिया की फ़ना होने वाली तकलीफ़ आख़िरत के बेइन्तिहा इनामों के मुक़ाबले में बहुत ही बे-हक़ीक़त है, इसी लिये नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम

ने इस मौक़े पर हज़रत फ़ातिमा से फ़रमाया कि अल्लाह से डरो और अपने शौहर का काम अन्जाम देती रहो, और अपने रब का फ़रीज़ा अदा करती रहो। हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा ने जवाब में अर्ज़ किया कि मैं अल्लाह (की तक़दीर पर) और उसके रसूल (की तजवीज़) पर राज़ी हूँ। शायद डरने को इसलिये फ़रमाया कि दुनियावी आराम व राहत का सामान तलब करना उनके बुलन्द रुतबे के ख़िलाफ़ था। अल्लाह ही को ज़्यदा इल्म है।

हज़रत सय्यदा फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा दोनों जहान के बादशाह की सबसे प्यारी बेटी और ज़न्नत की तमाम औरतों की सरदार हैं। घर का काम-काज ख़ुद करती थीं, हाँडी पकाना, झाडू देना, चक्की पीसना, मशक भरकर पानी लाना, उनका रोज़ाना का अमल था। मालूम हुआ कि अपने घर का काम-काज करना कोई ऐब की बात नहीं है।

आजकल की औरतें ख़ासकर जिनके शौहरों के पास चार पैसे हैं, घर के काम करने को ऐब समझती हैं, जिसकी वजह से नौकर-चाकर रखने पड़ते हैं, और उन लोगों से बहुत-से दीनी व दुनियावी नुक़सान भी पहुँच जाते हैं। बहुत-से ख़ानदानों में मर्दों या नौजवान लड़कों को घर के अन्दर काम-काज पर मुलाज़िम रख लिया जाता है, घर की बहू-बेटियाँ सब उनके सामने आती हैं, और शर्म व हिजाब को बिल्कुल ताक़ पर उठाकर रख दिया जाता है, यह बड़ी बेदीनी की बात है। अपने घर का काम-काज ख़ुद अन्जाम देने से सेहत भी अच्छी रहती है और काम भी मर्ज़ी से होता है।

ऊपर की रिवायतों से यह भी मालूम हुआ कि घर में सामान की कमी कोई ऐब और शर्म की बात नहीं है। इनसान की असल शराफ़त उसके अच्छे अख़्लाक़, उम्दा सिफ़ात, ख़ुदा से डरने, इबादत की पाबन्दी और तक़्वे व पाकीज़गी की ज़िन्दगी है। उम्दा कपड़ों और बंगलों से या सोफ़ासेट और मेज़ कुर्सियों से, भड़कदार लिबास और सजे हुए कमरों से इनसान में कोई शराफ़त नहीं आ जाती। अगर कोई शख़्स पचास लाख के बंगले में रहता है और बद्-अख़्लाक़ी भी है तो उसमें कोई शराफ़त नहीं। किसी के चैम्बर में सोफ़ासेट है, दीवारें सजी हुई हैं, ख़ुबसूरत पर्दे टंगे हुए हैं, मगर नमाज़ें ग़ारत की जाती हैं, ज़कातें नहीं दी जातीं तो यह कोई बड़ाई नहीं। ऊपर से अगर ये चीज़ें हराम माल से हों तो दोज़ख़ में ले जाने का ज़रिया बनेंगी। दोज़ख़ में सख़्त अज़ाब भी है और बहुत बड़ी ज़िल्लत भी। उस ज़िल्लत के मुक़ाबले में

यहाँ के दुनियादारों के सामने नाक नीची करके रहना और शान व दबदबे से बाज़ रहना कोई बे-आबरूई नहीं है। समझदार वह है जो आख़िरत की फ़िक्र करे। फ़राइज़ पूरे करे और हराम से बचे। जो दोज़ख़ के काम करता हो वह कैसे बड़ा आदमी हो सकता है? बड़ा आदमी वह है जो अल्लाह तआ़ला की फ़रमाँबरदारी में लगा हो।

ला हौ-ल व ला कुव्व-त इल्ला बिल्लाहि

इस कलिमे की बहुत फ़ज़ीलत हदीसों में बयान हुई है। हज़रत अबू मूसा अश्अ़री रज़ियल्लाहु अ़न्हु से एक मर्तबा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि ऐ अ़ब्दुल्लाह! क्या मैं तुमको ऐसा कलिमा न बताऊँ जो जन्नत के ख़ज़ानों में से एक ख़ज़ाना है? अ़र्ज़ किया ज़रूर इरशाद फ़रमाइये। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया वह कलिमा **ला हौ-ल व ला कुव्व-त इल्ला बिल्लाहि** है। (बुख़ारी शरीफ़)

हज़रत मुआ़ज़ बिन जबल रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत किया गया है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनसे फ़रमाया क्या तुमको जन्नत के दरवाज़ों में से एक दरवाज़ा न बता दूँ? अ़र्ज़ किया वह क्या है? फ़रमाया वह **ला हौ-ल व ला कुव्व-त इल्ला बिल्लाहि** है। (तरग़ीब)

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिसने **ला इला-ह इल्लल्लाहु वल्लाहु अकबर् वल्हम्दु लिल्लाहि व सुब्हानल्लाहि कसीरुन् व ला हौ-ल व ला कुव्व-त इल्ला बिल्लाहि** कहा उसके गुनाहों का कफ़्फ़ारा हो जायेगा अगरचे समुद्र के झागों के बराबर हों। (हाकिम)

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि बाक़ियात सालिहात (यानी ऐसी चीज़ें जो पूरी की पूरी ख़ैर हों और बाक़ी रहने वाली हों) की कसरत करो। अ़र्ज़ किया गया वे क्या हैं? फ़रमाया वे ये हैं: **अल्लाहु अकबर ला इला-ह इल्लल्लाहु सुब्हानल्लाहि वल्हम्दु लिल्लाहि व ला हौ-ल व ला कुव्व-त इल्ला बिल्लाहि**। (अहमद व निसाई)

एक हदीस में इरशाद है कि **ला हौ-ल व ला कुव्व-त इल्ला बिल्लाहि**।

(अहमद व तरग़ीब)

अनेक सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम से नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद नक़ल है कि **ला हौ-ल व ला क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाहि** निन्नानवे बीमारियों की दवा है जिनमें सबसे आसान ग़म है। (यानी ग़म की तो उसके सामने कोई हक़ीक़त ही नहीं)। (कंज़ुल्-उम्माल)

फ़ायदाः आम रिवायतों में सिर्फ़ **ला हौ-ल व ला क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाहि** ही बयान किया गया है अलबत्ता मुस्लिम शरीफ़ की बाज़ रिवायतों में **ला हौ-ल व ला क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाहि** के साथ **अल्-अज़ीज़िल् हकीम** भी नक़ल किया गया है। और क़ुरआन पाक के हिफ़्ज़ के लिए जो दुआ इमाम तिर्मिज़ी रह० ने नक़ल की है उसमें **अल्-अलिय्यिल् अज़ीम** का इज़ाफ़ा है।

फ़ायदाः ला हौ-ल व ला क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाहि का मतलब यह है (जो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से रिवायत किया गया है) कि गुनाहों से बचने का कोई ज़रिया नहीं, मगर अल्लाह की मदद के साथ।

(कंज़ुल्-उम्माल)

तीन कलिमात जिनके पढ़ने का बेइन्तिहा सवाब है

हदीसः (90) उम्मुल् मोमिनीन हज़रत जुवैरिया रज़ियल्लाहु अन्हा का बयान है कि एक दिन फ़ज्र की नमाज़ से फ़ारिग़ होकर रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मेरे पास से सुबह ही सुबह बाहर तशरीफ़ ले गये। उस वक़्त मैं अपने मुसल्ले पर थी। फिर चाश्त का वक़्त हो जाने के बाद आप तशरीफ़ लाये। उस वक़्त मैं उसी नमाज़ की जगह बैठी हुई थी जहाँ आपने मुझे छोड़ा था। आपने मुझसे दरियाफ़्त फ़रमाया क्या तुम उस वक़्त से लेकर अब तक उसी हालत पर हो, जिस पर मैंने तुमको छोड़ा था? अर्ज़ किया जी हाँ! आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया मैंने तुमसे जुदा होने के बाद चार कलिमात तीन मर्तबा पढ़े हैं तुमने जिस क़द्र भी आज (लगातार दो-तीन घण्टे तक ज़िक्र किया है अगर इसके मुक़ाबले में उन कलिमात को तौला जाये तो उन कलिमात का वज़न ज़्यादा हो जायेगा। (वे चार कलिमात ये हैं जिनको तीन मर्तबा पढ़ा):

(1) सुब्हानल्लाहि व बिहम्दिही अ-द-द ख़ल्क़िही (2) सुब्हानल्लाहि व बिहम्दिही रिज़ा नफ़्सिही (3) सुब्हानल्लाहि व बिहम्दिही ज़ि-न-त अरशिही (4) सुब्हानल्लाहि व बिहम्दिही मिदा-द कलिमातिही। (मिश्कात पेज 200)

हज़रत जुवैरिया रज़ि० कैसे उम्मुल मोमिनीन बन गईं

तशरीहः हज़रत जुवैरिया रज़ियल्लाहु अन्हा हारिस बिन अबी ज़रार की बेटी थीं, जो पहले यहूदी थे बाद में इस्लाम कबूल किया। शाबान सन् 5 हीजरी में बनू मुस्तलक से हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जिहाद किया। उस लड़ाई में बनू मुस्तलक को हार हुई। उनके दस आदमी मारे गये और बहुत बड़ी तायदाद में मुसलमानों के हाथ कैदी आ गये। उन कैदियों में हज़रत जुवैरिया रज़ियल्लाहु अन्हा भी थीं। जंग में जो कैदी हाथ आये इस्लाम के कानून के मुताबिक अमीरूल मोमिनीन की मर्ज़ी और राय पर उनको गुलाम और बाँदी बनाया जा सकता है। हज़रत जुवैरिया रज़ियल्लाहु अन्हा चूँकि कैद होकर आयी थीं, इसलिये यह भी तकसीम में आ गईं यानी हज़रत साबित बिन कैस रज़ियल्लाहु अन्हु या उनके चचाज़ाद भाई को दे दी गईं। हज़रत जुवैरिया ने बाँदी बनकर रहना पसन्द न किया और अपने आका से नौ औकिया सोने पर किताबत का मामला कर लिया। एक औकिया चालीस दिर्हम का होता है। किताबत इसको कहते हैं कि बाँदी और गुलाम का आका से इस तरह मामला हो जाये कि मख़्सूस और मुतैयन रकम आका को अदा कर दे तो आज़ाद हो जाये।

हज़रत जुवैरिया रज़ियल्लाहु अन्हा ने किताबत का मामला करके दरबारे रिसालत में हाज़री दी और अर्ज़ किया कि मैं सरदारे कौम हारिस बिन अबी ज़रार की बेटी हूँ और मैंने किताबत का मामला कर लिया है और मैं आप से मदद चाहती हूँ। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया क्या तुम्हें इससे बेहतर राह न बता दूँ? अर्ज़ किया वह क्या? फ़रमाया कि तुम्हारी तरफ़ से मैं माल अदा कर दूँ और तुम से निकाह कर लूँ। अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! मुझे मन्ज़ूर है। चुनाँचे आपने उनकी तरफ़ से माल अदा फ़रमा दिया और इस तरह उनको आज़ाद कराकर उनसे निकाह फ़रमा लिया।

हज़राते सहाबा का बेमिसाल अदब

जब आपने उनसे निकाह फ़रमा लिया तो सारे मदीने में ख़बर गूंज गयी, उनकी कौम और ख़ानदान के सैकड़ों गुलाम और बाँदी हज़राते सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम के घरों में मौजूद थे। नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इस मुबारक निकाह की ख़बर फैलते ही हज़राते सहाबा किराम ने

इस एहतिराम और अदब के पेशे नज़र कि अब तो यह नबी पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ससुराल वाले हो गये, ये तमाम गुलाम और बाँदी आज़ाद कर दिये।

हज़रत जुवैरिया रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने फ़रमाया कि मैंने इस बारे में हुज़ूरे अक़्दस सल्ल० से गुफ़्तगू भी न की थी, मुसलमानों ने ख़ुद ही मेरी कौम और ख़ानदान वालों को आज़ाद कर दिया जिसकी ख़बर मेरे चचा की लड़की ने मुझे दी। हज़रत आ़यशा फ़रमाती हैं कि मैंने कोई औ़रत ऐसी नहीं देखी जो जुवैरिया से बढ़कर अपनी कौम के लिये बड़ी बरकत वाली साबित हुई हो। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनसे निकाह किया तो इसकी वजह से बनू मुस्तलक़ के सौ घराने आज़ाद हो गये।

जब नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत जुवैरिया रज़ियल्लाहु अ़न्हा को आज़ाद कराके उनसे अपना निकाह कर लिया तो हज़रत जुवैरिया के वालिद नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में आये और अ़र्ज़ किया:

"मेरी बेटी इ़ज़्ज़त वाली और सम्मान वाली है जिसे कैदी बनाकर रखना गवारा नहीं है लिहाज़ा आप उसे छोड़ दीजिये"

आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया अगर मैं उसे इख़्तियार दूँ कि जी चाहे तो चली जाये और चाहे तो मेरे पास रहे तो इसको तुम अच्छा समझते हो? हारिस ने जवाब दिया जी हाँ! बहुत मुनासिब है। उसके बाद हारिस अपनी बेटी के पास आये और पूरा वाकिआ़ नक़्ल किया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तुझे इख़्तियार दिया है कि चाहे तो चली जाये, लिहाज़ा मेरे साथ चल। हज़रत जुवैरिया रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने जवाब में फ़रमाया:

"मैं अल्लाह और रसूलुल्लल्लाह को इख़्तियार करती हूँ तुम्हारे साथ न जाऊँगी।"

हज़रत जुवैरिया के बाप का मुसलमान होना

नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का एक मोजिज़ा (चमत्कार) देखकर हज़रत जुवैरिया रज़ियल्लाहु अ़न्हा के वालिद भी मुसलमान हो गये थे जिसकी तफ़सील यह है कि जंग के मौके पर जब बनू मुस्तलक़ को शिकस्त

हो गयी और मुसलमानों ने उनको क़ैद कर लिया जिनमें हज़रत जुवैरिया भी थीं तो उस मौक़े पर उनके वालिद किसी तरह फ़रार हो गये और क़ैद होने से बच गये। बाद में अपनी बेटी को छुड़ाने के लिये मदीना मुनव्वरा का रुख़ किया और माल देकर छुड़ाने की नीयत से बहुत-से ऊँट साथ लेकर चले। चलते-चलते उन ऊँटों में से दो ऊँट दिल को बहुत ही ज़्यादा भा गये, जिन्हें अक़ीक़ की घाटियों में छुपाकर बाक़ी ऊँट लेकर बारगाहे रिसालत में हाज़िर हुए और अर्ज़ किया कि हमारी बेटी आपकी क़ैद में आ गयी है लिहाज़ा उसके बदले ये ऊँट लेकर उसे छोड़ दीजिये। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि वे ऊँट कहाँ हैं जिनको तुम अ़क़ीक़ की घाटियों में छुपाकर आये हो? यह सुनते ही हज़रत जुवैरिया रज़ियल्लाहु अ़न्हा के वालिद ने कलिमा शाहदत पढ़ लिया और यह कहा कि वाक़ई आप अल्लाह के रसूल हैं, उन दोनों ऊँटों के छुपाने का इल्म अल्लाह के सिवा किसी को नहीं था। जब आपने उनके मुताल्लिक़ ख़बर दी तो ज़रूर अल्लाह तआ़ला ने आपको ख़बर दी है, उनके साथ उनके दो बेटों और क़ौम के बहुत-से लोगों ने इस्लाम क़बूल किया।

नाम बदलना

हज़रत नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम नामुनासिब नामों को बदल दिया करते थे। हज़रत जुवैरिया रज़ियल्लाहु अ़न्हा का नाम **बर्रा** था आपने बदलकर जुवैरिया रखा। (**बर्रा** नेक के मायने में है, इसको इसलिये तब्दील किया कि इससे ख़ुद अपनी तारीफ़ करना लाज़िम आता है और नेक होने का दावा ज़ाहिर होता है)। चूँकि इस किताब में हज़रत जुवैरिया रज़ियल्लाहु अ़न्हा की रिवायत पहली बार आयी है इसलिये हमने उनका तआ़रुफ़ (परिचय) करा दिया है, अगरचे बात लम्बी हो गयी मगर मुफ़ीद बहुत है। यह हालात किताब अल्-इसाबा और अल्-इस्तीआ़ब से लिए गये हैं।

यहाँ यह बात देखने की है कि एक यहूदी औ़रत रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बा बरकत सोहबत में आते ही कैसी इबादत करने वाली और अल्लाह का ज़िक्र करने वाली बन गयी कि घण्टों मुसल्ले पर बैठी हुई अल्लाह से लौ लगा रही है। दर हक़ीक़त हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तालीम व तरबियत से मर्दों और औ़रतों में बन्दगी की शान

उजागर हो जाती थी और ख़ालिक़ व मख़्लूक़ का रिश्ता बहुत मज़बूत हो जाता था। बन्दे अपने ख़ालिक़ को पहचानने लगते थे, और ख़ालिक़ के अहकाम को पूरा करने के लिये मर-मिटते थे और दिल में अपने ख़ालिक़ व मालिक की याद बसाते थे और ज़बान को भी उसकी याद में तर रखते थे। आज भी जो मर्द व औरत सुन्नत की पैरवी के ज़रिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से नज़दीक हैं दिल व जान और ज़बान से ज़िक्रे इलाही में लगे रहते हैं।

हदीस शरीफ़ से एक बात यह मालूम हुई कि अ़मल का ज़्यादा होना ही सवाब का ज़रिया नहीं है बल्कि बाज़ मर्तबा थोड़ा अ़मल भी बड़े अ़मल से बढ़ जाता है जिसका सवाब ज़्यादा मिल जाता है, चुनाँचे एक मर्तबा **सुब्हानल्लाहि व बिहम्दिही** कहने का बहुत ज़्यादा सवाब है, फिर इस सवाब में बेइन्तिहा इज़ाफ़ा हो गया जबकि ये अलफ़ाज़ बढ़ा दिये:

अ़-द-द ख़ल्क़िही, रिज़ा नफ़्सिही, वज़ि-न-त अ़र्शिही, मिदा-द कलिमातिही।

हम्द व तसबीह ज़बान से एक मर्तबा निकली और उसकी मात्रा बढ़ाने के लिये ऊपर वाले अलफ़ाज़ बढ़ा दिये गये। सब मुसलमान माओं और बहनों से दरख़्वास्त है कि कम-से-कम सुबह शाम एक-एक तसबीह इन चीज़ों की इस तरह पढ़ा करें।

(1) **सुब्हानल्लाहि व बिहम्दिही अ़-द-द ख़ल्क़िही**

तर्जुमाः मैं अल्लाह की पाकी बयान करती हूँ और उसकी तारीफ़ करती हूँ जिस क़द्र उसकी मख़्लूक़ है।

(2) **सुब्हानल्लाहि व बिहम्दिही रिज़ा नफ़्सिही**

तर्जुमाः मैं अल्लाह की पाकी बयान करती हूँ और उसकी तारीफ़ करती हूँ जिससे वह राज़ी हो जाए।

(3) **सुब्हानल्लाहि व बिहम्दिही वज़ि-न-त अ़र्शिही**

तर्जुमाः मैं अल्लाह की पाकी बयान करती हूँ और उसकी तारीफ़ करती हूँ जिस क़द्र उसके अ़र्श का वज़न है।

(4) **सुब्हानल्लाहि व बिहम्दिही मिदा-द कलिमातिही।**

तर्जुमाः मैं अल्लाह की पाकी बयान करती हूँ और उसकी तारीफ़ करती हूँ जिस क़द्र उसकी तारीफ़ के बेइन्तिहा कलिमात लिखने की रोशनाई हो।

अगर सुबह शाम न हो सके तो कम-से-कम एक तसबीह 24 घण्टे में तो ज़रूर पढ़ लिया करें, अल्लाह तआला अमल की तौफ़ीक़ दे। आमीन।

कलिमा-ए-तौहीद के फ़ज़ाइल

हदीसः (91) हज़रत अबू अय्यूब अन्सारी रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिसने दस मर्तबा यूँ कहाः

ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क लहू लहुल् मुल्कु व लहुल् हम्दु व हु-व अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर।

तर्जुमाः कोई माबूद नहीं अल्लाह के सिवा, वह तन्हा है, उसका कोई शरीक नहीं, उसी के लिये मुल्क है और उसी के लिये तारीफ़ है और वह हर चीज़ पर क़ादिर है।

तो उसको ऐसे चार गुलाम आज़ाद करने का सवाब मिलेगा जो हज़रत इसमाईल अलैहिस्सलाम की औलाद से हों। (मुस्लिम शरीफ़ पेज 344 जिल्द 2)

तशरीहः जब मुसलमान शरई जिहाद करते थे तो उनके पास बाँदी और गुलाम भी होते थे। अमीरुल् मोमिनीन जिहाद में शरीक होने वाले मुसलमानों पर उन काफ़िर कैदियों को बाँट देते थे जिनको कैद कर लिया जाता था। ये जिहाद करने वालों की मिल्कियत हो जाते थे। फिर उनमें से बहुत-से इस्लामी अख़्लाक़ और मुसलमानों के अच्छे आमाल से मुतास्सिर (प्रभावित) होकर इस्लाम क़बूल कर लेते थे। गुलाम आज़ाद करने की बड़ी फ़ज़ीलत हदीस शरीफ़ में आई है। एक हदीस में इरशाद है कि जब किसी ने मुसलमान गुलाम आज़ाद कर दिया अल्लाह उसके हर-हर अंग को यानी आज़ाद करने वाले के जिस्म के हर-हर हिस्से को दोज़ख़ से आज़ाद फ़रमा देंगे। (बुख़ारी व मुस्लिम)

बयान की गयी हदीस में फ़रमाया कि जिसने ऊपर ज़िक्र हुए कलिमे को (जिसे हम कलिमा-ए-तौहीद कहते हैं) दस बार पढ़ लिया तो उसको ऐसे चार गुलाम आज़ाद करने का सवाब मिलेगा जो हज़रत इसमाईल अलैहिस्सलाम की औलाद से हों। एक आम गुलाम आज़ाद करने का सवाब ही इतना ज़्यादा है फिर हज़रत इसमाईल अलैहिस्सलाम की औलाद से गुलाम आज़ाद करने का सवाब और ज़्यादा बढ़ जाता है।

इस कलिमे को दस बार पढ़ना चाहें तो दो-तीन मिनट में पढ़ सकते हैं।

ज़रा-सी देर के अमल पर इतना बड़ा सवाब इनायत फ़रमाना अल्लाह तआ़ला का कितना बड़ा एहसान है।

हज़रत उबादा बिन सामित रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो शख़्स रात को (किसी वक़्त) इस हालत में जागे कि उसके मुँह से (ज़िक्र के) अलफ़ाज़ निकल रहे हों और उसने:

ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क लहू लहुल् मुल्कु व लहुल् हम्दु व हु-व अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर। अल्हम्दु लिल्लाहि व सुब्हानल्लाहि व ला इला-ह इल्लल्लाहु वल्लाहु अकबरु व ला हौ-ल व ला क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाहि रब्बिग़फ़िर् ली

कहा, फिर **रब्बिग़फ़िर् ली** कहा या फ़रमाया कि दुआ की तो उसकी दुआ कबूल हो गयी। फिर अगर वुज़ू किया और (तहज्जुद की) नमाज़ पढ़ ली तो उसकी नमाज़ कबूल कर ली जायेगी। (बुख़ारी शरीफ़)

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने बयान फ़रमाया कि मैंने रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सुना है कि जो शख़्स **ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क लहू लहुल् मुल्कु व लहुल् हम्दु व हु-व अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर** कहे जिससे उसका मक़सद सिर्फ़ अल्लाह की रिज़ा हो तो अल्लाह तआ़ला उसको जन्नातुन्नईम में दाख़िल फ़रमायेगा। (तिबरानी)

इस कलिमे को कलिमा-ए-तौहीद और कलिमा-ए-चहारुम कहते हैं जैसा कि:

सुब्हानल्लाहि वल्हम्दु लिल्लाहि व ला इला-ह इल्लल्लाहु वल्लाहु अकबर

को कलिमा-ए-तमजीद और कलिमा-ए-सोम कहते हैं। हदीसों में इनके पढ़ने की फ़ज़ीलतें बयान हुई हैं, और इनके नाम या नम्बर अ़वाम में मशहूर हो गये हैं और पहचान करने के लिये इस तरह नाम रखने में कोई हर्ज भी नहीं है।

कलिमा-ए-तौहीद को बहुत-से मौक़ों में पढ़ने की तरग़ीब दी गयी है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज के मौक़े पर जब सफ़ा-मरवा (पहाड़ियों) की सई (यह हज और उमरे का एक रुक्न है) फ़रमाई तो सफ़ा पर इस कलिमे को पढ़ा और इन लफ़्ज़ों का इज़ाफ़ा फ़रमाया:

ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू अन्ज-ज़ वअ़्दहू व न-स-र अ़ब्दहू व ह-ज़मल् अह्ज़ा-ब वह्दहू

फिर सफ़ा से चलकर मरवा पर पहुँचे तो वहाँ भी वही अमल किया जो सफ़ा पर किया था। (मुस्लिम शरीफ़)

तिर्मिज़ी शरीफ़ में है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि सबसे बेहतरीन दुआ अरफ़ा के दिन (यानी हज के मौक़े पर अरफ़ात) की दुआ है और सबसे बेहतरीन कलिमा जो मैंने और मुझसे पहले नबियों ने (इस मौक़े पर) कहा यह है:

ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क लहू लहुल् मुल्कु व लहुल् हम्दु व हु-व अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर।

कलिमा-ए-तौहीद के ज़िक्र हुए अलफ़ाज़ के साथ दूसरी रिवायतों में **बियदिहिल् ख़ैरु** और **युह्यी व युमीतु** और **व हु-व हय्युल् ला यमूतु** का इज़ाफ़ा भी फ़रमाया है।

हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिस शख़्स ने बाज़ार में यह कहा:

ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क लहू लहुल् मुल्कु व लहुल् हम्दु युह्यी व युमीतु व हु-व हय्युल् ला यमूतु बियदिहिल् ख़ैरु व हु-व अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर

तर्जुमा: कोई माबूद नहीं अल्लाह के सिवा वह तन्हा है उसका कोई शरीक नहीं, उसी के लिये मुल्क है और उसी के लिये सब तारीफ़ है, वही ज़िन्दा फ़रमाता है और वही मौत देता है और वह हमेशा ज़िन्दा है उसको मौत नहीं आयेगी, और वह हर चीज़ पर क़ादिर है।

तो उसके लिये अल्लाह तआ़ला दस लाख नेकियाँ लिख देंगे, और उसके दस लाख गुनाह माफ़ फ़रमा देंगे और उसके दस लाख दरजे बुलन्द फ़रमा देंगे और उसके लिये जन्नत में एक घर बना देंगे। (तिर्मिज़ी व इब्ने माजा)

हज़रत अ़ब्दुर्रहमान बिन ग़नम रज़ियल्लाहु अन्हु हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से रिवायत करते हैं कि जो शख़्स मग़रिब और फ़ज्र की नमाज़ से फ़ारिग़ होकर अपनी जगह से हटे बग़ैर (उसी तरह) टाँगें मोड़े हुए (जिस तरह अत्तहिय्यात पढ़ने के लिये बैठा है) दस बार:

ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क लहू लहुल् मुल्कु व लहुल् हम्दु युह्यी व युमीतु व हु-व हय्युल् ला यमूतु बियदिहिल् ख़ैरु व हु-व अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर

पढ़ ले तो हर बार के बदले उसके लिये दस नेकियाँ लिख दी जायेंगी और ये कलिमात हर तकलीफ़ से और शैतान मरदूद से उसके लिये हिफ़ाज़त की चीज़ बन जायेंगे और सिवाय शिर्क के कोई गुनाह उसको हलाक न कर सकेगा। और यह शख़्स सबसे अफ़ज़ल होगा, अलावा उसके कि कोई शख़्स इससे बढ़ जाये (यानी) इससे ज़्यादा कह ले जो इसने कहा। (मिश्कात)

बाज़ रिवायतों में है कि इन कलिमात को किसी से बात करने से पहले-पहले पढ़ ले और बाज़ रिवायतों में इन कलिमात को अस्र की नमाज़ से फ़ारिग़ होकर पढ़ना भी आया है। (तरग़ीब)

हज़रत मुग़ीरा बिन शुअ़बा रज़ियल्लाहु अ़न्हु रिवायत फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद यह पढ़ते थे:

ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क लहू लहुल् मुल्कु व लहुल् हम्दु व हु-व अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर। अल्लाहुम्-म ला मानि-अ़ लिमा अअ़्तै-त व ला मुअ़्ति-य लिमा मनअ़्-त व ला यन्फ़अ़ु ज़ल्जद्दि मिन्कल् जद्दु।

तर्जुमाः कोई माबूद नहीं अल्लाह के सिवा, वह तन्हा है उसका कोई शरीक नहीं, उसी के लिये मुल्क और उसी के लिये तारीफ़ है, और वह हर चीज़ पर क़ादिर है। ऐ अल्लाह! तू जो कुछ अ़ता फ़रमाये उसका कोई रोकने वाला नहीं और जो कुछ तू रोक ले उसका कोई देने वाला नहीं। और किसी माल वाले को उसका माल तेरे फ़ैसले के मुक़ाबले में कोई नफ़ा नहीं दे सकता।

फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद जो तसबीहात पढ़ने को बतायी हैं उनके पढ़ने के कई तरीक़े बयान किए गये हैं, उनमें से एक यह है कि 33 बार **सुब्हानल्लाहि** 33 बार **अल्हम्दु लिल्लाहि** 33 बार **अल्लाहु अकबर** कहे, इस तरह निन्नानवे (99) अ़दद हो जाते हैं और सौ (100) का अ़दद पूरा करने के लिए **ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क लहू लहुल् मुल्कु व लहुल्हम्दु व हु-व अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर** एक बार पढ़ ले। (मिश्कात शरीफ़

इस्तिग़फ़ार

अल्लाह के ज़िक्र में इस्तिग़फ़ार की भी बड़ी अहमियत है। अल्लाह तआ़ला से गुनाहों की मग़फ़िरत चाहने को इस्तिग़फ़ार कहते हैं। अल्लाह

तआला ने अपने नबी पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को इस्तिग़फ़ार का हुक्म देते हुए इरशाद फ़रमाया कि:

फ़-सब्बिह् बिहम्दि रब्बि-क वस्तग़फ़िर्हु इन्नहू का-न तव्वाबा

तर्जुमाः पस आप अपने रब की तसबीह और तारीफ़ बयान कीजिये और उससे मग़फ़िरत की दरख़्वास्त कीजिये, बेशक वह बड़ा तौबा क़बूल फ़रमाने वाला है।

और आम मोमिनों को इस्तिग़फ़ार का हुक्म देते हुए इरशाद फ़रमाया किः

व मा तुक़द्दिमू लि-अन्फ़ुसिकुम् मिन् ख़ैरिन् तजिदूहु अिन्दल्लाहि हु-व ख़ैरंव्-व अअ्-ज़-म अजरा, वस्तग़फ़िरुल्ला-ह इन्नल्ला-ह ग़फ़ूरुर्रहीम।

तर्जुमाः और जो नेक अमल अपने लिये आगे भेज दोगे उसको अल्लाह के पास पहुँचकर उससे अच्छा और सवाब में बड़ा पाओगे, और अल्लाह से गुनाह माफ़ कराते रहो, बेशक अल्लाह माफ़ करने वाला रहम करने वाला है।

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया है कि (जब) शैतान (मर्दूद हो गया तो उस) ने कहा कि- ऐ रब! तेरी इज़्ज़त की क़सम है मैं तेरे बन्दों को हमेशा बहकाता रहूँगा, जब तक उनकी रूहें उनके जिस्मों में रहेंगी। अल्लाह तआला ने फ़रमाया कि मुझे क़सम है अपनी इज़्ज़त व जलाल की और अपने बुलन्द मुक़ाम की जब तक वे मुझसे इस्तिग़फ़ार करते रहेंगे मैं उनको बख़्शता रहूँगा। (अहमद)

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो कोई: **अस्तग़फ़िरुल्लाहल्लज़ी ला इला-ह इल्ला हुवल् हय्युल् क़य्यूमु व अतूबु इलैहि** कहे उसकी मग़फ़िरत कर दी जायेगी अगरचे मैदाने जिहाद से भागा हो। (मिश्कात शरीफ़)

एक हदीस में है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया है कि जिसको यह पसन्द हो कि उसका आमालनामा उसको ख़ुश करे तो चाहिये कि ख़ूब ज़्यादा इस्तिग़फ़ार करता रहे। (तरग़ीब)

मोमिन बन्दों को चाहिये कि दूसरे ज़िक्रों और विर्दों के साथ इस्तिग़फ़ार की कसरत को भी मामूल बनायें। कम-से-कम सुबह व शाम सौ-सौ बार तो इस्तिग़फ़ार पढ़ ही लिया करें। इसके अलावा जिस क़द्र मुमकिन हो इस्तिग़फ़ार की कसरत करें।

इस्तिग़फ़ार के अलफ़ाज़ अभी-अभी दो रिवायतों में गुज़र चुके हैं उनको इख़्तियार करें, और कुछ भी याद न होता हो तो **अल्लाहुम्मग़्फ़िर् ली** ही ख़ूब ज़्यादा पढ़ते रहें। इस्तिग़फ़ार के फ़ायदे तफ़सील के साथ किताब के आख़िर में आ रहे हैं, इन्शा-अल्लाह तआला वहाँ बुज़ुर्गों से नक़ल किये गये इस्तिग़फ़ार के अलफ़ाज़ भी लिख दिये हैं।

नबी पाक पर दुरूद व सलाम के फ़ज़ाइल

ज़िक्रों में दुरूद शरीफ़ को भी बहुत अहमियत हासिल है। क़ुरआन मजीद में दुरूद व सलाम का हुक्म वारिद हुआ है और हदीसों में इसकी बड़ी फ़ज़ीलत आयी है। हमने "दुरूद व सलाम के फ़ज़ाइल" के उनवान से एक मुस्तक़िल रिसाला लिखा है, यहाँ मुख़्तसर तरीक़े पर चन्द हदीसें दर्ज करते हैं।

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया है कि जो शख़्स एक बार मुझपर दुरूद पढ़े अल्लाह तआला उसपर दस रहमतें नाज़िल फ़रमायेगा और उसके दस गुनाह माफ़ होंगे और उसके दस दर्जे बुलन्द कर दिये जायेंगे। (निसाई शरीफ़) और उसके लिये दस नेकियाँ लिख दी जायेंगी और उसको दस ग़ुलाम आज़ाद करने के बराबर सवाब मिलेगा। (तरग़ीब)

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिसने मुझपर दुरूद पढ़ा और यूँ कहाः **अल्-मक़्अ़दल् मुक़र्र-ब अ़िन्द-क यौमल् क़ियामति, अल्लाहुम्-म अन्ज़िल्हु**

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! सय्यिदना मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को क़ियामत के दिन अपने नज़दीक मुक़ाम में नाज़िल कीजियो।

तो उसके लिये मेरी शफ़ाअ़त (सिफ़ारिश) ज़रूरी होगी। (मिश्कात)

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि अल्लाह के बहुत-से फ़रिश्ते ज़मीन में गश्त लगाते फिरते हैं और उनका का काम यह है कि मेरी उम्मत का सलाम मुझ तक पहुँचा देते हैं। (मिश्कात शरीफ़)

हज़रत अबू तलहा रज़ियल्लाहु अ़न्हु का बयान है कि एक दिन रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम (सहाबा के मजमे में) इस हालत में तशरीफ़

लाये कि आपके मुबारक चेहरे पर ख़ुशी ज़ाहिर हो रही थी। (मजमे में पहुँचकर) फ़रमाया कि जिबराईल मेरे पास आये और उन्होंने बताया कि अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं कि ऐ मुहम्मद! क्या तुमको यह बात ख़ुश न करेगी कि तुम्हारी उम्मत में से जो शख़्स तुम पर दुरूद भेजेगा मैं उसपर दस रहमतें नाज़िल करूँगा। और जो शख़्स तुम्हारी उम्मत में से तुमपर सलाम भेजेगा तो मैं उसपर दस सलाम भेजूँगा। (मिश्कात शरीफ़)

इसलिए अगर कोई शख़्स हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर दुरूद भेजते हुए "दुरूद व सलाम" दोनों को मिला ले तो उसपर ख़ुदा तआ़ला की बीस इनायतें होंगी।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि जो शख़्स रसूलुल्लाह सल्ल० पर एक बार दुरूद शरीफ़ भेजेगा अल्लाह तआ़ला और उसके फ़रिश्ते उसपर सत्तर बार रहमत भेजेंगे। (मिश्कात शरीफ़)

मुल्ला अ़ली क़ारी रह० मिरक़ात शरहे मिश्कात में लिखते हैं कि मुमकिन है कि यह (यानी सत्तर रहमतें एक बार दुरूद के बदले में मिल जाना) जुमा के दिन के साथ ख़ास हो (इस दिन की बड़ाई व फ़ज़ीलत की वजह से सवाब बढ़ा दिया जाता हो और बजाय दस के सत्तर रहमतें नाज़िल होती हों। वल्लाहु अअ़्लम)।

हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अकरम सल्ल० ने इरशाद फ़रमाया कि वह पूरा बख़ील और कन्जूस है जिसके सामने मेरा ज़िक्र हो और उसने मुझपर दुरूद न पढ़ा। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

एक हदीस में इरशाद है कि ज़ुल्म की बात है कि मैं किसी के सामने ज़िक्र किया जाऊँ और वह मुझपर दुरूद न भेजे। (कंज़ुल उम्माल)

हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने इरशाद फ़रमाया कि दुआ़ आसमान व ज़मीन के दरमियान लटकी रहती है, ज़रा भी आगे नहीं चढ़ती जब तक तू अपने नबी पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर दुरूद न भेजे।

(तिर्मिज़ी शरीफ़)

और हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने इरशाद फ़रमाया कि हर दुआ़ अटकी रहती है जब तक तू अपने नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर दुरूद न भेजे। (कंज़ुल उम्माल)

इन रिवायतों से दुरूद शरीफ़ की चन्द फ़ज़ीलतें मालूम हुईं। मोमिन बन्दों

को चाहिये कि दुरूद व सलाम की भी ख़ूब कसरत करें।

कोई मजलिस ज़िक्र और दुरूद व सलाम से ख़ाली न रहने दें

हदीसः (92) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो लोग किसी मजलिस में बैठे जिसमें उन्होंने अल्लाह का ज़िक्र न किया और अपने नबी पर दुरूद न भेजा तो यह मजलिस उनके लिये पूरी तरह नुक़सान होगी। अब अल्लाह चाहे तो उनको अज़ाब दे और चाहे तो उनको बख़्श दे।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 198)

तशरीहः मोमिन बन्दों को अल्लाह का ज़िक्र ख़ूब कसरत से करना चाहिये, कोई वक़्त ज़िक्र से ख़ाली न हो। क़ुरआन मजीद में इरशाद है:

اِنَّ فِىْ خَلْقِ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَاخْتِلَافِ الَّيْلِ وَالنَّهَارِ لَاٰيَاتٍ لِّاُولِى الْاَلْبَابِ، الَّذِيْنَ يَذْكُرُوْنَ اللّٰهَ قِيَامًا وَّقُعُوْدًا وَّعَلٰى جُنُوْبِهِمْ وَيَتَفَكَّرُوْنَ فِىْ خَلْقِ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ رَبَّنَا مَا خَلَقْتَ هٰذَا بَاطِلًا، سُبْحٰنَكَ فَقِنَا عَذَابَ النَّارِ۔

तर्जुमाः इसमें कोई शक व शुब्हा नहीं कि आसमानों के और ज़मीनों के बनाने में और एक के बाद एक रात और दिन के आने-जाने में दलीलें हैं अक़्ल वालों के लिये, जिनकी हालत यह है कि वे अल्लाह की याद करते हैं खड़े भी बैठे भी और लेटे भी, और आसमानों और ज़मीनों के पैदा होने में ग़ौर करते हैं कि ऐ हमारे परवर्दिगार! आपने इसको बेकार और बेमक़सद नहीं पैदा किया, सो हमको दोज़ख़ के अज़ाब से बचा दीजिये।

इस आयत में इरशाद है कि खड़े बैठे और लेटे अल्लाह तआला का ज़िक्र करते रहना चाहिये। बन्दे की यह बहुत बड़ी सआदत (नेक बख़्ती) है कि अपने रब का नाम ले और उसके ज़िक्र से अपनी ज़बान को तर रखे। पिछले पन्नों में ज़िक्र की फ़ज़ीलत, ज़िक्र के अलफ़ाज़ और ज़िक्र छोड़ देने की वईदें (डाँट डपट और सज़ा की धमकियाँ) तफ़सील के साथ गुज़र चुकी हैं। इस हदीस में इरशाद फ़रमाया है कि हर मजलिस में अल्लाह का ज़िक्र करें, और उसके नबी पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर दुरूद भेजें। जो मजलिस इन दोनों चीज़ों से ख़ाली होगी वह नुक़सान का सबब होगी। पहले एक हदीस गुज़र चुकी है कि जो लोग किसी ऐसी मजलिस से खड़े हुए जिसमें

अल्लाह का ज़िक्र नहीं किया वह ऐसे है जैसे मुर्दा गधे की लाश के पास बैठे थे उसको छोड़कर उठ खड़े हों। और यह मजलिस उनके हक में अफ़सोस का सबब होगी। (अबू दाऊद) और एक हदीस में फ़रमाया है कि जन्नतियों को कोई हसरत (मलाल और अफ़सोस) न होगी सिवाय इसके कि कोई घड़ी दुनिया में अल्लाह के ज़िक्र के बग़ैर गुज़र गयी थी। (हिस्ने हसीन)

ऊपर की हदीस में सिर्फ़ मजलिस का ज़िक्र है और बाज़ रिवायतों में यह भी है कि जो शख़्स किसी जगह लेटा और उस लेटने की जगह उसने अल्लाह का ज़िक्र न किया तो यह लेटना अल्लाह की तरफ़ से उसके लिये सरासर नुक़सान है। और जो शख़्स किसी चलने की जगह में चला जिसमें उसने अल्लाह का ज़िक्र न किया, तो यह चलना उसके लिये अल्लाह की तरफ़ से सरासर नुक़सान होगा। (तरग़ीब व तरहीब)

मोमिन बन्दों को चाहिये कि जहाँ कहीं हों और जिस जगह भी बैठें या लेटें या चलें, चाहे थोड़ी ही देर का लेटना बैठना या चलना हो कुछ न कुछ अल्लाह का ज़िक्र कर लिया करें।

मजलिस के आख़िर में उठने से पहले पढ़ने की दुआ़

हदीसः (93) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्ल० ने इरशाद फ़रमाया कि जो शख़्स किसी मजलिस में बैठा फिर उसमें उसकी बेजा बातें बहुत हो गयीं और उसने उस मजलिस से उठने से पहले यह पढ़ लियाः

सुब्हानकल्लाहुम्-म व बिहम्दि-क अश्हदु अल्ला इला-ह इल्ला अन्-त अस्तग़्फ़िरु-क व अतूबु इलै-क

तर्जुमाः मैं अल्लाह की पाकी बयान करता हूँ और उसकी तारीफ़ करता हूँ। मैं गवाही देता हूँ कि तेरे सिवा कोई माबूद नहीं, तुझसे गुनाहों की माफ़ी चाहता हूँ और तेरी बारगाह में तौबा करता हूँ।

तो जो कुछ उसने उस मजलिस में कहा है वह बख़्श दिया जायेगा।

(तिर्मिज़ी शरीफ़ पेज 495)

तशरीहः यह हदीस हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु के अलावा दूसरे सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम से भी रिवायत की गयी है। अबू दाऊद शरीफ़ में हज़रत अबू बरज़ा अस्लमी रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस

सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जब मजलिस से खड़े होने का इरादा फ़रमाते थे तो सबसे आख़िर में यही ज़िक्र हुए अलफ़ाज़ पढ़ते थे। एक शख़्स ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! आप ऐसे कलिमात पढ़ते हैं जो पहले नहीं पढ़े? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया मजलिस में जो कुछ हुआ हो ये कलिमात उसके लिये कफ़्फ़ारा बन जाते हैं।

हाफ़िज़ मुन्ज़री रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने "तरग़ीब व तरहीब" में हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से नक़ल किया है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जब किसी मजलिस में बैठते या नमाज़ पढ़कर फ़ारिग़ होते तो चन्द कलिमात अदा फ़रमाते थे, मैंने उन कलिमात के बारे में सवाल किया तो इरशाद फ़रमाया कि (इन कलिमात के पढ़ने का फ़ायदा यह है कि मजलिस में) अगर ख़ैर की बातें की होंगी तो ये कलिमात उन बातों पर क़ियामत के दिन तक मोहर बन जायेंगे, और अगर बुरी बातें की होंगी तो उनके लिये कफ़्फ़ारा बन जायेंगे। ये कलिमात वही हैं जो ऊपर गुज़रे। (निसाई शरीफ़)

मजलिस से उठने से पहले इनको ज़रूर पढ़ लेना चाहिये और तीन बार पढ़ ले तो बेहतर है क्योंकि बाज़ रिवायतों में यह अ़दद (संख्या) ज़िक्र हुआ है। (जैसा कि तरग़ीब में है, और उसमें यह और बढ़ाया है **इग़फ़िर ली व तुब् अ़लय्-य**) ज़रा-सी ज़बान हिलाने में कितना बड़ा नफ़ा हासिल होता है।

और यह भी जान लेना चाहिए कि ये कलिमात पढ़ लेने से बन्दों के हक़ माफ़ न होंगे, जैसे किसी की ग़ीबत की या ग़ीबत सुनी, या चुग़ली खाई तो उसके लिये हक़ वाले से माफ़ी माँगे, और अगर उसको ख़बर न हुई हो तो उसके लिये इतना ज़्यादा इस्तिग़फ़ार करे कि दिल गवाही दे दे कि उसके बारे में जो कुछ कहा था उसकी तलाफ़ी हो गयी। ख़ूब समझ लो।

तिलावत और ज़िक्र के बारे में चन्द अहकाम

हदीसः (94) हज़रत अ़ली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पाख़ाने (शौचालय) से निकलकर (वुज़ु के बग़ैर ही) हमको क़ुरआन शरीफ़ पढ़ाते थे और हमारे साथ गोश्त खा लेते थे और क़ुरआन मजीद (की तिलावत) से आपको ग़ुस्ल फ़र्ज़ होने वाली हालत के अ़लावा कोई चीज़ रोकने वाली न थी।

हदीसः (95) हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अबू बक्र (ताबिई रह०) फ़रमाते हैं

कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत अ़मर बिन हज़्म रह० के लिये मज़मून तहरीर फ़रमाया, उसमें यह बात (भी) थी कि क़ुरआन शरीफ़ को सिर्फ़ पाक आदमी ही छू सकता है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 50)

हदीसः (96) हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से रिवायत है कि हज़रत रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि उन घरों को (जिनके दरवाज़ों में मस्जिद से होकर गुज़रना पड़ता है) मस्जिद के रुख़ से फेर दो। (यानी दरवाज़ों का रुख़ बदल दो) क्योंकि मैं मस्जिद (के दाख़िल होने) को माहवारी के हाल वाली औ़रत के लिये और जिसपर गुस्ल फ़र्ज़ हो उसके लिए हलाल नहीं क़रार देता हूँ। (मिश्कात शरीफ़ पेज 50)

हदीसः (97) हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु का बयान है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि हैज़ वाली औ़रत (जो माहवारी से हो) और जिसपर गुस्ल फ़र्ज़ हो (मर्द हो या औ़रत) कुछ भी क़ुरआन शरीफ़ न पढ़े। (मिश्कात शरीफ़ पेज 49)

तशरीहः इन हदीसों में नापाक (जिसपर गुस्ल फ़र्ज़ हो) और हैज़ वाली औ़रत और बेवुज़ू के बाज़ शरई अहकाम बयान किये गये हैं। जिस पर गुस्ल फ़र्ज़ हो उसे 'जुनुब' कहते हैं, और औ़रत नमाज़ छूटने वाले दिनों में हो तो उसे 'हाइज़' (हैज़ वाली) कहते हैं। और जिसका वुज़ू न हो उसे 'मुहदिस' कहते हैं। इन तीनों के मुताल्लिक़ कुछ मसाइल हैं जो आगे दर्ज किये जाते हैं।

मसलाः 'जुनुब' और 'मुहदिस' नमाज़ नहीं पढ़ सकते। जब फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ने का वक़्त आ जाये तो जुनुब पर गुस्ल करना और मुहदिस पर वुज़ू करना फ़र्ज़ हो जाता है।

मसलाः माहवारी वाली औ़रत पर नमाज़ पढ़ना फ़र्ज़ नहीं है, जब माहवारी के दिन ख़त्म हो जायें तो नमाज़ के लिये गुस्ल करना फ़र्ज़ हो जाता है। अगर माहवारी के दिन ख़त्म होने से पहले किसी वजह से गुस्ल कर लिया तो उस गुस्ल से पाक न होगी, और पाक औ़रत के अहकाम उस पर जारी न होंगे।

मसलाः मुहदिस मर्द हो या औ़रत क़ुरआन शरीफ़ नहीं छू सकते अलबत्ता हिफ़्ज़ (मुँह ज़बानी) क़ुरआन शरीफ़ पढ़ सकते हैं। जब कोई शख़्स पेशाब या पाख़ाना करने या और किसी वजह से बेवुज़ू हो जाये तो वह खाना भी खा सकता है और क़ुरआन शरीफ़ भी पढ़ सकता है और कलिमा व दुरूद शरीफ़ व इस्तिग़फ़ार भी पढ़ सकता है, अलबत्ता क़ुरआन शरीफ़ नहीं

छू सकता। और न वुज़ू किये बग़ैर नमाज़ पढ़ सकता है, फ़र्ज़ नमाज़ हो या नफ़िल।

मसलाः जुनुब (जिसपर ग़ुस्ल फ़र्ज़ हो) और हाइज़ (माहवारी वाली औरत) को न क़ुरआन शरीफ़ पढ़ने की इजाज़त है न छूने की।

मसलाः क़ुरआन शरीफ़ के अलावा पढ़ने की जो चीज़ें हैं जैसे पहला दूसरा तीसरा चौथा कलिमा और दुरूद शरीफ़ और इस्तिग़फ़ार को जुनुब और हाइज़ सब पढ़ सकते हैं, बल्कि अगर किसी आयत को दुआ के तौर पर जुनुब और हाइज़ पढ़ें तो उसके पढ़ने की भी इजाज़त है। जैसे **रब्बना आतिना फ़िद्दुन्या ह-स-नतंव्-व फ़िल्-आख़िरति ह-स-नतंव्-व क़िना अज़ाबन्नार** अलबत्ता बतौर तिलावत पढ़ने की इजाज़त नहीं।

मसलाः जिस शख़्स पर ग़ुस्ल फ़र्ज़ हो और जो औरत माहवारी से हो उसे मस्जिद में दाख़िल होना जायज़ नहीं है।

दस्तूरुल अमल

तिलावत और ज़िक्र और दुरूद व सलाम के फ़ज़ाइल मालूम हुए। अब हर शख़्स अपने दस्तूरुल अमल (एक कार्यक्रम) बना ले जिसपर अमल करता रहे। हम एक ऐसा दस्तूरुल अमल लिख रहे हैं जिसपर आसानी से हर शख़्स अमल कर सकता है।

सुबह व शाम

(1) सुबह को सूरः यासीन पढ़ें और उसके साथ फ़ुरसत के हिसाब से एक या दो पारे क़ुरआन पाक के पढ़ें।

(2) सुबह शाम सौ बार तीसरा कलिमा यानीः

सुब्हानल्लाहि वल्हम्दु लिल्लाहि व ला इला-ह इल्लल्लाहु वल्लाहु अकबरु व ला हौ-ल व ला क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाहिल् अलिय्यिल् अज़ीम पढ़ें।

(3) सौ बार **अस्तग़फ़िरुल्लाहल्लज़ी ला इला-ह इल्ला हुवल् हय्युल् क़य्यूमु व अतूबु इलैहि** पढ़ें।

(4) सौ बार दुरूद शरीफ़ पढ़ें। (नमाज़ में जो दुरूद शरीफ़ पढ़ते हैं वह बेहतर है)।

(5) सौ बार **ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क लहू लहुल् मुल्कु व लहुल् हम्दु व हु-व अला कुल्लि शैइन् क़दीर।**

(6) सय्यिदुल् इस्तिग़फ़ार एक बार।

(7) **सुब्हानल्लाहि व बिहम्दिही अ-द-द ख़ल्क़िही** (तीन बार) **सुब्हानल्लाहि व बिहम्दिही मिदा-द कलिमातिही** (तीन बार)।

अगर फ़ज्र की नमाज़ जमाअ़त के साथ (1) पढ़कर उसी जगह बैठे-बैठे ये चीज़ें पढ़ लें (जो थोड़ा-सा ही वक़्त होता है) तो आसानी से ये सब चीज़ें एक ही मजलिस में पढ़ी जा सकती हैं, और इनके पढ़ने के लिये बैठना इशराक़ की नमाज़ पढ़ने का भी ज़रिया बन जायेगा, और इस तरह से (इन चीज़ों के फ़ज़ाइल के अलावा) एक हज और एक उमरे का सवाब और ज़्यादा मिलेगा। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

शाम को अ़स्र के बाद इन चीज़ों को पढ़ लें। अ़स्र से मग़रिब तक ज़िक्र करने की बहुत फ़ज़ीलत वारिद हुई है। उस वक़्त न हो सके तो मग़रिब के बाद पढ़ लें। उस वक़्त भी न हो सके तो इशा पढ़कर पढ़ लें। एक साथ न हो सके तो कुछ अ़स्र के बाद, कुछ मग़रिब के बाद, कुछ इशा के बाद पढ़ लें। बेकार की और फ़ुज़ूल बातों से बचने का फ़िक्र करेंगे तो बहुत वक़्त निकल आयेगा इन्शा-अल्लाह तआ़ला।

रात को सूरः यासीन, सूरः वाक़िआ़, सूरः मुल्क, सूरः अलिफ़ लाम मीम सज्दा पढ़ लें। कुछ भी न हो सके तो सूरः मुल्क (तबारकल्लज़ी) तो ज़रूर ही पढ़ लें।

सोते वक़्त

(1) सोने की दुआ़ **बिइस्मि-क अल्लाहुम्-म अमूतु व अह्या** पढ़ें।

(2) **सुब्हानल्लाहि, अल्हम्दु लिल्लाहि** 33, 33 बार, **अल्लाहु अकबर** 34 बार।

(3) सूरः ब-क़रः आख़िरी दो आयतें **आमनर्रसूलु** से सूरः के ख़त्म तक एक बार। **चारों क़ुल, सूरः फ़ातिहा** एक-एक बार। **आयतुल् कुर्सी** एक बार। **अस्तग़फ़िरुल्लाहल्लज़ी ला इला-ह इल्ला हुवल् हय्युल् क़य्यूमु व अतूबु इलैहि** (तीन बार)।

(1) औरतें तन्हा (बिना जमाअ़त के) नमाज़ पढ़ती हैं वे फ़ज्र पढ़कर उसी जगह बैठे-बैठे ज़िक्र करती रहेंगी और सूरज ऊँचा होने पर दो रकअ़त पढ़ लेंगी तो उनको भी इन्शा-अल्लाह तआ़ला बहुत ज़्यादा सवाब मिलेगा।

फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद

सुब्हानल्लाहि, अल्हम्दु लिल्लाहि 33, 33 बार, अल्लाहु अकबर 34 बार, आयतुल् कुर्सी एक बार, चारों कुल एक-एक बार।

यह मुख़्तसर-सा दस्तूरुल अ़मल नमाज़ के बाद का और सुबह शाम और रात का हमने लिख दिया है, इसके अ़लावा मुख़्तलिफ़ हालात की मसनून दुआ़ओं की भी पाबन्दी करें जो इन्शा-अल्लाह आगे आ रही हैं। और इनके अ़लावा हर वक़्त अपनी ज़बान अल्लाह की याद में तर रखें।

मुसलमान औरतों से

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बातें

* औरतों के लिए *

दुआ का बयान

लेखक

हज़रत मौलाना आशिक़ इलाही साहिब बुलन्द शहरी

रहमतुल्लाहि अलैहि

अनुवादक: मौलाना मुहम्मद इमरान कासमी

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा. लि.)

422, मटिया महल, उर्दू मार्किट, जामा मस्जिद

देहली-110006

दुआ की फ़ज़ीलत और अहमियत

हदीसः (98) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला के नज़दीक कोई चीज़ दुआ़ से बढ़कर रुतबे और सम्मान वाली नहीं।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 154)

हदीसः (99) हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि दुआ़ इबादत का मग़ज़ है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 194)

हदीसः (100) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर पुरनूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो शख़्स अल्लाह तआ़ला से सवाल नहीं करता, अल्लाह तआ़ला शानुहू उसपर गुस्सा होते हैं। (मिश्कात शरीफ़ पेज 195)

तशरीहः इन हदीसों में दुआ़ की फ़ज़ीलत व अहमियत बयान फ़रमाई है। हदीस नम्बर 98 में फ़रमाया कि इबादत में अल्लाह के नज़दीक दुआ़ से बढ़कर कोई चीज़ बुज़ुर्ग और रुतबे वाली नहीं है, और हदीस नम्बर 99 में फ़रमाया कि दुआ़ इबादत का मग़ज़ है। छिलके के अन्दर जो असल चीज़ होती है उसको मग़ज़ कहते हैं और उसी मग़ज़ के दाम होते हैं। बादाम को अगर फोड़ो तो उसमें गिरी निकलेगी उसी गिरी की क़ीमत होती है और उसी के लिये बादाम ख़रीदे जाते हैं। इबादतें बहुत सारी हैं और दुआ़ भी एक इबादत है लेकिन यह इबादत बड़ी इबादत है। इबादत ही नहीं इबादत का मग़ज़ है और इबादत की जड़ है, क्योंकि इबादत की हक़ीक़त यह है कि अल्लाह तआ़ला की बारगाह में बन्दा अपनी आजिज़ी और ज़िल्लत पेश करे और ख़ुशू व ख़ुज़ू यानी ज़ाहिर व बातिन के झुकाने के साथ रब्बे करीम की बारगाह में नियाज़मन्दी के साथ हाज़िर हो। चूँकि यह आ़जिज़ी वाली हुज़ूरी दुआ़ में सब इबादतों से ज़्यादा पाई जाती है इसलिये दुआ़ को इबादत का मग़ज़ फ़रमाना बिल्कुल सही है। जब बन्दा अपने को बिल्कुल आ़जिज़ जानकर यह यक़ीन करते हुए हाथ उठाकर दुआ़ करता है कि अल्लाह तआ़ला ग़नी

और बेनियाज़ हैं उनको किसी चीज़ की हाजत और ज़रूरत नहीं है, वह करीम हैं ख़ूब देने वाले हैं, जिस क़द्र चाहें दे सकते हैं, उनको रोकने में अपना कोई नफ़ा नहीं, तो यह इस यक़ीन की वजह से अल्लाह की बारगाह में हाज़िर होकर ऐसा खो जाता है और इस तरह से उसका यह शग़ल मुकम्मल इबादत बन जाता है और उसको इबादत का मग़ज़ नसीब हो जाता है।

हदीस नम्बर 100 में फ़रमाया कि जो शख़्स अल्लाह से सवाल नहीं करता अल्लाह उससे नाराज़ हो जाता है। चूँकि दुआ में बन्दे का आजिज़ी और अपनी ज़रूरत का इक़रार होता है और इस यक़ीन का इज़हार होता है कि अल्लाह तआला ही देने वाला है और वह बड़ा दाता है, इसलिए दुआ अल्लाह तआला की रज़ामन्दी का सबब बनती है। और जब कोई बन्दा दुआ से गुरेज़ करता है और अपनी ज़रूरत के इज़हार को और उसका इक़रार करने को अपनी शान के ख़िलाफ़ समझता है तो अल्लाह तआला उससे नाराज़ हो जाते हैं क्योंकि बन्दे के इस तरीक़े (व्यवहार) में तकब्बुर है और एक तरह से अपने लिये बेनियाज़ी का दावा है (हालाँकि बेनियाज़ी अल्लाह तआला की ख़ास सिफ़त है) इसलिए दुआ न करने वाले पर अल्लाह तआला गुस्सा हो जाते हैं।

बन्दे का काम है कि अपने परवर्दिगार से माँगा करे और माँगता ही रहे। एक हदीस में है कि सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि बिला शुब्हा जो मुसीबत नाज़िल होगी, दुआ उस (के दूर करने) में नफ़ा देती है, और जो मुसीबत नाज़िल नहीं हुई उसके लिए भी नफ़ा देती है (यानी आने वाली मुसीबत दुआ की वजह से टल जाती है)। लिहाज़ा अल्लाह के बन्दो! तुम दुआ को लाज़िम पकड़ लो। (तिर्मिज़ी)

हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि तुम में से जिसके लिए दुआ का दरवाज़ा खुल गया उसके लिए रहमत के दरवाज़े खुल गए। (फिर फ़रमाया कि) अल्लाह तआला से जो चीज़ें तलब की जाती हैं उनमें अल्लाह को सबसे ज़्यादा मेहबूब यह है कि उससे आफ़ियत (अमन-शान्ति) का सवाल किया जाए। (तिर्मिज़ी)

हर मोमिन मर्द व औरत को दुआ का ज़ौक़ होना चाहिये, अल्लाह ही से माँगे उसी से लौ लगाए उसी से उम्मीद रखे।

दुआ के आदाब

हदीसः (101) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब तुम में से कोई शख़्स दुआ करे तो यूँ न कहे कि ऐ अल्लाह! तू चाहे तो बख़्श दे, बल्कि मज़बूती और पुख़्तगी के साथ सवाल करे, और (जो कुछ माँग रहा हो) पूरी तवज्जोह और दिली चाहत के साथ माँगे, क्योंकि अल्लाह तआला को किसी भी चीज़ का अता करना मुश्किल नहीं है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 194)

तशरीहः यह बात कहना कि ऐ अल्लाह! तू चाहे तो मग़फ़िरत फ़रमा दे और तू चाहे तो दे दे। अल्लाह तआला जो कुछ देगा अपने इरादे से ही देगा, अपनी मर्ज़ी और इरादे से ही देगा, उसके इरादे के बग़ैर कुछ हो ही नहीं सकता। हर चीज़ का वजूद महज़ उसके इरादे से है, वह जो चाहे करे, उसको कोई मजबूर करने वाला नहीं है। दुआ करने वाले को तो अपनी रग़बत (दिली तवज्जोह और दिलचस्पी) पूरी तरह ज़ाहिर करना चाहिये, और मज़बूती से सवाल करना चाहिये। मज़बूती से सवाल न करना इस बात को वाज़ेह (स्पष्ट) करता है कि माँगने वाला अपने को सही मायनों में मोहताज नहीं समझता। अल्लाह से माँगने में भी बेपरवाही बरत रहा है जो तकब्बुर की निशानी है हालाँकि दुआ में ज़ाहिर व बातिन से आजिज़ी और हाजत-मन्दी और अपनी ज़िल्लत ज़ाहिर करने की ज़रूरत है।

अल्लाह तआला मुख़्तारे कुल हैं, सब कुछ कर सकते हैं। आसमान व ज़मीन और उनके अन्दर के सब ख़ज़ाने और उनके बाहर के सब ख़ज़ाने उसी के हैं। अल्लाह तआला के इरादे से पल भर में सब कुछ हो सकता है सिर्फ़ "कुन" (हो जा) फ़रमा देने से सब कुछ हो जाता है, उसके लिए किसी चीज़ का देना और किसी भी चीज़ का पैदा कर देना कोई भारी चीज़ नहीं है लिहाज़ा पूरी रग़बत और इस यक़ीन के साथ दुआ करो कि मेरा मक़सद ज़रूर पूरा होगा। और वह जब देगा अपनी मर्ज़ी और इरादें ही से देगा उससे ज़बरदस्ती कोई चीज़ नहीं ले सकता।

हदीसः (102) हज़रत सलमान रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि बेशक तुम्हारा रब शर्म करने वाला है, करीम है। जब उसका बन्दा दुआ करने के

लिए हाथ उठाता है तो उनको ख़ाली वापस करता हुआ शर्माता है।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 195)

हदीसः (103) हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हज़रत रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जब दुआ में हाथ उठाते थे तो उनको जब तक (दुआ के ख़त्म होने के बाद) चेहरे पर न फैर लेते थे (नीचे) नही गिराते थे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 195)

तशरीहः इन दोनों हदीसों में दुआ का एक अहम अदब बताया है कि दुआ के लिए दोनों हाथ उठाये जायें और दुआ के ख़त्म होने के बाद दोनों हाथ मुँह पर फैर लिए जायें। दोनों हाथों का उठाना सवाल करने वाले की सूरत बनाने के लिए है ताकि बातिनी तौर पर दिल से जो दुआ हो रही है उसके साथ ज़ाहिरी अंग भी सवाल में शरीक हो जायें।

दोनों हाथ फैलाना फ़क़ीर की झोली की तरह है जिसमें अपनी ज़रूरत का पूरा इज़हार है, और हाथों को उठाते हैं तो उनका रुख़ आसमान की तरफ़ हो जाता है, जिस तरह काबा शरीफ़ नमाज़ का क़िब्ला है उसी तरह आसमान दुआ का क़िब्ला है। हाथ उठाने के बाद दुआ के ख़त्म पर हाथों को मुँह पर फैरना गोया दुआ की कबूलियत और रहमते खुदावन्दी के नाज़िल होने की तरफ़ इशारा है कि अल्लाह की रहमत मेरे चेहरे से शुरू होकर मुझे मुकम्मल तरीक़े पर घेर रही है।

ऊपर ज़िक्र हुई हदीसों से दुआ के कई आदाब मालूम हुए हैं। तफ़सील के साथ अल्लमा जज़री रह० ने अपनी किताब "हिस्ने हसीन" में बहुत-से आदाब जमा किए जो मुख़्तलिफ़ हदीसों में बयान किए गये हैं, हम उनको तफ़सील के साथ लिखते हैं।

(1) वुज़ू से होना (2) पहले अल्लाह की तारीफ़ व प्रशंसा करना और उसके मुबारक नामों और सिफ़ाते कामिला का वास्ता देना (3) फिर दुरूद शरीफ़ पढ़ना (4) क़िब्ले की तरफ़ रुख़ होना (5) दिल के ख़ुलूस से अल्लाह की तरफ़ मुतवज्जह होना और यह यक़ीन रखना कि सिर्फ़ अल्लाह जल्ल शानुहू ही दुआ कबूल कर सकता है (6) पाक व साफ़ होना (7) कोई नेक अमल दुआ से पहले करना या दो-चार रकअत नमाज़ पढ़कर दुआ करना (8) दुआ के लिए दो ज़ानूँ (घुटनों के बल यानी अदब से) होकर बैठना (9) दोनों हाथ उठाकर दुआ करना (दोनों हाथ खुले हुए हों) (10) ख़ुशू व

ख़ुज़ू (यानी पूरी आजिज़ी और इन्किसारी) से अदब के साथ दुआ करना (11) पूरे जिस्म से अदब ज़ाहिर हो और जिस्म पूरा-का-पूरा दुआ और तलब बन जाए (12) दुआ करते वक़्त आजिज़ी और अपनी पस्ती ज़ाहिर करना (13) दुआ करते वक़्त हाल और क़ाल से (यानी जिस्म और जान से और ज़बान से) मिस्कीनी ज़ाहिर करना और आवाज़ में पस्ती होना (14) आसमान की तरफ़ नज़र न उठाना (15) शायराना तुकबन्दी से और गाने के तर्ज़ से बचना (16) हज़राते अम्बिया किराम अलैहिमुस्सलाम और औलिया-ए-किराम और नेक लोगों के वसीले से दुआ करना (17) गुनाहों का इक़रार करना (18) ख़ूब रग़बत और उम्मीद और मज़बूती के साथ जमकर इस यक़ीन के साथ दुआ करना कि ज़रूर क़बूल होगी (19) दिल हाज़िर करके दिल की गहराई से दुआ करना (20) किसी चीज़ का बार-बार सवाल करना जो कम-से-कम तीन बार हो (21) ख़ूब रोकर और गिड़गिड़ाकर दुआ करे यानी ललचाकर इसरार के साथ अल्लाह से माँगे (22) किसी मुहाल और नामुम्किन चीज़ की दुआ न करे (23) जब किसी के लिए दुआ करे तो पहले अपने लिए दुआ करे फिर दूसरे के लिए (24) ऐसी दुआ को इख़्तियार करे जिसके अलफ़ाज़ कम हों लेकिन अलफ़ाज़ के मायने उमूमी और ज़्यादा हों यानी एक दो लफ़्ज़ में या चन्द अलफ़ाज़ में दुनिया व आख़िरत की बहुत-सी ज़रूरतों का सवाल हो जाये (25) क़ुरआन व हदीस में जो दुआएँ आयी हैं उनके ज़रिये दुआएँ करे, उनके अलफ़ाज़ बहुत-सी चीज़ों को जमा करने वाले भी हैं और मुबारक भी (26) अपनी हर हाजत का अल्लाह से सवाल करे, अगर नमक की ज़रूरत हो तो वह भी अल्लाह से माँगे और जूते का तस्मा टूट जाए तो उसके लिए भी अल्लाह से सवाल करे (27) इमाम हो तो सिर्फ़ अपने ही लिए दुआ न करे बल्कि मुक़्तदियों को भी दुआ में शरीक करे (यानी ऐसे अलफ़ाज़ दुआ में इस्तेमाल करे जो सब के लिए हों- जैसे **हमारी- हम सब को- हमारे** लिए वग़ैरह अलफ़ाज़ से दुआ करे) (28) दुआ के ख़त्म से पहले फिर अल्लाह तआला की तारीफ़ व प्रशंसा बयान करे (29) और रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर दुरूद भेजे (30) और ख़त्म पर आमीन कहे (31) और बिल्कुल आख़िर में मुँह पर हाथ फेर ले।

इन आदाब की जिस क़द्र हो सके रियायत करे। यूँ अल्लाह की बड़ी शान है वह आदाब की रियायत किए बग़ैर भी क़बूल फ़रमा सकता है।

दुआ के कबूल होने का क्या मतलब है?

हदीसः (104) हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि हुज़ूर सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो भी कोई मुसलमान दुआ करता है जिसमें गुनाह और ताल्लुक व रिश्ता तोड़ने का सवाल न हो तो अल्लाह तआला उसकी दुआ की वजह से उसको तीन चीज़ों में से कोई एक चीज़ अता फ़रमाते हैं:

(1) या तो उसकी दुआ इसी दुनिया में कबूल फ़रमा लेते हैं और उसका सवाल पूरा फ़रमा देते हैं। यानी जो माँगता है वह दे देते हैं।

(2) या उसकी दुआ को आख़िरत के लिए ज़ख़ीरा बनाकर रख लेते हैं (जिसका सवाब आख़िरत में देंगे)।

(3) या दुआ करने वाले को उसकी मतलूबा (वांछित) चीज़ के बराबर (इस तरह अतिया देते हैं कि) आने वाली मुसीबत को टाल देते हैं। यह सुनकर सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम ने अर्ज़ किया कि इस तरह तो हम बहुत ज़्यादा कमाई कर लेंगे। हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने (इस बात के) जवाब में फ़रमाया कि अल्लाह तआला की अता और बख़्शिश उससे बहुत ज़्यादा है (जिस क़द्र तुम दुआ कर लोगे)। (मिश्कात शरीफ़ पेज 196)

तशरीहः इस हदीस मुबारक में यह बताया है कि अल्लाह जल्ल शानुहू हर मुसलमान की दुआ कबूल फ़रमाते हैं बशर्ते कि किसी गुनाह की दुआ न करे। यानी यह सवाल न करे कि गुनाह का फ़लाँ काम करने में कामयाब हो जाऊँ और 'क़ता-रहमी' (रिश्ता व ताल्लुक ख़त्म करने) की भी बद्-दुआ न करे। अपने रिश्तेदारों और क़रीबी लोगों से अच्छे ताल्लुक़ात रखने और अच्छे सुलूक से पेश आने को 'सिला-रहमी' कहते हैं और इसके विपरीत रिश्तेदारों और अज़ीज़ों से ताल्लुक़ात बिगाड़ने और बद्-सुलूकी से पेश आने को क़ता-रहमी कहते हैं। क़ता-रहमी बहुत बुरी चीज़ है। एक हदीस में इरशाद है कि क़ता-रहमी करने वाला जन्नत में दाख़िल न होगा। (बुख़ारी)

क़ता-रहमी भी एक गुनाह है लेकिन इसकी ख़ास निन्दा और बुराई ज़ाहिर करने के लिए हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इसको अलग ज़िक्र फ़रमाया। चूँकि क़ता-रहमी अल्लाह तआला के नज़दीक बहुत बुरी चीज़ है इसलिए दुआ के कबूल होने की शर्तों में यह फ़रमाया कि क़ता-रहमी

(यानी अपने अज़ीज़ों और रिश्तेदारों से ताल्लुक़ात बिगाड़ने) की दुआ न की हो, और इसके अलावा और भी किसी गुनाह का सवाल न किया हो, तब दुआ कबूल होती है।

फिर दुआ कबूल होने का मतलब बताया कि क़बूल होने के लिए यह ज़रूरी नहीं कि जो माँगा वही मिल जाये बल्कि कभी तो मुँह माँगी मुराद पूरी हो जाती है और कभी यह होता है कि मुँह माँगी मुराद पूरी न हुई बल्कि उसपर जो मुसीबत आने वाली थी वह टल गयी। अल्लाह तआला से सौ रुपये का सवाल किया, सौ रुपये बज़ाहिर न मिले लेकिन अपने किसी बच्चे को सख़्त बीमारी होने वाली थी वह रुक गयी, उसमें इन सौ रुपये के अलावा और सौ रुपये ख़र्च हो जाते वह न हुए सौ रुपये बच गये और बच्चा बीमारी से भी महफ़ूज़ हो गया।

बाज़ मर्तबा सौ रुपये का सवाल करने की वजह से हज़ारों रुपये ख़र्च होने वाली मुसीबत टल जाती है, और यह भी होता है कि जैसे सौ रुपये का सवाल किया मगर बज़ाहिर सौ रुपये न मिले लेकिन किसी तरह से और कोई हलाल माल मिल गया जिसकी कीमत सौ रुपये से कहीं ज़्यादा होती है।

दुआ के कबूल होने की तीसरी सूरत हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह इरशाद फ़रमाई कि दुनिया में उसका असर ज़ाहिर नहीं होता, न मुँह माँगी मुराद मिले न कोई आने वाली मुसीबत टले, लेकिन उस दुआ को अल्लाह तआला आख़िरत में उसके लिए सवाब महफ़ूज़ फ़रमा लेते हैं। जब क़ियामत के दिन नेक आमाल के बदले मिलने लगेंगे तो जिन दुआओं का असर दुनिया में ज़ाहिर न हुआ था उन दुआओं के बदले बड़े-बड़े इनाम मिलेंगे, उस वक़्त बन्दे की तमन्ना होगी कि काश! मेरी किसी दुआ का असर दुनिया में ज़ाहिर न हुआ होता तो अच्छा था, आज सबके बदले बड़े इनामों से नवाज़ा जाता। दुआ को आख़िरत के लिए ज़ख़ीरा बनाकर रख लेना दर हक़ीक़त अल्लाह की बहुत बड़ी मेहरबानी है, यह फ़ानी दुनिया दुख-सुख के साथ किसी तरह गुज़र ही जायेगी और आख़िरत बाक़ी रहने वाली है और हमेशा रहने वाली है और वहाँ जो कुछ मिलेगा बेइन्तिहा होगा, अल्लाह तआला की हिक्मतों को बन्दे समझते नहीं और उसकी रहमतों की वुसअ़तों को जानते नहीं। दुआ हमेशा करते रहना चाहिये, इसके फ़ायदे दुनिया व आख़िरत में बेशुमार हैं। जो लोग दुआ में लगे रहते हैं उनपर अल्लाह की

बड़ी रहमतें होती हैं, बरकतें उनपर नाज़िल होती हैं, दिल में सुकून और इतमीनान रहता है। उनपर अव्वल तो मुसीबतें आती ही नहीं, अगर आती हैं तो मामूली होती हैं। फिर वे भी जल्दी चली जाती हैं। इसी लिए तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

तर्जुमाः दुआ़ करने से आ़जिज़ न हो जाओ क्योंकि दुआ़ का मश्ग़ला रखते हुए कोई शख़्स बरबाद नहीं हो सकता। (हिस्ने हसीन)

क्योंकि दुआ वाले की अल्लाह की तरफ़ से ज़रूर मदद होती है, दोनों जहान में कामयाब और बामुराद है।

जब दुआ़ की कबूलियत का मतलब मालूम हो गया तो कभी यूँ हरगिज़ न कहे कि मेरी दुआ़ कबूल नहीं होती। बहुत-से लोग जहालत की वजह से कह उठते हैं कि हम बरसों से दुआ़ कर रहे हैं, तसबीह के दाने भी घिस गये, कोई असर ज़ाहिर नहीं हुआ। ये ग़लत बातें हैं।

किन लोगों की दुआ़ ज़्यादा कबूल होने के लायक़ होती है

हदीसः (105) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हज़रत रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि तीन शख़्स ऐसे हैं जिनकी दुआ़ रद्द नहीं की जाती (यानी ज़रूर कबूल होती है)।

(1) रोज़ेदार की दुआ जिस वक़्त वह इफ़्तार करता है।

(2) इमामे आ़दिल यानी उस मुसलमान ओ़हदेदार की दुआ़ जो शरीअ़त के मुताबिक़ चलता हो और सबके साथ इन्साफ़ करता हो।

(3) और मज़लूम (जिस पर ज़ुल्म किया गया हो) की दुआ़ को अल्लाह तआ़ला बादलों के ऊपर उठा लेते हैं और उसके लिए आसमान के दरवाज़े खोल दिए जाते हैं, और परवर्दिगारे आ़लम का इरशाद होता है कि मैं ज़रूर ज़रूर तेरी मदद करूँगा अगरचे कुछ वक़्त (गुज़रने) के बाद हो।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 195)

हदीसः (106) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूर पुरनूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि तीन दुआ़एँ मक़बूल हैं इन (की कबूलियत) में कोई शक नहीं है।

(1) वालिद (बाप) की दुआ़। (2) मुसाफ़िर की दुआ़। (3) मज़लूम की दुआ़। (मिश्कात शरीफ़ पेज 195)

हदीसः (107) हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि पाँच दुआएँ (ज़रूर) कुबूल की जाती हैं।

(1) मज़लूम की दुआ जब तक बदला न ले। (2) हज के सफ़र पर जाने वाले की दुआ जब तक घर वापस न आ जाये। (3) अल्लाह की राह में जिहाद करने वाले की दुआ जब तक लौटकर घर न पहुँचे। (4) मरीज़ की दुआ जब तक अच्छा न हो जाये। (5) एक मुसलमान भाई की दुआ दूसरे मुसलमान भाई के लिए उसके पीठ पीछे। (फिर फ़रमाया कि) इन दुआओं में सबसे ज़्यादा जल्दी कुबूल होने वाली दुआ वह है जो एक मुसलमान भाई दूसरे मुसलमान भाई के लिए उसके पीठ पीछे करे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 196)

ऊपर ज़िक्र हुई तीनों हदीसों से चन्द ऐसे लोगों का पता चला जिनकी दुआ की कबूलियत का ख़ास वायदा है। तशरीह व खुलासे के लिए हर फ़र्द की अलग-अलग फ़ज़ीलत ज़िक्र की जाती है।

रोज़ेदार की दुआ

इफ़्तार के वक़्त दुआ कुबूल होती है। यह वक़्त अगरचे लम्बी भूख व प्यास के बाद खाने-पीने के लिये नफ़्स के शदीद तकाज़े का होता है, लेकिन चूँकि मोमिन बन्दे ने खुदा तआ़ला के एक फ़रीज़े को अन्जाम दिया है, और उसकी खुशनूदी के लिए भूख-प्यास बरदाश्त की थी इसलिए इस अज़ीमुश्शान इबादत के ख़ात्मे पर बन्दे को यह मुकाम दिया जाता है कि अगर वह उस वक़्त दुआ करे तो ज़रूर कबूल की जाये। तबीयत की बेचैनी और खाने-पीने के लिए नफ़्स की सख़्त ख़्वाहिश व रग़बत की वजह से अकसर लोग इस वक़्त दुआ करना भूल जाते हैं। अगर इफ़्तार से एक-दो मिनट पहले दिल के खुलूस के साथ दुआ की जाये तो इन्शा-अल्लाह ज़रूर ही कबूल होगी। अपने लिए और दूसरों के लिए दुनिया व आख़िरत की जो हाजत चाहे अल्लाह पाक से माँगे। हदीस की किताबों में इस मौक़े के लिए जो दुआएँ आई हैं वे ये हैं:

(1) अल्लाहुम्-म ल-क सुम्तु व अ़ला रिज़्क़ि-क अफ़्तरतु

तर्जुमाः ऐ अल्लाह मैंने आप ही के लिए रोज़ा रखा और आप ही के दिये हुए रिज़्क़ पर इफ़्तार किया। (अबू दाऊद)

(2) अल्लाहुम्-म इन्नी अस्अलु-क बिरहमति-कल्लती वसिअ़-त

कुल्-ल शैइन् अन् तग़्फ़ि-र ली ज़ुनूबी

तर्जुमाः ऐ अल्लाह आपकी उस रहमत के वसीले से जो हर चीज़ को घेरे हुए है सवाल करता हूँ कि आप मेरे गुनाह माफ़ फ़रमायें।

इमामे आ़दिल

हदीस शरीफ़ में यह भी फ़रमाया कि इमामे आ़दिल की दुआ़ कबूल होती है। इमाम पेशवा (रहनुमा, लीडर) को कहते हैं और आ़दिल इन्साफ़ करने वाले को। जिस मुसलमान को इक्तिदार (यानी सत्ता, रुतबा और ताकत) मिल जाये और वह इन्साफ़ के साथ शरीअ़त के मुताबिक़ अ़वाम को अपने साथ लेकर चले उसी को इमामे आ़दिल कहा जाता है। इमामे आ़दिल की बड़ी फ़ज़ीलत है, और फ़ज़ीलत की वजह यही है कि वह इक्तिदार वाला होते हुए जुल्म नहीं करता, और गुनाहों से बचता है और अल्लाह पाक से डरता है।

एक हदीस में इरशाद है कि कियामत के दिन जब अल्लाह के (अ़र्श के) साये के अ़लावा किसी का साया न होगा (और लोग धूप और गर्मी की वजह से सख़्त परेशानी में होंगे) उस वक़्त हक़ तआ़ला सात आदमियों को अपने साये में जगह देंगे। उन आदमियों में एक इमामे आ़दिल भी है। इमामे आ़दिल की यह भी फ़ज़ीलत है कि वह जो दुआ़ करेगा बारगाहे ख़ुदावन्दी में मकबूल होगी।

मालूम हुआ कि इक्तिदार वाला (यानी जिसके हाथ में हुकूमत हो या कोई और ऐसा ही बड़ा ओ़हदा हासिल हो) होना कोई बुरी बात नहीं है। इक्तिदार वाला होते हुए अपने हुस्ने अख़्लाक (अच्छे व्यवहार) और नेक आमाल की वजह से अल्लाह का मेहबूब और मकबूल बन्दा बन सकता है। दुनिया और आख़िरत की ख़राबी बुरे आमाल से और मख़्लूक पर जुल्म व सितम करने से सामने आती है। और इक्तिदार का मालिक होते हुए नेक बनना बहुत मुश्किल हो जाता है, और जब ओ़हदे की ताकत ही असल मकसद हो जाता है तो फिर हलाल हराम की तमीज़ नही रहती। मख़्लूक पर तरह-तरह के जुल्म किए जाते हैं ताकि अपने ओ़हदे की ताकत को ठेस न लगे और इस तरह से इक्तिदार वाला अल्लाह के नज़दीक और बन्दों के नज़दीक बद्तरीन और ना-पसन्दीदा इनसान बन जाता है।

मज़लूम

जिस शख़्स पर किसी तरह का कोई ज़ुल्म किया जाए उसे मज़लूम कहते हैं। मज़लूम भी उन लोगों में से है जिनकी दुआ ज़रूर कबूल होती है। एक हदीस में है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि मज़लूम की बद्-दुआ से बचो (इसलिए कि वह ज़रूर कबूल होगी) क्योंकि मज़लूम हक़ तआला से अपना हक़ माँगता है और अल्लाह तआला किसी हक़ वाले से उसका हक़ नहीं रोकते। (शुअबुल ईमान)

जब हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत मुआज़ बिन जबल रज़ियल्लाहु अन्हु को यमन का आमिल (यानी गवर्नर) बनाकर भेजा तो चन्द नसीहतें फ़रमाईं उनमें से एक यह नसीहत थी:

"मज़लूम की बद्-दुआ से बचना क्योंकि उसके और अल्लाह के दरमियान कोई पर्दा नहीं।"

पर्दा न होने का मतलब यह है कि वह ज़रूर कबूल होगी। उसकी कबूलियत के लिए कोई रुकावट नहीं। इसी मज़मून को हदीस नम्बर 105 में इस तरह बयान फ़रमाया कि मज़लूम की बद्-दुआ को अल्लाह तआला बादलों के ऊपर उठा लेते हैं और उसके लिए आसमान के दरवाज़े खोल दिये जाते हैं। फ़ारसी का मशहूर शे'र है:

ब-तर्स अज़ आहे मज़लूमाँ कि हंगामे दुआ करदन्
इजाबत अज़ दरे-हक़ बहरे इस्तिकबाल मी आयद

तर्जुमाः मज़लूमों की आह से डरो कि जिस वक़्त वे दुआ करते हैं तो अल्लाह के यहाँ से कबूलियत उसके स्वागत के लिए आती है।

अलबत्ता यह ज़रूरी नहीं कि मज़लूम की बद्-दुआ हमेशा ही जल्द से जल्द कबूल हो जाए। बाज़ मर्तबा अल्लाह की मस्लेहत का तक़ाज़ा होता है कि देर से कबूल हो इसी लिए हदीस में इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह फ़रमाते हैं कि मैं ज़रूर-ज़रूर तेरी मदद करूँगा, अगरचे कुछ समय के बाद हो।

और यह ज़रूरी नहीं है कि जिस मज़लूम की बद्-दुआ लगे वह नेक आदमी हो या मुसलमान ही हो, चूँकि उसकी दुआ की मकबूलियत की वजह उसकी मज़लूमियत है, इसलिए मज़लूम अगर बदकार और गुनाहगार और बुरा आदमी हो बल्कि अगर काफ़िर ही हो तब भी उसकी बद्-दुआ ज़ालिम के

हक़ में क़बूल हो जाती है, इसी लिए हदीस की रिवायतों में ये अलफ़ाज़ भी आये हैं:

"अगरचे वह गुनाहगार व बदकार हो, और चाहे वह काफ़िर हो"

बहुत-से लोग जिनको माल-दौलत या ओहदे की वजह से कोई बड़ाई हासिल हो जाती है, लोगों को बात-बात में मार-पीट करते हैं, तरह-तरह से सताते हैं, माल छीन लेते हैं, गुण्डों से पिटवाते हैं बल्कि क़त्ल तक करवा देते हैं। कुछ दिन तो उनकी ज़िन्दगी, माल और ओहदे के साथ गुज़र जाती है लेकिन जब किसी मज़लूम की बद्-दुआ असर करती है तो मुसीबतों में फंस जाते हैं और तरह-तरह की तदबीरें सोचते हैं लेकिन कोई कारगर नहीं होती। क्योंकि मज़लूम की बद्-दुआ जो उनके हक़ में क़बूल हो जाती है वह अपना काम करती रहती है।

ज़ालिम ज़ुल्म करके भूल जाता है और पता भी नहीं होता कि मैंने किस-किसको सताया और दुख पहुँचाया है। अगर मज़लूम से माफ़ी भी माँगना चाहे तो मज़लूम का पता नहीं चलता। होशियार बन्दे वही हैं जो किसी पर जानी और माली कोई ज़ुल्म नहीं करते। अल्लाह पाक अपने हुक़ूक़ को माफ़ फ़रमा देता है लेकिन उसके किसी बन्दे पर किसी तरह का कोई ज़ुल्म कर दे तो उसकी माफ़ी उसी वक़्त होगी जबकि वह मज़लूम माफ़ करे।

बाज़ किताबों में यह क़िस्सा लिखा है कि एक ग़रीब आदमी मछली लेजा रहा था, एक सिपाही ने उसकी मछली छीन ली और घर लेजाकर जब मछली बनाने लगा तो उसका एक काँटा अंगूठे में लग गया, अंगूठे में हल्का-सा ज़ख़्म हुआ, फिर ज़ख़्म बढ़ा यहाँ तक कि अंगूठा सड़ने लगा। बहुत इलाज किया कोई फ़ायदा न हुआ, आख़िरकार अंगूठा कटवा दिया। उसके बाद हथेली और उंगलियों में ज़ख़्म पैदा हो गया, जब किसी तरह के किसी इलाज से फ़ायदा न हुआ तो पहुँचे (गट्टे) के नीचे से हाथ कटवा दिया ताकि आगे से हाथ महफ़ूज़ रह जाए। लेकिन फिर पहुँचे के ऊपर ज़ख़्म हो गया और इतना बढ़ा कि आगे भी कटवाने की ज़रूरत हो गयी। अल्लाह के एक नेक बन्दे को यह हाल मालूम हुआ तो उसने कहा कि कब तक थोड़ा-थोड़ा करके अपना हाथ कटवाता रहेगा, मज़लूम से माफ़ी माँग ताकि इस मुसीबत से नजात हो, आख़िरकार मछली वाले को तलाश किया और उससे माफ़ी माँगी, जब उसने माफ़ किया तो मुसीबत दूर हुई। ज़ुल्म बहुत बुरी चीज़ है। एक हदीस में

इरशाद है कि:

"ज़ुल्म कियामत के दिन अंधेरियाँ बनकर सामने आयेगा"

ज़ुल्म का वबाल इनसानों ही तक सीमित नहीं रहता। हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि अल्लाह की कसम! ज़ालिम के ज़ुल्म की वजह से 'हुबारा' (सुर्ख़ाब, पानी वाला एक) परिन्दा तक अपने घौंसले में दुबला होकर मर जाता है। (मिश्कात शरीफ़)

क्योंकि ज़ुल्म की वजह से अल्लाह की तरफ़ से बारिश रोक ली जाती है और उसकी वजह से ज़मीन की हरियाली ख़त्म हो जाती है और चरिन्दे परिन्दे घास-पानी के बग़ैर भूखे-प्यासे मर जाते हैं।

वालिद

वालिद (बाप) की दुआ भी औलाद के हक़ में ज़रूर कबूल होती है, और इसी तरह वालिदा (माँ) की दुआ भी औलाद के हक़ मे तेज़ी के साथ असर करती है। माँ-बाप की दुआ हमेशा लेते रहना चाहिये, उनकी बद्-दुआ से हमेशा परहेज़ करे। मुहब्बत और प्यार की वजह से अकसर माँ-बाप बद्-दुआ नहीं करते अगरचे औलाद की तरफ़ से तकलीफ़ पहुँचे, लेकिन बाज़ मर्तबा औलाद की तरफ़ से माँ या बाप का दिल ज़्यादा दुख पा जाता है तो बेइख़्तियार मुँह से बद्-दुआ निकल जाती है। फिर यह बद्-दुआ अपना असर करके छोड़ती है। जहाँ तक मुमकिन हो माँ-बाप को कभी नाराज़ न करें और तकलीफ़ न दें। जान से और माल से उनकी ख़िदमत करते रहें। अगर किसी वजह से उनसे अलग भी रहने लगो तब भी उनके पास आते-जाते रहो और ख़ैर-ख़बर रखो।

अ़ल्लामा जज़री रह० ने अपनी किताब 'हिस्ने हसीन' में उन लोगों की फ़ेहरिस्त लिखी है जिनकी दुआ ज़रूर कबूल होती है, उनमें उन्होंने ऐसे शख़्स को भी शामिल किया है जो माँ-बाप के साथ अच्छे सुलूक से पेश आता हो।

जब बन्दा माँ-बाप की ख़िदमत में जान व माल लगा देता है और ख़ुद दुख-तकलीफ़ बरदाश्त करके माँ-बाप को आराम पहुँचाता है तो उसकी दुआ में मकबूलियत की शान पैदा हो जाती है। जिन लोगों को अल्लाह तआ़ला ने यह तौफ़ीक़ दी हो अपने लिए और माँ-बाप के लिए और अन्य मुसलमानों के लिए ज़रूर दुआ करनी चाहिए।

मुसाफ़िर

मुसाफ़िर को भी उन लोगों में शुमार फ़रमाया है जिनकी दुआ कबूल होती है। और वजह इसकी यह है कि मुसाफ़िर घर-बार से दूर होता है, आराम न मिलने की वजह से मजबूर और परेशान होता है। जब अपनी मजबूरी और परेशानी की वजह से दुआ करता है तो उसकी इख़्लास भरी दुआ ज़रूर क़बूल होती है। चूँकि मुसाफ़िर को आम तौर से बेबसी और बेकसी की हालत पेश आती है इसलिए उसकी दुआ सच्चे दिल से होती है और ज़रूर क़बूल हो जाती है।

जो शख़्स हज व उमरे के सफ़र में हो

जो शख़्स हज के लिए रवाना हुआ हो या उमरे के सफ़र में निकला हो उसकी दुआ मक़बूल होने का वायदा भी हदीस शरीफ़ में आया हुआ है। हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि:

"हज व उमरे के मुसाफ़िर अल्लाह की बारगाह के ख़ुसूसी मेहमान हैं। अगर अल्लाह से दुआ करें तो क़बूल फ़रमाए और अगर उससे मग़फ़िरत तलब करें तो उनकी बख़्शिश फ़रमा दे" (इब्ने माजा व निसाई)

और हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि:

"जब तू ऐसे शख़्स से मुलाक़ात करे जो हज के लिए गया हो तो उसे सलाम कर और उससे मुसाफ़ा कर और उससे दरख़्वास्त कर कि वह अपने घर में दाख़िल होने से पहले तेरे लिए इस्तिग़फ़ार करे (यानी अल्लाह तआला से तेरी मग़फ़िरत का सवाल करे) क्योंकि वह बख़्शा-बख़्शाया है"

एक हदीस में है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह दुआ की:

"ऐ अल्लाह! तू हज करने वाले की मग़फ़िरत फ़रमा, और हज करने वाला जिसके लिए इस्तिग़फ़ार करे उसकी (भी) मग़फ़िरत फ़रमा"

हज़रत अबू मूसा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि हज करने वाले की सिफ़ारिश चार सौ (400) घरानों के बारे में मक़बूल होती है। या यह फ़रमाया कि उसके

घराने के 400 आदमियों के बारे में उसकी सिफ़ारिश क़बूल होती है। (रिवायत बयान करने वाले को शक है कि यह फ़रमाया या यह फ़रमाया) और यह भी इरशाद फ़रमाया कि हज करने वाला अपने गुनाहों से ऐसा पाक होता है जैसा कि अपनी पैदाइश के दिन गुनाहों से पाक व साफ़ था। (तरग़ीब)

हज और उमरे के लिए जो शख़्स घर से निकला हुआ हो अल्लाह पाक के नज़दीक उसकी बड़ी फ़ज़ीलत है, लेकिन अफ़सोस है कि आजकल हज व उमरे के मुसाफ़िर अपनी क़द्र ख़ुद ही नहीं पहचानते। एक हज अदा करते हैं और सफ़र में बहुत-सी फ़र्ज़ नमाज़ें छोड़ देते हैं। और रेडियो टेपरिकार्डर के ज़रिये गाने सुनते हैं, हरम शरीफ़ की हाज़िरी कम-से-कम देते हैं, बाज़ारों में सामान ख़रीदते फिरते हैं, और लड़ते-झगड़ते भी ख़ूब हैं जिसकी क़ुरआन शरीफ़ में ख़ुसूसी मुमानअ़त (मनाही) आई है।

और औरतें तो बहुत ही ग़ज़ब करती हैं। बिल्कुल बेपर्दा होकर ना-मेहरम मर्दों के सामने घूमती फिरती रहती हैं। जहाज़ में दाख़िल होते ही बड़ी-बड़ी पर्दे वाली औरतें बुर्क़ा उतारकर रख देती हैं और वापस होने तक बुर्क़ा नहीं ओढ़तीं। सर और चेहरा ख़ूब आज़ादी के साथ मर्दों को दिखाती रहती हैं, बल्कि अपनी जहालत से हज के सफ़र में पर्दा करने को गोया गुनाह समझती हैं। जहालत से ख़ुदा बचाये, एक नेक काम के लिए निकली और रास्ते भर गुनाह करती रही, यह बड़ी हिमाक़त की बात है।

हदीस शरीफ़ में इरशाद है:

"अल्लाह की लानत हो देखने वाले पर और उसकी तरफ़ जिसको (उसके इख़्तियार से) दिखाया जाए। (शुअ़बुल ईमान)

मतलब यह कि मर्द हो या औरत उसे किसी का चेहरा या कोई दूसरा जिस्मानी अंग जो देखने की मनाही की गयी है (उस मुमानअ़त का उल्लंघन देखने वाला करेगा) तो लानत का काम करेगा। और जो अपने इख़्तियार से दिखाए वह भी लानत का काम करेगा, और जो औरतें ना-मेहरमों के सामने बेपर्दा होती हैं और इसका मौक़ा देती हैं कि कोई उनको देखे वे अपने आपको लानत के लिए पेश करती हैं।

अल्लाह की राह में जिहाद करने वाला

जो शख़्स अल्लाह की राह में जिहाद करने के लिए निकला उसकी जहाँ

और बहुत-सी फ़ज़ीलतें हैं उनमें एक यह भी है कि उसकी दुआ अल्लाह की बारगाह में ज़रूर क़बूल होती है। चूँकि यह शख़्स अल्लाह की राह में जान व माल की क़ुरबानी देने के लिए निकल खड़ा हुआ इसलिए अपने इख़्लास और सच्ची नीयत की वजह से इस क़ाबिल हो गया कि उसकी दरख़्वास्त रद्द न की जाए। जब मुजाहिद (अल्लाह की राह में जिहाद करने वाला) दुआ करता है तो अल्लाह तआ़ला उसकी दुआ ज़रूर क़बूल फ़रमाते हैं।

बीमार

बीमार भी उन लोगों में से है जिनकी दुआ ज़रूर क़बूल की जाती है। अल्लाह तआ़ला से सवाल तो हमेशा आ़फ़ियत और अमन-सुकून ही का करना चाहिये, लेकिन अगर बीमारी आ जाए तो उसको भी सब्र-शुक्र के साथ बरदाश्त करे। जब मोमिन बन्दा बीमार होता है तो अव्वल तो बीमारी की वजह से उसके गुनाह माफ़ होते हैं और दर्जे बुलन्द होते हैं, दूसरे तन्दुरुस्ती में जो इबादत करता था उस सब का सवाब उसके लिए लिखा जाता है, तीसरे उसकी दुआ की हैसियत बहुत बढ़ जाती है और ज़रूर क़बूल होती है।

एक हदीस में है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब तुम मरीज़ के पास जाओ तो उससे दुआ के लिए कहो क्योंकि उसकी दुआ फ़रिश्तों की दुआ की तरह से है। (इब्ने माजा)

मरीज़ अपनी तकलीफ़ में और कुछ नहीं कर सकता तो अल्लाह के ज़िक्र में तो मशग़ूल रह ही सकता है, और अपने लिए और अपने रिश्तेदारों और मिलने-जुलने वालों और यार-दोस्तों के लिए ख़ूब दुआएँ कर सकता है। मोमिन की बीमारी भी एक नेमत है मगर कोई अपनी हैसियत तो पहचाने और नेमत को नेमत जाने। क़ुरआन व हदीस का इल्म न होने की वजह से मुसलमानों को न ईमान की क़ीमत मालूम है न मोमिन की हैसियत का पता है। अल्लाह तआ़ला इल्म दे और समझ दे।

मुसलमान भाई के लिए पीठ पीछे दुआ करना

अपने लिए तो दुआ करते ही हैं, इसके साथ अपने मुसलमान भाइयों के लिए भी ख़ुसूसी और उमूमी दुआ करना चाहिये। मुसलमानों के लिए आ़म तरीक़े पर भी दुआ करें और अपने माँ-बाप और दूर व क़रीब के रिश्तेदार, बहन-भाई, चचा, मामूँ ख़ाला वग़ैरह और मिलने-जुलने वालों, पास के

उठने-बैठने वालों, अपने मोहसिनों और उस्तादों को ख़ास तौर पर दुआ में याद रखना चाहिये। दुआ के लिए कोई कहे या न कहे दुआ करते रहें, इसमें अपना भी फ़ायदा है और जिसके लिए दुआ की जाए उसका भी फ़ायदा है।

एक हदीस में इरशाद है कि पीठ पीछे मुसलमान भाई की दुआ कबूल होती है। उसके सर के पास एक फ़रिश्ता मुक़र्रर है, जब वह अपने भाई के लिए दुआ करता है तो फ़रिश्ता आमीन कहता है और (यह भी कहता है कि भाई के हक़ में जो तूने दुआ की है) तेरे लिए भी उस जैसी (नेमत और दौलत की) ख़ुशख़बरी है। (मुस्लिम शरीफ़)

एक हदीस में इरशाद है कि सब दुआओं से बढ़कर जल्द से जल्द कबूल होने वाली दुआ वह है जो ग़ायब की दुआ ग़ायब के लिए हो। (तिर्मिज़ी)

और वजह इसकी यह है कि यह दुआ रियाकारी से ख़ाली होती है और ख़ालिस मुहब्बत की बुनियाद पर की जाती है और इसमें इख़्लास भी बहुत होता है। चूँकि ग़ायब की दुआ बड़ी तेज़ी के साथ कबूल होती है इसलिए दूसरों से दुआ की दरख़्वास्त करना भी मसनून है। बुज़ुर्गों का यह मामूल रहा है कि एक-दूसरे से दुआ की दरख़्वास्त करते थे और अल्लाह वाले अब भी इसपर अमल करते हैं। जिससे दरख़्वास्त की जाए उसको चाहिये कि दरख़्वास्त रद्द न करे, ख़ास उस वक़्त भी दुआ करे जिस वक़्त दुआ के लिए कहा जाए और बाद में भी दुआ कर दिया करे।

हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान फ़रमाया कि (एक बार) मैंने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से उमरे के सफ़र पर जाने की इजाज़त चाही, आपने इजाज़त दे दी और फ़रमाया कि भाई हमको (भी) दुआ में शरीक कर लेना और हमको मत भूलना। आपने ऐसा कलिमा फ़रमाया कि मुझे उसके बदले पूरी दुनिया मिल जाती तब भी उस क़द्र ख़ुशी न होती जिस क़द्र इस मुबारक कलिमे से ख़ुशी हुई। (अबू दाऊद)

जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने दूसरे शख़्स से दुआ की दरख़्वास्त फ़रमायी तो हम-तुम क्या हक़ीक़त रखते हैं, हम तो बहुत ज़्यादा मोहताज हैं। नेक बन्दों से दुआ के लिए दरख़्वास्त करते रहें। क्या पता तुझ-मुझकी दुआ ही से बेड़ा पार हो जाए।

फ़ायदा: जब किसी के लिए दुआ करे तो पहले अपने लिए दुआ करे फिर उसके लिए दुआ करे। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का

यही मामूल था। (तिर्मिज़ी)

ग़ालिबन इस तालीम में यह हिक्मत (मस्लेहत और राज़) है कि अपने लिए इनसान ज़्यादा इख़्लास और तवज्जोह से दुआ करता है। पस जब अपने लिए दुआ करेगा और उसके बाद यही दूसरे के लिए दुआ करेगा तो वह दुआ भी इख़्लास और तवज्जोह के साथ होगी।

मुज़तर

अल्लामा जज़री रह० ने 'हिस्ने हसीन' में मुज़तर को भी उन लोगों में शुमार किया है जिनकी दुआ ज़रूर कबूल होती है। मुज़तर उसको कहा जाता है जो किसी वजह से मजबूर और परेशान हाल हो। कुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमाः बताओ क्या (झूठे माबूद बेहतर हैं या अल्लाह बेहतर है) जो बेकरार आदमी की दुआ कबूल फरमाता है जब वह उसको पुकारे, और उसकी मुसीबत को दूर करता है, और तुमको ज़मीन में इख़्तियार वाला बनाता है। क्या कोई और माबूद (इबादत के काबिल) है अल्लाह के साथ? (नहीं!) तुम लोग बहुत कम नसीहत हासिल करते हो। (सूरः नम्ल आयत 62)

जब इनसान मजबूर और बेबस होता है तो उसकी नज़र सीधी अल्लाह तआला पर पहुँचती है। हर तरफ़ से उम्मीद ख़त्म हो जाती है और सच्चे दिल से अल्लाह तआला की बारगाह में दरख़्वास्त करता है कि मेरी मुसीबत दूर हो, और बेचैनी व बेकरारी ख़त्म हो। चूँकि इस मौके पर इनसान ज़ाहिर व बातिन से अल्लाह पाक की जानिब मुतवज्जह होता है और यह यकीन कर लेता है कि अल्लाह तआला के अलावा मेरा कोई नहीं जो इस वक़्त की बेचैनी और ज़ाहिरी-बातिनी दुख-तकलीफ़ को दूर कर सके इसलिए उसकी दुआ ज़रूर कबूल होती है। ऐसे मौके पर दुआ से कभी ग़ाफ़िल न हो, दिल के ख़ुलूस से अल्लाह पाक से रहम की दरख़्वास्त करे।

हज़रत जाबिर बिन सलीम रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि मैं नबी पाक की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और अर्ज़ किया कि आप अल्लाह के रसूल हैं। आपने फ़रमाया मैं उस अल्लाह का रसूल हूँ कि अगर तुझे कोई तकलीफ़ पहुँच जाये और तू उसको पुकारे तो वह तकलीफ़ को दूर फ़रमा दे। और अगर तुझको अकाल की स्थिति पेश आ जाए और उसको तू पुकारे तो तेरे

लिए सब्ज़ा (हरियाली) उगा दे। और अगर तू चटियल मैदान में हो (जहाँ घास पानी कुछ न हो और आबादी से बहुत दूर हो) और वहाँ तेरी सवारी गुम हो जाये और तू अल्लाह को पुकारे तो तेरी सवारी को वापस फ़रमा दे। (अबू दाऊद)

किन लोगों की दुआ कबूल नहीं होती

हराम ख़ुराक व पौशाक की वजह से दुआ कबूल नहीं होती

हदीसः (108) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि बेशक अल्लाह पाक है और वह पाक ही (माल और क़ौल व अ़मल) कबूल फ़रमाता है। (फिर फ़रमाया कि) बेशक (हलाल खाने के बारे में) अल्लाह तआ़ला ने पैग़म्बरों को जो हुक्म फ़रमाया है वही मोमिनों को हुक्म फ़रमाया है। चुनाँचे पैग़म्बरों को ख़िताब करते हुए फ़रमाया कि ऐ रसूलो! तय्यब (पाक और हलाल) चीज़ें खाओ और नेक काम करो, और मोमिनों को ख़िताब करते हुए फ़रमाया है कि ऐ ईमान वालो! जो पाक चीज़ें हमने तुम को दी हैं उनमें से खाओ। उसके बाद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ऐसे शख़्स का ज़िक्र फ़रमाया जो लम्बा सफ़र कर रहा हो, उसके बाल बिखरे हुए हों, जिस्म पर गर्द व गुबार अटा हो और वह आसमान की तरफ़ हाथ फैलाए या रब! या रब! कहकर दुआ करता हो। यह शख़्स दुआ तो कर रहा है और हाल यह है कि उसका खाना हराम है और पीना हराम है और पहनना हराम है और उसको हराम ग़िज़ा दी गयी है, पस इन हालात की वजह से उसकी दुआ क्योंकर कबूल होगी। (मिश्कात शरीफ़ पेज 241)

तशरीहः इस हदीस में अव्वल तो हराम से परहेज़ करने और हलाल खाने की अहमियत और ज़रूरत पर ज़ोर दिया है और बताया है कि जो सदका हलाल माल से होगा वही कबूल होगा। अल्लाह तआ़ला पाक है और उसकी बारगाह में पाक चीज़ ही पसन्द हो सकती है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कुरआन मजीद की दो आयतें तिलावत फ़रमाईं, पहली आयत में हज़राते अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम को हुक्म है कि पाक चीज़ें खायें और नेक अ़मल करें। और दूसरी आयत में ईमान वालों को हुक्म है कि

अल्लाह पाक की अ़ता की हुई चीज़ों में से पाक चीज़ें खायें।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने दोनों आयतों को ज़िक्र करके फ़रमाया है और अल्लाह तआ़ला ने जो हुक्म अपने पैग़म्बरों को दिया है कि हलाल खायें वही हुक्म अपने मोमिन बन्दों को दिया है। हलाल की अहमियत और ज़रूरत ज़ाहिर करने के बाद आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक ऐसे शख़्स का ज़िक्र किया जो लम्बे सफ़र में हो और बदहाली की वजह से उसके बाल बिखरे हुए हों, जिस्म पर गुबार पड़ा हो और वह अपनी उस बदहाली में आसमान की तरफ़ दुआ़ करते हुए या रब! या रब! कहकर ख़ुदा-ए-पाक को पुकार रहा हो और चाहता हो कि मेरी हाजत क़बूल हो जाये। भला उसकी दुआ़ कैसे क़बूल हो सकती है? क्योंकि उसका खाना हराम है, पीना हराम है और लिबास हराम है और उसको हराम की ग़िज़ा दी गयी है।

मुसाफ़िर का शुमार उन लोगों में है जिनकी दुआ़ ख़ास तौर पर क़बूल होती है, और मुज़तर व परेशान हाल शख़्स की भी दुआ क़बूलियत से बहुत ज़्यादा क़रीब होती है, लेकिन मुसाफ़िर और परेशान हाल होने के बावजूद ऐसे शख़्स की दुआ क़बूल नहीं होती जिसका खाना, पीना और पहनना हराम हो। आजकल बहुत-सी दुआ़एँ की जाती हैं लेकिन दुआ़एँ क़बूल नहीं होतीं। लोगा शिकायतें करते फिरते हैं कि दुआ़ओं का इस क़द्र एहतिमाम किया और इतनी बार दुआ़ की लेकिन मेरी दुआ़ क़बूल नहीं हुई। शिकायत करने वाले को चाहिये कि पहले अपना हाल देखे और अपनी ज़िन्दगी का जायज़ा ले कि मैं हलाल कितना खाता हूँ और हराम कितना, और कपड़े जो पहनता हूँ वे हलाल आमदनी के हैं या हराम के।

अगर रोज़ी हराम है या लिबास हराम है तो उसको छोड़ दें। ख़ुराक और पोशाक को हदीस शरीफ़ में बतौर मिसाल ज़िक्र फ़रमाया है। ओढ़ना बिछौना, रिहाइश का मकान, राहत व आराम की चीज़ें अगर हराम की हों तो वे भी लिबास के हुक्म में हैं। जिस तरह हराम आमदनी का लिबास होते हुए दुआ़ क़बूल न होगी उसी तरह हराम की दूसरी चीज़ें इस्तेमाल करने से दुआ़ की क़बूलियत रुकी रहेगी।

हराम की हर चीज़ से बचना लाज़िम है

बहुत-से लोग हराम खाने की हद तक तो परहेज़ करते हैं लेकिन हराम की दूसरी चीज़ें इस्तेमाल करने से परहेज़ नहीं करते, हालाँकि वह भी गुनाह है।

अपने हालात पर ग़ौर करें कि किन-किन राहों से हमारे घर में हराम माल घुस रहा है। कहीं सूदी रुपया तो घर में नहीं आ रहा है, रिश्वत का माल तो घर में भरा हुआ नहीं, किसी की हक़-तल्फ़ी तो नहीं की, ख़ियानत करके किसी की रक़म तो नहीं मारी, कमाकर लाने वाला किसी नाजायज़ महकमे मे मुलाज़िम तो नहीं। अगर ग़ौर करेंगे तो बहुत-सी राहें समझ में आयेंगी जिनके ज़रिये घर में नाजायज़ रुपया आता है। फिर उस रुपये से रोटी-पानी का ख़र्च भी चलता है और कपड़े भी बनते हैं, मकान भी तामीर होते हैं, बंगले में सजावट भी होती है, गाड़ी भी ख़रीदी जाती है। जब हराम ही गिज़ा हो और उसी की ख़ुराक और पौशाक हो, और घर का साज़ो-सामान उसी के ज़रिये से हासिल हुआ हो तो दुआ के क़बूल होने की उम्मीद रखना बहुत बड़ी बेवक़ूफ़ी है।

हर मुसलमान पर लाज़िम है कि हराम से परहेज़ करे, हलाल की फ़िक्र करे, अगरचे थोड़ा मिले और रूखी-सूखी रोटी खानी पड़े और छप्पर में गुज़ारा करना पड़े।

हराम ख़ुराक दोज़ख़ में जाने का ज़रिया है

हराम काम करने और हराम माल इस्तेमाल करने की वजह से दुआ क़बूल नहीं होती और जन्नत से भी मेहरूमी होती है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है:

हदीसः जन्नत में वह गोश्त दाख़िल न होगा जो हराम से पैदा हुआ हो, दोज़ख़ ही उसकी ज़्यादा हक़दार है। (अहमद)

हराम से सदक़ा किया जाए तो क़बूल नहीं होता

बहुत-से जाहिल हराम खाते हैं और उसमें से कुछ सदक़ा करके हराम को हलाल समझ लेते हैं, यह बिल्कुल जहालत की बात है। हराम से सदक़ा करना और गुनाह है। हराम पर सवाब नहीं मिलता जैसा कि हदीस शरीफ़ के शुरू में गुज़रा कि "अल्लाह तआ़ला पाक है और पाक ही चीज़ उसकी बारगाह में क़बूल हो सकती है"।

पस जब हराम का सदक़ा कबूल ही नहीं तो उसके ज़रिये बाक़ी माल कैसे हलाल हो जायेगा। जो सदक़ा दिया वह भी वबाल होगा और जो माल बच गया वह भी वबाल होगा और अ़ज़ाब का सबब होगा।

हराम माल से सदक़ा करके सवाब की उम्मीद रखने को बाज़ आ़लिमों ने कुफ़ बताया है। असल बात यह है कि हराम कमाने से बिल्कुल परहेज़ किया जाये। न हराम कमाने का गुनाह होगा न मुल्क में हराम आयेगा, न अपनी जान पर ख़र्च होगा।

औ़रतों को ख़ास हिदायत

औ़रतें अपने शौहरों से कह दें कि हम हलाल खाएँगे, हलाल पहनेंगे, तुम्हारे ज़िम्मे हमारे जिन ख़र्चों का पूरा करना लाज़िम है हलाल से पूरा करो, हम हराम कबूल करने को तैयार नहीं। पहले ज़माने की औ़रतें ऐसी ही नेक थीं, ख़ुद भी हराम से बचती थीं और शौहरों को भी बचाती थीं। आजकल औ़रतें शौहरों और बेटों को हराम कमाने की तरग़ीब देती (यानी उभारती और उकसाती) हैं। अगर शौहर रिश्वत से बचे तो उसे कह-सुनकर हराम पर आमादा करती हैं। घर में हराम आता है तो गोद भरकर बैठ जाती हैं और नमाज़ों के बाद दुआएँ भी करती हैं और दुआ के कबूल होने की उम्मीद भी रखती हैं। हराम के साथ दुआ कहाँ कबूल हो सकती है। अगर तुम्हारा शौहर या बेटा बैंक में या शराब के महकमे में मुलाज़िम हो या रिश्वत लेता हो या किसी भी तरह हराम कमाता हो तो उसको रोक दो और हराम छुड़ाकर हलाल कमाने की तरग़ीब दो।

अच्छे कामों का हुक्म करने और बुराइयों से रोकने को छोड़ देने से दुआ कबूल नहीं होती

हदीसः (109) हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि क़सम उस ज़ात की जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है, तुम ज़रूर ज़रूर नेकियों का हुक्म करते रहो और बुराइयों से रोकते रहो वरना जल्दी ही अल्लाह तआ़ला अपने पास से तुम पर बड़ा अ़ज़ाब भेज देगा, फिर तुम ज़रूर ज़रूर अल्लाह तआ़ला से दुआ करोगे और तुम्हारी दुआ कबूल न होगी। (मिश्कात शरीफ़ पेज 436)

तशरीहः इस मुबारक हदीस में भी दुआ क़बूल न होने का एक सबब बताया है और फ़रमाया है कि अच्छे कामों का हुक्म करने और बुराइयों से रोकने का जो अ़मल है (जिसको **अमर बिल-मअ़रूफ़ और नही अ़निल-मुन्कर** कहते हैं) उसको छोड़ देने से अल्लाह तआ़ला का अ़ज़ाब आयेगा और अ़ज़ाब आने पर दुआ़ की तरफ़ मुतवज्जह होगे तो दुआ क़बूल न होगी।

मुसलमानों की ज़िम्मेदारी

बात यह है कि अल्लाह तआ़ला ने बन्दों की हिदायत के लिए अपने अहकाम भेजे हैं जो क़ुरआन मजीद और पाक हदीसों के ज़रिये बन्दों तक पहुँचाए हैं। इन अहकाम में बहुत-से काम करने के हैं उनको "मअ़रूफ़" यानी नेकी कहते हैं जो ख़ुदा-ए-पाक की पसन्दीदा चीज़ है। और बहुत-से काम ऐसे हैं जिनका करना मना है उनको "मुन्कर" कहते हैं यानी बुरा काम, जो ख़ुदा-ए-पाक की शरीअ़त में नहीं है, इस्लाम से उसका जोड़ नहीं खाता। अल्लाह तआ़ला को ना-पसन्द है। मअ़रूफ़ में फ़राइज़, वाजिबात, सुन्नतें, मुस्तहब चीज़ें सब दाख़िल हैं। और मुन्कर में हराम, मक्रूह (तहरीमी व तन्ज़ीही) सब दाख़िल हैं।

सबसे बड़ी नेकी फ़र्ज़ और वाजिब को अन्जाम देना है, और सबसे बड़ा गुनाह हराम काम का करना है। जो बन्दा इस्लाम क़बूल कर लेता है उसके ज़िम्मे सिर्फ़ यही नहीं है कि ख़ुद नेक बन जाए बल्कि नेक बनने के साथ दूसरों को (ख़ुसूसन अपने मातहतों को) नेक बनाना भी मुसलमान की बहुत बड़ी ज़िम्मेदारी है। बहुत-से लोग ख़ुद तो दीनदार होते हैं मगर उनको दूसरों की दीनदारी की बिल्कुल फ़िक्र नहीं होती, हालाँकि मोमिन की ख़ास सिफ़ात जो क़ुरआन मजीद में बयान की गयी हैं उनमें नेकियों का हुक्म करना और बुराइयों से रोकना बड़ी अहमियत के साथ बयान फ़रमाया है।

मोमिन की ख़ास सिफ़तें

सूरः तौबा में इरशाद है:

तर्जुमाः और मुसलमान मर्द और मुसलमान औरतें आपस में एक-दूसरे के (दीनी) साथी हैं। ये लोग नेक बातों की तालीम देते हैं और बुरी बातों से मना करते हैं, और नमाज़ क़ायम करते हैं और ज़कात देते हैं, और अल्लाह

और उसके रसूल की फ़रमाँबरदारी करते हैं। जल्द ही अल्लाह तआला उन पर रहम फ़रमायेगा। (सूरः तौबा आयत 71)

दर हक़ीक़त **अमर बिल-मअ़रूफ़** (नेकियों का हुक्म करना) और **नही अ़निल-मुन्कर** (बुराइयों से रोकना) बहुत बड़ा फ़रीज़ा है जिसे मुसलमानों ने छोड़ रखा है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि:

हदीसः तुम में से जो शख़्स कोई बुराई देखे तो उसको अपने हाथ से बदल दे (यानी बुराई करने वाले को अपने ज़ोर की ताक़त से रोक दे) अगर इसकी ताक़त न तो ज़बान से बदल दे (यानी बुराई करने वाले को टोक दे और बुराई से रोक दे) अगर इसकी ताक़त न हो तो दिल से बुरा जाने और यह (सिर्फ़ दिल से बुरा जानकर ख़ामोश रह जाना और हाथ या ज़बान से मना न करना) ईमान का सबसे कमज़ोर दर्जा है। (मुस्लिम शरीफ़)

सोचने और ग़ौर करने की दावत

अब हम सब मिलकर अपने हाल पर ग़ौर करें कि अपनी नज़रों के सामने गुनाह होते देखते हैं, नमाज़ें कज़ा की जा रही हैं, रोज़े खाये जा रहे हैं, शराबें पी जा रही हैं, रिश्वत के मालों से घर भरे जा रहे हैं, तरह-तरह की बेहयाई घरों में जगह पकड़ रही है, और सब कुछ नज़रों के सामने है, फिर कितने मर्द व औरत हैं जो इस्लाम के दावेदार हैं और इन चीज़ों पर रोक-टोक करते हैं। खुल्लम-खुल्ला ख़ुदा-ए-पाक की नाफ़रमानियाँ हो रही हैं लेकिन न दिल में दर्द है न ज़बान से कोई बात कहने के रवादार हैं, और हाथ से रोकने का तो ज़िक्र ही क्या है।

दूसरों को नेकियों पर डालना और बुराइयों से रोकना तो दरकिनार ख़ुद अपनी ज़िन्दगी गुनाहों से लतपत कर रखी है और गोया यूँ समझ रखा है कि हम गुनाहों के लिए ही पैदा हुए हैं। ख़ुद भी गुनाह कर रहे हैं, औलाद और दूसरे मातहतों को न सिर्फ़ गुनाहों में मुलव्वस (लिप्त) देखते हैं बल्कि उनको ख़ुद गुनाहों पर डालते हैं। अपने क़ौल व फ़ेल से उनको गुनाहों के काम सिखाते हैं। और उनको गुनाहों में मुब्तला देखकर ख़ुश होते हैं। ज़ाहिर है कि यह तौर-तरीक़े अल्लाह तआला की रहमत को लाने वाले नहीं हैं बल्कि अल्लाह के अ़ज़ाब को बुलाने वाले हैं। जब अ़ज़ाब आता है तो बिलबिलाते हैं, दुआएँ करते हैं, मुसीबत दूर नहीं होती। दुआ कैसे कबूल हो और मुसीबत

कैसे दूर हो जबकि न गुनाह छोड़ते हैं न दूसरों को गुनाहों से बचाते हैं। गुनाहों की ज़्यादती की वजह से जब मुसीबतें आती हैं तो नेक बन्दों की भी दुआएँ कबूल नहीं होतीं। बहुत-से लोग जो अपने को नेक समझते हैं और दूसरे भी उनको नेक जानते हैं उन्हें अपनी इबादत और ज़िक्र व विर्द का तो ख़्याल होता है लेकिन दूसरों को यहाँ तक कि अपनी औलाद को भी गुनाहों से नहीं रोकते और उम्मीद रखते हैं कि मुसीबत दूर हो जाए। बड़े तहज्जुद गुज़ार हैं, लम्बे-लम्बे नवाफ़िल पढ़ते हैं, ख़ानक़ाह वाले मुर्शिद हैं, लेकिन लड़के ख़ानक़ाह ही में दाढ़ी मूँड रहे हैं, लड़कियाँ बेपर्दा होकर कालिज जा रही हैं लेकिन अब्बा जान हैं कि अपनी नेकी के घमण्ड में मुब्तला कभी ग़लत हर्फ़ की तरह भी बुराइयों पर रोक-टोक नहीं करते।

एक बस्ती को उलटने का हुक्म

एक हदीस में इरशाद है, अल्लाह तआ़ला ने हज़रत जिबराईल अ़लैहिस्सलाम को हुक्म फ़रमाया कि फ़लाँ-फ़लाँ बस्ती को उसके रहने वालों के साथ उलट दो। हज़रत जिबराईल अ़लैहिस्सलाम ने अ़र्ज़ किया ऐ परवर्दिगार! उनमें आपका फ़लाँ बन्दा भी है, जिसने पलक झपकने के बराबर भी आपकी नाफ़रमानी नहीं की, (क्या उसको भी अ़ज़ाब में शरीक कर लिया जाए)। अल्लाह तआ़ला का इरशाद हुआ कि उस बस्ती को उस शख़्स पर और बाक़ी तमाम रहने वालों पर उलट दो क्योंकि (यह शख़्स ख़ुद तो नेकियाँ करता रहा और नाफ़रमानी से बचता रहा लेकिन) उसके चेहरे पर मेरे (अहकाम के) बारे में कभी किसी वक़्त शिकन (भी) नहीं पड़ी। (मिश्कात)

अमर बिल-मअ़रूफ़ और **नही अ़निल-मुनकर** के फ़रीज़े के अन्जाम देने में कोताही करने का वबाल किस क़द्र है इस हदीस से ज़ाहिर है।

ख़ूब दिल को हाज़िर करके दुआ की जाए

हदीसः (110) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि तुम कबूलियत का यक़ीन रखते हुए अल्लाह तआ़ला से दुआ करो और जान लो कि बेशक अल्लाह तआ़ला ऐसे दिल की दुआ कबूल नहीं फ़रमाता जो ग़ाफ़िल हो और इधर-उधर के ख़्यालात में मशग़ूल हो। (मिश्कात शरीफ़ पेज 195)

तशरीहः इस हदीस मुबारक में दुआ का एक बहुत ज़रूरी अदब बताया

है, और वह यह है कि दुआ करते हुए इसका पुख़्ता यकीन रखना चाहिये कि मेरी दुआ ज़रूर कबूल होगी। इस यकीन में ज़रा-सा भी ढीलापन न हो, और यह भी इरशाद फ़रमाया कि जो दिल ग़ाफ़िल हो और इधर-उधर के ख़्यालात में लगा हुआ हो और ज़बान से दुआ निकल रही हो, अल्लाह तआला उसकी दुआ कबूल नहीं फ़रमाते।

ग़ाफ़िल की दुआ बे-अदबी है

आजकल हम लोग दुआएँ करते हैं, उनमें दोनों तरह की कोताहियाँ होती हैं, और उनमें सबसे बड़ी कोताही यह है कि दुआ करते वक़्त दिल हाज़िर नहीं होता। दिल कहाँ से कहाँ पहुँचा हुआ होता है। कैसे-कैसे ख़्यालात में गुम रहता है और ज़बान से दुआ के अलफ़ाज़ निकलते रहते हैं, यह हमारी अजीब हालत है। अगर कोई शख़्स किसी मामूली अफ़सर को कोई दरख़्वास्त पेश करता है तो बहुत अदब से खड़ा होता है और ख़ूब सोच-समझकर बात करता है और पूरी तरह अपने ज़ाहिर और बातिन से उसकी तरफ़ मुतवज्जह होता है। अगर ज़बान से दरख़्वास्त करे या लिखी हुई दरख़्वास्त हाथ में थमा दे और हाकिम की तरफ़ पीठ फेरकर खड़ा हो जाए या उस मौके पर कमरे की चीज़ों को गिनने लगे या और कोई काम करने लगे जिससे यह वाज़ेह हो जाए कि यह शख़्स अपने दिल से दरख़्वास्त पेश नहीं कर रहा है तो उसको बड़ा बे-अदब समझा जाएगा और उसकी दरख़्वास्त फाड़कर रद्दी की टोकरी मे डाल दी जाएगी और ऊपर से सज़ा भी मिलेगी।

अल्लाह तआला तमाम हाकिमों के हाकिम हैं। अल्लाह की बारगाह में दरख़्वास्त पेश करते हुए दिल का ग़ाफ़िल रहना और दुनियावी धन्धों के ख़्यालात दिल में बसाते हुए ज़बान से दुआ के अलफ़ाज़ निकलना बहुत बड़ी बे-अदबी है। बन्दों की यह हरकत है तो सज़ा क काबिल लेकिन अल्लाह तआला रहीम व करीम हैं इस पर सज़ा नहीं देते, अलबत्ता नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़बानी यह ऐलान फ़रमा दिया है कि ऐसी ग़फ़लत वाली दुआ कबूल न होगी। बहुत-से लोग कहते हैं कि हमारी दुआ कबूल नहीं होती, इतने साल दुआ करते हो गये। उनको चाहिये कि अपनी हालत पर ग़ौर करें और देखें कि दुआ के वक़्त दिल कहाँ होता है। ज़रा दुआ की तरह दुआ करो, फिर उसके फल देखो। दुआ माँगी और पता नहीं

कि क्या माँगा, ऐसी दुआ क्योंकर कबूल हो, ख़ूब समझ लो।

अल्लाह तआला हमको हमेशा दिल के ख़ुलूस और तवज्जोह से दुआ करने की तौफ़ीक़ दे और हमारी दुआएँ कबूल फ़रमाए।

सख़्ती के ज़माने में दुआ कैसे कबूल हो?

हदीसः (111) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिसको यह ख़ुशी हो कि उसकी दुआ अल्लाह तआला सख़्तियों के ज़माने में कबूल फ़रमाए उसको चाहिये कि ख़ुशहाली के ज़माने में ख़ूब कसरत से दुआ किया करे।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 155)

तशरीहः इस पाक हदीस में दुआ कबूल होने का एक बहुत बड़ा गुर बताया है, और वह यह है कि आराम व राहत और माल दौलत और सेहत व तन्दुरुस्ती के ज़माने में बराबर दुआ करते रहना चाहिये। जो शख़्स इस पर अमल करेगा उसके लिए अल्लाह तआला की तरफ़ से यह इनाम होगा कि जब कभी किसी परेशानी में मुब्तला या किसी मुसीबत में गिरफ़्तार होगा या किसी बीमारी में गिरफ़्तार होगा और उस वक़्त दुआ करेगा तो अल्लाह तआला ज़रूर उसकी दुआ कबूल फ़रमाएँगे।

इसमें उन लोगों को तंबीह है जो आराम व राहत, माल व दौलत या ओहदे की बरतरी की वजह से ख़ुदा-ए-पाक की याद से ग़ाफ़िल हो जाते हैं और दुआ की तरफ़ मुतवज्जह नहीं होते और जब मुसीबत आ घेरती है तो दुआ करनी शुरू कर देते हैं, फिर जब दुआ कबूल होने में देर लगती है तो ना-उम्मीद होते हैं और कहते हैं कि हमारी दुआ कबूल नहीं हुई, हालाँकि अगर उस वक़्त दुआ करते जबकि ख़ुशी में मस्त थे और दौलत का घमण्ड था तो उनका उस ज़माने का दुआ करना आज की दुआ मकबूल होने का ज़रिया बन जाता। ग़फ़लत और दुनिया की मस्ती के सबब अल्लाह को भूल जाने की वजह से बहुत सख़्त हाजत-मन्दी और ज़रूरत के वक़्त दुआ की कबूलियत से मेहरूम रह जाते हैं।

हज़रत सलमान रज़ि० का इरशाद

हज़रत सलमान फ़ारसी रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि जब बन्दा चैन और ख़ुशी के ज़माने में दुआ करता है और जब उसे कोई मुश्किल पेश आ

जाती है तो उस वक़्त भी दुआ करता है, उस वक़्त फ़रिश्ते उसकी सिफ़ारिश करते हैं और कहते हैं कि यह तो जानी-पहचानी आवाज़ है, हमेशा यहाँ पहुँचती रहती है। और जब बन्दा चैन और ख़ुशी के ज़माने में दुआ नहीं करता और मुसीबत आने पर दुआ के हाथ फैलाता है तो फ़रिश्ते कहते हैं कि इस आवाज़ को तो हम नहीं पहचानते, पहले तो सुनी नहीं। यह बात कहकर उसकी तरफ़ से बे-तवज्जोही बरतते हैं और दुआ क़बूल होने की सिफ़ारिश नहीं करते। (सिफ़तुस्सफ़्वह)

इनसान की बेरुख़ी और बेग़ैरती

इनसान का जो तरीक़ा है कि मुसीबत में अल्लाह पाक को बहुत याद करता है, लम्बी-चौड़ी दुआएँ करते हुए अपनी हाजतें अल्लाह तआ़ला के हुज़ूर में पेश करता है और चैन व आराम के ज़माने में ख़ुदा-ए-पाक को भूल जाता है, बल्कि ज़िक्र व दुआ के बजाए बग़ावत और सरकशी पर कमर बाँधे रहता है। यह तरीक़ा और रवैया बहुत ही बेग़ैरती का है। बन्दा जिस तरह दुख-तकलीफ़ के ज़माने में अल्लाह का मोहताज है उसी तरह आराम व राहत के ज़माने मे भी ख़ुदा-ए-पाक का मोहताज है। दुख-तकलीफ़ चले जाने पर जो ख़ुदा-ए-पाक को भूल जाते हैं, इस बुरी ख़सलत का क़ुरआन मजीद में जगह-जगह तज़किरा फ़रमाया है, चुनाँचे इरशाद है:

तर्जुमा: और जब इनसान को कोई तकलीफ़ पहुँचती है तो हमको पुकारने लगता है, लेटे भी खड़े भी। फिर जब उसकी वह तकलीफ़ हम हटा देते हैं तो फिर अपनी हालत पर आ जाता है और (इस तरह) गुज़र जाता है गोया उसने हमको (इससे पहले) उस तकलीफ़ के हटाने के लिए पुकारा ही न था जो उसे पहुँची। (सूरः यूनुस आयत 10)

और फ़रमायाः

तर्जुमा: और जब इनसान को कोई तकलीफ़ पहुँचती है तो अपने परवर्दिगार की तरफ़ रुजू करते हुए उसे पुकारने लगता है। फिर जब अल्लाह उसको अपने पास से नेमत अ़ता फ़रमा देता है तो जिसके लिए पहले पुकार रहा था उसको भूल जाता है और ख़ुदा के शरीक बनाने लगता है ताकि अल्लाह की राह से (दूसरों को) गुमराह करे। (सूरः ज़ुमर आयत 8)

दुआ के क़बूल होने का असर मालूम हो या न हो दुआ करना हरगिज़ न छोड़े

हदीसः (112) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हज़रत रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि तुममें से जो शख़्स दुआ करे उसकी दुआ क़बूल होती है जब तक कि जल्दी न मचाये। (फिर जल्दी करने का मतलब बताते हुए इरशाद फ़रमाया कि दुआ करते-करते) कहता है कि मैंने दुआ की सो वह क़बूल न हुई।

(बुख़ारी शरीफ़ पेज 937 जिल्द 2)

तशरीहः इस हदीस से मालूम हुआ कि दुआ क़बूल होने की शर्त यह है कि दुआ करना न छोड़े और यूँ न कहे कि इतना समय और मुद्दत हो गयी दुआ कर रहा हूँ क़बूल नहीं होती। दुआ का ज़ाहिरी असर नज़र आये या न आये बहरहाल दुआ करता रहे। एक हदीस में है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब तक बन्दा ताल्लुक़ और रिश्ता तोड़ने और गुनाह की दुआ न करे उस वक़्त तक उसकी दुआ क़बूल होती रहती है। (और) जब तक जल्दी न करे उसकी दुआ क़बूल होती रहती है। अर्ज़ किया गया या रसूलल्लाह! जल्दी करने का क्या मतलब है? फ़रमाया! जल्दी करने का मतलब यह है कि बन्दा कहता है मैंने दुआ की और दुआ की लेकिन मुझे क़बूल होती नज़र नहीं आती। यह कहता है और इस हालत पर पहुँचकर दुआ करने से थक जाता है और दुआ करना छोड़ बैठता है।

(मुस्लिम शरीफ़)

मालूम हुआ कि दुआ बराबर करता रहे, दुआ करना बन्दे का काम है और क़बूल फ़रमाना अल्लाह तआला का काम है। और यह कहना कि दुआ क़बूल नहीं होती, अकसर यह भी ग़लत होता है। दुआ क़बूल होने का मतलब उमूमन लोग नहीं जानते इसलिए यह समझते हैं कि दुआ क़बूल नहीं हुई।

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो भी कोई मुसलमान अल्लाह तआला से कोई ऐसी दुआ करता है जिसमें गुनाह और क़ता-रहमी (रिश्ता और ताल्लुक़ तोड़ने) का सवाल न हो तो अल्लाह तआला उसको तीन चीज़ों में से एक चीज़ ज़रूर अता फ़रमाते हैं:

(1) या तो वह (ज़ाहिरन) दुआ कुबूल फ़रमा लेते हैं। (यानी जो माँगा वही इनायत फ़रमा देते हैं)।

(2) या दुआ करने वाले को उसकी माँगी हुई चीज़ के बराबर इस तरह अ़ता फ़रमाते हैं कि उस जैसी (आने वाली) मुसीबत टाल देते हैं।

(3) या उस दुआ का अज्र व सवाब (आख़िरत के लिए) ज़ख़ीरा बनाकर रख देते हैं। (मिश्कात शरीफ़ पेज 196)

जब दुआ के क़ुबूल होने का मतलब मालूम हो गया तो यह कहना किसी तरह दुरुस्त नहीं कि मेरी दुआ कुबूल नहीं होती, कुबूल होती है लेकिन क़ुबूलियत की कौनसी सूरत हुई इसका पता बन्दे को नहीं होता। अल्लाह तआ़ला सब कुछ जानने वाला और रहम करने वाला है, वह अपनी हिक्मत और मस्लेहत के मुवाफ़िक़ दुआ कुबूल फ़रमाता है। बन्दे का काम तो यह है कि माँगे जाए और दुनिया व आख़िरत में मुराद लेता रहे।

दुआ के कबूल होने के ख़ास वक़्त और हालात

रात के आख़िरी हिस्से में और फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद वाली दुआ

हदीसः (113) हज़रत अबू उमामा रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सवाल किया गया कि कौन (से वक़्त की) दुआ ऐसी है जो सब दुआ़ओं से बढ़कर कुबूल होने के लायक़ है? हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि पिछली रात में और फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद (जो दुआ हो वह सब दुआ़ओं से बढ़कर कबूल होने के लायक़ है)। (मिश्कात शरीफ़)

तशरीहः इस मुबारक हदीस से मालूम हुआ कि फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद दुआ के कुबूल होने का ख़ास वक़्त होता है। जो लोग नमाज़ पढ़ते हैं उनको रात-दिन पाँच बार यह ख़ुसूसी वक़्त नसीब होता है। फ़र्ज़ नमाज़ के बाद ख़ूब दिल हाज़िर करके दुआ का एहतिमाम और पाबन्दी करनी चाहिये। अलबत्ता जिन फ़र्ज़ों के बाद मुअक्कदा सुन्नतें हैं उनके बाद लम्बी दुआ न करे, मुख़्तसर-सी दुआ करके मुअक्कदा सुन्नतें अदा करे। मुख़्तसर और जामे (यानी मुकम्मल) दुआएँ बहुत-सी हैं, उन्हें इख़्तियार करे। और ज़रूरी नहीं कि अ़रबी ज़बान में दुआ हो, अपनी ज़बान में जो चाहे ख़ैर के मक़सद के लिए

दुआ करे। और हदीस शरीफ़ में यह भी फ़रमाया कि पिछली रात के दरमियान में दुआ के कबूल होने का ख़ास वक़्त है। एक हदीस में इरशाद है कि जब तिहाई रात बाक़ी रह जाती है तो अल्लाह तआला की करीब वाले आसमान पर ख़ास तजल्ली होती है और उस वक़्त अल्लाह तआला इरशाद फ़रमाते हैं: कौन है जो मुझसे दुआ करे? फिर मैं उसकी दुआ क़बूल करूँ। कौन है जो मुझसे सवाल करे? फिर मैं उसको दे दूँ। कौन है जो मुझसे मग़फ़िरत तलब करे? फिर मैं उसकी मग़फ़िरत कर दूँ। (बुख़ारी व मुस्लिम)

जिन लोगों को तहज्जुद की नमाज़ पढ़ने की आदत है उनको रोज़ाना यह वक़्त नसीब होता है जो बहुत सुहाना वक़्त है। उस वक़्त बड़े सुकून के साथ नमाज़ पढ़ने और दुआ करने का मौक़ा मिलता है। न शोर-हंगामा न किसी तरह की आवाज़ें, न बच्चों की लड़ाई-झगड़ा, न और कोई क़िस्सा व झगड़ा, सिर्फ़ अल्लाह से लौ लगाने का वक़्त होता है। अगर तहज्जुद की नमाज़ के लिए उठने की तौफ़ीक़ हो जाए तो क्या कहने, अगर उठना न हो और आँख खुल जाए तब भी कुछ न कुछ उस वक़्त में अल्लाह का ज़िक्र कर ही लेना चाहिये। अगरचे लेटे-लेटे ही हो।

रात में एक ऐसी घड़ी है जिसमें दुआ कबूल होती है

हदीसः (114) हज़रत जाबिर रज़ि० का बयान है कि मैंने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को फ़रमाते हुए सुना कि बेशक रात में एक ऐसी घड़ी है कि जो भी कोई मुसलमान शख़्स उसमें अल्लाह से दुनिया और आख़िरत की किसी ख़ैर का सवाल करेगा अल्लाह तआला उसे ज़रूर इनायत फ़रमा देगा, और यह घड़ी हर रात होती है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 109)

हदीसः (115) हज़रत अबू उमामा रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि मैंने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को फ़रमाते हुए सुना कि जो शख़्स रात को आराम करने के लिए अपने बिस्तर पर पाक हालत में (यानी वुज़ू के साथ) पहुँचा और अल्लाह का ज़िक्र करता रहा यहाँ तक कि उसे नींद ने पकड़ लिया तो रात में किसी भी वक़्त जब करवट बदलते हुए अल्लाह तआला से दुनिया व आख़िरत की किसी चीज़ का सवाल करेगा तो अल्लाह तआला वह ख़ैर उसको अता फ़रमा देगा। (मिश्कात शरीफ़ पेज 110)

तशरीहः हदीस नम्बर 114 से मालूम हुआ कि पूरी रात में एक घड़ी

ज़रूर ऐसी होती है जिसमें दुआ कर ली जाए तो दुआ ज़रूर क़बूल होती है। हदीस में उस घड़ी का पता नहीं दिया, और इस पता न देने में मस्लेहत और हिक्मत यह है कि मोमिन बन्दे रात में वक़्त-बे-वक़्त जब मौक़ा लगे और याद आ जाए लेटे, बैठे दुआ करते रहा करें, दुआ से हरगिज़ ग़ाफ़िल न हों, जब मौक़ा लगे कोई न कोई दुआ माँग लें।

और हदीस नम्बर 115 में इरशाद फ़रमाया कि जो शख़्स वुज़ू की हालत में रात को अपने बिस्तर पर लेटे और अल्लाह का ज़िक्र करते-करते सो जाए तो इस वुज़ू के साथ सोने और ज़िक्र करते-करते नींद आ जाने की वजह से उसे यह शर्फ़ (सम्मान) दिया गया है कि सोते-सोते रात भर में जितनी भी करवट लेगा हर करवट के वक़्त उसकी दुआ क़बूल होगी, चाहे आख़िरत के लिए दुआ माँगे चाहे दुनिया की भलाई की दुआ करे।

रात को जब सोने लगे तो लेटकर सुन्नत के मुवाफ़िक़ दुआएँ पढ़े। सोने से पहले पढ़ने की सूरतें पहले से न पढ़ी हों तो उन्हें पढ़े। तस्बीहाते फ़ातिमा (यानी सुब्हानल्लाहि अल-हम्दु लिल्लाहि अल्लाहु अकबर) पढ़े और इनके अलावा दूसरे ज़िक्र पढ़ते हुए सो जाए और वुज़ू की हालत में सोने की कोशिश करे। फिर जब सोते सोते आँख खुले तो भी अल्लाह का ज़िक्र करे और अल्लाह से दुआ माँगे, यह दुआ ख़ास तौर पर क़बूल होती है जैसा कि ऊपर की हदीस में इरशाद फ़रमाया है। रात को सोते-सोते आँख खुलने पर दुआ के क़बूल होने का वायदा बाज़ ऐसी रिवायतों में भी ज़िक्र हुआ है जिनमें वुज़ू के साथ सोने की क़ैद नहीं है। लिहाज़ा वुज़ू के साथ सोना न हो तब भी जिस वक़्त आँख खुले ज़रूर दुआ करे।

जुमे के दिन एक ख़ास घड़ी है जिसमें ज़रूर दुआ कबूल होती है

हदीसः (116) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि बेशक जुमे के दिन एक ऐसी घड़ी है कि जो कोई मुसलमान बन्दा उसमें किसी ख़ैर का सवाल करेगा अल्लाह तआला उसे ज़रूर अता फ़रमायेंगे। (मिश्कात पेज 119)

तशरीहः इस हदीस पाक से यह मालूम हुआ कि जुमे के दिन में एक ऐसी घड़ी है कि उसमें ज़रूर दुआ कबूल होती है। यह घड़ी किस वक़्त होती

है इसके बारे में रिवायतें मुख़्तलिफ़ हैं। एक हदीस में इरशाद है कि जुमे के दिन जिस घड़ी में दुआ के कबूल होने की उम्मीद की जाती है उसे अ़स्र बाद से लेकर सूरज छुपने तक तलाश करो। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

यानी उस वक़्त में दुआ करो। बाज़े हज़रात इसका इस तरह एहतिमाम करते हैं कि अ़स्र की नमाज़ पढ़कर मग़रिब तक दुआ में लगे रहते हैं ताकि क़बूलियत की घड़ी में भी दुआ हो जाए। बाज़ रिवायतों में यह है कि यह घड़ी उस वक़्त होती है जबकि इमाम ख़ुतबे के दरमियान बैठता है और यह नमाज़ ख़त्म होने तक रहती है (लेकिन ख़ुतबे के दौरान ज़बान से दुआ करना मना है, दिल से दुआ करे और नमाज़ में दुरूद शरीफ़ के बाद तो दुआ आ ही जाती है)। और बाज़ रिवायतों में है कि जुमे की नमाज़ क़ायम होने के वक़्त से लेकर सलाम फेरने तक उक्त घड़ी होती है (इस पर भी यूँ अ़मल हो जाता है कि दुरूद शरीफ़ के बाद नमाज़ में दुआ की जाती है)। और एक हदीस में इरशाद है कि यह घड़ी जुमे के दिन की सबसे आख़िरी घड़ी है।

औरतें जुमे की नमाज़ के लिए मस्जिद में तो नहीं जातीं, न उनपर जुमा फ़र्ज़ है जो ख़ुतबे और नमाज़ के दौरान वाली रिवायतों पर अ़मल कर सकें लेकिन घर में रहते हुए अ़स्र से मग़रिब तक तो दुआ कर सकती हैं। और भी कुछ नहीं तो सूरज छुपने से पहले दुआ में लग जायें, बहुत आसान काम है, मग़रिब के लिए वुज़ू करना ही होगा पन्द्रह-बीस मिनट पहले दुआ में लग जायें और उसी से मग़रिब की नमाज़ पढ़ लें, इसमें कोई दिक़्क़त की बात नहीं।

हज के मौक़े पर अ़रफ़ात में दुआ की बहुत अहमियत है

हदीसः (117) हज़रत अ़मर बिन शुऐब रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि सबसे बेहतर दुआ अ़रफ़े के दिन की है, और सबसे बेहतर अल्लाह का ज़िक्र जो मैंने और मुझसे पहले नबियों ने (अ़रफ़ात में) किया है वह यह है:

ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क लहू लहुल्-मुल्कु व लहुल्-हम्दु व हु-व अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर

यानी अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं वह तन्हा है, उसका कोई शरीक नहीं, उसी के लिए मुल्क है, उसी के लिए तारीफ़ है, और वह हर चीज़ पर

क़ादिर है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 229)

तशरीह: इस हदीस से अरफ़े के दिन दुआ करने की फ़ज़ीलत मालूम हुई। हज का सबसे बड़ा रुक्न मैदाने अरफ़ात में ठहरना है, यह मैदान बहुत बड़ा है जो मक्का शरीफ़ से नौ मील के फ़ासले पर है। हज के एहराम के साथ जो शख़्स मर्द हो या औरत बक़र-ईद की नौ तारीख़ को ज़वाल से लेकर आने वाली रात के ख़त्म होने तक यानी सुबहे-सादिक़ तक ज़रा देर को भी अरफ़ात में गुज़र जाए या ठहर जाए उसका हज हो जाता है। चूँकि यह ठहरना बक़र-ईद की नौ तारीख़ को होता है इसलिए इस तारीख़ को "यौमे अरफ़ा" कहते हैं। हज तो सुबह सादिक होने तक अरफ़ात में पहुँच जाने से हो जाता है और यह आसानी अल्लाह पाक की तरफ़ से दे दी गयी है कि अगली रात को पिछले दिन के साथ शुमार किया ताकि दूर-दराज़ से आने वालों और भूले-भटके लोगों का भी हज हो जाए, कि अगर नवीं तारीख़ को ज़वाल के वक़्त न पहुँच सकें तो उसके बाद भी सुबह-सादिक़ होने तक जब भी पहुँच जायें हज न छूटा अलबत्ता हज का निज़ाम इस तरह से है कि ज़वाल के बाद से लेकर सूरज छुपने तक सब हाजी हज़रात अरफ़ात में रहते हैं। इस छह-सात घण्टे के अन्दर दुआएँ माँगी जाती हैं, इस मौक़े पर दुआ करना बहुत अकसीर है। अपने लिए दुआ करें और आल औलाद के लिए दुआ करें। अपने लिए और सारी दुनिया के मुसलमानों के लिए, साथ ही ज़िन्दों के लिए और मुर्दों के लिए अल्लाह पाक से मग़फ़िरत तलब करें। अटकी हुई हाजतों का सवाल करें, मुश्किलों के हल होने के लिए दुआ माँगें।

जो हज़रात उस वक़्त की कीमत समझते हैं और दुआ का ज़ौक़ (दिलचस्पी और रुझान) रखते हैं, छह-सात घण्टे का वक़्त दुआ ही में ख़र्च कर देते हैं। लेकिन बहुत-से मर्द और औरत इस मुबारक मौक़े पर भी दुआ से ग़फ़लत बरतते हैं, खाने-पीने में ज़्यादा वक़्त लगा देते हैं, बल्कि बाज़ लोग तो इस मौक़े पर रेडियो और टेपरिकार्डर के ज़रिये गाने वग़ैरह भी सुनते हैं। जो शख़्स वहाँ से भी मेहरूम आ गया वह कहाँ पायेगा।

और बाज़ दुनिया के तालिब इस मुबारक मौक़े पर बन्दों से सवाल करते रहते हैं जो बहुत बड़ी मेहरूमी है। हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु ने एक शख़्स को देखा कि अरफ़ात में लोगों से सवाल कर रहा है, आपने उससे फ़रमाया तू आजके दिन और इस जगह अल्लाह को छोड़कर दूसरों से माँग

रहा है? यह फ़रमा कर उसके एक कोड़ा रसीद फ़रमाया। (मिश्कात)

हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब अरफ़ा का दिन होता है तो बिला शुब्हा अल्लाह तआला की दुनिया के करीब वाले आसमान पर ख़ास तजल्ली होती है और अल्लाह तआला अरफ़ात में हाज़िर होने वाले बन्दों को फ़रिश्तों के सामने पेश फ़रमा कर इरशाद फ़रमाते हैं कि देखो मेरे बन्दों की तरफ़ मेरे पास बाल बिखरे हुए, गुबार में भरे हुए (लब्बैक) पुकारते हुए दूर वाले कुशादा रास्ते में आये हैं, मैं तुमको गवाह बनाता हूँ कि मैंने इनको बख़्श दिया। इस पर फ़रिश्ते अर्ज़ करते हैं कि ऐ अल्लाह! इनमें आपका फ़लाँ बन्दा और फ़लाँ बन्दी ऐसे हैं कि उनको बड़े-बड़े गुनाहों का मुजरिम समझा जाता है। उनके जवाब में अल्लाह तआला फ़रमाते हैं कि मैंने (सब को) बख़्श दिया। उसके बाद हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि कोई दिन ऐसा नहीं है जिसमें दोज़ख़ से आज़ाद होने वालों की तायदाद अरफ़ा के दिन में दोज़ख़ से आज़ाद होने वालों की तायदाद से ज़्यादा हो। (मिश्कात शरीफ़)

एक और हदीस में है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि किसी दिन भी शैतान इस क़द्र ज़लील व ख़्वार और हक़ीर और जलन के मारे गुस्से में भरा हुआ नहीं देखा गया जितना अरफ़ा के दिन में इस हाल में देखा गया। और यह इस वजह से कि उसने इस दिन अल्लाह तआला की रहमत उतरती हुई देखी और बड़े-बड़े गुनाह जो अल्लाह पाक ने माफ़ फ़रमा दिये उसे इसका पता चला अलबत्ता सिर्फ़ एक दिन ऐसा गुज़रा है कि उस दिन अरफ़ा के दिन से भी बढ़कर ज़लील व हक़ीर और जलन से गुस्से में भरा हुआ देखा गया। यह बदर की लड़ाई का दिन था। अर्ज़ किया गया कि बदर के दिन को क्या बात नज़र आई? फ़रमाया उसने यह देखा कि हज़रत जिबराईल अलैहिस्सलाम फ़रिश्तों को (मक्का के काफ़िरों से जंग करने के लिए) तरतीब दे रहे हैं। (मिश्कात शरीफ़)

मक्का मुकर्रमा में दुआ कबूल होने के स्थान

हसन बसरी रहमतुल्लाहि अलैहि ने अपने एक ख़ुतबे में मक्का वालों को लिखा था कि मक्का मुकर्रमा में पन्द्रह स्थानों में दुआ कबूल होती है।

(1) तवाफ़ करते हुए (2) मुल्तज़म पर चिमट कर (3) मीज़ाब के

नीचे (काबा शरीफ़ की छत से पानी बहकर नीचे आने का जो परनाला है उसे मीज़ाबे रहमत कहते हैं और यह हतीम में गुज़रता है। इसके नीचे दुआ कबूल होती है) (4) काबा शरीफ़ के अन्दर (5) ज़मज़म के कुओं के करीब (6) सफ़ा पर (7) मरवा पर (8) सफ़ा-मरवा के दरमियान सई करते हुए (9) मकामे इब्राहीम के पीछे (10) अ़रफ़ात में (11) मुज़दलिफ़ा में (12) मिना में। (13, 14, 15) तीनों जमरात के करीब। (हिस्ने हसीन)

मुल्ला अ़ली क़ारी रह० लिखते हैं कि मक्का मुकर्रमा में दुआ के क़बूल होने के मुक़ामात (स्थानों) की तायदाद पन्द्रह में सीमित नहीं है। रुक्ने यमानी पर, और रुक्ने यमानी व हज्रे अस्वद के दरमियान भी दुआ कबूल होती है। साथ ही अर्क़म और ग़ारे-सौर और ग़ारे-हिरा को भी मुल्ला अ़ली क़ारी ने दुआ के कबूल होने के मुक़ामात में शुमार कराया है। (हाशिया हिस्ने हसीन)

हज़रत हसन बसरी रह० के ज़िक्र फ़रमाये हुए पन्द्रह मौके (स्थान) लिखने के बाद हिस्ने-हसीन के मुसन्निफ़ अ़ल्लामा जज़री फ़रमाते हैं:

"हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की क़ब्र शरीफ़ के करीब दुआ क़बूल न होगी तो फिर किस जगह दुआ क़बूल होगी"

(यानी रोज़ा-ए-अक़्दस पर जब सलाम अ़र्ज़ करने के लिए हाज़िरी दें तो क़िब्ले रुख़ होकर अल्लाह पाक से भी दुआ करें)। काबे शरीफ़ पर नज़र पड़े तो उस वक़्त भी दुआ करे। उस मौके पर दुआ कबूल होने के बारे में बाज़ रिवायतें बयान हुई हैं। (जैसा कि तुहफ़तुज़्ज़ाकिरीन और हिस्ने हसीन में बयान किया गया है)।

अज़ान के वक़्त और जिहाद के वक़्त और बारिश के वक़्त दुआ ज़रूर कबूल होती है

हदीसः (118) हज़रत सहल बिन सअ़द रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि दो दुआएँ ऐसी हैं जो रद्द नहीं की जातीं (यानी ज़रूर कबूल होती हैं)। या (फ़रमाया) कि बहुत कम ऐसा होता है कि उनको रद्द कर दिया जाए। (रिवायत बयान करने वाले को शक है):

(1) अज़ान के वक़्त की दुआ।

(2) और जिहाद के मौके पर, जंग करते वक़्त जब (मुसलमान और

काफ़िर आपस में एक-दूसरे को क़त्ल कर रहे हों) और एक रिवायत में यह भी है कि बारिश के वक़्त दुआ ज़रूर क़बूल होती है। (मिश्कात पेज 66)

तशरीहः इस हदीस में दुआ कबूल होने के तीन ख़ास मौक़े ज़िक्र फ़रमाए हैं: अव्वल अज़ान के वक़्त, इसमें अज़ान के शुरू होते वक़्त दुआ करना, अज़ान के दरमियान दुआ करना दोनों सूरतें आ जाती हैं। और अज़ान के ख़त्म पर दुआ की मक़बूलियत का वायदा भी एक रिवायत में आया है, चुनाँचे हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है एक शख़्स ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! बेशक अज़ान देने वाले हमसे फ़ज़ीलत में बढ़े जा रहे हैं (हमको यह फ़ज़ीलत कैसे हासिल हो)। इसके जवाब में आँ हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तुम उसी तरह कहते जाओ जैसे अज़ान देने वाले कहते हैं। फिर जब अज़ान का जवाब ख़त्म हो जाए तो अल्लाह से सवाल करो, जो माँगोगे दे दिया जायेगा। (अबू दाऊद)

दूसरी हदीस में ज़िक्र है कि जब मुअज़्ज़िन की अज़ान सुने तो जिस तरह वह कहे उसी तरह कहता जाए अलबत्ता ''हय्-य अ़लस्सलाति'' और ''हय्-य अ़लल्-फ़लाहि'' के दरमियान ''ला हौ-ल व ला क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाहि'' कहे। जब अज़ान का जवाब दे चुके तो दुरूद शरीफ़ पढ़कर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लिए अल्लाह से वसीले का सवाल करे। वसीला जन्नत में एक बुलन्द दर्जा है यह अल्लाह के एक ही बन्दे को मिलेगा। आपने फ़रमाया कि मैं उम्मीद करता हूँ कि वह एक बन्दा मैं ही हूँ। पस जिसने मेरे लिए वसीले का सवाल किया उसके लिए मेरी शफ़ाअ़त हलाल हो गयी यानी उसने ऐसा काम किया जिसकी वजह से सिफ़ारिश करवाने का रास्ता निकाल लिया। (मिश्कात शरीफ़)

अज़ान के बाद की जो दुआ रिवायतों में आई है यानीः

''**अल्लाहुम्-म रब्-ब हाज़िहिद्-दअ़्वतित् ताम्मति**......आख़िर तक'' उसमें वसीले का सवाल मौजूद है। यह मुख़्तलिफ़ वक़्तों की दुआओं के तहत में आ रही है इन्शा-अल्लाह।

एक हदीस में इरशाद है किः

''अज़ान व तकबीर के दरमियान दुआ रद्द नहीं की जाती''

यानी जिस वक़्त अज़ान हो रही हो और जिस वक़्त तकबीर हो रही हो उस वक़्त दुआ ज़रूर कबूल होती है। और दूसरा मतलब यह बताया है कि

अज़ान ख़त्म होने के बाद से तकबीर के ख़त्म होने तक जो वक़्फ़ा (अंतराल) है उसमें दुआ ज़रूर क़बूल होती है। (बज़्लुल्-मजहूद) मोमिन बन्दे को लगा रहना चाहिये, अपने रब से माँगता ही रहे।

दुआ के क़बूल होने का दूसरा ख़ास मौक़ा यह बताया है कि जब मुसलमानों और काफ़िरों में जंग हो रही हो और एक-दूसरे को क़त्ल कर रहे हों वह वक़्त भी दुआ की क़बूलियत का है। दर हक़ीक़त वह वक़्त बहुत कठिन होता है। उस वक़्त अल्लाह को याद करना और अल्लाह से माँगना वाक़ई अल्लाह से ख़ास ताल्लुक़ की दलील है। उस मौक़े पर दुआ की तरफ़ वही शख़्स मुतवज्जह होगा जिसके दिल में दुआ की बड़ाई और अहमियत होगी, और दुआ भी दिल के ख़ुलूस से निकलेगी। अफ़सोस है कि मुसलमानों ने इस्लामी जिहाद छोड़ दिया है, इसलिए ग़ैरों की नज़रों में हक़ीर (ज़लील और गिरे हुए) हैं और जिहाद की ख़ास बरकतों से मेहरूम हैं। अगर कहीं जंग है तो मुसलमानों में है या काफ़िरों से है तो इस्लाम के मुताल्लिक़ नहीं और अल्लाह के लिए नहीं बल्कि वतन और मुल्क के लिए है। इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन।

ऊपर की हदीस में दुआ के क़बूल होने का तीसरा ख़ास मौक़ा बताते हुए इरशाद फ़रमाया कि बारिश के वक़्त दुआ क़बूल होती है। बारिश ख़ुद अल्लाह की रहमत है। जिस वक़्त रहमत मुतवज्जह हो उस वक़्त दुआ कर ली जाए तो दूसरी रहमत भी मुतवज्जह हो जाती है, यानी अल्लाह की बारगाह में दुआ क़बूल कर ली जाती है। मुसलमानों को चाहिये कि इस मौक़े पर अल्लाह तआला से दुनिया व आख़िरत की ख़ैर तलब करें। तौफ़ीक़ देने वाला तो अल्लाह ही है।

रमज़ान मुबारक में दुआ की मक़बूलियत

हदीसः (119) हज़रत उबादा बिन सामित रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि एक दिन हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया जबकि रमज़ान का महीना आ चुका था कि तुम्हारे पास रमज़ान का महीना आ गया है। यह बरकत का महीना है। इसमें अल्लाह तुमको ग़नी फ़रमा देगा। पस रहमत नाज़िल फ़रमाएगा और गुनाहों को माफ़ फ़रमाएगा। और इस महीने में दुआ क़बूल फ़रमाएगा। (और फ़रमाया कि) अल्लाह तआला तुम्हारे उम्दा

आमाल को देखता है और तुमको फ़रिश्तों के सामने पेश फ़रमाकर फ़ख़्र फ़रमाता है, लिहाज़ा तुम अल्लाह तआ़ला की बारगाह में अपनी तरफ़ से अच्छे आमाल पेश करो क्योंकि बद-नसीब (अभागा) वह है जो इस महीने में अल्लाह की रहमत से मेहरूम कर दिया गया।

(मज्मउज़्-ज़वाइद पेज 142 जिल्द 3)

तशरीहः इस हदीस से मालूम हुआ कि रमज़ान मुबारक का महीना दुआ़ओं की कबूलियत का ख़ास महीना है। इस महीने में जिस तरह दूसरी इबादतों में ख़ूब बढ़-चढ़कर वक़्त लगाया जाए इसी तरह दुआ़एँ भी ख़ूब की जाएँ ख़ुसूसियत के साथ शबे-क़द्र में ख़ूब लगन के साथ दुआ़ करें।

मुर्ग़ की आवाज़ सुनो तो अल्लाह के फ़ज़्ल का सवाल करो

हदीसः (120) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब तुम मुर्ग़ की आवाज़ सुनो तो अल्लाह तआ़ला से उसके फ़ज़्ल और मेहरबानी का सवाल करो, क्योंकि (वह इसलिए चीख़ा कि) उसने फ़रिश्ता देखा। और जब तुम गधे के बोलने की आवाज़ सुनो तो शैतान मर्दूद से अल्लाह की पनाह माँगो (यानी अऊज़ु बिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम पढ़ो) क्योंकि (वह इसलिए चीख़ा कि) उसने शैतान को देखा। (मिश्कात शरीफ़ पेज 213)

तशरीहः इस हदीस से मालूम हुआ कि जब मुर्ग़ अज़ान दे तो उस वक़्त अल्लाह के फ़ज़्ल का सवाल करे जैसे यूँ कहेः

अल्लाहुम्-म इन्नी अस्अलु-क मिन् फ़ज़्लि-क

क्योंकि मुर्ग़ फ़रिश्तों को देखकर बोलता है। फ़रिश्तों का आना यूँ भी मुबारक है, फिर जब बन्दे उस मौके पर दुआ़ करेंगे तो इसका ज़्यादा गुमान है कि फ़रिश्ते भी आमीन कह दें। उनकी आमीन हमारी दुआ़ के साथ लग जाए तो कबूलियत से ज़्यादा करीब हो जाने में क्या शक है।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह भी फ़रमाया कि गधे की आवाज़ सुनो तो शैतान मर्दूद से अल्लाह की पनाह माँगो क्योंकि गधा ऐसे मौके पर बोलता है जबकि उसे शैतान नज़र आता है। ज़ाहिर है कि शैतान दिल में वस्वसे डालने के लिए और तरह-तरह की तकलीफ़ें पहुँचाने के लिए मुसलमानों के पास आता है। इनसानों को तो नज़र नहीं आता, गधे को नज़र

आ जाता है। गधे की आवाज़ इनसानों को चौंका देती है कि तुम्हारे आस-पास तुम्हारा दुश्मन है लिहाज़ा इस मर्दूद से अल्लाह की पनाह माँगनी चाहिये। एक हदीस में यह भी फ़रमाया है कि जब रात को कुत्ते की आवाज़ सुनो तब भी शैतान मर्दूद से पनाह माँगो। इसकी वजह भी वही है कि रात को जो शयातीन फैल पड़ते हैं और कुत्ते उनको देख-देखकर भौंकते हैं। हमको हुक्म हुआ कि ऐसे मौक़े पर **अऊज़ु बिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम** पढ़ लें।

हर मुश्किल के लिए नमाज़ पढ़ी जाए

हदीसः (121) हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्ल० की यह आदत थी कि जब कोई दुश्वारी पेश आती थी तो नमाज़ पढ़ने में मशग़ूल हो जाते थे। (अबू दाऊद पेज 187 जिल्द 1)

तशरीहः क़ुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमाः ऐ ईमान वालो! मदद माँगो सब्र और नमाज़ के साथ।

(सूरः ब-क़रः आयत 153)

जब कोई मुश्किल पेश आये, या किसी मुसीबत का सामना हो तो सब्र और नमाज़ के साथ अल्लाह से मदद माँगी जाये। सब्र बहुत बड़ी चीज़ है। इस पर सवाब भी मिलता है और इसकी वजह से अल्लाह तआला मुसीबत भी दूर फ़रमाते हैं। जब मोमिन बन्दा मुसीबत के दूर होने का इन्तिज़ार करता है तो अल्लाह पाक की रहमत मुतवज्जह होती है और मुसीबत दूर कर दी जाती है। जिसको सब्र की दौलत मिल गयी वह बहुत बड़ी दौलत से नवाज़ा गया। (बुख़ारी व मुस्लिम)

मुसीबत दूर करने का दूसरा ज़रिया नमाज़ है। नमाज़ बहुत बड़ी चीज़ है। बन्दे को अल्लाह तआला से खुसूसी ताल्लुक नमाज़ के ज़रिये पैदा हो जाता है।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को नमाज़ से बहुत ही ज़्यादा मुहब्बत थी। आपने फ़रमाया कि मेरी आँखों की ठण्डक नमाज़ में कर दी गयी है। और आप रातों को इस क़द्र नमाज़ें पढ़ते थे कि क़दम मुबारक सूज जाते थे। फिर अगर कोई मुश्किल दरपेश हो जाती तो ख़ुसूसियत के साथ नमाज़ की तरफ़ और ज़्यादा मुतवज्जह हो जाते थे। फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद जो दुआ की जाए उसका क़बूलियत से ज़्यादा क़रीब होना पिछले पन्नों में बयान हो

चुका है। तहज्जुद के वक़्त और फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद ख़ुसूसियत के साथ दुआ किया करें और कभी "सलातुल्-हाजत" भी पढ़ लिया करें जिसे "नमाज़े हाजत" भी कहते हैं। इसमें हर हाजत के पूरा होने का सवाल है।

नमाज़े हाजत

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अबी औफ़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिसे अल्लाह से कोई हाजत हो या किसी बन्दे से कोई हाजत हो तो वुज़ू करे, फिर दो रक्अ़तें पढ़कर अल्लाह की तारीफ़ बयान करे और नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर दुरूद पढ़े और फिर यह पढ़े:

ला इला-ह इल्लल्लाहुल् हलीमुल् करीम। सुब्हानल्लाहि रब्बिल् अ़र्शिल् अ़ज़ीमि वल्-हम्दु लिल्लाहि रब्बिल् आ़लमीन। अस्अलु-क मूजिबाति रहमति-क व अ़ज़ाइ-म मग़फ़ि-रति-क वल्-ग़नीम-त मिन कुल्लि बिर्रिन् वस्सलाम-त मिन कुल्लि इस्मिन ला त-दअ़ ली ज़म्बन् इल्ला ग़फ़र्तहू व ला हम्मन् इल्ला फ़र्रजतहू व ला हाजतन् हि-य ल-क रिज़न् इल्ला क़ज़ैतहा या अर्हमर्राहिमीन।

तर्जुमा: अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं है जो हलीम व करीम है। अल्लाह पाक है जो अ़ज़ीम अ़र्श का रब है और सब तारीफ़ें अल्लाह ही के लिए हैं। ऐ अल्लाह! मैं तुझसे तेरी रहमत को वाजिब करने वाली चीज़ों का और उन चीज़ों का सवाल करता हूँ जो तेरी मग़फ़िरत को ज़रूरी कर दें। और हर भलाई में अपना हिस्सा और हर गुनाह से सलामती चाहता हूँ। ऐ सब से ज़्यादा रहम करने वाले! मेरा कोई गुनाह बख़्शे बग़ैर कोई रंज दूर किये बग़ैर और कोई हाजत जो तुझे पसन्द हो पूरी किये बग़ैर न छोड़।

बद्-दुआ करने से परहेज़ लाज़िम है

हदीसः (122) हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अपनी जानों और अपनी औलाद और अपने मालों के लिए बद्-दुआ न करो। ऐसा न हो कि तुम किसी मक़बूलियत की घड़ी में अल्लाह तआ़ला से सवाल कर बैठो और वह कबूल फ़रमा ले। (मिश्कात शरीफ़ पेज 194)

तशरीहः दुआ बहुत बड़ी इबादत है। एक हदीस में इसको इबादत का

मग़ज़ बताया है। और ज़ाहिर है कि जो चीज़ इतनी बड़ी होगी उसके कुछ आदाब भी होंगे, और आदाब भी नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ही से मालूम हो सकते हैं। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ही ने बन्दों को अल्लाह से जोड़ा, और ग़ाफ़िलों को अल्लाह से लौ लगाने की तरफ़ तवज्जोह दिलाई, दुआ की फ़ज़ीलत बताई और उसके तरीक़े समझाये। दुआ के अलफ़ाज़ बताये और आदाब सिखाये।

एक हदीस में एक ख़ास नसीहत फ़रमाई है और वह यह कि दुआ हमेशा ख़ैर की करनी चाहिये। दुख, तकलीफ़, बुराई और नुक़सान की कभी दुआ न माँगे। कैसी भी कोई तकलीफ़ हो, अपने लिए या औलाद के लिए या जान व माल के लिए हरगिज़ बद्-दुआ के अलफ़ाज़ ज़बान से न निकाले। औरतों को इस नसीहत की तरफ़ ख़ुसूसियत के साथ तवज्जोह देने की ज़रूरत है क्योंकि कोसने पीटने में उनकी ज़बान बहुत चलती है। बात-बात में शौहर को, बच्चों को, जानवरों को यहाँ तक कि घर की हर चीज़ को अपनी बद्-दुआ का निशाना बना देती हैं। जहाँ किसी बच्चे ने कोई शरारत की, कह दिया कि तुझे ढाई घड़ी की आये। किसी को कह दिया लोटती-लिया। किसी को हैज़े की कुल्ली की बद्-दुआ दे दी, किसी को अल्लाह-मारा बना दिया, और कोई सामने न आया तो बकरी ही को कोसने लगीं, मुर्ग़ी का नास खोया, कपड़े को आग लगने की बद्-दुआ दे दी। लड़के को कह दिया तू मर जाता, लड़की को कह दिया कि तेरा बुरा हो, वग़ैरह वग़ैरह।

ग़रज़ यह कि कोसने-पीटने का और बद्-दुआ का ढेर लगा देती हैं और यह नहीं समझतीं कि उनमें से अगर कोई बद्-दुआ अल्लाह तआला के यहाँ मक़बूल हो गयी और कोई बच्चा मर गया, या माल को आग लग गयी या और किसी तरह का नुक़सान हो गया तो क्या होगा? बहुत-सी बार ऐसा होता है कि मक़बूलियत की घड़ी में बद्-दुआ के अलफ़ाज़ मुँह से निकल जाते हैं और जो माँगा वह मिल जाता है। जब किसी तरह का कोई जानी माली नुक़सान पहुँच जाता है तो रोने और टसवे बहाने बैठ जाती हैं और यह नहीं समझतीं कि यह बद्-दुआ का नतीजा है, अब रोने से क्या होता है? अल्लाह से जो माँगा मिल गया। पहले से ज़बान पर क़ाबू क्यों न रखा। बहुत-से मर्द भी ऐसी जाहिलाना हरकत करते हैं कि अपने लिए या औलाद के लिए या कारोबार के लिए बद्-दुआ ज़बान से निकाल बैठते हैं। मर्द हो या औरत

सबको इस हदीस में तंबीह फ़रमायी कि अपने लिए और अपनी जान व माल के लिए बद्-दुआ न करें।

अल्लाह तआ़ला के क़ब्ज़े व क़ुदरत में सब कुछ है। वह नफ़े नुक़सान का मालिक है। मौत हो या ज़िन्दगी उसके इरादे के बग़ैर नहीं हो सकती। वह कुल मुख़्तार है जो चाहे कर सकता है। उससे माँगना है तो बदहाली और नुक़सान और बुराई की दुआ क्यों माँगे? उससे हमेशा ख़ैर ही की दुआ माँगना लाज़िम है।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम एक सहाबी की बीमार-पुरसी के लिए तशरीफ़ ले गये। वह कमज़ोरी के सबब चूज़े की तरह नज़र आ रहे थे। उनका हाल देखकर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने दरियाफ़्त फ़रमाया कि तुम अल्लाह से किस चीज़ की दुआ करते रहे हो? या किसी बात का सवाल करते रहे हो? उन्होंने अ़र्ज़ किया मैं यह दुआ करता था कि ऐ अल्लाह! मुझे आप आख़िरत में जो सज़ा देने वाले हैं वह सज़ा अभी मुझे दुनिया में दे दीजिए। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया सुब्हान्नल्लाह! तुम्हें इस (अ़ज़ाब के सहने) की ताक़त नहीं है। तुमने यह दुआ क्यों न कीः

अल्लाहुम्-म आतिना फ़िद्दुन्या ह-स-नतंव्-व फ़िल्-आख़ि-रति ह-स-नतंव्-व क़िना अ़ज़ाबन्नार।

तर्जुमाः ऐ हमारे रब! हमें दुनिया में भलाई दे और आख़िरत में भी भलाई दे। (यानी दोनों जहान में अच्छी हालत में रख) और दोज़ख़ के अ़ज़ाब से बचा।

इस हदीस के रिवायत करने वाले हज़रत अनस रज़ि० फ़रमाते हैं कि उस दिन के बाद उन साहिब ने यही दुआ की और अल्लाह तआ़ला ने उनको शिफ़ा दे दी। (मुस्लिम)

इस हदीस से भी मालूम हुआ कि दुआ सोच-समझकर माँगनी चाहिये और दुख-तकलीफ़ की कभी दुआ न माँगे और अल्लाह से हमेशा ख़ैर का सवाल करे। जिन सहाबी का अभी ऊपर वाक़िआ बयान हुआ उनको हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने दुआ **अल्लाहुम्-म आतिना फ़िद्दुन्या ह-स-नतंव्-व फ़िल्-आख़ि-रति ह-स-नतंव्-व क़िना अ़ज़ाबन्नार** तालीम फ़रमाई। यह दुआ बहुत जामे है। इसमें दुनिया व आख़िरत की हर भलाई का

सवाल आ जाता है।

हज़रत अनस रज़ि० का बयान है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को जामे दुआएँ पसन्द थीं। जामे से मुराद वह दुआ है जिसमें दुनिया व आख़िरत की सब हाजतों या बहुत-सी हाजतों का सवाल हो जाये। उसमें अलफ़ाज़ कम होते हैं और मायनों का फैलाव ज़्यादा होता है। उन्ही जामे दुआओं में आफ़ियत की दुआ भी है।

हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ि० से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम (एक बार) मिम्बर पर तशरीफ़ ले गये, फिर उस वक़्त के बाज़ ज़ाहिरी व बातिनी हालात व कैफ़यतों की वजह से) रोने लगे, उसके बाद फ़रमाया ऐ लोगो! अल्लाह तआला से माफ़ी का और आफ़ियत (अमन-चैन) का सवाल करो, क्योंकि किसी शख़्स को ईमान की दौलत के बाद आफ़ियत से बढ़कर कोई चीज़ नहीं मिली। (तिर्मिज़ी)

आफ़ियत बहुत जामे लफ़्ज़ है। (यानी इसके मायनों में बहुत फैलाव है) सेहत, तन्दुरुस्ती, सलामती, आराम, चैन, सुकून, इतमीनान, इन सब में शामिल है। आफ़ियत की दुआ बहुत ज़्यादा करनी चाहिये। दुनिया व आख़िरत में आफ़ियत नसीब होने की दुआ किया करें। अगर ये अलफ़ाज़ याद कर लें तो बेहतर है:

अल्लाहुम्-म इन्नी अस्अलुकल् आफ़िय-त वल्-मुआफ़ा-त फ़िद्दुन्या वल्-आख़िरति।

तर्जुमा: ऐ अल्लाह! मैं आप से आफ़ियत का और हर ना-पसन्दीदा और बुराई से हिफ़ाज़त का सवाल करता हूँ दुनिया में भी और आख़िरत में भी।

एक और हदीस में इरशाद है:

"अल्लाह तआला से कोई बन्दा कोई सवाल ऐसा नहीं करता जो अल्लाह के नज़दीक आफ़ियत के सवाल से ज़्यादा पसन्दीदा हो"

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि० से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने चचा हज़रत अब्बास रज़ि० से फ़रमाया:

"आफ़ियत की दुआ बहुत ज़्यादा किया करो"

जब अल्लाह तआला से माँगना ही है तो मुसीबत और नुक़सान और मौत की दुआ क्यों माँगे? नफ़े भलाई और ख़ैर की दुआ क्यों न माँगे। अल्लाह तआला हर मुसलमान को आफ़ियत से रखे और दुआ के आदाब को

समझने और जानने की तौफ़ीक़ दे, आमीन।

मुख़्तलिफ़ वक़्तों की मुख़्तलिफ़ दुआएँ

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से तक़रीबन हर मौक़े और हर मुक़ाम की दुआएँ नक़्ल की गयी हैं। उनमें से तक़रीबन सौ दुआएँ लिखी जाती हैं। इन दुआओं का ख़ास एहतिमाम करना चाहिये, इनको मौक़ा-ब-मौक़ा पढ़ने से ज़िक्र की अधिकता की दौलत नसीब हो जाती है। इस सिलसिले में हमने एक किताब "मसनून दुआएँ" लिखी है। उसी किताब में से चुनकर ये दुआएँ लिख रहे हैं। किसी को ज़्यादा रग़बत और शौक़ हो तो उक्त किताब हासिल करके और ज़्यादा दुआएँ सीख ले। इन दुआओं के साथ "मुनाजाते मक़बूल" या "अल्-हिज़बुल् आज़म" की भी रोज़ाना एक-एक मन्ज़िल पढ़ा करें। इन दोनों किताबों में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वे दुआएँ जमा कर दी गयी हैं जो वक़्तों के साथ मख़्सूस नहीं हैं और उनको सात मन्ज़िलों पर तक़सीम कर दिया है ताकि एक मन्ज़िल रोज़ाना पढ़ ली जाये।

जब सुबह हो तो यह दुआ पढ़ेः

अल्लाहुम्-म बि-क अस्बह्ना व बि-क अमसैना व बि-क नह्या व बि-क नमूतु व इलैकल् मसीर

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! तेरी क़ुदरत से हम सुबह के वक़्त में दाख़िल हुए और तेरी क़ुदरत से हम शाम के वक़्त में दाख़िल हुए और तेरी क़ुदरत से हम जीते और मरते हैं, और तेरी ही तरफ़ जाना है।

जब सूरज निकले तो यह पढ़ेः

अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी अक़ालना यौमना हाज़ा व लम् युह्लिक्ना बिज़ुनूबिना

तर्जुमाः सब तारीफ़ें अल्लाह ही के लिये हैं जिसने आज के दिन हमें माफ़ रखा और गुनाहों के सबब हमें हलाक न फ़रमाया। (मुस्लिम)

जब शाम हो यह दुआ पढ़ेः

अल्लाहुम्-म बि-क अमसैना व बि-क अस्बह्ना व बि-क नह्या व बि-क नमूतु व इलैकन्-नुशूर

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! हम तेरी ही क़ुदरत से शाम के वक़्त में दाख़िल हुए

और तेरी क़ुदरत से सुबह के वक़्त में दाख़िल हुए और तेरी क़ुदरत से जीते हैं और मरते हैं और मरने के बाद ज़िन्दा होकर तेरी ही तरफ़ जाना है।

(तिर्मिज़ी शरीफ़)

हज़रत उसमान रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया है जो बन्दा हर सुबह व शाम तीन बार ये कलिमात पढ़ लिया करे तो उसे कोई चीज़ नुक़सान न पहुँचाएगीः

बिस्मिल्लाहिल्लज़ी ला यज़ुर्रु म-अ़ इस्मिही शैउन् फ़िल्-अर्ज़ि व ला फ़िस्समा-इ व हुवस्समीउल्-अ़लीम

तर्जुमाः अल्लाह के नाम से हमने सुबह की (या शाम की) जिसके नाम के साथ आसमान या ज़मीन में कोई चीज़ नुक़सान नहीं दे सकती, और वह सुनने वाला और जानने वाला है। (तिर्मिज़ी)

और फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि जो शख़्स सुबह को यह पढ़ लेः

अल्लाहुम्-म मा अस्ब-ह बी मिन् नेअ्मतिन् औ बि-अ-हदिन् मिन् ख़ल्कि-क फ़-मिन्-क वह्द-क ला शरी-क ल-क फ़-लकल् हम्दु व ल-कश्शुक्रु

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! इस सुबह के वक़्त जो भी कोई नेमत मुझ पर या किसी भी दूसरी मख़्लूक़ पर है वह सिर्फ़ तेरी ही तरफ़ से है। तू तन्हा है तेरा कोई शरीक नहीं, तेरे ही लिए तारीफ़ है और तेरे ही लिए शुक्र है।

(अबू दाऊद शरीफ़)

तो उसने उस दिन के अल्लाह के इनामों का शुक्रिया अदा कर दिया। और अगर शाम को कह ले तो उस रात के अल्लाह के इनामों का शुक्रिया अदा कर दिया। (अबू दाऊद)

फ़ायदाः अगर शाम को पढ़े तो "मा अस्बहना बी" की जगह "मा अम्सैना बी" कहे।

और हज़रत सोबान रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो मुसलमान बन्दा सुबह व शाम तीन बार ये कलिमात पढ़ ले तो अल्लाह के ज़िम्मे होगा कि क़ियामत के दिन उसे राज़ी करेः

रज़ीतु बिल्लाहि रब्बन् व बिल्-इस्लामि दीनन् व बिमुहम्मदिन् नबिय्यन्

तर्जुमाः मैं अल्लाह तआला को रब मानने पर और इस्लाम को दीन मानने पर और मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को नबी मानने पर राज़ी हूँ। (तिर्मिज़ी)

रात को पढ़ने की चीज़ें

1. हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने इरशाद फ़रमाया कि जो शख़्स हर रात में सूरः वाक़िआ़ (पारः 27) पढ़ लिया करे उसे फ़ाक़ा न होगा। (शुअ़बुल् ईमान)

2. हज़रत उसमान रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि जो शख़्स सूरः आलि इमरान की आख़िरी दस आयतें "इन्-न फ़ी ख़ल्क़िस्समावाति वल्-अर्ज़ि" से सूरः के आख़िर तक किसी रात को पढ़ ले तो उसे रात भर नमाज़ पढ़ने का सवाब मिलेगा। (मिश्कात)

3. हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम रात को जब तक सूरः अलिफ़ लाम मीम सज्दा (जो इक्कीसवें पारे में है) और सूरः मुल्क (जो उन्तीसवें पारे में है) न पढ़ लेते थे उस वक़्त तक न सोते थे। (तिर्मिज़ी)

4. हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि सूरः ब-क़रः की आख़िरी दो आयतें (आमनर्-रसूलु से सूरः के ख़त्म तक जो शख़्स किसी रात को पढ़ लेगा तो ये दोनों आयतें उसके लिए काफ़ी होंगी, यानी वह हर बुराई और ना-पसन्दीदा चीज़ से महफ़ूज़ रहेगा। (बुख़ारी व मुस्लिम)

सोते वक़्त पढ़ने की चीज़ें

जब सोने का इरादा करे तो वुज़ू कर ले और अपने बिस्तर को तीन बार झाड़ ले, फिर दाहिनी करवट पर लेट जाये और सर या गाल के नीचे दाहिना हाथ रखकर यह दुआ तीन बार पढ़े:

अल्लाहुम्-म क़िनी अ़ज़ाब-क यौ-म तज्मउ़ इबाद-क

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! तू मुझे अपने अ़ज़ाब से बचाइयो जिस दिन तू अपने बन्दों को जमा करेगा। (मिश्कात शरीफ़)

या यह दुआ पढ़ेः

अल्लाहुम्-म बिइस्मि-क अमूतु व अह्या

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! मैं तेरा नाम लेकर मरता और जीता हूँ। (बुख़ारी)

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब तूने अपने बिस्तर पर पहलू रखा और सूरः फ़ातिहा और सूरः कुल् हुवल्लाहु अहद् पढ़ ली तो मौत के अलावा हर चीज़ से बेख़ौफ़ हो गया। (हिस्ने हसीन)

एक सहाबी रज़ि० ने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! मुझको कुछ बताइये जिसे (सोते वक़्त) पढ़ लूँ जबकि अपने बिस्तर पर लेटूँ। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया "कुल या अय्युहल् काफ़िरून" पढ़ो क्योंकि इसमें शिर्क से बेज़ारी (का ऐलान) है। (मिश्कात)

बाज़ हदीसों में है कि इसको पढ़कर सो जाए यानी इसको पढ़ने के बाद किसी से न बोले। (हिस्ने हसीन)

हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हर रात को जब (सोने के लिए) बिस्तर पर तशरीफ़ लाते तो सूरः कुल हुवल्लाहु अहद और सूरः कुल अऊज़ु बिरब्बिल् फ़लकि और कुल अऊज़ु बिरब्बिन्नासि पढ़कर हाथ की दोनों हथेलियों पर इस तरह दम करते कि कुछ थूक के झाग भी निकल जाते, उसके बाद जहाँ तक मुमकिन हो सकता पूरे बदन पर दोनों हाथों को फैरते, तीन बार ऐसा ही करते थे, और हाथ फैरते वक़्त सर और चेहरा और सामने के हिस्से से शुरू फ़रमाते थे। (बुख़ारी व मुस्लिम)

इसके अलावा 33 बार सुब्हानल्लाह, 33 बार अल्हम्दु लिल्लाह, 34 बार अल्लाहु अकबर भी पढ़े। (मिश्कात)

और आयतुल-कुर्सी भी पढ़े। इसके पढ़ने वाले के लिए अल्लाह की तरफ़ से रात भर एक मुहाफ़िज़ फ़रिश्ता मुक़र्रर रहेगा और कोई शैतान उसके पास न आयेगा। (बुख़ारी)

साथ ही यह भी तीन बार पढ़ेः **अस्तग़फ़िरुल्लाहल्लज़ी ला इला-ह इल्ला हुवल् हय्युल् क़य्यूमु व अतूबु इलैहि**

इसकी फ़ज़ीलत यह है कि रात को सोते वक़्त पढ़ने वाले के सारे गुनाह बख़्श दिये जायेंगे अगरचे समुन्दर के झाग के बराबर हों। (बुख़ारी)

जब सोने लगे और नींद न आये तो यह दुआ पढ़े:

अल्लाहुम्-म ग़ारतिन्नुजूमु व ह-द-अतिल् उयूनु व अन्-त हय्युन् कय्यूमुन् ला तअ्ख़ुज़ु-क सि-नतुंव्-व ला नौमुन् या हय्यु या कय्यूमु अह्दिअ् लैली व निम् अ़ैनी

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! सितारे दूर चले गये और आँखों ने आराम लिया, और तू ज़िन्दा है और क़ायम रखने वाला है, तुझे न ऊँघ आती है न नींद आती है। ऐ ज़िन्दा और क़ायम रखने वाले! इस रात को मुझे आराम दे और मेरी आँख को सुला दे।

जब सोते सोते डर जाये या घबराहट हो जाये तो यह दुआ पढ़े:

अऊ़ज़ु बिकलिमातिल्लाहित् ताम्मति मिन् ग़-ज़बिही व अ़िक़ाबिही व शर्रि अ़िबादिही व मिन् ह-मज़ातिश्शयातीनि व अंय्यह्ज़ुरून

तर्जुमाः अल्लाह तआ़ला के पूरे कलिमात के वास्ते से मैं अल्लाह के ग़ज़ब से और उसके अ़ज़ाब और उसके बन्दों के शर से और शैतानों के वस्वसों से और मेरे पास उनके आने से पनाह चाहता हूँ।

फ़ायदाः जब ख़्वाब में अच्छी बात देखे तो अल्हम्दु लिल्लाह कहे और उसे बयान करे, मगर उसी से कहे जिससे अच्छे ताल्लुक़ात हों और आदमी समझदार हो। (ताकि बुरी ताबीर न दे) और अगर बुरा ख़्वाब देखे तो अपनी बाईं तरफ़ तीन बार थुतकार दे और करवट बदल दे या खड़ा होकर नमाज़ पढ़ने लगे और तीन बार यूँ भी कहे:

अऊ़ज़ु बिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम व मिन शर्रि हाज़िहिर्रुय्या

तर्जुमाः मैं अल्लाह की पनाह चाहता हूँ शैतान मर्दूद से और इस ख़्वाब की बुराई से।

बुरे ख़्वाब को किसी से ज़िक्र न करे। यह सब अ़मल करने से इन्शा-अल्लाह वह ख़्वाब उसे कुछ नुक़सान न पहुँएगा। (मिश्कात)

चेतावनीः अपनी तरफ़ से बनाकर झूठा ख़्वाब बयान करना सख़्त गुनाह है। (बुख़ारी शरीफ़)

जब सोकर उठे तो यह दुआ पढ़े:

अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी अह्याना बअ्-द मा अमातना व इलैहिन्नुशूर

तर्जुमाः सब तारीफ़ें ख़ुदा ही के लिए हैं जिसने हमें मार कर ज़िन्दगी बख़्शी और हमको उसी की तरफ़ उठकर जाना है। (बुख़ारी व मुस्लिम)

या यह दुआ पढ़े:

अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी युहयिल् मौता व हु-व अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर

तर्जुमा: सब तारीफ़ अल्लाह ही के लिए है जो मुर्दों को ज़िन्दा फ़रमाता है और हर चीज़ पर क़ादिर है। (हिस्ने हसीन)

बैतुल्-ख़ला (शौचालय) में दाख़िल होने से पहले पढ़ने की दुआ:

जब बैतुल्-ख़ला जायें तो दाख़िल होने से पहले बिस्मिल्लाह कहे। हदीस शरीफ़ में है कि शैतान की आँखों और इनसान की शर्मगाहों के दरमियान बिस्मिल्लाह आड़ बन जाती है, और यह दुआ पढ़े:

अल्लाहुम्-म इन्नी अऊ़ज़ु बि-क मिनल् ख़ुबुसि वल्-ख़बाइसि

तर्जुमा: ऐ अल्लाह! मैं तेरी पनाह चाहता हूँ ख़बीस जिन्नों से मर्द हों या औरत। (मिश्कात व हिस्ने हसीन)

जब बैतुल्-ख़ला से निकले तो **गुफ़रान-क** कहे और यह दुआ पढ़े:

अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी अज़्ह-ब अ़न्निल् अज़ा व आफ़ानी

तर्जुमा: सब तारीफ़ें अल्लाह ही के लिए हैं जिसने मुझसे तकलीफ़ देने वाली चीज़ दूर की और मुझे चैन दिया। (मिश्कात)

जब वुज़ू करना शुरू करे तो पहले बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम कहे (1) वुज़ू के दरमियान यह दुआ पढ़े: **अल्लाहुम्मग़्फ़िर् ली ज़म्बी व वस्सिअ् ली फ़ी दारी व बारिक् ली फ़ी रिज़्क़ी**

तर्जुमा: ऐ अल्लाह! मेरे गुनाह बख़्श दे और क़ब्र के घर को कुशादा फ़रमा और मेरे रिज़्क़ में बरकत दे। (हिस्ने हसीन)

जब वुज़ू कर चुके तो आसमान की तरफ़ मुँह करके यह दुआ पढ़े:

अशहदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क लहू व अशहदु अन्-न मुहम्मदन् अ़ब्दुहू व रसूलुहू

तर्जुमा: मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं, वह तन्हा है उसका कोई शरीक नहीं, और मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) अल्लाह के बन्दे और उसके रसूल हैं।

इसको वुज़ू के बाद पढ़ने से पढ़ने वाले के लिए जन्नत के आठों दरवाज़े खोल दिये जाते हैं, जिस दरवाज़े से चाहे दाख़िल हो। (मिश्कात)

---

(1) हदीस शरीफ़ में वुज़ू के शुरू में अल्लाह का नाम लेना आया है उसके अलफ़ाज़ नहीं आए। बाज़ बुज़ुर्गों ने फ़रमाया है कि बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम पढ़ ले।

बाज़ रिवायतों में इसको वुज़ू के बाद तीन बार पढ़ना आया है।
(हिस्ने हसीन)

फिर यह दुआ पढ़ेः

अल्लाहुम्मज्अ़ल्नी मिनत्तव्वाबी-न वज्अ़ल्नी मिनल् मु-ततह्हिरीन

तर्जुमाः ऐ अल्लाह मुझे बहुत ज़्यादा तौबा करने वालों में और बहुत पाक रहने वालों में शामिल फ़रमा। (हिस्ने हसीन)

और यह दुआ भी पढ़ेः

सुब्हानकल्लाहुम्-म व बिहम्दि-क अश्हदु अल्ला इला-ह इल्ला अन्-त अस्तग़फ़िरु-क व अतूबु इलै-क

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! तू पाक है और मैं तेरी तारीफ़ बयान करता हूँ। मैं गवाही देता हूँ कि सिर्फ़ तू ही माबूद है, और मैं तुझसे मग़फ़िरत चाहता हूँ और तेरे सामने तौबा करता हूँ। (हिस्ने हसीन)

जब मस्जिद में दाख़िल हो तो यह दुआ पढ़ेः

अल्लाहुम्मफ़्तह् ली अब्वा-ब रह्मति-क

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! मेरे लिए अपनी रहमत के दरवाज़े खोल दे। (मिश्कात)

मस्जिद में नमाज़ से बाहर यह पढ़ेः

सुब्हानल्लाहि वल्हम्दु लिल्लाहि व ला इला-ह इल्लल्लाहु वल्लाहु अकबर्

तर्जुमाः अल्लाह पाक है और सब तारीफ़ें अल्लाह के लिए हैं और अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं और अल्लाह सब से बड़ा है। (मिश्कात)

मस्जिद से निकले तो यह दुआ पढ़ेः

अल्लाहुम्-म इन्नी अस्अलु-क मिन् फ़ज़्लि-क

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! मैं तुझसे तेरे फ़ज़्ल का सवाल करता हूँ। (मुस्लिम)

जब अज़ान की आवाज़ सुने तो यह पढ़ेः

अश्हदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क लहू व अश्हदु अन्-न मुहम्मदन् अ़ब्दुहू व रसूलुहू रज़ीतु बिल्लाहि रब्बन् व बिमुहम्मदिन् रसूलन् व बिल्-इस्लामि दीनन्

तर्जुमाः मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं, वह तन्हा है, उसका कोई शरीक नहीं। और यह भी गवाही देता हूँ कि मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उसके बन्दे और रसूल हैं। मैं अल्लाह को रब मानने पर, मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को रसूल मानने पर और

इस्लाम को दीन मानने पर राज़ी हूँ।

हदीस शरीफ़ में है कि अज़ान की आवाज़ सुनकर जो शख़्स इसको पढ़े उसके गुनाह बख़्श दिये जायेंगे। (मुस्लिम)

और हदीस शरीफ में है कि जो शख़्स मुअज़्ज़िन का जवाब दे उसके लिए जन्नत है। (हिस्ने हसीन)

लिहाज़ा मुअज़्ज़िन का जवाब दे यानी जो मुअज़्ज़िन कहे वही कहता जाये, मगर "हय्-य अ़लस्सलाह" और "हय्-य अ़लल्- फ़लाह" के जवाब में "ला हौ-ल व ला कुव्व-त इल्ला बिल्लाहि" कहे। (मिश्कात)

जब मग़रिब की अज़ान हो तो यह दुआ पढ़े:

अल्लाहुम्-म इन्-न हाज़ा इक़्बालु लैलि-क व इदबारु नहारि-क व अस्वातु दुआ़ति-क फ़ग़्फ़िर् ली

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! तेरी रात के आने और तेरे दिन के जाने का वक़्त है, और तेरे पुकारने वालों की आवाज़ें हैं, सो तू मुझे बख़्श दे। (मिश्कात)

हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने बयान फ़रमाया कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मुझे यह दुआ़ मग़रिब की अज़ान के बाद पढ़ने के लिए तालीम फ़रमायी थी। (अबू दाऊद)

अज़ान ख़त्म होने के बाद दुरूद शरीफ़ पढ़कर यह पढ़े:

अल्लाहुम्-म रब्-ब हाज़िहिद्-दअ़्वतित् ताम्मति वस्सलातिल् क़ाइमति आति मुहम्म-द निल्वसील-त वल्-फ़ज़ील-त वब्अ़स्हु मक़ामम्-महमू-द निल्लज़ी वअ़त्तहू (1) इन्न-क ला तुख़्लिफ़ुल् मीआ़द

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! इस पूरी पुकार के रब! और क़ायम होने वाली नमाज़ के रब! मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) को वसीला अ़ता फ़रमा (जो जन्नत का एक दर्जा है) और उनको फ़ज़ीलत अ़ता फ़रमा और उनको मुक़ामे-महमूद पर पहुँचा जिसका तूने उनसे वायदा फ़रमाया है, बेशक तू वायदे के ख़िलाफ़ नहीं फ़रमाता है। (मिश्कात)

इसके पढ़ लेने से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की शफ़ाअ़त वाजिब हो जाती है।

---

(1) तंबीहः अज़ान की दुआ में लफ़्ज़ "वदूद-र-जतर्रफ़ी-अ़-त" जो मशहूर है वह हदीस शरीफ़ से साबित नहीं है।

जब घर में दाख़िल हो तो यह पढ़े:

अल्लाहुम्-म इन्नी अस्अलु-क ख़ैरल् मौलजि व ख़ैरल् मख़्रजि बिस्मिल्लाहि वलज्ना व अ़लल्लाहि रब्बिना तवक्कलना

तर्जुमा: ऐ अल्लाह! मैं तुझसे अच्छा दाख़िल होना और अच्छा बाहर जाना माँगता हूँ। हम अल्लाह का नाम लेकर दाख़िल हुए और हमने अल्लाह पर भरोसा किया जो हमारा रब है।

इसके बाद अपने घर वालों को सलाम करे (मिश्कात)

जब घर से निकले तो यह पढ़े:

बिस्मिल्लाहि तवक्कलतु अ़लल्लाहि ला हौ-ल व ला क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाहि

तर्जुमा: मैं अल्लाह का नाम लेकर निकला, मैंने अल्लाह पर भरोसा किया, गुनाहों से बचाना और नेकियों की क़ुव्वत देना अल्लाह ही की तरफ़ से है।

हदीस शरीफ़ में है कि जो शख़्स घर से निकलकर इसको पढ़े तो उसको (ग़ायबाना) आवाज़ दी जाती है कि तेरी ज़रूरतें पूरी होंगी और तू (ज़रूर नुक़सान से) महफ़ूज़ रहेगा। और इन कलिमात को सुनकर शैतान वहाँ से हट जाता है, यानी उसके बहकाने और तकलीफ़ देने से बाज़ रहता है। (तिर्मिज़ी)

और आसमान की तरफ़ मुँह उठाकर यह पढ़े:

अल्लाहुम्-म इन्नी अऊज़ु बि-क अन् अज़िल्-ल औ उज़ल्-ल औ अज़्लि-म औ उज़्ल-म औ अज्ह-ल औ युज्ह-ल अ़लय्-य

तर्जुमा: ऐ अल्लाह! मैं इस बात से तेरी पनाह चाहता हूँ कि गुमराह हो जाऊँ या गुमराह कर दिया जाऊँ या ज़ुल्म करूँ या मुझपर ज़ुल्म किया जाये, या जहालत करूँ या मुझपर जहालत की जाये। (मिश्कात)

यह दुआ हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत की गयी है। वह फ़रमाती हैं कि कभी ऐसा नहीं हुआ कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मेरे घर से निकले हों और यह दुआ न पढ़ी हो।

जब बाज़ार में दाख़िल हो तो यह पढ़े:

ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क लहू लहुल् मुल्कु व लहुल् हम्दु युह्यी व युमीतु व हु-व हय्युल्-ला यमूतु बियदिहिल् ख़ैरु व हु-व अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर

तर्जुमा: अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं, वह तन्हा है उसका कोई

शरीक नहीं, उसी के लिए मुल्क है और उसी के लिए तारीफ़ है, वही ज़िन्दा करता है और वही मारता है। और वह ज़िन्दा है उसे मौत न आयेगी, उसी के हाथ में भलाई है, और वह हर चीज़ पर क़ादिर है।

हदीस शरीफ़ में है कि बाज़ार में इसके पढ़ने से अल्लाह तआ़ला दस लाख नेकियाँ लिख देंगे और दस लाख गुनाह माफ़ फ़रमा देंगे और दस लाख दर्जे बुलन्द फ़रमाएँगे, और उसके लिए जन्नत में एक घर बना देंगे। (तिर्मिज़ी व इब्ने माजा)

दुआ़ यह है:

बिस्मिल्लाहि अल्लाहुम्-म इन्नी असअलु-क ख़ै-र हाज़िहिस्सूकि व ख़ै-र मा फ़ीहा, व अऊज़ु बि-क मिन् शर्रिहा व शर्रि मा फ़ीहा, अल्लाहुम्-म इन्नी अऊज़ु बि-क अन् उसी-ब फ़ीहा यमीनन् फ़ाजि-रतन् औ सफ़्क़तन् ख़ासि-रतन्

तर्जुमाः मैं अल्लाह का नाम लेकर दाख़िल हुआ। ऐ अल्लाह! मैं तुझसे इस बाज़ार की और जो कुछ इस बाज़ार में है उसकी ख़ैर तलब करता हूँ। और तेरी पनाह चाहता हूँ इस बाज़ार के शर से और जो कुछ इस बाज़ार में है उसके शर से। ऐ अल्लाह! तेरी पनाह चाहता हूँ इस बात से कि यहाँ झूठी कसम खाऊँ या मामले में घाटा उठाऊँ।

फ़ायदाः बाज़ार से वापस आने के बाद कुरआन शरीफ़ की दस आयतें कहीं से पढ़े। (हिस्ने हसीन)

जब खाना शुरू करे तो यह पढ़े:

बिस्मिल्लाहि व अ़ला बरकतिल्लाहि

तर्जुमाः मैंने अल्लाह के नाम से और अल्लाह की बरकत पर खाना शुरू किया। (हिस्ने हसीन)

अगर शुरू में बिस्मिल्लाह भूल जाये तो याद आने पर यह पढ़े:

बिस्मिल्लाहि अव्व-लहू व आख़ि-रहू

तर्जुमाः मैंने इसके शुरू और आख़िर में अल्लाह का नाम लिया।

फ़ायदाः खाने पर बिस्मिल्लाह न पढ़ी जाये तो शैतान को उसमें खाने का मौक़ा मिल जाता है। (मिश्कात)

जब खाना खा चुके तो यह दुआ़ पढ़े:

अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी अत्अ़-मना व सक़ाना व ज-अ़-लना मिनल्

मुस्लिमीन

तर्जुमाः सब तारीफ़ें ख़ुदा के लिये हैं जिसने हमें खिलाया और पिलाया और मुसलमान बनाया।

या यह पढ़ेः

अल्लाहुम्-म बारिक् लना फ़ीहि व अत्ज़िम्ना ख़ैरम्-मिन्हु

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! तू हमें इसमें बरकत इनायत फ़रमा और इससे बेहतर नसीब फ़रमा। (तिर्मिज़ी)

या यह पढ़ेः

अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी अत्अ़-मनी हाज़त्तआ़-म व र-ज़-क़नीहि मिन् ग़ैरि हौलिम् मिन्नी व ला क़ुव्वतिन्

तर्जुमाः सब तारीफ़ें ख़ुदा ही के लिए हैं जिसने मुझे यह खाना खिलाया और मुझे नसीब किया बग़ैर मेरी क़ुव्वत और कोशिश के।

खाने के बाद इसके पढ़ लेने से पिछले गुनाह माफ़ हो जाते हैं। (मिश्कात)

जब दस्तरख़्वान उठने लगे तो यह दुआ पढ़ेः

अल्हम्दु लिल्लाहि हम्दन् कसीरन् तय्यिबन् मुबारकन् फ़ीहि ग़ै-र मक्फ़िय्यिन् व ला मुवद्दअ़िन् व ला मुस्तग़ननन् अन्हु रब्बना

तर्जुमाः सब तारीफ़ें अल्लाह के लिए हैं, ऐसी तारीफ़ जो बहुत हो और पाकीज़ा हो और बरकत वाली हो। ऐ हमारे रब! हम इस खाने को काफ़ी समझकर या बिल्कुल रुख़्सत करके या इससे ग़ैर मोहताज होकर नहीं उठा रहे हैं। (बुख़ारी)

दूध पीकर यह दुआ पढ़ेः

अल्लाहुम्-म बारिक् लना फ़ीहि व ज़िद्ना मिन्हु

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! तू इसमें हमें बरकत दे और हमको और ज़्यादा दे।

ज़ब किसी के यहाँ दावत खाये तो यह पढ़ेः

अल्लाहुम्-म अत्ज़िम् मन् अत्अ़-मनी वस्कि मन् सक़ानी

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! जिसने मुझे खिलाया तू उसे खिला और जिसने मुझे पिलाया तू उसे पिला। (मुस्लिम)

या यह पढ़ेः

अ-क-ल तआ़मुकुमुल् अबरारु व सल्लत् अ़लैकुमुल् मलाइकतु व अफ़्त-र ज़िन्दकुमुस्साइमून

तर्जुमाः नेक बन्दे तुम्हारा खाना खायें और फ़रिश्ते तुम पर रहमत भेजें और रोज़ेदार तुम्हारे पास इफ़्तार करें। (मिश्कात)

और इनके साथ वे दुआएँ भी जो पहले गुज़र चुकी हैं जिनमें अल्लाह का शुक्र और तारीफ़ है।

जब मेज़बान के घर से चलने लगे तो उसे यह दुआ देः

अल्लाहुम्-म बारिक् लहुम् फ़ी मा रज़क़्तहुम् वग़फ़िर् लहुम् वरहम्हुम्

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! इनके रिज़्क़ में बरकत दे और इनको बख़्श दे और इन पर रहम फ़रमा।

पानी या और कोई पीने की चीज़ बैठकर पिये, और ऊँट की तरह एक साँस में न पिये बल्कि दो-तीन साँसों से पिये और बरतन में साँस न ले, और न फूँक मारे, और जब पीने लगे तो बिस्मिल्लाह पढ़ ले, और जब पी चुके तो अल्हम्दु लिल्लाह कहे। (मिश्कात)

जब रोज़ा इफ़्तार करने लगे तो यह पढ़ेः

अल्लाहुम्-म ल-क सुम्तु व अ़ला रिज़्क़ि-क अफ़्तरतु

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! मैंने तेरे ही लिये रोज़ा रखा और तेरे ही दिये हुए रिज़्क़ पर रोज़ा खोला। (मिश्कात)

इफ़्तार के बाद यह पढ़ेः

ज़-हबज़्ज़-मउ वब्तल्लतिल् उरूक़ु व स-बतल् अज्रु इन्शा-अल्लाहु

तर्जुमाः प्यास चली गयी और रगें तर हो गईं और इन्शा-अल्लाह सवाब साबित हो गया। (अबू दाऊद)

अगर किसी के यहाँ इफ़्तार करे तो उनको यह दुआ देः

अफ़्त-र इन्दकुमुस्साइमू-न व अ-क-ल तआ़मकुमुल् अबरारु व सल्लत् अ़लैकुमुल् मलाइकतु

तर्जुमाः तुम्हारे पास रोज़ेदार इफ़्तार करें और नेक बन्दे तुम्हारा खाना खायें और फ़रिश्ते तुम पर रहमत भेजें। (हिस्ने हसीन)

जब कपड़ा पहने तो यह पढ़ेः

अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी कसानी हाज़ा व र-ज़-क़नीहि मिन् ग़ैरि हौलिम् मिन्नी व ला क़ुव्वतिन्

तर्जुमाः सब तारीफ़ें अल्लाह के लिये हैं जिसने यह कपड़ा मुझे पहनाया और नसीब किया बग़ैर मेरी कोशिश और क़ुव्वत के।

कपड़ा पहनकर इसको पढ़ लेने से उसके पिछले गुनाह माफ़ हो जाते हैं। (मिश्कात शरीफ़)

जब नया कपड़ा पहने तो यह पढ़े:

अल्लाहुम्-म लकल्-हम्दु कमा कसौतनीहि अस्अलु-क ख़ैरहू व ख़ै-र मा सुनि-अ लहू व अऊज़ु मिन शर्रिही व शर्रि मा सुनि-अ लहू

तर्जुमा: ऐ अल्लाह! तेरे ही लिए सब तारीफ़ है जैसा कि तूने यह कपड़ा मुझको पहनाया मैं तुझसे इसकी भलाई का और उस चीज़ की भलाई का सवाल करता हूँ जिसके लिए यह बनाया गया है। और मैं तेरी पनाह चाहता हूँ इसकी बुराई से और उस चीज़ की बुराई से जिसके लिए यह बनाया गया।

नया कपड़ा पहनने की दूसरी दुआ:

हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो शख़्स नया कपड़ा पहने तो यह दुआ पढ़े:

अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी कसानी मा उवारि-य बिही औरती व अ-तजम्मलु बिही फ़ी हयाती

तर्जुमा: सब तारीफ़ अल्लाह ही के लिए है जिसने मुझे कपड़ा पहनाया, जिससे मैं अपनी शर्म की जगह छुपाता हूँ और अपनी ज़िन्दगी में इसके ज़रिये ख़ूबसूरती हासिल करता हूँ।

और फिर पुराने कपड़े को सदक़ा कर दे तो ज़िन्दगी में और मरने के बाद ख़ुदा की हिफ़ाज़त और ख़ुदा की सत्तारी में रहेगा। (यानी ख़ुदा उसे मुसीबतों से महफ़ूज़ रखेगा और उसके गुनाहों को पोशीदा रखेगा) (मिश्कात)

फ़ायदा: जब कपड़ा उतारे तो बिस्मिल्लाह कह कर उतारे, क्योंकि बिस्मिल्लाह की वजह से शैतान उसकी शर्मगाह की तरफ़ न देख सकेगा। (हिस्ने हसीन)

जब किसी मुसलमान को नया कपड़ा पहने देखे तो यूँ दुआ दे:

तुब्ली व युख़्लिफ़ुल्लाहु

तर्जुमा: तुम इस कपड़े को पुराना करो और इसके बाद ख़ुदा तुम्हें और कपड़ा दे। (यानी अल्लाह तआला तुम्हारी उम्र में तरक़्क़ी दे, और इस कपड़े को पहनना और इस्तेमाल करना और बोसीदा करना और इसके बाद दूसरा कपड़ा पहनना नसीब फ़रमाये)।

ये अलफ़ाज़ मर्दों और लड़कों को दुआ देने के लिए हैं, अगर किसी औरत को नया कपड़ा पहने देखे तो ये अलफ़ाज़ कहे:

अबली व अख़्लिकी सुम्-म अबली व अख़्लिकी

तर्जुमाः यानी इसे पुराना करो, फिर पुराना करो।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत उम्मे ख़ालिद रज़ि० को यह दुआ दी थी। हज़रत उम्मे ख़ालिद रज़ियल्लाहु अन्हा बयान फ़रमाती हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में कुछ कपड़े लाये गये, जिनमें से एक छोटी-सी सियाह रंग की चादर अच्छी क़िस्म की थी, आपने फ़रमाया मेरे पास उम्मे ख़ालिद को ले आओ (यह उस वक़्त छोटी-सी थीं) चुनाँचे मुझको (गोद में) उठाकर लाया गया। पस आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने मुबारक हाथ में वह चादर लेकर मुझे उढ़ा दी और दुआ देते हुए यह फ़रमायाः

अबली व अख़्लिकी सुम्-म अबली व अख़्लिकी

तर्जुमाः तू इसे पुराना करे फिर तू इसे पुराना करे।

हज़रत उम्मे ख़ालिद रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि उस चादर में हरे रंग या पीले रंग के निशान (गोट या झालर या कढ़ाई के काम के) थे। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया ऐ उम्मे ख़ालिद! यह अच्छा है। (जैसे बच्चों से दिल खुश करने के लिए बातें किया करते हैं)। हज़रत उम्मे ख़ालिद रज़ि० ने फ़रमाया कि उसके बाद मैं (आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की पुश्त के पीछे जाकर) मोहरे-नुबुव्वत से खेलने लगी तो मेरे वालिद ने मुझे झिड़क दिया, इस पर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः छोड़ दो इसे (यानी कुछ न कहो)। (मिश्कात शरीफ़ पेज 516)

जब आईना देखे तो यह पढ़े:

अल्लाहुम्-म अन्-त हस्सन्-त ख़ल्क़ी फ़-हस्सिन् ख़ुलुक़ी

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! जैसे तूने मेरी सूरत अच्छी बनायी मेरे अख़्लाक़ भी अच्छे कर दे। (हिस्ने हसीन)

दूल्हा को यूँ मुबारकबाद दे:

बारकल्लाहु ल-क व बार-क अलैकुमा व ज-म-अ बैनकुमा फ़ी ख़ैरिन

तर्जुमाः अल्लाह तुझको बरकत दे और तुम दोनों पर बरकत नाज़िल करे, और तुम दोनों का ख़ूब निबाह करे। (अहमद)

जब चाँद पर नज़र पड़े तो यह पढ़े:

अऊज़ु बिल्लाहि मिन शर्रि हाज़ा

तर्जुमाः मैं अल्लाह की पनाह चाहता हूँ इसके शर से। (तिर्मिज़ी)

नया चाँद देखे तो यह पढ़े:

अल्लाहुम्-म अहिल्लहू अलैना बिल्युम्नि वल्-ईमानि वस्सलामति वल्-इस्लामि वत्तौफ़ीकि लिमा तुहिब्बु व तर्ज़ा, रब्बी व रब्बुकल्लाहु

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! इस चाँद को हमारे ऊपर बरकत और ईमान और सलामती और इस्लाम के साथ और उन आमाल की तौफ़ीक़ के साथ निकला हुआ रख, जो तुझे पसन्द हैं। ऐ चाँद! मेरा और तेरा परवर्दिगार अल्लाह है। (हिस्ने हसीन)

जब किसी को रुख़्सत करे तो यह पढ़े:

अस्तौदिउल्ला-ह दीन-क व अमान-त-क व ख़्वाती-म अ-मलि-क

तर्जुमाः अल्लाह के सुपुर्द करता हूँ तेरा दीन और तेरी अमानतदारी की सिफ़त और तेरे अमल का अन्जाम।

और अगर वह सफ़र को जा रहा है तो यह दुआ भी उसको दे:

ज़व्वदकल्लाहुत्तक़्वा व ग़-फ़-र ज़म्ब-क व यस्स-र लकल् ख़ै-र हैसु मा कुन्तु

तर्जुमाः ख़ुदा परहेज़गारी को तेरे सफ़र का सामान बनाये और तेरे गुनाह बख़्शे, और जहाँ तू जाये वहाँ तेरे लिये ख़ैर आसान फ़रमाये। (तिर्मिज़ी)

फिर जब वह रवाना हो जाये तो यह दुआ दे:

अल्लाहुम्मत्वि लहुल् बुअ्-द व हव्विन् अलैहिस्-स-फ़-र

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! इसके सफ़र का रास्ता जल्दी तय करा दे और इस पर सफ़र आसान फ़रमा दे। (तिर्मिज़ी)

जो रुख़्सत हो रहा हो वह रुख़्सत करने वाले से यूँ कहे:

अस्तौदिउकुमुल्लाहल्लज़ी ला तज़ीउ वदाइउहू

तर्जुमाः तुमको अल्लाह के सुपुर्द करता हूँ जिसकी हिफ़ाज़त में दी हुई चीज़ें ज़ाया नहीं होतीं। (हिस्ने हसीन)

जब सफ़र का इरादा करे तो यह पढ़े:

अल्लाहुम्-म बि-क असूलु व बि-क अहूलु व बि-क असीरु

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! मैं तेरी ही मदद से (दुश्मनों पर) हमला करता हूँ

और तेरी ही मदद से उनके दफ़ा करने की तदबीर करता हूँ। और तेरी ही मदद चाहता हूँ। (हिस्ने हसीन)

जब सवार होने लगे और रकाब या पायेदान पर क़दम रखे तो बिस्मिल्लाह कहे, और जब जानवर की पुश्त या सीट पर बैठ जाये तो अल्हम्दु लिल्लाह कहे, फिर यह आयत पढ़े:

सुब्हानल्लज़ी सख़्ख़-र लना हाज़ा व मा कुन्ना लहू मुक़रिनीन, व इन्ना इला रब्बिना ल-मुन्क़लिबून

तर्जुमाः अल्लाह पाक है जिसने इसको हमारे क़ब्ज़े में दे दिया और उसकी क़ुदरत के बग़ैर हम इसे क़ब्ज़े में करने वाले न थे। और बेशक हमको अपने रब की तरफ़ जाना है। (सूरः ज़ुख़रुफ़ पारा 25)

उसके बाद तीन बार अल्हम्दु लिल्लाह और तीन बार अल्लाहु अकबर कहे, फिर यह दुआ पढ़े:

सुब्हान-क इन्नी ज़लम्तु नफ़्सी फ़ग़फ़िर् ली फ़-इन्नहू ला यग़फ़िरुज़्-ज़ुनू-ब इल्ला अन्-त

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! तू पाक है, बेशक मैंने अपने नफ़्स पर ज़ुल्म किया तू मुझे बख़्श दे क्योंकि गुनाहों को सिर्फ़ तू ही बख़्श सकता है। (मिश्कात)

जब सफ़र को रवाना होने लगे तो यह पढ़े:

अल्लाहुम्-म इन्ना नस्अलु-क फ़ी स-फ़रिना हाज़ल् बिर्-र वत्तक़्वा व मिनल्-अ़-मलि मा तर्ज़ा। अल्लाहुम्-म हव्विन् अ़लैना स-फ़-रना हाज़ा वत्वि लना बुअ़्दहू। अल्लाहुम्-म अन्तस्साहिबु फ़िस्सफ़रि वल्-ख़लीफ़तु फ़िल्-अह्लि। अल्लाहुम्-म इन्नी अऊ़ज़ु बि-क मिंव्-वअ़्साइस्स-फ़रि व काबतिल् मन्ज़रि व सूइल् मुन्क़-लबि फ़िल्-मालि वल्-अह्लि व अऊ़ज़ु बि-क मिनल् हौरि बादल् कौरि व दअ़्वतिल् मज़्लूमि

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! हम तुझसे इस सफ़र में नेकी और परहेज़गारी का सवाल करते हैं, और उन आमाल का सवाल करते हैं जिनसे आप राज़ी हैं। ऐ अल्लाह! हमारे इस सफ़र को हम पर आसान फ़रमा दे, और इसका रास्ता जल्दी तय करा दे। ऐ अल्लाह! तू सफ़र में हमारा साथी है, और हमारे पीछे घर-बार का कारसाज़ है। ऐ अल्लाह! मैं तेरी पनाह चाहता हूँ सफ़र की मशक़्क़त और घर-बार में बुरी वापसी से, और बुरी हालत के देखने से, और

बनने के बाद बिगड़ने से, और मज़लूम की बद्-दुआ से।

फ़ायदाः सफ़र को रवाना होने से पहले अपने घर में दो रकअत नमाज़ नफ़िल पढ़ना भी मुस्तहब है। (किताबुल अज़कार)

फ़ायदाः जब ऊँचाई पर चढ़े तो अल्लाहु अकबर पढ़े और जब बुलन्दी से नीचे उतरे तो सुब्हानल्लाह कहे, और जब किसी पानी बहने की गहरी और निचली जगह में गुज़रे तो "ला इला-ह इल्लल्लाहु वल्लाहु अकबर" पढ़े। अगर सवारी का पैर फिसल जाये (या दुर्घटना हो जाये तो) बिस्मिल्लाह कहे। (हिस्ने हसीन)

पानी के जहाज़ या कश्ती में सवार हो तो यह पढ़ेः

बिस्मिल्लाहि मजरेहा व मुरसाहा इन्-न रब्बी ल-ग़फ़ूरुर्रहीम। व मा क़-दरुल्ला-ह हक़्-क़ क़द्रिही वल्-अर्ज़ु जमीअन् क़ब्ज़तुहू यौमल् क़ियामति वस्समावातु मतविय्यातुम् बियमीनिही सुब्हानहू व तआला अम्मा युश्रिकून।

तर्जुमाः अल्लाह के नाम से इसका चलना और ठहरना है। बेशक मेरा परवर्दिगार ज़रूर बख़्शने वाला है मेहरबान है। और काफ़िरों ने ख़ुदा को न पहचाना जैसा कि उसे पहचानना चाहिये हालाँकि क़ियामत के दिन सारी ज़मीन उसकी मुट्ठी में होगी और आसमान उसके दाहिने हाथ में लिपटे हुए होंगे। वह पाक है और उस अक़ीदे से बरतर है जो मुशरिक शिरकिया अक़ीदे रखते हैं। (हिस्ने हसीन)

जब किसी मन्ज़िल या रेलवे स्टेशन या मोटर स्टैंड पर उतरे तो यह पढ़ेः

अऊज़ु बि-कलिमातिल्लाहित्ताम्माति मिन शर्रि मा ख़-ल-क़

तर्जुमाः अल्लाह के पूरे कलिमात के वास्ते से अल्लाह की पनाह चाहता हूँ उसकी मख़्लूक़ के शर (बुराई) से। (मुस्लिम)

इसके पढ़ लेने से कोई चीज़ वहाँ से रवाना होने तक इन्शा-अल्लाह नुक़सान न पहुँचाएगी। जब वह बस्ती नज़र आये जिसमें जाना है तो यह पढ़ेः

अल्लाहुम्-म रब्बस्समावातिस्सब्अि व मा अज़्लल्-न व रब्बल् अर्ज़ीनस्सब्अि व मा अक़्लल्-न व रब्बश्शयातीनि व मा अज़्लल्-न व रब्बर्रियाहि व मा ज़रै-न फ़-इन्ना नस्अलु-क ख़ै-र हाज़िहिल् क़र्यति व ख़ै-र अह्लिहा व नऊज़ु बि-क मिन् शर्रिहा व शर्रि अह्लिहा व शर्रि मा फ़ीहा

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! जो सातों आसमानों और सब चीज़ों का रब है जो आसमानों के नीचे हैं। और जो सातों ज़मीनों का और उन सब चीज़ों का रब है जो उनके ऊपर हैं। और जो शैतानों का और उन सबका रब है जिनको शैतानों ने गुमराह किया है। और जो हवाओं का और उन चीज़ों का रब है जिन्हें हवाओं ने उड़ाया है। सो हम तुझसे इस आबादी की और इसके वासियों की ख़ैर का सवाल करते हैं, और इसके शर (बुराई) से और इसके वासियों के शर से तेरी पनाह चाहते हैं जो इसके अन्दर हैं।

जब किसी शहर या बस्ती में दाख़िल होने लगे तो तीन बार यह पढ़ेः

अल्लाहुम्-म बारिक् लना फ़ीहा

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! तू हमें इसमें बरकत दे।

या यह पढ़ेः

अल्लाहुम्मर्ज़ुक़्ना जनाहहा व हब्बिबूना इला अह्लिहा व हब्बिब् सालिही अह्लिहा इलैना

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! तू हमें इसके मेवे नसीब फ़रमा और यहाँ के बाशिन्दों (वासियों) के दिलों में हमारी मुहब्बत और यहाँ के नेक लोगों की मुहब्बत हमारे दिलों में पैदा फ़रमा। (हिस्ने हसीन)

जब सफ़र में रात हो जाये तो यह पढ़ेः

या अर्ज़ु रब्बी व रब्बुकिल्लाहु अऊज़ु बिल्लाहि मिन शर्रिकि व शर्रि मा ख़ुलि-क फ़ीकि व शर्रि मा यदुब्बु मिन अ-सदि व अस्य-द व मिनल् हय्यति वल् अक़्रबि व मिन साकिनिल् ब-लदि व मिंव्-वालिदिंव्-व मा व-लद्

तर्जुमाः ऐ ज़मीन! मेरा और तेरा रब अल्लाह है। मैं अल्लाह की पनाह चाहता हूँ तेरे शर से और उन चीज़ों के शर से जो तुझ में पैदा की गयी हैं और जो तुझ पर चलती हैं। और अल्लाह की पनाह चाहता हूँ शेर से और अज़्दहे और साँप से और बिच्छू से और इस शहर के रहने वालों से, और बाप से और औलाद से। (हिस्ने हसीन)

सफ़र में जब सेहर का वक़्त हो तो यह पढ़ेः

समि-अ़ मा सामिउ़न् बिहम्दिल्लाहि व नेअ़मतिही व हुस्ने बलाइही अ़लैना रब्बना साहिबना व अफ़्ज़िल् अ़लैना आइज़न् बिल्लाहि मिनन्नारि

तर्जुमाः सुनने वाले ने (हम से) अल्लाह की तारीफ़ बयान करना सुना,

और उसकी नेमत का और हमको अच्छे हाल में रखने का इकरार जो हमने किया वह भी सुना। ऐ हमारे रब! तू हमारे साथ रह और हम पर फ़ज़्ल फ़रमा। यह दुआ करते हुए दोज़ख़ की पनाह चाहता हूँ। (मुस्लिम)

बाज़ रिवायतों में आया है कि इसको बुलन्द आवाज़ से तीन बार पढ़े। (हिस्ने हसीन)

फ़ायदाः हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया है कि जो सवार अपने सफ़र में दुनिया की बातों से दिल हटाकर अल्लाह की तरफ़ ध्यान रखे और उसकी याद में लगा रहे तो उसके साथ फ़रिश्ता रहता है। और जो शख़्स वाहियात शे'रों या किसी और बेहूदा शग़ल में लगा रहता है तो उसके साथ शैतान रहता है। (हिस्ने हसीन)

अगर सफ़र में दुश्मन का ख़ौफ़ हो तो सूरः कुरैश पढ़े। बाज़ बुज़ुर्गों ने इसको मुजर्रब (आज़माया हुआ) बताया है। (हिस्ने हसीन)

सफ़र से वापस होने के आदाब

जब सफ़र से वापस होने लगे तो सवारी पर बैठकर सवारी की दुआ पढ़ने के बाद वह दुआ पढ़े जो सफ़र को रवाना होते वक़्त पढ़ी थी यानीः

अल्लाहुम्-म इन्ना नस्अलु-क फ़ी स-फ़रिना हाज़ल् बिर्-र वत्तक़्वा व मिनल् अ-मलि मा तर्ज़ा। अल्लाहुम्-म हव्विन् अलैना स-फ़-रना हाज़ा वत्वि लना बुअ्दहू। अल्लाहुम्-म अन्तस्साहिबु फ़िस्सफ़रि वल्-ख़लीफ़तु फ़िल्-अह्लि। अल्लाहुम्-म इन्नी अऊज़ु बि-क मिंव्-वअ्साइस्स-फ़रि व काबतिल् मन्ज़रि व सूइल् मुन्क-लबि फ़िल्-मालि वल्-अह्लि व अऊज़ु बि-क मिनल् हौरि बादल् कौरि व दअ्वतिल् मज़्लूमि

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! हम तुझसे इस सफ़र में नेकी और परहेज़गारी का सवाल करते हैं, और उन आमाल का सवाल करते हैं जिनसे आप राज़ी हैं। ऐ अल्लाह! हमारे इस सफ़र को हम पर आसान फ़रमा दे, और इसका रास्ता जल्दी तय करा दे। ऐ अल्लाह! तू सफ़र में हमारा साथी है, और हमारे पीछे घर-बार का कारसाज़ है। ऐ अल्लाह! मैं तेरी पनाह चाहता हूँ सफ़र की मशक़्क़त और घर-बार में बुरी वापसी से, और बुरी हालत के देखने से, और बनने के बाद बिगड़ने से, और मज़लूम की बद्-दुआ से।

और जब रवाना हो जाये तो सफ़र की दूसरी दुआओं और मसनून

आदाब का ख़्याल रखते हुए हर बुलन्दी पर अल्लाहु अकबर तीन बार कहे और फिर यह पढ़े:

ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क लहू लहुल्-मुल्कु व लहुल्-हम्दु व हु-व अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर। आइबू-न ताइबू-न आ़बिदू-न साजिदू-न लि-रब्बिना हामिदू-न स-दक़ल्लाहु वअ़्दहू व न-स-र अ़ब्दहू व ह-ज़मल्-अह्ज़ा-ब वह्दहू

तर्जुमा: कोई माबूद नहीं अल्लाह के सिवा, वह तन्हा है उसका कोई शरीक नहीं। उसी के लिए मुल्क है और उसी के लिए तारीफ़ है और वह हर चीज़ पर क़ादिर है। हम लौटने वाले हैं, तौबा करने वाले हैं, (अल्लाह की) बन्दगी करने वाले हैं, सज्दा करने वाले हैं, अपने रब की तारीफ़ करने वाले हैं। अल्लाह ने अपना वायदा सच्चा कर दिखाया, अपने बन्दे की मदद फ़रमायी और मुख़ालिफ़ लश्करों को शिकस्त दी। (मिश्कात)

सफ़र से वापस होकर अपने शहर या बस्ती में दाख़िल होते हुए पढ़े:

आइबू-न ताइबू-न आ़बिदू-न साजिदू-न लिरब्बिना हामिदू-न

तर्जुमा: हम लौटने वाले हैं, तौबा करने वाले हैं, (अल्लाह की) बन्दगी करने वाले हैं, अपने रब की तारीफ़ करने वाले हैं। (मुस्लिम)

फ़ायदा: हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जुमेरात के दिन सफ़र के लिए रवाना होने को पसन्द फ़रमाते थे। (बुख़ारी)

सफ़र से वापस होकर जब घर में दाख़िल हो तो यह पढ़े:

औबन् औबन् लि-रब्बिना तौबन् ला युग़ादिरु अ़लैना हौबन्

तर्जुमा: मैं वापस आया हूँ मैं वापस आया हूँ। अपने रब के सामने ऐसी तौबा करता हूँ जो हम पर कोई गुनाह न छोड़े। (हिस्ने हसीन)

जब किसी को मुसीबत या परेशानी या बुरे हाल में देखे तो यह दुआ पढ़े:

अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी आ़फ़ानी मिम्मब्तला-क बिही व फ़ज़्ज़-लनी अ़ला कसीरिम् मिम्मन् ख़-ल-क़ तफ़्ज़ीला

तर्जुमा: सब तारीफ़ें अल्लाह के लिए हैं जिसने मुझे इस हाल से बचाया जिसमें तुझे मुब्तला फ़रमाया। और उसने अपनी बहुत-सी मख़्लूक़ पर मुझे फ़ज़ीलत दी।

इसकी फ़ज़ीलत यह है कि इसके पढ़ लेने से वह मुसीबत या परेशानी पढ़ने वाले को न पहुँचेगी जिसमें वह मुब्तला था जिसे देखकर यह दुआ पढ़ी

गयी। (मिश्कात शरीफ़)

फ़ायदाः अगर वह शख़्स मुसीबत में मुब्तला हो तो इस दुआ को आहिस्ता पढ़े ताकि उसे रंज न हो, और अगर वह गुनाह में मुब्तला हो तो ज़ोर से पढ़े ताकि उसे इबरत हो।

जब किसी मुसलमान को हंसता देखे तो यह दुआ दे:

अज़्हकल्लाहु सिन्न-क

तर्जुमाः ख़ुदा तुझे हंसाता रहे। (बुख़ारी व मुस्लिम)

जब दुश्मनों का ख़ौफ़ हो तो यह पढ़े:

अल्लाहुम्-म इन्ना नज्अ़लु-क फ़ी नुहूरिहिम् व नऊ़ज़ु बि-क मिन् शुरूरिहिम

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! हम तुझे इन (दुश्मनों) के सीनों में (तसर्रुफ़ करने वाला) बनाते हैं और इनकी शरारतों से तेरी पनाह चाहते हैं। (अबू दाऊद)

अगर दुश्मन घेर ले तो यह दुआ पढ़े:

अल्लाहुम्मस्तुर् औ़रातिना व आमिन् रौआ़तिना

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! हमारी आबरू की हिफ़ाज़त फ़रमा और ख़ौफ़ हटाकर हमें अमन से रख। (हिस्ने हसीन)

मजलिस से उठने से पहले यह पढ़े:

सुब्हानकल्लाहुम्-म व बिहम्दि-क अश्हदु अल्ला इला-ह इल्ला अन्-त अस्तग़फ़िरु-क व अतूबु इलै-क

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! तू पाक है और मैं तेरी तारीफ़ बयान करता हूँ। मैं गवाही देता हूँ कि तेरे सिवा कोई माबूद नहीं है, मैं तुझसे माफ़ी चाहता हूँ और तेरे हुज़ूर में तौबा करता हूँ।

अगर मजलिस में अच्छी बातें की होंगी तो ये कलिमात उन पर मेहरबान बन जायेंगे, और अगर फ़ुज़ूल और बेकार बातें की होंगी तो ये कलिमात उनका कफ़्फ़ारा बन जायेंगे। (अबू दाऊद)

बाज़ रिवायतों में है कि इन कलिमात को तीन बार कहे। (तरग़ीब)

जब कोई परेशान हो तो यह पढ़े:

अल्लाहुम्-म रह्म-त-क अरजू फ़ला तकिल्नी इला नफ़्सी तर्फ़-त औ़निन् व अस्लिह् ली शानी कुल्लहू ला इला-ह इल्ला अन्-त

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! मैं तेरी रहमत की उम्मीद करता हूँ। तू मुझे पल भर

भी मेरे सुपुर्द न फ़रमा, और मेरा सारा हाल दुरुस्त फ़रमा दे, तेरे सिवा कोई माबूद नहीं। (हिस्ने हसीन)

या यह पढ़ेः

हस्बुनल्लाहु व नेअ्मल् वकील

तर्जुमाः अल्लाह हमें काफ़ी है और वह बेहतर कारसाज़ है।

(सूरः आलि इमरान आयत 173)

या यह पढ़ेः

अल्लाहु रब्बी ला उशरिकु बिही शैअन्

तर्जुमाः अल्लाह मेरा रब है, मैं उसके साथ किसी भी चीज़ को शरीक नहीं करता। (हिस्ने हसीन)

या यह पढ़े :

या हय्यु या क़य्यूमु बिरह्मति-क अस्तग़ीसु

तर्जुमाः ऐ ज़िन्दा और ऐ क़ायम रखने वाले! मैं तेरी रहमत के वास्ते से फ़रियाद करता हूँ। (मुस्तदरक)

या यह पढ़ेः

ला इला-ह इल्ला अन्-त सुब्हान-क इन्नी कुन्तु मिनज़्ज़ालिमीन

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! तेरे सिवा कोई माबूद नहीं, तू पाक है, बेशक मैं (गुनाह करके) अपनी जान पर ज़ुल्म करने वालों में से हूँ।

कुरआन शरीफ़ में है कि इन अलफ़ाज़ के ज़रिये हज़रत यूनुस अ़लैहिस्सलाम ने मछली के पेट में अल्लाह को पुकारा था।

(सूरः अम्बिया आयत 87)

और हदीस शरीफ़ में है कि हज़रत रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब कभी कोई मुसलमान इन अलफ़ाज़ के ज़रिये अल्लाह तआ़ला से दुआ़ करे तो अल्लाह तआ़ला ज़रूर उसकी दुआ़ क़बूल फ़रमाएँगे। (तिर्मिज़ी)

जिसके पास सदक़ा करने को माल न हो यह दुरूद पढ़ा करेः

अल्लाहुम्-म सल्लि अ़ला मुहम्मदिन् अ़ब्दि-क व रसूलि-क व सल्लि अ़लल् मुअ्मिनी-न वल्-मुअ्मिनाति वल्-मुस्लिमी-न वल्-मुस्लिमाति

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! रहमत नाज़िल फ़रमा मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व

सल्लम) पर जो तेरे बन्दे और रसूल हैं और तमाम मोमिनीन व मोमिनात, मुसलिमीन व मुसलिमात पर (भी) रहमत नाज़िल फ़रमा। (तरग़ीब)

शबे-क़द्र की यह दुआ है:

अल्लाहुम्-म इन्न-क अ़फ़ुव्वुन् तुहिब्बुल्-अफ़्-व फ़अ़फ़ु अ़न्नी

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! बेशक तू माफ़ फ़रमाने वाला है, माफ़ करने को पसन्द करता है, लिहाज़ा तू मुझे माफ़ फ़रमा दे। (तिर्मिज़ी)

अपने साथ एहसान करने वाले को यह दुआ दे:

जज़ाकल्लाहु ख़ैरन्

तर्जुमाः तुझे अल्लाह (इसका) बेहतरीन बदला दे। (मिश्कात)

जब कर्ज़दार कर्ज़ा अदा कर दे तो उसको यूँ दुआ दे:

औफ़ैतनी औफ़ल्लाहु बि-क

तर्जुमाः तूने मेरा कर्ज़ा अदा कर दिया अल्लाह तुझे (दुनिया व आख़िरत) में बहुत दे। (हिस्ने हसीन)

जब अपनी कोई प्यारी चीज़ देखे तो यह पढ़े:

अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी बिनेअ़्मतिही ततिम्मुस्सालिहातु

तर्जुमाः सब तारीफ़ अल्लाह के लिए है जिसकी रहमत से अच्छी चीज़ें मुकम्मल होती हैं। (हिस्ने हसीन)

और जब दिल बुरा कर देने वाली चीज़ पेश आये तो यूँ कहे:

अल्हम्दु लिल्लाहि अ़ला कुल्लि हालिन्

तर्जुमाः हर हाल में अल्लाह तआ़ला तारीफ़ का हक़दार है।

जब कोई चीज़ गुम हो जाये तो यह पढ़े:

अल्लाहुम्-म राद्दज़्ज़ाल्लति व हादियज़्ज़ाल्लति अन्-त तह्दी मिनज़्ज़लालति उर्दुद् अ़लय्-य ज़ाल्लती बिक़ुद्रति-क व सुलतानि-क फ़-इन्नहा मिन् अ़ताइ-क व फ़ज़्लि-क

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! ऐ गुमशुदा को वापस करने वाले! और राह भटके हुए को राह दिखाने वाले! तू ही गुमशुदा को राह दिखा सकता है। अपनी क़ुदरत और बादशाही के ज़रिये मेरी गुमशुदा चीज़ को वापस फ़रमा दे क्योंकि वह बेशक तेरी अ़ता और तेरे फ़ज़्ल से मुझे मिली थी। (हिस्ने हसीन)

जब नया फल पास आये तो यह पढ़े:

अल्लाहुम्-म बारिक् लना फ़ी स-मरिना व बारिक् लना फ़ी मदीनतिना

व बारिक् लना फ़ी साअ़िना व बारिक् लना फ़ी मुद्दिना

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! हमारे फलों में बरकत दे और हमें हमारे शहर में बरकत दे और ग़ल्ला नापने के पैमानों में बरकत दे।

उसके बाद उस फल को अपने सबसे छोटे बच्चे को दे दे। (मुस्लिम) या उस वक़्त मजलिस में जो सबसे छोटा बच्चा हो उसको दे दे। (हिस्ने हसीन)

बारिश के लिए तीन बार यह दुआ पढ़ेः

अल्लाहुम्-म अग़िस्ना

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! हमारी फ़रियाद को पहुँचिये। (मुस्लिम)

या यह दुआ पढ़ेः

अल्लाहुम्-म अन्ज़िल् अ़ला अर्ज़िना ज़ीन-तहा व स-क-नहा

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! हमारी ज़मीन में ज़ीनत (यानी फूल-बूटे) और इसका आराम नाज़िल फ़रमा। (हिस्ने हसीन)

और जब बारिश हद से ज़्यादा होने लगे तो यह पढ़ेः

अल्लाहुम्-म हवालैना व ला अ़लैना अल्लाहुम्-म अ़लल् आकामि वल्-आजामि वज़्ज़िराबि वल्-औदियति व मनाबितिश्-श-जरि

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! हमारे आस-पास इसको बरसा और हम पर न बरसा। ऐ अल्लाह! टीलों और बाँधो पर और पहाड़ियों पर और नालों पर और दरख़्त पैदा होने की जगहों में बरसा। (हिस्ने हसीन)

जब कड़कने और गरजने की आवाज़ सुने तो यह पढ़ेः

अल्लाहुम्-म ला तक़्तुल्ना बि-ग़-ज़बि-क व ला तुह्लिक्ना बि-अ़ज़ाबि-क व आ़फ़िना क़ब्-ल ज़ालि-क

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! हमको अपने ग़ज़ब से क़त्ल न फ़रमा और अपने अ़ज़ाब से हमें हलाक न फ़रमा, और उससे पहले हमें आ़फ़ियत नसीब फ़रमा। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

और जब आँधी आये तो उसकी तरफ़ मुँह करे और दो ज़ानू होकर यानी अत्तहिय्यात पढ़ने की तरह बैठकर यह दुआ पढ़ेः

अल्लाहुम्मज्अ़ल्हा रह्मतन् व ला तज्अ़ल्हा अ़ज़ाबन् अल्लाहुम्मज्अ़ल्हा रि-याहन् व ला तज्अ़ल्हा रीहन्

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! इसे रहमत बना और इसे अ़ज़ाब न बना। ऐ अल्लाह! इसे नफ़े वाली बना, नुक़सान वाली हवा न बना। (हिस्ने हसीन)

अगर आँधी के साथ अन्धेरा भी हो (जिसे काली आँधी कहते हैं) तो सूरः कुल अऊज़ु बिरब्बिल् फ़-लक़, और कुल अऊज़ु बिरब्बिन्नास पढ़े। (मिश्कात शरीफ़)

क़र्ज़ के अदा होने के लिए यह दुआ पढ़े:

अल्लाहुम्-म अक्फ़िनी बि-हलालि-क अ़न् हरामि-क व अग़्निनी बि-फ़ज़्लि-क अ़म्मन् सिवा-क

तर्जुमा: ऐ अल्लाह! हराम से बचाते हुए हलाल के ज़रिये तू मेरी किफ़ायत फ़रमा और अपने फ़ज़्ल के ज़रिये तू मुझे अपने ग़ैर से बेपरवाह फ़रमा दे।

एक शख़्स ने हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू से अपनी माली मजबूरी का ज़िक्र किया तो आपने फ़रमाया कि मैं तुमको वे कलिमात न बता दूँ जो मुझे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सिखाए थे? अगर बड़े पहाड़ के बराबर भी तुम पर क़र्ज़ा होगा तो अल्लाह तआ़ला अदा फ़रमा देंगे। उसके बाद यही दुआ बतायी जो ऊपर लिखी है। (तिर्मिज़ी)

क़र्ज़ा अदा होने की दूसरी दुआ:

हज़रत सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अ़न्हु का बयान है कि एक शख़्स ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! मुझे बड़ी-बड़ी चिन्ताओं ने और बड़े-बड़े क़र्ज़ों ने पकड़ लिया है। आँ हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया क्या तुमको ऐसे अलफ़ाज़ न बता दूँ जिनके कहने से अल्लाह तआ़ला तुम्हारी चिन्ताओं को दूर फ़रमा दे और तुम्हारे क़र्ज़े को अदा फ़रमा दे। उस शख़्स ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! ज़रूर फ़रमायें। आँ हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि सुबह-शाम यह पढ़ा करो:

अल्लाहुम्-म इन्नी अऊज़ु बि-क मिनल्-हम्मि वल्-हुज़्नि व अऊज़ु बि-क मिनल्-अ़ज्ज़ि वल्-क-सलि व अऊज़ु बि-क मिनल् बुख़्लि वल्-जुब्नि व अऊज़ु बि-क मिन् ग़-ल-बतिद्दैनि व क़ह्‌रिर्रिजालि

तर्जुमा: ऐ अल्लाह! मैं तेरी पनाह चाहता हूँ परेशानी और चिन्ता से और रंज से, और तेरी पनाह चाहता हूँ बेबस हो जाने से और सुस्ती के आने से, और तेरी पनाह चाहता हूँ कंजूसी से और बुज़दिली से, और तेरी पनाह चाहता हूँ क़र्ज़े के ग़लबे से और लोगों की ताक़त और ज़ोर-ज़बरदस्ती से।

उस शख़्स का बयान है कि मैंने इस पर अमल किया तो अल्लाह पाक ने मेरी चिन्ताओं को भी दूर फरमा दिया और क़र्ज़ा भी अदा फरमा दिया। (अबू दाऊद शरीफ़)

जब क़ुरबानी करे तो जानवर को क़िब्ला-रुख़ लिटाकर यह दुआ पढ़े:

इन्नी वज्जह्तु वज्हि-य लिल्लज़ी फ़-तरस्समावाति वल्-अर्-ज़ अ़ला मिल्लति इब्राही-म हनीफंव्-व मा अ-न मिनल् मुश्रिकीन। इन्-न सलाती व नुसुकी व मह्या-य व ममाती लिल्लाहि रब्बिल् आ़लमीन। ला शरी-क लहू व बिज़ालि-क उमिर्तु व अ-न मिनल् मुस्लिमीन। अल्लाहुम्-म मिन्-क व ल-क अ़न्............

तर्जुमाः मैंने उस ज़ात की तरफ़ अपना रुख़ मोड़ा जिसने आसमान और ज़मीन को पैदा फ़रमाया, इस हाल में कि मैं इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम हनीफ़ के दिन पर हूँ और मुशरिकों में से नहीं हूँ। बेशक मेरी नमाज़ और मेरी इबादत और मेरा जीना और मरना सब अल्लाह के लिए है जो रब्बुल्-आ़लमीन है, जिसका का कोई शरीक नहीं। और मुझे इसी का हुक्म दिया गया है और मैं फ़रमाँबरदारों में से हूँ। ऐ अल्लाह! यह क़ुरबानी तेरी तौफ़ीक़ से है और तेरे ही लिये है।

अ़न्...... के बाद उसका नाम ले जिसकी तरफ़ से ज़िबह कर रहा हो। और अगर अपनी तरफ़ से ज़िबह कर रहा हो तो अपना नाम ले। उसके बाद **बिस्मिल्लाहि अल्लाहु अकबर** कहकर ज़िबह कर दे। (मिश्कात)

जब किसी मुसलमान से मुलाक़ात हो तो यूँ सलाम करे:

अस्सलामु अ़लैकुम् व रहमतुल्लाहि

तर्जुमाः तुम पर सलामती और अल्लाह की रहमत हो।

इसके जवाब में दूसरा मुसलमान यूँ कहे:

व अ़लैकुमुस्सलामु व रहमतुल्लाहि

तर्जुमाः और तुम पर भी सलामती और अल्लाह की रहमत हो।

अगर लफ़्ज़ **व रहमतुल्लाहि** न बढ़ाया जाये तब भी सलाम और सलाम का जवाब अदा हो जाता है, मगर जब मुनासिब अलफ़ाज़ बढ़ा दिये जायें तो सवाब भी बढ़ जायेगा। (मिश्कात)

अगर कोई मुसलमान सलाम भेजे तो जवाब में यूँ कहे:

व अ़लैहिस्सलाम व रहमतुल्लाहि व ब-रकातुहू

तर्जुमाः उस पर सलामती हो और अल्लाह की रहमत हो और उसकी बरकतें नाज़िल हों। (हिस्ने हसीन)

या सलाम लाने वाले को ख़िताब करके यूँ कहेः

अ़लै-क व अ़लैहिस्सलाम

तर्जुमाः तुम पर और उस पर सलामती हो।

जब छींक आये तो यूँ कहेः

अल्हम्दु लिल्लाहि

तर्जुमाः सब तारीफ़ अल्लाह के लिए है।

इसको सुनकर दूसरा मुसलमान यूँ कहेः

यर्ḥमुकल्लाहु

तर्जुमाः अल्लाह तुम पर रहम फ़रमाये।

इसके जवाब में छींकने वाला यूँ कहेः

यह्दीकुमुल्लाहु व युस्लिहु बालकुम्

तर्जुमाः अल्लाह तुमको हिदायत पर रखे और तुम्हारा हाल संवार दे।

फ़ायदाः छींक जिसे आयी हो अगर वह औरत हो तो जवाब देने वाला **यर्हमुकिल्लाहु** कहे।

फ़ायदाः अगर छींकने वाला **अल्हम्दु लिल्लाह** न कहे तो उसके लिए **यर्हमुकल्लाहु** कहना वाजिब नहीं। और अगर **अल्हम्दु लिल्लाह** कहे तो जवाब देना वाजिब है।

फ़ायदाः छींकने वाले को ज़ुकाम हो या और कोई तकलीफ़ हो जिससे छींकें आती ही चली जायें तो तीन दफ़ा के बाद जवाब देना ज़रूरी नहीं।

(मिरक़ात)

बुरा शगून लेना

किसी चीज़ या किसी हालत को देखकर हरगिज़ बदफ़ाली (बुरा शगून) न ले। इसको हदीस शरीफ़ मे शिर्क फ़रमाया गया है। अगर ख़्वाह-मख़्वाह बिना इख़्तियार बदफ़ाली का ख़्याल आये तो यह दुआ पढ़ेः

अल्लाहुम्-म ला यअ्ती बिल्-हसनाति इल्ला अन्-त व ला यज़्हबु बिस्सय्यिआति इल्ला अन्-त व ला हौ-ल व ला कुव्व-त इल्ला बि-क

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! भलाइयों को आप ही वजूद देते हैं और बदहालियों को सिर्फ़ आप ही दूर फ़रमाते हैं। बुराई से बचाने और नेकी पर लगाने की ताक़त सिर्फ़ आप ही को है। (हिस्ने हसीन)

जब आग लगती देखे तो अल्लाहु अकबर के ज़रिये बुझाये, यानी अल्लाहु अकबर पढ़े, जिससे वह इन्शा-अल्लाह तआ़ला बुझ जायेगी। अ़ल्लामा इब्ने जज़री फ़रमाते हैं कि यह आज़माई हुई है।

जब किसी बीमार की मिज़ाज-पुरसी को जाये तो यूँ कहेः

ला बअ्-स तहूरुन् इन्शा-अल्लाहु

तर्जुमाः कुछ हर्ज नहीं, इन्शा-अल्लाह यह बीमारी तुमको गुनाहों से पाक करने वाली है। (मिश्कात)

और सात बार उसके बीमारी से शिफ़ा पाने की यूँ दुआ़ करेः

असअलुल्लाहल् अ़ज़ी-म रब्बल्-अ़र्शिल् अ़ज़ीमि अंय्यश्फ़ि-क

तर्जुमाः मैं अल्लाह से सवाल करता हूँ जो बड़ा है और बड़े अ़र्श का रब है कि तुझे शिफ़ा दे।

हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया है कि सात बार इसके पढ़ने से मरीज़ को ज़रूर शिफ़ा होगी, हाँ! अगर उसकी मौत ही आ गयी हो तो दूसरी बात है। (मिश्कात)

जब कोई मुसीबत पहुँचे (अगरचे काँटा ही लग जाये) तो यह पढ़ेः

इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊ़न। अल्लाहुम्-म अजिर्नी फ़ी मुसीबती वख़्लुफ़् ली ख़ैरम् मिन्हा

तर्जुमाः बेशक हम अल्लाह ही के लिए हैं और हम अल्लाह ही की तरफ़ लौटने वाले हैं। ऐ अल्लाह! मेरी मुसीबत में अज्र दे और इसके बदले मुझे इससे अच्छा बदल इनायत फ़रमा। (मुस्लिम शरीफ़)

जब बदन में किसी जगह ज़ख़्म हो या फोड़ा-फुन्सी हो तो शहादत की उंगली को मुँह के पानी (राल, थूक) में भरकर ज़मीन पर रख दे, और फिर उठाकर तकलीफ़ की जगह पर फेरते हुए यह पढ़ेः

बिस्मिल्लाहि तुर्बतु अर्ज़िना बिरीक़ति बअ्ज़िना लियुश्फ़ा सक़ीमुना बि-इज़्नि रब्बिना

तर्जुमाः मैं अल्लाह के नाम से बरकत हासिल करता हूँ। यह हमारी ज़मीन की मिट्टी है जो हममें से किसी के थूक में मिली हुई है ताकि हमारे

रब के हुक्म से शिफ़ा हो। (बुख़ारी व मुस्लिम)

अगर कोई पशु (बैल, भैंस वग़ैरह) बीमार हो तो यह पढ़ेः

ला बअ्-स अज़्हिबिल् बअ्-स रब्बन्नासि इश्फ़ि अन्तश्शाफ़ी ला यश्फ़िफ़ुज़्ज़ुर्-र इल्ला अन्-त

तर्जुमाः कुछ डर नहीं है। ऐ लोगों के रब! दूर फ़रमा (और) शिफ़ा दे, तू ही शिफ़ा देने वाला है, तेरे सिवा कोई तकलीफ़ को दूर नहीं कर सकता। (हिस्ने हसीन)

इसको पढ़कर चार बार पशु के दाहिने नथने में और तीन बार उसके बायें नथने में दम करे। (हिस्ने हसीन)

जिसकी आँख में दर्द या तकलीफ़ हो तो यह पढ़कर दम करेः

बिस्मिल्लाहि अल्लाहुम्-म अज़्हिब् हर्रहा व बर्दहा व व-स-बह,

तर्जुमाः मैं अल्लाह का नाम लेकर दम करता हूँ। ऐ अल्लाह! इसकी गर्मी और इसकी ठण्डक और बीमारी को दूर फ़रमा।

उसके बाद यूँ कहेः **कुम् बि-इज़्निल्लाहि** (अल्लाह के हुक्म से खड़ा हो)। (हिस्ने हसीन)

बाज़ आलिमों ने फ़रमाया है कि बुरी नज़र लग जाने पर इसको पढ़कर दम करे।

आँख दुखनी आ जाये तो यह पढ़ेः

अल्लाहुम्-म मत्तिअ्नी बि-ब-सरी वज्अ़ल्हुल् वारि-स मिन्नी व अरिनी फ़िल्-अ़दुव्वि सारी वन्सुर्नी अ़ला मन् ज़-ल-मनी

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! मेरी आँखों की रोशनी से मुझे नफ़ा पहुँचा और मेरे मरते दम तक इसे बाक़ी रख, और दुश्मन में मेरा इन्तिक़ाम मुझे दिखला, और जिसने मुझपर ज़ुल्म किया उसके मुक़ाबले में मेरी मदद फ़रमा।

जब अपने जिस्म में कोई तकलीफ़ हो या कोई दूसरा मुसलमान किसी तकलीफ़ में मुब्तला हो तो यह पढ़ेः

रब्बुनल्लाहुल्लज़ी फ़िस्समाइ तक़द्-द-स इस्मु-क अम्रु-क फ़िस्समाइ वल्-अर्ज़ि कमा रहमतु-क फ़िस्समाइ फ़ज्अ़ल् रहम-त-क फ़िल्-अर्ज़ि इग़्फ़िर् लना हूब-तना व ख़ताियाना अन्-त रब्बुत्-तय्यिबी-न अन्ज़िल् रहमतम्-मिन् रहमति-क व शिफ़ाअम्-मिन् शिफ़ाइ-क अ़ला हाज़ल्वजअ़ि

तर्जुमा: हमारा रब वह अल्लाह है जो आसमान में (तसर्रुफ़) करने वाला है। तेरा नाम पाक है, तेरा हुक्म आसमान और ज़मीन में जारी है जैसा कि तेरी रहमत आसमान में है सो तू ज़मीन में भी अपनी रहमत भेज, और हमारे गुनाह और हमारी ख़तायें बख़्श दे। तू पाकीज़ा लोगों का रब है, सो तू अपनी रहमतों में से एक रहमत और अपनी शिफ़ाओं में से एक शिफ़ा इस दर्द पर उतार दे। (मिश्कात)

फ़ायदा: जब किसी को ज़हरीला जानवर डस ले तो सात बार सूरः फ़ातिहा पढ़कर दम करे। (हिस्ने हसीन)

फ़ायदा: जिसकी अक़्ल ठिकाने न हो तीन रोज़ तक सूरः फ़ातिहा पढ़कर उस पर थुत्कार दे। (हिस्ने हसीन)

जिसे बुख़ार चढ़ आये या किसी तरह का कहीं दर्द हो तो यह दुआ पढ़े:

बिस्मिल्लाहिल्-कबीरि अऊ़ज़ु बिल्लाहिल्-अ़ज़ीमि मिन् शर्रि कुल्लि अ़र्किन्-नअ़्आ़रिन् व मिन् शर्रि हर्रिन्नारि

तर्जुमा: अल्लाह का नाम लेकर शिफ़ा चाहता हूँ जो बड़ा है। मैं अल्लाह की पनाह चाहता हूँ जो अ़ज़ीम है। जोश मारती हुई रग के शर से और आग की गर्मी के शर से। (तिर्मिज़ी)

बिच्छू का ज़हर उतारने के लिए

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को नमाज़ की हालत में एक बार बिच्छू ने डस लिया। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने नमाज़ से फ़ारिग़ होकर फ़रमाया कि बिच्छू पर अल्लाह की लानत हो, न नमाज़ पढ़ने वाले को छोड़ता है न किसी दूसरे को। उसके बाद पानी और नमक मंगाया और नमक को पानी में घोलकर डसने की जगह पर फैरते रहे और सूरः कुल् या अय्युहल् काफ़िरून और सूरः कुल् अऊ़ज़ु बिरब्बिल् फ़-लक़ और सूरः कुल् अऊ़ज़ु बिरब्बिन्नास पढ़ते रहे। (हिस्ने हसीन)

जले हुए पर यह पढ़कर दम करे:

इज़्हबिल् बअ्-स रब्बन्नासि इश्फ़ि अन्तश्शाफ़ी ला शाफ़ी इल्ला अन्-त

तर्जुमा: ऐ सब इनसानों के रब! तकलीफ़ को दूर फ़रमा, तू शिफ़ा देने वाला है। (क्योंकि) तेरे सिवा कोई शिफ़ा देने वाला नहीं। (हिस्ने हसीन)

दम करने का मतलब यह है कि दोनों होंटों को मिलाकर ज़रा क़रीब

करके इस तरह फूँक मारे कि थूक के कुछ ज़र्रात निकल जायें। जहाँ दम करने का ज़िक्र है वहाँ यही मतलब समझना चाहिये।

अगर बदन में किसी जगह दर्द हो या कोई तकलीफ़ हो तो तकलीफ़ की जगह दाहिना हाथ रखकर तीन बार बिस्मिल्लाह कहे, फिर सात बार यह पढ़े:

अऊज़ु बिल्लाहि व कुद्रतिही मिन शर्रि मा अजिदु व उहाज़िरु

तर्जुमाः अल्लाह की ज़ात और उसकी कुदरत की पनाह लेता हूँ उस चीज़ के शर (बुराई) से जिसकी तकलीफ़ पा रहा हूँ और जिससे डर रहा हूँ। (मुस्लिम शरीफ़)

हर बीमारी को दूर करने के लिए

हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा का बयान है कि हममें से जब किसी को कोई तकलीफ़ होती थी तो हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तकलीफ़ की जगह पर अपना हाथ फैरते हुए यह पढ़ते थे:

इज़्हबिल् बअ्-स रब्बन्नासि वश्फ़ि अन्तश्शाफ़ी ला शिफ़ा-अ इल्ला शिफ़ाउ-क शिफ़ाअन् ला युग़ादिरु सुक़्मन्

तर्जुमाः ऐ लोगों के रब! तकलीफ़ दूर फ़रमा और शिफ़ा दे। तू हमें शिफ़ा देने वाला है, तेरी शिफ़ा के अलावा कोई शिफ़ा नहीं है। ऐसी शिफ़ा दे जो ज़रा-सी बीमारी भी न छोड़े। (मिश्कात)

हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा का बयान है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जब बीमार होते थे तो मुअव्विज़ात (1) पढ़कर अपने हाथ पर दम फ़रमाते थे। फिर सारे बदन पर हाथ फैरते थे। और जिस बीमारी में आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात हुई है तो मैं मुअव्विज़तैन (2) पढ़कर आपके हाथ पर दम करती थी, फिर आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के उस हाथ को (आपके तमाम बदन पर) फैरती थी। (बुख़ारी व मुस्लिम)

आँ हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के घर में जब कोई बीमार होता था तो आप उस पर मुअव्विज़ात पढ़कर दम फ़रमाते थे। (मिश्कात)

---

(1) चारों कुल यानी 'कुल या अय्युहल् काफ़िरून', 'कुल हुवल्लाहु अ-हद', 'कुल अऊज़ु बिरब्बिल् फ़-लक़' और 'कुल अऊज़ु बिरब्बिन्नास' को मुअव्विज़ात कहा जाता है। -

(2) कुल अऊज़ु बिरब्बिल् फ़-लक़ और कुल अऊज़ु बिरब्बिन्नास को मुअव्विज़तैन कहा जाता है।

बच्चे को बीमारी या किसी शर से बचाने के लिए

उअीज़ु-क बि-कलिमातिल्लाहित्ताम्मति मिन् शर्रि कुल्लि शैतानिन् व हाम्मतिन् व मिन् कुल्लि अैनिन् लाम्मतिन्

तर्जुमाः मैं अल्लाह के पूरे कलिमों के वास्ते से हर शैतान और हर ज़हरीले जानवर और नुक़सान पहुँचाने वाली हर आँख के शर से पनाह चाहता हूं। (बुख़ारी शरीफ़)

बीमार के पढ़ने के लिए

हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो मुसलमान बीमारी की हालत में (अल्लाह तआ़ला को इन अलफ़ाज़ में) चालीस बार पुकारेः

ला इला-ह इल्ला अन्-त सुब्हान-क इन्नी कुन्तु मिनज़्ज़ालिमीन

तर्जुमाः तेरे सिवा कोई माबूद नहीं (ऐ अल्लाह!) मैं तेरी पाकी बयान करता हूं बेशक मैं (गुनाह करके) अपनी जान पर ज़ुल्म करने वालों में से हूँ।

और फिर उसी बीमारी में मर जाये तो उसे शहीद का सवाब दिया जायेगा। और अच्छा हो गया तो इस हाल में अच्छा होगा कि उसके सब गुनाह माफ़ हो चुके होंगे। (मुस्तदरक)

एक दूसरी हदीस में है कि आँ हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिसने अपनी बीमारी में यह पढ़ाः

ला इला-ह इल्लल्लाहु वल्लाहु अकबर, ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू, ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क लहू, ला इला-ह इल्लल्लाहु लहुल्-मुल्कु व लहुल्-हम्दु, ला इला-ह इल्लल्लाहु व ला हौ-ल व ला कुव्व-त इल्ला बिल्लाहि

तर्जुमाः अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं और अल्लाह सब से बड़ा है। अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं वह तन्हा है। अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं वह तन्हा है उसका कोई शरीक नहीं। अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं उसी के लिए मुल्क है और उसी के लिए तारीफ़ है। अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं और गुनाहों से बचाने और नेकियों पर लगाने की ताक़त अल्लाह ही को है।

और उसी बीमारी में उसकी मौत आ गयी तो दोज़ख़ की आग उसे न जलाएगी। (हिस्ने-हसीन व तिर्मिज़ी)

अगर ज़िन्दगी से आ़जिज़ आ जाये और तकलीफ़ की वजह से जीना बुरा मालूम हो तो मौत की तमन्ना और दुआ़ हरगिज़ न करे, अगर दुआ़ माँगनी है तो यूँ माँगे:

अल्लाहुम्-म अहयीनी मा कानतिल्-हयातु ख़ैरन् ली, व तवफ़्फ़नी मा कानतिल्-वफ़ातु ख़ैरन् ली

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! तू मुझे ज़िन्दा रख जब तक कि ज़िन्दगी मेरे लिये बेहतर हो, और जब मेरे लिये मौत बेहतर हो तो मुझे उठा लेना। (मिश्कात)

जब मौत क़रीब होने लगे तो यूँ दुआ़ करे:

अल्लाहुम्मग़्फ़िर् ली वर्हम्नी व अल्-हिक़्नी बिर्रफ़ीक़िल् अअ़्ला

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! मुझे बख़्श दे और मुझपर रहम फ़रमा और मुझे ऊपर वाले साथियों में पहुँचा दे। (हिस्ने हसीन)

जब अपनी जान निकलने लगे तो यह दुआ पढ़े:

अल्लाहुम्-म अ़अिन्नी अ़ला ग़-मरातिल्-मौति व स-करातिल्- मौति

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! मौत की सख़्तियों के मुक़ाबले में मेरी मदद फ़रमा। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

फ़ायदाः मौत के वक़्त मरने वाले का चेहरा क़िब्ले की तरफ़ कर दिया जाये, और जो मुसलमान वहाँ मौजूद हो मरने वाले को **ला इला-ह इल्लल्लाहु** की तलक़ीन करे, यानी उसके सामने बुलन्द आवाज़ से कलिमा पढ़े ताकि वह सुनकर कलिमा पढ़ ले।

हदीस शरीफ़ में है कि जिसका आख़िरी कलाम **ला इला-ह इल्लल्लाहु** हो वह जन्नत में दाख़िल होगा। (हिस्ने हसीन) यानी गुनाहों की वजह से सज़ा पाने से बच जायेगा और जन्नत के दाख़िले में भी कोई रुकावट न बनेगी।

जान निकलने के वक़्त मौजूद लोगों में से कोई शख़्स सूरः यासीन पढ़ दे (इससे जान निकलने में आसानी हो जाती है)। (हिस्ने हसीन)

रूह निकल जाने के बाद मय्यित की आखें बन्द करके यह पढ़े:

अल्लाहुम्मग़्फ़िर् लिफ़ुलानिन् वर्फ़अ़् द-र-ज-तहू फ़िल्महदिय्यी-न

वख़्लुफ़्हु फी अ-कबिही फिल्-ग़ाबिरी-न वग़्फ़िर् लना व लहू या रब्बल् आलमी-न वफ़्सह् लहू फी कब्रिही व नव्विर् लहू फ़ीहि

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! इसको बख़्श दे और हिदायत पाने वाले बन्दों में शामिल फ़रमाकर इसका दर्जा बुलन्द फ़रमा। और इसके छोड़े हुए रिश्तेदारों में तू इसका ख़लीफ़ा हो जा। और ऐ रब्बुल् आलमीन हमें और इसे बख़्श दे, और इसकी क़ब्र को कुशादा (खुली-खुली) और रोशन फ़रमा।

यह दुआ हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत अबू सलमा रज़ि० की मौत के बाद उनकी आँखें बन्द फ़रमा कर पढ़ी थी। और फ़्लाँ की जगह उनका नाम लिया था। (मिश्कात)

जब कोई शख़्स किसी मुसलमान के लिए यह दुआ पढ़े तो फ़्लाँ की जगह उसका नाम ले और नाम से पहले ज़ेर वाला लाम (लि) लगा दे। जैसे किसी का नाम राशिद हो तो यूँ कहे **लि-राशिदिन्।**

मय्यित के घराने का हर आदमी अपने लिए यूँ दुआ करेः

अल्लाहुम्मग़्फ़िर् ली व लहू व अअ्क़िब्नी मिन्हु उक़्बा ह-स-नतन्

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! मुझे और इसे बख़्श दे, और मुझे इसका बेहतरीन बदल अता फ़रमा। (हिस्ने हसीन)

मय्यित को तख़्ते पर रखते हुए या जनाज़ा उठाते हुए बिस्मिल्लाह कहे।

जब किसी का बच्चा मर जाये तो **अल्हम्दु लिल्लाह** कहे और **इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन** पढ़े। ऐसा करने से अल्लाह तआला फ़रिश्तों से फ़रमाते हैं कि मेरे बन्दे के लिए जन्नत में एक घर बना दो और उसका नाम बैतुल्-हम्द (यानी तारीफ़ का घर) रखो। (हिस्ने हसीन)

जब किसी की ताज़ियत (यानी मरने वाले के प्रति उसके संबन्धियों से ग़म ज़ाहिर करना) करे तो सलाम के बाद यूँ समझाए

बेशक जो अल्लाह ने ले लिया वह उसी का है और जो उसने दिया वह उसी का है। और हर एक का उसके पास वक़्त मुक़र्रर है (जो बेसब्री या किसी तदबीर से बदल नहीं सकता) लिहाज़ा सब्र करना चाहिये और सवाब की उम्मीद रखनी चाहिये।

इन अल्फ़ाज़ के ज़रिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने

अपनी साहिबज़ादी (बेटी) हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अन्हा को तसल्ली दी थी।

(बुख़ारी शरीफ़)

तमाम मुसलमान मरहूमीन के लिए और ख़ासकर अपने माँ-बाप के लिए दुआ-ए-मग़फ़िरत (बख़्शिश की दुआ) किया करे। इससे उनको बहुत फ़ायदा होता है।

मुसलमान औरतों से

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बातें

* औरतों के लिए *

निकाह का बयान

लेखक

हज़रत मौलाना आशिक़ इलाही साहिब बुलन्द शहरी

रहमतुल्लाहि अलैहि

अनुवादक: मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा. लि.)

422, मटिया महल, उर्दू मार्किट, जामा मस्जिद

देहली-110006

निकाह और उससे मुताल्लिक चीज़ों का बयान

लड़का हो या लड़की बालिग़ होते ही उसकी शादी कर दी जाये

हदीसः (123) हज़रत अबू सईद और इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हुम से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया जिसके कोई औलाद हो तो उसका अच्छा नाम रखे, और उसे अदब सिखाये, फिर जब बालिग़ हो जाये तो उसका निकाह कर दे। अगर औलाद बालिग़ हुई और उसका निकाह न किया जिसकी वजह से उसने कोई गुनाह कर लिया तो बाप पर उसका गुनाह होगा। (मिश्कात शरीफ़ पेज 271 जिल्द 2)

हदीसः (124) हज़रत उमर और हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हुमा से रिवायत है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि तौरात शरीफ़ में यह मज़मून लिखा हुआ है कि जिस शख़्स की बेटी बारह साल को पहुँच गयी और उसने (मौका मुनासिब होते हुए) उसका निकाह न किया और उसने कोई गुनाह कर लिया तो उसका गुनाह उसी शख़्स पर यानी उसके बाप पर होगा।

तशरीहः इन दोनों हदीसों में बहुत अहम नसीहतें हैं।

अच्छा नाम रखने का हुक्म

सब से पहले तो यह फ़रमाया कि जब किसी के औलाद हो तो उसका नाम अच्छा रखे। बच्चों का अच्छा नाम रखना भी माँ-बाप की अहम ज़िम्मेदारी है और बच्चों का यह हक़ है कि उनका अच्छा नाम रखा जाये। एक हदीस में इरशाद है कि कियामत के दिन तुम अपने नामों और अपने बापों के नामों से पुकारे जाओगे, लिहाज़ा तुम अपने नाम अच्छे रखो।

(अबू दाऊद शरीफ़)

एक हदीस में इरशाद है कि फ़रिश्ते मोमिन की रूह लेकर आसमान की तरफ़ जाते हैं तो फ़रिश्तों की जिस जमाअत पर गुज़रते हैं हर जमाअत यह पूछती है कि यह कौन पाकीज़ा रूह है? उस रूह को लेजाने वाले फ़रिश्ते उसका वह अच्छे से अच्छा नाम लेकर जवाब देते हैं जिसके ज़रिये वह दुनिया में बुलाया जाता था, कि फ़लाँ, फ़लाँ का बेटा है। और जब काफ़िर की रूह को ऊपर लेकर चढ़ते हैं तो फ़रिश्तों की जिस जमाअत पर गुज़रते हैं हर

जमाअत पूछती है कि यह कौन ख़बीस रूह है? तो रूह को लेजाने वाले फ़रिश्ते उसका वह बुरे से बुरा नाम लेकर जिसके ज़रिये वह दुनिया में पुकारा जाता था जवाब देते हैं कि फ़लाँ, फ़लाँ का बेटा है, और उसके लिये आसमान के दरवाज़े नहीं खोले जाते। (मिश्कात)

बुरा नाम हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को ना-पसन्द था। हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने फ़रमायाः

"हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम बुरे नाम को बदल दिया करते थे।" (तिर्मिज़ी)

माँ-बाप पर लाज़िम है कि बच्चों के नाम अच्छे रखें और अच्छे नाम वे हैं जिनसे अल्लाह का बन्दा होना मालूम होता हो, इस्लाम और ईमान की सिफ़तें ज़ाहिर होती हों, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि नबियों के नामों पर नाम रखो, और अल्लाह के नज़दीक सबसे ज़्यादा महबूब नाम अ़ब्दुल्लाह और अ़ब्दुर्रहमान है, और सबसे बुरा नाम **हर्ब** और **मुर्रह** है। (मिश्कात)

हर्ब लड़ाई को और **मुर्रह** कड़वे को कहते हैं। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इन दोनों नामों को बद्तरीन नाम फ़रमाया।

इनसान लगावट और हमदर्दी के लिए पैदा हुआ है। इस्लाम मज़हब सरासर सुलह और सलामती सिखाता है। फिर किसी का नाम "हर्ब" यानी जंग रखना कैसे पसन्दीदा हो सकता है? और मोमिन अच्छे अख़्लाक़ वाला और पाकीज़ा सिफ़ात वाला, मुहब्बत का पैकर और उलफ़त का मजमूआ होता है, भला वह कड़वा क्यों होने लगा? हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अ़ब्दुल्लाह, अ़ब्दुर्रहमान नाम रखने को बहुत पसन्द फ़रमाया और अम्बिया अलैहिमुस्सलाम के नामों पर नाम रखने की तरग़ीब दी है। पिछले ज़मानों में माँ-बाप इस्लामी नाम रखते थे, अ़ब्दुल्लाह, अ़ब्दुर्रहमान, अ़ब्दुर्रहीम, अ़ब्दुल करीम, वग़ैरह जिनसे बन्दगी टपकती थी और मालिक व ख़ालिक़ से ख़ास ताल्लुक़ का इज़हार होता था, अम्बिया-ए-किराम अलैहिमुस्सलाम के नामों पर भी नाम रखते थे जिसका नतीजा यह था कि उन बुलन्द-रुतबा हस्तियों के नामों से और नामों के ज़रिये उनके कामों से ज़ेहन मानूस रहता था। चन्द लोग आज भी ऐसे हैं जो बच्चों के नाम रखने में हदीस शरीफ़ के बताये हुए उसूलों की पाबन्दी करते हैं, लेकिन अकसर लोगों में नये नये नाम रिवाज पा

गये हैं। अब तो परवीन और परवेज़, ग़ज़ाला और शाहीन ने बहुत रिवाज पा लिया है। हालाँकि परवेज़ ईरान के उस बादशाह का नाम था जिसने हमारे नबी पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का पाक ख़त (पत्र) चाक कर दिया था जो आपने तबलीग़ के लिये लिखा था। ऐसे दुश्मन के नाम पर नाम रखना बड़ी नासमझी की बात है। शाहीन 'बाज़' को कहते हैं। ग़ज़ाला हिरन को कहते हैं। क्या नाम निकाले हैं, अच्छे नाम छोड़कर जानवरों के नाम इख़्तियार कर लिये। इस सिलसिले में हमने एक रिसाला लिखा है जो "इस्लामी नाम" के नाम से छपा हुआ है, उसको पढ़ा जाये।

बुन्दा, घसीटा, छज्जू

बाज़ औरतें टोटके, टोने करती हैं और बच्चों के नाम उसी उनवान से रख देती हैं। जैसे किसी बच्चे के कान में टोटके के लिये बुन्दा डाला हो तो वह बुन्दा हो गया, और किसी को छाज में रखकर घसीट किया तो वह घसीटा या छज्जू हो गया, और इसी तरह बहुत-सी हरकतें करके नाम रखती हैं, यह सब शिर्क है।

बहुत-से ख़राब नाम इस नाचीज़ ने ख़ुद सुने हैं और ऐसे लोगों से मुलाक़ात हुई है। एक शख़्स का नाम कूड़ा था, बाज़ लोगों ने बताया कि इस तरह का नाम औरतें यह समझकर रखती हैं कि ऐसा नाम रखने से बच्चा ज़िन्दा रहेगा। यह भी शिर्क है। और अब एक मुसीबत और चली है, वह यह कि बच्चों के अंग्रेज़ी नाम रखे जाते हैं, और बच्चों को सिखाया जाता है कि बाप को अब्बा के बजाये डैडी कहा जाये।

और नाम रखने का एक उसूल यह बना रखा है कि जो नालायक़, बेशर्म, बेहया, बेदीन मर्द व औरत सिनेमा की फ़िल्मों में काम करते हैं उनके नामों पर बच्चों के नाम रखे जाते हैं, नेक आमाल और अच्छे अख़्लाक़ वाले बुज़ुर्गों की यादगार बाक़ी रखने की ज़रूरत नहीं समझते। बेहया, बेशर्म लोगों के नामों को ज़िन्दा रखने की कोशिश करते हैं।

बच्चों को दीनी ज़िन्दगी पर डालने का हुक्म

दूसरी नसीहत औलाद को अदब सिखाने के बारे में फ़रमायी, पसन्दीदा आमाल और बुलन्द अख़्लाक़ यह सब अदब के अंतर्गत आ जाते हैं। फ़राइज़ का एहतिमाम करना और मना की हुई बातों से बचना बन्दगी के आदाब में

से है। और इनसानों के साथ इस तरीक़े से पेश आना कि किसी को तकलीफ़ न हो यह रहन-सहन के आदाब में से है। आजकल लोग अपनी औलाद को न अल्लाह की राह पर लगाते हैं न ये ज़िन्दगी के आदाब सिखाते हैं और न इस्लामी तरीक़ा-ए-ज़िन्दगी के आदाब, अलबत्ता यूरोप और अमेरिका की बेहया क़ौमों के तर्ज़े ज़िन्दगी को अपनाते हैं और बच्चों को उन्हीं के तरीक़े सिखाते हैं।

एक छोटा-सा बच्चा कलिमा तय्यिबा और सुब्हानकल्लाहुम्-म नहीं सुना सकता, लेकिन पतलून पहनने और टाई लगाने के आदाब से वाकिफ़ होता है। आह! माँ-बाप अपनी औलाद का कैसे-कैसे ख़ून कर रहे हैं। मुसलमान होने के भी दावेदार हैं और साथ ही साथ तौर-तरीक़े, सज-धज, रंग-ढंग, रफ़्तार-गुफ़्तार और ज़िन्दगी के दूसरे शोबों में बेशुमार अंग्रेज़ों के पैरोकार और स्रोत बने हुए हैं। अल्लाह तआ़ला सबको समझ दे।

निकाहों में देरी करने के असबाब

तीसरी नसीहत ऊपर की हदीस में यह फ़रमायी कि जब औलाद बालिग़ हो जाये तो उसका निकाह कर दिया जाये। आजकल इस नसीहत से बहुत ग़फ़लत हो रही है। अंग्रेज़ी पढ़ने और इम्तिहान देने की जो मुसीबत सवार हो गयी है उसने इस नसीहत को पीठ पीछे डलवा दिया है। तीस-पैन्तीस साल की लड़कियाँ हो जाती हैं उनकी शादी नहीं होती। एक तो इस वजह से कि लड़कियाँ भी डिग्रियों की दौड़-धूप में लड़कों के साथ शरीक हैं, शादी करें तो कालिज और यूनिवर्सिटी कैसे जायें। शादीशुदा होकर तो घर लेकर बैठना पड़ता है। दूसरे जब डिग्रियाँ हासिल कर लेती हैं तो अपनी बराबर का जोड़ (जिसे उसी तरह की डिग्रियाँ हासिल हों) नहीं मिलता, अगर मिलता है तो वह यूरोप और अमेरिका की लड़की पर नज़र डालता है, मशरिक़ी औरत को पूछता ही नहीं, और ज़ाहिर है कि डिग्रियाँ लेने से 'नफ़्से-अम्मारा' (अन्दर की वह ख़्वाहिश जो इनसान को गुनाहों और बुराइयों की तरफ़ उभारती है) नहीं मर जाता, शरई निकाह होता नहीं और फ़िल्में देख-देखकर ख़्वाहिशों का उभार होता रहता है। फिर उन ख़्वाहिशों के पूरा करने के लिये हलाल न होने पर हराम ही को इख़्तियार किया जाता है और ग़ैर-शादीशुदा औरतें माएँ बन जाती हैं, और बे-बाप की औलाद सड़कों पर पड़ी मिलती है। इस गुनाह का

वबाल करने वालों पर तो है ही, माँ-बाप भी इस गुनाह में शरीक होते है, क्योंकि वे नौजवान लड़कों और लड़कियों की शादी लेट करते हैं। अगर माँ-बाप शादी कराना चाहते हैं और लड़का-लड़की शादी पर राज़ी नहीं और गुनाह करते हैं, तो माँ-बाप गुनाह से बच जाते हैं, वही तन्हा गुनाह के ज़िम्मेदार होंगे।

औरतों को बी. ए., एम. ए., पी. एच. डी. और डाक्टर बनने की कोई ज़रूरत नहीं। इस्लाम ने बीवी का ख़र्च मर्द पर रख दिया है। बालिग़ होने पर शादी करे, कालिजों और यूनिवर्सिटीयों में घूमने की कोई ज़रूरत नहीं, घर में पर्दे के साथ कुरआन मजीद, दीनी तालीम और हिसाब व किताब ज़रूरत की मात्रा में पढ़ लेना काफ़ी है।

हदीस नम्बर 124 में इरशाद फ़रमाया है कि जिसकी लड़की बारह साल को पहुँच गयी और उसका निकाह न किया जिसकी वजह से वह गुनाह कर बैठी तो उसका गुनाह बाप पर होगा। बारह साल की उम्र में चूँकि लड़कियाँ उमूमन बालिग़ हो जाती हैं इसलिए इस उम्र का ज़िक्र कर दिया गया, अगर दीनदार अच्छे अख़्लाक़ वाला जोड़ा मिलने में कुछ देर लग जाये तो और बात है वरना बालिग़ होने पर जल्द से जल्द निकाह कर देना लाज़िम है।

मौजूदा दौर के गुमराह लोगों को हमारी बातें नागवार तो मालूम होती होंगी, और यह पुरानी बात है कि हक़ कड़वा होता है पस जैसे बीमार को कड़वी दवा पीनी पड़ती है और ऑप्रेशन कराना पड़ता है उसी तरह जो हक़ पर अ़मल-पैरा न हो उसे हक़ सुनकर कान दबा लेने चाहियें और कड़वी दवा का घूँट समझकर हक़ को हलक़ से नीचे उतार ले ताकि दुनिया व आख़िरत में कामयाब हो।

मुहब्बत के लिये निकाह से बढ़कर कोई चीज़ नहीं

हदीसः (125) हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि मुहब्बत करने वालों के लिये निकाह से बढ़कर तुमने कोई चीज़ नहीं देखी। (मिश्कात शरीफ पेज 268)

तशरीहः दुनिया में मुहब्बत की अदाएँ भी हैं और बुग़्ज़ की फ़ज़ायें भी, इनके असबाब मुख़्तलिफ़ होते हैं। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने

इरशाद फ़रमाया कि मुहब्बत का जोड़ लगाने वाली चीज़ों में निकाह का जोड़ सबसे ज़्यादा मज़बूत है और मुहब्बत के बढ़ाने और बाक़ी रखने में निकाह से बढ़कर कोई चीज़ नहीं। किस ख़ानदान का मर्द और किस ख़ानदान की औरत, एक अरबी दूसरा अजमी (यानी ग़ैर-अरबी), एक एशियाई दूसरा अफ़्रीक़ी, जब शरई निकाह हो जाता है तो एक-दूसरे पर निसार होता है और उलफ़त व मुहब्बत वह रंग लाती है कि उम्र भर साथ नहीं छोड़ता। निकाह के अलावा भी बाज़ मर्द व औरत नफ़्सानियत के लिए नाम की मुहब्बत कर लेते हैं मगर यह मुहब्बत नहीं होती बल्कि नफ़्स का मतलब निकालने के लिए एक जोड़ होता है जिसका नाम मुहब्बत रख दिया जाता है। जब मतलब निकल जाता है या मक़सद में नाकामी हो जाती है तो फिर यह कहाँ और वह कहाँ? कैसी मुहब्बत और कैसी उलफ़त? सब भाड़ में डाल दी जाती है। निकाह के ज़रिये जो ताल्लुक़ पैदा होता है वह वक़्ती नहीं होता बल्कि ज़िन्दगी भर निभाने की नीयत से 'ईजाब व क़ुबूल' होता है। इसी लिए तलाक़ को हदीस शरीफ़ में मजबूरी और लाचारी की चीज़ बताया है। निकाह का मक़सद नफ़्स की ख़्वाहिश का तक़ाज़ा पूरा करना ही नहीं होता बल्कि इसके ज़रिये मर्द की हैसियत बढ़ जाती है। वह आल-औलाद और घर-बार वाला हो जाता है। लोग उसे भारी-भरकम आदमी समझते हैं। औरत भी एक घर की मालिकन बन जाती है। औरत मर्द दोनों ज़िन्दगी भर के लिए एक-दूसरे के हमदर्द और दुख-सुख के साथी और आराम व तकलीफ़ के शरीक हो जाते हैं। यह बात बेनिकाह की झूठी मुहब्बत में कहाँ? फिर मज़ीद यह कि शौहर व बीवी कई ख़ानदानों में मुहब्बत व उलफ़त का ज़रिया बन जाते हैं। जिन ख़ानदानों में कभी कोई जोड़ न था, ऐसे ख़ानदान एक-दूसरे के हमदर्द बन जाते हैं। यह समधी की ज़ियारत के लिए जा रहा है, और औरत का भाई अपनी बहन के शौहर की तीमारदारी में लगा हुआ है। दामाद सास को हज के लिए लेजा रहा है। ससुर दामाद को दुकान करने के लिए रक़म दे रहा है वग़ैरह वग़ैरह। ये मुहब्बतें और ख़िदमतें एक शरई निकाह की वजह से हुईं।

वह निकाह सबसे ज़्यादा बरकत वाला है जिसमें कम-से-कम ख़र्चे हों

हदीसः (126) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि

रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि बेशक बरकत के एतिबार से सबसे बड़ा निकाह वह है जिसमें कम-से-कम ख़र्चे हुए हों। (मिश्कात शरीफ़ पेज 268)

तशरीहः इस हदीस से यह मालूम हुआ कि निकाह और विवाह-शादी में कम-से-कम ख़र्च करना चाहिये। निकाह में जिस क़द्र ख़र्चे कम होंगे वह निकाह उसी क़द्र बड़ी बरकतों वाला होगा। उसके फ़ायदे दोनों तरफ़ के लोगों को हमेशा पहुँचते रहेंगे और यह निकाह दुनिया व आख़िरत की भलाई का ज़रिया होगा।

हमारे प्यारे रसूल सरकारे दो जहाँ सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपनी शादियाँ भी कीं और अपनी लड़कियाँ भी बियाहीं, ये शादियाँ बहुत ही सादगी के साथ अन्जाम पा गईं। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सबसे चहेती बीवी हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा थीं जो सिद्दीके अकबर हज़रत अबू बक्र रज़ियल्लाहु अ़न्हु की बेटी थीं। उनसे निकाह तो मक्का मुअ़ज़्ज़मा ही में हो गया था, फिर हिजरत के बाद मदीना मुनव्वरा में रुख़्सती हुई, और किस शान से रुख़्सती हुई? याद रखने के काबिल है।

हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा की रुख़्सती

हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा पड़ौस के एक घर में सहेलियों के साथ झूला झूल रही थीं, उनके वालिद ने आवाज़ देकर बुलाया और कुछ औ़रतों से उन्होंने हज़रत आ़यशा रज़ि० का सिंघार करा दिया और एक कमरे में छोड़कर चली गईं। चाश्त का वक़्त था, थोड़ी देर में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उनके पास तशरीफ़ ले आये। लीजिये रुख़्सती हो गयी। न दुल्हन पालकी में बैठी, न दूल्हा घोड़े पर चढ़ा, न और किसी तरह के ख़र्चे हुए।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की चार बेटियाँ थीं। हज़रत ज़ैनब, हज़रत उम्मे कुलसूम, हज़रत रुक़य्या, हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अ़न्हुन्-न। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इन चारों की शादियाँ कीं और बहुत ही सादगी के साथ सबके निकाह और रुख़्सतियाँ हो गईं।

ख़ातूने जन्नत की रुख़्सती

हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सबसे ज़्यादा लाडली बेटी थीं। उनका रुतबा बहुत बड़ा है।

सरकारे दो जहाँ सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने आपको जन्नत की औरतों की सरदार बताया। सबको मालूम है कि उनका निकाह हज़रत अली कर्रमल्लाहु वज्हहू के साथ हुआ था। जिस वक़्त शादी हुई हज़रत अली रज़ि० के पास कोई मकान भी न था। एक साहबी रज़ि० से मकान लेकर रुख़्सती कर दी गयी, और रुख़्सती किस शान से हुई। हज़रत उम्मे ऐमन रज़ियल्लाहु अन्हा के साथ हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु के पास भेज दी गई। दूल्हा खुद लेने नहीं आया था और दुल्हन किसी सवारी में नहीं बैठी।

अब दहेज की बात भी सुन लें। सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ख़ातूने जन्नत रज़ियल्लाहु अन्हा के दहेज में एक चादर और एक तकिया और दो चौकियाँ और दो मश्कीज़े दिये। तकिये का ग़िलाफ़ चमड़े का था जिसमें खजूर की छाल भरी हुई थी। और बाज़ रिवायतों में है एक पलंग; एक प्याला, चाँदी के दो बाज़ूबंद देने का भी ज़िक्र मिलता है।

हुज़ूर सल्ल० की बीवियों और बेटियों का मेहर

रहा मेहर का मामला तो उसके बारे में हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि मैं नहीं जानता कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने 212/1 औक़िया से ज़्यादा अपनी किसी बीवी या अपनी किसी बेटी का मेहर मुक़र्रर किया हो। (मिश्कात)

एक औक़िया चालीस दिर्हम का होता है। 212/1 औक़िया के 500 दिर्हम होते हैं। एक दिर्हम 3 माशा एक रत्ती और 1/5 रत्ती चाँदी का होता है। इस हिसाब से 500 दिर्हम की चाँदी 131 तौला से कुछ ज़्यादा होती है। चाँदी की यह मात्रा मौजूदा कीमत के हिसाब से करीब हज़ार रुपये होती है।

(2004 ई० के रेट के हिसाब से 131 तौले चाँदी की कीमत क़रीब 11000 रुपये होती है। मुहम्मद इमरान क़ासमी)

और इस महंगाई के दौर में इतनी क़ीमत हो गयी वरना पचास साल पहले बहुत ही कम क़ीमत थी। आजकल हज़ारों रुपये मेहर मुक़र्रर करते हैं, निकाह की मजलिस में तो नाम हो ही जाता है मगर ज़िन्दगी भर अदा नहीं कर पाते और बीवी के क़र्ज़दार होकर मरते हैं।

लोगों की ख़राब हालत

हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपनी शादियाँ कीं और अपनी बेटियों की भी सादा तरीक़े पर शादी की। दोनों जहाँ के सरदार थे, अगर चाहते तो धूमधाम से शादियाँ करते लेकिन आपने अपने अ़मल से सादगी इख़्तियार करके दिखायी और मुस्तकिल तरीक़े पर यह फ़रमा दिया कि निकाह में जिस क़द्र ख़र्चे कम होंगे उसी क़द्र बड़ी बरकत वाला होगा।

हमने शादी-विवाह को मुसीबत बना रखा है। ग़ैर-मुसलिमों की देखा-देखी बुरी-बुरी रस्में जारी कर रखी हैं। और ये रस्में गुरूर व शौहरत के लिए इख़्तियार की जाती हैं, सूदी कर्ज़ ले-लेकर शादियाँ करते हैं। सबको मालूम है कि सूद का लेना-देना लानत का सबब है, दिखावे के लिए दहेज दिये जाते हैं, सैकड़ों रुपये दावतनामे के कार्ड पर ख़र्च होते हैं। इन ख़र्चों की वजह से बाज़ मर्तबा जवान लड़कियाँ बरसों बैठी रहती हैं। वलीमे होते हैं जिनमें सरासर रियाकारी होती है। नाम सुन्नत का और काम दिखावे का। इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊ़न।

हुज़ूर सल्ल० का सफ़र में निकाह और वलीमा

हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक बार सफ़र में निकाह किया और वहीं रुख़्सती हुई और वहीं वलीमा। न बकरी ज़िबह हुई न क़ौरमा पका न और किसी का एहतिमाम हुआ बल्कि दस्तरख़्वान बिछा दिये गये, उनपर कुछ घी, कुछ ख़जूरें, कुछ पनीर के टुकड़े डाल दिये गये। मौजूद लोगों ने उसमें से खा लिया। यह हज़रत सफ़िया रज़ियल्लाहु अ़न्हा के निकाह का वाक़िआ़ है।

हमारे लिये बेहतरीन नमूना

हम लोग भी अगर हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के तरीक़े पर चलने का इरादा कर लें तो किसी तरह की कोई रस्म इख़्तियार न करनी पड़े। सादगी के साथ एक मर्द व औ़रत का रिश्ता शरई 'ईजाब व क़बूल' के ज़रिये जोड़ देना काफ़ी है। इतने से काम में कोई मुसीबत और बखेड़ा नहीं, जो पाबन्दियाँ ख़ुद अपने सर लगायी हैं उनकी वजह से मुसीबतों में गिरफ़्तार हैं।

मंगनी की रस्मों से शादी के दिन और उसके बाद खिलाने पिलाने, आने-जाने की रस्मों तक हज़ारों रुपये ख़र्च होते हैं और सैकड़ों नाजायज़

काम किये जाते हैं। ये रस्में तफ़सील के साथ हज़रत मौलाना अशरफ़ अ़ली साहिब थानवी रह० ने अपनी किताब 'इस्लाहुर्रुसूम' और 'बहिश्ती ज़ेवर के छठे हिस्से' में लिख दी हैं और साथ ही साथ उनकी शरई बुराई से भी आगाह फ़रमा दिया है।

शादी-विवाह के मुताल्लिक़ औ़रतों की जाहिलाना रस्में

औ़रतों ने शादी-विवाह की खुद बनाई हुई रस्मों को शरई फ़राइज़ का दर्जा दे रखा है। नमाज़ नहीं पढ़तीं जो सबसे ज़्यादा फ़र्ज़ चीज़ है लेकिन शादी-विवाह की रस्मों को फ़र्ज़ और वाजिब से बढ़कर अन्जाम देती हैं, और उन रस्मों को जो न बरते उसे बुरे लफ़्ज़ों में याद करती हैं।

गाने-बजाने का गुनाह

शादियों में सैकड़ों रुपये गाने-बजाने और रंडियाँ नचाने और डोमनियाँ गवाने पर ख़र्च किये जाते हैं। जिसकी शादी में गाना बजाना न हो, ग्रामोफ़ोन न बजे, बाजे वाले न आयें उसे बेकार बेमज़ा समझा जाता है, हालाँकि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया है कि:

"मुझे मेरे रब ने हुक्म दिया है कि मैं गाने-बजाने के सामान मिटा दूँ और बुतों और (ईसाइयों की) सलीब (सूली) को और जाहिलीयत की चीज़ों को ख़त्म कर दूँ।" (मिश्कात शरीफ़)

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जिन चीज़ों को मिटाने को अपने दुनिया में भेजे जाने के मक़सद में शामिल फ़रमाया, अफ़सोस है कि इस्लाम के दावेदार उन चीज़ों से अपनी शादियों को सजाते हैं और मुसीबत पर मुसीबत यह है कि मस्जिदों में नमाज़ें होती रहती हैं और माईक से गाने बजते रहते हैं और सारे मौहल्ले में गानों की एक मुसीबत खड़ी हो जाती है। शोर शराबे में बीमार भी चैन-सुकून से आराम नहीं कर सकता।

एक ज़माना था जब मुसलमान हिन्दुओं से भिड़ जाते थे और मस्जिद के सामने बाजा बजाने पर जान देने और जान लेने के लिए तैयार हो जाते थे। आज मुसलमान खुद ही मस्जिद के सामने बाजा बजाता है और ऐन नमाज़ के वक़्त गाने की आवाज़ें नमाज़ियों के कानों में ठोंसता है।

लड़के या लड़की पर रक़म लेना हराम है और रिश्वत है

बाज़ लोग कई-कई हज़ार रुपये लेकर लड़की देते हैं और उसके विपरीत

बाज़ इलाक़ों में इस शर्त पर लड़की लेते हैं कि लड़की के साथ इतनी रक़म और इतना सामान दें। इन रक़मों और मालों को लेना-देना रिश्वत होने की वजह से हराम है और साथ ही ऊपर की हदीस के भी ख़िलाफ़ है।

रक़मों के लेन-देन की बुरी रस्म की वजह से शादी-विवाह में कम-से-कम ख़र्चे कैसे हो सकते हैं। रक़म और सामान का इन्तिज़ाम न होने की वजह से बाज़ मर्तबा तीस-चालीस साल की उम्र होने तक कहीं जोड़ नहीं बैठता, ख़ुदा तआला सुन्नत पर अमल करने की तौफ़ीक़ दे। आमीन।

बालिग़ लड़की की इजाज़त के बग़ैर निकाह नहीं हो सकता

हदीसः (127) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिस औरत का एक बार निकाह हो चुका हो (और फिर शौहर की मौत या तलाक़ मिल जाने की वजह से इद्दत गुज़ार कर दूसरी जगह निकाह करना हो) तो उसका निकाह उस वक़्त तक न किया जाये जब तक उससे साफ़ तौर पर ज़बान से इजाज़त न ले ली जाये। और जिस (बालिग़) लड़की का निकाह पहले नहीं हुआ है उसका निकाह उस वक़्त तक नहीं किया जाये जब तक उससे इजाज़त न ले ली जाये। सहाबा किराम रज़ि० ने अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! उसकी इजाज़त कैसे होगी? (वह तो शर्म की वजह से बोल भी न सकेगी)। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया उसकी तरफ़ से यही इजाज़त समझी जायेगी कि जब उससे इजाज़त ली जाये तो वह ख़ामोश रह जाये। (मिश्कात शरीफ़ पेज 270)

तशरीहः नाबालिग़ लड़के या लड़की का निकाह उसका वली (अभिभावक) अपने इख़्तियार से कर सकता है। नाबालिग़ से इजाज़त लेने की ज़रूरत नहीं, बल्कि अगर वह इनकार करे और वली निकाह पढ़ा दे तब भी निकाह हो जायेगा और वली को शरीअत ने यह इख़्तियार इसलिए दिया है कि कई बार अच्छे ख़ानदान में मुनासिब रिश्ता मिल जाता है और बालिग़ होने का इन्तिज़ार करने में उस रिश्ते के हाथ से निकल जाने का अन्देशा होता है। लड़के और लड़की की भलाई और बेहतरी के लिये अगर नाबालिग़ी में उनका निकाह कर दिया जाये जो शरीअत के उसूल के मुताबिक़ हो तो दुरुस्त है। हाँ! अगर लड़की के फ़ायदे का लिहाज़ न हो बल्कि वली (चाहे वह बाप दादा

ही हो) अपनी ज़ाती मस्लेहत या दुनियावी फ़ायदे के लिये नाबालिग़ लड़के या लड़की का निकाह कर दे तो यह दुरुस्त नहीं है। बाज़ हालात में यह निकाह होता ही नहीं, और बाज़ हालात में निकाह हो जाता है मगर लड़के और लड़की को मुस्लिम हाकिम के यहाँ दरख़्वासत देकर निकाह को ख़त्म कराने का इख़्तियार होता है।

इस सिलसिले में अवाम व ख़्वास बड़ी कमी-बेशी (यानी बेएहतियाती) में मुब्तला हैं। बाज़ लोगों ने क़ानून बना रखा है कि नाबालिग़ लड़के या लड़की का निकाह हो ही नहीं सकता। यह क़ानून बिल्कुल शरीअ़त के ख़िलाफ़ है। जब शरीअ़त ने नाबालिग़ लड़के और लड़की के निकाह को वली के 'ईजाब व क़बूल' से जायज़ रखा तो अब इस जायज़ को बदलकर नाजायज़ क़रार देने वाला कौन है? यह तो दीन में दख़ल-अन्दाज़ी है।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसे ख़ुद अपने अ़मल से जायज़ क़रार दिया और हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से उस वक़्त निकाह फ़रमाया जब उनकी उम्र छह साल की थी, अगरचे रुख़्सती बाद में हुई। इस शरई जायज़ के ख़िलाफ़ क़ानून बनाना शरीअ़त से बाग़ी होना है। अगरचे नाबालिग़ी में निकाह कर देना कोई फ़र्ज़ व वाजिब भी नहीं है। छोटे बच्चों का निकाह कर देने से बाज़ मर्तबा बाद में बहुत-सी मुशकिलात सामने आ जाती हैं इसलिए इसमें भी बहुत एहतियात की ज़रूरत है। इस सिलसिले में और तफ़सील इन्शा-अल्लाह हम आगे बयान करेंगे। इस हदीस की तशरीह के सिलसिले में तम्हीद के तौर पर यह तफ़सील ज़ेरे क़लम आ गयी।

कुंवारी से जब बाप निकाह की इजाज़त ले तो उसकी ख़ामोशी ही इजाज़त होगी

ऊपर की हदीस से मालूम हुआ कि बालिग़ लड़की जिसका निकाह पहले किसी से न हुआ हो उसका निकाह उससे इजाज़त लेकर किया जाये। उसे बतायें कि फ़लाँ लड़का फ़लाँ ख़ानदान का और फ़लाँ पैशे वाला है और उसकी माली हैसियत ऐसी है, उससे तेरा निकाह करना मुनासिब मालूम होता है। तेरी इजाज़त है तो उससे निकाह कर दें। जब उसे यह बात कह दी गयी और उसने ख़ामोशी इख़्तियार कर ली तो यह उसकी इजाज़त समझी जायेगी। और अगर ज़बान से साफ़ तौर पर इजाज़त दे दे तब तो यह इजाज़त ज़्यादा

बेहतर और मोतबर होगी। अगर उसने इनकार कर दिया तो उसका निकाह कर देना दुरुस्त नहीं। बालिग़ लड़की का इनकार होते हुए किसी वली ने निकाह कर दिया तो निकाह नहीं होगा। बाज़ लोगों पर ऐसी जहालत सवार होती है कि बालिग़ लड़की के इनकार के बावजूद अपना वायदा निभाने के लिए उसका निकाह कर देते हैं और लड़की को मारपीट कर और घर से धकेल कर नाम-निहाद शौहर के साथ चलती कर देते हैं। यह बद्तरीन ज़ुल्म है और सख़्त हराम है।

चूँकि लड़की ने उस निकाह की इजाज़त नहीं दी इसलिए निकाह ही नहीं हुआ। मियाँ-बीवी वाले ताल्लुकात भी ज़िना होंगे। यह क्या चौधराहट है कि बाप की नाक ऊँची हो जाये, लड़की चाहे ज़िन्दगी भर ज़िनाकारी में मुब्तला रहे। जहालत बुरी बला है।

कुंवारी का इजाज़त लेने के वक़्त मुसकुराना और रोना भी इजाज़त में शुमार है

यह जो कहा कि जिस बालिग़ लड़की का निकाह पहले हुआ हो उसका वली जब निकाह की इजाज़त ले तो उसकी ख़ामोशी इजाज़त समझी जायेगी। इसके साथ दीन के आलिमों ने यह भी लिखा है कि अगर वह हंस पड़ी या मुसकुराकर रह गयी या रो पड़ी और इनकार न किया तो यह भी इजाज़त शुमार होगी। बशर्ते कि यह हंसना और रोना इनकार के अन्दाज़ का न हो।

ज़बान से साफ़ तौर पर किस लड़की से इजाज़त लेना ज़रूरी है?

और जिस लड़की का निकाह एक बार पहले हो चुका हो और अब (शौहर की मौत या तलाक़ हो जाने के बाद इद्दत गुज़ारकर) दूसरा निकाह करना चाहे तो उसका वली जब लड़के की सिफ़ात और हालात बयान करके इजाज़त ले तो उसका ख़ामोश रह जाना इजाज़त में शुमार न होगा बल्कि जब तक ज़बान से साफ़ लफ़्ज़ों में इजाज़त न दे इजाज़त न समझी जायेगी। और बालिग़ा कुंवारी के बारे में जो यह लिखा है कि उसकी ख़ामोशी भी इजाज़त में शुमार होगी, यह उस वक़्त है जबकि वह वली इजाज़त तलब करे जो सब से करीब है। अगर करीब वाले वली के अलावा कोई दूसरा वली इजाज़त ले तो

बालिग़ कुंवारी लड़की की इजाज़त भी वही मोतबर होगी जो ज़बान से हो और साफ़ लफ़्ज़ों में हो। इस तफ़सील को ख़ूब समझ लें।

शरीअ़त की संतुलित राह

शरीअ़त ने कैसे संतुलन से काम लिया है। एक तरफ़ तो बालिग़ लड़की को अपनी ज़ात का इख़्तियार दे दिया कि जब तक वह इजाज़त न दे उसका निकाह नहीं हो सकता। दूसरी तरफ़ उसकी शर्म का लिहाज़ रखा और वली की इजाज़त लेने पर उसकी ख़ामोशी यानी इनकार न करने को इजाज़त शुमार कर लिया। अगर वह इनकार करे तो वली उसका निकाह नहीं कर सकता। और जिस बालिग़ लड़की का पहले निकाह हो चुका है उसके दूसरे निकाह के लिए उसकी ज़बानी इजाज़त लाज़िम करार दी गयी। जिसकी वजह यह है कि जिस औरत का निकाह एक बार हो चुका है उसकी शर्म टूट चुकी है। उसकी ख़ामोशी को इजाज़त क़रार देने की कोई ज़रूरत नहीं। और क़रीब वाले वली के अ़लावा अगर कोई दूसरा वली इजाज़त ले तो बालिग़ कुंवारी की ख़ामोशी भी मोतबर नहीं क्योंकि अन्देशा यह है कि जो क़रीबी वली न हो वह जहाँ निकाह करना चाहता है उसमें पूरी हमदर्दी की रियायत न रखी हो। लिहाज़ा लड़की जब साफ़ लफ़्ज़ों में इजाज़त दे तब मोतबर होगी।

नाबालिग़ का निकाह

बाज़ ख़ानदानों और इलाक़ों में यह मुस्तक़िल तरीक़ा बना रखा है कि नाबालिग़ी में लड़के और लड़की का निकाह कर देना ज़रूरी समझते हैं, हालाँकि नाबालिग़ का निकाह कर देना एक जायज़ अमूर है, कोई फ़र्ज़ व वाजिब नहीं है। ख़्वाह-मख़्वाह नाबालिग़ी में बच्चों का निकाह कर देना कोई ज़रूरी काम नहीं है। बहुत-सी बार ऐसा होता है कि नाबालिग़ी में निकाह कर देने के बाद लड़का और लड़की बालिग़ होकर उस निकाह के इनकारी हो जाते हैं और उस शादी को पसन्द नहीं करते। उनका इनकार और माँ-बाप का उसी जगह रुख़्सती करने पर इसरार मुसीबत बन जाता है।

मौजूदा दौर की औलाद की ख़ुद्दारी के पेशे-नज़र अगर बात पहले से पक्की करके रखें और आख़िरी फ़ैसला और निकाह लड़का लड़की के बालिग़ होने पर उनकी इजाज़त लेकर करें तो उक्त परेशानी का सामना न हो। और बाज़ मर्तबा लड़का बालिग़ होकर शरीर बदमाश निकल जाता है। रुख़्सती करें

तो लड़की की जान मुसीबत में फंसे और लड़के से तलाक़ को कहें तो तलाक़ नहीं देता। ये परेशानियाँ पेश आती रहती हैं, इनसे बचने का यही इलाज है जो ऊपर बयान किया गया। अलबत्ता ऐसा क़ानून भी ख़िलाफ़े शरीअ़त है कि नाबालिग़ का निकाह हो ही न सके। शरीअ़त में जो जायज़ है उस पर अ़मल करें तो लड़का लड़की का फ़ायदा देख लें।

लड़कियों के निकाह में उनकी मस्लेहत पेशे-नज़र रहे

यह जो हमने अ़र्ज़ किया कि बाप-दादा वग़ैरह अपने ज़ाती फ़ायदे और ख़ुदग़र्ज़ी की वजह से नाबालिग़ औलाद का निकाह कर देते हैं। इसकी तफ़सील बहुत दर्दनाक है जो दारुल-इफ़्ता में आने वाले सवालात से मालूम होती रहती है।

बहुत-से इलाक़ों में बदले में लड़की दिये बग़ैर लड़के को लड़की नहीं मिलती। अब लड़के का विवाह करने के लिए उसकी बहन को सूली पर चढ़ा देते हैं। लड़की की मस्लेहत बिल्कुल नहीं देखते। जिसको लड़की देकर लड़के के लिए लड़की ले रहे हैं उसकी उम्र चाहे कितनी ही ज़्यादा हो और चाहे रंग-रूप के एतिबार से कैसा ही हो, और उसकी माली हालत कैसी ही ख़राब व ख़स्ता हो, सब पर पर्दा डालकर लड़की को कूड़े-करकट की तरह बहा देते हैं। लड़कियों की शरीअ़त में एक हैसियत है, वे कोई भेड़-बकरियाँ नहीं हैं कि वली-वारिस (सरपरस्त) जहाँ चाहे पटक दे, और जहाँ चाहे दाव पर चढ़ा दे।

लड़की पर रकम लेना हराम है

बाज़ लोग लड़की पर हज़ारों रुपये लेते हैं। यह ख़ालिस रिश्वत है जो सरासर हराम है। मगर रक़म लेने वाले बाज़ नहीं आते। उनमें दीनदारी के दावेदार और लम्बी पगड़ी और ढीले कुर्ते वाले भी होते हैं जो लिबास और नमाज़-रोज़े को दीनदारी समझते हैं मगर हराम से बचने की उनके नज़दीक कोई अहमियत नहीं होती। फिर जब सौदा ही करना ठहरा तो जहाँ ज़्यादा मिले लड़की वहाँ दे देते हैं और रक़म को देखते हैं लड़की की मस्लेहत को नहीं देखते। यह ज़ुल्म भी होता है कि वह इनकार करती रहती है कि मुझे यह निकाह मन्ज़ूर नहीं। चीख़ती और शोर मचाती है मगर अब्बा जान हैं कि टस-से-मस नहीं होते। लड़की को ज़बरदस्ती गाड़ी में डालकर रुख़्सत कर देते हैं।

लड़कियों पर एक बड़ा ज़ुल्म

बाज़ इलाकों में मार-काट, कत्ल व ग़ारत के वाकिआत बहुत होते रहते हैं। किसी आदमी को चन्द आदमियों ने मिलकर कत्ल कर दिया। जब गिरफ़्तार हुए और मुकदमा चला तो सुलह पर आमादा हो गये। मक्तूल के वारिसों ने कहा कि इस कद्र रकम दो और चार लड़कियों का निकाह हमारे ख़ानदान के चार आदमियों से करो तो सुलह हो सकती है, इस पर राज़ी हो जाते हैं और अपनी जान को छुड़ाने के लिए लड़कियों को तुके-बेतुके बड़ी उम्र वाले लोगों के पल्ले बाँध देते हैं। इसमें बच्चों की ख़ैरख़्वाही और हमदर्दी का ख़्याल नहीं किया जाता सिर्फ़ अपनी मस्लेहत और फ़ायदा देखा जाता है जिसमें सरासर ज़ुल्म होता है। कत्ल तो करे चचा और ज़िन्दगी भर मुसीबतें भुगतें चार भतीजियाँ, यह कहाँ का इन्साफ़ है।

ख़ुलासा

ख़ुलासा यह कि नाबालिग़ लड़के और लड़की का निकाह ख़ुद उनके अपने 'ईजाब व कबूल' (यानी रज़ामन्दी) से नहीं होता। अलबत्ता वली के 'ईजाब व कबूल' से आयोजित हो जाता है और वली को लड़के और लड़की की मस्लेहत से उनका निकाह कर देना भी जायज़ है मगर ख़ुद रकम बटोरने के लिए या दूसरे किसी ज़ाती फ़ायदे के लिए बालिग़ या नाबालिग़ लड़के और लड़की को निकाह कर के उनको मुसीबत में फंसा देना किसी तरह जायज़ नहीं है।

बालिग़ लड़का और लड़की शरअन् ख़ुद मुख़्तार होते हैं। वली के लिए जायज़ नहीं है कि उनको किसी जगह निकाह करने पर मजबूर करे। हाँ! बालिग़ लड़का या लड़की अगर वली को वकील बना दें कि फ़लाँ जगह मेरा निकाह कर दो तो वली वकील होकर 'ईजाब व कबूल' कर सकता है। और अगर ख़ाली निकाह का वकील बनाया हो कोई जगह मुकर्रर न की हो तो उनकी मस्लेहत और ख़ैरख़्वाही पर नज़र रखना लाज़िम है।

और पहली सूरत में भी वली उनकी ख़ैरख़्वाही का लिहाज़ रखे। अगर लड़का लड़की किसी ऐसी जगह निकाह के लिए वकील बनाते हैं, जहाँ उनका निकाह ख़िलाफ़े मस्लेहत हो तो उनको समझा दें और दूसरी अच्छी जगह रिश्ता निकालने की कोशिश करें। लेकिन अगर उन्होंने वली की इजाज़त के

बग़ैर निकाह कर लिया (जिसमें शरई तौर पर जायज़ होने की गुंजाइश हो) तो निकाह बहरहाल हो जायेगा। सब मसाइल ख़ूब अच्छी तरह समझ लें।

परहेज़गारी के बाद सबसे ज़्यादा बेहतर चीज़ नेक औरत है

हदीसः (128) हज़रत अबू उमामा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि मोमिन बन्दे ने तक़्वे (परहेज़गारी) की नेमत के बाद कोई ऐसी भलाई हासिल नहीं की जो उसके हक़ में नेक बीवी से बढ़कर हो। (फिर नेक बीवी की तारीफ़ करते हुए फ़रमाया) अगर शौहर उसे हुक्म करे (जो शरीअत के ख़िलाफ़ न हो) तो उसका कहा माने, और शौहर उसकी तरफ़ देखे तो शौहर को खुश करे। और अगर शौहर किसी काम के बारे में क़सम खा बैठे कि ज़रूर तुम ऐसा करोगी (और वह काम शरअन् जायज़ हो) तो उसकी क़सम सच्ची कर दे। और अगर वह कहीं चला जाये और यह उसके पीछे घर में रह जाये तो अपनी जान और उसके माल के बारे में उसकी ख़ैरख़्वाही करे। (इब्ने माजा)

तशरीहः इस हदीस में इरशाद फ़रमाया है कि तक़्वे (परहेज़गारी) की नेमत बड़ी नेमत है। अगर किसी को यह नेमत मयस्सर हो जाये तो वह बहुत मुबारक है क्योंकि असल दीनदारी तक़्वे ही का नाम है। और वजह इसकी यह है कि तक़्वा फ़राईज़ और वाजिबात के अदा करने और हराम व मना किए हुए कामों से परहेज़ करने का नाम है। इस सिफ़्त की वजह से बन्दा खुदा पाक का मेहबूब बन जाता है। तक़्वे के अलावा और भी बेशुमार नेमतें हैं जिनका दर्जा अगरचे तक़्वे की नेमत से कम है मगर इनसान की ज़िन्दगी के लिए वे भी बहुत ज़रूरी और अनमोल हैं। उन नेमतों में सबसे बढ़कर क्या है? सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तक़्वे (परहेज़गारी) के बाद सबसे बड़ी नेमत नेक बीवी है। फिर नेक बीवी की सिफ़तें बताईं।

नेक औरत की सिफ़तें

पहलीः यह कि शौहर की फ़रमाँबरदार हो। शौहर जो फ़रमाइश करे उसे पूरी करे और नाफ़रमानी करके उसका दिल न दुखाए बशर्तेकि शौहर ने शरीअत के ख़िलाफ़ किसी काम का हुक्म न किया हो। शरीअत के ख़िलाफ़ कामों में किसी की भी फ़रमाँबरदारी नहीं क्योंकि इससे ख़ालिक़ व मालिक

(अल्लाह तआला) की नाफ़रमानी होती है जो तमाम हाकिमों का हाकिम है।

दूसरीः यह बयान फ़रमायी कि अगर शौहर उसकी तरफ़ देखे तो उसे ख़ुश करे यानी अपना रंग-ढंग शौहर की मर्ज़ी के मुताबिक़ रखे। जब बीवी पर नज़र पड़े तो उसे देखकर उसका दिल ख़ुश हो। बाज़ औरतें ऐंठती रहती हैं, बात-बात में मुंह फुलाना और बीमारी ज़ाहिर करने के लिए ख़्वाह-मख़्वाह कराहना अपनी आदत बना लेती हैं, और बाज़ औरतें मैली-कुचैली फूहड़ बनी रहती हैं। इन बातों से शौहर को दिली तकलीफ़ होती है। शौहर सूरत देखने का इरादा भी नहीं करता बल्कि घर में जाने को भी अपने लिए मुसीबत समझता है।

इनमें बाज़ औरतें वे भी होती हैं जो नमाज़-रोज़े की पाबन्द होने की वजह से अपने को दीनदार और नेक समझती हैं। हालाँकि औरत की ख़ूबियों में यह बात भी शामिल कर दी गयी है कि शौहर की फ़रमाँबरदारी करे और इस हाल में रहे कि शौहर उस पर नज़र डाले तो बेचारा ख़ुश हो सके, अलबत्ता शरीअ़त के ख़िलाफ़ ख़्वाहिश पूरी न करे।

तीसरीः बात यह बयान फ़रमायी कि अगर शौहर किसी ऐसी बात पर क़सम खा ले जिसका अन्जाम देना बीवी से मुताल्लिक़ हो, जैसे यह कि आज तुम ज़रूर मेरी माँ के पास चलोगी या फ़लाँ बच्चे को नहला-धुला दोगी, या जैसे तहज्जुद पढ़ोगी तो उसकी बीवी क़सम में उसको सच्चा करके दिखाये यानी वह अ़मल करे जिस पर शौहर ने क़सम खा ली है बशर्तेकि वह अ़मल शरअ़न् दुरुस्त हो।

यह क़सम खा लेना कि तुम ज़रूर यह काम करोगी बहुत ज़्यादा मुहब्बत, उलफ़त और नाज़ की वजह से होता है, जिससे ताल्लुक़ ख़ास है और जिस पर नाज़ है उसी से कहा जाता है कि ऐसा करो। और ऐसे मौक़े में कभी उसे क़सम दे देते हैं और कभी ख़ुद क़सम खा लेते हैं। जिन औरतों को शौहरों से असली और दिली ताल्लुक़ होता है वे शौहर को राज़ी रखने का ख़ास ख़्याल रखती हैं। इसी तीसरी सिफ़त में (जो नेक औरत की तारीफ़ में ज़िक्र की गयी है) उसी ख़ास उलफ़त और चाह का ज़िक्र फ़रमाया है जो शौहर व बीवी के दरमियान होनी चाहिये।

चौथीः बात यह बयान फ़रमायी कि अगर शौहर कहीं चला जाये और बीवी को घर छोड़ जाये जैसा कि अकसर होता है तो बीवी का फ़रीज़ा है कि

अपनी जान और शौहर के माल के बारे में वही रवैया इख़्तियार करे जो उसके सामने रखती थी। ग़ैरतमन्द शौहर को यह पसन्द नहीं कि उसकी बीवी किसी ग़ैर मर्द की तरफ़ देखे या ग़ैर मर्द के सामने आये या उससे आँखें मिलाये या दिल लगाये।

जब शौहर घर होता है तो औरत ख़ालिस उसकी बीवी बनकर रहती है। इसी तरह जब वह कहीं चला जाये तब भी उसी को शौहर जाने और उसी की बीवी बनी रहे। जब किसी मर्द से निकाह हो गया तो इज़्ज़त व आबरू की हिफ़ाज़त उस मर्द से वाबस्ता हो गयी। अब अपने जज़्बात की तसकीन का मर्कज़ सिर्फ़ उसी को बनाये रखे। शौहर के आगे और पीछे अपना ताल्लुक़ उसी से रखे और शौहर के पीछे उसके माल की हिफ़ाज़त करे। ऐसा न करे कि पीठ पीछे उसका माल लुटा दे और बेजा ख़र्च कर डाले या अपने मायके पहुँचा दे और अपने अज़ीज़ों के ख़र्चों में लगा दे। अगर शौहर के पीछे अपनी जान और उसके माल में उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ कुछ किया तो यह उसकी ख़ियानत होगी जैसा कि एक हदीस में फ़रमायाः

"उसकी पीठ पीछे अपनी जान और उसके माल में ख़ियानत न करे"

(मिश्कात शरीफ़ पेज 283)

एक सवाल और उसका जवाब

अगर कोई यह सवाल करे कि बाज़ मर्द अपनी बीवी को ग़ैर मर्दों के सामने ले जाते हैं बल्कि उनसे मुसाफ़े कराते हैं यहाँ तक कि ग़ैर मर्दों के साथ अपनी बीवियों को नचाते हैं तो उनकी बीवी अगर शौहर के पीछे या आगे ग़ैर मर्द से कोई ताल्लुक़ रखे जो शौहर की मर्ज़ी के मुताबिक़ हो तो वह जायज़ होना चाहिये। और उसमें शौहर की ख़ियानत भी नहीं क्योंकि वह ख़ुद चाहता है कि ग़ैरों से मिले-जुले बल्कि बहुत-से शौहर जो अपनी बीवी को मॉडर्न देखना चाहते हैं वे तो इस पर ख़ुश होते हैं कि उसके दोस्त व मित्र बहुत हों, और यह तरक़्क़ी की निशानी समझी जाती है।

इस सवाल का जवाब यह है कि हदीस में मुसलमान मर्द व औरत का हाल बयान फ़रमाया है। कोई मुसलमान कभी भी बेग़ैरत नहीं हो सकता और हरगिज़ यह बरदाश्त नहीं कर सकता कि उसकी बीवी पर किसी ग़ैर मर्द की नज़र पड़े या हाथ लगे। और न ही मुसलमान औरत यह पसन्द कर सकती

है कि शौहर के अ़लावा किसी के साथ निगाह और दिल का ताल्लुक रखे। जो लोग अपनी बीवी को मौजूदा समाज के मुताबिक़ मॉडर्न देखना चाहते हैं और उसे यार-दोस्तों का खिलौना बनाना पसन्द करते हैं सरासर यहूद व ईसाइयों के तरीके पर ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं। उनमें कितना ईमान है, उनको नबी पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से कितना ताल्लुक है, उन्हें कुरआन व हदीस से कितना ताल्लुक है? इसका पता चलायेंगे तो ये लोग इन सिफ़्तों से ख़ाली निकलेंगे। ऐसे लोग सही मुसलमान तो क्या होते ठीक तरह से इनसान भी नहीं हैं। हदीस में ऐसे बदकार और बेग़ैरत बद-नफ़्स लोगों का ज़िक्र नहीं है, बल्कि मुसलमान इ़ज़्ज़तदार और ग़ैरत वाले मर्द व औरत का ज़िक्र हो रहा है। जो लोग अपनी बीवी के हक़ में बेग़ैरती बरदाश्त करते हैं और उनकी इ़ज़्ज़त व आबरू दाग़दार देखने में काई हर्ज महसूस नहीं करते उनके बारे में नबी करीम का इरशाद है।

दय्यूस के लिए वईद

आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

हदीसः तीन शख़्सों पर अल्लाह तआ़ला ने जन्नत हराम फ़रमा दी हैः (1) जो शराब पीता रहता है। (2) जो माँ-बाप को तकलीफ़ देता है। (3) जो अपने घर वालों मे नापाक काम (ज़िनाकारी और उसकी तरफ़ बुलाने वाली चीज़ों जैसे बेपर्दगी, ग़ैर मर्दों से मेल-जोल वग़ैरह) को बरक़रार रखता है। (अहमद व निसाई)

पहले वाज़ेह किया जा चुका है कि शौहर की फ़रमाँबरदारी शरीअ़त के मुवाफ़िक़ कामों में है, शरीअ़त के ख़िलाफ़ कामों में किसी की इताअ़त और फ़रमाँबरदारी की इजाज़त नहीं है। अगर शौहर बेपर्दा होने के लिए कहे तब भी बेपर्दा होना जायज़ नहीं है।

औरत की एक ख़ास सिफ़त कि ईमान पर शौहर की मदद करे

इस हदीस में अच्छी बीवी की चन्द सिफ़्तें ज़िक्र फ़रमायी हैं। दूसरी हदीस में एक और भी वस्फ़ बताया है जिसकी तशरीह (खुलासा और व्याख्या) यह है कि हज़रात सहाबा किराम ने अ़र्ज़ किया कि अगर हमें मालूम हो जाता कि कौनसा माल बेहतर है जिसे हम हासिल करें तो अच्छा होता। इस पर आँ हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया किः

हदीसः सबसे बेहतर माल ज़िक्र करने वाली ज़बान और शुक्र करने वाला दिल है, और वह मोमिन बीवी है जो शौहर की मदद करे उसके ईमान पर।
(मिश्कात पेज 198)

जिससे काम निकले और ज़रूरत पूरी हो वह माल है। लोग चाँदी-सोना रुपया-पैसा और मकान-दुकान पशु वग़ैरह ही को माल समझते हैं, हालाँकि हदीस शरीफ़ के मुताबिक़ बेहतरीन माल ये चीज़ें हैं जो अभी ऊपर बयान हुईं। इनसे बहुत ज़्यादा नफ़ा हासिल होता है और ख़ूब ज़्यादा बन्दे के काम आती हैं।

ज़िक्र करने वाली ज़बान और शुक्र करने वाला दिल सबसे बड़ी दौलत है, और बीवी भी बड़ी दौलत है जिसकी सिफ़त यह है कि जो ऐसी बीवी हो कि शौहर की मदद करती हो उसके ईमान पर। ईमान पर मदद करने की तशरीह करते हुए मुल्ला अ़ली क़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने मिरक़ात शरह मिश्कात में लिखा हैः

"ईमान पर मदद करने का मतलब यह है कि शौहर की दीनदारी की फ़िक्र करे और मुक़र्ररा वक़्तों में उसे नमाज़ व रोज़ा याद दिलाती हो और दूसरी इबादतों पर आमादा करती हो, और ज़बान से हर किस्म के तमाम गुनाहों से बाज़ रखती हो।"

दर हक़ीक़त हमारे बदलते हुए माहौल और बिगड़े हुए समाज को ऐसी ही औ़रतों की ज़रूरत है जो दीन पर कारबन्द हों और शौहर और औलाद को भी दीनदार बनाने की फ़िक्र रखती हों। लेकिन इसके उलट अब तो समाज का यह हाल बना हुआ है कि कोई मर्द नमाज़-रोज़ा और दीनदारी की तरफ़ मुतवज्जह होता है तो जहाँ दूसरे लोग आड़े आने की कोशिश करते हैं और दीन पर चलने से बाज़ रखते हैं वहाँ बीवी भी दीनदार बनने से रोकती हैं तरह-तरह के फ़िक़रे कसती है। मुल्ला होने का ताना देती हैं। दाढ़ी रखने से मना करती हैं। कुर्ता-पजामा पहने तो बावला बताती हैं और रिश्वत से बचता है तो उलटी-सीधी बातें सुनाती हैं। ऐ अल्लाह! हमें मोमिन बीवी की ज़रूरत है। मर्द व औ़रत सबके अन्दर ईमान के जज़्बात पैदा फ़रमा, आमीन।

बेहतरीन औ़रत की दो ख़ास सिफ़तें

हदीसः (129) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि

रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो औरतें ऊँटों पर सवार हों (अरब की औरतें) उनमें सबसे बेहतर कुरैश की औरतें हैं जो बचपन में औलाद पर सब औरतों से ज़्यादा शफ़क्त रखती हैं और शौहर के माल की सब औरतों से ज़्यादा हिफ़ाज़त करने वाली होती हैं।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 267)

तशरीहः अरब में मर्द व औरत चूँकि सब ही ऊँटों पर सवार होते थे इसलिए अरब औरतों के तज़किरे में हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ऊँटों पर सवार होने का ज़िक्र फ़रमाया। इस हदीस पाक में औरतों की काबिले तारीफ़ दो बातों का तज़किरा फ़रमायाः पहली बच्चों को शफ़क्त के साथ पालना, दूसरी शौहर के माल की हिफ़ाज़त करना। ये दोनों ख़सलतें बहुत अहम और ज़रूरी हैं। अगरचे अपनी औलाद को मुहब्बत और शफ़क्त के साथ परवरिश करना है और औरत की यह तबई और फ़ितरी आदत होती है लेकिन नबी पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इसकी तारीफ़ करके इसे भी दीनदारी में शामिल फ़रमा दिया।

बच्चों पर शफ़क्त करना औरत का ईमानी तकाज़ा है

मोमिन व काफ़िर सब ही अपने बच्चों को शफ़क्त से पालते हैं, लेकिन अगर मुसलमान औरत इसको दीन बना ले और इस अमल में अल्लाह की रिज़ा की नीयत कर ले कि औलाद की परवरिश मेरी दीनी ज़िम्मेदारी है और इनके साथ शफ़क्त का बर्ताव करना मेरा ईमानी तकाज़ा है। मैं इनकी परवरिश करने में ईमानी तकाज़े को पूरा कर रही हूँ तो उसको इस शफ़क्त व प्यार पर सवाब भी मिलेगा। फिर अगर जिस्मानी तरबियत के साथ ईमानी तरबियत भी की और बच्चों को दीन के रास्ते पर डाला और नमाज़-रोज़े का पाबन्द बनाया तो इसका सवाब अलग मिलेगा। उसके बाद यह औलाद दीनी ज़ेहन रखने की वजह से अपनी औलाद को दीन की राह पर लगाएगी तो औलाद की औलाद के दीनदार होने का सवाब भी इस दादी और परदादी और नानी और परनानी को मिलेगा। जिसने अपनी औलाद को दीन के रास्ते पर डाला था। मुहब्बत और शफ़क्त के तकाज़ों की वजह से बच्चों के ख़र्च और ख़ुराक व पौशाक तथा बीमारी और इलाज वग़ैरह का एहतिमाम तो किया ही जाता है और इसमें भी बहुत बड़ा सवाब है लेकिन असल और

सच्ची शफ़कत व मुहब्बत का तकाज़ा यह है कि बच्चों को दीनी ज़िन्दगी पर डाला जाये। और वजह इसकी यह है कि दीनदारी आख़िरत के अ़ज़ाब से बचाने वाली चीज़ है। इसके ज़रिये कब्र और आख़िरत की ग़ैर-फ़ानी (कभी ख़त्म न होने वाली) ज़िन्दगी में आराम मिलता है और खिलाने-पिलाने के ज़रिये जो परवरिश होती है उसका फ़ायदा इस फ़ानी दुनिया तक सीमित है।

खुलासा यह है कि माँ-बाप के ज़िम्मे है कि बच्चों को शफ़्कत से पालें, उनकी जिस्मानी और ईमानी दोनों तरह की तरबियत करें। बहुत-से लोग बच्चों के रोटी-कपड़े का फ़िक्र कर लेते हैं और तरह-तरह से उनकी दिलदारी करते हैं मगर दीनदार बनाने की फ़िक्र नहीं करते, यह बहुत बड़ी भूल है। और वे लोग भी तंबीह के काबिल हैं जो औलाद को दीनदार बनाने के लिए तो डाँटते-डपते रहते हैं मगर पैसा होने के बावजूद कंजूसी के साथ उनकी ज़रूरतों का ख़्याल नहीं रखते हालाँकि संतुलन के साथ औलाद पर माल ख़र्च करना भी सवाब है।

हदीस शरीफ़ में जो ये अलफ़ाज़ हैं कि:

''बचपन में बच्चों पर शफ़्कत करने वाली हैं''

इनमें लफ़्ज़ 'वलद' (यानी औलाद) आ़म है जिसमें तमाम औलाद का ज़िक्र है। अगर लफ़्ज़ 'व-ल-दहा' (यानी अपनी औलाद) होता तो हदीस में शफ़्कत से पालने की फ़ज़ीलत सिर्फ़ औ़रत की अपनी औलाद तक सीमित रह जाती। अपनी औलाद के अ़लावा दूसरे बच्चों पर शफ़्कत करने की फ़ज़ीलत बताने के लिए हदीस में आ़म लफ़्ज़ 'वलद' लाकर इस तरफ़ इशारा फ़रमाया कि जो बच्चा भी औ़रत की परवरिश में आ जाये, अपना हो या दूसरी औ़रत का, उसे शफ़्कत से पालना ख़ैर व ख़ूबी और फ़ज़ीलत व सवाब की बात है।

शौहर की पहली बीवी की औलाद को तकलीफ़ देना ज़ुल्म है

बहुत-सी औ़रतें ऐसे शौहर से निकाह कर लेती हैं जिसकी पहली बीवी से बच्चे होते हैं। उन बच्चों की परवरिश इस नयी बीवी को करनी पड़ती है। मगर बहुत कम औ़रतें ऐसी होती हैं जो शौहर की पहली बीवी की औलाद को प्यार व मुहब्बत से परवरिश करती हों। ऐसे बच्चे अकसर अपनी मायदर के मज़लूम ही होते हैं। बाज़ औ़रतें तो यह करती हैं कि शौहर का माल अपने

उन बच्चों पर दिल खोलकर ख़र्च करती हैं जो पहले शौहर के बच्चे हैं और उन्हें साथ लेकर नये शौहर के यहाँ तशरीफ़ लायी हैं, और इस नये शौहर की औलाद को जो दूसरी बीवी से है ख़र्च और ज़रूरत की चीज़ों की तकलीफ़ में रखती हैं। हालाँकि ये बच्चे उस माल से ख़र्च पूरे करने के ज़्यादा हक़दार हैं क्योंकि यह उनके अपने बाप का माल है। यह नयी औरत जो बच्चे साथ लाई है यह तो उस नये शौहर की औलाद भी नहीं, उन पर ख़ूब धड़ल्ले से ख़र्च हो और उसकी असल औलाद तंग रहे यह सरासर ज़ुल्म है। अपने शौहर के वे बच्चे जो दूसरी औरत से हों (चाहे उसकी उस बीवी से हों जो वफ़ात पा चुकी या तलाक़ ले चुकी या उस बीवी से हों जो उस वक़्त भी उसके निकाह में मौजूद हो) उन बच्चों को मुहब्बत व शफ़क़त से पालना, उनकी ख़ुराक का ख़्याल रखना और उनको दीनदार बनाना बहुत बड़ा सवाब का काम है।

जेठ, देवर और नन्द की औलाद की परवरिश

इसी तरह अगर भाई, बहन या नन्द और जेठ-देवर की औलाद को परवरिश करने का मौक़ा हाथ आ जाये तो सवाब के लिए ग़नीमत जाने और सच्चे दिल से उनकी परवरिश करे और पूरी शफ़क़त के साथ उनकी ज़रूरतों की देखभाल रखे।

बाज़ मर्तबा ये बच्चे यतीम होते हैं। ऐसी सूरत में उनकी शफ़क़त भरी परवरिश और देखभाल का सवाब और ज़्यादा बढ़ जाता है। अगर औरत होने और नफ़्सानियत के उक्त जज़्बात बच्चों की ख़िदमत से रोकें तब भी ईमानी जज़्बात के पेशे-नज़र उनकी ख़िदमत करे।

शौहर के माल की हिफ़ाज़त करना भी ईमानी तक़ाज़ा है

हदीस शरीफ़ में क़ुरैशी औरतों की एक यह तारीफ़ फ़रमायी कि दूसरी औरतों के मुक़ाबले में शौहर के माल की हिफ़ाज़त और देखभाल बहुत ज़्यादा करती हैं। मालूम हुआ कि शौहर के माल की निगरानी और हिफ़ाज़त करना और तरीक़े व सलीक़े से ख़र्च करना, तदबीर और इन्तिज़ाम का लिहाज़ करते हुए घर के ख़र्चों को चलाना भी दीनदारी की बात है। शौहर का काम है कमाना और घर में लाना, वह हर वक़्त घर में नहीं बैठ सकता। ज़रूर ही औरत की सुपुर्दगी में माल छोड़ना पड़ता है। अब यह औरत की दीनदारी

और समझदारी है कि ख़र्चों में शौहर की हमदर्दी करे, अमानतदारी के साथ अपने ऊपर और शौहर की औलाद पर और उसके माँ-बाप पर ख़र्च करे।

लड़कियों के लिए दीनदार अच्छे अख़्लाक़ वाले शौहर को तरजीह दो

हदीसः (130) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब कोई ऐसा शख़्स तुम्हारे पास निकाह का पैग़ाम भेजे जिसकी दीनदारी और अख़्लाक़ तुम्हें पसन्द हों (जिस लड़की के तुम वली हो) उससे (उस लड़की का) निकाह कर दो। अगर तुमने ऐसा न किया तो ज़मीन पर बड़ा फ़ितना और (लम्बा) चौड़ा फ़साद होगा। (मिश्कात शरीफ़ पेज 267)

तशरीहः नस्ल और औलाद के सिलसिले को जारी रखने के लिए निकाह की ज़रूरत है। निकाह के बारे में क़ुरआन हकीम और हदीसों में बहुत-से अहकाम व मसाइल आए हैं। जोड़ा कैसा तलाश किया जाये? इस हदीस में इसके मुताल्लिक़ एक नसीहत फ़रमायी है। और इस नसीहत की ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) करने पर बड़े फ़ितने और बड़े फ़साद की ख़बर दी है। इरशाद फ़रमाया है कि जब कोई शख़्स तुम्हारे पास किसी लड़की से निकाह करने के सिलसिले में पैग़ाम भेजे और वह शख़्स दीनी ज़िन्दगी के एतिबार से ठीक है और उसके अख़्लाक़ भी दुरुस्त हैं तो उससे निकाह कर दो। दीन और अख़्लाक़ का देख लेना काफ़ी है।

मालदारी पर नज़र न करो

माल-दौलत और दुनिया की बड़ाई न देखो। अगर लड़के में दीनदारी नहीं है तो वह लड़की को कभी दीन पर चलने न देगा। बेनमाज़ी न नमाज़ पढ़े न पढ़ने दे। हराम कमायेगा हराम खिलायेगा। दोनों मियाँ-बीवी आख़िरत के अ़ज़ाब में मुब्तला होंगे।

अगर तुमने दीनदार को लड़की न दी, कोठी-बंगले वाले को देखा, माल व दौलत को तरजीह दी तो दुनिया में शायद आराम से गुज़र जाये मगर आख़िरत बरबाद होगी। क्या कोई शख़्स यह गवारा कर सकता है कि उसकी लड़की आग में जले? ऐसा तो किसी को मन्ज़ूर नहीं, तो फिर देखती आँखों अपनी बच्ची को दहकती आग में क्यों डालते हैं। जब यह जानते हैं कि फ़लाँ

घर में जाकर बच्ची फ़राइज़ छोड़ देगी। नमाज़-रोज़ा छोड़ देगी, हराम-हलाल की फ़िक्र उसे नहीं रहेगी, जिसका नतीजा आख़िरत का अ़ज़ाब है। तो दीनदार जोड़ा छोड़कर बेचारी बेज़बान को फ़ासिक़ व बदकार, बद-अ़मल और बेदीन के हवाले क्यों करते हैं? शायद बाज़ हज़रात यह जवाब दें कि आजकल लड़कियाँ अपना जोड़ा ख़ुद तजवीज़ कर लेती हैं और दीनदार को पसन्द नहीं करतीं इसलिए मजबूरन फ़ासिक़ ही से शादी कर देते हैं। मैं उन हज़रात से पूछता हूँ कि लड़की को यह जुर्रत कैसे हुई कि अपना जोड़ा ख़ुद तलाश करे और दीनदार से घबराये? फ़ासिक़ व बदकार को नेक मर्द पर तरजीह दे। बात यह है कि आपने अपने घर का माहौल ख़ुद ही ख़राब कर रखा है। बच्चों को दीन पर नहीं डालते, दीनी किताबें नहीं पढ़ाते, जो बच्चा (लड़की हो या लड़का) होश संभालता है, स्कूल की गोद में चला जाता है। स्कूल से फ़ारिग़ होकर कालिज की राह लेता है। बेदीनी में जो कमी स्कूल मे रह गयी थी वह वहाँ पूरी हो जाती है।

बेशर्मी के असबाब

लड़कों और लड़कियों की मख़्लूत (मिली-जुली, एक साथ) तालीम होना और नाविलों और अफ़सानों का पढ़ना, टी. वी. देखना, सिनेमा जाना, बग़ैर मेहरमों के घरों से बाहर घूमना, पार्कों में तफ़रीह करना, यह सब ऐसी बातें हैं जो लड़कियों को बेशर्म बना रही हैं और दीन से दूर कर रही हैं और दीनदारी से बेज़ार कर रही हैं। अल्लाह समझ दे।

दीनदार औ़रत से निकाह करो, माल, ख़ूबसूरती और दुनियावी हैसियत को न देखो

हदीसः (131) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि सरवरे आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि औ़रत से चार चीज़ें देखकर निकाह किया जाता है:

1. उसके माल की वजह से।
2. उसकी हैसियत की वजह से।
3. उसकी ख़ूबसूरती की वजह से।
4. उसकी दीनदारी की वजह से।

पस ऐ मुख़ातब! तू दीनदार औ़रत को अपने निकाह में लाकर कामयाब

हो जा, तेरा भला हो। (मिश्कात शरीफ़ पेज 267)

नेक औरत दुनिया की बेहतरीन चीज़ है

हदीसः हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु रिवायत करते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि पूरी दुनिया नफ़ा हासिल करने की चीज़ है, और दुनिया की चीज़ों में सबसे बेहतरीन चीज़ जिससे नफ़ा हासिल किया जाये नेक औरत है।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 267)

तशरीहः देखने में सब इनसान गोश्त-पोस्त के बने हुए हैं। उमूमन सबके जिस्मानी अंग और हाथ-पैर बराबर हैं। अलबत्ता ईमान, अच्छे अख़्लाक़ और नेक आमाल की वजह से एक को दूसरे पर बड़ाई हासिल है। काला-गोरा होना, किसी ख़ास मुल्क का रहने वाला होना, मोटा-ताज़ा होना, यह कोई फ़ज़ीलत और बड़ाई की बात नहीं। अगर आदमी हुस्न व ख़ूबसूरती में बढ़कर हो, रंग-रूप के एतिबार से बेहतर हो, लेकिन उसमें किसी की हमदर्दी न हो तो उसकी ख़ूबसूरती उसे इनसानियत के शर्फ़ से सम्मानित नहीं कर सकती। इसी तरह किसी शख़्स को अगर दुनियावी हैसियत से कोई बड़ाई हासिल है, ओहदेदार है, या किसी पद पर फ़ाइज़ है मगर अख़्लाक़ के एतिबार से फाड़ खाने वाला भेड़िया या लूट लेने वाला गुण्डा है तो उसे ओहदे या पद की वजह से कोई पसन्दीदा इनसान नहीं कह सकता।

इसी तरह अगर किसी के पास दौलत बहुत है मगर बद् अख़्लाक़ है, लालची और कंजूस है तो सिर्फ़ माल की वजह से उसे कोई बरतरी और इम्तियाज़ी शान हासिल नहीं। हाँ! अगर कोई शख़्स (मर्द या औरत) दीनदार है। यानी नबी पाक हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का पैरोकार है। आपके अख़्लाक़ की पैरवी करने वाला है तो वह बा-कमाल इनसान है। वह इनसानियत के सम्मान से मालामाल है। उसका नफ़्स संवरा हुआ है। वह ताल्लुक़ व उलफ़त का मुजस्समा और मुहब्बत और भाईचारे का पुतला है। दूसरों की ख़ातिर तकलीफ़ बरदाश्त कर सकता है। यार-दोस्तों से निबाह करने का आ़दी है। उससे जो क़रीब होगा ख़ुश रहेगा। उसकी उलफ़त व मुहब्बत सफ़र के साथियों को और घर के पड़ोसियों को गरवीदा कर लेगी। अगर ऐसे शख़्स से किसी औरत का निकाह हो गया तो वह औरत उसके

अच्छे अख़्लाक़ और नेक आमाल की वजह से ज़िन्दगी भर खुश रहेगी।

अगर इसका ख़्याल न रखा गया तो दुनियावी ज़िन्दगी सरापा मुसीबत बन जायेगी। इसी लिए तो नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब कोई ऐसा शख़्स तुम्हारे पास निकाह का पैग़ाम भेजे जिसके अख़्लाक़ और दीनदारी से तुम खुश हो तो उसका पैग़ाम रद्द न करो, बल्कि जिस औ़रत से निकाह करने का पैग़ाम दिया है उससे निकाह कर दो। अगर तुम ऐसा न करोगे तो ज़मीन मे बड़ा फ़ितना व फ़साद होगा।

अगर पैग़ाम देने वाले मर्द में दीनदारी और अच्छे अख़्लाक़ न देखे बल्कि सिर्फ़ माल या हुस्न व ख़ूबसूरती या दुनियावी ओ़हदा व रुतबा देख लिया, और इन चीज़ों को सामने रखकर किसी औ़रत का निकाह कर दिया तो उस औ़रत की दीनदारी तो तबाह हो ही जायेगी जिसकी वजह से आख़िरत बरबाद होगी मगर उसकी दुनिया भी आराम से न गुज़रेगी।

जो खुदा तआ़ला को जानता है चूँकि वह शरीअ़त के अहकाम को समझता है इसलिए वह मख़्लूक़ के हुक़ूक़ भी अदा करेगा और तकलीफ़ देने और परेशान करने से बाज़ रहेगा। जो खुदा का नहीं वह किसी का नहीं। जिसने अपने ख़ालिक़ व मालिक के अहकाम की परवाह न की वह अपनी मातहत मख़्लूक़ के हुक़ूक़ अदा करने और आराम पहुँचाने के लिए क्योंकर फ़िक्रमन्द हो सकता है।

आजकल दीन को नहीं देखते, दूसरी चीज़ें देखकर लड़की का निकाह कर देते हैं। कोई दुनियावी तालीम देखकर और कोई माल देखकर रिश्ता कर देता है, और कोई दुनियावी ओ़हदा व नौकरी देखकर लड़की दे देता है। फिर उसके नतीजे भुगते रहते हैं। यह लोग मसाइल न जानने की वजह से तीन तलाक़ देकर भी औ़रत को रखे रहते हैं। और इनमें ऐसे लोग भी होते हैं जो साल दो साल ताल्लुक़ात ठीक रखकर औ़रत को अधर में छोड़ देते हैं, न उसे तलाक़ देते हैं न ख़र्चा पानी देते हैं। और बाज़ बद् अख़्लाक़ लोग बेजा मारपीट करके औ़रत को ढेर कर देते हैं। अब लड़की के सरपरस्त (अभिभावक) मुफ़्ती के पास आते हैं कि बड़े ज़ालिम से पाला पड़ा, वह तो ऐसा है वैसा है, कोई छुटकारे का रास्ता निकालिये। हालाँकि जब उससे निकाह किया था वह उस वक़्त भी ऐसा ही था। जो लोग खुदा से डरने वाले और दीनदार हैं उनकी दाढ़ियों से डरते हैं। अगर उनको लड़की दे देंगे तो गोया

लड़की दाढ़ी के दो तौले बोझ में दब जायेगी, और गोया लड़की के माँ-बाप समाज में बेइज़्ज़त हो जायेंगे। इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन।

जब दीनदार ना-पसन्द है तो लाज़िमी तौर पर बेदीनों और टेड़ियों तथा हिप्पियों को लड़कियाँ देते हैं। फिर ये लोग ऊपर लिखे गये तरीक़ों से तकलीफ़ पहुँचाते हैं। अफ़सोस है कि दीनदार लड़की भी बेदीन के पल्ले बाँध देते हैं जो इस बेचारी को न नामज़ पढ़ने दे न रोज़ा रखने दे। बेपर्दा होने पर मजबूर करता है और सिनेमा साथ लेकर जाने के लिए ज़िद करता है। यह वही फ़ितना-फ़साद है जिसका हदीस शरीफ़ में ज़िक्र फ़रमाया है कि अगर ऐसे शख़्स से लड़की का निकाह न करोगे जिसकी दीनदारी और अच्छे अख़्लाक़ से इतमीनान हो तो ज़मीन में बड़ा फ़ितना और (लम्बा) चौड़ा फसाद होगा।

अलबत्ता बाज़ ज़ाहिरी दीनदारों से भी तकलीफ़ पहुँच जाती है, मगर ये वे लोग होते हैं जो हक़ीक़ी दीनदार नहीं होते। बातिन की इस्लाह न होने की वजह से मुसीबत बनते हैं। दीनदार वह है जिसका ज़ाहिर व बातिन दोनों अच्छे अख़्लाक़ और नेक आमाल से सजे हुए हों।

जिस तरह से शौहर दीनदार ख़ुदा-परस्त तलाश करने की ज़रूरत है, उसी तरह यह भी ज़रूरी है कि औरत दीनदार तलाश की जाये, जो नेक आमाल की आदी हो। ऊपर ज़िक्र हुई दोनों हदीसों में इसी मज़मून की तरफ़ इशारा किया गया है। पहली हदीस में फ़रमाया कि औरत की दीनदारी देखकर निकाह कर लो। उसका माल व ख़ूबसूरती और मर्तबा व हैसियत न देखो। अगर औरत दीनदार न होगी तो न शौहर के हुक़ूक़ अदा करेगी न औलाद को दीनदार बनायेगी। शौहर का माल बेजा उड़ायेगी। नामेहरमों के सामने बेपर्दा होकर आयेगी और उसे तरह-तरह की तकलीफ़ें पहुँचायेगी। इसी लिए तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि:

"दुनिया में नफ़ा हासिल करने की जो चीज़े हैं, उनमें सबसे बेहतर नेक औरत है"

बहुत-से लोग ख़ूबसूरत औरत पर रीझ जाते हैं। उसकी सफ़ेद खाल तो देख लेते हैं लेकिन सियाह दिल नहीं देखते। वह है तो ख़ूबसूरत लेकिन न रोज़ा रखती है न नमाज़ पढ़ती है, दिनभर ग़ीबतों में मुब्तला और सास-नन्दों से लड़ने में मशग़ूल रहती है। शौहर की पूरी आमदनी पर क़ब्ज़ा कर लेती है। अगर शौहर वालिदा को कोई पैसा दे दे तो नाराज़, वालिद की ख़िदमत करे

तो गुस्सा, बहनों को कुछ दे दे तो एक अ़ज़ाब। ख़ूबसूरती देखकर शादी करने से ऐसी आफ़तें आ जाती हैं।

दीनदार औ़रत का शौहर अगर अपने माँ-बाप पर ख़र्च न भी करेगा तब भी वह सिला-रहमी की तरग़ीब देगी और नेकी पर आमादा करेगी। सबके हुक़ूक़ ख़ुद भी पहचानेगी और शौहर को भी हक़ पहचानने पर उभारेगी।

बस आजकल शौहर हिरोईन बीवी से और औ़रतें फ़िल्मकार और मौसीक़ार शौहर से शादी करने को कमाल समझती हैं। कहाँ की दीनदारी और कैसी शराफ़त, सबको ताक़ पर रख चुके हैं। दीनदारी, ख़ुदा-परस्ती ऐब बन चुकी है, और इस सब के बावजूद नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दामन से भी वाबस्तगी के दावेदार हैं। क्या यह हिमाक़त और जहालत नहीं है।

हम पहले लिख चुके हैं कि आजकल पढ़ी-लिखी लड़कियाँ भी समाज में मुसीबत बन गयी हैं। लड़कियों को मैट्रिक ही नहीं बल्कि बी. ए., एम. ए. और पी. एच. डी. तक कराते हैं, अब उनके लिए जोड़ा ढूंढते हैं, तो ऐसा शख़्स चाहते हैं जो तालीम में उनके बराबर या उनसे ज़्यादा हो। ऐसा शख़्स नहीं मिलता, या मिलता है तो उसकी अपनी शर्तें लड़की वाले पूरी नहीं कर पाते, आख़िरकार तीस-तीस साल बल्कि इससे भी ज़्यादा उम्र तक की लड़कियाँ यूँ ही बैठी रहती हैं। जिस औ़रत का कालिज में आना-जाना रहा, यूनिवर्सिटी में आयी गयी, उसके दीनदार और पर्देदार होने का सवाल ही पैदा नहीं होता। दीनदार मर्द उसे पसन्द नहीं करते और वह दीनदार को पसन्द नहीं करती और मतलब का जोड़ा मिलता नहीं लिहाज़ा या तो बैठी रह जाती हैं या बेदीन के पल्ले पड़ती हैं।

फिर दोनों से मिलकर पैदा होने वाले बच्चों को ख़ालिस यूरोपीयन बना देते हैं। ग़रज़ कि फ़ितने ही फ़ितने हैं। अल्लाह तआ़ला हमें हर तरह के फ़ितनों से बचाए आमीन।

दूसरे की मंगनी पर मंगनी न करो

हदीसः (132) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि कोई शख़्स अपने भाई की मंगनी पर मंगनी न करे। अपने से पहले पैग़ाम भेजने वाला या तो उस जगह

निकाह कर ले या उस जगह निकाह की बातचीत छोड़ दे। (अगर उसकी बात कट जाये तो अपना पैग़ाम दे सकते हैं)। (मिश्कात शरीफ़ पेज 271)

तशरीहः इस्लाम ने एक-दूसरे को जिस्मानी या रूहानी तकलीफ़ देने को हराम क़रार दिया है और मुसलमानों के आपस के हुक़ूक़ बताये हैं। उनमें यह भी इरशाद फ़रमाया है किः

"मुसलमान मुसलमान की हमदर्दी और ख़ैरख़्वाही करे सामने भी और पीठ पीछे भी"

इसका तक़ाज़ा यह है कि जब किसी जगह किसी मुसलमान मर्द या औरत के निकाह का कहीं पैग़ाम गया हो तो दूसरा मुसलमान उसके हक़ में उस जगह को बिगाड़ न दे। अगर किसी औरत से निकाह करने के लिए किसी मर्द का पैग़ाम पहुँचा हुआ है और बातचीत चल रही है तो दूसरा कोई शख़्स मर्द या औरत ऐसी तरकीबें न करे कि उनका होता हुआ रिश्ता कट जाये। उन तदबीरों में जहाँ यह बात है कि लड़के या लड़की में कोई ऐब बता दिया जाये वहाँ यह सूरत भी रिश्ता काटने के लिए इख़्तियार कर लेते हैं कि कोई दूसरा रिश्ता तजवीज़ करके किसी फ़रीक़ के सामने पेश कर देते हैं। और तरकीब यह करते हैं कि अपना या अपने किसी रिश्तेदार का पैग़ाम भेज देते हैं। लड़के या लड़की का वली सोच में पड़ जाता है। और बाज़ मर्तबा पहले पैग़ाम भेजने वाले से इनकार कर देता है।

इस बारे में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने नसीहत फ़रमायी कि जब किसी के निकाह की बात चल रही हो तो उस जगह अपना पैग़ाम न भेजो बल्कि इन्तिज़ार करते रहो और देखो कि बात किस तरह ख़त्म होती है। अगर आपस में उनका निकाह हो जाये तब तो दूसरे पैग़ाम की गुंजाइश ही ख़त्म हो गयी। और अगर बात चलते-चलते कट जाये और दोनों फ़रीक़ों में से एक फ़रीक़ क़तई तौर पर इनकार में जवाब देकर बात ख़त्म कर दे तो अब तुम अपना पैग़ाम दे सकते हो।

शौहर की बात न मानने पर फ़रिश्तों की लानत

हदीसः (133) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब शौहर अपनी बीवी को अपने बिस्तर पर बुलाये और वह (शरई उज़्र के बग़ैर) उसके

बिस्तर पर जाने से इनकार कर दे जिसकी वजह से शौहर नाराज़गी में रात गुज़ारे तो सुबह होने तक फ़रिश्ते उस औरत पर लानत करते रहेंगे।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 280)

तशरीहः इस हदीस में जिस अहम बात की तरफ़ इशारा किया है उसकी तशरीह की बिल्कुल हाजत नहीं है। अक़्लमन्दों को इशारा काफ़ी होता है। जो औरतें इसकी ख़िलाफ़वर्ज़ी करती हैं वे नसीहत हासिल करें। इस हदीस पर अमल न करने की वजह से औरतें अपने शौहरों को दूसरी बीवी करने पर आमादा करती हैं या वह अपनी पाकदामनी खो बैठता है और पाकदामन नहीं रहता। मियाँ-बीवी का जो रिश्ता है वह अजीब रिश्ता है। आपस में एक दूसरे से उनकी जो ख़्वाहिश पूरी होती है वह दूसरे किसी फ़र्द से पूरी नहीं हो सकती, लिहाज़ा एक दूसरे की दिलदारी की बहुत ज़्यादा ज़रूरत होती है। आपस में एक दूसरे के इनसानी तक़ाज़ों को पूरा करने का ख़्याल न करें तो एक दूसरे पर बड़ी ज़्यादती होगी। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इनसान के इनसानी तक़ाज़े को पहचानते थे, आपने इन तक़ाज़ों को जानकर और समझकर हिदायात दी हैं। इन हिदायात की ख़िलाफ़वर्ज़ी करने से मनमुटाव पैदा होता है और हालात ख़राब हो जाते हैं। अल्लाह तआला हर मुसलमान को नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की नसीहतों पर अमल करने की तौफ़ीक़ दे।

यह जो फ़रमाया कि जब शौहर अपने बिस्तर पर बुलाये तो इनकार न करे, उज़्र शरई न हो तो बात मान ले। यह बिस्तर पर बुलाना और रात का ज़िक्र फ़रमाना बतौर मिसाल है वरना इसमें रात-दिन की कोई क़ैद नहीं है। मक़सद यह है कि ज़रूरत के वक़्त ज़रूरत वाले की ज़रूरत पूरी हो जाये। इसी लिए एक हदीस में फ़रमाया है किः

"शौहर जब अपनी बीवी को अपनी ज़रूरत के लिए बुलाये तो आ जाये अगरचे तन्दूर पर (खाना गर्म कर रही) हो" (तिर्मिज़ी)

शौहर को सताने वाली के लिए हूरों की बद्-दुआ

हदीसः (134) हज़रत मुआज़ रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब कोई औरत अपने (मुसलमान) शौहर को दुनिया में तकलीफ़ देती है तो हूरों में से जो

उसकी बीवी है वह कहती है (अरी दुनिया वाली औरत!) इसे तकलीफ़ न दे, खुदा तेरा बुरा करे। यह तो तेरे पास चन्द रोज़ के लिए ठहरा हुआ है, जल्द ही तुझसे जुदा होकर हमारे पास पहुँचेगा। (मिश्कात शरीफ़ पेज 181)

तशरीहः मोमिन बन्दों के लिए अल्लाह पाक ने जन्नत बनायी है। जन्नत में दुनिया वाली मोमिन औरतें भी उनको मिलेंगी और इनसानों से अलग एक मख़्लूक़ और है जो अल्लाह तआला ने जन्नत में पैदा फ़रमायी है जिसे कुरआन मजीद में और हदीस शरीफ़ में 'हूरुन् औ़न' फ़रमाया गया है। ये हूरें भी मोमिन बन्दों की बीवियाँ बनेंगी।

• 'हूर' हूरा का बहुवचन है। 'हूरा' के मायने हैं सफ़ेद रंग वाली औ़रत, और 'औ़न' बहुवचन है 'ऐना' का जिसके मायने हैं बड़ी आँख वाली औ़रत। ये औ़रतें हुस्न व ख़ूबसूरती में बहुत ज़्यादा बढ़-चढ़कर होंगी मगर दुनिया वाली जो औ़रतें जन्नत में दाख़िल होंगी वे उनसे ज़्यादा हसीन व जमील होंगी। हूरें और जन्नती औ़रतें मर्दों को मिलेंगी, जन्नती मर्द भी बहुत ज़्यादा हसीन व ख़ूबसूरत होंगे। आपस में इन मर्दों और इन दोनों किस्म की बीवियों के दरमियान बेइन्तिहा मुहब्बत होगी, किसी के दिल पर किसी की तरफ़ से ज़रा-सा मैल भी न आयेगा। ये जन्नती हूरें मुन्तज़िर हैं कि अपने प्यारे शौहरों से मिलें जो उनके लिए मुकर्रर हैं, लेकिन जब तक यह शौहर दुनिया में है उस वक़्त तक उनसे मुलाकात नहीं हो सकती।

मरने के बाद कब्र की ज़िन्दगी गुज़ार कर जब मैदाने हश्र से गुज़र कर जन्नत में जायेंगे तो ये हूरें उन्हें मिल जायेंगी। इन हूरों को अपने शौहरों से अब भी ऐसा ताल्लुक़ है कि दुनिया वाली बीवी जब जन्नती मर्द को सताती है तो जन्नत में मिलने वाली हूरें कहती हैं कि इसे न सता, यह तेरे पास चन्द दिन के लिए है, जल्द ही तुझे छोड़कर हमारे पास आ जायेगा। इसकी कद्र हम करेंगे। हमारे साथ हमेशा रहने वाले शौहर को तू तकलीफ़ न दे। हूरों की इस बात की आवाज़ दुनिया की औ़रतों के कान में तो नहीं आती, मगर खुदा तआला के सच्चे नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनकी यह बात उम्मत की औ़रतों तक पहुँचा दी है। जो लोग नेक अ़मल करते हैं, हराम काम से बचते हैं, रोज़ा-नमाज़ के पाबन्द होते हैं ऐसे लोगों को बीवियाँ ज़्यादा सताती हैं। उनके सताने और तकलीफ़ देने से मुतास्सिर होकर जन्नती हूरें उनको बद्-दुआ देती हैं कि तुम्हारा बुरा हो, इस चन्द रोज़ के दुनियावी मुसाफ़िर को

न सताओ, यह तुमसे जुदा होकर हमारे पास आने वाला है। औरतों पर लाज़िम है कि 'हूरुन् ओ़ीन' की बद्-दुआ़ से बचें।

जिस औ़रत से उसका शौहर राज़ी हो वह जन्नती है

हदीसः (135) हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से रिवायत है कि हज़रत रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो औ़रत इस हाल में वफ़ात पायेगी कि उसका शौहर उससे राज़ी था तो वह जन्नत में दाख़िल हो गयी। (मिश्कात शरीफ़)

शौहर का कितना बड़ा हक़ है

हदीसः (136) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु रिवायत फ़रमाते हैं कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अगर मैं (अल्लाह के अ़लावा) किसी को सज्दा करने का हुक्म देता तो औ़रत को हुक्म देता कि अपने शौहर को सज्दा करे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 181)

तशरीहः अल्लाह तआ़ला ने जैसे माँ-बाप का बहुत बड़ा रुतबा रखा है और उनका हुक्म मानने का हुक्म दिया है, इसी तरह शौहरों का भी बड़ा रुतबा रखा है। औ़रत घर का काम संभालती है और मर्द मेहनत व कोशिश करके घर के ख़र्चे पूरे करता है। घर के ख़र्चों में बीवी के ख़र्चे भी शामिल हैं। बीवी के जो ज़रूरी और शरई हुक़ूक़ हैं उनसे बढ़कर औ़रत के तक़ाज़ों के मुताबिक़ मर्द उस पर माल ख़र्च करता है। मर्दों को क़ुरआन पाक में 'क़व्वाम' (निगरानी करने वाला, सरदार) बताया है, और यह भी फ़रमाया है कि: "मर्दों को औ़रतों पर बरतरी है"

क़ुरआन की इस बात को बहुत-सी क़ौमें नहीं मानती हैं। उन क़ौमों का यह तरीक़ा फ़ितरत के ख़िलाफ़ है। इसकी ख़राबियाँ उन लोगों के सामने आती रहती हैं। मर्द सरदार है, घर का निगराँ है, मेहनत करके पैसा लाता है, औ़रत को उसका शुक्रगुज़ार और उसका फ़रमाँबरदार होना लाज़िम है, बशर्तेकि उसका कोई हुक्म या मश्विरा शरीअ़त के ख़िलाफ़ न हो। हदीस में इसी की तरफ़ रहबरी फ़रमायी है।

औ़रत शरीअ़त के मुताबिक़ चले। इस्लाम के फ़राइज़ अदा करते हुए और गुनाहों से बचते हुए शौहर की दिलदारी का ख़ास ख़्याल रखे और उसे आराम पहुँचाए। तकलीफ़ न दे और उसकी नाफ़रमानी न करे। अगर इसी

हाल में मर गयी तो जन्नत में दाख़िल होगी क्योंकि जब अल्लाह तआ़ला के हुक़ूक़ अदा कर दे और बन्दों के हुक़ूक़ भी पूरे कर दे (जिनमें शौहर के हुक़ूक़ भी हैं) तो अब जन्नत से रोकने वाली कोई चीज़ नहीं रही। हदीस में शौहर के हुक़ूक़ की अहमियत ज़ाहिर करते हुए इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह के अ़लावा किसी के लिए सज्दा करना हराम और शिर्क है। अगर मैं अल्लाह के अ़लावा किसी के लिए सज्दा करने का हुक्म करता तो औ़रत को हुक्म देता कि शौहर को सज्दा करे। इससे शौहर के हुक़ूक़ का ख़ुसूसी ध्यान रखने की ताकीद मक़सूद है।

हदीस नम्बर 136 से यह भी मालूम हुआ कि अल्लाह के ग़ैर को सज्दा करना हराम है। बहुत-सी औ़रतें पीरों फ़क़ीरों और मज़ारों को सज्दा करती हैं और क़ब्रों और ताज़ियों से औलाद और मुरादें माँगती हैं, यह सख़्त हराम और शिर्क है। अल्लाह तआ़ला सब को कुफ़्र और शिर्क से बचाये। आमीन

कौन-कौनसे रिश्ते हराम हैं

हदीसः (137) हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि उन्होंने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! क्या आपको अपने चचा हमज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की लड़की से निकाह करने की रग़बत है? (रग़बत हो तो बात चलायी जाये) क्योंकि क़ुरैश की औ़रतों में वह सबसे ज़्यादा हसीन लड़की है। आपने फ़रमाया कि (मेरा निकाह उससे कैसे हो सकता है? वह मेरे दूध-शरीक भाई की लड़की है)। क्या तुम्हें मालूम नहीं है कि हमज़ा मेरे दूध-शरीक भाई हैं। और अल्लाह तआ़ला ने नसब की वजह से जो रिश्ते हराम क़रार दिये हैं वे 'रज़ाअ़त' (दूध-शरीक होने) की वजह से भी हराम क़रार दिये हैं। (हमज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु अगरचे चचा हैं और चचा की लड़की से निकाह दुरुस्त है लेकिन चचा होते हुए चूँकि वह दूध-शरीक भाई हैं इसलिए उनकी लड़की से निकाह नहीं हो सकता)।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 273)

हदीसः (138) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने अपना वाक़िआ़ बयान फ़रमाया कि मेरे रज़ाई (यानी दूध-शरीक) चचा (अफ़्लह नामी) ने पर्दे के अहकाम नाज़िल होने के बाद मेरे पास अन्दर आने की इजाज़त चाही

(हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने अबुल क़ईस की बीवी का दूध पिया था जिसकी वजह से अबुल क़ईस उनके दूध के रिश्ते से वालिद हो गये, और उनके भाई अफ़्लह उसी रिश्ते से चचा हो गये)। जब उन्होंने इजाज़त चाही तो मैंने अन्दर आने की इजाज़त न दी और कहा कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से दरियाफ़्त किये बग़ैर इजाज़त न दूँगी। जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ज़नान-ख़ाने में तशरीफ़ लाये तो मैंने दरियाफ़्त किया। आपने फ़रमाया (हाँ!) वह तुम्हारा दूध के रिश्ते का चचा है उसे अन्दर आने की इजाज़त दे दो। मैंने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! मुझे तो औरत ने दूध पिलाया है (उसकी बहन ख़ाला बन जाये तो समझ में आता है) मुझे मर्द ने दूध नहीं पिलाया (उस औरत के शौहर ने) मुझे दूध पिलाया होता तो उसका भाई मेरा चचा बन जाता)। आपने फ़रमाया बेशक वह तुम्हारा चचा है, वह तुम्हारे पास अन्दर घर में आ सकता है। (क्योंकि जिस मर्द की वजह से दूध उतरा वह बाप हो गया और उसका भाई दूध पीने वाले बच्चे का चचा हो गया)। (मिश्कात शरीफ़ पेज 273)

हदीसः (139) हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि किसी औरत का निकाह ऐसे मर्द से न किया जाये जिसके निकाह में पहले से उस औरत की फूफी हो। और इससे भी मना फ़रमाया कि किसी औरत का निकाह ऐसे मर्द से किया जाये जिसके निकाह में पहले से उस औरत के भाई की लड़की हो। (इसी तरह) इससे भी मना फ़रमाया कि किसी औरत का निकाह ऐसे मर्द से किया जाये जिसके निकाह में पहले से उस औरत की ख़ाला हो। और इससे भी मना फ़रमाया कि ऐसे मर्द से किसी औरत का निकाह किया जाये जिसके निकाह में पहले से उस औरत की बहन की लड़की हो।

किसी मर्द के निकाह में बड़ी (यानी फूफी या ख़ाला) के होते हुए छोटी (यानी भतीजी और भानजी) का निकाह उस मर्द से न किया जाये। किसी मर्द के निकाह मे छोटी (यानी भतीजी या भानजी) के होते हुए बड़ी (यानी फूफी और ख़ाला) का निकाह उस मर्द से न किया जाये। (मिश्कात पेज 274)

तशरीहः शरीअ़ते पाक ने निकाह के बारे में बहुत-से अहकाम बताये हैं। उन अहकाम में ये तफ़सीलात भी हैं कि कौनसी औरत किस मर्द के लिए हलाल है और कौनसा मर्द किस औरत के लिए हलाल है। हर मुसलमान को

इन तफ़सीलात का जानना ज़रूरी है। कुरआन मजीद में सूरः निसा के चौथे रुकूअ़ में ये अहकाम ज़िक्र किए गये हैं और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने भी इन अहकामात की तशरीह की है और तफ़सीलात बतायी हैं।

शरीअ़त ने इनसान को हलाल व हराम का पाबन्द बनाया है। जैसे खाने-पीने में हर चीज़ की इजाज़त नहीं दी जाती ऐसे ही शादी करने में आज़ादी नहीं बल्कि इसके बारे में हलाल व हराम की तफ़सीलात से आगाह फ़रमाया और क़वानीन का पाबन्द बनाया। बाज़ लोगों को ये क़वानीन नागवार मालूम होते हैं। लेकिन वे यह नहीं समझते कि रोक-टोक शराफ़त की दलील है। जानवर ग़ैर-मुकल्लफ़ हैं, बेअ़क़्ल हैं, जहाँ चाहते हैं मुँह मारते हैं, जैसे चाहा ख़्वाहिश पूरी कर लेते हैं। अगर इनसान को भी खुली छूट मिल जाये तो वह इनसान कहाँ रहेगा? वह तो जानवर बल्कि जानवर से भी बदतर हो जायेगा।

कौनसी औरत किसके लिए हराम है इसके तफ़सीली क़वानीन की बुनियाद छह चीज़ों पर है:

(1) नसबी रिश्ता।

(2) दूध का रिश्ता।

(3) ससुराली रिश्ता। (इस रिश्ते की वजह से जो हुर्मत (हराम होना) होती है उसे 'हुर्मते मुसाहरत' कहते हैं)।

(4) किसी औरत का दूसरे मर्द के निकाह या उसकी इद्दत में मशग़ूल होना।

(5) किसी मर्द के निकाह में पहले से किसी औरत का होना।

(6) मुक़र्ररा तायदाद से ज़्यादा निकाह करना।

इन बातों की तफ़सीलात किसी क़द्र ज़िक्र की जाती हैं।

(1) नसबी रिश्तेदारी के रिश्ते

अपनी औलाद और औलाद की औलाद से, और माँ-बाप, दादा-दादी या नाना-नानी से निकाह करना दुरुस्त नहीं। और बहन भाई का भी आपस में निकाह नहीं हो सकता चाहे सगे बहन भाई हों चाहे बाप-शरीक हों चाहे माँ-शरीक। चचा भतीजी का और मामूँ भानजी का भी आपस में निकाह नहीं हो सकता, तथा फूफी भतीजे और ख़ाला भानजे का भी आपस में निकाह

दुरुस्त नहीं।

(2) दूध के रिश्ते

दूध के रिश्ते की वजह से भी आपस में निकाह हराम हो जाता है। ख़ालाज़ाद भाई से और चचा और फूफी के लड़के से निकाह दुरुस्त है। लेकिन अगर किसी लड़के और लड़की ने दूध पीने के ज़माने में (यानी दो साल की उम्र के अन्दर) किसी और औरत का दूध पी लिया तो ये दोनों आपस में दूध-शरीक बहन भाई होंगे। अब आपस में इनका निकाह नहीं हो सकता। जिस लड़के ने किसी औरत का दूध पिया है वह उस औरत की किसी भी लड़की से निकाह नहीं कर सकता अगरचे एक साथ दूध न पिया हो। इसी तरह दूध पीने वाला उस औरत की बहन से निकाह नहीं कर सकता जिसका दूध पिया हो, क्योंकि वह उसकी ख़ाला हो गयी। खुलासा यह है कि जो निकाह नसबी रिश्ते की वजह से हराम है दूध के रिश्ते से भी हराम हो जाते हैं, इससे चन्द सूरतें अलग हैं जो दीन के आलिमों की किताबों में लिखी गयी हैं।

हदीस नम्बर 137 में यही मज़मून बताया गया है कि जिस तरह नसबी ताल्लुक़ के रिश्ते से नसबी माँ बेटा और बहन भाई और ख़ाला भानजा और मामूँ भानजी और चचा भतीजी और फूफी और भतीजा आपस में मेहरम क़रार दिये गये हैं (कि एक-दूसरे के साथ सफ़र में जा सकते हैं) इसी तरह दूध के रिश्ते की वजह से दूध पिलाने वाली औरत और उसकी औलाद उसकी बहन और उसका भाई और उसके माँ-बाप दूध पीने वाले बच्चे के लिए (लड़का हो या लड़की) मेहरम बन जाते हैं यहाँ तक कि जिसकी बीवी का दूध पिया है उसका भाई दूध पीने वाले बच्चे का चचा होकर मेहरम बन जाता है।

मेहरम वह है जिससे कभी भी निकाह दुरुस्त नहीं है। मेहरम बन जाने की वजह से एक साथ सफ़र में जाना और बिना पर्दे आमने सामने आ जाना जायज़ हो जाता है।

जिस मेहरम से इतमीनान न हो उसके साथ सफ़र और तन्हाई दुरुस्त नहीं

हाँ! अगर कोई मेहरम बदकार और बुरे किरदार वाला है उसकी जानिब

से इतमीनान नहीं है बल्कि नफ़्स की शरारत का अन्देशा है (जैसा कि आजकल वाक़िआत होते रहते हैं) तो ऐसे मेहरम से एहतियात लाज़िम है। उसके साथ सफ़र करना या तन्हाई में रहना जायज़ नहीं। और 48 मील का सफ़र करना बिना मेहरम के दुरुस्त नहीं है चाहे सफ़र दीनी ज़रूरत से हो (जैसे हज का सफ़र) या दुनियावी ज़रूरत से (जैसा कि मायके जाना या ससुराल पहुँचना)। यह मुमानअ़त (मनाही) हर हाल में है पैदल सफ़र करे या हवाई जहाज़ से या रेल से या मोटर कार से। जिस मेहरम के साथ सफ़र में जाये उसका नेक और अच्छा आदमी होना ज़रूरी है, जिससे इतमीनान हो कि कोई ख़राब अ़मल न करेगा और ख़राब ख़्याल से न छुएगा। अगर ऐसा मेहरम हो तो उसके साथ सफ़र करना दुरुस्त है।

ना-मेहरम के साथ सफ़र और तन्हाई गुनाह है

बहुत-सी औ़रतें बग़ैर मेहरम के हज के सफ़र या उमरे के लिए रवाना हो जाती हैं जो गुनाहगार होती हैं। ना-मेहरम कैसा ही मुत्तक़ी और परहेज़गार हो उसके साथ हज और उमरे लिए जाना गुनाह है। मुसलमान आदमी को तबीयत पर नहीं शरीअ़त पर चलना लाज़िम है। बहुत-सी औ़रतें ख़ालाज़ाद, मामूँज़ाद, चचाज़ाद, फूफीज़ाद के साथ सफ़र में चली जाती हैं और उनसे पर्दा भी नहीं करती हैं और उनके साथ तन्हाई में वक़्त गुज़ारती हैं, यह सख़्त गुनाह है।

(3) हुर्मते मुसाहरत

किसी मर्द का किसी औ़रत से या किसी औ़रत का किसी मर्द से निकाह हो जाने की वजह से जो हुर्मत हो जाती है उसे 'हुरमते मुसाहरत' कहा जाता है। जैसे जब कोई मर्द किसी औ़रत से निकाह कर ले तो अब उस औ़रत की वालिदा से निकाह नहीं कर सकता। इसी तरह यह औ़रत उस मर्द के किसी भी लड़के से निकाह नहीं कर सकती। किसी औ़रत का उसके शौहर के बाप से निकाह नहीं हो सकता। पहले शौहर की लड़कियाँ अगर कोई औ़रत साथ ले आयी तो नया शौहर उन लड़कियों में से किसी से भी निकाह नहीं कर सकता है बशर्तेकि उन लड़कियों की वालिदा और नये शौहर के दरमियान शौहर और बीवी वाला काम हो चुका हो। और अगर उनकी वालिदा को सिर्फ़ निकाह करके तलाक़ दे दी तो उनमें से किसी भी लड़की से निकाह

कर सकता है। कुरआन मजीद में सूरः निसा की आयत नम्बर 22 और 23 में यही मसाइल बताये हैं:

وَلَا تَنْكِحُوْا مَا نَكَحَ اٰبَآءُكُمْ مِنَ النِّسَآءِ

तर्जुमाः और तुम उन औरतों से निकाह मत करो जिनसे तुम्हारे बाप (दादा या नाना) ने निकाह किया हो।

وَحَلَآئِلُ اَبْنَآئِكُمُ الَّذِيْنَ مِنْ اَصْلَابِكُمْ

तर्जुमाः (और तुम पर हराम की गयी हैं) तुम्हारे उन बेटों की बीवियाँ जो तुम्हारी नस्ल से हों।

وَرَبَآئِبُكُمُ الّٰتِىْ فِىْ حُجُوْرِكُمْ مِّنْ نِّسَآئِكُمُ الّٰتِىْ دَخَلْتُمْ بِهِنَّ

तर्जुमाः (और तुम पर हराम की गयी हैं) और तुम्हारी बीवियों की बेटियाँ जो कि तुम्हारी परवरिश में रहती हैं, उन बीवियों से जिनसे कि तुमने सोहबत की हो।

अगर कोई मर्द किसी औरत से ज़िना कर ले तो उससे भी 'हुरमते मुसाहरत' साबित हो जाती है। जिस औरत से ज़िना करे अब उस औरत की वालिदा से और उसकी लड़की से निकाह नहीं कर सकता।

(4) इद्दत वाली औरत के निकाह का हुक्म

किसी औरत का किसी मर्द के निकाह या उसकी इद्दत में मशग़ूल होना भी निकाह के हराम होने का सबब बन जाता है। एक मर्द के निकाह में दो या तीन या चार औरतें तो रह सकती हैं मगर एक औरत दो मर्दों के निकाह में नहीं रह सकती। जब एक औरत से किसी ने निकाह कर लिया तो उस औरत का निकाह दूसरे मर्द से उस वक़्त तक नहीं हो सकता जब तक कि उस मर्द के निकाह से बिल्कुल न निकल जाये। लफ़्ज़ 'बिल्कुल' इसलिए इस्तेमाल किया कि शौहर के मर जाने या 'तलाक़े बाइन' या 'तलाक़े मुग़ल्लज़ा' दे देने से अगरचे रुजू करने का हक़ ख़त्म हो जाता है मगर दूसरे मर्द से निकाह करने की इजाज़त औरत को तब होती है जब इद्दत गुज़र जाये। इद्दत के अहकाम आगे बयान होंगे, इन्शा-अल्लाह तआ़ला।

कुरआन मजीद में **'वल्-मुह्सनातु मिनन्निसाइ'** (यानी वे औरतें जो शौहर वाली हैं) फ़रमाकर यही बात बतायी है कि जो औरत किसी के निकाह

में हो उसका निकाह दूसरे मर्द से नहीं हो सकता।

(5) कौन-कौनसी औरतें एक साथ एक मर्द के निकाह में इकट्ठी नहीं हो सकतीं

किसी मर्द के निकाह में पहले से किसी औरत का होना भी बाज़ दूसरी औरतों से निकाह करने के लिए रुकावट हो जाता है, जैसे किसी शख़्स ने एक औरत से निकाह किया तो अब जब तक यह औरत उसके निकाह में रहे बल्कि अगर इसने तलाक़ दे दी तो तलाक़ के बाद जब तक इद्दत के अन्दर रहेगी उस औरत की बहन से उसका निकाह नहीं हो सकता। अगर निकाह कर लिया तो शरअ़न उस निकाह का कोई एतिबार नहीं। कुरआन मजीद में **"व अन् तज्मऊ़ बैनल् उख़्तैन"** (यानी तुम पर यह भी हराम है कि एक साथ दो बहनों को निकाह में जमा करो) फ़रमाकर यही मसला बताया गया है। जिस तरह दो बहनें आपस में एक मर्द के निकाह में जमा नहीं हो सकती हैं, उसी तरह फूफी भतीजी और ख़ाला भानजी भी एक मर्द के निकाह में नहीं रह सकती हैं। अगर कोई औरत किसी मर्द के निकाह में हो तो जब तक यह उस मर्द के निकाह में रहेगी उसकी बहन और उसकी ख़ाला से और भानजी से और फूफी से और भतीजी से उस मर्द का निकाह दुरुस्त नहीं होगा। अगर निकाह कर लिया तो शरअ़न मोतबर न होगा। हदीस नम्बर 139 में इसी को बताया गया है। साथ ही यह भी कि उनमें से अगर एक को तलाक़ दे दी तो दूसरी से निकाह उस वक़्त तक दुरुस्त न होगा जब तक कि तलाक़ पाने वाली औरत की इद्दत न गुज़र जाये।

(6) मर्द के लिए मुक़र्ररा तायदाद से ज़यादा निकाह दुरुस्त नहीं

मर्द के लिए शरीअ़त ने बीवियों की तायदाद मुक़र्रर की है। एक वक़्त में चार औरतों से एक मर्द को निकाह करना दुरुस्त है मगर इसकी इजाज़त उस वक़्त है जब हर बीवी के हुक़ूक़ शरीअ़त के मुताबिक़ बराबरी के साथ अदा करे। एक वक़्त में चार औरतों से ज़्यादा कोई मर्द निकाह नहीं कर सकता यहाँ तक कि अगर चार में से चौथी को तलाक़ दे दी तो जब तक उसकी इद्दत न गुज़र जाये उसके बदले पाँचवीं औरत से निकाह करना जायज़ नहीं।

ग़ीलान बिन अ़ब्दुल्लाह सक़फ़ी रज़ियल्लाहु अ़न्हु के निकाह में इस्लाम

क़बूल करने से पहले दस बीवियाँ थीं। जब उन्होंने इस्लाम क़बूल किया तो सब बीवियाँ भी मुसलमान हो गईं। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने इसका ज़िक्र हुआ तो आपने फ़रमाया कि चार को रख लो बाक़ी को छोड़ दो। (मिश्कात)

ये सब निकाह चूँकि इस्लाम लाने से पहले ज़माने में हुए थे इसलिए ऐसा फ़ैसला फ़रमाया कि मुसलमान होते हुए कोई शख़्स अगर चार औ़रतें निकाह में होते हुए पाँचवीं से निकाह कर ले तो पाँचवाँ निकाह आयोजित न होगा।

दूध का रिश्ता सिर्फ़ दो साल की उम्र के अन्दर दूध पीने से साबित होता है

हदीसः (140) हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने बयान फ़रमाया कि एक मर्तबा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ज़नान-ख़ाने में तशरीफ़ लाये, उस वक़्त मेरे पास एक आदमी था। मैंने ऐसा महसूस किया कि उसका घर में होना आपको नागवार हुआ। मैंने (दिल की आशंका दूर करने के लिए) अ़र्ज़ किया कि यह शख़्स मेरा (दूध-शरीक) भाई है (इसलिए अन्दर बुला लिया है)। यह सुनकर आपने फ़रमाया कि अच्छी तरह ख़्याल कर लो कि तुम्हारे दूध-शरीक भाई कौन लोग हैं क्योंकि शरई रज़ाअ़त (दूध से आ जाने वाली हुरमत) उस वक़्त प्रभावी होती है जबकि भूख की वजह से हो।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 273)

तशरीहः मतलब यह है कि शरअ़न दूध पिलाने का ज़माना मुक़र्रर है यानी दो साल की उम्र के अन्दर-अन्दर बच्चा और बच्ची को दूध पिलाया जा सकता है। इस उम्र में जिसने दूध पिया उसका दूध पीना 'हुरमते रज़ाअ़त' (दूध पीने की वजह से हराम होने) का सबब है। उसके बाद दूध पिलाना ही हराम है। और अगर किसी ने इस उम्र के बाद किसी औ़रत का दूध पी लिया है तो उससे वह किसी का ना-मेहरम न बनेगा, न उस औ़रत की माँ-बहन और औलाद से उसका निकाह हराम होगा। चूँकि दूध से हुरमत साबित हो जाती है इसलिए औ़रतों पर बहुत एहतियात लाज़िम है। अपनी औलाद के सिवा बिना ज़रूरत दूसरों के बच्चों को दूध न पिलायें।

फ़ायदाः बच्चा या बच्ची की उम्र चाँद के हिसाब से दो साल पूरे होने के अन्दर-अन्दर जो किसी औ़रत का दूध पिला दिया जाये तो सब इमामों के

नज़दीक 'हुरमते रज़ाअत' हो जाती है। यानी उसकी वजह से वे सब रिश्ते हराम हो जाते हैं जो दूध की वजह से हराम हैं, अलबत्ता हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रह० फ़रमाते हैं कि ढाई साल के अन्दर-अन्दर दूध पिलाने से भी 'हुरमते रज़ाअत' साबित हो जाती है। एहतियात का तक़ाज़ा है कि इमाम साहिब के क़ौल पर अमल किया जाये, दो साल पूरे हो जायें तो किसी बच्चे या बच्ची को दूध हरगिज़ न पिलायें, लेकिन अगर किसी ने पिलाने की ग़लती कर दी तो ढाई साल के अन्दर जो दूध पिलाया हो उसको 'हुरमते रज़ाअत' में प्रभावी माना जाये। अलबत्ता उसके बाद जो दूध दिया हो हुरमते रज़ाअत में उसका कोई एतिबार न होगा और उसकी वजह से रिश्ते हराम न होंगे।

किसी मर्द से निकाह करने के लिए उसकी पहली बीवी को तलाक़ न दिलायें

हदीसः (141) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि कोई औरत अपनी बहन की तलाक़ का सवाल न करे ताकि उसके प्याले को ख़ाली कर दे। और चाहिये कि अपना निकाह (किसी दूसरे मुसलमान मर्द से) करे। क्योंकि जो उसकी तक़दीर में है वह ज़रूर उसको मिलेगा। (मिश्कात शरीफ़ पेज 271)

तशरीहः इस हदीस में इस बात की तरफ़ तवज्जोह दिलायी है कि कोई किसी का बुरा न चाहे। जब कोई किसी को निकाह का पैग़ाम दे तो वह जो बेहतर समझे उसी के मुताबिक़ हाँ या ना का जवाब दे देना चाहिये। अगर उस मर्द के निकाह में पहले से कोई औरत हो तो अपना निकाह करने के लिए पहली बीवी को तलाक़ देने की शर्त न लगाये ताकि शौहर से जो कुछ उसको मिलता है उससे उसका प्याला ख़ाली कर दे यानी मेहरूम करके ख़ुद उस फ़ायदे को अपने लिए सुरक्षित कर ले।

बाज़ आलिमों ने इस हदीस का यह मतलब भी बताया है कि जब दो औरतें किसी मर्द के निकाह में हों तो कोई सौतन शौहर से अपनी सौतन को तलाक़ का सवाल न करे ताकि उसे तलाक़ हो जाये तो वह दूसरी जगह निकाह कर ले, और तलाक़ का तक़ाज़ा करने वाली तन्हा शौहर पर क़ब्ज़ा करके बैठ जाये और शौहर से जो फ़ायदे हासिल होते हैं उन सबसे दूसरी को मेहरूम करके अपने लिए ख़ास कर ले।

हदीस के अलफ़ाज़ में इन मायनों की भी गुन्जाइश है। बहरहाल ये दोनों बातें इस्लामी शरीअ़त के ख़िलाफ़ हैं यानी जिस मर्द से निकाह करना हो उसकी पहली बीवी को तलाक़ दिलाने का तक़ाज़ा करना और अगर कोई औरत अपने शौहर के निकाह में पहले से हो या बाद में आ जाये तो उसकी तलाक़ का सवाल करना।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने पहले तो 'बहन' फ़रमाकर रहमत और शफ़क़त की तरफ़ तवज्जोह दिलायी कि जिस औरत की तलाक़ का सवाल करोगी वह भी तो मुसलमान होगी। अपनी उस मुसलमान बहन को उसके शौहर की शफ़क़त से क्यों मेहरूम करती हो, जबकि तुम अपने लिए ऐसा पसन्द नहीं करती हो। मुसलमान की ईमानी ज़िम्मेदारियों में से यह बात भी है कि जो कुछ अपने लिए पसन्द करे वह दूसरे मुसलमान के लिए भी पसन्द करे, और जो कुछ अपने लिए ना-पसन्द करे वह दूसरे मुसलमान के लिए भी ना-पसन्द करे।

किसी औरत को उसके शौहर से अलग कराकर उसके शौहर से निकाह करने की कोशिश जहाँ उसको तकलीफ़ देने का सबब है वहाँ तक़दीर से आगे बढ़ने की भी कोशिश करने जैसा है। हर मर्द व औरत के लिए माल और रिज़्क़ और दीगर मुनाफ़े पहले से तयशुदा और मुक़द्दर हैं। जो औरत चाहती है कि किसी औरत को तलाक़ दिलाकर उसके शौहर से निकाह कर ले उसे चाहिये कि उसके शौहर पर कब्ज़ा करने के बजाय किसी दूसरे मर्द से अपना निकाह कर ले। हज़ारों मुसलमान मर्द मौजूद हैं, जो तक़दीर में है वह उसके पास भी मिलेगा और इसके पास भी।

आजकल औरतों में यह बीमारी बहुत ज़्यादा है। ऐसे-ऐसे वाक़िआ़त सुने हैं कि बहन ने बहनोई से निकाह करने का फ़ैसला कर लिया और अपनी सगी बहन को तलाक़ देने पर बहनोई को आमादा करके तलाक़ दिला दी और उसे ख़ुद अपना शौहर बनाकर बैठ गयी।

किसी औ़रत को उसके शौहर के ख़िलाफ़ उकसाना गुनाह है

हदीसः (142) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि वह शख़्स हममें से (यानी मुसलमानों की जमाअ़त में से) नहीं है जो किसी औ़रत को

फ़रेब देकर शौहर की मुख़ालिफ़ बना दे, या किसी गुलाम को धोखा देकर उसे आका का मुख़ालिफ़ बना दे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 282)

तशरीहः इस हदीस में इस बात की नसीहत फ़रमायी है कि कोई मर्द व औरत किसी औरत को बहका कर और समझा बुझाकर उसके शौहर की मुख़ालफ़त पर आमादा न कर दे। अगर कोई ऐसी हरकत करेगा तो वह ऐसा सख़्त मुजरिम होगा कि उसके बारे में नबी पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि वह हमारी उम्मत में से नहीं है।

बहुत-से मर्द व औरत इसमें मज़ा लेते हैं कि किसी का घर बिगाड़ दें। शौहर और बीवी में कोई रंजिश हो गयी और किसी ने शौहर को चढ़ाया किसी ने बीवी को उकसाया और दोनों में सुलह कराने के बजाय मामूली-सी रंजिश को न पाटने वाली खाड़ी बना दिया। तो ऐसे लोगों की बुरी हरकत से मियाँ-बीवी क़रीब आने के बजाय दूर होते चले जायेंगे। ऐसी हरकत करने वाले अजनबी नहीं हो सकते बल्कि दोनों फ़रीक़ों के रिश्तेदार ही ऐसा काम ज़्यादा करते हैं।

बहुत-से लोग माँ-बाप या बहन-भाई या मर्द को उसकी बीवी के ख़िलाफ़ उभार देते हैं। औरत की माँ-बहन या मौहल्ले की औरतें औरत को शौहर के ख़िलाफ़ उभारती हैं। देख तुझे ऐसा-ऐसा कहा है। तू कोई गिरे-पड़े घर की थोड़ा ही है जो ऐसी बातें सुनेगी। तेरा ज़ेवर भी बेच खाया और तुझे ज़ेवर की एक कील भी बनवाकर नहीं दी। कपड़े भी वही तेरे माँ-बाप के घर के चल रहे हैं, कैसे शौहर के पल्ले बँधी है। इन बातों से उसका दिल खट्टा हो जाता है। शौहर से लड़ती रहती है। वह भी बुरी तरह पेश आता है और बदमज़गी बढ़ते-बढ़ते तलाक़ तक की नौबत पहुँच जाती है। जब तलाक़ हो जाती है तो अब शौहर भी दूसरी शादी के लिए परेशान है मगर किसी जगह शादी का मौक़ा नहीं लगता, और बीवी के रिश्तेदार और घर वाले भी चाहते हैं कि कहीं रिश्ता हो जाये मगर लोग उसको इसलिए क़बूल नहीं करते कि उसे तलाक़ हो चुकी है, आदत और ख़सलत ख़राब होगी तब ही तो ऐसा हुआ। बहरहाल जिनका घर बिगड़ा वे मुसीबत झेलते हैं और ये भड़काने और उकसाने वाले तमाशा देखते हैं। शैतान अपनी हरकतें इनसानों से भी करा लेता है। अल्लाह तआला शैतान के कामों से सबको बचाये। आमीन।

तालीम व तरबियत का बयान

बच्चों को ईमान व इस्लाम और इस्लाम के आमाल सिखाने की ज़िम्मेदारी माँ-बाप पर है

हदीसः (143) हज़रत अ़मर बिन शुऐब रज़ि० रिवायत करते हैं कि मैंने अपने दादा की किताब में (जिसमें उन्होंने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हदीसें इकट्ठी की थीं) यह लिखा हुआ पाया कि जब तुम्हारी औलाद बोलने लगे तो उनको ला इला-ह इल्लल्लाहु सिखाओ, फिर उनकी मौत आने तक फ़िक्र मत करो। (यानी शुरू में जब अ़क़ीदा ठीक कर दिया और इस्लाम का अ़क़ीदा उसको सिखा दिया तो अब कोई डर नहीं, ईमान की पुख़्तगी उसे ईमान ही पर ज़िन्दा रहने देगी और उसी पर इन्शा-अल्लाह उसकी मौत आयेगी)। और जब उनके दूध के दाँत गिरने लगें तो उनको नमाज़ का हुक्म करो।

और हज़रत अ़मर बिन शुऐब यह भी रिवायत करते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यह तरीक़ा था कि अ़ब्दुल मुत्तलिब की औलाद में जब कोई बोलने लगता था तो उसे यह आयत सिखाते थे:

व क़ुलिल्-हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी लम् यत्तख़िज़् व-लदंव्-व लम् यकुल्-लहू शरीकुन् फ़िल्-मुल्कि व लम् यकुल्-लहू वलिय्युम् मिनज़्ज़ुल्लि व कब्बिर्हु तकबीरा

तर्जुमाः और आप कह दीजिए कि तमाम ख़ूबियाँ (और तारीफ़ व प्रशंसा) उसी अल्लाह के लिए (ख़ास) हैं जो न औलाद रखता है और न बादशाहत में कोई उसका शरीक है, और न कमज़ोरी की वजह से उसका कोई मददगार है, और उसकी बड़ाइयाँ ख़ूब बयान किया कीजिए।

(सूरः बनी इस्राईल आयत 111)

तशरीहः ला इला-ह इल्लल्लाहु इस्लाम का कलिमा है। यह इस्लाम के तमाम अ़क़ीदों को शामिल है और अ़क़ीदे ही दीन की असल और जड़ हैं। अगर अ़क़ीदे सही न हों तो इस्लाम का दावेदार होना बिल्कुल बेकार है। महज़ दावा करने से या मुसलमान की औलाद होने से कोई मुसलमान नहीं हो

जाता। इस्लाम के अक़ीदों का जानना और मानना फ़र्ज़ है।

इस हदीस में इरशाद फ़रमाया है कि छोटे बच्चे की ज़बान चलने लगे और ज़बान से कुछ न कुछ कलिमात अदा करने लगे तो उसे ला इला-ह इल्लल्लाहु सिखायें। देखिये बच्चा अभी ना-समझ है लेकिन उसे ला इला-ह इल्लल्लाहु याद कराया जा रहा है। वजह इसकी यह है कि बचपन ही से अगर दीनी अक़ीदों से मानूस न किया तो बड़ा होकर दूसरे रास्ते पर चलने लगेगा। जब बच्चा बोलने लगे तो यही नहीं कि सिर्फ़ लफ़्ज़ ला इला-ह इल्लल्लाहु सिखायें बल्कि इसका तर्जुमा भी याद करायें और इसका मतलब भी समझायें। जैसे-जैसे बच्चा होश संभाले उसे इस्लाम के अक़ीदे सिखाते चले जायें।

इस्लामी अक़ीदे

इस्लाम के बुनियादी तीन अक़ीदों हैं:

अव्वलः तौहीद का अक़ीदा, यानी अल्लाह को एक मानना और यह अक़ीदा रखना कि उसकी ख़ुदाई में कोई उसका शरीक नहीं है, और उसकी ज़ात व सिफ़ात के बारे में उन सब अक़ीदों को तसलीम करना जो क़ुरआन व हदीस में बयान किये गये हैं।

दूसरेः अक़ीदा-ए-रिसालत यानी नबी करीम मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को अल्लाह का आख़िरी नबी मानना और आप जो दीन अल्लाह की तरफ़ से लाये हैं उसे पूरा-पूरा सच्चे दिल से तसलीम करना।

तीसरेः अक़ीदा-ए-आख़िरत यानी मौत के बाद ज़िन्दा होने का अक़ीदा रखना, और इस बात को मानना कि क़ियामत क़ायम होगी और आमाल का हिसाब होगा, जज़ा और सज़ा के फ़ैसले होंगे। दोज़ख़ में अ़ज़ाब और जन्नत में आराम और राहत मिलेगा।

इन तीन बुनियादी अक़ीदों के अन्तर्गत बहुत-से अक़ीदे हैं जो क़ुरआन व हदीस में आये हैं, उनका मानना भी फ़र्ज़ है।

इस्लामी अक़ीदों को जानने की ज़रूरत और अहमियत

बहुत-से माँ-बाप बच्चों को इस्लाम के अक़ीदे नहीं सिखाते बल्कि ख़ुद भी इस्लामी अक़ीदे नहीं जानते। ग्रेजुएट हो जाते हैं, पी. एच. डी. कर लेते हैं लेकिन तौहीद व रिसालत और आख़िरत के बारे में जो अक़ायद हैं उनसे

नावाकिफ़ होते हैं। और इसी नावाकिफ़ी की वजह से हर इस्लाम के दावेदार को मुसलमान समझ लेते हैं। चाहे वह इस्लामी अक़ीदों का इनकारी ही हो। जब हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को अल्लाह का रसूल मान लिया तो अल्लाह की किताबों और उसके फ़रिश्तों और उसके तमाम रसूलों के बारे में और क़ब्र व हश्र व नश्र यानी क़ियामत वग़ैरह के बारे में जो कुछ आपने बताया है उन सबका मानना फ़र्ज़ हो गया। बहुत-से लोग तो ऐसे होते हैं कि इस्लाम के अ़क़ीदों का मज़ाक़ बनाते हैं और अल्लाह व रसूल पर एतिराज़ करते हैं और फिर भी अपने को मुसलमानों में शुमार करते हैं, हालाँकि ऐसे लोग शरअ़न् मुसलमान नहीं हैं।

जो शख़्स नुबुव्वत के सिलसिले के ख़त्म होने का इनकारी हो वह काफ़िर है

बहुत-से लोग ऐसे जाहिल हैं कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बाद किसी दूसरे को अल्लाह का नबी और रसूल मानते हैं। जब उनसे कहा जाता है कि क़ुरआन मजीद में हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को 'ख़ातिमुन्नबिय्यीन' (यानी नुबुव्वत के सिलसिले को ख़त्म करने वाला) फ़रमाया है, तो क़ुरआन मानने के बजाये ख़ुद आयत का मतलब ही उलट-पुलट करने लगते हैं। ये लोग मुसलमान नहीं हैं चाहे कितनी ही नमाज़ें पढ़ें कैसे ही अख़्लाक़ का दिखावा करें। ऐसे लोगों को मुसलमान समझना ही कुफ़्र है।

कौनसा कलिमा पढ़ने वाला मुसलमान है

बाज़ लोग कहते हैं कि हर कलिमा पढ़ने वाला मुसलमान है और 'ख़त्मे नुबुव्वत' के इनकारियों, बेदीनों, दहरियों को भी इसलिए मुसलमान समझते हैं कि वे ज़बान से कलिमे का इक़रार करते हैं, यह बहुत बड़ी जहालत है। ज़बान से कलिमा पढ़ना मुसलमान होने के लिए काफ़ी नहीं है। इस कलिमे की तशरीह (व्याख्या और मतलब) जो क़ुरआन व हदीस में आयी है उसको दिल से मानने से मुसलमान होता है।

अ़क़ीदों पर जन्नत व दोज़ख़ का फ़ैसला है

अ़क़ीदों का मामला नाज़ुक है। अ़क़ीदों के सही होने पर दोज़ख़ के हमेशा

वाले अज़ाब से नजात पाने और जन्नत की हमेशा रहने वाली नेमतों से नवाज़ा जाना मौक़ूफ़ है। जिसका अक़ीदा कुफ़िया हो वह हमेशा-हमेशा दोज़ख़ में रहेगा, इसलिए अपने अक़ीदे दुरुस्त करना और बच्चों को सही अक़ीदे समझाना, सिखाना ज़िन्दगी का सबसे बड़ा फ़रीज़ा है, और औलाद की सबसे बड़ी हमदर्दी है।

हज़रत अमर बिन शुऐब की रिवायत की हुई दूसरी हदीस में है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह तरीक़ा था कि जब अब्दुल मुत्तलिब की औलाद में से कोई बच्चा बोलने लगता था तो आयत ' ' व **कुलिल् हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी"** सिखाते थे। यह आयत सूरः बनी इसराईल की सबसे आख़िरी आयत है, पन्द्रहवें पारे के आधे पर है। पूरी आयत यूँ है:

व कुलिल् हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी लम् यत्तख़िज़् व-लदंव्-व लम् यकुल्-लहू शरीकुन् फ़िल्-मुल्कि व लम् यकुल्-लहू वलिय्युम् मिनज़्ज़ुल्लि व कब्बिरहु तकबीरा।

यानी और आप फ़रमा दीजिये कि सब तारीफ़ें अल्लाह के लिए हैं जिसने न अपनी कोई औलाद बनायी और न मुल्क में उसका कोई शरीक है, और न कोई उसका मददगार है जो उसकी कमज़ोरी की वजह से मदद करता (वह हर तरह की ताक़त रखता है जो चाहे कर सकता है, उसे किसी मददगार की ज़रूरत नहीं) और तुम उसकी बड़ाई बयान करो।

इस आयत में भी ख़ालिस तौहीद बयान की गयी है और अल्लाह तआला की ज़ात व सिफ़ात के बारे में जो अक़ीदे होने चाहियें वे बताये हैं। बच्चे को बिल्कुल शुरू से इस आयत को याद कराने की तालीम देना इसी लिए है कि मुसलमान का कोई बच्चा ख़ुदा-ए-पाक की ज़ात व सिफ़ात से संबन्धित अक़ीदों से जाहिल व ग़ाफ़िल न रहे, और मौत आने तक सही मुसलमान बना रहे। इस्लामी अक़ीदे तफ़सील के साथ किताब के शुरू में लिख दिये गये हैं।

मर्दों को सूरः मायदा और औरतों को सूरः नूर सिखाने का हुक्म

हदीसः (144) हज़रत मुजाहिद रह० से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अपने मर्दों को सूरः मायदा और औरतों को सूरः नूर सिखाओ। (जामे सग़ीर पेज 162 जिल्द 2)

तशरीहः इस हदीस में मर्दों को सूरः मायदा और औरतों को सूरः नूर की तालीम देने का हुक्म दिया गया है। इन दोनों सूरतों में बहुत-से अहकाम हैं। सूरः मायदा में हज का एहराम बाँधने वालों को हिदायत दी गयी है और जिन जानवरों का खाना हराम है उनकी कुछ तफ़सील बतायी है। साथ ही गुस्ल, वुज़ू, तयम्मुम के अहकाम भी बताये हैं, और डाकुओं को जो सज़ा दी जाये उसकी तफ़सील भी ज़िक्र है। कोई किसी को क़त्ल कर दे या किसी का हाथ-पाँव या नाक-कान काट दे या आँख फोड़ दे तो उसका बदला क्या है, यह बात भी बतायी है, और क़सम के अहकाम भी समझाये हैं। कई तरह से शराब की बुराई और निन्दा करते हुए उसको हराम क़रार दिया है। और भी बहुत-सी हिदायतें और इबरत की बातों और नसीहत भरे क़िस्सों पर सूरः मायदा मुश्तमिल है। और सूरः नूर में ज़िना करने वाले मर्द और ज़िना करने वाली औरत और तोहमत लगाने वालों की सज़ा बयान की गयी है। साथ ही घरों में जाते हुए इजाज़त लेने का हुक्म दिया है। मर्दों और औरतों को नज़रें नीची रखने की तालीम दी है और पर्दे के अहकाम तफ़सील से बताये हैं। चूँकि इसमें औरतों से मुताल्लिक अहकाम ख़ास तौर पर ज़िक्र किये गये हैं इसलिए हुक्म हुआ कि यह सूरः औरतों को सिखायी जाये।

इस्लाम इल्म व अमल का नाम है

इस्लाम मुकम्मल तौर पर अमल का नाम है, और हर इनसान की ज़िन्दगी से मुताल्लिक इस्लाम ने अहकाम बताये हैं। मर्द हो या औरत उन अहकाम पर अमल करने से ही सही मुसलमान बनता है वे तमाम अहकाम जो सब पर फ़र्ज़ हैं जैसे नमाज़-रोज़ा वग़ैरह, इन सब का सीखना और जानना तो हर एक पर फ़र्ज़ है, और जो अहकाम किसी ख़ास फ़र्द या तबक़े और गिरोह से मुताल्लिक़ हों उनका जानना ख़ास उस फ़र्द और तबक़े और गिरोह पर फ़र्ज़ है। जैसे ताजिर तिजारत के अहकाम सीखे। काश्तकार ज़मीन के मसाइल मालूम करे और 'उश्र व ख़िराज' (यानी खेती में से अल्लाह की राह में देने के जो हिस्से मुक़र्रर हैं उन) की तफ़सीलात को जाने। खेती-बाड़ी के अहकाम को पहचाने। उधोगपति अपने से संबन्धित उधोग के अहकाम की तालीम हासिल करे। ग़रज़ कि हर पैशे वाला अपने पैशे के अहकाम को सीखे। औरतें अपने से मुताल्लिक अहकाम को मालूम करें, मियाँ-बीवी

एक-दूसरे के हुकूक पहचानें, माँ-बाप औलाद के हुकूक और औलाद माँ-बाप के हुकूक जानें। पशु पालने वाले जानवरों के हुकूक मालूम करें।

ग़फ़लत और जहालत को दूर करना फ़र्ज़ है

आजकल ग़फ़लत का दौर-दौरा है। बेराह-रवी का आलम है। बहुत-से मर्दों और औरतों को कुछ ख़बर नहीं कि उनके ज़िम्मे इस्लाम के क्या अहकाम लागू होते हैं। हर शख़्स अपनी तबीयत का पाबन्द और ख़्वाहिश का बन्दा नज़र आता है। यह बहुत अफ़सोसनाक सूरते हाल है। मुसलमान दीन से जाहिल और ग़ाफ़िल हो यह उसके लिए बड़ी शर्म की बात है। ग़फ़लत और जहालत को दूर करना फ़र्ज़ है।

नमाज़, रोज़ा, ज़कात, हज, आपस के मामलात, रहन-सहन और खाने-पीने, उठने-बैठने, सोने-जागने और इनके अलावा ज़िन्दगी की तमाम हालतों के हुक्मों को मालूम करो जो कुरआन और हदीस में बताये गये हैं। बहुत-से मर्द व औरत बचपन में दीन सीखते नहीं और बड़े होकर शर्म की वजह से नहीं पूछते और उम्र भर जाहिल रहते हैं और अल्लाह तआला के हुक्मों के ख़िलाफ़ चलते हैं, यह बड़ी मेहरूमी है।

बच्चों और बच्चियों को दीनदार उस्तादों और उस्तानियों से दीन पढ़ावओ और जो औरतें बड़ी हो चुकी हैं मगर दीन से जाहिल हैं उनको दीन की ज़रूरी बातें बताने और नमाज़ याद कराने का एहतिमाम करो, जिसकी तरकीब यह है कि रोज़ाना या कम-से-कम हफ़्ते में एक दिन मुक़र्रर करके पर्दे के साथ किसी मुक़र्रर मकान में घर-घर से आकर औरतें जमा हुआ करें और एक दूसरे को सिखाने में लग जाया करें। ज़बानी तालीम भी करें और किताबी तालीम भी।

ज़बानी तालीम

ज़बानी तालीम यह है कि जिसको कलिमा याद न हो उसको कलिमा याद करायें, जिसे नमाज़ याद न हो उसे नमाज़ सिखायें, बार-बार कहलवायें और जिसे याद हो वह अन्जान को हक़ीर न समझे, न अपनी बड़ाई जताये, न ऐसे अन्दाज़ में बात करे जिससे किसी का दिल दुखे। आपस में नमाज़ और वुज़ू के फ़र्ज़ों सुन्नतों का तज़किरा करें, पूछा करें, जिसे मालूम न हो बता दें, दीन पर चलने की ताकीद करें, ख़ुदा का ख़ौफ़ दिलों में बैठा दें। हज़रत रसूले

मक़बूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम और बुज़ुर्गों के किस्से सुनायें।

किताबी तालीम

किताबी तालीम यह है कि दीनी किताबों में से कोई किताब लेकर पढ़ी जाये जो मोतबर हो और उसका मुसन्निफ़ (लेखक) ख़ुदा से डरने वाला और दीनदार हो, और वाक़ई आ़लिम हो। एक पढ़े और बाक़ी सब तवज्जोह और ध्यान के साथ सुनें और सुनकर अ़मल शुरू करें। किताबें बहुत-सी छप गयी हैं, हम चन्द किताबों के नाम लिखते हैं, उनको मंगाकर सुनो और पढ़ो और सब को सुनाओ और एक मज़मून को ख़ूब समझा दो तो उसके बाद दूसरा मज़मून शुरू करो।

चन्द दीनी किताबों के नाम

(1) नसायह नबी सल्ल० (2) उम्मते मुस्लिमा की माएँ रज़ि० (3) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की साहिबज़ादियाँ (बेटियाँ) रज़ि० (4) हिकायाते सहाबा रज़ि० (5) सीरत ख़ातिमुल अम्बिया (6) तबलीग़े दीन (7) बेहतरीन दहेज (8) तालीमुद्दीन (9) फ़ज़ाइले नमाज़ (10) फ़ज़ाइले तब्लीग़ (11) फ़ज़ाइले सदक़ात (दोनों हिस्से) (12) फ़ज़ाइले हज (13) फ़ज़ाइले क़ुरआन (14) ज़िक्रे इलाही (15) हयातुल मुस्लिमीन (16) आदाबुल मुआ़शरत (17) अग़लातुल अ़वाम (18) इकरामे मुस्लिमीन (19) मरने के बाद क्या होगा? (20) फ़ज़ाइले रमज़ान (21) गुनाहे बे-लज़्ज़त (22) दोज़ख़ का खटका (23) जन्नत की कुंजी (24) रसूलुल्लाह की पैशीनगोइयाँ (25) इस्लाहुर्रुसूम (26) मसनून दुआ़एँ (27) फ़ुरूउल ईमान (28) मआ़रिफ़ुल हदीस (29) कस्बे हलाल और अदाये हुक़ूक़ (30) फ़ज़ाइले दुरूद शरीफ़ (31) जज़ा-उल-आमाल (32) ज़िक्रुल्लाह (33) मुस्लिम ख़्वातीन के लिए बीस सबक़ (34) इस्लामी अख़्लाक़ (35) हमारी मुसीबतों के असबाब और उनका इलाज (36) आईना-ए-नमाज़ (37) फ़ज़ाइले इल्म (38) क़स्दुस्सबील (39) फ़ज़ाइले ज़िक्र (40) इस्लाम क्या है?

नोटः किताब के लेखक जनाब मौलाना मुफ़्ती आ़शिक़ इलाही बुलन्द शहरी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने चूँकि उर्दू ज़बान में यह किताब लिखी है जिसको हमने हिन्दी ज़बान में मुन्तक़िल किया है, इसलिए उन्होंने उर्दू ज़बान में छपी

हुई किताबों ही के नाम लिखे हैं। ऊपर लिखी गयी किताबों में से अगरचे बहुत-सी किताबें हिन्दी ज़बान में तर्जुमा हो चुकी हैं मगर बहुत-सी किताबें ऐसी हैं जिनका अभी तक हिन्दी ज़बान में तर्जुमा नहीं हुआ। इसलिए आप पर लाज़िम है कि जब कोई दीनी किताब ख़रीदने का इरादा हो तो किसी आलिम से मालूम कर लें वह आपको हिन्दी में प्रकाशित मोतबर किताबों की निशानदेही कर देंगे। आजकल हिन्दी ज़बान में भी दीनी किताबों का बहुत बड़ा ज़ख़ीरा उपलब्ध है। **(मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी)**

बच्चों को नमाज़ सिखाने का एहतिमाम करना लाज़िम है

हदीसः (145) हज़रत सबरता जुहनी रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि इरशाद फ़रमाया नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि अपने बच्चों को नमाज़ सिखाओ जबकि वे सात साल के हों, और नमाज़ न पढ़ें तो उनकी पिटाई करो जब वे दस साल के हों। (तिर्मिज़ी पेज 58 जिल्द 1)

तशरीहः इस हदीस में बच्चों को नमाज़ सिखाने और उनसे नमाज़ पढ़वाने का हुक्म दिया गया है। दर हक़ीक़त सही अमल बग़ैर सही इल्म के नहीं हो सकता। इनसान जब दुनिया में क़दम रखता है तो बिल्कुल सादा होता है कुछ नहीं जानता, और जानने के क़ाबिल भी नहीं होता। जैसे-जैसे उम्र बढ़ती है समझ आती है। दुनिया चूँकि सामने है और इसके तक़ाज़े हर वक़्त आँखों के सामने हैं, इसलिए दुनिया में काम आने वाली बातें कुछ लोगों की देखा देखी इनसान सीख लेता है और कुछ मेहनत और कोशिश करके हासिल कर लेता है, लेकिन दीनदार होना चूँकि मौत के बाद काम देगा और आख़िरत के तक़ाज़े इस वक़्त सामने नहीं हैं इसलिए दीनदारी की तरफ़ इनसान का ज़ेहन बहुत कम चलता है।

माँ-बाप का फ़रीज़ा है कि बच्चों को दीन सिखायें और दीन को सबसे ज़्यादा अहमियत दें, क्योंकि दीन ही आख़िरत की हमेशा वाली ज़िन्दगी में काम देने वाला है। बहुत-से लोग बच्चों से ज़्यादा मुहब्बत करते हैं, मगर उनकी यह मुहब्बत सिर्फ़ दुनियावी आराम व राहत तक सीमित रहती है। उनकी असल ज़रूरत यानी आख़िरत की नजात और मौत के बाद के आराम व राहत की तरफ़ तवज्जोह नहीं करते। हलाल माल से हलाल तरीक़े पर खिलाना पिलाना और पहनाना अच्छी बात है, लेकिन इनसान की सबसे बड़ी

ज़रूरत आख़िरत का आराम और सुकून है। औलाद को दीनी उलूम और आमाल से ग़ाफ़िल और जाहिल रखना बहुत बड़ा ज़ुल्म है। बच्चे को अल्लाह के नाम से आशना करें और ऐसे तौर-तरीक़े इख़्तियार करें कि उनको देखकर बच्चे के ज़ेहन में इस्लामी आमाल की मुहब्बत पैदा होती चली जाये, और जैसे-जैसे बच्चा होश संभालता जाये इस्लाम के काम उसके ज़ेहन में जमते और पुख़्ता होते चले जायें।

औलाद के बारे में मौजूदा दौर के लोगों की बदहाली

बच्चों की ख़ुशी के लिए उनको ग़ैर-ज़रूरी लिबास भी पहनाते हैं। उनके लिये तसवीरें मूर्तियाँ ख़रीदकर लाते हैं और अपने घरों को उनकी वजह से रहमत के फ़रिश्तों से मेहरूम रखते हैं। उधार क़र्ज़ करके उनकी जायज़-नाजायज़ ज़रूरतों और शौकिया व ज़ीनत और फ़ैशन पर अच्छी-ख़ासी रक़में ख़र्च करते हैं लेकिन उनको दीन पर डालने की फ़िक्र नहीं करते। यह बच्चों के साथ बहुत बड़ी दुश्मनी है। अगर दीन नहीं तो आख़िरत की तबाही होगी, वहाँ की तबाही के सामने दुनिया की ज़रा-सी चटक-मटक और चहल-पहल कुछ भी हक़ीक़त नहीं रखती।

अपनी औलाद के सबसे बड़े मोहसिन वे माँ-बाप हैं जो अपनी औलाद को दीनी इल्म पढ़ाते हैं और दीनी आमाल पर डालते हैं। यह इल्म न सिर्फ़ औलाद के लिए बल्कि ख़ुद उनके माँ-बाप के लिए भी क़ब्र में और आख़िरत में नफ़ा देने वाला होगा। एक बुज़ुर्ग का इरशाद है:

"लोग सो रहे हैं, जब मौत आयेगी तो जागेंगे"

आख़िरत से बेफ़िक्री की ज़िन्दगी गुज़ारने में इनसान का नफ़्स ख़ुश रहता है और यही हाल बाल-बच्चों और दूसरे मुताल्लिक़ीन (संबन्धित लोगों) का है। अगर आख़िरत की बातें न बताओ और खिलाये-पिलाये जाओ, दुनिया का नफ़ा पहुँचाये जाओ तो ख़ुश रहते हैं, और इस ग़फ़लत में पड़े रहने को नुक़सान का सबब नहीं समझते। लेकिन जब आँखें बन्द होंगी और क़ब्र की गोद में जायेंगे और मौत के बाद के हालात देखेंगे तो हैरानी से आँखें फटी रह जायेंगी। आ़लमे आख़िरत की ज़रूरतें और हाजतें जब सामने होंगी तो ग़फ़लत पर रंज होगा और हसरत होगी कि काश! आज के दिन के लिए ख़ुद भी अ़मल करते और औलाद को भी यहाँ की कामयाबी की राह पर डालते।

मगर उस वक़्त हसरत बेफ़ायदा होगी।

लोगों का यह हाल है कि बच्चों को होश संभालते ही स्कूल और कालिज की भेंट चढ़ा देते हैं या मेहनत-मज़दूरी पर लगा देते हैं। नमाज़-रोज़ा सिखाने और बताने और दीनी फ़राइज़ समझाने और उन पर अ़मल कराने की कोई फ़िक्र नहीं करते। शादियाँ हो जाती हैं, बाप-दादा बन जाते हैं लेकिन बहुत-सों को कलिमा तय्यिबा भी सही याद नहीं होता। नमाज़ में क्या पढ़ा जाता है इससे भी वाक़िफ़ नहीं होते। अस्सी-अस्सी साल के बूढ़ों को देखा गया है कि दीन की मोटी-मोटी बातें भी नहीं जानते।

जहालत की वजह से बेटे-पोते बाप-दादा का जनाज़ा भी नहीं पढ़ सकते

जब बाप-दादा की मौत हो जाती है तो पहले तो बेटे-पोते जनाज़े को हाथ लगाने से घबराते हैं। कोई गुस्ल देने को तैयार नहीं होता। आख़िर ग़ैर लोग नहलाते हैं और बाज़ जगह तो किराये के लोग आकर गुस्ल देते हैं, घर के लोग कफ़न देना भी नहीं जानते, कितने कपड़े हों और कैसे पहनाये जायें। फिर जब जनाज़ा लेकर चलते हैं वहाँ इमाम साहिब से जनाज़े की नमाज़ पढ़वाते हैं हालाँकि शरअन जनाज़े की नमाज़ पढ़ाने का हक़दार मय्यित का वली है, लेकिन यह वली मरने वाले का बेटा या पोता नमाज़ पढ़ाने से आ़जिज़ है, क्योंकि नमाज़े जनाज़ा याद नहीं होती।

बाज़ मर्तबा तो जग-हंसाई से बचने के लिए मय्यित के रिश्तेदार जनाज़े की सफ़ में खड़े हो जाते हैं मगर उन्हें यह मालूम नहीं होता कि पढ़ना क्या है? और बाज़ ऐसे होते हैं कि नमाज़ से दूर अलग खड़े रहते हैं। वजह यह है कि मरने वाले ने उन लोगों को दीनी तालीम नहीं दी, उनको दीन पर नहीं डाला, नमाज़-रोज़ा नहीं सिखाया, बड़ी-बड़ी जायदादें ख़रीदकर औलाद के नाम कर दीं मगर इस क़ाबिल बनाके न छोड़ा कि बाप का जनाज़ा ही सही तौर पर पढ़ लेते।

जब कहा जाता है कि औलाद को क़ुरआन पढ़ाओ, दीन सिखाओ और नमाज़-रोज़े पर डालो तो बाज़ माँ-बाप कह देते हैं कि अपने बच्चे को मुल्ला थोड़ा ही बनाना है। यह तो अफ़सर बनेगा अफ़सर! इसका मतलब यह हुआ कि दीनदार होना और नमाज़ का पाबन्द होना बेफ़ायदा चीज़ है, और दीनदार

होना कोई घटिया काम है जो हिकारत और अपमान के लायक है, अल्लाह हमें ऐसी बेहूदा बात से अपनी पनाह में रखे।

इस्लाम के नामलेवा कैसी-कैसी जाहिलाना बातें करते हैं। क्या क़ब्र में अंग्रेज़ी फ़ैशन, अंग्रेज़ी तौर-तरीक़े, अंग्रेज़ी का पढ़ना-लिखना काम देगा? और क्या दुनिया की अफ़सरी और कोठी-बंगले की रिहाइश वहाँ नजात दिला देगी? हरगिज़ नहीं! वहाँ तो ईमान और नेक आमाल, नमाज़-रोज़ा, ज़िक्र, तिलावत से काम चलेगा। अगर आख़िरत हक़ है जैसा कि सब मुसलमान जानते हैं तो उसके लिए दौड़-धूप क्यों नहीं? और औलाद को वहाँ के लिए फ़िक्रमन्द क्यों नहीं बनाते और नेक आमल पर क्यों नहीं डालते? हक़ीक़त में ईमान व यक़ीन की कमी एक बहुत बड़ा मर्ज़ है जिसने आख़िरत से ग़ाफ़िल कर रखा है।

सात साल के बच्चे को नमाज़ सिखाओ

इस हदीस में इरशाद फ़रमाया है कि सात साल का बच्चा हो तो उसे नमाज़ सिखाओ। दूसरी रिवायत में है कि सात साल का बच्चा हो तो उसे नमाज़ पढ़ने का हुक्म करो और दस साल का बच्चा हो तो नमाज़ न पढ़ने पर उसकी पिटाई करो। बात यह है कि दोनों चीज़ों की ज़रूरत है, नमाज़ सिखाना भी ज़रूरी है और नमाज़ पढ़वाना भी, बच्चे को जब नमाज़ सिखायेंगे नहीं तो कैसे पढ़ेगा? क्योंकि नमाज़ ईमान के बाद सबसे बड़ा फ़रीज़ा है इसलिए इसका सिखाना और तालीम देना सबसे ज़्यादा ज़रूरी है। लोग अपनी औलाद को हुनर और दस्तकारी में डालते हैं, तिजारत के गुर सिखाते हैं, समाज में ज़िन्दा रहने के आदाब बताते हैं, मगर नमाज़ सीखने-सिखाने से ग़फ़लत बरतते हैं। यह ज़िन्दगी बहुत शर्म की ज़िन्दगी है।

ऐ मुसलमानो! अपने बच्चों को नमाज़ें सिखाओ और नमाज़ पढ़ने की ताकीद करो। दस बरस के हो जायें और नमाज़ न पढ़ें तो उनकी पिटाई करो, यह सरवरे आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है। बहुत-से मर्द व औरत ख़ुद तो नमाज़ी होते हैं मगर औलाद को नमाज़ी बनाने की तरफ़ तवज्जोह नहीं देते। यह उनकी बरबादी है। सच्ची बात यह है कि जब बच्चे को स्कूल के हवाले कर दिया और नमाज़ में पढ़ने की चीज़ें न सिखाईं, रक्अ़तों की तायदाद न बतायी, फ़राइज़ और वाजिबात से वाक़िफ़ न कराया और बच्चा स्कूल व कालिज में पढ़ते-पढ़ते ऐसी उम्र को पहुँच गया कि उसे

दुनिया का ज़ौक़ लग गया और माँ-बाप की गिरफ़्त से आज़ाद हो गया तो अब उसे सही राह पर चलना बहुत ही दुश्वार मालूम होता है। ज़रूरत इसकी है कि शुरू ही से दीनी ज़ेहन बनाया जाये और आख़िरत के कामों पर लगाया जाये। बाज़ लोग कहते हैं कि हम औलाद को नमाज़ के लिए कहते हैं मगर कोई पढ़ता ही नहीं, उनका यह कहना बिल्कुल कमज़ोर उज़्र है। अव्वल तो कहने की तरह कहते नहीं सिर्फ़ मुँह छूते हैं, हालाँकि हदीस में इरशाद है कि बच्चे दस साल के हो जायें तो नमाज़ न पढ़ने पर उनकी पिटाई करो। अगर बच्चे से एक-दो रुपये का नुक़सान हो जाये तो डाँट-डपट और मारपीट के लिए तैयार हो जाते हैं। दो-चार लगाकर दम लेते हैं। लेकिन नमाज़ के लिए सिर्फ़ हल्के से लहजे में कह देते हैं, इस बारे में डाँट-डपट को भूल जाते हैं। अगर आख़िरत की अहमियत होती तो नमाज़ के नाग़ा करने को दुनिया के किसी भी बड़े से बड़े नुक़सान के मुक़ाबले में बहुत बड़ा नुक़सान समझते और इसके लिये चिन्तित होते।

अगर तुम्हारा लड़का दीन के तरीक़े पर चलकर दोज़ख़ से बच गया और दुनिया में भूखा रहा तो बड़ी कामयाबी है। और अगर उसने लाखों रुपये कमाये और बड़ी-बड़ी बिल्डिगें बनाईं मगर ख़ुदा से दूर रहकर और गुनाहों में पड़कर दोज़ख़ मोल ली तो उसके लिए जायदाद बेकार बल्कि वबाल है।

औरतों की बड़ी ज़िम्मेदारी यह है कि अपनी औलाद को दीनदार बनायें और दोज़ख़ से बचायें। हर बच्चा कम-से-कम नौ-दस साल तो अपनी माँ के पास ही रहता है, इस उम्र में उसे दीन की बातें सिखा दो और दीनदार बना दो। अगर औलाद दीनदार होगी तो तुम्हारे लिए दुआ करेगी और जो दीनी इल्म तुमने सिखाया था उसपर अमल करेगी तो तुमको भी अज्र व सवाब मिलेगा।

सबसे पहला मदरसा माँ-बाप की गोद है

बच्चों की तालीम और तरबियत यानी उनको दीन का इल्म सिखाने और दीन का अमल करके दिखाने और अमल का शौक़ पैदा करने का सबसे पहला मदरसा उनका अपना घर और माँ-बाप की गोद है। माँ-बाप, रिश्तेदार और क़रीबी लोग बच्चों को जिस साँचे में चाहें ढाल सकते हैं और जिस रंग में चाहें रंग सकते हैं। बच्चे का संवार और बिगाड़ दोनों घर से चलते हैं।

बच्चों की तालीम व तरबियत के असली ज़िम्मेदार माँ-बाप ही हैं। बचपन में माँ-बाप उनको जिस रास्ते पर डाल देंगे और जो तरीक़ा भला या बुरा सिखा देंगे वही उनकी सारी ज़िन्दगी की बुनियाद बन जायेगा। बच्चे के दिल में ख़ुदा का ख़ौफ़, ख़ुदा की याद, ख़ुदा की मुहब्बत और आख़िरत की फ़िक्र, इस्लाम के हुक्मों के सीखने-सिखाने और उनके मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारने का जज़्बा पैदा हो जाने की पूरी-पूरी कोशिश करना लाज़िम है। उसको नेक आ़लिमों और हाफ़िज़ों की सोहबतों मे दीन की तालीम दिलाओ। क़ुरआन शरीफ़ हिफ़्ज़ कराओ। क़ुरआन व हदीस के मायने और मतलब समझने के लिए अ़रबी पढ़ाओ। उनको हराम से परहेज़ कराओ और दियानतदारी, हया-शर्म, सख़ावत, सब्र, शुक्र, बुर्दबारी, बन्दों के हुक़ूक़ की अदायगी और इसी तरह के दूसरे अच्छे अख़्लाक़ की तालीम करो।

बच्चों की तालीम और अदब सिखाना माली सदक़े से अफ़ज़ल है और अच्छे अदब से बढ़कर औलाद के लिए कोई अ़तीया नहीं

हदीसः (146) हज़रत जाबिर बिन समुरा रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि इनसान अपने बच्चे को अदब सिखाये तो यह बेशक इससे बेहतर है कि एक 'साअ़' (यह अ़रब में ग़ल्ला नापने का एक पैमाना होता था। एक साअ़ साढ़े तीन सैर का होता था) ग़ल्ला वग़ैरह सदक़ा करे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 423)

हदीसः (147) हज़रत अ़मर बिन सईद से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि किसी बाप ने अपनी औलाद को कोई ऐसी बख़्शिश नहीं दी जो अच्छे अदब से बढ़कर हो।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 423)

तशरीहः इन दोनों हदीसों में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने औलाद की तरबियत की तरफ़ ख़ुसूसी तवज्जोह दिलायी है। बात यह है कि बच्चे बिल्कुल कोरे काग़ज़ की तरह सादे होते हैं। अगर उनकी तरबियत न की जाये और इल्म व अ़मल से न सजाया जाये तो सिर्फ़ देखने में वे इनसान नज़र आते हैं और उनके अख़्लाक़ व आ़दतें वहशियाना और तौर-तरीक़े हैवानों जैसे हो जाते हैं।

औलाद की तालीम व तरबियत से ग़फ़लत करने वाले

बहुत-से लोगों को औलाद की तरबियत की तरफ़ बिल्कुल तवज्जोह नहीं। माँ-बाप अपने कामों में मशग़ूल रहते हैं और औलाद गली-कूचों में भटकती फिरती है। बच्चों के लिए पेट की रोटी और तन के कपड़ों का तो इन्तिज़ाम कर देते हैं लेकिन उनकी बातिनी परवरिश यानी अख़्लाक़ी तरबियत की तरफ़ बिल्कुल तवज्जोह नहीं देते। इनमें वे लोग भी हैं जिनके अपने माँ-बाप ने उनका नास खोया था, उन्हें पता ही नहीं कि तरबियत क्या चीज़ है, और बच्चों को क्या सिखायें और क्या समझायें। और इस ज़बरदस्त ग़फ़लत में उन लोगों का भी बड़ा हिस्सा है जो ख़ुद तो नमाज़ी हैं और कुछ अख़्लाक़ व आदाब से भी वाक़िफ़ हैं, लेकिन नौकरी या तिजारत में कुछ इस तरह अपने आपको फंसा दिया है कि बच्चों की तरफ़ तवज्जोह करने के लिए उनके पास गोया वक़्त ही नहीं, हालाँकि ज़्यादा कमाने की ज़रूरत औलाद ही के लिए होती है। जब ज़्यादा कमाने की वजह से ख़ुद औलाद ही के आमाल व अख़्लाक़ का ख़ून हो जाये तो ऐसा कमाना किस काम का?

बाज़ लोग ऐसे भी देखे गये हैं जो अच्छा-ख़ासा इल्म भी रखते हैं इस्लाह करने वाले (सुधारक) भी हैं और पीर भी हैं, दुनिया भर के लोगों को राह दिखाते हैं, सफ़र पर सफ़र करते रहते हैं, कभी यहाँ तक़रीर की कभी वहाँ तक़रीर की, कभी कोई रिसाला लिखा, कभी किताब लिखी, लेकिन औलाद की इस्लाह (सुधार) से बिल्कुल ग़ाफ़िल रहते हैं, हालाँकि अपने घर की ख़बर लेना सबसे बड़ी ज़िम्मेदारी है। औलाद की जानिब से जब चन्द साल ग़फ़लत बरत लेते हैं और उनकी उम्र दस-बारह साल हो जाती है तो अब उनको सही राह पर लगाना बहुत मुश्किल हो जाता है।

और बहुत-से लोग ऐसे भी हैं जिन्हें तवज्जोह तो है लेकिन वे औलाद को हक़ीक़ी इल्म और हक़ीक़ी अदब से बिल्कुल मेहरूम रखते हैं, यानी औलाद को इस्लाम नहीं सिखाते। बीस-बीस साल की औलाद हो जाती है जिन्हें कलिमा तक याद नहीं होता। ये लोग न नमाज़ जानते हैं न उसके फ़राइज़ न वाजिबात, न इस्लाम के अक़ीदे पहचानें, न दीन को जानें, इस क़िस्म के लड़कों और लड़कियों के माँ-बाप यूरोप के तौर-तरीक़े सब कुछ सिखाते हैं। कोट-पतलून पहनना बताते हैं, अपने हाथ से उनके गलों में टाई

बाँधते हैं। नाच-रंग के तरीक़े समझाते हैं, औरतें शादी-विवाह की रस्में बताती हैं, शिर्किया बातों की तालीम देती हैं, और इस तरह से माँ-बाप दोनों मिलकर बच्चों का ख़ून कर देते हैं। और इस सब पर यह कि उनको देख-देखकर ख़ुश होते हैं कि हमारा बच्चा और बच्ची मॉडर्न हैं, अंग्रेज़ बन रहे हैं, तरक़्क़ी याफ़्ता लोगों में शुमार होने लगे हैं, और यह नहीं सोचते कि इनकी आख़िरत बरबाद हो गयी, नेक आमाल से ख़ाली हैं, अच्छे अख़्लाक़ से क़ोरे हैं, इस्लामी तौर-तरीक़ों और आदाब से नावाक़िफ़ हैं, और अक़ीदे भी सही नहीं, हालाँकि सब जानते हैं कि मौत के बाद की हमेशा वाली ज़िन्दगी की बेहतरी और वहाँ की नजात सही अक़ीदों और सही आमाल पर ही निर्भर है।

सही अक़ीदे और सही आमाल और सही आदाब वे हैं जो नबी करीम हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने समझाये और अल्लाह की किताब क़ुरआन हकीम ने बतलाये। जो इनसे ख़ाली है, उसके लिए आख़िरत में अज़ाब ही अज़ाब है। दुनिया की चन्द दिन की झूठी बहार आख़िरत के हमेशा के अज़ाब के सामने कुछ हैसियत नहीं रखती। बहुत-से इस्लाम के दावेदार इस तरफ़ बिल्कुल तवज्जोह नहीं करते।

अदब के मायने और मतलब

अदब बहुत जामे (यानी मुकम्मल और बहुत सारे मायनों पर मुश्तमिल) कलिमा है। इनसानी ज़िन्दगी के तौर-तरीक़ को अदब कहा जाता है। ज़िन्दगी गुज़ारने में अल्लाह और बन्दों के हुक़ूक़ दोनों आते हैं। बन्दा अल्लाह तआला के बारे में जो अक़ीदे रखने पर मामूर है और अल्लाह के अहकाम पर चलने का जो ज़िम्मेदार बनाया गया है ये वे आदाब हैं जो बन्दे को अल्लाह के और अपने दरमियान सही ताल्लुक़ रखने के लिए ज़रूरी हैं। फ़राइज़ और वाजिबात, सुन्नतें और मुस्तहब चीज़ें वे उमूर हैं जिनके अन्जाम देने से अल्लाह के हुक़ूक़ की अदायगी होती है और मख़्लूक़ के साथ जो इनसान के ताल्लुक़ात होते हैं उनमें उन अहकाम का लिहाज़ रखना पड़ता है जो मख़्लूक़ को राहत पहुँचाने से मुताल्लिक़ हैं, उनमें भी वाजिबात हैं और मुस्तहब्बात हैं, और उनकी तफ़सील व तशरीह भी शरीअते मुहम्मदिया में बयान की गयी है।

ख़ुलासा यह कि लफ़्ज़ 'अदब' अल्लाह के हुक़ूक़ और बन्दों के हुक़ूक़ दोनों को शामिल है। यह जो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने

फ़रमाया कि अच्छे अदब से बढ़कर किसी बाप ने अपनी औलाद को कोई बख़्शिश नहीं दी। इसमें पूरे दीन की तालीम आ जाती है, क्योंकि दीन इस्लाम अच्छे अदब की मुकम्मल तशरीह (खुलासा और व्याख्या) है। बहुत-से लोग लफ़्ज़ 'अदब' के मशहूर मायने लेकर इसका रिवाजी मतलब ले लेते हैं और उन्होंने उठने बैठने के तरीक़ों तक ही अदब को सीमित समझ रखा है।

बहुत-से लोग सख़ी हैं मगर औलाद से ग़ाफ़िल हैं

हदीस में जो फ़रमाया कि इनसान अपने बच्चे को अदब सिखाये तो यह इससे बेहतर है कि एक 'साअ़' (यह अ़रब में ग़ल्ला नापने का एक पैमाना होता था। एक साअ़ साढ़े तीन सैर का होता था) ग़ल्ला वग़ैरह सदक़ा करे। इसमें एक अहम बात की तरफ़ तवज्जोह दिलायी गयी है वह यह कि सदक़ा-ख़ैरात अगरचे अपने आप में बहुत बड़ी इबादत है (अगर अल्लाह की रिज़ा के लिए हो)। लेकिन उसका मर्तबा अपनी औलाद की इस्लाह पर तवज्जोह देने से ज़्यादा नहीं है। बहुत-से लोगों को अल्लाह तआ़ला ने माल दिया है, उसमें से सदक़ा-ख़ैरात करते हैं और औलाद की तरफ़ से पूरी तरह ग़फ़लत बरतते हैं। ग़रीब-मिस्कीन आ रहे हैं, घर पर खा रहे हैं, ग़रीबों की रोटी बंधी हुई है, मदरसे और मस्जिदों में चन्दा जा रहा है, लेकिन औलाद बे-अदब बे-अख़्लाक़, बेदीन बल्कि बद्दीन बनती चली जा रही है। सदक़ा-ख़ैरात करने पर ख़ुश हैं, और ख़ुश होना भी चाहिये, लेकिन इससे बढ़कर अ़मल जो है जिसकी ज़िम्मेदारी डाली गयी है वह अपनी औलाद को अदब सिखाना है, यानी अल्लाह के रास्ते पर डालना है, इसके लिए फ़िक्रमन्द (चिन्तित) होना लाज़िमी चीज़ है। इस ग़फ़लत से नस्लें की नस्लें तबाह हो जाती हैं।

औलाद को अदब सिखाना सबसे बड़ा अ़तीया है

हदीस में अच्छे अदब को औलाद के हक़ में सबसे बड़ी बख़्शिश क़रार दिया है जिसकी वजह यह है कि अदब की वजह से इनसान में इनसानियत नमूदार होती है। अल्लाह के हुक़ूक़ को पहचानता है और बन्दों के हुक़ूक़ भी समझता है, और इसकी वजह से हक़ीक़ी इनसान बनता है। अगर औलाद को माल दे दिया, बंगला बनाकर दे दिया, धन-दौलत से नवाज़ दिया और ज़िन्दगी गुज़ारने के वे तरीक़े न बताये जिनसे अल्लाह राज़ी हो और मख़्लूक़

को राहत पहुँचे तो जो कुछ माल और दौलत औलाद को दिया जायेगा यह सब गुनाहों में और अल्लाह की नाफ़रमानियों में और माँ-बाप को तकलीफ़ देने में ख़र्च होगा। अदब से ख़ाली औलाद माँ-बाप को दुख देगी, ख़ुद उनके सीने पर मूंग दलेगी, जैसा कि ये सब चीज़ें आज ख़ूब स्पष्ट हैं। आये दिन का तजुर्बा होता रहता है।

ग़ैर-इस्लामी तौर-तरीक़े आदाब नहीं हैं

बहुत-से लोग औलाद को अदब सिखाते हैं लेकिन इस्लाम के दुश्मनों ने जो ज़िन्दगी के आदाब बता रखे हैं उन्हीं की नक़ल उतारने की कोशिश करते हैं। इस्लाम के ख़िलाफ़ जो चीज़ें हैं वे आदाब नहीं हैं, वे तो इनसानियत का ख़ून करने वाली चीज़ें हैं।

आज हम देख रहे हैं कि हमारे समाज में इस्लामी आदाब ख़त्म हो चुके हैं, शर्म व हया नापैद हो चुकी है, बड़ों की इज़्ज़त की कोई परवाह नहीं रही, हलाल व हराम का कोई ध्यान नहीं रहा। इन सब चीज़ों के नतीजे अपनी आँखों से देख रहे हैं, रिश्तेदार आपस में एक-दूसरे के ख़ून के प्यासे हैं, लड़कियाँ अग़वा हो रही हैं, बेबियाही लड़कियाँ माँ बन रही हैं, माँ-बाप को डाँट-डपट की जाती है बल्कि माल पर क़ब्ज़ा करने के लिए बाप को मौत के घाट उतारने के वाक़िआत सुने गये हैं, और तरह-तरह के ऐब ज़ड़ पकड़ चुके हैं, बेशर्मी इख़्तियार करके फूले नहीं समाते, ख़ुश हैं कि मैं मॉडर्न हो गया। मेरी औलाद ने यूरोप वालों का लिबास पहन लिया, अमेरिका वालों की नक़ल उतार ली। ऐसे लोग बुराई को बुराई नहीं समझते, उनको छोड़ने और छुड़ाने का तो ज़िक्र ही क्या है। अल्लाह तआ़ला उम्मते मुहम्मदिया पर रहम फ़रमाये और दीनी समझ दे। और इस्लामी अख़्लाक़ व आदाब से आरास्ता (सुसज्जित) होने की फ़िक्र नसीब फ़रमाये।

घर वालों और बाल-बच्चों को अल्लाह से डराते रहो

हदीसः (148) हज़रत मुआ़ज़ बिन जबल रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने बयान फ़रमाया कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मुझे दस बातों की नसीहत फ़रमायीः

(1) अल्लाह के साथ किसी चीज़ को शरीक न बना अगरचे तू क़त्ल कर दिया जाये और तुझे जला दिया जाये।

(2) अपने माँ-बाप की नाफ़रमानी हरगिज़ न करना अगरचे वे तुझे हुक्म दें कि अपने घर वालों और माल-दौलत को छोड़कर निकल जा।

(3) फ़र्ज़ नमाज़ हरगिज़ जान-बूझकर न छोड़, क्योंकि जिसने जान-बूझकर फ़र्ज़ नमाज़ छोड़ दी उससे अल्लाह का ज़िम्मा बरी हो गया।

(4) शराब हरगिज़ मत पी, क्योंकि वह हर बेहयाई की जड़ है।

(5) गुनाहों से बच क्योंकि गुनाह की वजह से अल्लाह की नाराज़गी नाज़िल हो जाती है।

(6) जिहाद के मैदान से मत भाग अगरचे दूसरे लोग (तेरे साथी) हलाक हो जायें।

(7) जब लोगों में (वबाई) मौत फैल जाये और तू वहाँ मौजूद हो तो वहाँ जमकर रहना (उस जगह को छोड़कर मत जाना)।

(8) जिनका ख़र्चा तुझपर लाज़िम है (बीवी-बच्चे वग़ैरह) उन पर अपना अच्छा माल ख़र्च करना।

(9) और उनको अदब सिखाने के लिए उनसे अपनी लाठी हटाकर मत रखना।

(10) और उनको (अल्लाह के अहकाम व क़वानीन) के बारे में डराते रहना। (मिश्कात शरीफ़ पेज 18)

तशरीहः इस हदीस में जिन बातों की नसीहत फ़रमायी है वे बहुत अहम हैं। वे इस क़ाबिल हैं कि उन्हें हर वक़्त ज़बान पर रखा जाए और उन्हें अ़मल के लिए दिल में जगह दी जाए। ये नसीहतें इस क़ाबिल हैं कि इन्हें सोने के पानी से लिखा जाए, तब भी इनका हक़ अदा न होगा। हमने नसीहत नम्बर 9 और नम्बर 10 के जोड़ से तालीम व तरबियत के तहत में इसको लिया है, हर मुसलमान पर लाज़िम है कि इन नसीहतों पर अ़मल करे।

पहली नसीहत

पहली नसीहत यह फ़रमायी कि अल्लाह तआ़ला के साथ किसी चीज़ को शरीक न बनाना, अगरचे तुझे क़त्ल कर दिया जाये या आग में डाल दिया जाए। इसमें शिर्क की और मुश्रिक (शिर्क करने वाले) की मज़म्मत और बुराई बयान की गयी है, और बताया गया है कि शिर्क से इस क़द्र परहेज़ लाज़िम

है कि अगर शिर्क से परहेज़ करने की वजह से क़त्ल किया जाने लगे या आग में डाला जाने लगे तब भी ज़बान से शिर्क का कोई कलिमा न निकाले और न शिर्क वाला अ़मल करे।

इसमें अफ़ज़ल और आला दर्जा इख़्तियार करने की तलक़ीन की गयी है। जान जाती है तो चली जाये लेकिन कुफ़्र व शिर्क का कलिमा किसी भी दबाव और ख़ौफ़ से न कहे, और इस बारे में किसी भी ताक़त के सामने न झुके, यह ईमान का ऊँचा मर्तबा है। अगरचे इस बात की भी इजाज़त दी गयी है कि जान जाने का वाक़ई ख़तरा हो तो सिर्फ़ ज़बान से कुफ़्र-शिर्क का कलिमा कहकर जान बचाये, लेकिन दिल से मोमिन रहे। दिल का एतिक़ाद और यक़ीन न बदले।

दूसरी नसीहत

दूसरी नसीहत यह फ़रमायी कि अपने माँ-बाप की नाफ़रमानी न कर, यानी ऐसा तरीक़ा इख़्तियार न करे जिससे उनको तकलीफ़ पहुँचे। औलाद पर वाजिब है कि माँ-बाप की फ़रमाँबरदारी करे। वे जो कुछ कहें उसको माने (बशर्ते कि गुनाह करने को न कहें, क्योंकि गुनाह करने में किसी की फ़रमाँबरदारी नहीं)। माँ-बाप की बात न मानना, उनको ज़बान या हाथ से तकलीफ़ देना, यह सब नाफ़रमानी में दाख़िल है, जिससे हदीस शरीफ़ में सख़्ती से मना फ़रमाया है।

हदीस शरीफ़ में यहाँ तक फ़रमा दिया कि अगर माँ-बाप यूँ कहें कि अपने घर-बार से निकल जा, तब भी उनकी बात मानने के लिए यहाँ तक तैयार रहना चाहिये। यह बात अलग है कि माँ-बाप ख़ुद ही कोई ऐसा हुक्म न देंगे जिससे उनकी औलाद को तकलीफ़ पहुँचे या बेटे की बीवी किसी तकलीफ़ में मुब्तला हो, या बेटी का शौहर किसी मुसीबत से दोचार हो।

तीसरी नसीहत

तीसरी नसीहत यह फ़रमायी कि फ़र्ज़ नमाज़ हरगिज़ न छोड़ना क्योंकि जिसने जान-बूझकर फ़र्ज़ नमाज़ छोड़ दी उससे अल्लाह तआ़ला का ज़िम्मा बरी हो गया। यानी नमाज़ की पाबन्दी करते हुए यह शख़्स अल्लाह के यहाँ इ़ज़्ज़त वाला था, सवाब का हक़दार था, अमन व अमान में था। फ़र्ज़ नमाज़

छोड़ने से अल्लाह की कोई ज़िम्मेदारी नहीं रही कि उसको अमन व अमान और इज़्ज़त से रखे और दुनिया की मुसीबतों और आख़िरत के अ़ज़ाब से बचाये। बहनो! देखो कितनी बड़ी बात है, फ़र्ज़ नमाज़ कभी न छोड़ना। न घर पर न सफ़र में, न दुख-दर्द में न बीमारी में, न ग़रीबी में न मालदारी में।

चौथी नसीहत

चौथी नसीहत यह फ़रमायी कि शराब हरगिज़ न पी, क्योंकि वह हर बेहयाई की जड़ है। जिस तरह से नमाज़ तमाम इबादतों की जड़ और असल है। जो शख़्स नमाज़ की पाबन्दी करता है वह बहुत-से गुनाहों से बच जाता है, और तरह-तरह की इबादतें नमाज़ की पाबन्दी की वजह से अदा होती रहती हैं, जैसे तसबीह, दुरूद, इस्तिग़फ़ार, तिलावत, नफ़्लें, दुआएँ। ये सब चीज़ें नमाज़ की बरकत से अ़मल में आती रहती हैं। और इनके अ़लावा बहुत-सी नेकियाँ नमाज़ के जोड़ और ताल्लुक़ से अदा हो जाती हैं। बिल्कुल इसके उलट (विपरीत) शराब है जो तमाम बुराइयों की जड़ है। जो शराब पी ले वह हर तरह की बेहूदगी, बेहयाई, बदमाशी और हैवानियत में मुब्तला हो जाता है। अ़क्ल इनसान को बुराइयों से रोकती है और शराब पीकर अ़क्ल पर पर्दा छा जाता है जिसकी वजह से नशे में इनसान हर वह हरकत कर गुज़रता है जिसकी इजाज़त न मज़हब देता है न इनसानियत देती है। एक हदीस में इरशाद है:

हदीसः शराब न पी, क्योंकि वह हर बुराई की कुंजी है।

सच फ़रमाया अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने, जो क़ौमें शराब पीती हैं उनकी हालत नज़रों के सामने है। ये लोग हर बुरे-से-बुरा गन्दा काम कर गुज़रते हैं। जो नाम के मुसलमान इस नापाक चीज़ के पीने को इख़्तियार कर लेते हैं वे भी यूरोप और अमेरिका के गन्दे लोगों की तरह बेहयाई और बेशर्मी में मुब्तला हो जाते हैं।

पाँचवीं नसीहत

पाँचवीं नसीहत यह फ़रमायी कि गुनाह मत करना, क्योंकि गुनाह की वजह से अल्लाह तआ़ला की नाराज़गी नाज़िल होती है। मतलब यह है कि जो इनसान ख़ुदा तआ़ला की फ़रमाँबरदारी में लगा रहे और गुनाहों से परहेज़

करता रहे उसे अल्लाह तआ़ला की ख़ुशनूदी और रज़ामन्दी हासिल होती है और अल्लाह तआ़ला उसे दुनिया की मुसीबतों और आख़िरत के अ़ज़ाब से बचाते हैं, और जैसे ही गुनाह कर लिया तो बस अल्लाह तआ़ला के गुस्से और अ़ज़ाब के नाज़िल होने का मुस्तहिक़ हो गया। गुनाह मुसीबत का सबब है, इसकी वजह से तरह-तरह की वबायें नाज़िल होती हैं। आजकल हमारा सारा समाज गुनाहों से भरा हुआ है, मर्द औरत बूढ़े जवान, हाकिम महकूम, अमीर ग़रीब सब गुनाहों में लतपत हैं। कोई कोई ही ऐसा आदमी है जिसके गुनाह कम हों वरना सब ही तरह-तरह के गुनाहों में मुब्तला हैं और अल्लाह के अ़ज़ाब को हर वक़्त दावत देते हैं, अल्लाह तआ़ला समझ दे।

और लुत्फ़ यह है कि सब लोग यह कहते हैं कि मुसीबतें और आफ़तें, ज़लज़ले सैलाब हमारे बुरे आमाल का नतीजा हैं, लेकिन इस इक़रार के बावजूद गुनाह छोड़ने को तैयार नहीं। मुसीबतें गुनाह के इक़रार से नहीं टलेंगी, गुनाह को छोड़ने से दूर होंगी। इस बारे में नाचीज़ का तफ़सीली रिसाला "हमारी मुसीबतों के असबाब और उनका इलाज" मुलाहज़ा फ़रमायें।

छठी नसीहत

छठी नसीहत यह फ़रमायी कि जिहाद के मैदान से मत भागना अगरचे दूसरे लोग यानी तेरे साथी हलाक हो जायें। जब किसी जगह दीन के दुश्मनों से मुक़ाबला हो तो जमकर जंग करना चाहिये, जो मुसलमानों की ख़ास इम्तियाज़ी शान है। बाज़ हालात में मैदान से चला जाना भी जायज़ है लेकिन बहुत-से हालात में ज़रूरी हो जाता है कि मैदान हरगिज़ न छोड़ा जाये। अगर एक शख़्स ही बाक़ी रह जाये तो वह अकेले ही लड़-लड़कर जान दे दे। इस हदीस में यही बात बतायी है, और क़ुरआन पाक की सूरः अनफ़ाल की आयत सोलह में भी इसके अहकाम बताए गए हैं। जिसका तर्जमा यह है:

तर्जुमाः और जो शख़्स उनसे इस मौक़े पर (यानी मुक़ाबले के वक़्त) पीठ फेरेगा, मगर हाँ! जो लड़ाई के लिए पैंतरा बदलता हो या अपनी जमाअ़त की तरफ़ पनाह लेने आता हो (वह इसमें दाख़िल नहीं, बाक़ी और जो कोई ऐसा करेगा) तो वह अल्लाह के ग़ज़ब में आ जायेगा और उसका ठिकाना दोज़ख़ होगा। और वह बहुत बुरी जगह है। (सूरः अनफ़ाल आयत 16)

इस सिलसिले की पूरी तफ़सील मसाइल की किताबों में बयान की गयी है।

सातवीं नसीहत

सातवीं नसीहत यह फ़रमायी कि जब किसी जगह ऐसी वबा फैली हुई हो जिससे मौतें हो रही हों तो वहाँ से किसी और जगह मत जाना बल्कि वहीं रहना। एक हदीस में इरशाद है कि:

"जब तुम्हें मालूम हो कि फ़लाँ राज्य या फ़लाँ स्थान में ताऊन है तो वहाँ मत जाओ। और जब किसी ऐसी जगह ताऊन फैल जाये जहाँ तुम पहले से हो तो ताऊन से भाग जाने की नीयत से वहाँ से न निकलो।

(बुख़ारी व मुस्लिम)

बड़े-बड़े आलिमों ने इसकी मस्लेहत यह बतायी है कि जिस जगह वबा फैली हुई हो, अगर सेहतमन्द (स्वस्थ) लोग वहाँ से भाग जायेंगे तो बीमारों की देखभाल और ख़िदमत और मरने वालों की तजहीज़ व तकफ़ीन यानी उनको नहलाने और कफ़न-दफ़न करने वाले और नमाज़े जनाज़ा अदा करने वाले न रहेंगे और फिर ज़िन्दा बीमारों और मुर्दा लाशों का बुरा हाल होगा। रहा यह ख़्याल कि जो लोग रह गये उन्हें भी वबाई बीमारी लग जायेगी तो इसके बारे में समझ लेना चाहिये कि ख़ुदा-ए-पाक की मर्ज़ी और इरादे के बग़ैर किसी को कोई बीमारी नहीं लग सकती, और न मौत आ सकती है। जब अल्लाह पाक की मर्ज़ी और इरादे के मुताबिक़ बीमारी लगना होगा या मौत आनी होगी तो कोई न बचा सकेगा। और यह जो फ़रमाया कि जिस जगह तुम्हें पता चल जाये कि वहाँ वबाई मर्ज़ है वहाँ न जाओ, इसमें भी बहुत बड़ी हिकमत व मस्लेहत है, क्योंकि वहाँ जाकर कोई शख़्स वबाई बीमारी में मुब्तला हो गया तो ख़्वाह-मख़्वाह यही ख़्याल होगा कि यहाँ आने की वजह से मर्ज़ लगा और अल्लाह पाक की क़ुदरत और लिखी तक़दीर की तरफ़ ज़ेहन नहीं जायेगा।

एक हदीस में है कि एक देहात के रहने वाले आदमी ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! (अगर बीमारी फैलकर दूसरों को नहीं लगती है तो) यह क्या बात है कि अच्छे-ख़ासे ऊँटों में ख़ुजली वाला ऊँट मिल जाता है तो ख़ुजली वाला ऊँट उनको भी ख़ुजली वाला बना देता है। हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व

सल्लम ने जवाब में फ़रमाया कि यह बताओ कि सबसे पहले ऊँट के जिस्म में जो खुजली पैदा हुई वह खुजली किसने लगायी? (बुख़ारी)

यानी जिस पाक ज़ात ने सबसे पहले ऊँट में खुजली लगा दी उसी की मर्ज़ी व इरादे से दूसरे ऊँटों को भी लग जाती है। इसी लिए इरशाद फ़रमाया कि जब किसी जगह ताऊन हो तो वहाँ न जाओ क्योंकि मर्ज़ पैदा होगा खुदा-ए-पाक कि मर्ज़ी और इरादे से, और तुम यह समझोगे कि ताऊन वालों के साथ रहने-सहने से यह मर्ज़ हमको भी लग गया। न वहाँ जाओगे और न ऐसे ग़लत ख़्याल में मुब्तला होगे।

आठवीं नसीहत

आठवीं नसीहत यह फ़रमायी कि अपने बीवी-बच्चों पर अपने अच्छे और उम्दा माल में से ख़र्च करो। इसमें खुसूसियत के साथ उन लोगों को नसीहत है जो बाल-बच्चों और घर वालों के ज़रूरी ख़र्चों में तंगी बरतते हैं। हराम माल तो हासिल करना ही हराम है लिहाज़ा उसको बाल-बच्चों पर ख़र्च करने का सवाल ही पैदा नहीं होता। जिसे अल्लाह पाक हलाल माल नसीब फ़रमाये उसको बीवी बच्चों में अच्छी तरह ख़र्च करे अलबत्ता फ़ुज़ुलख़र्ची से परहेज़ करे और गुनाहों में ख़र्च न करे।

बहुत-से लोग बच्चों की ख़ुशी के लिए गुड़िया और तसवीरें ख़रीद लाते हैं, और बाज़ लोग सब बीवी-बच्चों को लेजाकर सिनेमा दिखाते हैं, यह सब गुनाह है। बस अल्लाह की ही रिज़ा पेशेनज़र रहनी चाहिये। उसकी रज़ामन्दी की फ़िक्र में रहते हुए जो राज़ी हो जाये बेहतर है और जो नाराज़ हो जाये हमारे ज़िम्मे उसका राज़ी करना नहीं। हमारे ज़िम्मे सिर्फ़ अल्लाह को राज़ी करना है, जो ख़ालिक़ व मालिक है। उसी के फ़रमान से उसी के क़ानून के मुताबिक़ बीवी-बच्चों पर ख़र्च करना चाहिये।

नवीं नसीहत

नवीं नसीहत यह फ़रमायी कि अपने घर वालों को अदब सिखाने में कोताही न करना और लाठी उठाकर मत रख देना जिसकी वजह से वे मुत्मइन होकर अल्लाह के अहकाम को भुला बैठें। मक़सद यह है कि अपने घर वालों को अल्लाह तआला के अहकाम पर लगाने की हर वक़्त फ़िक्र

रखो। दीन के मामले में उनका ख़्याल रखना उनको गवारा हो या नागवार, नमाज़ पाबन्दी से पढ़ावओ और रमज़ान के रोज़े रखवाओ, हराम कामों से बचाओ, गुनाहों से परहेज़ कराओ, अख़्लाक़ व आदाब सिखाओ। इस बारे में मारपीट करनी पड़े तो इससे भी पीछे न रहो। उनके ज़ेहन में यह बात रहनी चाहिये कि अगर हमने दीन के ख़िलाफ़ काम किया तो पिटाई होगी। मक़सद यह नहीं कि मार ही बजाते रहा करो बल्कि मक़सद यह है कि दीन पर डालने से ग़ाफ़िल न रहो। और घर वालों को दीन पर चलाना अपनी ज़िम्मेदारी समझो। अगर ज़रा-सी भी ग़फ़लत करोगे तो वे दिलेर हो जायेंगे। जब नाफ़रमानी पर उतर आयेंगे तो कोई बात नहीं मानेंगे।

बहुत-से लोग दुनिया के काम अपने घर वालों और बाल-बच्चों से बड़ी सख़्ती से लेते हैं। उनसे दुनिया का कोई मामूली नुक़सान भी हो जाये तो सख़्त धर-पकड़ करते हैं और मारपीट से भी नहीं चूकते, लेकिन दीनी मामलात में बिल्कुल ऐसे हो जाते हैं जैसे उनको साँप सूँघ गया और उन्हें कुछ पता नहीं है कि घर में क्या हो रहा है।

बहुत-से लोग अपनी नमाज़ मस्जिद में जाकर पढ़ने का एहतिमाम कर लेते हैं मगर घर में किसने नमाज़ पढ़ी कौन सोता रह गया इसकी कोई फ़िक्र नहीं करते, यह बड़ी नादानी और ग़फ़लत की बात है। दुनिया वाले जिन चीज़ों को अदब-तहज़ीब समझते हैं अगरचे वे गुनाह ही हों बाज़ लोग अपनी औलाद को उन चीज़ों को सिखाने में बहुत आगे-आगे होते हैं, लेकिन सबसे बड़ा अदब जो इनसान में होना चाहिये कि अपने ख़ालिक़ व मालिक से ग़ाफ़िल न हो इसकी तरफ़ ज़रा भी तवज्जोह नहीं देते, जिसकी वजह यह है कि समाज में सबसे ज़्यादा कमज़ोर दीन ही है और नज़ला कमज़ोर अंग ही पर गिरता है। बच्चों को अंग्रेज़ी पढ़ाते हैं, यूरोप और अमेरिका के तर्ज़ पर ज़िन्दगी गुज़ारने के तौर-तरीक़े सिखाते हैं, कोट-पतलून पहनने और टाई लगाने का ढंग पूरी तवज्जोह से बताते हैं, लेकिन बीस साल की औलाद हो जाती है उसे **सुब्हानकल्लाहुम्-म** तक भी याद नहीं होता, यह अपने नफ़्स पर भी ज़ुल्म है और अपने बाल-बच्चों पर भी। अल्लाह तआ़ला हमें उन चीज़ों पर चलाये जिनसे वह ख़ुश है। आमीन।

दसवीं नसीहत

दसवीं नसीहत यह फ़रमायी कि अपने घर वालों और बाल-बच्चों को अल्लाह के अहकाम और क़ानूनों के बारे में डराते रहो। यह नवीं नसीहत ही का हिस्सा है और गोया उसी को पूरा करने के लिए एक टुकड़ा है। मतलब यह है कि सिर्फ़ डंडे ही के ज़ोर से काम न चलाओ, इसमें तो घर वाले सिर्फ़ तुमसे डरेंगे। फ़िक्र यह करो कि ख़ुदा से डरें, उनके दिल में ख़ुदा-ए-पाक का ख़ौफ़ बैठाने की कोशिश करो। अगर ख़ुदा का ख़ौफ़ बीवी-बच्चों के दिल में बैठा दिया तो फ़राइज़ की अदायगी में और गुनाह के छोड़ने में और नवाफ़िल व अज़कार में लगने में उन्हें तकलीफ़ महसूस न होगी। जिसके सामने क़ब्र के हालात बयान होते रहते हों, मैदाने हश्र की नफ़्सी-नफ़्सी का आ़लम बयान किया जाता हो, दोज़ख़ के सख़्त अज़ाब की कैफ़ियत सुनायी जाती हो, वह शख़्स कैसे गुनाहों की जुर्रत करेगा? और क्योंकर ख़ुदा-ए-पाक की रिज़ा का और हमेशा के आराम व राहत की जगह यानी जन्नत का तालिब न होगा?

इन नसीहतों में आख़िरी दो नसीहतें ऐसी हैं कि इनकी तरफ़ औ़रतों को ज़्यादा तवज्जोह देना लाज़िम है। क्योंकि मर्द उमूमन कमाने के लिए निकल जाते हैं। बाज़ लोग तो महीनों बल्कि बरसों में नौकरी से वापस आते हैं। उस ज़माने में बच्चों की देखभाल और उनके दीन व ईमान की निगरानी माँओं ही के ज़िम्मे होती है, और यह तो उमूमन रोज़ाना होता है कि मर्द घँटों के लिए ड्यूटी पर चले जाते हैं, पीछे बच्चे माँओं के हवाले रहते हैं और सात आठ साल तक बच्चे माँ ही के साथ चिमटे रहते हैं। माँ अगर इस ज़माने में अपना रंग-ढंग दीनी बनाये रहे और बच्चों को दीन के अहकाम पर डाले, नमाज़-रोज़ा सिखाये और बताये, कुफ़्र व शिर्क और बिद्अ़त और ख़ुदा-ए-पाक की नाफ़रमानी से बचाये और दुनिया व आख़िरत में जो उसके नुक़सानात हैं उनसे आगाह करती रहे तो पूरी नस्ल का उठान नेक हो, क्योंकि सबसे पहला मदरसा माँ की गोद है। अफ़सोस है कि आजकल की माएँ अपने बच्चों का नास ख़ुद करती हैं, उनको दीन पर क्या लगातीं बेदीनी पर लगा देती हैं। इसमें बच्चों पर भी ज़ुल्म होता है और अपने आप पर भी।

औ़रतें अपनी औलाद के लिए ज़्यादा पैसे वाली नौकरी चाहती हैं। इस सिलसिले में हराम व हलाल का भी ख़्याल नहीं करतीं और औलाद को यूरोप

व अमेरिका के बेशर्म लोगों की पौशाक में देखना चाहती हैं, और दुनिया को उनकी ज़िन्दगी का मकसद बना देती हैं।

यह मुसलमान औरत का तरीका नहीं। अगर बच्चे ज़्यादा पैसे वाली नौकरी में लग गये और बंगले-कोठी बनाकर रहने लगे और नमाज़ें ग़ारत करने और ज़कातें बरबाद करने की वजह से दोज़ख़ में चले गये जिसकी आग दुनिया की इस आग से उन्हत्तर (79) दर्जे ज़्यादा गर्म है तो इस पैसे कोठी-बंगले से क्या नफ़ा हुआ? बातें तो हमारी ख़ुश्क हैं और पुरानी हैं मगर हैं सही, जो बुरा मानेगा अपना बुरा मानेगा।

मुसलमान औरतों से

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बातें

* औरतों के लिए *

तलाक़ व इद्दत का बयान

लेखक

हज़रत मौलाना आशिक़ इलाही साहिब बुलन्द शहरी

रहमतुल्लाहि अलैहि

अनुवादक: मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा. लि.)

422, मटिया महल, उर्दू मार्किट, जामा मस्जिद

देहली-110006

तलाक़ व इद्दत का बयान

बिना मजबूरी के तलाक़ का सवाल उठाने वाली पर जन्नत हराम है

हदीसः (149) हज़रत सोबान रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हज़रत रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो औ़रत बग़ैर किसी मजबूरी के अपने शौहर से तलाक़ का सवाल करे उसपर जन्नत की ख़ुशबू हराम है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 283 जिल्द 2)

ख़ुला का मुतालबा करने वाली औ़रतें मुनाफ़िक़ हैं

हदीसः हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि सरवरे दो जहाँ सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि शौहरों से अलगाव चाहने वाली और ख़ुला (1) का मुतालबा करने वाली औ़रतें निफ़ाक़ वाली (दोग़ली) औ़रतें हैं। (मिश्कात शरीफ़ पेज 282)

तशरीहः अल्लाह तआ़ला ने मर्दों को औ़रतों की तरफ़ और औ़रतों को मर्दों की तरफ़ मोहताज बनाया है। फ़ितरी तौर पर विवाह-शादी करने पर मजबूर हैं। शरीअ़ते पाक ने इनसान के फ़ितरी तक़ाज़ों को पामाल नहीं किया बल्कि उनकी रियायत रखी है। इस्लाम ने ज़िना को हराम क़रार दिया है इसलिए निकाह करना शरअ़न् पसन्दीदा और अच्छा ही नहीं बल्कि बाज़ हालात में वाजिब है। किस औ़रत का किस मर्द से निकाह हो सकता है और किससे नहीं हो सकता है, शरीअ़त ने इसकी तफ़सील बता दी है, जिसका ज़िक्र पहले हो चुका है।

निकाह ज़िन्दगी भर निभाने के लिए होता है

इन तफ़सीलात को सामने रखकर जब किसी मुसलमान मर्द का किसी मुसलमान औ़रत से निकाह हो जाये तो उसके बाद ज़िन्दगी भर एक-दूसरे को

(1) ख़ुला का मतलब है कि औ़रत अपने मेहर, रक़म या किसी और चीज़ के मुआ़वज़े में शौहर से तलाक़ का मुतालबा करे।

चाहने और निभाने की कोशिश करनी चाहिये। कभी-कभार फ़रीक़ान में से किसी को तबई तौर पर एक-दूसरे की जानिब से कुछ नागवारी हो जाये तो नफ़्स को समझा-बुझाकर दरगुज़र कर देना निभाने के लिए एक ज़रूरी बात है। मर्दों को हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कई तरह से समझाया है और निभाने का हुक्म दिया है। एक हदीस में इरशाद है किः

हदीसः कोई मर्द किसी मोमिन औ़रत से बुग़्ज़ न रखे, क्योंकि अगर उसकी कोई ख़सलत नागवार होगी तो दूसरी ख़सलत पसन्द आ जायेगी।

और औ़रतों को तालीम दी है कि तलाक़ का सवाल न उठायें निभाने की कोशिश करें। जब कहीं दो-चार बरतन होते हैं तो आपस में खड़कते ज़रूर हैं। ऐसे ही जब दो आदमी एक साथ रहते हैं तो कभी कुछ न कुछ नागवारी की सूरत सामने आ ही जाती है। अगर सब्र न किया जाये और नागवारी को सहने का मिज़ाज न बनाया जाये तो आपस में निबाह नहीं हो सकता, और आये दिन छूट-छुटाव का सवाल होता रहेगा। फिर तलाक़ के बाद बच्चे तबाह होंगे और उजड़ जायेंगे। हर एक को अपने लिए अलग-अलग जोड़ा तलाश करना होगा। बच्चे माँ से बाप से या दोनों से अलग होंगे। लिहाज़ा जहाँ तक मुमकिन हो ज़िन्दगी भर निबाह करते हुए चलते रहना चाहिये।

बहुत-सी औ़रतें मिज़ाज की तेज़ होती हैं, बात-बात में मर्द से लड़ पड़ती हैं। जो हुक़ूक़ वाजिब नहीं उनका शौहर से मुतालबा करती हैं, वह पूरा नहीं करता तो मुँह फुलाती हैं और अकड़ कर बैठ जाती हैं। शौहर की नाशुक्री करती हैं, शौहर कोई बात कहे तो तलाक़ की बात सामने ले आती हैं। औ़रतों के इसी मिज़ाज को सामने रखते हुए शरीअ़त ने औ़रत को तलाक़ देने का इख़्तियार नहीं दिया वरना एक-एक दिन में कई बार तलाक़ दिया करतीं। निकाह तलाक़ देने के लिए नहीं होता, ज़िन्दगी भर निभाने के लिए होता है। मर्द अगर तलाक़ दे दे तो तलाक़ हो जाती है लेकिन तलाक़ देना इस्लाम के मिज़ाज के ख़िलाफ़ है।

तलाक़ नफ़रत की चीज़ है

इसी लिए एक हदीस शरीफ़ में आया है किः

"हलाल चीज़ों में अल्लाह तआ़ला के नज़दीक सबसे ज़्यादा बुग़्ज़ और नफ़रत की चीज़ तलाक़ है।"

जब निभाना इस्लाम का मिज़ाज ठहरा तो औरत की जानिब से तलाक़ का सवाल उठाना सरासर ग़ैर-इस्लामी फ़ेल होगा। इसी लिए यह इरशाद फ़रमाया कि तलाक़ या खुला का मुतालबा करने वाली औरतें मुनाफ़िक़ हैं।

इस्लाम के तक़ाज़ों पर न चलना और इस्लाम का मुद्दई होना यह दोग़लेपन की बात है। मुनाफ़िक़ दोग़ला होता है, अन्दर कुछ ज़ाहिर कुछ, और सबसे बड़ा मुनाफ़िक़ वह है जो दिल से मुनाफ़िक़ हो और ज़बान से इस्लाम का मुद्दई हो। लेकिन जो शख़्स इस्लाम का दावेदार है और दिल से भी दीन इस्लाम के हक़ होने का अ़क़ीदा रखता है लेकिन अ़मल में ईमानी तक़ाज़ों पर पूरा नहीं उतरता उसे अ़मल के एतिबार से मुनाफ़िक़ कहा गया है। हदीस शरीफ़ में बहुत-सी ख़सलतों को मुनाफ़क़त की ख़सलत बताया है। एक हदीस में इरशाद है कि जिसमें चार ख़सलतें होंगी वह ख़ालिस मुनाफ़िक़ होगा और जिसमें इनमें से एक ख़सलत होगी तो उसके बारे में कहा जायेगा कि उसमें मुनाफ़िक़ की एक ख़सलत है, जब तक छोड़ न दे। वे चार ख़सलतें ये हैं:

(1) जब उसके पास अमानत रखी जाये तो ख़ियानत करे।

(2) जब बात करे तो झूठ बोले।

(3) जब अ़हद करे तो उसको पूरा न करे, यानी उसके ख़िलाफ़ करे।

(4) जब झगड़ा करे तो गालियाँ दे। (बुख़ारी व मुस्लिम)

चूंकि यह शख़्स अ़मल के एतिबार से ईमानी तक़ाज़ों को पामाल करता है और इसका अ़मल ईमानी मुतालबात के ख़िलाफ़ है इसलिए इसे मुनाफ़िक़ कहा गया। इसी तरह ईमान का दावा करते हुए औरत की जानिब से तलाक़ के सवाल को मुनाफ़क़त बताया क्योंकि यह भी अ़मल के एतिबार से मुनाफ़क़त (यानी दोग़लापन) है।

अलबत्ता बाज़ मर्तबा ऐसी मुश्किलें पैदा हो जाती हैं कि निबाह के रास्ते ही ख़त्म हो जाते हैं, अगरचे ऐसा कम होता है। लेकिन इस्लाम ने इसकी भी रियायत रखी है, ऐसे हालात में मर्द अगर तलाक़ दे दे या औरत माँगे तो उसके लिए ये वईदें न होंगी। इसी लिए हदीस नम्बर 149 में फ़रमाया कि जो औरत बग़ैर किसी मजबूरी के तलाक़ का सवाल करे तो उस पर जन्नत की ख़ुशबू हराम है। मजबूरी की बहुत-सी सूरतें हैं- जैसे यह कि शौहर दीन पर चलने नहीं देता, गुनाहों पर मजबूर करता है, बेजा मार-पिटाई करता है या बीवी के जो हुक़ूक़ हैं उनको अदा करने से बिल्कुल ही माज़ूर है और

उसके ठीक होने की कोई उम्मीद नहीं। इन हालात में शौहर से तलाक़ लेने या ख़ुला करने या बाज़ सूरतों में मुसलमान हाकिम से निकाह ख़त्म कराने की गुन्जाइश है।

बाज़ औरतें ज़िद करके तलाक़ लेती हैं

आजकल औरतें शौहर के साथ निबाह करने का मिज़ाज गोया ख़त्म कर चुकी हैं। जहाँ थोड़ी-सी अनबन हुई शौहर से कहा कि अगर तू असल माँ-बाप का जना है तो मुझे अभी तलाक़ दे दे। हालाँकि औरत का काम यह था कि बदले हुए तेवर देखती हुई हट जाती, ज़बान बन्द कर लेती ताकि वह गुस्से में आकर तलाक़ का लफ़्ज़ मुँह से न निकालता। जब शौहर औरत के मुतालबे पर तलाक़ के अलफ़ाज़ निकाल देता है तो जहालत की वजह से वह भी तलाक़ की मशीनगन चालू कर देता है, तीन से कम पर तो ख़ामोश होता ही नहीं।

तलाक़ ज़बान से निकलते ही पड़ जाती है

तलाक़ के बाद जब दोनों फ़रीक़ का गुस्सा ठंडा होता है तो पछताते हैं और कहते हैं कि मैंने तलाक़ की नीयत से तलाक़ नहीं दी, और बहुत ज़्यादा गुस्से में था या औरत हमल (गर्भ) से थी, या उसका नापाकी का ज़माना था। और यह बात इसलिए ज़िक्र करते हैं कि उनके नज़दीक गुस्से या गर्भ की हालत में या माहवारी की हालत में तलाक़ नहीं होती, हालाँकि तलाक़ का ताल्लुक़ ज़बान से है। जब ज़बान से तलाक़ निकल गयी तो तलाक़ हो जायेगी। शौहर गुस्से में हो या रज़ामन्दी में, और औरत हमल से हो या नापाकी के दिनों में हो, बहरहाल तलाक़ देने से तलाक़ वाक़े हो जायेगी।

मज़ाक़ में भी तलाक़ वाक़े हो जाती है

तलाक़ वह चीज़ है कि जो शौहर की ज़बान से मज़ाक़ में निकल जाने से भी असर कर जाती है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है कि:

हदीसः तीन चीज़ें ऐसी हैं जिनमें असली नीयत और मज़ाक़ दोनों बराबर हैं। यानी बिना नीयत के मज़ाक़ में ज़बान से निकालने से भी काम कर जाती हैं: 1. निकाह 2. तलाक़ 3. रुजू कर लेना (तलाक़े रजई के बाद)।

(अबू दाऊद)

जब तलाक़ दे बैठते हैं और औरतें शौहर को गुस्सा दिलाकर तलाक़ ले छोड़ती हैं तो मुफ़्ती के पास सवाल लेकर आते हैं और मुफ़्ती-को मोम करने के लिए कहते हैं कि मियाँ-बीवी एक-दूसरे पर आशिक़ हैं, बीवी ख़ुदकुशी कर लेगी, अगर उसी शौहर के पास रहने का रास्ता न निकाला तो बच्चे बरबाद होंगे, और यह तकलीफ़ होगी और वह मुसीबत आयेगी। देखिये मौलवी साहिब! कोई रास्ता निकालिये। भला मौलवी क्या रास्ता निकाल सकता है। मौलवी दीन इस्लाम और अल्लाह का क़ानून बताने वाले हैं, क़ानून बनाने वाले नहीं, क़ानून अल्लाह पाक का है।

रजई तलाक़

आपस के निबाह का कोई रास्ता न रहा हो और तलाक़ देनी ही हो तो ऐसा करे कि जिस ज़माने में औरत पाक हो यानी माहवारी से न हो, उस ज़माने में एक तलाक़ साफ़ लफ़्ज़ों में दे दे। इस तरह से एक रजई तलाक़ हो जायेगी। जिसका मतलब यह है कि इद्दत के अन्दर-अन्दर रुजू करने यानी लौटाने का हक़ रहता है। एक तलाक़ रजई देने के बाद फिर चाहे तो रुजू कर ले और रुजू के लिए औरत की रज़ामन्दी भी ज़रूरी नहीं है। औरत चाहे न चाहे मर्द रुजू कर सकता है। ज़बान से सिर्फ़ यह कह देने से कि मैंने अपनी बीवी को लौटा लिया, इससे रुजू सही हो जाता है।

अगर दो गवाहों के सामने ऐसा कहे तो बेहतर है ताकि रुजू करने न करने के बारे में इख़्तिलाफ़ हो जाये तो गवाहों के ज़रिये रुजू का सुबूत दिया जा सके।

अगर किसी ने तलाक़ रजई के बाद इद्दत के अन्दर कोई ऐसा काम कर लिया जो मियाँ-बीवी के दरमियान होता है तो इस तरह भी रुजू हो जायेगा। इसको "रुजू बिल-फ़ेल" कहते हैं। और ज़बान से लौटाने को "रुजू बिल-क़ौल" कहते हैं।

इद्दत के बाद रजई तलाक़ बाइन हो जाती है

अगर किसी ने तलाक़ रजई देने के बाद इद्दत के अन्दर रुजू न किया तो यही 'रजई तलाक़' 'बाइन तलाक़' हो जायेगी। बाइन तलाक़ में रुजू का हक़ नहीं रहता, हाँ! अगर दोनों फिर मियाँ-बीवी बनना चाहें तो आपस की रज़ामन्दी से दोबारा निकाह कर सकते हैं। चाहिये तो यही कि ज़रूरत के

वक़्त सिर्फ़ एक तलाक़ से काम चला लिया जाये। अगर तलाक़ के बाद पछतावा हो तो इद्दत के अन्दर रुजू करने का हक़ बाक़ी होने की वजह से शौहर रुजू कर सकेगा। और अगर जल्दी होश न आया और इद्दत गुज़र गयी तो आपस में दोबारा निकाह हो सकेगा।

शरीअ़त की आसानी

शरीअ़त ने कितनी आसानी रखी है। अव्वल तो तलाक़ देने ही से मना फ़रमाया, फिर अगर कोई तलाक़ देना ज़रूरी ही समझे तो उसे बताया कि एक तलाक़ औरत को पाकी के ज़माने में दे दे, इसमें गुस्सा ठंडा होने और सोच-विचार करने का ख़ूब अच्छी तरह मौक़ा मिल जाता है। अगर किसी ने साफ़ लफ़्ज़ों में एक साथ दो तलाक़ें दे दीं तो भी रजई होंगी। और अगर ग़ैर-हामिला औरत को पाकी के ज़माने में एक तलाक़ साफ़ लफ़्ज़ों में दी और रुजू न किया और उसके बाद जो पाकी का ज़माना आये उसमें एक तलाक़ दे दी तो 'तलाक़े मुग़ल्लज़ा' होगी। तलाक़ की इद्दत तीन हैज़ है और हैज़ (माहवारी) न आता हो (बचपन या बुढ़ापे की वजह से) तो इद्दत तीन महीने है। और हामिला (गर्भवती) हो तो हमल ख़त्म होने पर इद्दत ख़त्म होगी। इद्दत के अन्दर-अन्दर जो तलाक़ें शौहर देगा वे पड़ती रहेंगी।

एक वक़्त में तीन तलाक़

लोग अपनी जान पर ज़्यादती करते हैं कि एक साथ तलाक़ की तीनों गोलियाँ छोड़ देते हैं। शरीअ़त तलाक़ ही की मुख़ालिफ़ है फिर वह एक साथ तीनों तलाक़ देने की कैसे इजाज़त दे सकती है। लेकिन अगर कोई शख़्स एक साथ तीन तलाक़ दे ही दे तो तीनों तलाक़ें वाक़े हो जाती हैं। इसी तरह अगर कोई शख़्स इद्दत गुज़रने से पहले मुख़्तलिफ़ वक़्तों में तीन तलाक़ें दे दे या हर पाकी के ज़माने में एक तलाक़ दिया करे तो इस तरह से तीन तलाक़ें पड़ जाती हैं। तीन तलाक़ों के बाद रुजू करने का हक़ नहीं रहता, बल्कि आपस की रज़ामन्दी से दोबारा निकाह भी नहीं हो सकता। तीन तलाक़ पाने वाली औरत इस तलाक़ देने वाले शौहर के निकाह में दोबारा उसी सूरत में जा सकती है कि इद्दत गुज़ार कर किसी दूसरे मुसलमान से उसका निकाह हो। फिर वह उससे मियाँ-बीवी वाला काम करने के बाद तलाक़ दे दे या मर जाये, उसके बाद इद्दत गुज़ार कर पहले शौहर से निकाह हो सकता है। इसके

"हलाला" कहते हैं। इसकी कुछ और तफ़सील इन्शा-अल्लाह आईन्दा आयेगी।

तीन तलाक़ों के बारे में चारों इमामों का मज़हब

बाज़ लोग यह समझते हैं कि एक साथ तीन तलाक़ें देने से एक ही तलाक़ मानी जाती है, और रुजू का हक़ बाक़ी रहता है और इसे हज़रत इमामा शाफ़ई रह० का मज़हब बताते हैं यह बिल्कुल ग़लत है। चारों इमामों का मज़हब यह है कि एक मजलिस में तीन तलाक़ दे या अलग-अलग करके हर पाकी के ज़माने में एक तलाक़ दे, बहरहाल तीनों तलाक़ें वाक़े हो जाती हैं और रुजू करने का हक़ ख़त्म हो जाता है, और उसके बाद बग़ैर हलाले के मियाँ-बीवी दोनों का निकाह भी नहीं हो सकता।

फ़ायदाः एक या दो रजई तलाक़ देकर अगर इद्दत के अन्दर रुजू कर लिया तो इस तरह से बीवी बनाकर रखना तो जायज़ हो जायेगा मगर तलाक़ ख़त्म न होगी, क्योंकि अगर कभी एक के बाद दो तलाक़ें दे दीं या दो के बाद एक तलाक़ दे दी तो पहली तलाक़ हिसाब में लगकर तीनों तलाक़ें मिलकर मुग़ल्लज़ा तलाक़ हो जायेंगी, और जो तीन तलाक़ों का हुक्म है वही लागू हो जायेगा, ख़ूब समझ लो। वल्लाहु अअ्लम

तीन तलाक़ के बाद हलाले के बग़ैर दोबारा निकाह नहीं हो सकता

हदीसः (150) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि रिफ़ाआ क़रज़ी की (पहली) बीवी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास आयी और अर्ज़ कियाः मैं (पहले) रिफ़ाआ के पास थी (यानी उसके निकाह में थी) उन्होंने मुझे पक्की तलाक़ दे दी (यानी तीन तलाक़ देकर अलग कर दिया, उनकी इद्दत गुज़रने के बाद) मैंने अब्दुर्रहमान बिन ज़ुबैर रज़ि० से निकाह किया (उनको शादी के हुक़ूक़ अदा करने के क़ाबिल न पाया) उनके पास ऐसी चीज़ है जैसे कपड़े का पल्लू। आँ हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उक्त ख़ातून की बात सुनकर सवाल फ़रमाया क्या तुम यह चाहती हो कि (उससे तलाक़ लेकर इद्दत गुज़ारने के बाद) रिफ़ाआ से दोबारा निकाह कर लो? उन्होंने अर्ज़ किया जी हाँ! मैं यही चाहती हूँ। आपने फ़रमाया नहीं! (ऐसा नहीं हो सकता, रिफ़ाआ के निकाह में दोबारा जाने का कोई रास्ता

नहीं) जब तक कि तुम इस दूसरे शौहर से थोड़ी लज़्ज़त हासिल न कर लो और वह तुम से थोड़ी लज़्ज़त हासिल न कर ले। (बुख़ारी व मुस्लिम)

तशरीहः पहले अर्ज़ किया जा चुका है कि मर्द को तीन तलाक़ें देने का इख़्तियार है, लेकिन तीन तलाक़ देना बेहतर नहीं। अगर कोई ऐसी सूरत बन जाये कि निबाह का कोई रास्ता ही न रहे तो औरत के पाकी के ज़माने में एक तलाक़ देकर छोड़ दे। अगर पछतावा हो तो इद्दत के अन्दर रुजू कर ले। अगर इद्दत के अन्दर रुजू न किया तो यह रजई तलाक़ 'बाइन' हो जायेगी। उसके बाद होश आ जाये तो आपस में आपसी रज़ामन्दी से दोबारा नये मेहर पर निकाह कर लें। यह ऐसी बात है कि जिस पर अमल करने से दिक़्क़त और मुसीबत पेश नहीं आयेगी। लेकिन इसके विपरीत लोग यह करते हैं कि एक ही वक़्त में एक ज़बान में और एक मजलिस में तीन तलाक़ें दे डालते हैं, ऐसा करने से शरअ़न तीनों तलाक़ें वाक़े हो जाती हैं और रुजू का रास्ता बिल्कुल ख़त्म हो जाता है। तीन तलाक़ों के बाद आपस में बग़ैर हलाले के दोबारा निकाह भी नहीं हो सकता, लिहाज़ा मर्द को चाहिये कि और किसी मुसलमान औरत से निकाह कर ले जिससे निबाह हो सके, और औरत किसी दूसरे मुसलमान से निकाह कर ले, जिसके साथ गुज़ारे की सूरत बन सके। जब तीन तलाक़ मिलने वाली औरत ने इद्दत गुज़ार कर किसी दूसरे मर्द से निकाह कर लिया और उस शौहर ने मियाँ-बीवी वाला काम भी कर लिया, फिर तलाक़ दे दी या वफ़ात पा गया तो इद्दत गुज़ार कर पहले शौहर से दोबारा निकाह हो सकता है। क़ुरआन मजीद में फ़रमाया है:

فَإِنْ طَلَّقَهَا فَلَا تَحِلُّ لَهُ مِنْ بَعْدُ حَتّٰى تَنْكِحَ زَوْجًا غَيْرَهُ

यानी अगर दूसरे शौहर से सिर्फ़ निकाह हो जाए और निकाह करके तलाक़ दे दे या मर जाये तो पहले शौहर के लिए हलाल न होगी। तीन तलाक़ों के बाद पहले शौहर के लिए हलाल होने की शर्त यह है कि दूसरा शौहर उस औरत के साथ मियाँ-बीवी वाला ख़ास काम भी कर ले। उसके बाद तलाक़ दे दे या वफ़ात पा जाए और इद्दत भी गुज़र जाये। इसी शर्त को हज़रत आयशा सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु अन्हा की इस रिवायत में बयान किया गया है जिसमें हज़रत रिफ़ाआ रज़ि० और उनकी बीवी का क़िस्सा ज़िक्र है।

इसका यह मतलब नहीं है कि औरत या मर्द को यह तरग़ीब दी जा रही

है कि किसी मुसलमान से चाहे-अनचाहे ज़रूर ही उस औरत का निकाह किया जाये, फिर उससे तलाक़ ली जाए। बल्कि बताया यह गया है कि दूसरे मर्द से निकाह होकर मियाँ-बीवी वाला काम हो जाने के बाद अगर तलाक़ हो जाये या वह मर जाये तो आपस की रज़ामन्दी से पहले शौहर से दोबारा निकाह हो सकता है। इसके बग़ैर दोबारा निकाह की सूरत नहीं है। चूँकि मर्द ने तीन तलाक़ देकर शरीअ़त के क़ानून की ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) की है इसलिए उसी औरत के दोबारा हासिल होने के लिए बतौर सज़ा यह शर्त लागू की है। इस शर्त में जो तरकीब और तफ़सील ज़िक्र की गयी है उसको "हलाला" कहते हैं।

उमूमन ऐसा होता है कि जब कोई शख़्स तीन तलाक़ें देकर पछताता है और मुफ़्ती से मालूम करने पर पता चलता है कि दोबारा निकाह करने का भी कोई रास्ता नहीं रहा, सिवाए इसके कि किसी दूसरे मर्द से इस औरत का निकाह हो और हलाले की सब शर्तें पूरी हों, तो औरत से ज़िद करता है कि तू फ़लाँ से निकाह कर ले, हालाँकि वह अब पहले शौहर की पाबन्द नहीं रही, जिस मुसलमान मर्द से चाहे निकाह कर ले और जितने मेहर पर करे उसे इख़्तियार है, बल्कि अगर उसने किसी मर्द से निकाह कर लिया और उसने तलाक़ दे दी या मर गया तब भी औरत को मजबूर नहीं किया जा सकता कि पहले शौहर से निकाह कर ले। बिलफ़र्ज़ अगर औरत इस बात पर राज़ी हो जाये कि इद्दत गुज़ारने के बाद किसी और शख़्स से निकाह कर ले फिर हलाले की शर्तें पूरी करने के बाद पहले शौहर से निकाह करने पर रज़ामन्दी का इज़हार कर दे तब भी यह जायज़ नहीं है कि किसी शख़्स से यह मुआ़हदा किया जाये कि तुम इस औरत से निकाह कर लो और हलाले की शर्त पूरी करके छोड़ देना ताकि पहले शौहर से निकाह हो सके। ऐसा मामला और मुआ़हदा शरअ़न् मना है।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊ़द रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि:

"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने लानत फ़रमायी 'मुहल्लिल्' पर और 'मुहल्लल् लहू' पर।" (मिश्कात शरीफ़)

'मुहल्लिल्' वह है जो हलाला करके दे। यानी जो इस शर्त को मन्ज़ूर करके निकाह कर ले कि वह हलाले की शर्त पूरी करके छोड़ देगा। और 'मुहल्लल लहू' वह है जिसने तीन तलाक़ें दी थीं। यानी पहला शौहर जो यह

शर्त लगाकर किसी से अपनी तलाक़ दी हुई बीवी का निकाह करता है कि तुम इसको एक-दो रात रखकर छोड़ देना।

देखिये दोनों पर लानत फ़रमायी इसलिए हलाले की शर्त पर निकाह करना और कराना गुनाह है। लेकिन इस तरह शर्त लगाकर किसी ने निकाह करा दिया और हलाले की शर्तें पूरी हो गई तो पहले शौहर के लिए हलाल हो जायेगी। यानी वह उससे निकाह कर सकेगा, जो औरत की मर्ज़ी से होगा। बात को ख़ूब समझ लें।

ख़ुला करने का तरीक़ा और उसके मसाइल तथा शर्तें व परिणाम

हदीसः (151) हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि साबित बिन क़ैस रज़ि० की बीवी (जमीला या जनीबा) हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास आई और अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! साबित बिन क़ैस जो मेरे शौहर हैं मुझे उनकी आ़दत व ख़सलत और दीनदारी के बारे में कोई नाराज़गी नहीं है (क्योंकि वह दीनदार भी हैं और अख़्लाक़ के भी अच्छे हैं, इस सबके बावजूद मेरी तबीयत का उनसे जोड़ नहीं खाता और उनके साथ रहने को जी नहीं चाहता। इस सूरत में अगर मैं उनके साथ रहूँ तो उनके हुक़ूक़ के ज़ाया होने का अन्देशा है। एक अच्छे आदमी के साथ रहूँ और वह मेरे ख़र्चे बरदाश्त करे और उसके हुक़ूक़ की अदायगी न हो, यह नाशुक्री की बात है) लेकिन मैं नाशुक्री को ना-पसन्द करती हूँ (लिहाज़ा मेरी और उनकी जुदाई हो जाये तो बेहतर है)। यह सुनकर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया क्या (तलाक़ के बदले) तुम उसका बाग़ीचा वापस कर दोगी? (जो उसने मेहर में दिया है)। इसके जवाब में उन्होंने कहा कि हाँ! वापस कर दूँगी। आपने यह सुनकर हज़रत साबित बिन क़ैस रज़ियल्लाहु अ़न्हु से फ़रमाया कि तुम बाग़ीचा क़बूल कर लो (और उसके बदले) इसको एक तलाक़ दे दो। (मिश्कात शरीफ़ पेज 283)

तशरीहः इस्लामी तालीमात का असल रुख़ यह है कि निकाह का मामला और मुआ़हदा उमर भर के लिए हो। इसके तोड़ने और ख़त्म करने की कभी नौबत ही न आये। क्योंकि जुदाई का असर दोनों फ़रीक़ों पर ही नहीं पड़ता बल्कि इसकी वजह से नस्ल व औलाद की तबाही व बरबादी होती है, और कई बार ख़ानदानों और क़बीलों में फ़साद तक की नौबत आ जाती है, इसी

लिए जो असबाब और कारण इस मामले को तोड़ने का सबब बन सकते हैं इस्लामी तालीमात ने उन तमाम असबाब को राह से हटाने का पूरा इन्तिज़ाम किया है।

शौहर और बीवी को जो हिदायतें कुरआन व हदीस में दी गयी हैं उनका हासिल यह है कि निकाह का रिश्ता हमेशा ज़्यादा से ज़्यादा मज़बूत होता चला जाये और टूटने न पाये। मन-मुटाव की सूरत में अव्वल समझाने-बुझाने की फिर तंबीह और डाँट-डपट की हिदायतें दी गईं। और अगर बात बढ़ जाये और इससे भी काम न चले तो दोनों ख़ानदानों के अफ़राद को बीच में पड़कर मामले को तय करने की तालीम दी। सूरः निसा की आयत नम्बर 35 में ख़ानदान के अफ़राद को मध्यस्थ बनाने का हुक्म दिया है जो बहुत समझदारी की बात है, क्योंकि अगर मामला ख़ानदान से बाहर गया तो बात बढ़ जायेगी और दिलों में ज़्यादा दूरी पैदा हो जाने का ख़तरा हो जायेगा।

लेकिन कभी-कभी ऐसी सूरतें भी पेश आती हैं कि हालात को सुधारने की तमाम कोशिशें नाकाम हो जाती हैं और निकाह से मतलूबा समरात (वांछित फल) हासिल होने के बजाये दोनों फ़रीक़ों का आपस में मिलकर रहना अज़ाब बन जाता है। ऐसी हालत में ताल्लुक़ ख़त्म कर देना ही दोनों के लिए राहत और सलामती का सबब हो जाता है, इसलिए इस्लामी शरीअत ने बाज़ दूसरे मज़हबों की तरह यह भी नहीं किया कि शादी का रिश्ता हर हाल में नाक़ाबिले ख़त्म ही रहे, बल्कि तलाक़ और निकाह के ख़त्म होने का क़ानून बनाया। तलाक़ का इख़्तियार तो सिर्फ़ मर्द को दिया जिसमें आम तौर पर सोचन-समझने, तदबीर करने और बरदाश्त का माद्दा औरत से ज़्यादा होता है। औरत के हाथ में यह इख़्तियार नहीं दिया, ताकि वक़्ती भावनाओं से प्रभावित होकर (जो औरत में मर्द के मुक़ाबले में ज़्यादा है) तलाक़ न दे डाले, लेकिन औरत को भी इस हक़ से बिल्कुल ही मेहरूम नहीं रखा कि वह शौहर के ज़ुल्म व सितम सहने पर मजबूर ही हो, बल्कि उसको यह हक़ दिया कि अगर अपने शौहर को किसी वजह से इतना ना-पसन्द करती हो कि उसके साथ किसी क़ीमत पर निबाह करना मुमकिन न रहा हो तो उसका बेहतरीन तरीक़ा तो यही है कि वह शौहर को समझा बुझाकर तलाक़ देने पर आमादा कर ले। ऐसी सूरत में शौहर को भी चाहिये कि जब वह निकाह के रिश्ते को ख़ुशगवारी के साथ निभता न देखे और यह महसूस कर ले कि अब यह

रिश्ता दोनों के लिए नाक़ाबिले बरदाश्त बोझ के सिवा कुछ नहीं रहा, तो वह शराफ़त के साथ अपनी बीवी को एक तलाक़ देकर छोड़ दे ताकि इद्दत गुज़रने के बाद वह जहाँ चाहे निकाह कर सके।

लेकिन अगर शौहर इस बात पर राज़ी न हो तो औरत को यह इख़्तियार दिया गया है कि वह शौहर को कुछ माली मुआवज़ा पेश करके उससे तलाक़ हासिल कर ले। उमूमन इस ग़रज़ के लिए औरत मेहर माफ़ कर देती है और शौहर उसे क़बूल करके औरत को आज़ाद कर देता है। इसके लिए इस्लामी शरीअत में जो ख़ास तरीक़ा-ए-कार मुक़र्रर है उसे फ़िक़्हा (इस्लामी क़ानून) की इस्तिलाह (परिभाषा) में 'ख़ुला' कहा जाता है। निकाह और दूसरे शरई मामलात की तरह ख़ुला भी 'ईजाब व क़बूल' के ज़रिये अन्जाम पाता है। लेकिन अगर ज़्यादती मर्द की तरफ़ से हो तो दीन के आलिमों का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि शौहर के लिए मुआवज़ा लेना जायज़ नहीं, उसे चाहिये कि मुआवज़े के बग़ैर औरत को तलाक़ दे दे। ऐसी सूरत में अगर मर्द मुआवज़ा लेगा तो गुनाहगार होगा।

हज़रत साबित बिन क़ैस रज़ियल्लाहु अन्हु की बीवी का जो वाक़िआ हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान फ़रमाया उसमें यही बात है कि शौहर बीवी से ख़ुश था और बीवी उसके अच्छे अख़्लाक़ और दीनदारी का इक़रार कर रही थी लेकिन शौहर से उसका दिल नहीं लगता था, और उससे तबीयत मानूस न होती थी जिसकी वजह से छुटकारा चाहती थी। चूँकि उक्त वाक़िए में शौहर का कोई क़ुसूर न था इसलिए हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बीवी को बाग़ वापस देने की हिदायत फ़रमायी। इस सूरत में तलाक़ के बदले में शौहर को वह बाग़ बिना किसी कराहत (बुराई) के वापस ले लेना दुरुस्त हो गया।

अगर कोई औरत माल के बदले तलाक़ माँगे तो शौहर पर वाजिब नहीं है कि उसकी बात क़बूल कर ले। इसी लिए हदीस की शरह (ख़ुलासा और व्याख्या) लिखने वाले आलिमों ने बताया है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह इरशाद कि तलाक़ दे दो, हुक्म के दर्जे में न था बल्कि आपका मतलब यह था कि बेहतर यह है कि तुम ऐसा कर लो।

यहाँ यह बात क़ाबिले ज़िक्र है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत साबित बिन क़ैस रज़ि० को बाग़ क़बूल करके एक तलाक़

देने को फ़रमाया। माल के बदले जो तलाक़ दी जाये वह 'बाइन' होती है, अगरचे एक या दो तलाक़ हों और खुले साफ़ लफ़्ज़ों में हो। 'बाइन' तलाक़ के बाद अगर फिर आपस में समझौता हो जाये और दोनों नर्म-गर्म सहने पर आमादा हो जायें तो आपस में दोबारा निकाह कर सकते हैं। तीन तलाक़ देने के बाद हलाले के बग़ैर दोबारा निकाह भी नहीं हो सकता। इसलिए तीन तलाक़ से मना फ़रमाया। और माल लेकर तलाक़ दी जाये तो वह रजई इसलिए नहीं होती कि अगर शौहर रुजू कर लेगा तो औरत की जान न छूटेगी और उसका माल देना बेकार जायेगा।

यहाँ यह बात भी तवज्जोह के क़ाबिल है कि जब हज़रत साबित बिन कैस रज़ियल्लाहु अन्हु की बीवी ने अपनी ना-पसन्दीदगी का इज़हार किया तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनकी नागवारी के पेशेनज़र निकाह को ख़त्म नहीं फ़रमाया बल्कि शौहर को मेहर में दिया हुआ बाग़ीचा वापस दिलाकर तलाक़ दिलायी।

मसलाः जब औरत ने शौहर से कहा कि जो मेरा मेहर वाजिब है उसके बदले मेरी जान छोड़ दे। या इस कद्र रुपये के बदले में मुझे छोड़ दे, फिर इसके जवाब में मर्द ने उसी मजलिस में कह दिया कि "मैंने छोड़ दी" तो इससे एक 'बाइन तलाक़' पड़ गयी, और मर्द को रुजू करने का हक़ नहीं रहा। मर्द व औरत का सवाल व जवाब दोनों एक ही मजलिस में होने चाहियें। अगर औरत ने अपनी बात कही और मर्द के जवाब देने से पहले दोनों में से कोई वहाँ से उठ गया तो बात ख़त्म हो गयी। अब अगर मर्द कहे कि तलाक़ देता हूँ तो तलाक़ हो जायेगी, मगर औरत पर कुछ वाजिब न होगा, और तलाक़ के क़ानून के मुताबिक़ साफ़ लफ़्ज़ों में एक या दो तलाक़ देगा तो रजई और तीन तलाक़ें देगा तो मुग़ल्लज़ा तलाक़ हो जायेगी।

यह तफ़सील उस सूरत में है जबकि औरत ने पहले पेशकश की हो।

मसलाः और अगर मर्द ने बात कहने में पहल की और उसने कहा कि मैं तुझसे इतनी रकम पर या मेहर के बदले खुला किया और औरत ने कहा कि मैंने कबूल किया तो खुला हो गया जो 'तलाक़े बाइन' के हुक्म में होगा। अगर औरत ने उसी जगह जवाब न दिया और वहाँ से उठ खड़ी हुई, उसके बाद मन्ज़ूरी दी या कबूल ही नहीं किया जैसे बिल्कुल ख़ामोश रह गयी या मर्द की पेशकश को रद्द कर दिया तो इससे कोई तलाक़ नहीं होगी। और

अगर मर्द की पेशकश के बाद औरत अपनी जगह बैठी रही और मर्द अपनी बात कहकर चलता बना और औरत ने उसके उठ जाने के बाद क़बूल किया तब भी ख़ुला हो गया।

मसलाः जब मर्द ने कहा कि मैंने तुझसे ख़ुला किया, औरत ने कहा मैंने क़बूल किया। रुपय-पैसे या मेहर की वापसी का या बक़ीया मेहर को बदले में लगाने का कोई ज़िक्र न हुआ तब भी जो माली हक़ मर्द का औरत पर है या औरत का माली हक़ मर्द पर हो सब माफ़ हो गया। अगर मर्द के ज़िम्मे मेहर बाक़ी हो पूरा या कुछ कम या आधा तिहाई वह भी माफ़ हो गया, अलबत्ता अगर औरत पूरा मेहर पा चुकी है तो उस सूरत में उसका वापस करना वाजिब नहीं, अलबत्ता इद्दत ख़त्म होने तक खाने-पीने और रहने का मकान औरत के लिए देना शौहर पर लाज़िम होगा। हाँ! अगर औरत ने उसपर सख़ावत से काम लिया कि जान छुड़ाने के लिए यह भी कह दिया कि मुझसे ख़ुला कर ले, इद्दत के दिनों का रोटी-कपड़ा भी तुझसे न लूँगी, तो वह भी माफ़ हो गया।

मसलाः अगर मख़्सूस रक़म के बदले ख़ुला किया जैसे यूँ कहा कि हज़ार रुपये के बदले में ख़ुला करता हूँ और औरत ने क़बूल किया तो यह हज़ार रुपये औरत पर वाजिब हो गये चाहे उससे पहले अपना मेहर ले चुकी हो या अभी वसूल करना बाक़ी हो। अगर अभी मेहर न लिया हो तो वह न मिलेगा क्योंकि वह ख़ुला की वजह से माफ़ हो गया, और औरत पर लाज़िम होगा कि शौहर को तयशुदा हज़ार रुपये अदा करे।

माल के बदले तलाक़

ज़िक्र हुई तफ़सील उस वक़्त है जबकि लफ़्ज़ 'ख़ुला' इस्तेमाल किया हो, या यूँ कहा कि इतने रुपये के बदले या मेरे मेहर के बदले मेरी जान छोड़ दे। और अगर यूँ कहा कि हज़ार रुपये के बदले मुझे तलाक़ दे दे तो एक तलाक़ 'बाइन' वाक़े हो जायेगी। और चूँकि यह सूरत ख़ुला की नहीं है इसलिए इसे दीन के आलिम "तलाक़ बिल-माल" (यानी माल के बदले में तलाक़) कहते हैं। इसका हुक्म यह है कि जिस माल पर आपस में तलाक़ का देना तय हुआ है उसके मुताबिक़ अगर मर्द तलाक़ दे दे तो औरत पर उस क़द्र माल देना लाज़िम होगा, लेकिन आपस में जो एक-दूसरे का कोई माली हक़ है वह माफ़

न होगा। अगर औरत का कुल या कुछ मेहर बाक़ी है तो वह दावेदार होकर ले सकती है। 'तलाक़ बिल-माल' भी एक मामला है जो दोनों फ़रीक़ की मन्ज़ूरी से हो सकता है।

मसलाः औरत ने कहा मुझे तलाक़ दे, मर्द ने जवाब में कहा तू अपना मेहर वग़ैरह सब हक़ माफ़ कर दे तो तलाक़ दे दूँ। इस पर औरत ने कहा अच्छा माफ़ किया या लिखकर दे दिया, फिर शौहर ने तलाक़ न दी तो कुछ माफ़ नहीं हुआ। अगर शौहर उसी मजलिस में तलाक़ दे दे तो औरत का माफ़ करना मोतबर होगा वरना वह अपना हक़ वसूल कर सकेगी।

मसलाः अगर मर्द ने ज़बरदस्ती करके मारपीट कर औरत को ख़ुला करने पर मजबूर कर दिया और उसकी ज़बान से ख़ुला करने का लफ़्ज़ कहलवा लिया या लिखे हुए ख़ुला-नामे पर अंगूठा लगवा लिया या दस्तख़त करवा लिये और कहा कि मैं ख़ुला करता हूँ तो इससे तलाक़ वाक़े हो जायेगी लेकिन औरत पर माल वाजिब न होगा, न उसका कोई हक़ माफ़ होगा। अगर मेहर बाक़ी है तो शौहर पर उसका अदा करना वाजिब रहेगा।

मसलाः अगर किसी शौहर ने औरत की जानिब से काग़ज़ लिख लिया कि मैंने मेहर या अपने दूसरे हुक़ूक़ के बदले तलाक़ लेना मन्ज़ूर कर लिया और उसे दिखाये बग़ैर कुछ और बात समझा कर दस्तख़त करा लिये या अंगूठा लगवा लिया तो कुछ माफ़ न होगा, अलबत्ता अगर शौहर ने कहा कि मैंने तलाक़ दी है या ख़ुला किया है तो तलाक़ वाक़े हो जायेगी। अगर शौहर ने कोर्ट में काग़ज़ पेश करके दुनिया वाले हाकिमों के यहाँ माफ़ी का फ़ैसला करा लिया तो वह मोतबर न होगा और अल्लाह के दरबार में जब पेशी होगी तो इस माल के बदले उसे नेकियाँ देनी होंगी या औरत के गुनाह अपने सर पर लेने होंगे।

यह सब तफ़सील हमने यह बताने के लिए लिखी है कि ख़ुला दोनों के दरमियान तय होने वाला मामला है, कोई एक फ़रीक़ ख़ुद से फ़ैसला नहीं कर सकता।

मौजूदा दौर के हाकिम का ख़ुला और निकाह के तोड़ने के बारे में ग़ैर-शरई तरीक़ा अपनाना

आजकल के हाकिमों ने जो यह तरीक़ा इख़्तियार कर रखा है कि जहाँ

औरत ने अपील दायर की बस निकाह को ख़त्म करने और तोड़ने का फ़ैसला दे दिया और उसका नाम खुला रख दिया, यह सरासर ग़ैर-शरई तरीक़ा है। बाज़ मर्तबा शौहर तक नोटिस पहुँचता भी नहीं, या वह अदालत में हाज़िर होता है और बीवी को बीवी की तरह उसके हुक़ूक़ अदा करके रखना चाहता है फिर भी बहुत-से हाकिम निकाह को ख़त्म कर देते हैं और औरत की ना-पसन्दीदगी ही को खुला का हक़ इस्तेमाल करने की दलील बनाकर जुदाई का फ़ैसला कर देते हैं। यह तरीक़ा यूरोप के क़वानीन से तोड़-जोड़ खाता है मगर शरीअत के बिल्कुल ख़िलाफ़ है। यह न तो शरई खुला है (क्योंकि फ़ैसला मर्द की मर्ज़ी के बग़ैर कर दिया जाता है) और न इस तरह निकाह को ख़त्म कर देने से निकाह का रिश्ता ख़त्म होता है, और ऐसे फ़ैसले के बाद दूसरे मर्द से निकाह करना दुरुस्त नहीं होता।

बाज़ हालात में मुसलमान हाकिम को निकाह को ख़त्म कर देने का हक़ है मगर विषेश कारणों और एक ख़ास तरीक़े के बग़ैर निकाह को ख़त्म कर देने से निकाह ख़त्म नहीं हो सकता। जिन असबाब की वजह से निकाह ख़त्म करने का इख़्तियार है वे ये हैं: (1) शौहर का पागल होना (2) खाने-पीने और रोटी-कपड़ा देने से मोहताज होना (3) नामर्द होना (4) लापता होना। जिसकी मौत व ज़िन्दगी का पता न हो (5) ग़ायब होना, जिसकी ज़िन्दगी का इल्म तो हो मगर पता नहीं कि कहाँ है। इन असबाब की बुनियाद पर कुछ ख़ास शर्तों और पाबन्दियों व बन्दिशों के साथ मुस्लिम हाकिम निकाह को ख़त्म कर सकता है जो किताब "अल्-हीलतुन् नाजिज़ह्" में लिखी हैं। वाज़ेह रहे कि काफ़िर जज (क़ादयानी या ईसाई वग़ैरह) के निकाह को ख़त्म करने से निकाह ख़त्म न होगा, अगरचे वह असबाब व शराइत का लिहाज़ करते हुए निकाह को ख़त्म करे।

तलाक़ और मौत की इद्दत के मसाइल

हदीस: हज़रत मिस्वर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि सहाबिया सुबीआ रज़ियल्लाहु अन्हा के पेट से उनके शौहर की मौत के चन्द दिन के बाद बच्चा पैदा हो गया। वह हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुईं और (चूँकि बच्चे की पैदाइश हो जाने की वजह से इद्दत ख़त्म हो चुकी थी) इसलिए उन्होंने किसी दूसरे मर्द से निकाह की

इजाज़त चाही, चुनाँचे आपने इजाज़त दे दी और उन्होंने निकाह कर लिया।
(मिश्कात शरीफ़ पेज 288)

तशरीह: जब कोई मर्द अपनी बीवी को तलाक़ दे दे या मर जाये तो औरत पर इद्दत गुज़ारना लाज़िमी होता है। यानी शरीअ़त के उसूल के मुताबिक़ मुक़र्ररा और ख़ास दिनों के गुज़र जाने तक उसे किसी दूसरे मर्द से निकाह करने की इजाज़त नहीं होती, और इसके अलावा भी इद्दत के दौरान कुछ और पाबन्दियाँ लागू हो जाती हैं। ऊपर की हदीस में इद्दत से मुताल्लिक़ एक मसला ज़िक्र फ़रमाया है जिसकी तफ़सील अभी आती है। इन्शा-अल्लाह तआ़ला।

जब किसी औ़रत को तलाक़ हो जाये तो देखा जायेगा कि वह शौहर के यहाँ गयी है या नहीं गयी है, अगर शौहर के यहाँ नहीं गयी यानी मियाँ-बीवी में मुलाक़ात नहीं हुई और सिर्फ़ निकाह के बाद तलाक़ हो गयी तो ऐसी औ़रत पर कोई इद्दत लाज़िम नहीं जैसा कि क़ुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमा: ऐ ईमान वालो! तुम जब मुसलमान औ़रतों से निकाह करो, फिर तुम उनको हाथ लगाने से पहले तलाक़ दे दो तो तुम्हारे लिए उनपर कोई इद्दत नहीं जिसको तुम शुमार करने लगो, तो उनको कुछ माल-सामान दे दो और ख़ूबी के साथ उनको रुख़्सत कर दो। (सूर: अहज़ाब आयत 49)

और अगर निकाह के बाद मियाँ-बीवी में मुलाक़ात और मिलाप हो चुका है तो देखा जायेगा कि औ़रत को हमल (गर्भ) है या नहीं, अगर औ़रत को हमल हो तो उसकी इद्दत बच्चा पैदा होने पर ख़त्म होगी, यानी जब तक पैदाइश न हो जाये उस वक़्त तक इद्दत में रहेगी चाहे एक दिन बाद ही बच्चा पैदा हो जाये, चाहे कई महीने लग जायें या डेढ़ साल या इससे ज़्यादा लग जाये। (ख़्याल रहे कि शरीअ़त में हमल की मुद्दत ज़्यादा से ज़्यादा दो साल है) और अगर उसे हमल न हो तो उसकी इद्दत यह है कि तीन माहवारी गुज़र जायें। इसके लिए कोई मुद्दत मुक़र्रर नहीं है, जितने दिन में तीन हैज़ गुज़रें उतने दिन तक इद्दत में रहना होगा। औ़रतों में यह मशहूर है कि तीन महीने तेरह दिन या तीन महीने दस दिन इद्दत है, शरअ़न इसका कोई सुबूत नहीं, इद्दत का मदार हमल होने की सूरत में बच्चे की पैदाइश पर और हमल न होने की सूरत में तीन हैज़ गुज़र जाने पर है।

मसला: अगर किसी औ़रत को ऐसी हालत में तलाक़ हुई कि उसे अब

तक हैज़ (माहवारी) नहीं आया, या ज़्यादा उम्र होने की वजह से हैज़ आना बन्द हो गया हो तो उसकी इद्दत तीन महीने है। ये तीन महीने चाँद के हिसाब से शुमार होंगे। कुरआन मजीद ने इन मसाइल को सूरः ब-करः और सूरः तलाक़ में बयान फ़रमाया है। सूरः ब-करः में इरशाद है:

तर्जुमाः जिन औरतों को तलाक़ दे दी जाये वे तीन हैज़ तक अपने को निकाह से रोके रखें। (सूरः ब-करः आयत 228)

और सूरः तलाक़ में फ़रमाया है कि:

तर्जुमाः जो औरतें हैज़ से ना-उम्मीद हो चुकी हैं (बुढ़ापे की वजह से) अगर तुमको (उनकी इद्दत मुकर्रर करने में) शुब्हा हो तो उनकी इद्दत तीन महीने है। ऐसे ही उन औरतों की इद्दत तीन महीने है जिनको अब तक हैज़ नहीं आया। (सूरः तलाक़ आयत 4)

अब रही वह औरत जिसका शौहर वफ़ात पा चुका हो, उसकी इद्दत में यह तफ़सील है कि अगर वह हमल से है तो जब भी बच्चे की पैदाइश हो जाये उस वक़्त उसकी इद्दत ख़त्म हो जायेगी, अगरचे शौहर की वफ़ात के दो-चार ही रोज़ गुज़रे हों, या इससे भी कम वक़्त गुज़रा हो। ऊपर की हदीस में यही मसला बताया है। और अगर हमल की मुद्दत बढ़ जाये तो उसी के हिसाब से इद्दत के दिन भी बढ़ जायेंगे। और अगर यह औरत हमल से नहीं है तो इसकी इद्दत चाँद के एतिबार से चार महीने दस दिन है, हैज़ आता हो या न आता हो। कुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमाः और जो लोग तुममें वफ़ात पा जाते हैं और बेवायें छोड़ जाते हैं, वे बेवायें अपने आपको रोके रखें चार महीने और दस दिन।

(सूरः ब-करः आयत 234)

मसलाः जिस औरत का निकाह शरीअ़त के उसूल के मुताबिक़ किसी मुसलमान हाकिम ने ख़त्म किया हो उसपर भी इद्दत लाज़िम है। और उसे तलाक़ की इद्दत पूरी करनी होगी।

मसलाः जिस औरत ने शौहर से खुला कर लिया हो उसका भी इद्दत के ज़माने का रोटी-कपड़ा, ज़रूरी ख़र्च और रहने का घर तलाक़ देने वाले शौहर ही के ज़िम्मे है बशर्तेकि औरत शौहर के दिये हुए उस घर में इद्दत गुज़ारे जिसमें तलाक़ से पहले रहती थी, अगर माँ-बाप के यहाँ चली जाये तो शौहर पर इद्दत के दिनों का ख़र्च वाजिब न होगा। वाज़ेह रहे कि इद्दत के दिनों का

शौहर ही के घर पर गुज़ारना लाज़िम है, जहाँ रहते हुए तलाक़ हुई। और अगर 'बाइन' या 'मुग़ल्लज़ा' तलाक़ हुई हो तो शौहर से पर्दा करके रहे।

मसलाः अगर औरत इद्दत के दिनों का ख़र्च माफ़ कर दे तो माफ़ हो जायेगा।

मसलाः जिस औरत का शौहर वफ़ात पा जाये उस औरत के लिए शौहर के माल में मीरास तो है लेकिन इद्दत का ख़र्च नहीं है। और अगर मेहर वसूल न किया हो और माफ़ भी न किया हो तो मीरास के हिस्से से पहले मेहर वसूल कर लेगी।

मसलाः अगर किसी औरत से इस शर्त पर निकाह किया था कि मेहर न मिलेगा या निकाह के वक़्त मेहर का कोई तज़किरा न हुआ हो और फिर मियाँ-बीवी वाली मुलाक़ात होने से पहले तलाक़ दे दी तो शौहर पर लाज़िम है कि उस औरत को चार कपड़ों का एक जोड़ा अपनी हैसियत के मुताबिक़ दे। कपड़े यह हैं: एक कुर्ता, एक पाजामा, एक दुपट्टा और एक बड़ी चादर जिसमें सर से पाँव तक लिपट सके। और अगर मेहर मुक़र्रर किये बग़ैर निकाह करने के बाद शौहर को मियाँ-बीवी वाली तन्हाई भी हासिल हो गयी या वह मर गया तो 'मेहरे मिस्ल' देना होगा। यानी इतना मेहर देना होगा जितना उस औरत के मायके की उस जैसी औरतों का मेहर हुआ करता है। उस जैसी ख़ूबसूरती और उम्र और दीनदारी और सलीक़ेमन्दी वग़ैरह में देखी जायेगी। यह मसला मेहर के बाब से मुताल्लिक़ है, लेकिन हमने नान-नफ़्क़े (रोटी-कपड़े और ज़रूरी ख़र्च) के अन्तर्गत इसलिए लिख दिया है कि कपड़े का जोड़ा जिस सूरत में देना पड़ता है वह सामने आ जाये, और जिस सूरत में कपड़ों के अलावा और कुछ वाजिब होता है उसका भी इल्म हो जाये।

मसलाः हैज़ (माहवारी) के ज़माने में तलाक़ देना जायज़ नहीं है। अगर किसी ने शरीअ़त का ख़्याल न किया और हैज़ के ज़माने में तलाक़ दे दी तो तलाक़ हो जायेगी और उसकी इद्दत भी तीन हैज़ होगी, और ये तीन हैज़ उस हैज़ के अलावा होंगे जिसमें उसने तलाक़ दी है, यानी जिस हैज़ में तलाक़ दी गयी है वह हैज़ इद्दत में शुमार न होगा।

मसलाः किसी ने अपनी बीमारी के ज़माने में तलाक़ दी और इद्दत अभी पूरी नहीं होने पायी थी कि वह मर गया, तो देखा जायेगा कि तलाक़ की इद्दत की मुद्दत ज़्यादा है या मौत की इद्दत की मुद्दत ज़्यादा है, जिस इद्दत

में ज़्यादा दिन लगेंगे वह इद्दत पूरी करे। और अगर बीमारी में तलाक़ रजई दी है और अभी तलाक़ की इद्दत न गुज़री थी कि शौहर मर गया तो उस औरत पर वफ़ात की इद्दत लाज़िम है।

इद्दत के दिनों में सोग करना भी वाजिब है

हदीसः (152) हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिस औरत का शौहर वफ़ात पा गया वह (इद्दत गुज़रने तक) कुसुम से रंगा हुआ और मिट्टी से रंगा हुआ कपड़ा न पहने, और ज़ेवर भी न पहने और ख़िज़ाब भी न लगाये। (मिश्कात शरीफ़ पेज 289)

तशरीहः जब औरत को तलाक़ हो जाये या उसका शौहर वफ़ात पा जाये तो इद्दत ख़त्म होने तक उसको उसी घर में रहना ज़रूरी है जिसमें शौहर के निकाह में होते हुए आख़िर वक़्त तक रहा करती थी। उस घर को छोड़कर दूसरे घर में जाना जायज़ नहीं है। बहुत-सी औरतें शौहर की मौत होते ही या तलाक़ होते ही मायके चली जाती हैं, यह शरीअत के ख़िलाफ़ है और गुनाह है। न उसको जाना जायज़ है, न ससुराल वालों को उसका निकालना दुरुस्त है। कुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमाः उन औरतों को उनके (रहने के) घरों से मत निकालो (क्योंकि तलाक़ पाने वाली औरत के रहने की जगह भी वाजिब है) और न वे औरतें खुद निकलें। मगर हाँ! वे कोई खुली बेहयाई करें तो और बात है।

(सूरः तलाक़ आयत 1)

जो औरत बेवा हो गयी हो और उसके नान-नफ़्के का कुछ इन्तिज़ाम न हो तो किसी जगह काम-काज करके रोज़ी हासिल करने के लिए घर से बाहर जा सकती है लेकिन सूरज छुपने से पहले-पहले उस घर में आ जाये जिसमें शौहर के साथ रहती थी। इद्दत के दौरान घर में रहते हुए किसी एक ही कोठरी या कमरे में बैठे रहना ज़रूरी नहीं है, न यह कोई मसला है जैसा कि औरतें समझती हैं (बल्कि घर में रहते हुए पूरे घर में चले-फिरे, उस पर कुछ पाबन्दी नहीं)।

जिस औरत को रजई तलाक़ मिली हो, इद्दत के दिनों में उसको घर से निकलना दुरुस्त नहीं है, वह भी शौहर के घर में इद्दत गुज़ारे। जो औरत

इद्दत में हो घर से निकलने की पाबन्दी के साथ उस पर शरअ़न सोग की पाबन्दी भी आ़यद की गयी है। बनाव-सिंघार को छोड़ने को सोग कहते हैं। ऊपर की हदीस में सोग के बाज़ मसाइल बताये गये हैं। सोग के अहकाम जहाँ ऐसी औ़रत पर लागू होते हैं जिसका शौहर वफ़ात पा गया हो, वहीं उस औ़रत को भी इसकी हिदायत की गयी है जिसको 'तलाक़े बाइन' दी गयी हो या 'तलाक़े मुग़ल्लज़ा' मिल गयी हो।

खुलासा यह है कि जिस औ़रत का शौहर वफ़ात पा गया हो और जिसे ऐसी तलाक़ मिली हो जिसके बाद रुजू नहीं हो सकता उस पर इद्दत के दौरान सोग करना भी लाज़िम है। जब इद्दत ख़त्म हो जाये सोग ख़त्म कर दे। चूँकि इद्दत के ज़माने में किसी दूसरे मर्द से निकाह करना दुरुस्त नहीं और बनाव-सिंघार की ज़रूरत शौहर के लिए होती है इसलिए इद्दत के ज़माने में सोग करने का हुक्म दिया गया। सोग करने का मतलब यह है कि औ़रत ऐसा लिबास और ऐसा रंग-ढंग इख़्तियार न करे जिससे उसकी तरफ़ मर्दों की तबीयत राग़िब हो, लिहाज़ा इद्दत गुज़ारने वाली के लिए (जिस पर सोग वाजिब हो) यह लाज़िम क़रार दिया गया है कि भड़कदार कपड़े न पहने, खुशबू न लगाये, खुशबुओं में रंगे हुए कपड़े न पहने, ज़ेवर इस्तेमाल न करे, बारीक दाँतों की कंघी से बाल न सुलझाये, सर में तेल न डाले और सुर्मा न लगाये, अगर मजबूरी की वजह से लगाना पड़े तो दिन को पोंछ डाले, सर धोना और गुस्ल करना दुरुस्त है लेकिन खुशबूदार साबुन वग़ैरह इस्तेमाल न करे। अगर सर में दर्द होने की वजह से तेल डालने की ज़रूरत पड़े तो बेखुशबू का तेल डाल ले लेकिन माँग-पट्टी न निकाले।

जिस औ़रत पर सोग करना वाजिब है उस पर पान खाकर मुँह लाल करना और दाँतों पर मिस्सी मलना, फूल पहनना, मेहंदी लगाना, होंठ और नाखुन पर सुर्ख़ी लगाना दुरुस्त नहीं।

मसला: सोग करना शरई हुक्म है। शौहर के मरने या तलाक़ व खुला के ज़रिये उससे छुटकारा हासिल होने से अगर औ़रत को तबई तौर पर खुशी हुई हो तब भी सोग करना वाजिब है।

मसला: अगर कोर्ट के ज़रिये निकाह ख़त्म कर दिया हो (और वह शरई उसूल के मुताबिक़ ख़त्म हो गया हो) तो ऐसी औ़रत पर भी इद्दत और सोग वाजिब है।

मसलाः अगर नाबालिग़ लड़की को तलाक़ मिल गयी या उसका शौहर मर गया तो उस पर सोग वाजिब नहीं है।

मसलाः जिस औरत को 'तलाक़े बाइन' या 'तलाक़े मुग़ल्लज़ा' मिली हो उस पर भी वाजिब है कि इद्दत के ज़माने में तलाक़ देने वाले शौहर के घर रहते हुए उससे पर्दा करे, और जिसको तलाक़ रजई मिली हो वह बनाव-सिंघार से रहे, सोग न करे।

इस्लाम से पहले ज़माने में इद्दत कैसे गुज़ारी जाती थी

हदीसः (153) हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा का बयान है कि एक सहाबी औरत हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुई और अर्ज़ किया कि ऐ अल्लाह के रसूल! मेरी लड़की का शौहर मर गया है और उसकी आँखों में तकलीफ़ है, क्या हम उसकी आँखों में सुर्मा लगा सकते हैं? आपने फ़रमाया नहीं! दो या तीन बार यही सवाल-जवाब हुआ, आपने हर बार यही फ़रमाया कि (इस्लामी शरीअत में) यह इद्दत और सोग के चार माह और दस दिन हैं (इसकी पाबन्दी मुश्किल मालूम हो रही है) हालाँकि जाहिलीयत (इस्लाम से पहले) के ज़माने में जब किसी औरत का शौहर मर जाता तो पूरे एक साल तक इद्दत गुज़ारती थी, और एक साल ख़त्म होकर जब दूसरा साल लगता था तो (ऊँट वग़ैरह की) मैंगनियाँ फैंकती थी। (मिश्कात शरीफ़ पेज 288)

तशरीहः इस्लाम से पहले ज़माना-ए-जाहिलीयत में अलग-अलग इलाक़ों और अलग-अलग क़ौमों में शौहर के मर जाने पर उसकी बीवी पर तरह-तरह के अहकाम लागू किए जाते थे। ये अहकाम मज़हबी भी होते थे और क़ौमी व मुल्की भी। हिन्दुस्तान के हिन्दुओं में तो यह क़ानून था कि बेवा को अपने मुर्दा शौहर के साथ ज़िन्दा ही जल जाना पड़ता था, इसको 'सती' होना कहते थे। और अरब में यह तरीक़ा था कि जब औरत का शौहर मर जाता था तो एक साल उसके लिए बहुत कठिन होता था जिसकी तफ़सील हदीस की किताब अबू दाऊद में इस तरह से बयान की गयी है किः

जब किसी औरत का शौहर मर जाता था तो साल भर के लिए एक छोटी-सी कोठरी में दाख़िल हो जाती थी और बद्तरीन कपड़े पहन लेती थी और साल गुज़रने तक न ख़ुशबू लगाती न और कोई चीज़ (सफ़ाई-सुथराई

की) अपने बदन से छुआती थी। जब साल ख़त्म हो जाता था तो कोई पशु गधा, बकरी या परिन्दा उसके पास लाया जाता था जिससे वह अपनी शर्म की जगह को रगड़ती थी। (1) (चूँकि साल भर तक बुरे हाल में रहकर उसके बदन में ज़हरीले असरात पैदा हो जाते थे इसलिए) जिस जानवर से वह अपने जिस्म का मख़्सूस हिस्सा रगड़ती थी वह जानवर अकसर मर जाता था, उसके बाद (कोठरी से) निकलती और उसको ऊँट वग़ैरह की मैंगनियाँ दी जाती थीं, वह उन मैंगनियों को आगे-पीछे फैंकती थी, इससे लोगों को मालूम हो जाता था कि इसकी इद्दत गुज़र गयी है और यह शगून लेना भी मख़्सूस था कि मुसीबत फैंक दी जैसा कि यह मैंगनियाँ फैंकी जा रही हैं। उसके बाद अपनी मर्ज़ी के मुताबिक़ ख़ुशबू वग़ैरह इस्तेमाल करती थी। (अबू दाऊद)

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जाहिलीयत की यह पाबन्दी याद दिलायी और फ़रमाया कि इस्लाम ने सिर्फ़ चार माह दस दिन की इद्दत और सोग रखा है, जाहिलीयत की कैसी कैसी मुसीबतों से तुम्हारी जान छुड़ायी है, फिर भी तुम इस्लाम के क़ानून की पाबन्दी से बचने का रास्ता निकाल लेना चाहती हो।

इस हदीस से मालूम हुआ कि आँख में तकलीफ़ होने के बावजूद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इद्दत वाली को सोग में सुर्मा लगाने की इजाज़त न दी।

हदीस की शरह लिखने वाले आलिमों ने बताया है कि ऐसा मालूम होता है कि इस औरत का इलाज सुर्मे के बग़ैर हो सकता था और सुर्मा बतौर संवरने के लगाना चाहती थी इसलिए मना फ़रमाया। क्योंकि हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा का फ़तवा है (जो सोग वाली हदीसों को रिवायत करने वाली हैं) कि सोग वाली औरत इलाज की मजबूरी से रात को सुर्मा लगा सकती है।

औरत बेवा हो जाये तो दूसरा निकाह कर ले इसको ऐब समझना जहालत है

हिन्दुओं में यह ऐब समझा जाता था कि शौहर की मौत के बाद औरत किसी दूसरे मर्द से शादी करे। हर वक़्त का रंज व ग़म और सास-नन्दों के

(1) यह काम टोटके के तौर पर करती थी और इसको मुसीबत के दूर होने का ज़रिया समझती थी।

ताने उसे इज़्ज़त के साथ ज़िन्दगी गुज़ारने न देते थे। मज़हबी क़ानून और क़ौमी रिवाज के मुताबिक़ बिना शौहर के पूरी ज़िन्दगी गुज़ारना लाज़िमी थी। अगरचे तेरह साल की लड़की बेवा हो जाये। और चूँकि शौहर की अर्थी के साथ जलना मज़हबी मसला था और सब नफ़रत व अपमान का बर्ताव करते थे, इसलिए मजबूर होकर वह शौहर की अर्थी में कूद पड़ती थी और ज़िन्दा जल जाने को नफ़रत की ज़िन्दगी पर तरजीह देती थी। इसके बिल्कुल उलट इस्लाम ने न सिर्फ़ इजाज़त दी बल्कि तरग़ीब दी और अच्छा व पसन्दीदा बताया बल्कि बाज़ हालात में वाजिब क़रार दिया कि इद्दत गुज़ारने के बाद औरत दूसरे मर्द से निकाह कर ले, वह मर जाये तो तीसरा शौहर कर ले, वह भी मर जाये तो चौथे मर्द के निकाह में आ जाये। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस पर अमल करके दिखाया है। आपकी अकसर बीवियाँ बेवा थीं जिनके पहले शौहर वफ़ात पा चुके थे, उनमें बाज़ वे थीं जो आपसे पहले दो शौहरों के निकाह में रह चुकी थीं।

आजकल भी बाज़ क़ौमों में (जो मुसलमान कहलाती हैं) बेवा की दूसरी शादी को ऐब समझा जाता है, और जो बेवा हो जाये ज़िन्दगी भर यूँ ही बिना शौहर बैठी रहती है, ख़ुदा की पनाह! अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जो काम किया हो उसे ऐब समझना बहुत बड़ी जहालत है। इससे ईमान के छिन जाने का ख़तरा है। जिन लोगों के ऐसे ख़्यालात हैं वे तौबा करें। इस्लाम ने औरत को बड़ा रुतबा दिया और उसको सम्मान व इज़्ज़त से नवाज़ा है, पस्ती से निकालकर उसको बुलन्दी अता की है, लेकिन अफ़सोस है कि औरतें अब भी इस्लाम के अहकाम को छोड़कर (जो सरासर रहमत हैं) जाहिलीयत की तरफ़ दौड़ रही हैं।

शौहर के अलावा किसी की मौत पर सोग करने का हुक्म

हदीसः (154) हज़रत अबू सलमा रज़ियल्लाहु अन्हु की साहिबज़ादी (बेटी) हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अन्हा ने बयान फ़रमाया कि जब उम्मुल-मोमिनीन हज़रत उम्मे हबीबा रज़ियल्लाहु अन्हा को (उनके वालिद) हज़रत अबू सुफ़ियान रज़ियल्लाहु अन्हु की मौत की ख़बर पहुँची तो उन्होंने तीसरे दिन ख़ुशबू मंगायी जो पीले रंग की थी और अपनी बाँहों और गालों पर मली और फ़रमाया कि मुझे इसकी ज़रूरत न थी (लेकिन इस डर से कि

कहीं तीन दिन से ज़ायद सोग करने वालियों में शुमार न हो जाऊँ मैंने ख़ुशबू लगा ली)। मैंने नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को फ़रमाते हुए सुना कि ऐसी औरत के लिए जो अल्लाह पर और आख़िरत के दिन पर ईमान रखती हो यह हलाल नहीं है कि (किसी मय्यित पर) तीन दिन तीन रात से ज़्यादा सोग करे सिवाय शौहर के कि उस (की मौत हो जाने) पर चार महीने दस दिन सोग करे। (मुस्लिम शरीफ़ पेज 487 जिल्द 1)

तशरीहः जिस कपड़े से मर्दों को कशिश होती है उसको न पहने और ख़ुशबू सुर्मा मेहंदी और बनने-संवरने की दूसरी चीज़ें छोड़ देने को सोग कहते हैं। इसकी तफ़सील पिछली हदीस के तहत गुज़र चुकी है। जिस औरत का शौहर मर जाये उसकी इद्दत हमल (गर्भ) न होने की सूरत में चार महीने दस दिन है, और हमल हो तो बच्चे की पैदाइश पर उसकी इद्दत पूरी होगी। और दोनों सूरतों में जब तक इद्दत न गुज़रे उस पर सोग की हालत में रहना वाजिब है।

क्या शौहर के अलावा किसी और की मौत पर सोग करने की गुंजाइश है? अगर गुंजाइश है तो कितने दिन सोग किया जा सकता है? ऊपर की हदीस में इस सवाल का जवाब दिया है कि शौहर के अलावा दूसरे किसी रिश्तेदार या क़रीबी (बेटा, बाप वग़ैरह) की मौत पर भी सोग करने की इजाज़त है लेकिन सिर्फ़ तीन दिन तीन रात तक सोग कर सकती है। इससे ज़्यादा सोग करना हलाल नहीं है, जैसा कि ऊपर की हदीस से बिल्कुल वाज़ेह (स्पष्ट) हो रहा है।

हज़रत उम्मे हबीबा रज़ियल्लाहु अन्हा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की पाक बीवियों में से थीं। इनके वालिद हज़रत अबू सुफ़ियान रज़ियल्लाहु अन्हु थे। जब उनकी वफ़ात की ख़बर सुनी तो हज़रत उम्मे हबीबा रज़ियल्लाहु अन्हा ने दो दिन कोई ख़ुशबू न लगायी, फिर तीसरे दिन ख़ुशबू मंगाकर लगायी और इरशाद फ़रमाया कि मुझे इस वक़्त ख़ुशबू लगाने की बिल्कुल कोई ज़रूरत न थी लेकिन हदीस की वईद से बचने के लिए ख़ुशबू इस्तेमाल की है, ऐसा न हो कि ख़ुशबू न लगाना सोग में शामिल हो जाये और यह सोग तीन दिन से आगे बढ़ जाये, इसलिए तीन दिन पूरे होने से पहले ही ख़ुशबू लगा ली ताकि गुनाह का शुब्हा ही न रहे। ऐसा ही

वाक़िआ हज़रत ज़ैनब बिन्ते जहश रज़ि० को पेश आया। यह भी नबी पाक की पाक बीवियों में से थीं। जब इनके भाई की मौत की ख़बर आयी तो इन्होंने ख़ुशबू मंगाकर लगायी और उसी हदीस की रिवायत की जो हदीस हज़रत उम्मे हबीबा रज़ियल्लाहु अन्हा ने अपने वालिद की मौत के बाद (तीसरे दिन) ख़ुशबू लगाकर सुनायी।

जिन हज़रात ने हदीस की तशरीहात (व्याख्याएँ) लिखी हैं उन्होंने फ़रमाया कि हज़रत उम्मे हबीबा रज़ियल्लाहु अन्हा ने जो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद नक़ल फ़रमाया है उससे मालूम हुआ कि शौहर के अ़लावा किसी दूसरे अ़ज़ीज़ और रिश्तेदार की मौत पर भी सोग करना जायज़ है, यानी वाजिब तो नहीं है जिसके छोड़ने से गुनाह हो, लेकिन तबई तौर पर चूँकि औरत को रंज ज़्यादा होता है इसलिए उसे इजाज़त दी गयी कि तीन दिन तक बनाव-सिंघार न करे तो ऐसा कर सकती है, अलबत्ता तीन दिन के बाद शौहर के अ़लावा किसी दूसरे की मौत पर सोग करेगी तो गुनाहगार होगी। यह तीन दिन वाली इजाज़त भी औरत के लिए है, मर्दों को सोग करने की इजाज़त किसी हदीस से साबित नहीं।

आजकल एक बड़ी मुसीबत यह है कि अ़मल करने के लिए नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के आमाल व अक़वाल (बातों) को सामने नहीं रखा जाता बल्कि मिज़ाज और तबीयत के तक़ाज़ों पर चलते हैं। रंज व ग़म सोग वग़ैरह के सिलसिले में भी ख़ुदा और रसूल की नाफ़रमानियाँ होती हैं। शौहर की मौत पर सोग के लिए कहा जाता है तो उसको बुरा मानती हैं बल्कि इद्दत के ज़माने में घर में रहने की शरई पाबन्दी की भी ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) करती हैं। और अपने आप सोग करने पर आयें तो शौहर के अ़लावा किसी दूसरे की मौत पर महीनों सोग कर लें। दीनी अहकाम को पीठ पीछे डालने का यह मिज़ाज बुरा है, इसकी वजह से गुनाहों में इज़ाफ़ा ही होता चला जाता है, अल्लाह तआ़ला हम सबको इस्लाम के हुक्मों पर चलने और मर-मिटने की तौफ़ीक़ दे।

यह सोग का सिलसिला मोहर्रम के महीने में बड़ा ज़ोर पकड़ लेता है। शियाओं की देखा-देखी बहुत-से सुन्नी होने के दावेदार भी मोहर्रम में सोगवार बन जाते हैं। इस माह में ख़ुसूसन शुरू के दस दिनों में मियाँ-बीवी वाली मुहब्बत छोड़ देते हैं, और काले कपड़े पहनते हैं, बच्चों को भी काले कपड़े

पहनाते हैं। जिसकी तफ़सीलात बहुत ज़्यादा हैं। यह सब जहालत और गुमराही के तरीक़े हैं। मोहर्रम के महीने में हज़रत हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु की शहादत हुई थी। इस शहादत को याद करके लोग रोते हैं, सीना पीटते हैं, चाकू छुरी से घायल हो जाते हैं। झूटे वाक़िआत बना-बनाकर शे'र बनाते हैं, मरसिये पढ़ते हैं और समझते हैं कि हम सवाब का काम कर रहे हैं, हालाँकि इन चीज़ों में हरगिज़ सवाब नहीं है बल्कि ये चीज़ें सरासर गुनाह हैं। हज़रत हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु से मुहब्बत क्यों है? इसी लिए तो है कि वह अल्लाह के प्यारे नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के प्यारे नवासे हैं। जब सबब हज़रत हुसैन के नाना जान की बरकत वाली ज़ात है (कि आपसे मुहब्बत होने की वजह से हज़रत हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु से भी मुहब्बत है) तो इस मुहब्बत के इज़हार में आँ हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इरशादात का उल्लंघन क्यों किया जाता है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह फ़रमाया कि किसी औरत के लिए हलाल नहीं कि शौहर के अलावा किसी की मौत पर तीन दिन से ज़्यादा सोग करे, और यह इजाज़त भी सिर्फ़ औरत के लिए है मर्द के लिए सोग करने की इजाज़त नहीं। फिर यह चौदह सौ साल गुज़र जाने के बाद कैसा सोग हो रहा है? क्या हज़रत हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु अपने नाना जान सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इरशादात के ख़िलाफ़ चलने वालों से ख़ुश होंगे? क्या ऐसे नाफ़रमानों के लिए जिन्होंने दीने मुहम्मदी में अपनी तरफ़ से अहकाम का इज़ाफ़ा कर दिया, हज़रत नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और हज़रत हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु सिफ़ारिश करेंगे? हदीस शरीफ़ में तो आया है कि जिन लोगों ने दीने मुहम्मदी में अदल-बदल कर दिया उनको हौज़े कौसर से हटा दिया जायेगा और रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फ़रमायेंगे:

"दूर हों दूर हों जिन्होंने मेरे बाद मेरे दीन को बदला"

मुल्ला अली क़ारी रहमतुल्लाहि अलैहि अपनी किताब "अल्-मौज़ूआतुल् कबीर" में लिखते हैं कि:

तर्जुमा: और सफ़ज़ियों में अजम के मुल्कों के अन्दर जैसे ख़ुरासान, इराक़ और मा-वराउन्नहर के शहरों में बड़े-बड़े गुनाहों के काम रिवाज पाये हुए हैं- जैसे काले कपड़े पहनते हैं और शहरों में घूमते हैं और अपने सिरों और जिस्मों को मुख़्तलिफ़ तरीक़ों से ज़ख़्मी करते हैं, और इसका दावा करते

हैं कि यह हज़रात अहले बैत रज़ियल्लाहु अ़न्हुम से मुहब्बत करने वाले हैं हालाँकि वे उनसे बेज़ार हैं। (पेज 1050)

इस्लाम में मर्द के लिए सोग किसी मौक़े पर भी जायज़ नहीं

फ़तावा आलमगीरी में है:

यानी तसल्ली के उनवान से मर्दों को काले कपड़े पहनना और उनको फाड़ना जायज़ नहीं। एक हदीस में है कि सरकारे दो जहाँ सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया:

हदीस: मैं उससे बेज़ार हूँ-जो (किसी की वफ़ात पर ग़म ज़ाहिर करने के लिए) सर मुंड़ाये और शोर मचाये और कपड़े फाड़े।

कपड़े फाड़ना मर्द व औ़रत हर एक के लिए हराम है। सब जानते हैं कि ख़ुदा-ए-पाक के आख़िरी रसूल सरवरे आ़लम हमारे आक़ा मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मुकम्मल दीन देकर दुनिया से तशरीफ़ ले गये। अल्लाह तआ़ला का इरशाद है कि:

तर्जुमा: आज मैंने तुम्हारे लिए तुम्हारा दीन मुकम्मल कर दिया और तुम पर अपना इनाम पूरा कर दिया और तुम्हारे लिए दीन इस्लाम को पसन्द कर लिया। (सूरः मायदा आयत 3)

चूँकि दीन इस्लाम कामिल है इसलिए इसमें हराम हलाल की मुकम्मल तफ़सीलात मौजूद हैं। और सवाब व अ़ज़ाब के कामों से पूरी तरह आगाह फ़रमा दिया गया है, और ज़िन्दगी गुज़ारने के पूरे तरीक़े बता दिये हैं, और ज़िन्दगी के हर क्षेत्र के बारे में हिदायात दे दी गयी हैं। अब किसी को इख़्तियार नहीं है कि वह दीन में इज़ाफ़ा कर दे या हलाल को हराम क़रार दे दे, या हराम को हलाल कर दे। ख़ुदा की शरीअ़त में मर्दों के लिए सोग नहीं और औ़रतों के लिए शौहर की वफ़ात पर सिर्फ़ चार माह दस दिन सोग करना वाजिब है, और किसी दूसरे अ़ज़ीज़ की मौत पर सिर्फ़ तीन दिन तक औ़रत को सोग करना जायज़ है। फिर शरई हुक्म से आगे बढ़कर मर्दों को सोग करना और सोग के कपड़े पहनना या औ़रत को ऊपर बयान हुई तफ़सील के ख़िलाफ़ सोग करना दीन में कहाँ से दाख़िल हो गया?

इस्लामी शरीअ़त ने मोहर्रम में मियाँ-बीवी के मिलाप पर या अच्छे कपड़े पहनने या मेहंदी लगाने या किसी तरह का बनाव-सिंघार इख़्तियार करने पर

कोई पाबन्दी नहीं लगायी तो यह पाबन्दी अपनी तरफ़ से लगा ली। अल्लाह पाक ने जो कुछ हलाल क़रार दिया उसको क्यों हराम किया? कुरआन व हदीस की हिदायत छोड़कर गुमराही में क्यों लगे?

कुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमाः आप फ़रमा दीजिये कि यह तो बतलाओ कि अल्लाह तआला ने तुम्हारे लिए जो कुछ रिज़्क़ भेजा था फिर तुमने उसका कुछ हिस्सा हराम और कुछ हलाल क़रार दे लिया। आप पूछिये कि क्या तुमको ख़ुदा ने हुक्म दिया है या अल्लाह पर झूट बाँधते हो। (सूरः यूनुस आयत 59)

इस आयत में इसकी निन्दा और बुराई बयान की गयी है कि अपनी जानिब से हराम को हलाल या हलाल को हराम कर लिया जाये।

और अल्लाह तआला का इरशाद है:

तर्जुमाः और जिन चीज़ों के बारे में तुम्हारा महज़ झूटा ज़बानी दावा है उनके बारे में यूँ मत कह दिया करो कि फ़लानी चीज़ हलाल है और फ़लानी हराम है, (जिसका हासिल यह होगा कि) अल्लाह पर झूठी तोहमत लगा दोगे, बेशक जो लोग अल्लाह पर झूट लगाते हैं वे फ़लाह न पायेंगे।

(सूरः नह्ल आयत 116)

इस आयत में भी इस बात की मज़म्मत और बुराई की गयी है कि अपनी तरफ़ से हलाल व हराम तजवीज़ कर लिया जाये। जो चीज़ अल्लाह तआला की तरफ़ से हलाल है वह हलाल ही रहेगी मोहर्रम का महीना हो या कोई भी दिन हो। और जो चीज़ हराम है हराम ही रहेगी। बन्दों को हलाल या हराम क़रार देने का कोई इख़्तियार नहीं। अल्लाह तआला समझ दे और अमल की तौफ़ीक़ दे। आमीन

तलाक़ हो जाये तो बच्चों की परवरिश कौन करे?

हदीसः (155) हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि एक औरत ने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! बेशक यह जो मेरा बेटा है मेरा पेट इसके लिए बर्तन रह चुका है और मेरी छाती इसके लिए मश्कीज़ा रही है। (जिससे यह दूध पीता रहा है) और मेरी गोद इसके लिए हिफ़ाज़त की जगह रही है। और अब माजरा यह है कि इसके बाप ने मुझे तलाक़ दे दी है और इसको मुझसे अलग करना चाहता है। इसके जवाब में

हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः तू इसकी परवरिश की ज़्यादा हक़दार है जब तक कि तू निकाह न कर ले। (मिश्कात शरीफ़ पेज 293)

तशरीहः अल्लाह तआ़ला ने इनसानों में बच्चे पैदा करने और नस्ल को आगे बढ़ाने का सिलसिला जारी रखा है। बच्चे कमज़ोर, ना-समझ और बेसहारा पैदा होते हैं, उनकी परवरिश (पालन-पोषण) और देखभाल माँ-बाप के ज़िम्मे कर दी गयी है। वे शरअ़न् भी उनकी परवरिश के ज़िम्मेदार हैं और तबई तौर पर ममता होने की वजह से ख़ुद भी परवरिश करने पर मजबूर होते हैं।

आ़म तौर पर यही होता है कि बच्चे माँ-बाप के साये में पलते बढ़ते और फलते-फूलते हैं, लेकिन कभी इस्लामी शरीअ़त के मिज़ाज के ख़िलाफ़ मियाँ-बीवी जुदाई का काम कर बैठते हैं यानी दोनों अ़लैहदगी चाहने लगते हैं जिसकी वजह से तलाक़ होती है या शौहर अपनी ना-समझी से तलाक़ दे बैठता है, या अल्लाह की क़ायम की हुई सीमाओं पर क़ायम न रह सकने की वजह से तलाक़ दे देना ही मुनासिब मालूम होता है। अगर ऐसा हो जाये तो इसमें जहाँ और कई क़िस्म की तकलीफ़ें सामने आती हैं उनमें बच्चों की परवरिश का मसला भी एक मुसीबत बन जाता है। इस्लामी शरीअ़त ने इसके बारे में भी हिदायात दी हैं और अहकाम बताये हैं।

ऊपर की हदीस में इसी तरह का एक वाक़िआ़ ज़िक्र हुआ है कि एक औरत ने सरवरे आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अ़र्ज़ किया कि मेरे शौहर ने मुझे तलाक़ दे दी है और अब मेरे बच्चे को छुड़ाना चाहता है जिसके लिए मैंने बड़ी तकलीफ़ें उठाई हैं। एक मुद्दत तक उसे पेट में रखा और बहुत दिन तक उसे दूध पिलाया और गोदी में लिया, उसकी परवरिश की और तकलीफ़ों से बचाया, मेरा दिल नहीं चाहता कि उसे अपने से जुदा करूँ लेकिन उसका बाप मेरे पास रहने देने को तैयार नहीं। इसके जवाब में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि उसकी परवरिश की तू ही ज़्यादा हक़दार (पात्र) है, जब तक कि तू निकाह न कर ले।

जब मियाँ-बीवी में जुदाई हो जाये और रुजू की कोई सूरत न बन सके या ऐसी तलाक़ हो जाये जिसमें शरअ़न रुजू नहीं हो सकता, या दोबारा निकाह करने पर दोनों फ़रीक़ राज़ी न हों या शरअ़न् दोबारा निकाह न हो सकता हो तो मजबूरन मियाँ-बीवी अ़लैहदा हो जायेंगे। इस सूरत में औलाद

की परवरिश के लिए हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह क़ानून बतलाया है कि बच्चे की माँ परवरिश की ज़्यादा हक़दार है बशर्तेकि किसी दूसरे शख़्स से निकाह न कर ले।

हदीस की शरह लिखने वाले आलिमों ने बतलाया है कि अगर औरत बिल्कुल किसी से निकाह न करे तो उसे परवरिश का हक़ मिलेगा, और अगर किसी ऐसे शख़्स से निकाह कर ले जो बच्चे का मेहरम हो जैसे बच्चे का चचा हो, तब भी माँ का परवरिश का हक़ ख़त्म न होगा, क्योंकि बच्चे का मेहरम खुद उसको मुहब्बत से रखेगा और उसके निकाह में जाने के बाद बच्चे की माँ उसकी देखभाल में लगेगी तो नये शौहर को नागवारी न होगी। अलबत्ता अगर बच्चे की माँ किसी ऐसे शख़्स से निकाह कर ले जो बच्चे का मेहरम न हो तो उसका परवरिश का हक़ ख़त्म हो जायेगा क्योंकि वह शख़्स इसकी परवरिश में लगने पर एतिराज़ करेगा और यह कह सकता है कि तू मेरे हुक़ूक़ अदा नहीं करती, या मेरे हुक़ूक़ में इसकी परवरिश की वजह से फ़र्क़ आता है। मुमकिन है कि वह बच्चे को ढेढ़ी नज़र से देखे और बच्चे को डाँट-डपट करे। और यह भी मुमकिन है कि उसकी पहली बीवी से जो औलाद हो या इस बीवी से जो औलाद हो जाये उसकी मुहब्बत के सामने बच्चे से किसी क़िस्म की दिक़्क़त महसूस करे। इन जैसी मस्लेहतों की वजह से माँ का परवरिश का हक़ उस सूरत में ख़त्म कर दिया गया जब वह बच्चे के ना-मेहरम से निकाह कर ले।

माँ को जो परवरिश का हक़ दिया जाता है वह उसका हक़ है। अगर वह अपना हक़ इस्तेमाल न करना चाहे तो उसको मजबूर नहीं कर सकते कि ज़रूर परवरिश करे। हाँ! अगर कोई और औरत परवरिश करने वाली न मिले तो उसकी माँ को मजबूर किया जायेगा कि उसकी परवरिश करे। और अगर माँ ने परवरिश का हक़ ख़त्म कर लिया तो शरअन् जितनी मुद्दत परवरिश करने का हक़ रखा गया (जिसकी तफ़सील आगे आयेगी) उस मुद्दत के अन्दर-अन्दर फिर अपना हक़ ले सकती है। यानी परवरिश का मुतालबा कर सकती है। इसी तरह जब बच्चे के ना-मेहरम से निकाह करने की वजह से परवरिश का हक़ ख़त्म हो गया और उसके बाद दूसरे शौहर से जुदाई हो जाये तो फिर परवरिश के हक़ का मुतालबा कर सकती है।

मसला: जिस ज़माने में बच्चे की माँ तलाक़ के बाद इद्दत गुज़ार रही

हो उस ज़माने में जो बच्चा उसकी परवरिश में हो उसके दूध पिलाने की उजरत न ले। अलबत्ता इद्दत गुज़रने तक शौहर पर इद्दत गुज़ारने वाली होने की वजह से उसका खाना कपड़ा और ज़रूरी ख़र्च वाजिब है।

मसला: अगर तलाक़ के बाद इद्दत गुज़र गयी तो बच्चे की माँ को उसके बाप से दूध पिलाने की उजरत तलब करने का हक़ है और इस सूरत में बाप के लिए जायज़ नहीं कि वह यूँ कहे कि जब उजरत देना ही है तो मैं किसी दूसरी औरत से उजरत पर दूध पिलवा लूँगा। चूँकि जो शफ़क़त माँ को हो सकती है दूसरी औरत को नहीं हो सकती। हाँ! अगर दूसरी औरत माँ से कम उजरत पर राज़ी हो तो माँ को यह हक़ हासिल न होगा कि बच्चे को खुद दूध पिलाये और उजरत ज़्यादा ले, अलबत्ता माँ को इतना हक़ है कि दूध पिलाने वाली औरत को अपने पास रखे ताकि बच्चे से जुदाई न हो। और अगर माँ दूध पिलाने पर रज़ामन्द हो लेकिन उसका दूध बच्चे के लिए नुक़सानदेह हो तो बाप दूसरी औरत से दूध पिलवा सकता है।

मसला: अगर माँ कहे कि मैं इसे दूध नहीं पिलाती तो उसे मजबूर नहीं किया जा सकता। हाँ! अगर बच्चा किसी और औरत का दूध क़बूल ही न करे तो माँ पर वाजिब होगा कि उसे दूध पिलाये।

मसला: जो माँ बद-किरदार (चरित्रहीन) हो जिसकी बुरी हरकतों और बदकारियों का असर बच्चे पर पड़ सकता हो तो बच्चे को जब तक समझ न आये उसको माँ के पास रखा जा सकता है, उसके बाद उससे ले लिया जायेगा। और अगर कोई माँ ऐसी है कि बच्चे को छोड़कर ज़्यादातर समय घर से बाहर रहती है और बच्चे की देखभाल नहीं करती जिससे उसके ज़ाया होने का ख़तरा है तो इस सूरत में उसे परवरिश का हक़ नहीं दिया जायेगा।

मसला: अगर बच्चे की माँ मर जाये या परवरिश का हक़ इस्तेमाल न करना चाहे यानी बच्चे को अपनी परवरिश में लेने से इनकार कर दे या किसी वजह से उसका परवरिश का हक़ उससे छीन लिया जाए तो इस सूरत में परवरिश का हक़ नानी को पहुँचता है। अगर नानी न हो या मौजूद हो लेकिन परवरिश से इनकार कर दे तो फिर परनानी को परवरिश का हक़ मिलेगा। अगर वह भी न हो या परवरिश में लेने से इनकार कर दे तो दादी को और उसके बाद परदादी को और उसके बाद सगी बहनों को और उनके बाद माँ-शरीक बहनों को और उनके बाद बाप-शरीक बहनों को। और अगर

इनमें से कोई न हो या परवरिश का हक़ इस्तेमाल करने से इनकारी हों तो फिर ख़ाला और उसके बाद फूफी को परवरिश का हक़ मिलेगा। वह भी न हो या परवरिश का हक़ इस्तेमाल न करना चाहे तो माँ की ख़ाला को फिर बाप की ख़ाला को हक़ पहुँचेगा। ध्यान रहे कि बच्चा चाहे किसी की भी परवरिश में हो बच्चे के ख़र्चे बाप के ज़िम्मे होंगे।

मसलाः बच्चे के रिश्तेदारों में अगर कोई औरत परवरिश के लिए न मिले तो अब बाप उसकी परवरिश करने का हक़दार है। वह भी न हो तो फिर दादा को परवरिश का हक़ पहुँचता है, वह भी न हो तो परदादा को। इनमें से कोई न हो तो सगे भाई को, वह न हो तो बाप-शरीक भाई को हक़ पहुँचता है, वह भी न हो तो जब कभी ऐसा वाक़िआ पेश आये तो मोतबर आ़लिमों से मालूम कर लिया जाये।

मसलाः जिसे बच्चे की परवरशि का हक़ पहुँचता हो उसे लड़के को सात साल की उम्र हो जाने तक और लड़की को नौ साल की उम्र हो जाने तक परवरशि का हक़ मिलेगा। यानी इतनी मुद्दत तक अपने पास रखकर परवरिश करने का हक़ है।

नौजात बच्चे के कान में अज़ान देना और नेक लोगों की ख़िदमत में लेजाकर तहनीक (1) कराना

हदीसः (156) हज़रत अबू राफ़ेअ़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने बयान फ़रमाया कि मैंने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को देखा कि जब हज़रत हसन रज़ियल्लाहु अ़न्हु पैदा हुए तो आपने उनके कान में अज़ान दी, जो अज़ान नमाज़ के लिए दी जाती है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 363)

हदीसः (157) हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु की बेटी असमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने बयान फ़रमाया कि (मेरे बच्चे) अ़ब्दुल्लाह रज़ि० का गर्भ मुझे मक्का ही के रहने के ज़माने में ठहर गया था, फिर उसकी पैदाइश हिजरत के बाद क़ुबा में हुई (जो शहर मदीना से तक़रीबन तीन मील के फ़ासले पर है)। पैदाइश के बाद मैं उसको लेकर हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुई और उसको मैंने आपकी गोद में

(1) तहनीक के मायने हैं मुँह से खजूर या छुहारा वग़ैरह कोई मीठी चीज़ चबाकर बच्चे के मुँह में डालना और उंगली के ज़रिये उसके तालू से मल देना।

रख दिया। उसके बाद आपने एक छुहारा मंगाया और उसको चबाकर बच्चे के मुँह में अपने मुँह से डाल दिया, और फिर उसके तालू से मल दिया। उसके बाद उसके लिए दुआ फ़रमायी और बरकत की दुआ दी। (हिजरत के बाद मुहाजिरीन में पैदा होने वाला) इस्लाम (की तारीख़) में यह पहला बच्चा था। (मिश्कात शरीफ़ पेज 392)

तशरीह: हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अन्हा उम्मुल-मोमिनीन, हज़रत आयशा सिद्दीका रज़ियल्लाहु अन्हा की बहन थीं। हज़रत अबू बक्र रज़ियल्लाहु अन्हु की बड़ी बेटी थीं। मक्का ही में मुसलमान हो गयी थीं। इस्लाम की दावत को जिन मर्दों और औरतों ने कबूल किया उनमें उनका अट्ठारहवाँ नम्बर था, यानी उनसे पहले सिर्फ़ सतरह (17) आदमी मुसलमान हुए थे।

उनका निकाह मक्का ही में हज़रत जुबैर बिन अवाम रज़ियल्लाहु अन्हु से हो गया था। हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अन्हा ने ऐसे ज़माने में हिजरत की जबकि बच्चे की पैदाइश का ज़माना क़रीब था। मक्का से मदीने तक तीन सौ मील का सफ़र कैसी-कैसी मशक़्क़तों से तय किया होगा अल्लाह ही को इसका इल्म है। सबसे पहले 'कुबा' में पड़ाव डाला जो मदीना मुनव्वरा से दो-तीन मील की दूरी पर एक बस्ती थी। (अब तो वह एक शहर की तरह है और मदीना मुनव्वरा से कुबा तक इमारतें बनती चली गयी हैं)। कुबा पहुँचीं तो बेटे अब्दुल्लाह बिन जुबैर रज़ियल्लाहु अन्हु की पैदाइश हुई। हज़रत अब्दुल्लाह बिन जुबैर रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि मैंने ऐसे ज़माने में हिजरत की कि मैं अपनी माँ के पेट में था। (अल-इसाबा)

हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अन्हा बच्चे की पैदाइश के बाद इसको हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास ले गईं और आपकी गोद में रख दिया। आपने छुहारा मंगाया और उसे चबाकर अपने मुबारक मुँह से बच्चे के मुँह में डाल दिया (और उंगली मुबारक से) तालू पर मल दिया। आपने बच्चे के सर पर हाथ फेरा और उसके लिए अल्लाह की बारगाह में दुआ की और बरकत की दुआ दी और अब्दुल्लाह नाम तजवीज़ फ़रमाया।

सबसे पहले बच्चे के पेट में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मुबारक मुँह का पानी मुबारक (लुआब) दाख़िल हुआ। इस्लाम की तारीख़ में यह बच्चा अब्दुल्लाह बिन जुबैर रज़ियल्लाहु अन्हु के नाम से मशहूर हुआ। इस बच्चे ने दीन इस्लाम की बहुत ख़िदमत की जिसका कुछ तज़किरा

इन्शा-अल्लाह तआ़ला हम अभी लिखेंगे। इनकी पैदाइश से मुसलमानों को बहुत ख़ुशी हुई और ख़ुशी में अल्लाहु अकबर कहा क्योंकि यहूदियों ने यह मशहूर कर दिया था कि हमने मुसलमानों पर जादू कर दिया है अब उनके औलाद न होगी। अल्लाह तआ़ला ने उन दुश्मनों की बात झूठी कर दिखायी और मुहाजिर व अन्सार को ख़ूब औलाद से नवाज़ा।

हज़रत असमा रज़ि० ने जो अ़मल किया कि नौज़ात बच्चे को हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में ले गईं। आम तौर से हज़रात सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम इस पर अ़मल करते थे। नौज़ात बच्चों को आपके पास ले जाते थे, आप उनकी 'तनहीक' फ़रमाते थे और उनको दुआ़ देते थे। तनहीक के मायने वही हैं जो हदीस शरीफ़ में गुज़रा कि अपने मुँह से खजूर चबाकर बच्चे के मुँह में डाल देते थे और उंगली के ज़रिये उसके तालू से मल देते थे। (मुस्लिम)

बच्चे के कान में अज़ान व तकबीर

यह इस्लामी तरीक़ा है कि जब बच्चा पैदा हो तो नहला-धुलाकर उसके दाहिने कान में अज़ान दी जाये और बायें कान में तकबीर कही जाये। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत हसन बिन अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु के कान में अज़ान दी और अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर के कान में उनके नाना हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अज़ान दी।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 393)

बच्चे के कान में अज़ान और तकबीर कहने में बड़ी हिक्मत है। बच्चा चूँकि अभी-अभी दुनिया में आया है इसलिए सबसे पहले उसके कान में अल्लाह का नाम पुकारा जाता है और ईमान और नमाज़ की दावत दी जाती है, और बताया जाता है कि तू दीने तौहीद पर है, इसी पर मरना और जीना है।

तहनीक सुन्नत है

तहनीक भी सुन्नत है। बच्चा किसी नेक दीनदार बुज़ुर्ग आदमी के पास ले जायें। उसके मुँह में छुहारा वग़ैरह चबवाकर तहनीक करायें, जिसका तरीक़ा अभी ऊपर गुज़रा। आजकल माँ-बाप नेक आदमियों से दूर भागते हैं, मॉडर्न फ़ैशन और दुनियादारी की हवा ने नेकों से ऐसा दूर किया है कि नेक आदमी

से क़रीब होने को गोया मौत समझते हैं, फिर भला अपने जिगर के टुकड़े को मौलवी-मुल्ला के पास लेजाकर कैसे तहनीक करा सकते हैं? अब तो सबसे पहले बच्चे के लिए यूरोपियन ड्रेस की फ़िक्र होती है, नेक बनाने का इरादा हो तो नेकों की तलाश हो और नेक आदमियों के पास लेजाकर तहनीक करायें और बरकत की दुआ लें। समाज में बरकत और बरकत की दुआ की कोई हैसियत ही नहीं रही, इन बातों को मुल्ला की बड़ समझा जाता है।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तमाम दुनिया वालों के लिए सरापा रहमत थे। और बच्चों की तरफ़ तो ख़ास तौर पर आपकी शफ़क़त मुतवज्जह रहती थी। ख़ुद अपने बच्चों और अपनी साहिबज़ादियों ख़ातून-ए-जन्नत सय्यदा फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा के बच्चों से तो आपको बहुत प्यार था ही, दूसरे मुसलमानों के बच्चों को भी प्यार फ़रमाते थे। उनके सरों पर हाथ फैरते थे। एक बार हज़रत उम्मे कैस रज़ियल्लाहु अ़न्हा अपने बच्चे को लेकर आँ हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुईं, बच्चे को आपने गोद में बैठा लिया, उसने आपके मुबारक कपड़े पर पैशाब कर दिया। (बुख़ारी व मुस्लिम)

जब मक्का मुअ़ज़्ज़मा फ़तह हुआ तो मक्का वालों ने अपने बच्चों को आपकी ख़िदमत में लाना शुरू कर दिया। आप उनके लिए बरकत की दुआ फ़रमाते, सरों पर हाथ फैरते जाते थे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 384)

बहुत-से लोग अपने या दूसरों के बच्चों को गोद में लेने और उनको क़रीब करने से बचते हैं और समझते हैं कि जैसे यह कोई बुज़ुर्गी की बात है, और बच्चों को खिलाना वक़ार के ख़िलाफ़ है। ये लोग रहमते आलम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत से दूर हैं। जो लोग इस्लामी उलूम व आमाल की दावत देने वाले हैं उनके लिए तो इस सुन्नत पर अ़मल करना बहुत ज़रूरी है। जब बच्चों को दीनदार लोग क़रीब और मानूस करेंगे और अपनी बुज़ुर्गी का रौब और डर उनके दिल से निकाल देंगे तो उनको दीन पर लगाना आसान होगा, इन्शा-अल्लाह तआ़ला।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अ़न्हु के हालात

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अ़न्हु के पेट में सबसे पहले हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का 'लुआ़ब' (मुंह का पानी, राल)

मुबारक पहुँचा और आपने उनके लिए बरकत की दुआ की। फिर सात-आठ साल की उम्र में उन्होंने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से बैअ़त की, इस सबका असर बहुत कुछ ज़ाहिर हुआ। उनके बड़े-बड़े फ़ज़ाइल हैं। नसब (ख़ानदान और नस्ल) के एतिबार से वह हज़रत अबू बक्र रज़ियल्लाहु अ़न्हु के नवासे थे और हज़रत ज़ुबैर बिन अ़वाम रज़ियल्लाहु अ़न्हु के बेटे थे जो उन दस सहाबा में से थे जिन्हें दुनिया ही में जन्नती होने की खुशख़बरी नबी पाक की ज़बान मुबारक से मिल गयी थी (जिन्हें अशरा-ए-मुबश्शरा कहा जाता है) और हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनको अपना हवारी (यानी ख़ासुल-ख़ास आदमी) बनाया था। उनकी दादी हज़रत सफ़िया रज़ियल्लाहु अ़न्हा थीं जो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की फूफी थीं और उनकी वालिदा हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ि० की साहिबज़ादी असमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा थीं।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अ़र्ज़ किया गया कि क़ुरैश के चन्द लड़के (अ़ब्दुल्लाह बिन जाफ़र, अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर, उमर बिन सलमा) ज़रा बड़े हो गये हैं, आप उनको बैअ़त फ़रमा लेते तो अच्छा होता, इससे उनको आपकी बरकत नसीब हो जायेगी और एक क़ाबिले ज़िक्र फ़ज़ीलत हासिल हो जायेगी। आपने दरख़्वास्त मन्ज़ूर फ़रमा ली, जब ये कम-उम्र लड़के आपकी ख़िदमत में हाज़िर हुए तो तबई तौर पर झिझकने लगे और ठिठक कर पीछे रह गये, अलबत्ता उनमें से हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अ़न्हु आगे बढ़े और आँ हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनको देखकर तबस्सुम फ़रमाया (यानी आप मुस्कुराए) और इरशाद फ़रमाया "यह अपने बाप का बेटा है" यानी अपने बाप की तरह बहादुर और हिम्मत वाला है, और ख़ैर की तरफ़ आगे बढ़ने वाला है। सात या आठ साल की उम्र में आँ हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से बैअ़त की और इनकी नौ साल की उम्र थी जब दोनों जहान के सरदार हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात हुई। (अल-इसाबा)

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अ़न्हु बहुत ज़्यादा इबादत करते थे। रोज़ों पर रोज़े रखते चले जाते थे। नमाज़ से ख़ास शग़फ़ था और बहुत दिल लगाकर नमाज़ पढ़ते थे। जब नमाज़ पढ़ने लगते थे तो ऐसा मालूम होता था कि जैसे कोई सुतून खड़ा है (नाम को भी हरकत महसूस न होती थी)।

अपनी ज़िन्दगी की रातों को तीन तरह गुज़ारते थे- एक रात नमाज़ में खड़े-खड़े और दूसरी रात रुकूअ़ और तीसरी रात सज्दे में गुज़ारते थे। सुबह तक यही शग़ल रहता था।

अ़मर बिन दीनार से नक़ल किया गया है कि मैंने कोई शख़्स अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० से बढ़कर अच्छी नमाज़ पढ़ने वाला नहीं देखा। काबा शरीफ़ के क़रीब 'हतीम' में बड़े इतमीनान से उस वक़्त भी नमाज़ में मशग़ूल थे जबकि दुश्मनों की जानिब से मिनजनीक़ (यह तौप की तरह का एक हथियार होता था जिससे पत्थर और गोले बरसाये जाते थे) से गोले बरसाये जा रहे थे। इनके कपड़ों में गोले आकर लगते थे मगर यह तवज्जोह न फ़रमाते थे। उसमान बिन अबी तलहा का बयान है कि अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से न बहादुरी में मुक़ाबला किया जा सकता है, न इबादत में, न बलाग़त (यानी बेहतरीन और आला दर्जे की अ़रबी ज़बान जानने) में। आपकी आवाज़ बहुत बुलन्द थी। जब ख़ुतबा देते थे तो ऐसा मालूम होता था कि पहाड़ जवाब दे रहे हैं। (अल-इसाबा)

जंगे जमल के मौक़े पर जब हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अ़न्हु को लाशों के दरमियान से ज़िन्दा निकाला गया तो उनके जिस्म में चालीस से कुछ ऊपर ज़ख़्म थे। (अल-इसाबा)

इस क़द्र ज़ख़्म आये मगर उस वक़्त शहीद नहीं हुए। अल्लाह तआ़ला को उनसे काम लेना था इतनी ज़बरदस्त मार-काट में भी अल्लाह तआ़ला ने ज़िन्दा बचा दिया था।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अ़न्हु के भतीजे हज़रत हिशाम बिन उर्वा ने फ़रमाया कि हमारे चचा अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० ने जब बचपन में बिल्कुल शुरू में बोलना शुरू किया तो ज़बान से पहला लफ़्ज़ "अस्सैफ़" निकला। 'सैफ़' तलवार को कहते हैं। इस लफ़्ज़ को बोलते ही रहते थे। यह हाल देखकर उनके वालिद साहिब फ़रमाते थे कि ख़ुदा की क़सम! तू क़त्ल व क़िताल (मार-काट) के बहुत दिन देखेगा। (तारीख़ुल ख़ुलफ़ा)

यज़ीद की बैअ़त से इनकार करना और मक्का में ख़िलाफ़त क़ायम करना

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने यज़ीद की बैअ़त से

इनकार कर दिया था और सन् 64 या सन् 65 हिजरी में ख़ुद अपनी ख़िलाफ़त क़ायम कर ली थी। हिजाज़, यमन, इराक़ और ख़ुरासान के लोग आपकी इताअ़त के दायरे में दाख़िल हो गये थे। राजधानी मक्का मुअ़ज़्ज़मा में रही और नौ साल के लगभग ख़लीफ़ा रहे। आठ साल तक मुसलमानों के इमाम और बादशाह होने की हैसियत से लोगों को हज कराया। आख़िरकार हज्जाज बिन यूसुफ़ ने जमादियुल-आख़िर सन् 73 हिजरी में आपको शहीद कर दिया।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की ख़िलाफ़त के मुक़ाबले में अ़ब्दुल-मलिक बिन मरवान ने अपनी हुकूमत बना ली थी। उसके क़ब्ज़े में 'शाम' (सीरिया) और 'मिस्र' थे। उसके गवर्नर हज्जाज बिन यूसुफ़ ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अ़न्हु पर चढ़ायी की और मक्का मुअ़ज़्ज़मा का घेराव कर लिया और छह महीने सतरह दिन घेराव रहा, आख़िरकार हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अ़न्हु को शहीद कर दिया गया और अ़ब्दुल-मलिक बिन मरवान का क़ब्ज़ा मक्का वग़ैरह पर हो गया।

शहीद होने का वाक़िआ

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अ़न्हु दुश्मनों के घेराव के ज़माने में एक दिन अपनी वालिदा हज़रत असमा बिन्ते अबू बक्र रज़ियल्लाहु अ़न्हा के पास गये और पूछा कि अम्मी जान! आपका क्या हाल है? उन्होंने फ़रमाया कि मैं बीमार हूँ। बेटे ने कहा "मौत में राहत है" हज़रत असमा ने फ़रमाया "ऐसा मालूम होता है कि तू अपने सामने मेरी मौत की आरज़ू करता है, हालाँकि मैं चाहती हूँ कि जब तक दुश्मन से जंग करके तेरा मामला साफ़ न हो जाये उस वक़्त तक मैं ज़िन्दा रहूँ। अगर तू क़त्ल कर दिया जाएगा तो मैं बेटे की मौत पर सब्र करके सवाब ले लूँगी, और अगर तू अपने दुश्मन के मुक़ाबले में कामयाब हो जायेगा तो मेरी आँखें ठण्डी हो जायेंगी।"

यह बात सुनकर हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर हंसे। फिर जिस दिन शहीद किया गया उस दिन अपनी वालिदा के पास गये। वह उस वक़्त मस्जिद में थीं, उन्होंने नसीहत की कि बेटा! क़त्ल के ख़ौफ़ से दुश्मन की तरफ़ से कोई ऐसी चीज़ क़बूल न करना जिससे ज़िल्लत का सामना करना पड़े। ख़ुदा की क़सम! इज़्ज़त में तलवार की धार बरदाश्त कर लेना इससे बेहतर है कि

आदमी ज़िल्लत बरदाश्त करे और तलवार की धार की बजाये कोड़े की मार खाकर ज़िल्लत की ज़िन्दगी गुज़ारे। उसके बाद लड़ना शुरू किया, दोनों हाथ में तलवारें थीं, ख़ूब जंग की यहाँ तक कि सफ़ा पहाड़ की तरफ़ से उनकी आँखों के दरमियान एक पत्थर आकर लगा उसके बाद दुश्मन उनको मारते रहे यहाँ तक कि उनका क़त्ल कर दिया। क़त्ल करने के बाद शामियों ने ख़ुशी में अल्लाहु अकबर कहा। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि इस बच्चे की पैदाइश के दिन जिन लोगों ने ख़ुशी में अल्लाहु अकबर कहा वे उन लोगों से बेहतर थे जो इसके क़त्ल पर अल्लाहु अकबर कह रहे हैं। (अल-इस्तीआ़ब)

हज़रत असमा की हज्जाज से बेख़ौफ़ गुफ़्तगू

दुश्मनों ने क़त्ल करने के बाद हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर की लाश को सूली पर चढ़ा दिया था। हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा हज्जाज बिन यूसुफ़ के पास गईं। उस वक़्त नाबीना (आँखों से अन्धी) हो चुकी थीं, उन्होंने हज्जाज से कहा क्या इस सवार के उतरने का वक़्त नहीं आया? हज्जाज ने कहा यह मुनाफ़िक़? हज़रत असमा रज़ि० ने जवाब दिया कि अल्लाह की क़सम! वह मुनाफ़िक़ नहीं था बल्कि रोज़े रखने वाला और रातों को नमाज़ पढ़ने वाला था, और अच्छे सुलूक से पेश आने वाला था। हज्जाज ने कहा बुढ़िया तू चली जा तेरी अ़क्ल ख़राब हो चुकी है। हज़रत असमा ने फ़रमाया कि अल्लाह की क़सम! मेरी अ़क्ल ख़राब नहीं हुई। मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सुना है कि सक़ीफ़ के क़बीले में एक बहुत बड़ा झूठा और एक बहुत बड़ा फ़सादी होगा। बहुत बड़े झूठे को तो हम देख चुके हैं (यानी मुख़्तार बिन उबैद सक़फ़ी को) और फ़सादी तो मेरे ख़्याल में तू ही है।

एक रिवायत में यह भी है कि हज्जाज बिन यूसुफ़ ने हज़रत असमा को बुलवाया, उन्होंने आने से इनकार कर दिया, उसने फिर क़ासिद भेजा कि ज़रूर चली आ वरना ऐसा शख़्स भेजूँगा जो तेरे बाल पकड़कर खींच लायेगा। हज़रत असमा ने फ़रमाया ख़ुदा की क़सम! मैं तेरे पास नहीं आऊँगी यहाँ तक कि तू कोई ऐसा शख़्स भेजे जो मेरे बाल पकड़कर खींचता हुआ ले जाये। इस पर हज्जाज ख़ुद रवाना हुआ और हज़रत असमा के पास आकर कहने लगा कि तूने देखा कि मैंने अल्लाह के दुश्मन के साथ क्या किया (यानी

तेरे बेटे अ़ब्दुल्लाह को क़त्ल कर दिया)। हज़रत असमा रज़ि० ने फ़ौरन जवाब दिया कि मेरे नज़दीक इस जंग का ख़ुलासा यह है कि तूने मेरे बेटे की दुनिया ख़राब कर दी और उसने तेरी आख़िरत ख़राब कर दी। (अल-इस्तीआ़ब)

अ़ब्दुल-मलिक बिन मरवान की तरफ़ से हुक्म आने पर हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर को हज्जाज बिन यूसुफ़ ने सलीब (सूली) से उतरवा दिया। हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा अल्लाह तआ़ला से दुआ़ करती थीं कि ऐ अल्लाह! मुझे उस वक़्त तक मौत मत दीजियो जब तक कि मेरे बेटे की लाश मेरे पास न आ जाये। हज़रत इब्ने अबी मुलैका ने फ़रमाया कि मैं सबसे पहला शख़्स हूँ जिसने हज़रत असमा को इस बात की ख़ुशख़बरी दी कि आपके बेटे की लाश सलीब से उतार दी गयी है। उन्होंने एक टब मंगाया और मुझे हुक्म दिया कि उस लाश को ग़ुस्ल दे दो। चुनाँचे हमने ग़ुस्ल देना शुरू किया। जिस अंग को हाथ लगाते थे हाथ के साथ उखड़ा चला आता था। हम ग़ुस्ल देते रहे और बदन के हिस्सों को कफ़न के कपड़ों में तरतीब से रखते रहे। जब ग़ुस्ल व कफ़न से फ़ारिग़ हुए तो हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने अपने बेटे के जनाज़े की नमाज़ अदा फ़रमायी।

आज कहाँ हैं ऐसे बहादुर लड़के और ऐसी निडर और बेबाक माएँ। हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा की हिम्मत और हक़ कहने को देखो और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० की इबादत और बहादुरी पर नज़र करो। ये सहाबा हज़रात के हालात हैं, इनमें मर्द और औरतें और बच्चे सब ही इस्लाम के शेर और जान निछावर करने वाले थे। अल्लाह तआ़ला उनकी बहादुरी और दिलेरी और इबादत और इख़्लासे नीयत का कुछ हिस्सा हमें भी नसीब फ़रमाये।

हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा के सर में अगर दर्द हो जाता था तो सर पर हाथ रखकर फ़रमातीं कि यह गुनाहों की वजह से है। यह उन कुछ गुनाहों की सज़ा है, और जो गुनाह अल्लाह पाक बग़ैर सज़ा के माफ़ फ़रमा देते हैं वे तो बहुत ज़्यादा हैं।

शादी के बाद शुरू की ज़िन्दगी बहुत तंगी की गुज़ारी, फ़रमाती थीं कि जब ज़ुबैर बिन अ़वाम से मेरा निकाह हुआ तो उनकी मिलकियत में न कोई माल था न ग़ुलाम था और न कोई चीज़ थी। एक घोड़ा था जिसे मैं चारा

खिलाती थी और उसकी ख़िदमत करती थी और उनके ऊँटों को खजूर की गुठलियाँ कूटकर खिलाती थी, और वे गुठलियाँ उनकी ज़मीन से अपने ऊपर लादकर लाती थी, यहाँ तक कि हज़रत अबू बक्र रज़ियल्लाहु अन्हु ने एक ख़ादिम भेज दिया जिसने घोड़े की ख़िदमत का काम संभाल लिया, जिसकी वजह से मुझे मेहनत के कामों में कुछ आसानी हो गयी।

हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अन्हा का लकब ''ज़ातुन्नताक़ैन'' था। 'नताक़' पटके को कहते हैं (जो कपड़ा मेहनत के काम-काज करने या सजने के लिए कमर में बाँध लिया जाता है)। जब हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हिजरत का इरादा फ़रमाया तो हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अन्हा ने सफ़र के लिए खाना तैयार किया, उसको बाँधने का इरादा किया तो ऐसी कोई चीज़ न मिली जिससे खाने के सामान को बाँध देतीं लिहाज़ा अपना दुपट्टा फाड़कर आधे से सफ़र का तोशा बाँध दिया और आधा अपनी कमर में बाँध लिया। बाज़ रिवायतों में है कि इस मौके पर उनके वालिद हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने उनको मश्विरा दिया था कि अपना पटका फाड़कर एक टुकड़े से मश्कीज़ा और दूसरे से सफ़र का तोशा बाँध दो। चुनाँचे उन्होंने ऐसा ही किया, हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि इसके बदले अल्लाह तआ़ला तुम्हें जन्नत के दो पटके इनायत फ़रमायेगा।

हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अन्हा की पैदाइश हिजरत से 27 साल पहले मक्का में हुई थी। सन् एक हिजरी में मदीना मुनव्वरा को हिजरत की। वहाँ पहुँचकर हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अन्हु पैदा हुए। आख़िर उम्र में मक्का ही में क़्याम फ़रमाया, फिर 73 हिजरी में वहीं वफ़ात पायी।

अपने लड़के हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अन्हु के शहादत के वाक़िए के बाद दस-बीस दिन ज़िन्दा रहकर इस फ़ानी दुनिया को छोड़कर मौत के फ़रिश्ते को लब्बैक कहा। सौ साल की उम्र थी मगर न कोई दाँत टूटा था न अक़्ल में किसी तरह का फ़तूर आया था। अल्लाह तआ़ला उनके दर्जों को बुलन्द फ़रमाये, आमीन।

अक़ीके का बयान

हदीसः (158) हज़रत उम्मे कुर्ज़ रज़ियल्लाहु अन्हा ने बयान फ़रमाया

कि मैंने हज़रत रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सुना कि परिन्दों को उनकी जगहों पर रहने दो (और उनको उड़ाकर बुरा शगून न लो)। और मैंने नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से यह भी सुना कि अ़क़ीके में लड़के की तरफ़ से दो बकरियाँ और लड़की की तरफ़ से एक बकरी ज़िबह की जाये, और इसमें तुम्हारे लिए कोई नुक़सान की बात नहीं कि अ़क़ीके में ज़िबह किये जाने वाले जानवर नर हों या मादा हों। (मिश्कात पेज 362)

तशरीहः इस हदीस में अव्वल तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक बदशगूनी से मना फ़रमाया है जो मख़्सूस तरीक़े पर नुबुव्वत के ज़माने से पहले अ़रब में रिवाज पाये हुए थी।

जाहिलीयत के ज़माने में अ़रब के लोग जानवर उड़ाकर शगून लेते थे

जाहिलीयत (यानी इस्लाम के आने से पहले) के ज़माने में अ़रब के लोगों का यह तरीक़ा था कि जब किसी काम के लिए निकलते थे तो पेड़ पर बैठे हुए जानवरों को उड़ा देते थे और देखते थे कि जानवर किधर को उड़ा, दाईं तरफ़ को उड़ गया तो इसको मुबारक और अच्छा जानते थे, और यह समझते थे कि जिस काम के लिए निकले हैं वह हो जायेगा। और अगर जानवर बाईं तरफ़ को उड़ जाता तो इसको मनहूस और नामुबारक जानते थे, और यह समझकर कि हमारा काम नहीं होगा उस काम से रुक जाते थे। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जानवरों को उनकी जगहों पर बैठा रहने दो और शगून लेने के लिए उनको मत उड़ाओ।

मौजूदा ज़माने की बदशगूनी पर एक नज़र

अ़रब के जाहिलों की तरह आजकल भी नाम के मुसलमान तरह-तरह की बदशगूनियों में मुब्तला हैं। ख़ासकर औरतों में इस तरह की बातें बहुत मशहूर हैं।

अगर कोई शख़्स काम को निकला और बिल्ली सामने से गुज़र गयी या किसी को छींक आ गयी तो समझते हैं कि काम नहीं होगा। जूती पर जूती चढ़ गयी तो कहते हैं कि सफ़र पेश आने वाला है। आँख फड़कने लगी तो फ़लाँ बात होगी, या किसी के घर में लाल दाने डाल दें, बाँसे का काँटा डाल

दिया तो घर वालों में लड़ाई होगी, या मुर्ग़ी ने अज़ान दे दी तो गोया मुसीबत आ गयी, बस उसे ज़िबह करने को दौड़ पड़ते हैं। और मुख़्तलिफ़ इलाक़ों में मुख़्तलिफ़ क़ौमों में इस तरह बहुत-सी बातें मशहूर हैं। ये सब जाहिलाना ख़ुराफ़ात और ग़ैर-इस्लामी ख़्यालात हैं। जो कुछ होता है तक़दीर से होता है और अल्लाह के चाहने से होता है। जो नेक बन्दा है जिसका ख़ुदा पर कामिल ईमान है वह ख़ाम ख़्यालों में कभी नहीं पड़ता और वहम की दुनिया को कभी नहीं बसाता। हदीस शरीफ़ में फ़रमाया है कि परिन्दे से बुरा शगून लेना शिर्क है। (मिश्कात शरीफ़)

अगर किसी मुसलमान को कोई ऐसी चीज़ पेश आ जाये जिससे ख़्वाह-मख़्वाह ज़ेहन में बदशगूनी का ख़्याल हो जाये तो जिस काम के लिए निकला है उससे न रुके और यह दुआ पढ़े:

अल्लाहुम्-म ला यअ्ती बिल्-ह-सनाति इल्ला अन्-त व ला यद्फ़अुस्सय्यिआति इल्ला अन्-त व ला हौ-ल व ला क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाहि

तर्जुमा: ऐ अल्लाह! अच्छाइयों को तेरे सिवा कोई नहीं लाता, और बुरी चीज़ों को तेरे सिवा कोई दूर नहीं करता, और गुनाह से बचने और नेकी करने की ताक़त सिर्फ़ अल्लाह ही से मिलती है। (अबू दाऊद शरीफ़)

आजकल भी जानवरों को इस्तेमाल करने का सिलसिला जारी है। बहुत-से लोग लिफ़ाफ़ों में काग़ज़ भरे हुए किसी चालू रोड़ पर बैठे रहते हैं और तोता या मैना या कोई और चिड़िया पिंजरे में बन्द रखते हैं। गुज़रने वाले जाहिल उनसे पूछते हैं कि आने वाले वक़्त में हम किस हाल से गुज़रेंगे और हमारा फ़लाँ काम होगा या नहीं। इस पर जानवर रखने वाला आदमी परिन्दे के मुँह में कोई दाना वग़ैरह दे देता है और वह परिन्दा कोई-सा एक लिफ़ाफ़ा खींच लाता है। परिन्दे वाला आदमी उसमें से काग़ज़ निकालकर पढ़ता है और दरियाफ़्त करने वाले की क़िस्मत का फ़ैसला सुनाता है। यह सरासर जहालत और गुमराही का तरीक़ा है। ग़ैब को अल्लाह के सिवा कोई नहीं जानता, तोता-मैना लेकर बैठने वाले को ख़ुद पता नहीं कि वह कल क्या करेगा और न एक को दूसरे के बारे में कुछ इल्म है। क़ुरआन मजीद में इरशाद है।

وَمَا تَدْرِىْ نَفْسٌ مَّا ذَا تَكْسِبُ غَدًا

यानी कोई नफ़्स नहीं जानता कि वह कल को क्या करेगा।

एक और जग अल्लाह का इरशाद है:

قُلْ لَّا يَعْلَمُ مَنْ فِى السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ الْغَيْبَ اِلَّا اللّٰهُ

तर्जुमाः (ऐ नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम!) आप फ़रमा दीजिये कि जो लोग आसमान व ज़मीन में हैं वे ग़ैब को नहीं जानते, ग़ैब को सिर्फ़ अल्लाह ही जानता है।

यह अ़जीब बात है कि आदमी ख़ुद तो अपना हाल न जाने और जानवर जिसमें अ़क़्ल भी नहीं होती उसको पता चल जाये कि इसकी किस्मत में क्या है, वह पर्चा निकालकर दे दे तो उसको ग़ैब का हाल जानने का ज़रिया बना लें, जहालत बड़ी बुरी बला है।

एक हदीस में इरशाद है कि जो शख़्स किसी ऐसे आदमी के पास गया जो ग़ैब की बात सुनाता हो, फिर उससे कुछ बात पूछ ली तो उसकी कोई नमाज़ चालीस दिन तक कबूल नहीं होगी। (मुस्लिम शरीफ़)

एक और हदीस में इरशाद है कि जो शख़्स किसी ऐसे शख़्स के पास गया जो ग़ैब की ख़बरें बताता हो और उसके ग़ैब की तस्दीक़ कर दी तो वह उस चीज़ से बरी हो गया जो मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) पर नाज़िल हुई। (अबू दाऊद)

टोना टोटका और बदशगूनी से बहुत सख़्ती से परहेज़ करो और किसी ऐसे शख़्स के पास हरगिज़ न जाओ जो ग़ैब की बातें बताने का दावा करता हो।

अक़ीके के मसाइल

हज़रत उम्मे कुर्ज़ रज़ियल्लाहु अ़न्हा की हदीस में दूसरी बात यह बताई कि अक़ीके में लड़के की तरफ़ से दो बकरियाँ ज़िबह की जायें और लड़की की तरफ़ से एक बकरी। और यह भी फ़रमाया कि उनके नर व मादा होने से अ़क़ीके में कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। अगर लड़के के लिये बकरियाँ और लड़की के लिये बकरा ज़िबह हो जाये तो इसमें न कोई नुक़सान है न कोई हर्ज।

अ़क़ीके में जो जानवर ज़िबह किया जाता है उसमें अल्लाह की ख़ुशनूदी मक़सद होती है। एक जानवर में क़ुरबानी और अ़क़ीक़ा दोनों के हिस्से हो

सकते हैं, जैसे अगर पाँच आदमी एक-एक हिस्सा क़ुर्बानी का ले लें और एक शख़्स दो हिस्से अपने लड़के के अ़क़ीक़े के लिये ले ले और कुल सात हिस्से हो जायें तो ऐसा करना दुरुस्त है, लेकिन क़ुर्बानी सिर्फ़ अपने ख़ास दिनों में ही हो सकती है।

अ़क़ीक़ा बच्चे की पैदाइश से सातवें दिन होना चाहिये जैसे अगर कोई जुमेरात को पैदा हुआ हो तो उसका अ़क़ीक़ा बुध के दिन करें। अ़क़ीक़े में दो काम करने होते हैं एक तो जानवर अल्लाह की रिज़ा के लिये ज़िबह करना दूसरे बच्चे के सर के बाल मूँड देना। बाल मूँडकर एक जगह जमा कर लें और उनका वज़न करके उसी क़द्र चाँदी सदक़ा कर दें जिस क़द्र बालों का वज़न हो।

हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्ल० ने हज़रत हसन की तरफ़ से एक बकरी का अ़क़ीक़ा किया और अपनी साहिबज़ादी से फ़रमाया (जो हज़रत हसन की वालिदा थीं) कि ऐ फ़ातिमा! इसका सर मूँड दो और इसके बालों के वज़न के बराबर चाँदी सदक़ा कर दो। जब बालों को वज़न किया तो एक दिर्हम या एक दिर्हम से कम वज़न उतरा (तिर्मिज़ी शरीफ़) और उतनी ही चाँदी सदक़ा कर दी। (मुवत्ता)

बुख़ारी शरीफ़ में है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि लड़के का अ़क़ीक़ा होना चाहिये लिहाज़ा उसकी तरफ़ से ख़ून बहाओ (यानी जानवर ज़िबह करो) और नागवार चीज़ दूर करो। (यानी पेट के अन्दर जो बाल निकल आये थे उन्हें मूँड डालो)।

इस्लाम के ज़ाहिर होने से पहले ज़माने में बच्चे का सर मूँडकर उसके सर पर ज़िबह हुए जानवर का ख़ून मल देते थे। यह तरीक़ा इस्लाम में नहीं है। अलबत्ता बाज़ हदीसों में बच्चे के सर पर (मूँडने के बाद) ज़ाफ़रान मलना बयान हुआ है। अगर इस पर अ़मल करना चाहें तो ज़ाफ़रान तर करके पूरे सर पर मल दें। (मिरक़ात)

मसलाः बाज़ किताबों में लिखा है कि अ़क़ीक़े के जानवर का गोश्त बनाते वक़्त उसकी हड्डियाँ न तोड़ी जायें और हज़रत अ़ता ने इसकी हिक्मत भी बताई है, लेकिन अगर हड्डियाँ तोड़ दी जायें जैसा कि गोश्त बनाने में होता है तो इससे अ़क़ीक़े में कोई फ़र्क़ नहीं आता।

मसला: अगर बच्चे का नाम पहले से न रखा हो तो सातवें दिन उसका अच्छा-सा नाम भी तजवीज़ कर दें।

मसला: लड़के के लिये दो बकरियाँ और लड़की के लिये एक बकरी होनी चाहिये। अगर गुंजाइश हो तो इसी पर अ़मल करें लेकिन अगर कोई शख़्स लड़के के अ़क़ीक़े में एक बकरी या एक बकरा दे तो यह भी जायज़ है, और हदीस से साबित है।

मसला: अगर सातवें दिन अ़क़ीक़ा नहीं हुआ तो उसके बाद भी अ़क़ीक़ा हो सकता है लेकिन सातवें दिन का ख़्याल रखना बेहतर है। जिसका मतलब पहले गुज़र चुका है कि जिस दिन बच्चा पैदा हुआ हो उससे एक दिन पहले अ़क़ीक़ा करे। और ऐसा करना एक अच्छी बात है, अगर इसके ख़िलाफ़ हो जाये तो कुछ हर्ज नहीं। बल्कि ख़ुद अ़क़ीक़ा ही मुस्तहब है, इसके छोड़ने से कोई गुनाह नहीं होता।

मसला: यह जो दस्तूर है कि जिस वक़्त बच्चे के सर पर उस्तरा रखा जाये और नाई सर मूँडना शुरू करे फ़ौरन उसी वक़्त बकरी ज़िबह हो, शरअ़न इसकी कोई हैसियत नहीं, महज़ एक जाहिलाना रस्म है, शरअ़न सब जायज़ है चाहे सर मूँडने के बाद ज़िबह करे या ज़िबह कर ले तब सर मूँडे।

मसला: जिस जानवर की क़ुर्बानी जायज़ नहीं उसका अ़क़ीक़ा भी दुरुस्त नहीं, और जिसकी क़ुर्बानी दुरुस्त है उसका अ़क़ीक़ा भी दुरुस्त है। जानवर कैसा हो इसकी तफ़सील क़ुर्बानी के बयान में गुज़र चुकी है।

मसला: अ़क़ीक़े का गोश्त चाहे कच्चा तक़सीम करे चाहे पकाकर दावत करके खिलाये, दोनों तरह दुरुस्त है।

मसला: अ़क़ीक़े का गोश्त बाप, दादा, नाना, नानी, वग़ैरह सब को खाना दुरुस्त है। अ़क़ीक़े के दिन बच्चे का सर मूँडने में यह मस्लेहत है कि पेट के अन्दर जो बाल उगते हैं वे कमज़ोर होते हैं और मूँडने के बाद जो बाल निकलते हैं वे ताक़तवर होते हैं, लिहाज़ा कमज़ोर बालों का दूर कर देना मुनासिब हुआ। साथ ही एक नफ़ा और भी है, वह यह कि बाल मूँडे जाने से सर के खाल के सुराख़ खुल जाते हैं उनके ज़रिये अन्दर की गर्मी आसानी से बाहर आ जायेगी। और इससे सुनने, सूँघने और देखने की ताक़त भी बढ़ती है। यह हिक्मत "तोहफ़तुल् वदूद" में लिखी है।

मुसलमान औरतों से

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बातें

* औरतों के लिए *

इस्लामी अख़्लाक़ व आदाब

का बयान

लेखक

हज़रत मौलाना आशिक़ इलाही साहिब बुलन्द शहरी

रहमतुल्लाहि अलैहि

अनुवादक: मौलाना मुहम्मद इमरान कासमी

प्रकाशक

फरीद बुक डिपो (प्रा. लि.)

422, मटिया महल, उर्दू मार्किट, जामा मस्जिद

देहली-110006

इस्लामी अख़्लाक़ का बयान

अच्छे अख़्लाक़ वाले का रुतबा

हदीसः (159) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि बेशक मोमिन बन्दा अपने अच्छे अख़्लाक़ की वजह से रातों-रात नमाज़ में खड़े रहने वाले और दिनभर रोज़ा रखने वाले आदमी का दर्जा पा लेता है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 431)

तशरीहः अच्छी ख़स्लत व आ़दत जिसे नसीब हो जाये तो उसे दुनिया और आख़िरत की ख़ैर मिल गयी। अच्छे अख़्लाक़ का अल्लाह तआ़ला के यहाँ बहुत वज़न है। एक हदीस में इरशाद है कि क़ियामत के दिन सबसे ज़्यादा भारी चीज़ जो मोमिन की तराज़ू में रखी जायेगी वह अच्छे अख़्लाक़ होंगे। लफ़्ज़ "अच्छे अख़्लाक़" के मायने और मफ़हूम में बहुत फैलाव है। इसकी तशरीह में हज़ारों पृष्ठ की किताबें लिखी जा सकती हैं। अल्लाह की सारी मख़्लूक़ के वाजिब हुक़ूक़ अदा करना, छोटों पर नर्मी और शफ़क़त करना, बड़ों का अदब व सम्मान करना, सबको अपनी ज़बान और हाथ की तकलीफ़ से महफ़ूज़ रखना और आगे-पीछे सब की ख़ैरख़्वाही (भला चाहना) करना, धोखा न देना, ख़ियानत न करना, सच बोलना, नर्मी इख़्तियार करना, हर एक से उसके रुतबे के मुताबिक़ बर्ताव करना, जो अपने लिये पसन्द करे दूसरों के लिये वही पसन्द करना, मश्विरा सही देना, बद्-ज़बानी से बचना, हया और शर्म इख़्तियार करना, मख़्लूक़ की हाजतें पूरी करना, सबके साथ अच्छा बर्ताव करना, बेजा गुस्सा न करना, हसद और कीने को दिल में जगह न देना, ये और इसी तरह की बीसियों बातें हैं जिनको अच्छे अख़्लाक़ का मफ़हूम (मतलब और मायने) शामिल है।

एक शख़्स ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! सबसे बेहतर क्या चीज़ है जो इनसान को अ़ता की गयी, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जवाब में फ़रमाया कि ऐसी चीज़ हुस्ने अख़्लाक़ (यानी अच्छे बर्ताव और अच्छे व्यवहार का मामला करना) है। (बैहक़ी)

अच्छे अख़्लाक़ का 'मुज़ाहरा' (प्रदर्शन) सही मायनों में उस वक़्त होता है

जब लोगों से तकलीफ़ पहुँचे और सब्र करते हुए ख़ूबी का रवैया इख़्तियार करे।

एक हदीस में है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत अबूज़र रज़ियल्लाहु अ़न्हु को ख़िताब करते हुए इरशाद फ़रमाया कि तू जहाँ कहीं भी हो अल्लाह से डर और गुनाह हो जाये तो उसके बाद ही नेकी भी कर ले, यह नेकी उस गुनाह को मिटा देगी, और लोगों से अच्छे अख़्लाक़ के साथ मेल-जोल रख। (अहमद व तिर्मिज़ी)

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मोमिनों में सब से ज़्यादा कामिल ईमान वाला वह है जो उनमें अख़्लाक़ के एतिबार से सबसे अच्छा हो। (अबू दाऊद)

हज़रत मुआ़ज़ और हज़रत अबू मूसा रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा को जब रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यमन का आ़मिल (गवर्नर) बनाकर भेजा तो वसीयत फ़रमायी कि लोगों के साथ आसानी का बर्ताव कीजियो और सख़्ती से न पेश आइयो। और उनको ख़ुशख़बरियाँ सुनाइयो और नफ़रत न दिलाइयो, और आपस में मिलजुल कर रहियो और इख़्तिलाफ़ न रखियो।

(बुख़ारी शरीफ़)

हज़रत मुआ़ज़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि जब मैंने (यमन जाने के लिये) रिकाब (घोड़े की ज़ीन में लगा हुआ वह गोल लोहे का घेरा जिसमें पाँव रखकर घोड़ेसवार घोड़े पर सवार होता है) में क़दम रखा तो रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मुझको आख़िरी वसीयत यह फ़रमायी कि ऐ मुआ़ज़! लोगों से अच्छे अख़्लाक़ से पेश आना। (मिश्कात)

हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा फ़रमाती हैं कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम यह दुआ़ किया करते थे:

अल्लाहुम्-म हस्सन्-त ख़ल्क़ी फ़-अह्सिन् ख़ुलुक़ी

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! तूने मेरी सूरत अच्छी बनायी है तू मेरे अख़्लाक़ भी अच्छे कर दे।

'हुस्ने अख़्लाक़' (यानी अच्छे अख़्लाक़ और व्यवहार) का मफ़हूम बहुत विस्तृत है, हम चन्द उसूल लिखते हैं, यानी वे चीज़ें जो बहुत-से अच्छे अख़्लाक़ को जमा करने वाली हैं।

जो अपने लिये पसन्द करे वही दूसरों के लिये पसन्द करे

हदीसः (160) हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु रिवायत फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि क़सम है उस ज़ात की जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है, कोई शख़्स उस वक़्त तक मोमिन नहीं होगा जब तक अपने (मोमिन) भाई के लिये वही पसन्द न करे जो अपने लिये पसन्द करता है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 424)

तशरीहः हज़रत मुआज़ बिन जबल रज़ियल्लाहु अन्हु रिवायत फ़रमाते हैं कि मैंने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! कौनसा ईमान अफ़ज़ल है? आपने जवाब में इरशाद फ़रमाया कि तू अल्लाह के लिये मुहब्बत करे और अल्लाह के लिये नफ़रत रखे, और अपनी ज़बान को अल्लाह की याद में लगाये रखे। मैंने अर्ज़ किया इसके बाद क्या करूँ? फ़रमाया कि तू लोगों के लिये वही पसन्द करे जो अपने लिये पसन्द करता है, और उनके लिये वह ना-पसन्द करे जो अपने लिये ना-पसन्द करता है। (मिश्कात शरीफ़)

इस हदीस से मालूम हुआ कि सब लोगों के साथ ऐसा बर्ताव रखे कि जो अपने लिये पसन्द हो वह सबके लिये पसन्द हो, और जो अपने लिये अच्छा नहीं समझता उसको दूसरों के लिये भी बुरा समझे। जैसे अगर अपने ज़िम्मे किसी का कर्ज़ आता हो तो यह ख़्याल करे कि मेरा कर्ज़ चाहता होता तो जल्द से जल्द वसूल करता, लिहाज़ा उसके लिये इसी को पसन्द करूँ और जल्द अदा कर दूँ। इसी तरह अगर किसी पर अपना कर्ज़ चाहता हो तो यह सोचे कि अगर मुझपर किसी का कर्ज़ होता तो मैं मोहलत का इच्छुक होता लिहाज़ा मुझे चाहिये कि उसके लिये वही पसन्द करूँ जो अपने लिये पसन्द करता हूँ लिहाज़ा उसको मोहलत दूँ और मुतालबे में सख़्ती न करूँ। इसी तरह हर मौके पर और हर मामले में सोच लिया करे।

दर हक़ीक़त अगर लोग सिर्फ़ इसी एक हदीस पर अमल कर लें तो कभी ताल्लुक़ात में खिंचाव और ख़राबी पैदा न हो और सब आराम से ज़िन्दगी गुज़ारें।

हर चीज़ के साथ अच्छाई का बर्ताव करना ज़रूरी है

हदीसः (161) हज़रत शद्दाद बिन औस रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की दो बातें मैंने (विशेषता के

साथ) याद कर रखी हैं। आपने फ़रमाया कि बेशक अल्लाह तआ़ला ने हर चीज़ के साथ अच्छाई का बर्ताव करना ज़रूरी करार दिया है, लिहाज़ा जब किसी को (किसी जायज़ वजह से) कत्ल करो तो ख़ूबी के साथ कत्ल करो। और जब (जानवर को) ज़िबह करो तो ख़ूबी के साथ ज़िबह करो, और (ख़ूबी की एक सूरत यह है) कि ज़िबह करने वाला छुरी तेज़ कर ले और जानवर को आराम पहुँचाये। (मुस्लिम पेज 152 जिल्द 2)

तशरीहः 'एहसान' 'हुस्न' से लिया गया है जिसका तर्जुमा हमने "ख़ूबी का बर्ताव करना" किया है। मोमिन को चाहिये कि जिससे भी उसका वास्ता पड़े (इनसान हो या जानवर) उससे ख़ूबी का (यानी अच्छा) बर्ताव और अच्छा सुलूक करे। ख़ूबी के बर्ताव का कोई कायदा मुकर्रर नहीं जो बयान कर दिया जाये, यह तो हर शख़्स की अपनी समझ और हालात पर है कि हर मौक़े और हर मामले में ग़ौर करे और सोचे कि इस वक़्त मेरे लिये ख़ूबी के बर्ताव का क्या मौक़ा है? जब ज़िबह और कत्ल करने में भी ख़ूबी के बर्ताव की ज़रूरत है जो ज़रा-सी देर का काम है, और जिसमें वक़्ती तकलीफ़ है, तो जिन लोगों से रोज़ाना वास्ता पड़ता हो उनके साथ ख़ूबी का बर्ताव करना किस क़द्र ज़रूरी होगा।

जानवर से अच्छा बर्ताव

ज़िबह करने में ख़ूबी का बर्ताव करने के सिलसिले में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक मिसाल भी ज़िक्र फ़रमायी है और वह यह है कि खट्टल (कुंद) छुरी से ज़िबह न करे और छुरी को ज़िबह से पहले तेज़ कर ले। साथ ही यह भी फ़रमाया कि ज़िबह होने वाले जानवर को आराम पहुँचाये जिसकी बहुत-सी सूरतें हैं- जैसे यह कि ठन्डा होने से पहले उसकी खाल न उतारे और जिस्म का कोई हिस्सा न काटे, भूखा-प्यासा रखकर ज़िबह न करे। इसी सिलसिले में दीन के आ़लिमों ने लिखा है कि एक जानवर को दूसरे जानवर के सामने ज़िबह न करे, और छुरी को उसके सामने तेज़ न करे।

एक शख़्स एक बकरी को कान से पकड़कर खींचे लिये जा रहा था, उसे देखकर नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि इसका कान छोड़ दे और गर्दन पकड़कर लेजा। (इब्ने माजा)

दूध दूहने में ख़ूबी का बर्ताव यह है कि नाख़ुन बढ़े हुए हों तो उनको तराश कर दूध निकाले ताकि थनों में न चुभें।

सवार होने में ख़ूबी का बर्ताव यह है कि जानवर को ख़्वाह-मख़्वाह न दौड़ाये, उसपर चढ़े-चढ़े बातें न करे, मन्ज़िल पर पहुँचकर उसके चारे की फ़िक्र करे और उसकी काठी और चारजामा वग़ैरह उतारकर दूसरे काम में लगे, वग़ैरह वग़ैरह।

छोटों पर रहम करने और बड़ों का सम्मान करने की अहमियत

हदीसः (162) हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि वह शख़्स हममें से नहीं है जो हमारे छोटों पर रहम न करे और हमारे बड़ों का अदब व सम्मान न करे, और अच्छे कामों का हुक्म न करे और बुरे कामों से न रोके। (मिश्कात शरीफ़ पेज 423)

तशरीहः इस हदीस पाक में चार चीज़ों की बड़ी अहमियत के साथ ताकीद फ़रमायी- अव्वल छोटों पर रहम करना, दूसरे बड़ों का अदब व सम्मान करना, तीसरे अच्छे कामों का हुक्म करना, चौथे बुरे कामों से रोकना। इन चीज़ों की अहमियत हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक ख़ास अन्दाज़ में इरशाद फ़रमायी और वह यह कि जो शख़्स इन चीज़ों पर अ़मल न करे वह हम में से यानी मुसलमानों की जमाअ़त में से नहीं है।

बात यह है कि इस्लाम के बहुत-से तक़ाज़े हैं, यह कह देना कि मैं मुसलमान हूँ! मुसलमान होने के लिये काफ़ी नहीं है। इस्लाम मज़हब सरासर ख़ूबियों का मजमूआ़ है। वह सबके साथ ख़ूबी के साथ पेश आने का हुक्म देता है। इनसान का छोटों से भी वास्ता पड़ता है और बड़ों से भी, छोटों के साथ मेहरबानी और शफ़क़त का बर्ताव किया जाये और बड़ों का अदब व सम्मान किया जाये। छोटों में औलाद और कम उम्र के बहन-भाई, दूसरे कम-उम्र रिश्तेदार और ग़ैर-रिश्तेदार तथा वे सब लोग जो नौकरी में अपने मातहत हैं, और हाकिमों की सारी रिआ़या और महकूम (यानी वे सब लोग जो किसी के ताबे और अधीन हैं) और हर वह शख़्स जो किसी भी एतिबार से छोटा हो, दाख़िल है। उन सब के साथ मेहरबानी और शफ़क़त का बर्ताव किया जाये। इसी तरह बड़ों में हर वह शख़्स दाख़िल है जो किसी भी

एतिबार से बड़ा हो, माँ-बाप और तमाम रिश्तेदार जो उम्र में बड़े हों, और दूसरे वे सब लोग जो उम्र में या ओहदे में बड़े हों, उन सब का अदब व सम्मान करना और इकराम व एहतिराम ज़रूरी है। अदब व सम्मान का मतलब इतना ही नहीं है कि अच्छे अलक़ाब के साथ नाम ले बल्कि जानी व माली ख़िदमत करना दुख-तकलीफ़ में काम आना, आराम पहुँचाना और किसी भी तरह से कोई तकलीफ़ न पहुँचाना, यह सब अदब व सम्मान में शामिल है। बहुत-से लोग ज़ाहिर में तो बड़ों का बहुत एहतिराम व अदब करते हैं लेकिन मौक़ा लग जाये तो कच्चा खाने को तैयार रहते हैं, यह कोई इकराम (यानी अदब व सम्मान) नहीं है।

बूढ़ों का अदब व इज़्ज़त करने के बारे में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिस किसी जवान ने किसी बूढ़े का इकराम (अदब व सम्मान) उसके बुढ़ापे की वजह से किया तो अल्लाह तआ़ला उसके बुढ़ापे के वक़्त किसी ऐसे आदमी को मुक़र्रर फ़रमायेगा जो उसका इकराम करेगा। (तिर्मिज़ी)

छोटे बच्चे भी रहम व करम के हक़दार हैं

अपने बच्चे हों या किसी दूसरे के, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम छोटे बच्चों से बहुत शफ़क़त का बर्ताव फ़रमाते थे। बच्चों को गोद में भी लेते, प्यार भी करते और चूमते भी थे। एक साहिब देहात के रहने वाले आपकी ख़िदमत में हाज़िर हुए और (ताज्जुब से) कहने लगे कि क्या आप हज़रात बच्चों को चूमते हैं? हम तो नहीं चूमते। उसकी बात सुनकर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः मैं तेरे लिये क्या कर सकता हूँ अगर अल्लाह ने तेरे दिल से रहमत निकाल दी है। (बुख़ारी)

हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा फ़रमाती हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास (लोगों के) बच्चे लाये जाते थे, आप उनको बरकत की दुआ़ देते थे और उनकी 'तहनीक' फ़रमाते थे। यानी अपने मुँह में खजूर चबाकर बच्चे के मुँह में डाल देते थे, फिर तालू से मल देते थे।

एक बार हज़रत उम्मे क़ैस रज़ियल्लाहु अ़न्हा अपने एक दूध पीते बच्चे को आपकी ख़िदमत में ले आईं, आपने उसको अपनी गोद में बिठा लिया, बच्चे ने आपके कपड़ों पर पेशाब कर दिया, आपने ख़ुद ही उसको पाक

फ़रमाया। (मिश्कात)

एक बार हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु का छोटा भाई आपकी ख़िदमत में लाया गया, आपने उस बच्चे से फ़रमाया कि ऐ अबू उमैर! तुम्हारी वह चिड़िया क्या हुई? उस बच्चे के पास एक चिड़िया थी जिससे वह खेलता था, वह मर गयी थी तो आपने ऐसा फ़रमाया। (बुख़ारी व मुस्लिम)

हज़रत बरा रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि मैंने हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देखा (आपके नवासे) हसन बिन अली रज़ियल्लाहु अन्हु आपके काँधे पर थे। उस वक़्त आप यह दुआ फ़रमा रहे थे: ऐ अल्लाह! मैं इससे मुहब्बत करता हूँ आप भी इससे मुहब्बत फ़रमाइये। (बुख़ारी व मुस्लिम)

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि मैं एक बार दिन चढ़े हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ निकला। आप हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा के घर तशरीफ़ लाये और हज़रत हसन रज़ियल्लाहु अन्हु को आवाज़ देते हुए फ़रमाया: क्या यहाँ छुटवा है, क्या यहाँ छुटवा है? उसके बाद ज़रा-सी देर भी नहीं गुज़री कि हज़रत हसन रज़ियल्लाहु अन्हु दौड़ते हुए आ गये और आप दोनों गले लिपट गये। फिर आपने फ़रमाया ऐ अल्लाह! मैं इससे मुहब्बत करता हूँ आप भी इससे मुहब्बत फ़रमाइये, और जो इससे मुहब्बत करे उससे भी मुहब्बत फ़रमाइये। (बुख़ारी व मुस्लिम)

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि मैंने किसी को नहीं देखा जो हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से बढ़कर अपने घर वालों पर मेहरबान हो। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का बच्चा इब्राहीम रज़ियल्लाहु अन्हु मदीना के अवाली में एक औरत का दूध पीता था। आप वहाँ तशरीफ़ ले जाते थे और हम भी आपके साथ होते थे। आप घर में दाख़िल होते और बच्चे को चूमते, फिर वापस आ जाते। यह बच्चा जिस औरत का दूध पीता था उसका शौहर लुहार का काम करता था, आप तशरीफ़ लेजाते थे और घर भट्टी की वजह से धुएँ में भरा रहता था। आप इसी हाल में दाख़िल हो जाते थे। (मुस्लिम शरीफ़)

यहाँ यह नुक्ता क़ाबिले ज़िक्र है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अव्वल छोटों पर रहम करने का ज़िक्र फ़रमाया उसके बाद बड़ों का अदब व सम्मान करने का तज़किरा फ़रमाया। इस तरतीब में गोया इस तरफ़ इशारा है कि बड़ों को छोटों पर शफ़क़त और रहम का ख़्याल करना तरतीब

के एतिबार से मुक़द्दम है, यानी जब छोटों पर रहम होगा तो वे भी बड़ों का अदब व सम्मान करेंगे, और जब ये छोटे बड़े हो जायेंगे तो जो अपने बड़ों से शफ़क़त का बर्ताव सीखा था उसको अपने छोटों पर इस्तेमाल करेंगे। बहुत-से लोग छोटों पर शफ़क़त तो करते नहीं और उनसे सम्मान व इज़्ज़त की उम्मीद रखते हैं, यह उनकी नादानी है। अगरचे छोटों को यह नहीं देखना चाहिये कि फ़लाँ ने हमारे साथ क्या बर्ताव किया, अपना दीनी फ़रीज़ा यानी बड़े का अदब व सम्मान करने पर अ़मल करने वाले बनें, उनका अ़मल उनके साथ है हमारा अ़मल हमारे साथ है। बुराई का जवाब बुराई से क्यों दें। अच्छे कामों का हुक्म करना और बुराइयों से रोकने के बारे में हदीस नम्बर 109 के अन्तर्गत हम तफ़सील के सथ बयान कर चुके हैं।

बेवाओं और यतीमों और मिस्कीनों पर रहम खाने और उनकी ख़िदमत करने का सवाब

हदीसः (163) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि मुसलमानों में सबसे बेहतर घर वह है जिसमें कोई यतीम हो और उसके साथ अच्छा सुलूक किया जाता हो। और मुसलमानों में सबसे बुरा घर वह है जिसमें कोई यतीम हो और उसके साथ बुरा बर्ताव किया जाता हो। (मिश्कात शरीफ़ पेज 423)

हदीसः (164) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि बेवाओं और मिस्कीनों के लिये माल कमाने वाला ऐसा है जैसे कोई शख़्स अल्लाह के रास्ते यानी जिहाद में मेहनत और मशक़्क़त के साथ लगा हुआ हो। हदीस को बयान करने वाले कहते हैं कि मुझे याद पड़ता है कि (इसके साथ) यह भी फ़रमाया कि उस शख़्स की मिसाल ऐसी है जैसे कोई शख़्स (रात-रात भर नमाज़ में) खड़ा रहे जिसमें सुस्ती न करे, और जैसे कोई शख़्स (लगातार) रोज़े रखा करे और दरमियान में बेरोज़ा न रहे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 422)

तशरीहः इन रिवायतों से बेवाओं और मिस्कीनों और यतीमों की ख़िदमत की फ़ज़ीलत मालूम हुई। अपने किसी रिश्तेदार के यतीम बच्चे हों या किसी दूसरे मुसलमान के, उनकी परवरिश और देखभाल और दिलदारी की तरफ़ बहुत फ़िक्र के साथ तवज्जोह करनी चाहिये।

हज़रत अबू उमामा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिसने किसी यतीम के सर पर हाथ फैरा और यह काम सिर्फ़ अल्लाह के लिये किया तो उसके लिये हर बाल के बदले जिस पर उसका हाथ गुज़रेगा चन्द नेकियाँ मिलेंगी। और जिसने किसी यतीम बच्ची या बच्चे के साथ अच्छा सुलूक किया जो उसके पास रहता हो तो मैं और वह जन्नत में इस तरह से होंगे। लफ़्ज़ "इस तरह से" फ़रमाते हुए आपने अपनी दोनों उंगलियाँ (बीच वाली और शहादत की उंगली) मिला लीं। (अहमद व तिर्मिज़ी)

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि एक शख़्स ने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अपने दिल के सख़्त होने की शिकायत की, आपने फ़रमाया तू यतीम के सर पर हाथ फैरा कर और मिस्कीन को खाना खिलाया कर। (अहमद)

हज़रत औ़फ़ बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि मैं और वह औ़रत जिसके रुख़्सारों (गालों) पर सियाही आ गयी हो, क़ियामत के दिन इन दोनों (उंगलियों यानी बीच की उंगली और उसके पास वाली शहादत की उंगली) की तरह (क़रीब-क़रीब) होंगे। फिर उस औ़रत की सिफ़त बताते हुए इरशाद फ़रमाया कि सियाह रुख़्सारों वाली औ़रत से वह औ़रत मुराद है जो हैसियत वाली और ख़ूबसूरत थी, अपने शौहर से बेवा हो गयी और उसने अपने यतीम बच्चों की परवरिश के लिये अपने नफ़्स को (दूसरा निकाह करने से) रोके रखा, यहाँ तक कि वे बच्चे बड़े होकर उससे अलग हो गये (यानी ख़िदमत के मोहताज न रहे) या वफ़ात पा गये। (अबू दाऊद)

जिस औ़रत ने अपने यतीम बच्चे की परवरिश के लिये क़ुर्बानी दी और दूसरा निकाह न किया, और बच्चों की ख़िदमत और देखभाल में लगे रहने की वजह से उसका रंग भी बदल गया, हुस्न व ख़ूबसूरत चेहरे पर सियाही आ गयी, उसके लिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मैं और वह औ़रत जन्नत में इस तरह से ...... क़रीब-क़रीब होंगे जैसे हाथ की बीच की उंगली और शहादत की उंगली आपस में क़रीब-क़रीब हैं। अल्लाहु अकबर! अल्लाह तआ़ला शानुहू कैसे बड़े मेहरबान हैं कि इनसान अपने बच्चों को पाले और इतना बड़ा रुतबा पाये।

हज़रत सुराका बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि बेशक हुज़ूर नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि मैं तुमको अफ़ज़ल सदका बता दूँ? (फिर) जवाब में फ़रमाया कि सबसे अफ़ज़ल सदका यह है कि तेरी बेटी तेरी तरफ़ वापस लौटायी जाये (यानी तलाक़ या शौहर की वफ़ात की वजह से) अपने मायके में वापस आ जाये और तू उसपर ख़र्च करे, उसके लिये तेरे सिवा कोई कमाने वाला न हो। (इब्ने माजा)

यतीमों के साथ अच्छा सुलूक करने के फ़ज़ाइल मालूम करने के बाद हर मुसलमान को अपने मुहासबे (आत्म-चिन्तन) की तरफ़ ख़्याल जायेगा कि यतीमों के साथ हम अच्छा सुलूक करते हैं या उनके साथ बुरे सुलूक से पेश आते हैं। हम भी चाहते हैं कि उनके मुहासबे (आत्म-चिन्तन) में शरीक हो जायें। सबसे ज़्यादा हमको उन लोगों को तवज्जोह दिलाना चाहिये जिनके ख़ानदान में किसी की वफ़ात हो गयी हो और मरने वाले ने अपने पीछे नाबालिग़ (छोटे) बच्चे छोड़े हों, और उन नाबालिग़ बच्चों की परवरिश और ख़िदमत ख़ानदान के किसी और फ़र्द या चन्द अफ़राद के ज़िम्मे पड़ गयी हो। ये नाबालिग़ बच्चे यतीम होते हैं और जिनके वालिद ने या किसी और 'मूरिस' (वारिस बनाने वाला, मीरास का माल छोड़कर मरने वाला) ने जो माल छोड़ा हो वह उन बच्चों की मिलकियत होता है। आम तौर से चूँकि मीरास तक़सीम नहीं की जाती इसलिये बड़े भाई या चचा या वालिद वग़ैरह में से जिसका माल या जायदाद पर कब्ज़ा होता है वह मीरास तक़सीम किये वग़ैर अपनी मर्ज़ी से जहाँ चाहे ख़र्च करता है। उन यतीम बच्चों पर बालिग़ होने तक थोड़ा-बहुत माल ख़र्च होता है और बाक़ी माल दूसरों पर ख़र्च हो जाता है। जैसे चचा और बड़ा भाई अपने ऊपर और अपनी औलाद के ऊपर ख़र्च कर देते हैं, और बल्कि कई बार पूरी जायदाद अपनी औलाद के नाम मुन्तक़िल कर देते हैं, और जब यतीम बच्चे बालिग़ हो जाते हैं तो उनके पास कुछ भी नहीं होता। इस तरह से यतीमों के माल बेजा खाने और उनकी जायदाद ज़ब्त करने के गुनाहगार होते हैं जिसका वबाल और अज़ाब बहुत बड़ा है।

क़ुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमाः बेशक जो लोग यतीमों के माल ज़ुल्म के तौर पर खाते हैं वे अपने पेटों में आग ही भरते हैं, और वे जल्द ही दहकती आग में दाख़िल

होंगे। (सूरः निसा आयत 10)

जिसके पास कोई यतीम बच्चा या बच्ची हो, उसपर लाज़िम है कि उनके माल को जो मीरास में मिला हो या किसी ने उन्हें हिबा कर दिया हो, पूरी तरह महफ़ूज़ रखें और उनकी अहम ज़रूरतों में उसमें से ख़र्च करते रहें और बाक़ायदा हिसाब रखें।

यह तंबीह हमने इसलिये की है कि बहुत-से लोग यूँ समझते हैं कि यतीम-ख़ानों में यतीमों के लिये जो माल जमा होता है बस वही यतीमों का माल है, और उसमें जो लोग घपला करें बस वही गुनाहगार हैं, हालाँकि आम घरों में यतीम बच्चे होते हैं और क़रीब-क़रीब रिश्तेदार उनका माल बेमौक़ा और ग़लत तरीक़े से ख़र्च कर देते हैं और इसमें कोई गुनाह नहीं समझते, और चूँकि लड़कियों को मीरास देने का दस्तूर ही नहीं है इसलिये उनका हिस्सा तो (बालिग़ हों या नाबालिग़) उनके भाई ही हज़म कर जाते हैं और आख़िरत के अज़ाब से बिल्कुल नहीं डरते, अल्लाह तआला समझ दे और अपनी मर्ज़ी के कामों पर चलाये।

अल्लाह तआला ने अपनी मख़्लूक़ में ताक़तवर भी पैदा फ़रमाये हैं और कमज़ोर भी, मालदार भी और ग़रीब भी। और बहुत-से बच्चों के सर से बाप का साया उठ जाता है और बहुत-सी औरतें शौहर से मेहरूम हो जाती हैं। इन सब में अल्लाह तआला की हिक्मतें (मस्लेहतें) हैं। जो लोग ताक़तवर हैं और जिनके पास पैसा है उनको अल्लाह तआला का शुक्र अदा करना चाहिये कि हमें कमज़ोर और ग़रीब और मिस्कीन नहीं बनाया। और इस शुक्रिये में यह भी शामिल है कि जो लोग ज़ईफ़ कमज़ोर और यतीम हैं, अपाहिज और माज़ूर हैं, बेकस और मजबूर हैं, उनके साथ अच्छा सुलूक करें, उनकी ख़िदमत भी करें और उनकी माली मदद भी करें। और इस सब का सवाब अल्लाह से तलब करें जिसके साथ सुलूक करें उससे शुक्रिये के भी उम्मीदवार न रहें। सूरः दह्र में नेक बन्दों की तारीफ़ करते हुए फ़रमायाः

तर्जुमाः वे लोग नज़्र (मन्नत) को पूरा करते हैं, और ऐसे दिन से डरते हैं जिसकी सख़्ती आम होगी। और वे लोग ख़ुदा की मुहब्बत की वजह से मिस्कीन और यतीम और क़ैदी को खाना खिलाते हैं, हम तुमको सिर्फ़ ख़ुदा की रज़ामन्दी के लिये खाना खिलाते हैं, न हम तुम से बदला चाहते हैं और न शुक्रिया। हम अपने रब की तरफ़ से एक सख़्त और कड़वे दिन का

अन्देशा रखते हैं। (सूरः दह्र आयत 7-10)

यानी ख़्वाहिश और ज़रूरत के बावजूद अल्लाह तआ़ला की मुहब्बत में अपना खाना शौक़ और ख़ुलूस के साथ मिस्कीनों और यतीमों और क़ैदियों को खिलाते हैं और अपने हाल से और कभी ज़रूरत समझी तो ज़बान से भी कहते हैं कि हम तुमको सिर्फ़ अल्लाह की ख़ुशी के लिये खिलाते हैं। न तुम से कोई बदला चाहते हैं न शुक्रिया, हमें ऐसे दिन का ख़ौफ़ सवार है जो बहुत ही सख़्त और तल्ख़ (कड़वा) होगा। हालाँकि हमारे दिल की नीयत साफ़ है लेकिन इसके बावजूद मक़बूल न होने का डर है, ख़ौफ़ के साथ हर तरह की उम्मीद अल्लाह तआ़ला ही से जुड़ी हुई रखते हैं।

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ख़ुदा पाक से यह दुआ़ माँगी कि ऐ अल्लाह! मुझे मिस्कीनी की हालत में ज़िन्दा रख और मिस्कीनी की हालत में मौत देना और मिस्कीनों में मेरा हश्र फ़रमाना। (यानी क़ियामत के दिन मुझे मिस्कीनों के साथ उठाना)। यह सुनकर हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने अ़र्ज़ कियाः क्यों या रसूलल्लाह! आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया इसलिये कि मिस्कीन लोग मालदारों से चालीस साल पहले जन्नत में दाख़िल होंगे। (फिर फ़रमाया कि) ऐ आ़यशा! मिस्कीन को (बग़ैर कुछ दिये) वापस न करना, (जो कुछ हो सके दे देना) अगरचे आधी खजूर ही हो। (फिर यह भी इरशाद फ़रमाया कि) ऐ आ़यशा! मिस्कीनों से मुहब्बत कर और उनको क़रीब कर क्योंकि (इसकी वजह से) क़ियामत के दिन अल्लाह तआ़ला तुझे अपनी नज़दीकी का (बुलन्द रुतबा) अ़ता फ़रमायेगा। (मिश्कात शरीफ़)

इस हदीस में मिस्कीनों को नज़दीक करने और उनकी इमदाद करने का ज़िक्र है। ग़रीबों का दिल थोड़ा होता है, अगर उनके पास बैठा जाये और उनकी हमदर्दी की जाये तो अल्लाह तआ़ला बहुत ख़ुश होते हैं। उसका फल दुनिया में भी अच्छा मिलता है और आख़िरत में भी अल्लाह की नज़दीकी हासिल होने का सबब है। मिस्कीनों में ग़ुरूर तकब्बुर शैख़ी बघारना अकड़ना इतराना नहीं होता, उनके साथ बैठने से तवाज़ो (आ़जिज़ी, विनम्रता) और इन्किसारी की सिफ़त पैदा होती है। दुनिया में अगरचे उनको लोग हक़ीर जानें मगर आख़िरत में वे मालदारों से अच्छे रहेंगे, बहुत सालों पहले जन्नत में पहुँच जायेंगे (शर्त यह है कि शरीअ़त के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारते हों,

फ़राइज़ के पाबन्द हों, शरीअ़त की मना की हुई चीज़ों से बचते हों)। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने लिये मालदारी पसन्द न फ़रमायी बल्कि मिस्कीन रहने और क़ियामत के दिन मिस्कीनों में उठाये जाने की दुआ़ फ़रमायी।

हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

हदीसः तुम मेरी रज़ामन्दी (ख़ुशी) कमज़ोरों और ज़ईफ़ों (की ख़िदमत और हमदर्दी और दिलदारी) में तलाश करो, क्योंकि कमज़ोरों की वजह से तुम्हारी मदद होती है। (मिश्कात शरीफ़)

जो लोग मालदारी के घमण्ड में ग़रीबों को हक़ीर (ज़लील और अपमानित) जानतें हैं कैसे ग़ाफ़िल हैं, यह नहीं समझते कि उनकी वजह से हमको रिज़्क़ मिल रहा है। कमज़ोरों का वजूद सबब है और उनकी ख़िदमत अल्लाह तआ़ला की मदद और सहायता हासिल होने का ज़रिया है।

मोमिन को रहमदिल होना चाहिये। रहम मोमिन की ख़ास सिफ़त है। यूँ तो बड़ों-छोटों और बराबर के लोगों और इनसानों और हैवानों और ख़ुदा की सारी मख़्लूक़ पर ही रहम करना चाहिये लेकिन कमज़ोरों, ज़ईफ़ों, मिस्कीनों, मोहताजों, यतीमों, बेवाओं, अपाहिजों पर ख़ास तौर से रहम करने का ख़्याल करे। अल्लाह का शुक्र अदा करे कि उसने हमें ऐसा बनाया, अगर वह चाहता तो हमको उनके जैसा और उनको हमारे जैसा बना देता।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि रहम करने वालों पर रहमान (यानी अल्लाह तआ़ला) रहम करता है, तुम उनपर रहम करो जो ज़मीन पर हैं तुम पर वह रहम फ़रमायेगा जो आसमान में (यानी सबसे ज़्यादा बड़ा और सबसे ज़्यादा करम करने वाला) है। (अबू दाऊद)

और हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद नक़ल फ़रमाया है कि रहमत बदबख़्त ही के दिल से निकाली जाती है। यानी जो लोग रहमदिल नहीं होते बदबख़्त ही होते हैं। (मिश्कात शरीफ़)

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि सारी मख़्लूक़ अल्लाह का कुनबा

है (यानी अल्लाह के आल-औलाद बीवी बच्चे तो हैं नहीं, वह तन्हा और अकेला है, उसका किसी से कोई रिश्ता और नाता नहीं, उसकी मख़्लूक़ ही उसका कुनबा है)। पस अल्लाह को सबसे ज़्यादा प्यारा वह है जो उसके कुनबे के साथ अच्छा बर्ताव करे। (मिश्कात)

फ़ायदाः इस सारे मज़मून में उन मिस्कीनों और ग़रीबों का ज़िक्र है जो वाक़ई मिस्कीन और ग़रीब हों, पेशेवर लोग जो माँगते फिरते हैं वे उमूमन मालदार होते हैं, यहाँ उनका ज़िक्र नहीं है। और मिस्कीनों को क़रीब करने और उनके पास बैठने का यह मतलब नहीं कि पर्दे का हुक्म ख़त्म कर दें, बल्कि मर्द उन मर्दों की ख़बर लें जो मिस्कीन हों और औरतें मिस्कीन औरतों की ख़िदमत करें।

माँ-बाप और दूसरे रिश्तेदारों के साथ अच्छा सुलूक करने का बयान

माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक करना उम्र के लम्बा होने और रोज़ी में बढ़ोतरी का सबब है

हदीसः (165) हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिसको यह पसन्द हो कि अल्लाह तआला उसकी उम्र लम्बी करे और उसका रिज़्क़ बढ़ाये, उसको चाहिये कि अपने माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक करे, और दूसरे (रिश्तेदारों के साथ) सिला-रहमी करे। (यानी अच्छे बर्ताव से पेश आए उनसे ताल्लुक़ ख़त्म न करे)। (दुर्रे मन्सूर पेज 371 जिल्द 4)

तशरीहः इस हदीस से मालूम हुआ कि माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक करने से और उनकी ख़िदमत में लगे रहने से उम्र ज़्यादा होती है और रिज़्क़ बढ़ता है। बल्कि माँ-बाप के अलावा दूसरे रिश्तेदारों के साथ सिला-रहमी करने से भी उम्र और रिज़्क़ में बढ़ोतरी नसीब होता है। जो लोग माँ-बाप की ख़िदमत की तरफ़ तवज्जोह नहीं करते वे आख़िरत के सवाब से तो मेहरूम होते ही हैं दुनिया में भी नुक़सान उठाते हैं। माँ-बाप की फ़रमाँबरदारी और ख़िदमत-गुज़ारी और दूसरे रिश्तेदारों के साथ अच्छा बर्ताव करने से जो उम्र

में और रिज़्क़ में बढ़ोतरी होती है उनको वह नसीब नहीं होती।

हदीसः (166) हज़रत अबू उमामा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि एक शख़्स ने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! माँ-बाप का औलाद पर क्या हक़ है? आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इसके जवाब में फ़रमाया कि वे दोनों तेरी जन्नत और तेरी दोज़ख़ हैं। (मिश्कात शरीफ़ 124)

तशरीहः इस हदीस से माँ-बाप की ख़िदमत और उनके साथ अच्छा सुलूक करने की फ़ज़ीलत मालूम हुई। जब एक शख़्स ने माँ-बाप के हुक़ूक़ के बारे में सवाल क्या तो हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि (मुख़्तसर तरीक़े पर यह समझ ले कि) वे दोनों तेरी जन्नत हैं और तेरी दोज़ख़ हैं। यानी उनके साथ अच्छे सुलूक से पेश आते रहो और उनकी ख़िदमत करते रहो और उनकी फ़रमाँबरदारी में लगे रहो, तुम्हारा यह अमल जन्नत में जाने का सबब बनेगा।

और अगर तुमने उनको सताया, तकलीफ़ दी, नाफ़रमानी की तो तुम्हारा यह अमल दोज़ख़ में जाने का सबब बनेगा। इससे समझ लो कि उनका हक़ किस क़द्र है, और उनके साथ किस तरह ज़िन्दगी गुज़ारनी चाहिये। क़ुरआन मजीद में माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक करने और उनकी ख़िदमत व इज़्ज़त करने के बारे में इरशाद फ़रमाया है:

तर्जुमाः और तेरे रब ने हुक्म दिया है कि सिवाय उसके किसी की इबादत मत करो, और तुम माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक किया करो। अगर तेरे पास उनमें से एक या दोनों बुढ़ापे को पहुँच जायें तो उनको कभी "हूँ" भी मत कहना, और न उनको झिड़कना, और उनसे ख़ूब अदब से बात करना, और उनके सामने शफ़क़त से इन्किसारी के साथ झुके रहना, और यूँ दुआ करते रहना कि ऐ मेरे परवर्दिगार! इन दोनों पर रहमत फ़रमाइये जैसा कि इन्होंने मुझको बचपन और छोटी उम्र में पाला है। (सूरः बनी इस्राईल 24)

इस मुबारक आयत में अल्लाह तआ़ला ने अव्वल तो यह हुक्म फ़रमाया कि उसके (यानी अल्लाह के) अलावा किसी की इबादत न करो। अम्बिया अलैहिमुस्सलाम की शरीअ़तों का सबसे बड़ा यही हुक्म है, और इसी हुक्म का पालन कराने के लिये अल्लाह तआ़ला ने तमाम नबियों और रसूलों को भेजा और अपनी किताबें नाज़िल फ़रमाईं और सहीफ़े (यानी अपने अहकाम के छोटे-छोटे रिसाले और पुस्तकें) उतारे। अल्लाह तआ़ला को अक़ीदे से एक

मानना और सिर्फ़ उसी की इबादत करना, और किसी भी चीज़ को उसकी ज़ात व सिफ़ात और बड़ाई व इबादत में शरीक न करना, ख़ुदा तआ़ला का सबसे बड़ा हुक्म है।

दूसरे यह फ़रमाया कि माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक किया करो। अल्लाह तआ़ला ख़ालिक़ (पैदा करने और बनाने वाला) है, उसी ने सबको वजूद बख़्शा है। उसकी इबादत और शुक्रगुज़ारी बहरहाल फ़र्ज़ और लाज़िम है। और उसने चूँकि इनसानों को वजूद बख़्शने का ज़रिया माँ-बाप को बनाया है और माँ-बाप औलाद की परवरिश में बहुत कुछ दुख-तकलीफ़ उठाते हैं इसलिये अल्लाह तआ़ला ने अपनी इबादत के हुक्म के साथ माँ-बाप के साथ एहसान करने का भी हुक्म फ़रमाया है, जो क़ुरआन मजीद में जगह जगह ज़िक्र हुआ है। सूरः ब-क़रः में इरशाद है:

तर्जुमाः और (वह ज़माना याद करो) जब हमने बनी इस्राईल से क़ौल व क़रार लिया कि (किसी की) इबादत मत करना सिवाय अल्लाह के, और माँ-बाप के साथ अच्छी तरह से पेश आना। (सूरः ब-क़रः आयत 83)

और सूरः निसा में इरशाद है:

तर्जुमाः और तुम अल्लाह तआ़ला की इबादत इख़्तियार करो और उसके साथ किसी चीज़ को शरीक मत करना, और माँ-बाप के साथ अच्छा मामला करो। (सूरः निसा आयत 36)

और एक जगह इरशाद फ़रमायाः

तर्जुमाः आप (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) फ़रमा दीजिये कि आओ मैं तुमको वे चीज़ें पढ़कर सुनाऊँ जिनको तुम्हारे रब ने तुम पर हराम फ़रमाया है। वे ये कि अल्लाह तआ़ला के साथ किसी चीज़ को शरीक मत ठहराओ और माँ-बाप के साथ एहसान किया करो। (सूरः अनआ़म आयत 152)

ऊपर ज़िक्र हुई सूरः बनी इस्राईल की आयत में माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक करने का हुक्म देकर उनके साथ अदब व सम्मान और इ़ज़्ज़त के साथ पेश आने के लिये चन्द नसीहतें फ़रमाई हैं।

पहलीः यह कि माँ-बाप दोनों या दोनों में से कोई एक बूढ़ा हो जाये तो उनको 'उफ़' भी न कहो। मक़सद यह है कि कोई भी ऐसा कलिमा (बात और लफ़्ज़) उनकी शान में ज़बान से न निकालो जिससे उनके सम्मान में फ़र्क़ आता हो, या जिस कलिमे से उनको रंज पहुँचता हो। लफ़्ज़ 'उफ़' मिसाल के

तौर पर फ़रमाया है। "बयानुल-कुरआन" में उर्दू के मुहावरे के मुताबिक़ इसका तर्जुमा यूँ किया है कि उनको "हूँ" भी मत कहो। यूँ तो माँ-बाप की ख़िदमत और इकराम व एहतिराम हमेशा ही लाज़िम है लेकिन बुढ़ापे का ज़िक्र ख़ुसूसियत के साथ इसलिये फ़रमाया कि इस उम्र में माँ-बाप को ख़िदमत की ज़्यादा ज़रूरत होती है। फिर बाज़ मर्तबा माँ-बाप इस उम्र में जाकर चिड़चिड़े भी हो जाते हैं और उनको बीमारियाँ भी लग जाती हैं, औलाद को उनका उगालदान साफ़ करना पड़ता है, मैले और नापाक कपड़े धोने पड़ते हैं, जिससे तबीयत उकताने लगती है और तंगदिल होकर उलटे-सीधे अलफ़ाज़ भी ज़बान से निकलने लगते हैं। ऐसे मौक़े पर सब्र और बरदाश्त से काम लेना और माँ-बाप का दिल ख़ुश रखना और रंज देने वाले मामूली से मामूली अलफ़ाज़ से भी परहेज़ करना बहुत बड़ी सआदत है, अगरचे इसमें बहुत से लोग फ़ैल हो जाते हैं।

हज़रत मुजाहिद रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि तू जो उनके कपड़ों वग़ैरह से गन्दगी और पेशाब-पाख़ाना साफ़ करता है तो इस मौक़े पर उफ़ न कह जैसा कि वे भी उफ़ न कहते थे जब तेरे बचपन में तेरा पेशाब-पाख़ाना वग़ैरह धोते थे। (दुर्रे मन्सूर)

'उफ़' कहने की मनाही के बाद यह फिर फ़रमाया कि उनको मत झिड़को। झिड़कना उफ़ कहने से भी ज़्यादा बुरा है। जब उफ़ कहना मना है तो झिड़कना कैसे दुरुस्त हो सकता है? फिर भी साफ़ हुक्म देने के लिये ख़ास तौर से झिड़कने की साफ़ और वाज़ेह लफ़्ज़ों में मनाही फ़रमायी है।

दूसरीः दूसरे यह हुक्म फ़रमाया किः

माँ-बाप से ख़ूब अदब से बात करना।

अच्छी बातें करना, बात करने के अन्दाज़ में नर्मी और अलफ़ाज़ में अदब का लिहाज़ व ख़्याल रखना, यह सब "नर्मी और अदब से बात करने" में दाख़िल है। और इसकी तफ़सीर में कुछ बुज़ुर्गों ने फ़रमाया किः

"जब माँ-बाप तुझे बुलायें तो कहना कि मैं हाज़िर हूँ और आपका हुक्म मानने के लिये मौजूद हूँ"

हज़रत क़तादा रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने "नर्मी से बात करने" की तफ़सीर में फ़रमायाः

"नर्म लहजे में आसान तरीक़े पर बात करो"

हज़रत सईद बिन मुसैयब रहमतुल्लाहि अलैहि ने फ़रमाया कि ख़तावार ख़रीदे हुए गुलाम जिसका मालिक सख़्त मिज़ाज हो, जिस तरह उस गुलाम की गुफ़्तुगू अपने मालिक के साथ होगी उसी तरह माँ-बाप के साथ बात की जाये तो "नर्मी से बात करने" पर अमल हो सकता है। (तफ़सीर दुर्रे मन्सूर)

तीसरी: तीसरे यह इरशाद फ़रमाया कि:

"माँ-बाप के सामने शफ़क़त से इन्किसारी के साथ झुके रहना" इसकी तफ़सीर में हज़रत उर्वा रह० ने फ़रमाया कि तू उनके सामने ऐसा तरीक़ा इख़्तियार कर कि उनकी जो दिली रग़बत और ख़्वाहिश हो उसके पूरा होने में तेरी वजह से फ़र्क़ न आये"

और हज़रत अता बिन रिबाह रह० ने इसकी तफ़सीर में फ़रमाया कि माँ-बाप से बात करते वक़्त नीचे-ऊपर हाथ मत उठाना (जैसे बराबर वालों के साथ बात करते हुए उठाते हैं)।

और हज़रत जुहैर बिन मुहम्मद रह० ने इसकी तफ़सीर में फ़रमाया है कि माँ-बाप अगर तुझे गालियाँ दें और बुरा-भला कहें तो तू जवाब में यह कहना कि अल्लाह तआ़ला आप पर रहम फ़रमाये।

चौथी: नसीहत यह फ़रमायी कि माँ-बाप के लिये यह दुआ़ करता रहे:

"ऐ मेरे रब! इन दोनों पर रहम फ़रमा जैसा कि इन्होंने मुझे छोटे से को पाला और परवरिश की"

बात यह है कि कभी औलाद हाजतमन्द थी जो बिल्कुल ना-समझ और बिल्कुल कमज़ोर थी, उस वक़्त माँ-बाप ने हर तरह की तकलीफ़ सही और दुख-सुख में ख़िदमत करके औलाद की परवरिश की। अब पचास-साठ साल के बाद सूरते हाल उलट गयी है कि माँ-बाप ख़र्च और ख़िदमत के मोहताज हैं और औलाद कमाने वाली, रुपया-पैसा और घर-बार और कारोबार वाली है, औलाद को चाहिये कि माँ-बाप की ख़िदमत से न घबराये और उन पर ख़र्च करने से तंगदिल न हो। दिल खोलकर जान व माल से ख़िदमत करे और अपने बचपने और छोटी उम्र का वक़्त याद करे, और उस वक़्त उन्होंने जो तकलीफ़ें उठाईं उनको सामने रखे और अल्लाह की बारगाह में यूँ अर्ज़ करे कि ऐ मेरे रब! इन पर रहम फ़रमा जैसा कि इन्होंने मुझे छुटपन में पाला और परवरिश की।

तफ़सीर इब्ने कसीर में है कि एक शख़्स अपनी माँ को कमर पर उठाये

हुए तवाफ़ करा रहा था। उसने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से अर्ज़ किया कि क्या मैंने इस तरह ख़िदमत करके अपनी वालिदा (माँ) का हक़ अदा कर दिया? आपने फ़रमाया कि एक साँस का भी हक़ अदा नहीं हुआ।
(तफ़सीर इब्ने कसीर पेज 35 जिल्द 3)

सूरः लुक़मान में इरशाद है किः

तर्जुमाः और इनसान को हमने माँ-बाप के बारे में ताकीद की (कि उनकी ख़िदमत और फ़रमाँबरदारी करो, क्योंकि उन्होंने ख़ासकर उसकी माँ ने उसके लिये बड़ी मशक़्क़तें झेली हैं, चुनाँचे) उसकी माँ ने कमज़ोरी पर कमज़ोरी उठाकर उसको पेट में रखा और दो साल में उसका दूध छूटता है। (उन दिनों में भी माँ उसकी हर तरह की ख़िदमत करती है और बाप भी अपनी हालत के मुवाफ़िक़ मशक़्क़त उठाता है, इसलिये हमने अपने हुक़ूक़ के साथ माँ-बाप के हुक़ूक़ को भी अदा करने का हुक्म फ़रमाया है कि) तू मेरी और अपने माँ-बाप की शुक्रगुज़ारी किया कर, मेरी तरफ़ सब को लौटकर आना है। और अगर वे दोनों तुझपर ज़ोर डालें कि तू मेरे साथ किसी ऐसी चीज़ को शरीक ठहरा जिसकी तेरे पास कोई दलील नहीं तो तू उनका कहना न मानना, और दुनिया में उनके साथ ख़ूबी के साथ बसर करना। और उस शख़्स की राह पर चलना जो मेरी तरफ़ रुजू हो, फिर तुम सबको मेरी तरफ़ आना है, फिर मैं तुमको जतला दूँगा जो तुम करते थे। (सूरः लुक़मान आयत 14,15 का तर्जुमा व तफ़सीर, बयानुल् क़ुरआन से)

इन आयतों और हदीसों से माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक और उनकी ख़िदमत करने का हुक्म वाज़ेह तौर पर मालूम हो रहा है। शादी होने के बाद बहुत-से लड़के और लड़कियाँ माँ-बाप को छोड़ देते हैं और बहुत-से लड़के शादी से पहले ही आवारागर्दी इख़्तियार करने की वजह से माँ-बाप से मुँह मोड़ लेते हैं। ऐसे लोगों पर लाज़िम है कि तौबा करें और माँ-बाप की ख़िदमत की तरफ़ मुतवज्जह हों।

माँ-बाप के साथ अच्छे सुलूक का क्या दर्जा है?

हदीसः (167) हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान फ़रमाया कि मैंने नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से दरियाफ़्त किया कि सब कामों में अल्लाह तआ़ला को कौनसा काम ज़्यादा प्यारा है?

आपने फ़रमाया कि वक़्त पर नमाज़ पढ़ना (जो उसका वक़्त मुस्तहब हो)। मैंने अ़र्ज़ किया उसके बाद कौनसा अ़मल अल्लाह को सब आमाल से प्यारा है? आपने फ़रमाया माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक करना। मैंने अ़र्ज़ किया उसके बाद कौनसा अ़मल अल्लाह को ज़्यादा प्यारा है? फ़रमाया अल्लाह की राह में जिहाद करना। (सवाल व जवाब नक़्ल करके) हज़रत इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि (मेरे सवालों के जवाब में) हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मुझसे ये बातें बयान फ़रमाईं और अगर मैं और ज़्यादा सवाल करता तो आप बराबर जवाब देते रहते। (मिश्कात शरीफ़ पेज 58)

तशरीहः इस हदीस पाक में इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला के नज़दीक सबसे ज़्यादा महबूब अ़मल वक़्त पर नमाज़ पढ़ना है। और उसके बाद सबसे ज़्यादा महबूब अ़मल, यह है कि इनसान अपने माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक करे। फिर तीसरे नम्बर पर अल्लाह के रास्ते में जिहाद को फ़रमाया। मालूम हुआ कि माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक करना अल्लाह के रास्ते में जिहाद करने से भी बढ़कर है।

हादीसों में माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक और अच्छा बर्ताव करने को "बिर्र" से और बुरा बर्ताव करने को "अ़क़ूक़" से ताबीर फ़रमाया है, और दोनों लफ़्ज़ माँ-बाप के अ़लावा दूसरे रिश्तेदारों से ताल्लुक़ रखने के बारे में भी आये हैं। "बिर्र" अच्छा सुलूक करने को और "अ़क़ूक़" बदसुलूकी और तकलीफ़ देने के लिए बोला जाता है।

मुल्ला अ़ली क़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि मिरक़ात शरह मिश्कात में लिखते हैं कि 'बिर्र' एहसान (यानी अच्छी तरह से पेश आने) को कहते हैं जो माँ-बाप और दूसरे रिश्तेदारों के साथ बर्ताव करने के लिये इस्तेमाल होता है। और इसके विपरीत 'अ़क़ूक़' है, माँ-बाप और दूसरे रिश्तेदारों के साथ बुरी तरह पेश आने और उनके हुक़ूक़ ज़ाया करने को अ़क़ूक़ कहा जाता है।

'बिर्र' और 'अ़क़ूक़' के अ़लावा दो लफ़्ज़ और हैं "सिला-रहमी" और "क़ता-रहमी"। मुल्ला अ़ली क़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि इनकी तफ़सीर करते हुए लिखते हैं कि 'सिला-रहमी' का मतलब यह है कि अपने ख़ानदान और ससुराली रिश्तेदारों के साथ अच्छा सुलूक किया जाये। उनके साथ मेहरबानी का बर्ताव हो, और उनके हालात की रियायत हो। और 'क़ता-रहमी' इसकी ज़िद है। यानी इसके मायने इसके उलट और विपरीत हैं । जो शख़्स

सिला-रहमी करता है वह उस ताल्लुक़ को जोड़ता है जो उसके और उसके रिश्तेदारों के दरमियान है, इसी लिये लफ़्ज़ सिला इस्तेमाल किया गया है, जो 'वसुल' से लिया गया है। (और वस्ल के मायने मिलने के हैं)। और जो शख़्स बदसुलूकी करता है, वह उस ताल्लुक़ को काट देता है जो उसके और रिश्तेदारों के दरमियान है, इसलिये इसको क़ता-रहमी से ताबीर किया जाता है।

अच्छा बर्ताव करने में माँ का ज़्यादा ख़्याल रखा जाये

हदीसः (168) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि एक शख़्स ने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से दरियाफ़्त किया कि (रिश्तेदारों में) मेरे अच्छे सुलूक का सबसे ज़्यादा हक़दार कौन है? इसके जवाब में हुज़ूर सरवरे आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तुम्हारी माँ तुम्हारे अच्छे सुलूक की सबसे ज़्यादा हक़दार है। पूछने वाले ने पूछा फिर कौन? आपने फ़रमाया तुम्हारी माँ! उसने दरियाफ़्त किया फिर कौन? आपने फ़रमाया तुम्हारी माँ। सवाल करने वाले ने अ़र्ज़ किया फिर कौन? फ़रमाया तुम्हारा बाप।

और एक रिवायत में है कि आपने माँ के बारे में तीन बार फ़रमाया कि तेरे अच्छे सुलूक की सबसे ज़्यादा हक़दार वह है। फिर बाप का ज़िक्र फ़रमाया कि वह माँ के बाद अच्छे सुलूक का सबसे ज़्यादा हक़दार है। फिर फ़रमाया कि बाप के बाद रिश्तेदारों में जो सबसे ज़्यादा क़रीब हो उसके साथ अच्छा सुलूक करो और उस सबसे क़रीब वाले रिश्ते वाले के बाद जो रिश्ते में सबसे ज़्यादा क़रीब हो उसके साथ अच्छा सुलूक करो। (मिश्कात पेज 418)

तशरीहः इस हदीस पाक में अच्छे सुलूक की सबसे ज़्यादा हक़दार माँ को बताया है क्योंकि वह हमल (गर्भ) और बच्चे की पैदाईश और परवरिश करने और बच्चे की ख़िदमत में लगे रहने की वजह से सबसे ज़्यादा मशक़्क़त बरदाश्त करती है। और कमज़ोर होने की वजह से भी अच्छे सुलूक की ज़्यादा हक़दार है क्योंकि अपनी ज़रूरतों को पूरा करने के लिये वह काम नहीं कर सकती। बाप तो बाहर निकलकर कुछ न कुछ कर भी सकता है। लिहाज़ा अच्छे सुलूक में माँ का हक़ बाप से ऊपर रखा गया। माँ के बाद बाप के साथ अच्छा सुलूक करने का दर्जा बताया, और बाप के बाद बाक़ी रिश्तेदारों के साथ अच्छे सुलूक का हुक्म दिया, और इसमें रिश्तेदारी की हैसियत को

मेयार बनाया कि जिसकी रिश्तेदारी जितनी ज़्यादा क़रीबी हो उसके साथ अच्छे सुलूक का उसी क़द्र एहतिमाम किया जाये।

"फ़ज़ाइले सदक़ात" में है कि इस हदीस शरीफ़ से बाज़ आ़लिमों ने यह बात निकाली है कि अच्छे सुलूक और एहसान में माँ का हक़ तीन हिस्से है और बाप का एक हिस्सा, इसलिये कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तीन दफ़ा माँ को बताकर चौथी दफ़ा बाप को बताया। इसकी वजह आ़लिम हज़रात यह बताते हैं कि औलाद के लिये माँ तीन मशक़्क़तें बरदाश्त करती है- (1) गर्भ की (2) बच्चे को जन्म देने की (3) दूध पिलाने की।

इसी वजह से दीन के आ़लिमों ने खुलासा किया है कि एहसान और सुलूक में माँ का हक़ बाप से ज़्यादा है। अगर कोई शख़्स ऐसा हो कि वह अपनी ग़रीबी की वजह से दोनों की ख़िदमत नहीं कर सकता तो माँ के साथ सुलूक करना (यानी उसकी ज़रूरत का ख़्याल रखना) मुक़द्दम है, अलबत्ता अदब व सम्मान और इकराम करने में बाप का हक़ मुक़द्दम (पहले) है।

माँ-बाप को सताने का गुनाह और दुनिया में वबाल

हदीसः (169) हज़रत अबू बक्र रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि माँ-बाप को सताने के अ़लावा तमाम गुनाह ऐसे हैं जिनमें से अल्लाह तआ़ला जिसको चाहते हैं माफ़ फ़रमा देते हैं। और माँ-बाप को सताने का गुनाह ऐसा है कि इस गुनाह के करने वाले को अल्लाह तआ़ला मौत से पहले दुनिया वाली ही ज़िन्दगी में सज़ा दे देते हैं। (मिश्कात शरीफ़ पेज 421)

तशरीहः एक हदीस में इरशाद है कि जुल्म और क़ता-रहमी (यानी रिश्ता और ताल्लुक़ तोड़ने) के अ़लावा कोई गुनाह ऐसा नहीं है जिसको करने वाला दुनिया ही में सज़ा पाने का ज़्यादा हक़दार हो। इन दोनों गुनाहों के करने वाले को दुनिया में सज़ा दे दी जाती है (लेकिन इससे आख़िरत की सज़ा ख़त्म नहीं हो जाती बल्कि) उसके लिये आख़िरत की सज़ा भी बतौर ज़ख़ीरा रख ली जाती है। (जब आख़िरत में पहुँचेगा तो वहाँ भी सज़ा पायेगा)। (मिश्कात शरीफ़)

मालूम हुआ कि माँ-बाप के सताने की सज़ा दुनिया और आख़िरत दोनों जहान में मिलती है। और हदीस नम्बर 165 में गुज़र चुका है कि माँ-बाप

के साथ अच्छा सुलूक करने से उम्र लम्बी होती है और रिज़्क़ बढ़ता है। आजकल मुसीबतें दूर करने और बलायें दूर करने के लिये बहुत-सी ज़ाहिरी तदबीरें करते हैं, लेकिन उन आमाल को नहीं छोड़ते जिनकी वजह से मुसीबतें आती हैं और परेशानियों में गिरफ़्तार होते हैं।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़मर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि बड़े-बड़े गुनाह ये हैं:

1. अल्लाह तआ़ला के साथ शिर्क करना।

2. माँ-बाप की नाफ़रमानी करना।

3. किसी जान को क़त्ल कर देना (जिसका क़त्ल करना शरअ़न क़ातिल के लिये हलाल न हो)।

4. झूठी क़सम खाना। (मिश्कात)

बड़े गुनाहों की फ़ेहरिस्त (सूची) बहुत लम्बी है। इस हदीस में उन गुनाहों का ज़िक्र है जो बहुत बड़े हैं। उनमें से शिर्क के बाद ही माँ-बाप की नाफ़रमानी को ज़िक्र फ़रमाया है। 'अ़क़ूक़' यानी सताने का मफ़्हूम आ़म है, माँ-बाप को किसी भी तरीक़े से सताना, ज़बान से या फ़ेल से उनको तकलीफ़ देना, दिल दुखाना, नाफ़रमानी करना, उनकी ज़रूरत होते हुए उनपर ख़र्च न करना, यह सब 'अ़क़ूक़' में दाख़िल है।

अल्लाह तआ़ला के नज़दीक जो सबसे ज़्यादा प्यारे आमाल हैं उनमें वक़्त पर नमाज़ पढ़ने के बाद माँ-बाप के साथ अच्छे सुलूक का दर्जा बताया है। (देखो हदीस नम्बर 167) बिल्कुल इसी तरह बड़े-बड़े गुनाहों की फ़ेहरिस्त में शिर्क के बाद माँ-बाप की नाफ़रमानी और उनको तकलीफ़ देने को शुमार फ़रमाया है। माँ-बाप को तकलीफ़ देना किस दर्जे का गुनाह है इससे साफ़ वाज़ेह (स्पष्ट) है।

माँ-बाप के अ़लावा दूसरे रिश्तेदारों के साथ अच्छे बर्ताव का का हुक्म

हदीसः (170) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अपने (ख़ानदानी) नसबों को मालूम करो जिन (के जानने) से तुम अपने अ़ज़ीज़ों (रिश्तेदारों) के साथ सिला-रहमी कर सकोगे। क्योंकि सिला-रहमी ख़ानदान में

मुहब्बत का ज़रिया बनती है और सिला-रहमी माल बढ़ने का सबब है, और इसकी वजह से उम्र ज़्यादा हो जाती है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 420)

तशरीहः इस हदीस पाक में अव्वल तो यह हुक्म फ़रमाया कि अपने माँ-बाप के ख़ानदान के नसबों को मालूम करो यानी यह जानने की कोशिश करो कि रिश्तेदारी की शाख़ें कहाँ-कहाँ तक हैं? और कौन-कौन शख़्स दूर या क़रीब के वास्ते से हमारा क्या लगता है? फिर नसब के शजरे के जानने की ज़रूरत बताई और वह यह कि सिला-रहमी का इस्लाम में बहुत बड़ा दर्जा है और सिला-रहमी हर रिश्तेदार के साथ दर्जा-बदर्जा अपनी हिम्मत व गुन्जाइश के मुताबिक़ करनी चाहिये, इसलिये यह जानना ज़रूरी है कि किससे क्या रिश्ता है? उसके बाद सिला-रहमी के तीन फ़ायदे बताये।

पहलाः यह कि इससे कुनबे और ख़ानदान में मुहब्बत रहती है। जब हम रिश्तेदारों के यहाँ आयेंगे-जायेंगे उनके दुख-सुख के साथी होंगे, रुपये-पैसे या किसी और तरह से उनकी ख़िदमत करेंगे तो ज़ाहिर है कि उनको हमसे मुहब्बत होगी और वे भी ऐसे ही बर्ताव की फ़िक्र करेंगे। अगर हर फ़र्द सिला-रहमी करने लगे तो पूरा ख़ानदान हसद और कीने से पाक हो जाये और सब राहत व सुकून के साथ ज़िन्दगी गुज़ारें।

दूसराः यह कि सिला-रहमी की वजह से माल बढ़ता है।

तीसराः यह कि इसकी वजह से उम्र बढ़ती है। माँ-बाप के साथ अच्छे सुलूक के फ़ज़ाइल में भी ये दोनों बातें गुज़र चुकी हैं और दोनों बहुत अहम हैं।

सिला-रहमी (यानी रिश्तेदारों के साथ अच्छा सुलूक करने) की वजह से अल्लाह तआला राज़ी होते हैं। (अगर कोई शख़्स इसको इस्लामी काम समझकर अन्जाम दे)। और दुनियावी फ़ायदा भी पहुँचता है। अगर माल बढ़ाना हो तो जहाँ दूसरी तदबीरें करते हैं उनके साथ इसको भी आज़माकर देखें। दूसरी तदबीरों के ज़रिये अल्लाह तआला की तरफ़ से माल के इज़ाफ़े का वायदा नहीं और सिला-रहमी इख़्तियार करने पर इसका वायदा है। और उम्र भी ज़्यादा होने के लिये भी सिला-रहमी का नुस्ख़ा अकसीर है। अल्लाह तआला की तरफ़ से इसका भी वायदा है।

अच्छे आमाल से आख़िरत में कामयाबी और बुरे आमाल से आख़िरत में ना-कामयाबी ऐसा खुला मसला है जिसको सब ही जानते हैं। लेकिन आमाल से दुनिया में जो मुनाफ़े और फ़ायदे हासिल होते हैं और इनके ज़रिये जो

मुसीबतें दूर होती हैं और बुरे आमाल की वजह से जो मौत से पहले आफ़तों और तकलीफ़ों का सामना करना पड़ता है, बहुत-से लोग उनसे वाक़िफ़ नहीं। अगर वाक़िफ़ हैं भी तो इसको अहमियत नहीं देते और दुनियावी तदबीरों ही के लिये दौड़ते फिरते हैं। और चूँकि बद-आमाली (बुरे क्रम करने) में भी मुब्तला रहते हैं इसलिये दुनियावी तदबीरें नाकाम होती हैं। और न सिर्फ़ यह कि मुसीबतें दूर नहीं होतीं बल्कि नयी-नयी आफ़तें और मुसीबतें खड़ी होती रहती हैं। पस जिस तरह माँ-बाप का सताना और क़ता-रहमी (यानी रिश्ता काटना और ख़त्म) करना दुनिया व आख़िरत के अज़ाब का सबब है उसी तरह माँ-बाप और दूसरे रिश्तेदारों के साथ अच्छा सुलूक और सिला-रहमी करना भी माल और उम्र बढ़ने का ज़रिया है। जिन आमाल की जो ख़ासियत अल्लाह ने रखी है वह अपना रंग ज़रूर लाती है, अगरचे उन आमाल को करने वाला मक़बूल बन्दा भी न हो और उसके अमल का आख़िरत में सवाब भी न मिल सके।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि ख़ानदान के लोग जब आपस में सिला-रहमी करते हैं तो अल्लाह तआ़ला उनपर रिज़्क़ जारी फ़रमाते हैं, और ये लोग रहमान (यानी अल्लाह तआ़ला) की हिफ़ाज़त में रहते हैं।

और हज़रत अ़ब्दुर्रहमान बिन औफ़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिन नेक कामों का बदला जल्द दे दिया जाता है उनमें सबसे ज़्यादा जल्दी बदला दिलाने वाला अ़मल सिला-रहमी है। और इस अ़मल का यह नफ़ा यहाँ तक है कि एक ख़ानदान के लोग फ़ाजिर यानी बदकार होते हैं फिर भी उनके मालों में तरक़्क़ी होती रहती है और उनके अफ़राद की तायदाद बढ़ती रहती है, जबकि वे सिला-रहमी करते रहते हैं। और (यह भी फ़रमाया कि) जल्द से जल्द अ़ज़ाब लाने वाली चीज़ ज़ुलिम और झूठी क़सम है। फिर फ़रमाया कि झूठी क़सम माल को ख़त्म कर देती है और आबाद शहरों को खंडर बना देती है। (दुर्रे मन्सूर पेज 177 जिल्द 4)

रिश्तेदारों से उनके रुतबे और दर्जे के मुताबिक़ अच्छा सुलूक किया जाये

हदीसः (171) हज़रत अबू रमसा रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि मैं हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में पहुँचा तो आपको यह फ़रमाते हुए सुना कि तू अपनी माँ के साथ और अपने बाप के साथ और अपनी बहन के साथ और अपने भाई के साथ अच्छा सुलूक कर। उनके बाद जो रिश्तेदार ज़्यादा करीब दर्जे के हों उनके साथ अच्छा सुलूक कर।

(मुस्तद्रक पेज 151 जिल्द 4)

तशरीहः इस हदीस पाक में माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक करने का हुक्म फ़रमाने के बाद बहन-भाई के साथ अच्छा सुलूक करने का भी हुक्म फ़रमाया है और फ़रमाया किः

"उनके बाद दूसरे रिश्तेदारों के साथ अच्छा सुलूक करो, और उनमें जो ज़्यादा क़रीब हो उसका ध्यान करो"

मतलब यह है कि सब रिश्ते बराबर नहीं होते। किसी से क़रीब का है किसी से दूर का। और क़रीबी रिश्तेदारों में भी कोई ज़्यादा क़रीब का होता है कोई कम क़रीब का होता है। और यही हाल दूर के रिश्तों का है। तुम अच्छे सुलूक और सिला-रहमी में रिश्ते के क़रीब और दूर का होने के एतिबार से अच्छा सुलूक और सिला-रहमी करो। जो ज़्यादा क़रीब हो उसको तरजीह दो, फिर जो उससे क़रीब हो उसको देखो, और इसी तरह ख़्याल करते रहो।

यह फ़र्क़ माल के ख़र्च करने में है, सलाम-कलाम में तो किसी से भी पीछे न रहो। कता-ताल्लुक़ तो आम मुसलमानों से भी हराम है, अपने रिश्तेदारों और अज़ीज़ों से कैसे दुरुस्त हो सकता है? आम हालात में अपने अज़ीज़ों पर जो कुछ ख़र्च करेगा सवाब पायेगा, लेकिन बाज़ हालात में उन रिश्तेदारों का ख़र्च वाजिब हो जाता है जो मेहरम हों, जिसकी तफ़सील मसाइल की किताबों में मौजूद है और दीन के आलिमों से मालूम हो सकती है।

बहुत-से लोग बहन-भाई के साथ ज़ुल्म-ज़्यादती करते हैं। यह हदीस उनके लिये नसीहत है। बहन भाई का रिश्ता माँ-बाप के रिश्ते के सबब से है, इसकी रियायत बहुत ज़रूरी है। उनके साथ अच्छा सुलूक और सिला-रहमी करने का ख़ास ख़्याल रखना चाहिये, लेकिन इसके उलट देखा

जाता है, कभी बड़े बहन-भाई छोटे बहन-भाई पर और कभी छोटे बहन-भाई बड़े भाई-बहन पर जुल्म व ज़्यादती करते हैं। अपने पास से उनपर ख़र्च करने के बजाय खुद उनका हक दबा लेते हैं। माँ-बाप की मीरास से जो हिस्सा निकलता है उसको हज़म कर जाते हैं। वालिद (बाप) की वफ़ात हो गयी और बड़े भाई के कब्ज़े में सारा माल और जायदाद है, अब उसको अपनी ज़ात पर और अपने बीवी-बच्चों पर मीरास तकसीम किये बग़ैर ख़ूब ख़र्च करता है और छोटे यतीम बहन-भाई को दो-चार साल खिला-पिलाकर पूरी जायदाद से मेहरूम कर दिया जाता है। बच्चे जब होश संभालते हैं तो पूरा माल ख़र्च हो चुका होता है और जायदाद बड़े भाई या बड़े भाई की औलाद के नाम मुन्तकिल (हस्थांतरित) हो चुकी होती है।

ये किस्से पेश आते रहते हैं और ख़ासकर जहाँ दो माँ की औलाद हो वहाँ तो मय्यित का छोड़ा हुआ माल (तर्का) बाँटने का सवाल ही नहीं उठने देते। हर एक बीवी की औलाद का जितने माल व जायदाद पर कब्ज़ा होता है उसमें से दूसरी बीवी की औलाद को देने के लिये तैयार नही होते। हर फरीक़ लेने का मुद्दई होता है, इन्साफ़ के साथ देने में नफ़्स को राज़ी नहीं करता। यह बहुत बड़ी कता-रहमी होती है। और बहनों को तो माँ-बाप की मीरास से कोई ही ख़ानदान देता है वरना उनका हिस्सा भाई ही दबा लेते हैं जिसमें दीनदारी का लेबल लगाने वाले भी पीछे नहीं होते। बाज़ लोग माफ कराने का बहाना करके बहनों का मीरास का हक खा जाते हैं। बहनों से कहते हैं कि अपना हिस्सा हमें दे दो। वे यह समझकर कि मिलने वाला तो है नही, भाई से क्यों बिगाड़ किया जाये? ऊपर के दिल से कह देती हैं कि हमने माफ किया। ऐसी माफ़ी शरअन मोतबर नहीं। हाँ! अगर उनका पूरा हिस्सा उनको दे दिया जाये और मालिकाना कब्ज़ा करा दिया जाये, फिर वे दिल की ख़ुशी के साथ कुल या कुछ हिस्सा किसी भाई को हिबा कर दें तो यह मोतबर होगा।

हदीस में यह जो फ़रमाया कि माँ-बाप और बहन-भाई के बाद तरतीबवार जो रिश्तेदार ज़्यादा करीब हों उसी क़द्र उसके साथ सिला-रहमी और अच्छे सुलूक का ख़ास ख़्याल रखो। सिला-रहमी के मायने यह नहीं कि माल ही से ख़िदमत की जाए बल्कि माली ख़िदमत करना, हदिया देना, (यानी कोई चीज़ या नकद रकम किसी को तोहफ़े में देना) आना-जाना, ग़म और

खुशी में शरीअ़त के मुताबिक़ शरीक होना, हंसते-खिलते हुए अच्छे तरीक़े पर मिलना, यह सब सिला-रहमी और अच्छा सुलूक है। इनमें अकसर चीज़ों में माली ख़र्च बिल्कुल ही नहीं होता और दिलदारी हो जाती है। पस जैसा मौक़ा हो और जैसे हालात हों, जिस तरह की सिला-रहमी हो सके करते रहना चाहिये।

जो बदला उतार दे वह सिला-रहमी करने वाला नहीं है

हदीसः (172) हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो शख़्स बदला उतार दे वह सिला-रहमी करने वाला नहीं है, बल्कि सिला-रहमी करने वाला वह है कि जब उससे क़ता-रहमी का बर्ताव किया जाये (यानी दूसरा रिश्तेदार उससे ताल्लुक़ अच्छी तरह न निभाए) तो वह सिला-रहमी का बर्ताव करे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 419)

तशरीहः इस हदीस पाक में उन लोगों को नसीहत फ़रमायी जो सिला-रहमी की तरग़ीब (प्रेरणा) देने पर यह जवाब देते हैं कि हमें कौन पूछता है जो हम सिला-रहमी करें। हम फ़लाँ के पास जाते हैं तो फूटे मुँह से बात भी नहीं करता। चचा ने यह ज़ुल्म कर रखा है और भतीजे ने यह ज़्यादती कर रखी है, फिर हम कैसे मिल सकते हैं? हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो भाई-बहन ख़ाला-मामूँ वग़ैरह तुम से अच्छी तरह मिलते हैं, सिला-रहमी और अच्छे सुलूक से पेश आते हैं और उसके बदले में तुम भी मेल-जोल रखते हो और सिला-रहमी करते हो और समझते हो कि हमने सिला-रहमी कर दी तो यह हक़ीक़ी सिला-रहमी नहीं है जिसका शरीअ़त में मुतालबा है। क्योंकि यह तो बदला उतार देना हुआ, ताल्लुक़ जोड़ना और सिला-रहमी करना न हुआ। सवाब तो इसका भी मिलता है लेकिन असल सिला-रहमी करने वाला वह है जिससे क़ता-रहमी का बर्ताव किया जाये और वह क़ता-रहमी के बावजूद सिला-रहमी करता रहे। जो क़ता-रहमी करे (यानी रिश्ता तोड़े और रिश्ते को बाक़ी रखने का लिहाज़ न करे) उससे मिला करे, सलाम किया करे, कभी-कभी हदिया (कोई चीज़ या नक़्द रक़म किसी को तोहफ़े में देना) भी दे। इसमें नफ़्स पर ज़ोर तो पड़ेगा लेकिन इन्शा-अल्लाह सवाब बहुत मिलेगा। और जिसने क़ता-रहमी कर रखी है वह भी अपनी इस

लापरवाही से इन्शा-अल्लाह बाज़ आ जायेगा। अगर हर फ़रीक़ इस नसीहत पर अ़मल कर ले तो पूरा ख़ानदान रहमत ही रहमत बन जाये।

हज़रत उक़्बा बिन आ़मिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने बयान फ़रमाया कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मेरी मुलाक़ात हुई तो मैंने जल्दी से आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का हाथ मुबारक पकड़ लिया और आपने (भी) जल्दी से मेरा हाथ पकड़ लिया, फिर फ़रमाया कि ऐ उक़्बा! क्या मैं तुझे दुनिया और आख़िरत वालों के अफ़ज़ल अख़्लाक़ न बता दूँ? फिर ख़ुद ही फ़रमाया कि जो शख़्स तुझसे ताल्लुक़ तोड़े तू उससे ताल्लुक़ जोड़े रख, और जो शख़्स तुझको मेहरूम कर दे तू उसको दिया कर, और जो शख़्स तुझ पर ज़ुल्म करे उसको माफ़ कर दिया कर। फिर फ़रमाया कि ख़बरदार! जो यह चाहे कि उसकी उम्र लम्बी हो और रिज़्क़ में ज़्यादती हो उसको चाहिये कि अपने रिश्तेदारों से सिला-रहमी का बर्ताव करे।

(मुस्तद्रक हाकिम पेज 162 जिल्द 4)

रिश्ता और ताल्लुक़ तोड़ने का वबाल

हदीसः (173) हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अबी औफ़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु का बयान है कि मैंने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को फ़रमाते हुए सुना है कि उस क़ौम पर रहमत नाज़िल नहीं होती जिसमें कोई शख़्स क़ता-रहमी (रिश्ता और ताल्लुक़ात ख़त्म) करने वाला मौजूद हो।

फ़ायदाः जिस तरह सिला-रहमी से अल्लाह पाक की रहमतें और बरकतें नाज़िल होती हैं इसी तरह क़ता-रहमी की वजह से अल्लाह अपनी रहमत रोक लेते हैं। और यही नहीं कि सिर्फ़ क़ता-रहमी करने वाले से बल्कि उसकी पूरी क़ौम से रहमत रोक ली जाती है। जिसकी वजह यह है कि जब एक शख़्स क़ता-रहमी करता है तो दूसरे लोग उसको सिला-रहमी पर आमादा नहीं करते बल्कि ख़ुद भी उसके जवाब में क़ता-रहमी का बर्ताव करने लगते हैं।

हदीसः (174) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि लफ़्ज़ "रहम" लिया गया है लफ़्ज़ "रहमान" से, (जो अल्लाह तआ़ला का नाम है)। पस अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि (ऐ रहम) जिसने तुझे जोड़े रखा (यानी तेरे हुक़ूक़ अदा किये) मैं उसको रहमत के साथ अपने से मिला लूँगा। और

जिसने तुझे काट दिया मैं उसको (अपनी रहमत से) काट दूँगा। (यानी रहमत के दायरे से अलग कर दूँगा)। (मिश्कात शरीफ़ पेज 419)

फ़ायदाः एक हदीस में इरशाद है:

"क़ता-रहमी करने वाला जन्नत में दाख़िल न होगा" (बुख़ारी)

मालूम हुआ कि क़ता-रहमी की सज़ा दुनिया व आख़िरत दोनों में भुगतनी पड़ती है। बहुत-से ख़ानदानों में सालों-साल गुज़र जाते हैं और आपस के ताल्लुक़ात ठीक नहीं होते। आपस में क़त्ल व ख़ून तक हो जाते हैं और मुक़दमे-बाज़ी तो रोज़ाना का मशग़ला बन जाता है। भाई-भाई कचेहरी में दुश्मन बने खड़े होते हैं। कहीं चचा व भतीजे एक-दूसरे से उलझ रहे हैं, कहीं भाई-भाई में झगड़ा है। एक ने रिहाइश की जायदाद दबा ली है दूसरे ने खेती-बाड़ी की ज़मीन पर क़ब्ज़ा कर लिया है। लड़ रहे हैं, मर रहे हैं, न सलाम है न क़लाम है, आमना-सामना होता है तो एक-दूसरे से मुँह फेरकर गुज़र जाते हैं। भला इन चीज़ों का इस्लाम में कहाँ गुज़र है? अगर सिला-रहमी के उसूल पर चलें तो ख़ानदानों की हर लड़ाई फ़ौरन ख़त्म हो जाये। जो लोग क़ता-रहमी को अपना लेते हैं उनकी आने वाली नस्लों को क़ता-रहमी (ताल्लुक़ और रिश्ता तोड़ने) के नतीजे (परिणाम) सालों-साल तक भुगतने पड़ते हैं। ऐ अल्लाह हमारे आमाल और हालात का सुधार फ़रमा।

आपस में एक-दूसरे की मदद करने की अहमियत और फ़ज़ीलत

हदीसः (175) हज़रत नौमान बिन बशीर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि तुम ईमान वालों को आपस में रहम करने और मुहब्बत और शफ़क़त रखने में एक जिस्म की तरह देखोगे। (यानी वे इस तरह होंगे जैसे एक ही जिस्म होता है) कि जब एक अंग और हिस्से में तकलीफ़ होती है तो सारा जिस्म बेख़्वाबी (अनिद्रा) और बुख़ार को बुला लेता है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 422)

तशरीहः एक और हदीस में है कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः सारे मुसलमान एक शख़्स की तरह हैं कि अगर आँख में तकलीफ़ होती है तो सारे जिस्म को तकलीफ़ होती है, और अगर सर में तकलीफ़ होती है तो सारे जिस्म को तकलीफ़ होती है। (मुस्लिम)

हज़रत अबू मूसा अशअरी रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि रसूले ख़ुदा

सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि एक मोमिन दूसरे मोमिन के लिये एक इमारत की तरह है कि इमारत के हिस्से (ईंट पत्थर चूना वग़ैरह) एक-दूसरे को मज़बूत रखते हैं। फिर आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उंगलियों में उंगलियाँ डालीं (और एक-दूसरे का मददगार होने की सूरत बताई)। (बुख़ारी व मुस्लिम)

अब अपनी हालत पर ग़ौर कीजिये और इस ज़माने के मुसलमान कहलाने वाली क़ौम का भी पता चलाइये कि अपने मतलब के लिये मुसलमान को हर मुमकिन सूरत से नुक़सान पहुँचाने के लिये तैयार हैं। परेशान हाल की मदद करना और ख़बर लेना तो बड़ी चीज़ है उसके पास को गुज़रना और उसको तसल्ली देना भी बोझ गुज़रता है। अपने मतलब को दुनिया भर को इस्लामी भाई बना लें और जहाँ दूसरे का कोई काम अटका फ़ौरन बिरादरी का रिश्ता तोड़ डाला।

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु रिवायत फ़रमाते हैं कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिसने मेरे किसी उम्मती की हाजत पूरी कर दी ताकि उसको ख़ुश करे तो उसने मुझको ख़ुश किया, और जिसने मुझे ख़ुश किया उसने ख़ुदा को ख़ुश किया, और जिसने ख़ुदा को ख़ुश किया ख़ुदा उसको जन्नत में दाख़िल फ़रमायेगा। (बैहक़ी)

एक हदीस में है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिसने किसी परेशान हाल की मदद की ख़ुदा उसके लिये तिहत्तर (73) मग़फ़िरतें लिख देगा। उनमें से एक में से उसके सब काम बन जायेंगे और बहत्तर (72) क़ियामत के दिन उसके दर्जे बुलन्द करने के लिये होंगी।

मुसलमान को नुक़सान पहुँचाना और उसको धोखा देना लानत का सबब है

हदीसः (176) हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि वह शख़्स मलऊन है (यानी उसपर धुतकार है) जो किसी मोमिन को नुक़सान पहुँचाये या उसके साथ फ़रेब करे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 428)

तशरीहः इस हदीस पाक में इस बात से बचने की सख़्त ताकीद की है कि किसी मोमिन को नुक़सान पहुँचाया जाये या उसके साथ मक्कारी की

जाये। ऐसा करने से सिर्फ़ मना ही नहीं फ़रमाया बल्कि ऐसा करने वाले को मलऊन क़रार दिया। जिस पर लानत की जाये उसको मलऊन कहते हैं।

'ज़रर' हर तरह के नुक़सान और तकलीफ़ को कहते हैं। किसी भी मुसलमान को किसी तरह का ज़रर और नुक़सान और तकलीफ़ पहुँचाना सख़्त वबाल की बात है। मोमिन के साथ मक्कारी और फ़रेब करना, उसको धोखा देना और फ़रेब देना भी बहुत बड़ा गुनाह है। जो शख़्स ऐसा करे उसको भी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मलऊन बताया।

मोमिन का काम यह है कि सारी मख़्लूक़ को नफ़ा पहुँचाये और ख़ासकर मोमिन बन्दों की हर तरह से ख़ैरख़्वाही और हमदर्दी करे। उनको नफ़ा पहुँचाये, तकलीफ़ से बचाये, दुख-दर्द में काम आये, और इस तरह से ज़िन्दगी गुज़ारे कि पास-पड़ोस के लोग और हर वह शख़्स जिससे कोई भी वास्ता हो अपने दिल से यह यक़ीन करे कि यह मुसलमान आदमी है। सारी दुनिया मुझे नुक़सान पहुँचा सकती है लेकिन चूँकि यह शख़्स मुसलमान है इसलिये इससे मुझे कोई तकलीफ़ नहीं पहुँच सकती।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान फ़रमाया कि एक बार कुछ लोग बैठे हुए थे। हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ लाये और वहाँ खड़े हो गये और फ़रमायाः क्या मैं तुमको यह बता दूँ कि तुम में अच्छा कौन है? और बुरा कौन है? यह सुनकर मौजूद लोग ख़ामोश हो गये। आपने तीन बार यही सवाल फ़रमाया तो एक शख़्स ने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! ज़रूर बताइये कि हम में बुरा कौन है और अच्छा कौन है? आपने फ़रमाया तुम में सबसे बेहतर वह है जिससे ख़ैर की उम्मीद की जाती हो और उसके शर की जानिब से इतमीनान हो। (यानी लोग इस बात का यक़ीन रखते हों कि इस शख़्स से किसी तरह का नुक़सान न पहुँचेगा)। और (फ़रमाया कि) तुम में बदतरीन (बुरा) आदमी वह है जिससे ख़ैर की उम्मीद न की जाती हो और जिसके शर (बुराई) से लोग बेख़ौफ़ न हों। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि मुसलमान वह है जिसकी ज़बान से और हाथ से मुसलमान सलामत रहें। (यानी उनको कोई दुख-तकलीफ़ उसकी तरफ़ से न पहुँचे)। और मोमिन वह है जिसकी तरफ़ से लोगों को अपने ख़ूनों और मालों पर इतमीनान हो कि इस शख़्स से कोई

जानी माली नुक़सान न पहुँचेगा। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

देखो! हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बात कहने का कैसा अन्दाज़ इख़्तियार फ़रमाया। यह फ़रमाने के बजाय कि लोगों को तकलीफ़ मत पहुँचाओ, यूँ फ़रमाया कि अपनी ज़िन्दगी का ढंग और लोगों के साथ बर्ताव का ऐसा तौर-तरीक़ा रखो कि उनके दिलों में यह बात बैठ जाये कि सारी दुनिया हमें नुक़सान पहुँचा सकती है लेकिन इससे हमें नुक़सान नहीं पहुँच सकता।

हदीस में मोमिन के साथ मकर (फ़रेब और धोखा) करने की भी सख़्त मज़म्मत (निन्दा) फ़रमायी। 'मकर' और 'ग़दर' और धोखा और फ़रेब मोमिन का काम नहीं है। और मोमिन के साथ मकर करना और धोखा देना तो बहुत ही सख़्त वबाल की चीज़ है। बहुत-से लोग हमदर्द बनकर अन्दर-अन्दर जड़ काटते हैं। ज़ाहिर में दोस्त और बातिन में (यानी अन्दर से) दुश्मन होते हैं। कई बार मक्कारी के साथ मुसलमान भाई से ऐसी बात कहते हैं जिस में उसका नुक़सान होता है और उसको यह यक़ीन दिलाते हैं कि हम तुम्हारी हमदर्दी कर रहे हैं, और उस सिलसिले में झूठ बोल जाते हैं। सीधा-सादा मुसलमान ऐसी मक्कारी की बात का यक़ीन कर लेता है और उसको सच्चा जान लेता है, फिर नुक़सान उठाता है। इसमें झूठ और ख़ियानत दोनों जमा हो जाते हैं। फ़रमाया हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि यह बड़ी ख़ियानत है कि तू अपने मुसलामन भाई से कोई ऐसी बात करे जिस में तू झूठा हो और वह तुझे सच्चा जान रहा हो। (अबू दाऊद)

जो शख़्स मोमिन के साथ मकर करे हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उसे भी मलऊन क़रार दिया। अल्लाह तआ़ला हमें इस तरह की हरकतों से बचाए आमीन।

पड़ोसियों के हुक़ूक़ और उनके साथ अच्छा सुलूक करना

हदीसः (177) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि एक शख़्स ने अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! बेशक फ़लाँ औ़रत ऐसी है कि उसकी नमाज़-रोज़ा और सदके की कसरत (अधिकता) का (लोगों में) तज़किरा रहता है, लेकिन उसके साथ यह बात भी है कि वह अपने पड़ोसियों को अपनी ज़बान से तकलीफ़ देती है। यह सुनकर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु

अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि यह औ़रत दोज़ख़ में है। फिर उस शख़्स ने अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! बेशक फ़लाँ औ़रत के बारे में लोगों में यह तज़किरा रहता है कि (नफ़िल) रोज़े और (नफ़िल) नमाज़ कम अदा करती है, और पनीर के कुछ टुकड़े सदक़े में दे देती है और अपने पड़ोसियों को अपनी ज़बान से तकलीफ़ नहीं देती। यह सुनकर नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि वह जन्नत में जाने वाली है। (मिश्कात पेज 425)

तशरीह: इनसान को अपने घर वालों के बाद सबसे ज़्यादा और तक़रीबन रोज़ाना अपने पड़ोसियों से वास्ता पड़ता है। पड़ोसियों के अहवाल व अख़्लाक़ मुख़्तलिफ़ होते हैं, उनके बच्चे भी घर आ जाते हैं, बच्चों-बच्चों में लड़ाई भी हो जाती है। पड़ोस की बकरी और मुर्ग़ी भी घर में चली आती है, इन चीज़ों से नागवारी हो जाती है और नागवारी बढ़ते-बढ़ते बुग़्ज़ व कीना और ताल्लुक़ात तक को ख़त्म करने की नौबत पहुँच जाती है, और हर फ़रीक़ एक-दूसरे पर ज़्यादती करने लगता है, और ग़ीबतों और तोहमतों बल्कि मुक़द्दमे-बाज़ियों तक नौबत आ जाती है। और ऐसा भी होता है कि बाज़ मर्द और औ़रत तेज़-मिज़ाज और तेज़-ज़बान होते हैं, बग़ैर किसी वजह के बद-ज़बानी से लड़ाई का सामान पैदा कर देते हैं। औ़रतों की बद-ज़बानी तेज़-कलामी तो कई बार इस हद तक पहुँच जाती है कि पूरा मौहल्ला उनसे बेज़ार रहता है। इसी तरह की एक औ़रत के बारे में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अ़र्ज़ किया गया कि बड़ी नमाज़न है, ख़ूब-ख़ूब सदक़ा करती है, नफ़्ली रोज़े भी ख़ूब ज़्यादा रखती है लेकिन इस सब के बावजूद उसमें एक यह बात है कि अपनी बद-ज़बानी से पड़ोसियों को तकलीफ़ देती है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि वह दोज़ख़ी है। देखो! पड़ोसियों को सताने के सामने नमाज़-रोज़े की कसरत से भी काम न चला। इसके उलट (विपरीत) एक दूसरी औ़रत का ज़िक्र किया गया जो फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ लेती थी, फ़र्ज़ रोज़ा रख लेती थी, ज़कात फ़र्ज़ हुई तो वह भी दे दी, नफ़्ली नमाज़-रोज़ा और सदक़े की तरफ़ उसको ख़ास तवज्जोह न थी, लेकिन पड़ोसी उसकी ज़बान से महफ़ूज़ थे। जब उसका तज़किरा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने किया गया तो आपने उसको जन्नती फ़रमाया।

पड़ोसियों के साथ अच्छे अख़्लाक़ और अच्छे मामलात के साथ ज़िन्दगी

गुज़ारने की इस्लामी शरीअत में बहुत ज़्यादा तरग़ीब (प्रेरणा) दी गयी है। उससे जो तकलीफ़ पहुँचे सब्र करे और अपनी तरफ़ से उसको कोई तकलीफ़ न पहुँचाये, और उसकी मुश्किलों और मुसीबतों में काम आये। जहाँ तक मुमकिन हो उसकी मदद करे, उसके घर के सामने कूड़ा-कचरा न डाले, उसके बच्चों के साथ शफ़क़त का बर्ताव करे। इन बातों का लिखना, बोल देना और सुन लेना तो आसान है लेकिन अमल करने के लिये बड़ी हिम्मत और हौसले की ज़रूरत है। अगर किसी तरह का कोई अच्छा सुलूक न कर सके तो कम-से-कम इतना तो ज़रूर कर ले कि उसको कोई तकलीफ़ न पहुँचाये, और आगे-पीछे उसकी ख़ैरख़्वाही करे। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिब्राईल अलैहिस्सलाम मुझे बराबर पड़ोसी के साथ अच्छा सुलूक करने की वसीयत करते रहे यहाँ तक कि मैंने यह गुमान किया कि वह पड़ोसी को वारिस बनाकर छोड़ेंगे। (बुख़ारी व मुस्लिम)

पड़ोसी को तकलीफ़ पहुँचाना तो क्या उसके साथ इस तरह से ज़िन्दगी गुज़ारे कि उसको किसी किस्म का कोई ख़तरा या खटका इस बात का न हो कि फ़लाँ पड़ोसी से मुझे तकलीफ़ पहुँचेगी।

एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः अल्लाह की क़सम! वह मोमिन नहीं है, अल्लाह की क़सम! वह मोमिन नहीं है, अल्लाह की कसम! वह मोमिन नहीं है। अर्ज़ किया गया या रसूलल्लाह! किसके बारे में इरशाद फ़रमा रहे हैं? फ़रमाया जिसका पड़ोसी उसकी शरारतों से बेख़ौफ़ न हो। (मुस्लिम)

और एक रिवायत में यूँ है कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यूँ फ़रमाया कि वह शख़्स जन्नत में दाख़िल न होगा जिसका पड़ोसी उसकी शरारतों से बेख़ौफ़ न हो। (मुस्लिम)

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि एक शख़्स ने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! मैं अपने बारे में कैसे जानूँ कि मैं अच्छा हूँ या बुरा हूँ? हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब तू अपने पड़ोसियों से सुने कि वे तेरे बारे में यह कह रहे हैं कि तू अच्छे काम करने वाला है तू तो अच्छा है। और जब तू सुने कि वे तेरे बारे में यह कह रहे हैं कि तू बुरे काम करने वाला है, तो तू बुरा है। (इब्ने माजा)

यह इसलिये फ़रमाया कि इनसान के अच्छे-बुरे अख़्लाक़ सबसे ज़्यादा और सबसे पहले पड़ोसियों के सामने आते हैं। और उनकी गवाही इसलिये ज़्यादा मोतबर है कि उनको बार-बार देखने का और तजुर्बा करने का मौका मिलता है।

एक दिन हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने आटा पीसकर छोटी-छोटी रोटियाँ पकाईं, उसके बाद उनकी आँख लग गयी, इसी दौरान में पड़ोसन की बकरी आयी और वे रोटियाँ खा गयी। आँख खुलने पर हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा उसके पीछे दौड़ीं, यह देखकर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि ऐ आयशा! पड़ोसी को उसकी बकरी के बारे में न सताओ। (अल-अदबुल् मुफ़रद)

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि मैंने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से सुना है कि वह शख़्स मोमिन नहीं है जो अपना पेट भर ले और उसका पड़ोसी उसकी बग़ल में भूखा हो। (बैहकी)

एक हदीस में इरशाद है कि क़ियामत के दिन सबसे पहले 'मुद्दई' (दावा करने वाला) और 'मुद्दआ अलैहि' (जिस पर दावा किया जाए) दो पड़ोसी होंगे। (अहमद)

इन सब हदीसों से मालूम हुआ कि पड़ोसी पर किसी तरह से कोई ज़ुल्म व ज़्यादती तो बिल्कुल ही न करे, और जहाँ तक मुमकिन हो उसकी ख़िदमत, दिलदारी और मदद करे। पड़ोसियों को हदिया (कोई चीज़ या नक़द रक़म किसी को तोहफ़े में देना) लेने-देने का बयान ज़कात के बयान में गुज़र चुका है।

जब कोई शख़्स मश्विरा माँगे तो सही मश्विरा दे

हदीसः (178) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिससे मश्विरा माँगा जाये वह अमानतदार होता है। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

तशरीहः इस हदीस में एक अहम बात की नसीहत फ़रमायी और वह यह कि जिससे मश्विरा तलब किया जाये उसकी ज़िम्मेदारी है कि सही मश्विरा दे। जो उसके नज़दीक दुरुस्त हो और जिसमें मश्विरा लेने वाले की ख़ैरख़्वाही मद्देनज़र हो। जिससे मश्विरा तलब किया जाये उसको हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने 'अमानतदार' क़रार दिया। अगर उसने कोई

ऐसा मश्विरा दे दिया जिसमें उसके नज़दीक मश्विरा लेने वाले की बेहतरी न थी तो अपने भाई की ख़ियानत की, जैसा कि हदीस की दूसरी रिवायत में आता है।

लिहाज़ा अगर कोई शख़्स मश्विरा ले तो उसको वह मश्विरा दो जो तुम्हारे नज़दीक उसके हक़ में बेहतर हो, अगरचे उसमें तुम्हारा नुक़सान ही होता हो। जैसे तुम्हारा एक पड़ोसी है जो मकान बेचना चाहता है और तुम्हारे दिल में है कि यह मकान फ़रोख़्त हो तो हम ले लेंगे। लेकिन अगर वह तुम से मश्विरा तलब करे और तुम्हारे नज़दीक उसके हक़ में जायदाद फ़रोख़्त करना ना-पसन्द हो तो उसको यही मश्विरा दो कि फ़रोख़्त न करो।

हंसते चेहरे के साथ मुलाक़ात करना भी नेकी में शामिल है

हदीसः (179) हज़रत अबूज़र रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि हरगिज़ किसी ज़रा-सी भी नेकी को हक़ीर (यानी मामूली और बेहक़ीक़त) न जानो। (जो कुछ मुमकिन हो नेकी करते रहो) अगरचे यही कर सको कि अपने भाई से खिलते हुए चेहरे से मिल लो। (मिश्कात शरीफ़ पेज 167)

तशरीहः इस हदीस में अव्वल तो यह इरशाद फ़रमाया कि किसी भी नेकी को हक़ीर न जानो। नेकी कैसी ही छोटी से छोटी हो, मौक़ा होते हुए हाथ से न जाने दो। क़ियामत के दिन छोटी-सी नेकी भी बहुत बड़ा काम दे जायेगी। एक नेकी से भी नेक आमाल का पलड़ा भारी होकर नजात का ज़रिया हो सकता है। फिर मिसाल के तौर पर एक ऐसी नेकी का ज़िक्र फ़रमाया जिसमें ख़र्च कुछ नहीं होता और सवाब ख़ूब मिल जाता है, और वह यह कि जब किसी मुसलमान से मुलाक़ात करो तो हंसमुख चेहरे से खिलते चेहरे के साथ मिलो, इससे उसका दिल ख़ुश होगा और तुमको ख़ूब सवाब मिल जायेगा। बहुत-से लोगों को मर्द हों या औरत अपनी दीनदारी या मालदारी का घमण्ड होता है। जब कोई सलाम करता है तो सीधे मुँह उसके सलाम का जवाब तक नहीं देते। जब कोई मिलने को आया तो न उससे अच्छी तरह बात की न अच्छे अन्दाज़ से मुलाक़ात की और ऐसे पेश आये कि जैसे उनपर गुस्सा सवार है। मुँह फुलाये हुए हैं और अजीब बेरुख़ी और रूखेपन से पेश आ रहे हैं। यह तरीक़ा ग़ैर-इस्लामी है। अलबत्ता औरतें

ना-मेहरमों से मुलाक़ात न करें और पर्दे के पीछे से ज़रूरत के मुताबिक़ जवाब दे दें। जो औरतें मिलने आयें घर की औरतें उन्हें अदब से बिठायें उनके पास बैठें, अच्छी तरह से बोलें, मुस्कुराकर बात करें और उनकी दिलदारी करें। यह न देखें कि वे हमसे माली और दुनियावी हैसियत से कम हैं, बल्कि उनके मुसलमान होने को देखें, उनके पास बैठने और दिलदारी करने के लिये नफ़िल नमाज़ छोड़नी पड़े तो वह भी छोड़ दें, मगर ग़ीबत और दूसरों की बुराई करने से बचें।

रास्ते से तकलीफ़ देने वाली चीज़ हटा देने का सवाब

हदीसः (180) हज़रत अबू बरज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान फ़रमाया कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से मैंने अर्ज़ कियाः ऐ अल्लाह के नबी! मुझे कोई चीज़ बता दीजिये जिस पर अमल करके मैं नफ़ा हासिल करूँ। आपने फ़रमायाः मुसलमानों के रास्ते से तकलीफ़ देने वाली चीज़ हटा दिया करो। (मिश्कात शरीफ़ पेज 167)

तशरीहः इस हदीस पाक से इस अमल की फ़ज़ीलत और अहमियत मालूम हुई कि रास्तों में जो कोई तकलीफ़ देने वाली चीज़ पड़ी मिल जाये जिससे पाँव फिसल जाये, ठोकर लगने, रास्ता तंग हो जाने का, या काँटा वग़ैरह चुभ जाने का अन्देशा हो, उस चीज़ को हटा दिया जाये। दूसरी रिवायतों में भी इसकी फ़ज़ीलत बयान हुई है।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक शख़्स का ज़िक्र फ़रमाया कि उसका एक दरख़्त की टहनी पर गुज़र हुआ जो रास्ते में पड़ी थी, यह देखकर उसने कहा कि मैं इसको मुसलमान के रास्ते से ज़रूर हटा दूँगा। (चुनाँचे उसको हटा दिया) लिहाज़ा वह जन्नत में दाख़िल कर दिया गया। (मिश्कात)

एक और हदीस में है कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मैंने एक शख़्स को इसके सबब से जन्नत में मज़े से करवटें लेते हुए देखा कि उसने रास्ते से एक दरख़्त काट दिया था जो राहगीरों को तकलीफ़ देता था। (मिश्कात)

हज़रत अबूज़र रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि मुसलमान के सामने तुम्हारा

मुस्कुराना सदक़ा है, और भलाई का हुक्म करना सदक़ा है, और बुराई से रोकना सदक़ा है, और राह भटके हुए को राह दिखाना सदक़ा है, और कमज़ोर बीनाई वाले (यानी जिसकी आँख की रोशनी कम हो) की मदद करना सदक़ा है, और रास्ते से पत्थर काँटा हड्डी दूर करना सदक़ा है, और अपने डोल से भाई के डोल में पानी डाल देना सदक़ा है। (तिर्मिज़ी)

हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि हर इनसान 360 जोड़ों पर पैदा किया गया है (यानी हर इनसान के जिस्म में 360 जोड़ हैं जिनके ज़रिये उठता-बैठता है और हाथ-पाँव मोड़ता है, और चीज़ें पकड़ता है। और इन चीज़ों के शुक्रिये में रोज़ाना सदक़ा करना वाजिब है)। सो जिसने अल्लाहु अकबर कहा और अल्हम्दु लिल्लाह कहा और ला इला-ह इल्लल्लाहु कहा और सुब्हानल्लाह कहा और अस्तग़फ़िरुल्लाह कहा और लोगों के रास्ते से पत्थर काँटा या हड्डी हटा दी या भलाई का हुक्म दिया या बुराई से रोक दिया और (यह सब मिलकर या इनमें से एक ही अमल) तीन सौ साठ (360) के अदद (संख्या) के बराबर हो गया तो वह उस दिन इस हाल में चलता-फिरता होगा कि उसने अपनी जान को दोज़ख़ से बचा लिया होगा। (मुस्लिम)

जब रास्ते से तकलीफ़ देने वाली चीज़ को हटा देने का यह अज्र व सवाब है तो इसके विपरीत रास्ते में तकलीफ़ देने वाली चीज़ डालने का क्या वबाल होगा? इस पर ग़ौर करना चाहिये। बहुत-से लोग अपना तो घर साफ़ कर लेते हैं लेकिन घर का कूड़ा-करकट कचरा-गन्दगी सड़े हुए फल और बदबूदार सालन वग़ैरह रास्ते में फैंक देते हैं जिससे आने-जाने वालों को सख़्त तकलीफ़ होती है। ऐसा भी होता है कि राह चलते हुए केले ख़रीदे और छीलकर खाना शुरू कर दिया, या बच्चों को दे दिया और छिलका सड़क के किनारे वहीं फैंक दिया। सबको मालूम है कि रास्ते में केले का छिलका फैंकना बहुत ख़तरनाक होता है। कभी-कभी उस पर पैर पड़कर फिसल जाता है तो अच्छी-ख़ासी तकलीफ़ पहुँच जाती है। रास्ते में तकलीफ़ देने वाली चीज़ हरगिज़ न डालें और ऐसी कोई चीज़ रास्ते में पड़ी मिले जिससे तकलीफ़ पहुँच सकती हो तो उसे हटाकर सवाब कमायें।

दूसरे का ऐब छुपाने और राज़ दबाने का सवाब

हदीसः (181) हज़रत उक़्बा बिन आमिर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिसने किसी की कोई ऐब की बात देखी फिर उसको छुपा लिया (तो सवाब के एतिबार से) वह शख़्स ऐसा है जैसे किसी ज़िन्दा दफ़्न की हुई लड़की को ज़िन्दा कर दिया। (मिश्कात शरीफ़ पेज 424)

तशरीहः इस हदीस मुबारक में ऐब छुपाने का सवाब बताया है। इस्लाम से पहले यानी जाहिलीयत के ज़माने में अरब के लोग इस बात को बहुत नागवार समझते थे कि उनके घर में लड़की पैदा हो जाये। अगर लड़की पैदा होने की ख़बर मिलती थी तो शर्म के मारे छुपे-छुपे फिरते थे। और बहुत-से ज़ालिम ऐसे थे कि लड़की पैदा हो जाती तो उसको ज़िन्दा दफ़न कर देते थे, जो गढ़े के अन्दर मिट्टी में दबकर मर जाती थी, इसी को क़ुरआन मजीद में फ़रमायाः

तर्जुमाः और जब ज़िन्दा दफ़न की हुई लड़की के बारे में सवाल किया जायेगा कि किस गुनाह के सबब क़त्ल की गई। (सूरः तक्वीर आयत 8,9)

इस बात को समझने के बाद यह समझो कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ऐब छुपाने का सवाब बताते हुए इरशाद फ़रमाया कि जिसने किसी की कोई ऐब की बात देखी फिर उसको छुपाया और किसी पर ज़ाहिर न किया तो उसको इतना बड़ा सवाब मिलेगा जैसे उसने उस लड़की को ज़िन्दा कर दिया जो क़ब्र में ज़िन्दा दफ़न कर दी गयी थी। इस सवाब को इस अन्दाज़ में बताने में एक गहरी और बारीक हिक्मत की तरफ़ इशारा है, और वह यह कि जब किसी शख़्स का कोई ऐब ज़ाहिर हो जाता है तो वह अपनी उस रुस्वाई के मुक़ाबले में मर जाना बेहतर समझता है। पस जिस शख़्स ने उसके ऐब की पर्दा-पोशी की गोया कि उसको ज़िन्दा कर दिया। रुस्वाई से बचाना उसे दोबारा ज़िन्दगी देने जैसा क़रार दिया गया।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मुसलामन मुसलमान का भाई है, न उसपर ज़ुल्म करे न उसको (मुसीबत के वक़्त) बे-सहारा और बे-मददगार छोड़ दे। और जो शख़्स अपने भाई की हाजत में लगा रहता है

अल्लाह तआला उसकी हाजत को पूरा फ़रमायेंगे। और जिसने किसी मुसलमान की बेचैनी दूर कर दी अल्लाह तआला कियामत के दिन की परेशानियों में से उसकी एक परेशानी दूर फ़रमायेंगे। और जिसने किसी मुसलमान की पर्दा-पोशी की (यानी उसका कोई ऐब छुपाया) कियामत के दिन अल्लाह तआला उसकी पर्दा-पोशी फ़रमायेंगे। (बुख़ारी व मुस्लिम)

बहुत-से लोगों को यह मर्ज़ होता है कि दूसरों के ऐबों के पीछे पड़े रहते हैं। फिर जब किसी का कोई ऐब मालूम हो जाता है तो उसको उछालते हैं और रुस्वा करने को बड़ा कमाल समझते हैं। यह सख़्त गुनाह की बात है और इसका बहुत बड़ा वबाल है।

एक हदीस में इरशाद है कि जो शख़्स मुसलमान भाई के ऐब के पीछे पड़े अल्लाह उसके ऐब के पीछे पड़ेगा, और अल्लाह जिसके ऐब के पीछे पड़े उसको रुस्वा कर देगा अगरचे वह अपने घर में ऐब का काम न करे।

(मिश्कात)

आपस में सुलह करा देने का सवाब

हदीसः (182) हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अन्हु बयान फ़रमाते हैं कि एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः क्या मैं तुमको वह चीज़ न बता दूँ जो (नफ़्ली) रोज़ों, सदके और नमाज़ के दर्जे से अफ़ज़ल है। हमने अर्ज़ किया ज़रूर इरशाद फ़रमायें। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि यह चीज़ आपस में बिगाड़ की इस्लाह (यानी सुधार और सुलह-सफ़ाई) कर देना है। और आपस का बिगाड़ मूँड देने वाली चीज़ है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 428)

तशरीहः एक साथ रहने वालों में कभी-कभी रन्जिश हो जाती है, और उस रन्जिश को जल्दी ही दूर न किया जाये तो बढ़ते-बढ़ते बहुत दूर तक पहुँच जाती है। कीना और बुग़्ज़ दिलों में जगह पकड़ लेता है। और दो आदमियों की रन्जिश कभी-कभी पूरे ख़ानदानों को लपेट लेती है। इसलिये जल्द से जल्द सुलह की तरफ़ मुतवज्जह होना लाज़िम है। सबसे ज़्यादा अच्छी और सीधी बात तो यह है कि हर आदमी एक-दूसरे से जाकर ख़ुद मिल ले और सलाम करे, इसमें पहल करने वाले का दर्जा बहुत ज़्यादा है।

ऊपर की हदीस में आपस के बिगाड़ को दूर करने और बुग़्ज़ व कीने

व रन्जिश वाले आदमियों के दरमियान सुलह कराने की फ़ज़ीलत बताई। और फ़ज़ीलत भी मामूली नहीं! सुलह करा देने की इतनी बड़ी फ़ज़ीलत बताई कि इस अ़मल का दर्जा (नफ़्ली) रोज़ा, सदक़ा और नमाज़ से भी बढ़कर है। जहाँ तक मुमकिन हो जल्द से जल्द रूठे हुए आदमियों में सुलह करा देना चाहिये, क्योंकि आपस का बिगाड़ बहुत ही बुरी ख़सलत है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसको मूँडने वाली चीज़ बताया है।

दूसरी हदीस में है कि बुग़्ज़ मूँडने वाली ख़सलत है, मैं यह नहीं कहता कि वह बालों को मूँड देती है बल्कि वह दीन को मूँड देती है। (मिश्कात)

आपस में सुलह करा देना इतनी अहम चीज़ है कि इसके लिये पाक शरीअ़त ने झूठ जैसी चीज़ का जुर्म करने को भी गवारा फ़रमाया है। हज़रत उम्मे कुलसूम रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने फ़रमाया कि मैंने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सुना है कि वह झूठा नहीं है जो लोगों के दरमियान (झूठ बोलकर) सुलह कराता है, और अच्छी बात को कहता है, और अच्छी बात को (किसी फ़रीक़ की तरफ़) पहुँचाता है। (बुख़ारी व मुस्लिम)

जैसे राशिदा और आ़बिदा मौहल्ले की दो औ़रतें हैं। उन दोनों में लड़ाई हो गयी तो उन दोनों में सुलह कराने के लिये कोई औ़रत दूसरी को अच्छी बात पहुँचा देती है। जैसे आ़बिदा से कहा कि राशिदा को तो लड़ाई की वजह से बहुत रंज है। वह अफ़सोस कर रही थी कि ज़रा-सी बात पर शैतान बीच में कूद पड़ा और हम दोनों में लड़ाई हो गयी। फिर राशिदा से जाकर इसी तरह की बातें कीं कि आ़बिदा तुम्हारी तारीफ़ कर रही थी। वह कह रही थी कि राशिदा मेरी पुरानी सहेली है, कभी उससे रन्जिश नहीं हुई, उसमें बड़ी ख़ूबियाँ हैं। दोनों के दिल मिलाने के लिये तीसरी औ़रत ने ये बातें झूठ पहुँचा दीं, हालाँकि राशिदा और आ़बिदा ने ऐसी बातें बिल्कुल नहीं कही थीं। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः यह झूठ झूठ में शुमार नहीं, और ऐसा करने में गुनाह नहीं होता। इससे आपस में सुलह करा देने की भी बहुत बड़ी फ़ज़ीलत और ज़रूरत मालूम हुई। अल्लाह तआ़ला मुसलमानों को ख़ैर की तौफ़ीक़ दे।

मुसलमान की बीमार-पुरसी की फ़ज़ीलत

हदीसः (183) हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे

अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः जो शख़्स वुज़ू करे और अच्छी तरह वुज़ू करे और सवाब समझकर मुसलमान भाई की इयादत करे (यानी उसकी बीमारी का हाल मालूम करे) तो जहन्नम से इतनी दूर कर दिया जायेगा जितनी दूर कोई साठ साल चलकर पहुँचे। (अबू दाऊद)

तशरीहः हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु रिवायत फ़रमाते हैं कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः जो शख़्स किसी बीमार की इयादत करता (बीमारी का हाल पूछता) है तो आसमान से एक आवाज़ देने वाला आवाज़ देता है कि तू ख़ुश रह, और तेरा यह चलना बरकत वाला हो, और तूने जन्नत में घर बना लिया। (इब्ने माजा)

एक और हदीस में है कि जो मुसलमान किसी मुसलमान की सुबह को मिज़ाज-पुरसी करे तो तमाम दिन सत्तर हज़ार (70,000) फ़रिश्ते उसपर रहमत भेजते रहते हैं। और अगर शाम को मुसलमान की मिज़ाज-पुरसी करे तो सुबह होने तक सत्तर हज़ार (70,000) फ़रिश्ते उसपर रहमत भेजते रहते हैं, और उसके लिये (इस अमल की वजह से) जन्नत में एक बाग़ होगा।

(तिर्मिज़ी, अबू दाऊद)

बीमार की मिज़ाज-पुरसी को इयादत कहते हैं। ऊपर की हदीसों में इसी का सवाब बताया है।

हज़रत अबू सईद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि जब तुम किसी मरीज़ के पास जाओ तो उसकी ज़िन्दगी बाक़ी रहने के बारे में उम्मीद दिलाओ। (यानी उससे ऐसी बातें करो जिससे उसको अच्छा हो जाने की उम्मीद बंधे और वह यह समझे की मैं अच्छा होकर अभी और ज़िन्दा रहूँगा। उसके सामने ना-उम्मीदी की बातें न करो) क्योंकि यह चीज़ (अल्लाह की तक़दीर में से) किसी को हटा तो नहीं सकती अलबत्ता इससे मरीज़ का दिल ख़ुश हो जायेगा। (तिर्मिज़ी, इब्ने माजा)

फ़ायदाः जब किसी मुसलमान की इयादत करो तो उसको तसल्ली देते हुए यूँ कहो किः

"कुछ डर नहीं, यह बिमारी गुनाहों से पाक करने वाली है, अगर अल्लाह ने चाहा"

और मरीज़ से अपने लिये दुआ की दरख़्वास्त करो, क्योंकि उसकी दुआ फ़रिश्तों की दुआ की तरह से है। (इब्ने माजा) और उसके पास ज़्यादा न

बैठो न शोर करो। (मिश्कात शरीफ़)

सिफ़ारिश करके सवाब हासिल करो

हदीसः (184) हज़रत अबू मूसा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास कोई साईल (माँगने वाला) ज़रूरतमन्द आता था तो आप इरशाद फ़रमाते थे कि तुम सिफ़ारिश करो, इस पर तुमको सवाब दे दिया जायेगा, और अल्लाह अपने रसूल की ज़बानी जो चाहे फ़ैसला फ़रमायेगा। (मिश्कात शरीफ़ पेज 422)

तशरीहः इस हदीस में फ़रमाया कि किसी काम के लिये सिफ़ारिश कर देने पर भी सवाब मिलता है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम बहुत बड़े सख़ी (दानवीर) थे। ज़रूरतमन्दों की ज़रूरतों का आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को ख़ुद ख़्याल रहता था। जब कोई साईल हाज़िर होता तो आप ज़रूर ही इनायत फ़रमा देते, किसी की सिफ़ारिश की ज़रूरत न थी, इसके बावजूद आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तुम लोग सिफ़ारिश करके सवाब ले लिया करो, होगा वही जो अल्लाह चाहेगा, उसकी तक़दीर में होगा तो उसको कुछ मिल जायेगा, मैं दे दूँगा या किसी दूसरे से कुछ दिला दूँगा, मौक़ा न होगा तो न मिलेगा, सिफ़ारिश कर देना तुम्हारा काम है, किसी का काम होने या न होने के तुम ज़िम्मेदार नहीं।

जब किसी को ज़रूरतमन्द देखो तो उसकी ज़रूरत पूरी करो। अगर तुम से पूरी नहीं हो सकती तो किसी दूसरे से सिफ़ारिश कर दो ताकि वहाँ उसकी ज़रूरत पूरी हो जाये। सिफ़ारिश कर देना भी बड़ी ख़ैर की बात है और सवाब का काम है, अलबत्ता गुनाह के कामों में किसी की मदद न करो, क्योंकि वह गुनाह है।

नर्मी इख़्तियार करने पर अल्लाह तआ़ला का इनाम

हदीसः (185) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि बेशक अल्लाह तआ़ला मेहरबान है और मेहरबानी को पसन्द फ़रमाता है। और वह मेहरबानी पर वह (नेमतें) अता फ़रमाता है जो सख़्ती पर और उसके अलावा किसी चीज़ पर अता नहीं फ़रमाता। (मिश्कात शरीफ़ पेज 431)

हदीसः (186) हज़रत जरीर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे

अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः जो शख़्स नर्मी से मेहरूम कर दिया गया वह भलाई से मेहरूम कर दिया जाता है।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 431)

तशरीहः एक हदीस में है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिस शख़्स को नर्मी से हिस्सा दे दिया गया उसे दुनिया व आख़िरत की भलाई का हिस्सा मिल गया, और जो शख़्स नर्मी के हिस्से से मेहरूम कर दिया गया वह दुनिया और आख़िरत की भलाई के हिस्से से मेहरूम कर दिया गया। (मिश्कात)

इन रिवायतों से नर्मी की ख़ूबी का पता चला और मालूम हुआ कि जिसके मिज़ाज में नर्मी हो उसे बहुत बड़ी नेमत और दौलत मिल गयी। दर हक़ीक़त अच्छे अख़्लाक़ में नर्मी को बहुत बड़ा दख़ल है, और सच फ़रमाया हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि जो शख़्स नर्मी से मेहरूम है वह दुनिया और आख़िरत की भलाई से मेहरूम है। अल्लाह के जो बन्दे नर्म-मिज़ाज होते हैं उन्हीं से फ़ैज़ पहुँचता है, और अल्लाह की मख़्लूक़ उन्हीं के पास आती है, उनके अन्दर जो ख़ूबियाँ और गुण होते हैं उनसे फ़ायदा उठाती है, और उनके अच्छे अख़्लाक़ से सैराब होती है। सख़्त-मिज़ाज और जो ज़बान का कड़वा आदमी हो उसके पास कौन फटकेगा और कौन आयेगा? हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम बड़े नर्म-मिज़ाज और बड़े नर्म-दिल और नर्मी से बात करने वाले और बुर्दबार थे। क़ुरआन मजीद में आपको ख़िताब करके फ़रमायाः

तर्जुमाः सो कुछ अल्लाह ही की रहमत है कि आप (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) उनको नर्म-दिल मिल गये, और अगर आप सख़्त-मिज़ाज और सख़्त-दिल होते तो ये लोग आपके पास से तितर-बितर हो जाते। सो आप उनको माफ़ फ़रमा दीजिये और उनके लिये इस्तिग़फ़ार कीजिये, और उनसे कामों में मश्विरा लीजिये। फिर जब आप राय पुख़्ता कर लें तो अल्लाह पर भरोसा कीजिये, बेशक अल्लाह तवक्कुल (अल्लाह पर भरोसा) करने वालों से मुहब्बत फ़रमाते हैं। (सूरः आलि इमरान आयत 159)

इस आयत से मालूम हुआ की नर्म-मिज़ाजी और नर्म-दिली मुहब्बत और उलफ़त लाने वाली है। और सख़्त-मिज़ाजी अख्खड़-पना अपने ताल्लुक़ वालों को भी दूर करने वाला होता है। मोमिन को नर्म-मिज़ाज और रहम-दिल होना

चाहिये। फ़रमाया हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि मोमिन उलफ़त (मुहब्बत और लगाव) वाला होता है, और उसमें कोई ख़ैर नहीं जो उलफ़त नहीं रखता और जिससे उलफ़त नहीं रखी जाती। (मिश्कात)

यह हालात और आम वक़्तों के एतिबार से फ़रमाया है, कभी-कभार कहीं सख़्ती की भी ज़रूरत पड़ जाती है। अगर मौके के मुताबिक़ उसको इख़्तियार किया जाये तो उसमें भी उसकी ख़ैर होती है। अपने बच्चों और शागिर्दों को तंबीह करने के लिये सख़्ती की ज़रूरत होती है, मगर आम हालात में नर्मी ही मुनासिब होती है। हर वक़्त सख़्ती करने से औलाद और शागिर्द और मातहत सब ढीट और बाग़ी हो जाते हैं।

गुस्से से परहेज़ करने की ताकीद

हदीसः (187) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से एक शख़्स ने दरख़्वास्त की कि मुझे वसीयत फ़रमाइये। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया "गुस्सा न किया कर" उसने फिर यही अ़र्ज़ किया कि मुझे कुछ वसीयत फ़रमाइये। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फिर वही जवाब दिया। उसने फिर वही अ़र्ज़ किया, आपने फिर वही जवाब दिया (ग़रज़ यह कि) उस शख़्स ने कई बार वही सवाल किया और नबी करीम सल्ल० हर बार वही जवाब इनायत फ़रमाते रहे कि गुस्सा न किया कर। (मिश्कात शरीफ़ पेज 423)

तशरीहः कुछ रिवायतों में यूँ है कि एक शख़्स रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और उसने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! मुझे कुछ बता दीजिये जिस पर अ़मल करूँ मगर ज़्यादा न हो, शायद मैं उसे गिरह बाँध लूँ। रसूले अकरम ने उसके जवाब में फ़रमायाः गुस्सा न किया करो। उसने फिर वही बात की, आपने फिर वही जवाब दिया। ग़रज़ यह कि चन्द बार इसी तरह सवाल व जवाब हुआ।

दूसरी रिवायत में है कि सवाल करने वाले ने यूँ कहा था या रसूलल्लाह! मुझे एक ऐसा अ़मल बता दीजिये जिसके ज़रिये जन्नत में दाख़िल हो जाऊँ, लेकिन ज़्यादा न बताइये। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि गुस्सा न किया करो।

इन हदीसों से मालूम हुआ कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम

ने साईल (पूछने वाले) को ऐसी चीज़ बताई थी जिससे अमल करने पर बहुत-सी बुराइयों से बचा जा सकता है, और बहुत-सी भलाइयों का ज़रिया बन सकता है।

गुस्से का इलाज

हदीसों में गुस्से के कई इलाज भी आये हैं, जिनमें से एक यह है कि गुस्सा आये तो 'अऊज़ु बिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम' कहे। दूसरा इलाज यह है कि ज़बान बन्द कर ले और बिल्कुल गूँगा हो जाये। तीसरा यह कि ज़मीन से चिपक जाये।

एक रिवायत में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि बेशक गुस्सा शैतान की तरफ़ से है, और इसमें भी शक नहीं कि शैतान आग से पैदा किया गया है, और आग को पानी ही बुझाता है। लिहाज़ा जब तुम में से किसी को गुस्सा आ जाये तो वुज़ू कर ले। (मिश्कात)

हज़रत अबूज़र रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब तुम में से किसी को गुस्सा आये और वह उस वक़्त खड़ा हो तो चाहिये कि बैठ जाये, अगर बैठने से गुस्सा चला जाये तो ख़ैर वरना लेट जाये। (मिश्कात)

मिश्कात शरीफ़ में बैहक़ी से एक रिवायत नक़ल की है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि बेशक गुस्सा ईमान को इस तरह बिगाड़ देता है जैसे ऐलवा शहद को बिगाड़ देता है। तिब्बी तौर पर इनसान में गुस्सा रखा गया है, और गुस्से का रोकना अगरचे मुशकिल है लेकिन इनसान इस पर क़ाबू पा सकता है। एक हदीस में यह है कि वह ताक़तवर और पेहलवान नहीं है जो अपने सामने वाले (पेहलवान) को पछाड़ दे। ताक़तवर (और पेहलवान) वह है जो गुस्से के वक़्त अपने को क़ाबू में रखे।

(बुख़ारी व मुस्लिम)

गुस्सा पीने की फ़ज़ीलत

बैहक़ी (हदीस की एक किताब) की एक रिवायत में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स अपने गुस्से को रोक लेता है ख़ुदा तआ़ला क़ियामत के दिन उससे अपने अ़ज़ाब को रोक लेगा। और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु रिवायत फ़रमाते हैं कि

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः अल्लाह की रिज़ा के लिये गुस्से का घूँट पी जाने से बढ़कर अल्लाह तआला के नज़दीक किसी घूँट का पीना अफ़ज़ल नहीं है। (मिश्कात)

तकब्बुर किसे कहते हैं, और इसका अज़ाब और वबाल क्या है?

हदीसः (188) हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि वह शख़्स जन्नत में दाख़िल न होगा जिसके दिल में एक ज़र्रा बराबर भी तकब्बुर हो। यह सुनकर एक शख़्स ने अर्ज़ किया कि कोई शख़्स यह पसन्द करता है कि उसका कपड़ा अच्छा हो और उसका जूता अच्छा हो, (तो क्या यह तकब्बुर है?) हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जवाब में फ़रमाया कि बेशक अल्लाह तआला 'जमील' (यानी हसीन व ख़ूबसूरत और तमाम ख़ूबियों का मालिक) है, जमाल को पसन्द फ़रमाता है। (अच्छा कपड़ा और अच्छा जूता पहनना तकब्बुर नहीं है, बल्कि) तकब्बुर यह है कि हक़ को ठुकराये और लोगों को हक़ीर समझे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 433)

तशरीहः इनसान के अन्दर जहाँ बहुत-सी ख़ूबियाँ हैं वहाँ बहुत-सी बुराइयाँ और ख़राबियाँ भी हैं। उनमें से एक बहुत बड़ी ख़राबी तकब्बुर भी है। हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तकब्बुर का मतलब बताते हुए इरशाद फ़रमाया कि हक़ को क़बूल न करना, लोगों को हक़ीर (ज़लील और कम-दर्जा) जानना तकब्बुर है। अगर कोई अच्छा जूता या अच्छा कपड़ा पहन ले और दूसरे आदमी को हक़ीर न जाने और हक़ बात क़बूल करने से गुरेज़ न करे तो यह तकब्बुर नहीं है। लेकिन अगर कोई शख़्स अच्छा कपड़ा और अच्छा जूता पहनकर अपने को बड़ा समझने लगे और दूसरे को हक़ीर जानने लगे, और जब कोई हक़ बात उससे कही जाये तो उसको क़बूल करने को अपनी बे-इज़्ज़ती और तौहीन समझे तो यह तकब्बुर है।

बहुत-से लोग ग़रीब होते हैं, उनके पास अच्छा कपड़ा तो क्या ज़रूरत की मात्रा में मामूली कपड़ा भी नहीं होता, लेकिन फिर भी हक़ को क़बूल नहीं करते और लोगों को ख़्वाह-मख़्वाह हक़ीर जानते हैं, यह भी तकब्बुर है।

किसी में इल्म की वजह से और किसी में माल की वजह से और किसी में ओहदे और रुतबे और पद की वजह से तकब्बुर होता है। और बाज़ लोगों

के पास कुछ भी नहीं होता, जाहिल भी होते हैं और फ़कीर भी, फिर भी अपने आपे में नहीं समाते। ये लोग ख़्वाह-मख़्वाह दूसरों को हक़ीर जानते हैं, और हक़ बात को ठुकराते हैं, और इस बारे में माल व पद और रुतबे वालों से भी आगे-आगे होते हैं। तकब्बुर यूँ ही बदतरीन चीज़ है, फिर जब तकब्बुर का कोई सबब भी मौजूद न हो, न माल हो, न इल्म हो, तो उसकी बुराई और ज़्यादा हो जाती है।

बन्दा बन्दा है, उसे बड़ा बनने का क्या हक़ है? उसको तो हर वक़्त अपनी बन्दगी पर नज़र रखनी चाहिये। अल्लाह ने जो कोई नेमत अ़ता फ़रमायी है (इल्म हो या माल हो या ओ़हदा हो या रुतबा हो) उसका शुक्रिया अदा करना चाहिये। और यह समझे कि मैं इस काबिल नहीं था अल्लाह तआ़ला का फ़ज़्ल व इनाम है कि उसने मुझे यह नेमत अ़ता फ़रमायी है। अल्लाह की बड़ाई और किबरियाई पर और अपनी बेबसी और कमज़ोरी व आ़जिज़ी पर जिस क़द्र नज़र होगी उसी क़द्र तकब्बुर से नफ़रत होगी, और दिल में तवाज़ो बैठती चली जायेगी। जिसमें पाख़ाना भरा हुआ हो और जिसको मौत आनी हो, और जिसका बदन क़ब्र के कीड़े खाने वाले हों उसको तकब्बुर कहाँ सजता है। क़ुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमाः और अपने गाल मत फुला लोगों की तरफ़, और मत चल ज़मीन पर इतराता हुआ, बेशक अल्लाह को नहीं भाता कोई इतराने वाला, बड़ाई मारने वाला। (सूरः लुक़मान आयत 18)

और इरशाद फ़रमायाः

إِنَّهُ لَا يُحِبُّ الْمُسْتَكْبِرِيْنَ

तर्जुमाः बेशक वह नहीं पसन्द करता तकब्बुर करने वालों को।

गुरूर व शेख़ी व ख़ुद-पसन्दी ये सब तकब्बुर की शाख़ें हैं। जिन लोगों में तकब्बुर होता है बस वे अपने ही ख़्याल में बड़े होते हैं और लोगों के दिलों में उनकी ज़रा भी इज़्ज़त नहीं होती। और जो लोग आ़जिज़ी व इन्किसारी इख़्तियार करते हैं यानी लोगों से ऐसा मामला रखते हैं कि अपनी बड़ाई का ज़रा भी ख़्याल नहीं होता, वे लोगों के नज़दीक महबूब और प्यारे होते हैं।

हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने एक बार मिम्बर पर इरशाद फ़रमाया

कि ऐ लोगो! तवाज़ो इख़्तियार करो, क्योंकि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सुना है कि जो शख़्स अल्लाह के लिये तवाज़ो इख़्तियार करे अल्लाह उसको बुलन्द फ़रमा देगा। जिसका नतीजा यह होगा कि वह अपने नफ़्स में छोटा होगा और लोगों की आँखों में बड़ा होगा। और जो शख़्स तकब्बुर इख़्तियार करेगा अल्लाह उसको गिरा देगा, जिसका नतीजा यह होगा कि वह लोगों की आँखों में छोटा होगा और अपने नफ़्स में बड़ा होगा। (लोगों के नज़दीक उसकी ज़िल्लत का यह आ़लम होगा कि) वह उसको कुत्ते और सुअर से ज़्यादा ज़लील जानेंगे। (मिश्कात शरीफ़)

एक हदीस में इरशाद है कि तकब्बुर करने वाले लोगों का कियामत के दिन इस तरह हश्र होगा (यानी उनको इस तरह उठाया जाएगा) कि वे इनसानी शक्लों में चींटियों के बराबर छोटे-छोटे जिस्मों में होंगे। उनपर हर तरफ़ से ज़िल्लत छाई हुई होगी। वे जहन्नम के जेलख़ाने की तरफ़ हंकाकर लेजाए जायेंगे। उन लोगों पर आगों को जलाने वाली आग चढ़ी होगी, उन लोगों को दोज़ख़ियों के जिस्मों का निचोड़ (पीप वग़ैरह) पिलाया जायेगा जिसको "तीनतुल् ख़बाल" कहते हैं। (तिर्मिज़ी)

लोगों को हक़ीर (ज़लील और कम-दर्जा) समझने वाले घमण्डी तो बहुत हैं, लेकिन जो लोग हक़ को ठुकराते हैं उनकी भी कमी नहीं है। बाज़ मर्तबा किसी बे-नमाज़ी से कहा जाता है कि नमाज़ पढ़ो तो कहता है कि कौन उठक-बैठक करे, और तुम जन्नत में चले जाना और हम दोज़ख़ में चले जायेंगे। और जब कभी किसी बे-रोज़ेदार से कहा जाता है कि रोज़ा रखो तो जवाब देता है कि रोज़ा वह रखे जिसके घर में अनाज न हो, और जब कहा जाता है कि शादी-विवाह में सुन्नत तरीक़ा इख़्तियार करो तो कहते हैं कि हम ग़रीब थोड़ा ही हैं जो सुन्नत पर चलें। ये सब बातें हक़ को ठुकराने की हैं और कुफ़्रिया बातें हैं, इनसे ईमान जाता रहता है। बहनो! तुम तवाज़ो इख़्तियार करो और तकब्बुर से बचो, अपने बच्चों को भी इसी राह पर डालो, किसी को हक़ीर न जानो, और दीन की हर बात सच्चे दिल से कबूल करो। हक़ को ठुकराकर अपनी दुनिया व आख़िरत ख़राब न करो।

तवाज़ो का हुक्म और एक-दूसरे के मुक़ाबले में फ़ख़्र करने की मनाही

हदीसः (189) हज़रत अयाज़ बिन हिमार रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने मेरी तरफ़ 'वह्य' (अपना पैग़ाम) भेजी है कि तुम लोग तवाज़ो इख़्तियार करो यहाँ तक कि कोई शख़्स किसी के मुक़ाबले में फ़ख़्र न करे, और कोई शख़्स किसी पर ज़्यादती न करे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 417)

तशरीहः इस हदीस पाक में इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने तवाज़ो इख़्तियार करने का हुक्म फ़रमाया है। गुरूर, शैख़ी, फ़ख़्र, घमण्ड, तकब्बुर सबको एक तरफ़ डालो और तवाज़ो इख़्तियार करो। कोई शख़्स किसी के मुक़ाबले में फ़ख़्र (गर्व) न करे और कोई किसी पर ज़्यादती न करे। ओहदा व रुतबा और पद और माल व जायदाद और हुकूमत पर फ़ख़्र (घमण्ड) करना, और दूसरे को हक़ीर जानना गुनाह है। और माल व दौलत के अलावा अपने नसब (ख़ानदान और नस्ल) पर फ़ख़्र करना और दूसरे को हक़ीर जानना भी सख़्त मना है। नसबी (ख़ानदानी) शराफ़त अल्लाह की एक नेमत है, लेकिन दूसरों का अपमान करने की इजाज़त नहीं है, आख़िरत में परहेज़गारी और नेक आमाल पर फ़ैसला होगा। जिसके अमल में कमी हो उसका नसब (ख़ानदानी बरतरी) उसे आगे नहीं बढ़ायेगा। जैसा कि हदीस शरीफ़ में इसे साफ़ तौर पर बयान किया गया है।

नसब पर फ़ख़्र करने की निन्दा

अकसर देखा जाता है कि जो लोग किसी सहाबी या कसी बुज़ुर्ग की नस्ल से होते हैं, अपने नाम के साथ नसबी निस्बत का कलिमा ज़रूर लगाते हैं- सिद्दीक़ी, फ़ारूक़ी, उस्मानी, हसनी, हुसैनी, अय्यूबी, नौमानी, फ़रीदी और इसी तरह की बहुत-सी निस्बतें हैं जो नामों और दस्तख़तों के साथ सामने आती रहती हैं। इनके लिखने और लिखाने वालों में बहुत कम ऐसे हैं जिनका मक़सद हक़ीक़त का इज़हार या कोई सही नीयत हो, वरना ज़्यादातर ऐसे लोग हैं जो अमल के एतिबार से बहुत ही गिरे हुए हैं और दीन के ज़रूरी अक़ाइद व अरकान से भी ग़ाफ़िल बल्कि नावाक़िफ़ होते हैं। जिन हज़रात की तरफ़ निस्बतें करते हैं अगर ज़रा-सी देर के लिये वे हज़रात इस जहान में तशरीफ़

ले आयें तो अपनी तरफ़ निस्बत करने वालों का बुरा हाल देखकर (जो नमाज़ ग़ारत करने, रोज़ा खाने, रिश्वत लेने, सिनेमा देखने, ज़कात रोकने और इसी तरह के बुरे आमाल और ऐबों और परिणामों की शक्ल में ज़ाहिर होता रहता है) इनकी सूरत देखना भी गवारा न करें और दूर ही से दूर-दूर फट-फट करें। जो शैख़ज़ादों और सैयदों के ख़ानदान इस दुनिया में आबाद हैं, और जो बड़े-बड़े बुज़ुर्गों और आलिमों के नसब से सिलसिला जोड़ने वाले घराने इस दुनिया में बसते हैं। नसब पर गुरूर की वजह से दूसरे ख़ानदानों के अफ़राद को बहुत ही हक़ीर (कम दर्जे का और ज़लील) जानते हैं। और उनकी ज़िन्दगी का जायज़ा लो तो जो ख़राबियाँ और गुनाह दूसरों में हैं वही इन शरीफ़ बनने वालों में नज़र आते हैं। ग़रीब अपनी गुरबत के हिसाब से और अमीर अपनी दौलत और अमीरी के हिसाब से नाफ़रमानियों और गुनाहों में मुलव्वस (लिप्त) हैं। दीनी तालीम हासिल करने और क़ुरआन व हदीस से मुहब्बत करने में भी उन्हीं का हिस्सा ज़्यादा है जो नसब के एतिबार से कम समझे जाते हैं। शरीफ़ ख़ानदान वाले बस नसब पर इतरा लेते हैं, मगर मुहब्बत लंदन और अमेरिका से रखते हैं। कालिजों और यूनिवर्सिटियों को आबाद रखने में सबसे आगे हैं। दीनी मदरसे अकसर ग़ैर-मशहूर ख़ानदानों के अफ़राद से या उन घरानों की औलाद से आबाद रहते हैं जो नसब के एतिबार से कम समझे जाते हैं।

नसब पर फ़ख़्र करने वाले आख़िरत से बेख़बर हैं

बाज़ क़ौमों में नसबी गुरूर और तकब्बुर का यह आलम देखने में आया है कि कोई ऐसा मुसलमान उनको सलाम करे जो नसबी हैसियत से कम समझा जाता हो तो उसके सलाम का जवाब देने में शर्म और ज़िल्लत समझते हैं, बल्कि बाज़ मौक़ों पर उसको सज़ा देने पर आमादा हो जाते हैं, और कहते हैं कि हमको सलाम करना हमारी बराबरी का दावा है, यह क्योंकर बरदाश्त हो। अगर कोई सलाम करे तो यूँ कहे कि "मियाँ सलाम" "अस्सलामु अलैकुम" न कहे। कैसी जहालत और तकब्बुर है। ये मग़रूर और घमण्डी ज़रा आख़िरत के मन्ज़र का ख़्याल दिल में लायें और यह सोचें कि दुनिया के तमाम इनसानों को आख़िरत के मैदान में पहुँचना है, और आमाल की जाँच होने के लिये हिसाब के मैदान में खड़ा होना है, और फिर आमाल के एतिबार से जन्नत या दोज़ख़ में जाना है। और साथ ही साथ इस पर

काफ़ी ग़ौर करे कि आख़िरत के नजात दिलाने वाले और वहाँ इज़्ज़त के मिम्बरों पर बिठाने वाले हम आमाल कर रहे हैं या यह शख़्स जो नेक आमाल में लगा हुआ है, जिसको हमने नीचे बिठाया है और अपने से कम समझा है। ख़ुदा जाने कितने मग़रूरों (घमण्डियों) के साथ यह होगा कि क़ियामत के मैदान में ज़लील व रुस्वा होंगे और कम नसब वाले सम्मान व इज़्ज़त के मिम्बरों पर होंगे।

बुज़ुर्गों की नस्ल में होने पर फ़ख़्र करना बेजा है। उनके आमाल उनके लिये थे हमारे आमाल हमारे लिये हैं। क़ुरआन हकीम का साफ़ फ़ैसला है:

तर्जुमाः वह जमाअत थी पैग़म्बरों की जो गुज़र गयी। जो उन्होंने किया वह उनके लिये है और जो तुम करोगे वह तुम्हारे लिये है।

(सूरः ब-क़रः आयत 134 व 139)

हज़रत सलमान फ़ारसी रज़ियल्लाहु अन्हु का इरशाद

हज़रत सलमान फ़ारसी रज़ियल्लाहु अन्हु के सामने कुछ लोग फ़ख़्र (गर्व) के तौर पर अपने नसब की बड़ाई बयान करने लगे। हज़रत सलमान रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि मैं तो अपने बारे में यह कहता हूँ कि नापाक नुतफ़े से पैदा किया गया और मरकर बदबूदार लाश बन जाऊँगा। उसके बाद मुझे क़ियामत के दिन इन्साफ़ की तराज़ू के पास खड़ा किया जायेगा, अगर उस वक़्त मेरी नेकियाँ भारी निकलीं तो मैं शरीफ़ हूँ अगर मेरी नेकियाँ गुनाहों के मुक़ाबले में हल्की रह गईं तो मैं ज़लील हूँ। शराफ़त और ज़िल्लत का फ़ैसला वहीं होगा।

हज़रत इमाम ज़ैनुल-आबिदीन रज़ियल्लाहु अन्हु को किसी ने गाली दी तो जवाब में इरशाद फ़रमाया कि भाई! मैं अगर दोज़ख़ से बच गया तो तेरे बुरा कहने से मेरा कुछ नहीं बिगड़ता, और अगर ख़ुदा न करे दोज़ख़ में जाना पड़ा तो जो कुछ तूने कहा मैं उससे भी ज़्यादा बुरा हूँ।

यह इमाम ज़ैनुल-आबिदीन रज़ियल्लाहु अन्हु कौन थे? यह हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु के पोते और शहीदे कर्बला हज़रत इमाम हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु के बेटे थे। रोज़ाना हज़ार नफ़िल नमाज़ अदा करते थे और हर क़िस्म की इबादत में आगे-आगे रहते थे। उन्होंने नसब पर फ़ख़्र न किया बल्कि आख़िरत का फ़िक्र करके गाली देने वाले को नर्मी से जवाब दिया, जिसका

अभी ज़िक्र हुआ।

जो लोग नसब पर फ़ख़्र करते हैं उनको बड़ाई का सुबूत भी तो देना चाहिये। और जब उन हज़रात से अपना नसबी जोड़ मिलाते हैं जो दीनदारी में बड़े थे तो ख़ुद दीनदार बनकर अपने बड़ों और बाप-दादा के तरीक़े पर अग्रसर होना लाज़िमी है। नेक आमाल से ख़ाली, दुनिया से मुहब्बत, आख़िरत से ग़फ़लत और बेफ़िक्री, ग़ैर-क़ौमों की शक्ल व सूरत और लिबास व हैयत इख़्तियार करना और अपने बुज़ुर्गों की शक्ल व सूरत और तौर-तरीक़े और लिबास से नफ़रत करना और फिर भी उन बुज़ुर्गों से नसब जोड़ना बड़ी नादानी है।

अल्लाह के नज़दीक बड़ाई का मेयार परहेज़गारी है

अल्लाह रब्बुल-इज़्ज़त ने बड़ाई का कुल्ली क़ायदा सूरः हुजुरात में बयान फ़रमा दिया है:

اِنَّ اَكْرَمَكُمْ عِنْدَ اللّٰهِ اَتْقٰكُمْ

यानी अल्लाह के नज़दीक तुम सब में बड़ा शरीफ़ वही है जो सबसे ज़्यादा परहेज़गार हो।

अल्लाह के नज़दीक तो बड़ाई का मेयार तक़वा (अल्लाह से डरना और परहेज़गारी) है, और जो अल्लाह के नज़दीक बड़ा है हक़ीक़त में वही बड़ा है। अगर दुनिया वालों ने बड़ा समझा और अख़बारों और रिसालों में नाम छपे और लोगों ने तारीफ़ें कीं मगर अल्लाह के नज़दीक कमीना और ज़लील रहा हो, तो यह दुनिया की बड़ाई किस काम की? अल्लाह के नज़दीक परहेज़गार और दीनदार ही बड़े हैं। और जो लोग अल्लाह के नज़दीक बड़े हैं वे दुनिया में भी अच्छाई से याद किये जाते हैं और सैकड़ों साल तक दुनिया में उनका चर्चा रहता है। और आख़िरत में जो उनको बड़ाई मिलेगी वह अलग रही।

दीन के बड़े-बड़े आलिम और हदीस का इल्म हासिल करने वाले और क़ुरआन व हदीस की ख़िदमत करने वाले 'अजमी' (ग़ैर-अरबी) थे, और नसब के एतिबार से बड़े-बड़े ख़ानदानों से न थे, बल्कि उनमें बहुत-से वे थे जो उनमें आज़ाद किये हुए ग़ुलाम थे। आज तक उनका नाम रोशन है और रहती दुनिया तक उम्मत की तरफ़ से उनको "रहमतुल्लाहि अलैहि" (उनपर अल्लाह की रहमत हो) की दुआयें पहुँचती रहेंगी। नसब पर इतराने वालों को

उम्मत जानती भी नहीं है, गुरूर करके और शैख़ी बघार कर दुनिया से रुख़्सत हो गये, आज उनको कौन जानता है? सब बड़ाइयाँ ख़ाक में मिल गईं। अल्लाह तआला हम सबको तकब्बुर और घमण्ड से बचाये और तवाज़ो की सिफ़त से नवाज़े।

किसी का मज़ाक़ बनाने और वायदा-ख़िलाफ़ी करने की मनाही

हदीसः (190) हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तू अपने भाई से झगड़ा न कर, और उससे मज़ाक़ न कर, और उससे कोई ऐसा वायदा न कर जिसकी तू ख़िलाफ़वर्ज़ी करे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 417)

तशरीहः इस हदीस में चन्द नसीहतें फ़रमायी हैं:

पहली नसीहतः यह कि अपने भाई से झगड़ा न कर। झगड़ेबाज़ी बहुत बुरी और निन्दनीय चीज़ है। अपने हक़ के लिये अगरचे झगड़ा करना दुरुस्त है लेकिन झगड़े का छोड़ देना ज़्यादा बेहतर और अफ़ज़ल है। झगड़ा करने से गाली-गलोच और बद-कलामी की नौबत आ जाती है, और दिलों में कीना-कपट जगह पकड़ लेता है, फिर उसके असरात व परिणाम बहुत बुरे पैदा होते हैं।

फ़रमाया हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि जिसने ग़लती पर होते हुए झगड़ा छोड़ दिया उसके लिये जन्नत के शुरूआती हिस्से में मकान बनाया जायेगा, और जिसने हक़ पर होते हुए झगड़ा छोड़ दिया उसके लिये जन्नत के दरमियानी हिस्से में मकान बनाया जाएगा। और जिसने अपने अख़्लाक़ अच्छे किये उसके लिये जन्नत के ऊँचे हिस्से पर मकान बनाया जाएगा। (मिश्कात)

दूसरी नसीहतः यह फ़रमायी कि अपने मुसलमान भाई से मज़ाक़ मत कर। मज़ाक़ करने की दो सूरतें हैं- एक यह कि जिससे मज़ाक़ किया जाए उसका दिल ख़ुश करना मक़सद हो। ऐसा मज़ाक़ करना जायज़ बल्कि पसन्दीदा है। शर्त यह है कि उसमें झूठ न हो और वायदा ख़िलाफ़ी न हो। दूसरी सूरत यह है कि जिससे मज़ाक़ किया जाए उसको नागवार हो, ऐसा मज़ाक़ करना जायज़ नहीं। ऊपर बयान हुई हदीस में इसी की मुमानअत (मनाही) फ़रमायी है। अकसर ऐसा होता है कि चन्द औरतें मिलकर किसी

औरत से मज़ाक़ शुरू कर देती हैं, और जिससे मज़ाक़ कर रही हैं उसको नागवार हो रहा है, वह चिड़ रही है और उलटा-सीधा कह रही है। इसमें चूँकि एक मुसलमान को तकलीफ़ देना है इसलिये यह हराम है।

नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का मज़ाक़ मुबारक

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम दिल ख़ुश करने के लिये कभी-कभी मज़ाक़ फ़रमा लेते थे। सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम ने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! आप हम से मज़ाक़ फ़रमाते हैं? आपने फ़रमाया बेशक! मैं (मज़ाक़ में भी) हक़ ही कहता हूँ। (तिर्मिज़ी)

मालूम हुआ कि दिल ख़ुश करने के लिये जो मज़ाक़ किया जाए वह भी सच और सही होना चाहिये। मज़ाक़ में भी झूठ बोलना जायज़ नहीं है।

एक शख़्स ने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से सवाल किया कि मुझे सवारी इनायत फ़रमा दें। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि बेशक मैं तुझे ऊँटनी के बच्चे पर सवार कर दूँगा। उस शख़्स ने अर्ज़ किया: मैं ऊँटनी के बच्चे का क्या करूँगा? आपने फ़रमाया ऊँटों को ऊँटनियाँ ही जनती हैं। (यानी ऊँट जितना भी बड़ा हो जाये ऊँटनी का बच्चा ही रहेगा)। (तिर्मिज़ी)

देखो! इस मज़ाक़ में ज़रा-सा भी झूठ नहीं है। बात बिल्कुल सही है।

इसी तरह एक बूढ़ी औरत ने अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम! दुआ फ़रमा दीजिये अल्लाह तआला मुझे जन्नत में दाख़िल फ़रमाए। आपने फ़रमाया बेशक जन्नत में कोई बुढ़िया दाख़िल न होगी। यह सुनकर वह रोती हुई वापस चली गयी। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मौजूद लोगों से फ़रमाया कि उसको जाकर बता दो कि (मतलब यह नहीं है कि दुनिया में जो बूढ़ी औरतें हैं वे जन्नत में न जायेंगी, बल्कि मतलब यह है कि जन्नत में दाख़िल होते वक़्त कोई औरत भी बूढ़ी न होगी, अल्लाह तआला सबको जवान बना देंगे, लिहाज़ा) यह बुढ़िया (भी) जब जन्नत में दाख़िल होगी बुढ़िया न होगी। इसके बाद आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कुरआन मजीद की यह आयत तिलावत फ़रमाई:

إِنَّا أَنْشَأْنٰهُنَّ إِنْشَاءً، فَجَعَلْنٰهُنَّ أَبْكَارًا

तर्जुमा: हमने (वहाँ की) उन औरतों को ख़ास तौर पर बनाया है। यानी

हमने उनको ऐसी बनाया कि वे कुँवारियाँ हैं। (सूरः वाकिआ आयत 35, 36)

एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु को "दो कान वाले" कहकर पुकारा। (जमउल्-फ़वाइद)

एक औरत ने अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! मेरे शौहर ने आपको मदऊ किया है (यानी बतौर दावत घर पर तशरीफ़ लाने की दरख़्वास्त की है)। आपने फ़रमायाः तेरा शौहर वही है जिसकी आँख में सफ़ेदी है? वह कहने लगी अल्लाह की क़सम! उसकी आँख सफ़ेद नहीं है। आपने फ़रमाया कोई शख़्स ऐसा नहीं है जिसकी आँख में सफ़ेदी न हो। (यानी वह सफ़ेदी जो सियाह डेले के चारों तरफ़ है)। देखो! क्या सही मज़ाक़ है। ऐसा सच्चा मज़ाक़ दुरुस्त है, शर्त यह है कि उसे नागवार न हो जिससे मज़ाक़ किया है।

जब किसी का दिल ख़ुश करने के लिये मज़ाक़ करने में भी यह शर्त है कि बात सच्ची हो और जिससे मज़ाक़ किया जाये उसको नागवार न हो तो किसी का मज़ाक़ उड़ाना कैसे जायज़ हो सकता है? बहुत-से मर्द और औरत इसका बिल्कुल ख़्याल नहीं करते और जिसको किसी भी एतिबार से कमज़ोर पाते हैं सामने या पीछे उसका मज़ाक़ उड़ा देते हैं। यह सब गुनाह है। इसको मस्ख़रापन और मख़ौल और ठट्ठा भी कहा जाता है। क़ुरआन मजीद में इरशाद हैः

तर्जुमाः ऐ ईमान वालो! न तो मर्दों को मर्दों पर हंसना चाहिये, क्या अजब है कि वे उनसे बेहतर हों। और न औरतों को औरतों पर हंसना चाहिये, क्या अजब है कि वे उनसे बेहतर हों। और न एक-दूसरे को ताना दो, और न एक-दूसरे को बुरे लक़ब से पुकारो, ईमान लाने के बाद गुनाह का नाम लगना बुरा है, और जो बाज़ न आयेंगे वे ज़ुल्म करने वाले हैं।

(सूरः हुजुरात आयत 11)

वायदा ख़िलाफ़ी मुनाफ़क़त है

तीसरी नसीहतः यह फ़रमायी कि अपने भाई से वायदा करके उसके ख़िलाफ़ न करो। यह भी बहुत अहम नसीहत है, जिसमें लोग बहुत कोताही करते हैं। जब किसी से कोई वायदा करे तो वायदा करने से पहले अपने हालात और समय के एतिबार से ख़ूब ग़ौर करे कि यह वायदा मुझसे पूरा हो सकेगा या नहीं, और अपनी बात को निबाह सकूँगा या नहीं। अगर वायदा

पूरा कर सकता हो तो वायदा करे वरना उज़्र कर दे, झूठा वायदा करना हराम है। जब वायदा कर ले तो जहाँ तक हो सके पूरी तरह अन्जाम देने की कोशिश करे। बहुत-से लोग टालने के लिये या समय को निकालने के ख़्याल से वायदा कर लेते हैं फिर उसको पूरा नहीं करते, और यह नहीं समझते कि झूठा वायदा गुनाह है। और वायदा करने के बाद उसके ख़िलाफ़ करना भी सख़्त गुनाह है।

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान फ़रमाया कि बहुत कम ऐसा हुआ है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ख़ुतबा दिया (संबोधन किया) हो और यह न फ़रमाया हो कि:

हदीसः उसका कोई ईमान नहीं जो अमानतदार नहीं, और उसका कोई दीन नहीं जो अ़हद का पूरा नहीं है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 15)

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि मुनाफ़िक़ की तीन निशानियाँ हैं, चाहे रोज़ा रखे और नमाज़ पढ़े, और अपने बारे में यह समझे कि मैं मुसलमान हूँ। (उसके बाद आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने वे तीनों निशानियाँ ज़िक्र फ़रमाईं) (1) जब बात करे तो झूठ बोले (2) जब वायदा करे तो उसके ख़िलाफ़ करे (3) जब उसके पास अमानत रखी जाए तो ख़ियानत करे। (मिश्कात)

और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिस शख़्स में ये चार ख़सलतें होंगी वह ख़ालिस मुनाफ़िक़ होगा, और जिसमें इनमें से एक ख़सलत होगी तो उसमें निफ़ाक़ की एक ख़सलत होगी जब तक उसको छोड़ न दे।

(1) जब उसके पास अमानत रखी जाए तो ख़ियानत करे।

(2) जब बात करे तो झूठ बोले।

(3) अ़हद करे तो धोखा दे।

(4) झगड़ा करे तो गाली बके। (बुख़ारी व मुस्लिम)

पस हर मुसलमान मर्द व औरत पर लाज़िम है कि झूठे वायदे से, बद-अ़हदी से और वायदे की ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) से ख़ूब ज़्यादा ख़्याल करके महफ़ूज़ रहे।

पैसा होते हुए क़र्ज़ा अदा न करना ज़ुल्म है

बहुत-से लोग वक़्ती ज़रूरत के लिये दुकानदार से सौदा उधार ले लेते हैं, या किसी से नक़द रक़म ले लेते हैं, बाद में क़र्ज़ देने वाले को सताते हैं, वायदे पर वायदे किये जाते हैं लेकिन क़र्ज़ की अदायगी नहीं करते। दूसरे का माल भी ले लिया और उसको वायदा-ख़िलाफ़ी के ज़रिये तकलीफ़ भी दे रहे हैं और तक़ाज़ों के लिये आने-जाने की वजह से उसका वक़्त भी बरबाद करते हैं। हर शख़्स को यह सोचना चाहिये कि मैं उसकी जगह होता तो मैं अपने लिये क्या पसन्द करता, जो अपने लिये पसन्द करे वही दूसरे के लिये पसन्द करना लाज़िम है।

जिस शख़्स के पास अदायगी के लिये माल मौजूद न हो वह क़र्ज़-ख़्वाह (यानी जिसका क़र्ज़ा है) से माज़िरत कर ले और मोहलत माँगे और उस तारीख़ पर अदायगी का वायदा करे जिस वक़्त पैसा पास होने का पूरा अन्दाज़ा और गुमान हो। और जिसके पास माल मौजूद हो वह फ़ौरन क़र्ज़-ख़्वाह का हक़ अदा कर दे बिल्कुल टाल-मटोल न करे। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है:

हदीसः जिसके पास अदायगी के लिये माल मौजूद हो उसका टाल-मटोल करना ज़ुल्म है। (मिश्कात शरीफ़)

इस हदीस में उन लोगों के लिये ख़ास तंबीह है जो अदायगी का इन्तिज़ाम होते हुए हक़ वाले को आजकल पर टालते रहते हैं और झूठे वायदे करके टरख़ाते रहते हैं। ऐसे झूठे वायदे करने वाले को हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ज़ालिम क़रार दिया है।

मुसलमान भाई की मुसीबत पर ख़ुश होने की मनाही

हदीसः (191) हज़रत वासला रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अपने भाई की मुसीबत पर ख़ुशी ज़ाहिर न करो (मुमकिन है) उसके बाद अल्लाह उसपर रहम फ़रमा दे और तुझे मुब्तला फ़रमा दे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 414)

तशरीहः इस हदीस में एक अहम मज़मून इरशाद फ़रमाया है, और वह यह कि जब किसी मुसलमान को मर्द हो या औरत, किसी तरह के दुख-तकलीफ़ या नुक़सान व ख़सारे वग़ैरह में मुब्तला देखो तो इस पर कभी

ख़ुशी का इज़हार मत करो, क्योंकि यह कुछ ज़रूरी नहीं है कि तुम हमेशा मुसीबत से बचे रह जाओ। यह बहुत मुमकिन है कि तुमने जिसकी मुसीबत पर ख़ुशी का इज़हार किया है अल्लाह पाक उसको उस मुसीबत से नजात दे दे और तुमको उस मुसीबत में मुब्तला कर दे। और यह महज़ एक फ़र्ज़ी बात नहीं है बल्कि उमूमन देखने में आता है और अकसर ऐसा होता रहता है कि जब किसी के दुख, मुसीबत और तकलीफ़ पर किसी ने ख़ुशी का इज़हार किया या किसी के जिस्मानी अंगों का मज़ाक़ बनाया, किसी तरह की कोई नक़ल उतारी तो ख़ुशी ज़ाहिर करने वाला, मज़ाक़ उड़ाने वाला और नक़ल उतारने वाला ख़ुद उसी मुसीबत, ऐब और बुराई में मुब्तला हो जाता है जो दूसरे में था। अगर किसी शख़्स में कोई ऐब है दीनी या दुनियावी तो उसपर ख़ुश होना या उसपर ताने के तौर पर उसको ज़िक्र करना और बतौर नुक़्स और ऐब के उसको बयान करना मना है। हाँ! अगर इख़्लास (नेक-नीयती) के साथ नसीहत के तौर पर ख़ैरख़्वाही के साथ नसीहत करे तो यह अच्छी चीज़ है, लेकिन हक़ कहने का बहाना करके या यह कहकर कि हम तो बुरे कामों से मना करने का जो हदीस में हुक्म आया है उस फ़रीज़े की अदायगी कर रहे हैं, जबकि मकसद उसपर ताना मारना और ऐब लगाना है, और दिल की भड़ास निकालना है, यह दुरुस्त नहीं है।

मुख़लिस (शुभ-चिन्तक) की बात हमदर्दाना होती है और नसीहत का तर्ज़ और ही होता है। तन्हाई में समझाया जाता है, रुस्वा करना मकसद नहीं होता। और जहाँ नफ़्स की मिलावट हो उसका तर्ज़ और लहजा दिल को चीरता चला जाता है। किसी को ऐबदार बताने के लिये ऐब का ज़िक्र करना जायज़ नहीं है, इसका नतीजा भी बुरा होता है। फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि जिसने अपने भाई को किसी गुनाह का ऐब लगाया तो वह उस वक़्त तक नहीं मरेगा जब तक उस गुनाह को ख़ुद न कर लेगा। (तिर्मिज़ी)

अच्छे अख़्लाक़ से मुताल्लिक़ एक जामे हदीस

हदीसः (192) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि आपस में हसद न करो, और एक दूसरे के भाव पर भाव मत बढ़ाओ, और आपस में बुग़्ज़ न

रखो, और एक दूसरे से मुँह न मोड़ो, और एक शख़्स दूसरे की बै पर बै न करे, और अल्लाह के बन्दे भाई-भाई बनकर रहो। (फिर फ़रमाया) मुसलमान मुसलमान का भाई है, न उसपर ज़ुल्म करे और न उसको बेकसी की हालत में छोड़े, न उसे हक़ीर जाने। (इसके बाद) तीन बार अपने मुबारक सीने की तरफ़ इशारा करते हुए फ़रमाया कि तक़्वा (परहेज़गारी) यहाँ है। (फिर फ़रमाया कि) इनसान के बुरा होने के लिये काफ़ी है कि अपने मुसलमान भाई को हक़ीर जाने। मुसलमान के लिये मुसलमान का सब कुछ हराम है, उसका ख़ून भी, माल भी, आबरू भी। (मुस्लिम शरीफ़ 317 जिल्द 2)

तशरीहः यह मुबारक हदीस बड़े फ़ायदों, अहकाम और जामे (व्यापक) नसीहतों पर आधारित है। पहली नसीहत यह फ़रमायी कि आपस में हसद न करो।

हसद का वबालः हसद बड़ी बुरी बला है। जो हासिद होगा वह ज़रूर ही अपने दिल व दिमाग़ का नास करके रहेगा। क़ुरआन मजीद में हासिद के हसद से पनाह माँगने की तालीम दी गयी हैः

तर्जुमाः और हसद करने वाले के शर से जब वह हसद करे।

(सूरः फ़लक़ आयत 5)

एक हदीस में है कि सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि हसद से बचो क्योंकि वह नेकियों को इस तरह खा जाता है जैसे लकड़ियों को आग खा जाती है। (मिश्कात)

आलिमों ने फ़रमाया है कि हसद हराम है। हसद हराम होने की एक सबसे बड़ी वजह यह है कि जिसको अल्लाह तआला ने जो कुछ दिया है हिक्मत (मस्लेहत) के बग़ैर नहीं दिया है। अब जो हसद करने वाला यह चाहता है कि यह नेमत फ़लाँ शख़्स के पास न रहे तो दर हक़ीक़त यह अल्लाह पर एतिराज़ है कि उसने उसको क्यों नवाज़ा? और हिक्मत के ख़िलाफ़ उसको दूसरे हाल में क्यों न रखा। ज़ाहिर है कि मख़्लूक़ को ख़ालिक़ के काम में दख़ल देने का कुछ हक़ नहीं है, और न मख़्लूक़ इस लायक़ है कि उसको यह हक़ दिया जाये। हम अपने दुनियावी इन्तिज़ाम में और घरेलू मामलात में रोज़ाना ऐसे काम कर गुज़रते हैं जो हमारे बच्चों की समझ से बाहर होते हैं। अगर हमारे बच्चे हमारे काम में दख़ल दें तो हमको किस क़द्र बुरा मालूम होता है, फिर अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त तो कुल मुख़्तार है जो चाहें

करें, उनकी तक़सीम में किसी को दख़ल देने का क्या हक़ है?

जब किसी को हसद हो जाता है तो जिससे हसद करता है उसको नुक़सान पहुँचाने के पीछे लग जाता है। उसकी ग़ीबत करता है और उसको जानी व माली नुक़सान पहुँचाने की फ़िक्र में लगा रहता है। जिसकी वजह से बड़े-बड़े गुनाहों में घिर जाता है। फिर ऐसे शख़्स को अव्वल तो नेकी करने का मौक़ा ही नहीं मिलता, और अगर कोई नेकी कर गुज़रता है तो चूँकि वह आख़िरत में उसे मिलेगी जिससे हसद किया है, तो नेकी करना न करना बराबर हो गया। इरशाद फ़रमाया नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि पहली उम्मतों की बीमारी यानी हसद तुम तक आ पहुँची है, और बुग़्ज़ तो मूँड देने वाला है। मैं नहीं कहता कि वह बालों को मूँडता है, वह दीन को मूँड देता है। (मिश्कात)

नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बुग़्ज़ को दीन का मूँडने वाला फ़रमाया। मूँडने से तश्बीह देने की वजह यह है कि जिस तरह उस्तुरा बाल को मूँडता चला जाता है और हर छोटे बड़े बाल को अलग कर देता है, इसी तरह बुग़्ज़ की वजह से सब नेकियाँ ख़त्म होती चली जाती हैं। हसद करने वाला दुनिया व आख़िरत में अपना बुरा करता है, नेकियों से भी मेहरूम रहता है, और कोई नेकी हो भी जाती है तो हसद की आग उसे राख बनाकर रख देती है। दुनिया में हसद करने वाले के लिये हसद एक अ़ज़ाब है जिसकी आग हासिद (हसद करने वाले) के सीने में भड़कती है, और जिससे हसद किया जाता है उसका कुछ नहीं बिगड़ता।

क्या ही अच्छी बात किसी ने कही है:

तर्जुमाः हासिद से इन्तिक़ाम लेने के ख़्याल में पड़ने की ज़रूरत नहीं, यही इन्तिक़ाम (बदला) काफ़ी है कि तुमको ख़ुशी होती है तो उस ख़ुशी की वजह से उसे रंज पहुँचता है।

बाज़ हज़रात ने फ़रमायाः

तर्जुमाः हसद एक काँटा है, जिसने इसे पकड़ा हलाक हुआ।

किसी के भाव पर भाव करना

दूसरी नसीहत यह फ़रमायी कि एक दूसरे के भाव पर भाव मत बढ़ाओ, जिसका बाज़ारों में बहुत रिवाज है। वयापारी से कुछ मिलने के लिये या

ख़्वाह-मख़्वाह ख़रीद कर नुक़सान देने के लिये लोग ऐसा करते हैं। कोई शख़्स सौदा बेच रहा है, ग्राहक खड़े हैं, उसने पचास रुपये के माल के सौ रुपये लगा दिये। अब जो दूसरे ख़रीदार हैं धोखे में पड़ गये, लिहाज़ा वे ज़रूर सौ रुपये से ज़्यादा ही लगायेंगे और नुक़सान ही उठायेंगे। ऐसा करने से नबी पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मना फ़रमाया। और मना उसी सूरत में है जबकि ख़रीदना मक़सद न हो (सिर्फ़ धोखा देकर नुक़सान में डालना या बेचने वाले से कुछ वसूल करना मक़सद हो)। अगर ख़ुद ख़रीदने का इरादा हो तो क़ीमत बढ़ाकर जिन दामों में चाहे ख़रीद ले, मगर शर्त यह है कि दूसरे शख़्स से अगर बेचने वाले की गुफ़्तगू हो रही है तो जब तक बेचने वाला उसके लगाए हुए दामों पर देने से इनकार न कर दे उस वक़्त तक बढ़ाना दुरुस्त नहीं वरना दूसरी मनाही का जुर्म हो जायेगा जो इसी हदीस में मौजूद है। यानीः "एक शख़्स दूसरे की बै पर बै न करे"

एक हदीस में है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

हदीसः कोई शख़्स अपने भाई के मामले पर मामला न करे, और उसके निकाह के पैग़ाम पर अपना पैग़ाम न भेजे। हाँ! अगर वह इजाज़त दे दे तो दुरुस्त है। (मुस्लिम शरीफ़)

नीलामी का मौजूदा तरीक़ा

आजकल नीलाम के ज़रिये बेचने का रिवाज है। बोली बोलने वाले अपने साथ एक दो आदमी लगा लेते हैं और उनको पहले से तैयार करके खड़ा रखते हैं कि तुम ज़्यादा से ज़्यादा दाम बोल देना तुमको हम इतना रुपया दे देंगे। यह मना है। ऐसा करने वाले धोखा और फ़रेब देने के गुनाह के मुजरिम होते हैं। नीलाम के ज़रिये फ़रोख़्त करना दुरुस्त है अगर धोखा न हो। नीलाम के मौक़े पर दूसरे के लगाए हूए दामों से बढ़ाकर दाम लगाना दुरुस्त है लेकिन शरअ़न बेचने वाले को आख़िरी बोली पर छोड़ देना ज़रूरी नहीं, वह चाहे तो न दे।

यह जो रिवाज है कि आख़िरी बोली बोलने वाले पर छोड़े वरना आख़िरी बोली वाले को कुछ दे, शरअ़न ग़लत है। आख़िरी बोली वाले को इस बुनियाद पर कोई पैसा लेना हलाल नहीं है कि मेरी आख़िरी बोली पर नीलाम ख़त्म नहीं किया।

बुग़्ज़ और कता-ताल्लुक की निन्दा

तीसरी नसीहत यह फ़रमायी कि आपस में बुग़्ज़ न करो। एक दूसरे से मुँह न मोड़ो, जब आपस में बुग़्ज़ व दुश्मनी का सिलसिला शुरू हो जाता है तो दूसरे की सूरत देखना तक गवारा नहीं होता। बात-चीत ख़त्म होने के साथ-साथ आमना-सामना भी बुरा लगता है। इस्लामी शरीअत ने मेल-मुहब्बत और उलफ़त पर बहुत ज़ोर दिया है, बुग़्ज़ व अदावत, नफ़रत और दूसरे को ज़लील व रुस्वा करने से बचने की सख़्त ताकीद फ़रमायी है। इनसान इनसान है, कभी तबीयत में मैल आ जाता है, और इनसानी तक़ाज़ों की बिना पर ऐसा हो जाना बईद नहीं है, लेकिन तबीयत के तक़ाज़े की शरीअत ने एक हद रखी है, और वह यह है कि सिर्फ़ तीन दिन कता-ताल्लुक करने की गुंजाइश है। नबी करीम का इरशाद है:

हदीसः किसी मुसलमान के लिये यह हलाल नहीं है कि अपने भाई (मुसलमान) से तीन दिन से ज़्यादा ताल्लुकात तोड़े रखे। पस जिसने तीन दिन से ज़्यादा ताल्लुक तोड़े रखा और उस दौरान में मर गया तो दोज़ख़ में जायेगा। (मिश्कात शरीफ़)

हदीस की किताब अबू दाऊद में है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया है कि जिसने एक साल तक अपने भाई से ताल्लुक तोड़े रखा वह ऐसा है जैसे उसका ख़ून बहा दिया। (मिश्कात)

एक-दूसरे से मुँह फैरने के मुताल्लिक एक हदीस में इरशाद फ़रमाया है कि:

हदीसः किसी शख़्स के लिये यह हलाल नहीं है कि अपने (मुसलमान) भाई से तीन रात से ज़्यादा ताल्लुकात छोड़े रखे (और) मुलाक़ात का इत्तिफ़ाक़ पड़ जाये तो यह इधर को मुँह फैर ले और वह उधर को मुँह फैर ले। (फिर फ़रमाया) दोनों में बेहतर वह है जो पहले सलाम करके बोल-चाल की शुरूआत कर दे। (बुख़ारी व मुस्लिम)

और ऐसा करने में नफ़्स की बात को ठुकरा कर ख़ुदा पाक के हुक्म को सामने रखकर सुलह की तरफ़ बढ़ने में आगे कदम बढ़ाये और दिल में यह न सोचे कि मैं क्यों पहल करूँ, मेरी हैसियत कम नहीं है, इस तरह से सोचना तकब्बुर और घमण्ड की बात है। इनसान को हर हाल में तवाज़ो लाज़िम है।

एक हदीस में इरशाद है कि किसी मोमिन के लिये यह जायज़ नही है कि तीन दिन से ज़्यादा मुसलमान से ताल्लुक़ तोड़े रखे। तीन दिन गुज़र जाने के बाद खुद मुलाक़ात करे और सलाम करे। अगर उसने सलाम का जवाब दे दिया तो दोनों को अज्र मिला वरना सलाम करने वाला ताल्लुक़ तोड़ने के गुनाह से बच गया। (अबू दाऊद)

मसलाः तीन बार सलाम करे, अगर वह तीनों बार जवाब न दे तो वही गुनाहगार रहेगा। (बुख़ारी)

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हर हफ़्ते में दो बार (अल्लाह की बारगाह में) लोगों के आमाल पेश होते हैं- एक पीर के दिन, दूसरे जुमेरात के दिन। सो हर मोमिन बन्दे की बख़्शिश कर दी जाती है मगर ऐसे बन्दे की बख़्शिश नहीं होती जिसकी अपने भाई से दुश्मनी हो। इरशाद होता है कि (अभी) दोनों को छोड़ो यहाँ तक कि (अपनी दुश्मनी से) बाज़ आ जायें। (मुस्लिम)

अल्लाह के बन्दे भाई-भाई बनकर रहो की तफ़सीर

उसके बाद नबी पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह के बन्दे भाई-भाई बनकर रहो, यह बड़ी पुर-मग़ज़ हिदायत है। ग़ौर करने के बाद दो गहरी और बारीक हिक्मतों की तरफ इशारा निकलता है।

पहलीः यह कि अल्लाह के बन्दे को बन्दगी से फ़ुरसत कहाँ? जो गुरूर और शैख़ी में पड़े, अपनी आजिज़ी और बेकसी का ख़्याल रखना लाज़िम है। और यह सोचना ज़रूरी है कि मैं अपने खालिक़ व मालिक का बन्दा हूँ। उसने तवाज़ो का हुक्म दिया है। उसके सामने उसकी बादशाहत में उसकी मख़्लूक़ के साथ लड़ाई भिड़ाई और गुरूर और बड़ाई का मुझको क्या हक़ है? बन्दगी से फ़ुरसत हो तो सर उठाए। यह तसव्वुर जिसको बंध जाये अकड़-मकड़ गुरूर तकब्बुर शैख़ी दुश्मनी हसद बुग़ज़ से परहेज़ करेगा, बल्कि उसको बड़ाई का ख़्याल तक न आयेगा। क़ुरआन मजीद में इस हक़ीक़त को वाज़ेह करते हुए फ़रमाया हैः

तर्जुमाः और न चल ज़मीन में इतराता हुआ, बेशक तू ज़मीन को हरगिज़ न फाड़ सकेगा, और लम्बा होकर पहाड़ों तक न पहुँच सकेगा।

(सूरः बनी इस्राईल आयत 37)

सूरः फ़ुरक़ान में इरशाद है:

तर्जुमाः और रहमान के बन्दे वे हैं जो ज़मीन पर दबे पाँव चलते हैं। और जब उनसे बे-समझ लोग ख़िताब करते हैं तो वे (जवाब में) कहते हैं कि हम सलाम करते हैं। (सूरः फ़ुरक़ान आयत 63)

नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

हदीसः मैं इस तरह (बैठकर) खाना खाता हूँ जैसे ग़ुलाम खाना खाता है, और इस तरह बैठता हूँ जैसे ग़ुलाम बैठता है। (मिश्कात)

ख़ुदा हर वक़्त हर जगह हाज़िर नाज़िर है। उसके सामने तकब्बुर की बैठक बन्दगी में कमाल रखने वाले नबी (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) क्योंकर गवारा फ़रमाते?

दूसरीः गहरी और बारीक हिक्मत जिसकी तरफ़ हदीस के अलफ़ाज़ "कूनू इबादल्लाहि इख़्वाना" (यानी अल्लाह के बन्दे भाई भाई बन जाओ) में इशारा निकलता है। वह यह है कि सिर्फ़ भाई का लफ़्ज़ रटने से मुहब्बत पैदा न होगी और हमदर्दियों की तरफ़ तबीयत न चलेगी, माँ-जाय सगे भाइयों में भी लड़ाइयाँ होती हैं, लड़ाई को वह भाईचारा और भाई होने का रिश्ता रोक सकता है जिसमें अल्लाह के ताल्लुक़ को दख़ल हो, यानी भाई-भाई बनने में अल्लाह की बन्दगी, अल्लाह के हुक्म, अल्लाह की बड़ाई का ध्यान हो, और उलफ़त मुहब्बत का सबब रस्म व रिवाज या आ़रज़ी (अस्थाई) फ़िज़ा और माहौल न हो बल्कि उसका असली सबब यह हो कि मैं भी अल्लाह का बन्दा हूँ और यह भी अल्लाह का बन्दा है। अल्लाह का बन्दा होने की वजह से इस लायक़ है कि इससे मुहब्बत की जाये और इसको भाई माना जाये।

दुनिया में मुहब्बत व भाईचारे के बहुत-से असबाब हैं। कुछ लोग एक माँ-बाप के बेटे होने की वजह से भाई-भाई हैं, और कुछ लोग एक वतन में रहने की वजह से भाई-भाई होने के मुद्दई हैं। और इसी तरह की बहुत सारी निस्बतें दुनिया में जारी हैं, जिनकी वजह से भाई होने व मुहब्बत के दावे किये जाते हैं। एक मुसलमान को दूसरे मुसलमान से जो बिरादराना रिश्ता है उसके बारे में उसे सोचना चाहिये कि इससे जो मेरा ताल्लुक़ है वह यह है कि मैं भी उस ख़ुदा पाक का पूजने वाला हूँ जिसका कोई शरीक नहीं, और उसी का पूजने वाला यह है। यह समानता बड़ी मज़बूत व पायदार है। मुझे ज़रूर इसका लिहाज़ रखना ज़रूरी है और हुक़ूक़ की अदायगी ज़रूरी है।

मुसलमान भाई पर जुल्म न करो

हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह भी फ़रमाया कि मुसलमान मुसलमान का भाई है। (और भाई होने का तक़ाज़ा यह है कि) न उसपर जुल्म करे न उसको बेकसी की हालत में छोड़े, न उसको हक़ीर जाने।

जुल्म बड़े गुनाहों में से है। और हर एक के साथ जुल्म का बर्ताव करना हराम है, ख़ुसूसन मुसलमान पर जुल्म करना, जिसको अपना भाई और कलिमे का शरीक मान लिया, और भी ज़्यादा बुरा है।

जुल्म जानी भी होता है और माली भी होता है। जुल्म की तमाम क़िस्मों से परहेज़ फ़र्ज़ है। मुसलमान को बेकसी की हालत में छोड़ना भाई होने के तक़ाज़े के ख़िलाफ़ है। जब भी किसी मुसलमान को मुसीबत मे मुब्तला देखे तो जहाँ तक मुमकिन हो उसकी इमदाद करे। मदद हर मौक़े पर ज़रूरी और लाज़िम है। ख़ुद ग़ीबत न करे और उसकी ग़ीबत और बे-आबरूई होती देखे तो उसकी मदद करे। यानी उसका बचाव करे, और हर तरह से उसका भला चाहे।

मुसलमान को हक़ीर समझने की निन्दा

नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने भाई होने के हुक़ूक़ बयान फ़रमाते हुए यह भी इरशाद फ़रमाया कि मुसलामन भाई को हक़ीर न समझे। किसी को हक़ीर (कम-दर्जा और ज़लील) जानना बुरा मर्ज़ है, जो तकब्बुर की वजह से पैदा होता है। हक़ीर समझने की जितनी सूरतें हैं उन सबसे परहेज़ लाज़िम है। किसी का मज़ाक़ बनाना, बुरा नाम तजवीज़ करना, टूटा-फूटा हाल देखकर अपने से कम समझना, ये हक़ीर बनाने और हक़ीर समझने की सूरतें हैं। और बहुत-से लोग अपनी दीनदारी की वजह से दूसरे बे-अमल मुसलमान को हक़ीर जानते हैं हालाँकि छोटाई-बड़ाई और इज़्ज़त व दौलत के मनाज़िर आख़िरत में सामने आयेंगे। जो वहाँ मोअज़्ज़ज़ (सम्मान वाला) हो वही सही मायनों में इज़्ज़त वाला है, और जो वहाँ हक़ीर हुआ वही असली हक़ीर है। फिर नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने मुबारक सीने की तरफ़ इशारा करके फ़रमायाः तक़्वा (परहेज़गारी) यहाँ है, यहाँ है, यहाँ है। यानी तक़्वा बड़ा और छोटा होने का मेयार है, जो अल्लाह से जिस क़द्र डरेगा उसी क़द्र मोअज़्ज़ज़ (इज़्ज़त व सम्मान वाला) और आबरू वाला होगा।

बहुत-से लोग परहेज़गारी के मेयार पर कसे बग़ैर किसी को दुनियावी हैसियत से कमतर देखकर हक़ीर समझने लगते हैं जो सरासर नादानी और अपने नफ़्स पर ज़ुल्म है। बल्कि जो लोग दीनदारी में अपने को दूसरे से बड़ा देखें उनको भी यह दुरुस्त नहीं कि अपने से कम इबादत वाले को हक़ीर जानें, क्या ख़बर वह तौबा व इस्तिग़फ़ार में ज़्यादा अ़मल वाले से बढ़ा हुआ हो, और ज़्यादा अ़मल वाले के दिल में इख़्लास कम हो।

नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि इनसान के बुरा होने के लिये यही काफ़ी है कि मुसलमान भाई को हक़ीर जाने, यानी किसी में कोई और खोट और ऐब हो या न हो, बुरा होने के लिये यही काफ़ी है कि मुसलमान भाई को हक़ीर जाने, क्योंकि जो दूसरों को हक़ीर जानता है उसमें गुरूर व तकब्बुर होता है। तकब्बुर की बुराई सबको मालूम है।

फिर आख़िर में हुज़ूर सरवरे कायनात सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमया कि मुसलमान पर मुसलमान का सब कुछ हराम है। उसका ख़ून भी, उसका माल भी, (जो उसकी दिली ख़ुशी के बग़ैर ले लिया जाये) और उसकी आबरू भी। यानी मुसलमान पर न जानी ज़ुल्म करे न माली, और न उसकी बे-आबरूई करे।

आदाब का बयान

इस्लामी आदाब एक नज़र में

हदीसः (193) हज़रत उमर बिन अबी सलमा रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने बयान फ़रमाया कि मैं (बचपन में) हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की गोद में (परवरिश पाता) था। (एक बार जो साथ खाना खाने बैठे तो) मेरा हाथ प्याले में (हर तरफ़) घूम रहा था। नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मुझसे फ़रमाया कि बिस्मिल्लाह पढ़कर खा और दाहिने हाथ से खा और जो हिस्सा तुझसे करीब है उसमें से खा। (मिश्कात शरीफ़ पेज 363)

तशरीहः उम्मुल-मोमिनीन हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा भी उन मुबारक हस्तियों में हैं जिन्होंने इस्लाम के शुरू के दौर ही में इस्लाम क़बूल कर लिया था। उनका नाम हिन्द था। उम्मे सलमा (यानी सलमा की माँ)

'कुन्नियत' (1) है। उनके पहले शौहर अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्दुल असद रज़ियल्लाहु अ़न्हु भी इस्लाम क़बूल करने में शुरू के हज़रात में से थे। इस्लामी तारीख़ लिखने वालों ने लिखा है कि वह ग्यारहवें मुसलमान थे। हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तौहीद वाली दावत से मक्का के मुश्रिकीन बहुत बरगश्ता थे, और जो शख़्स इस्लाम क़बूल कर लेता था उसे बहुत-सी तकलीफ़ें पहुँचाते थे।

इसी लिये बहुत-से सहाबा हब्शा चले गये थे। यह इस्लाम में सबसे पहली हिजरत थी। इस हिजरत के सफ़र में मर्द और औरतें सभी थे। हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बेटी हज़रत रुक़य्या रज़ियल्लाहु अ़न्हा और उनके शौहर हज़रत उसमान बिन अफ़्फ़ान रज़ियल्लाहु अ़न्हु और हज़रत सलमा और उनके शौहर अबू सलमा रज़ियल्लाहु अ़न्हु भी इस हिजरत में शरीक थे। अबू सलमा रज़ियल्लाहु अ़न्हु का नाम अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्दुल असद था जो हज़रत उम्मे सलमा के चचाज़ाद भाई थे। हब्शा में एक लड़का पैदा हुआ जिसका नाम सलमा रखा गया, उसी के नाम से बाप की कुन्नियत अबू सलमा और माँ की कुन्नियत उम्मे सलमा हो गयी। कुछ दिनों के बाद दोनों हज़रात हब्शा से मक्का मुअ़ज़्ज़मा वापस आ गये, फिर पहले अबू सलमा रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने और उनके एक साल के बाद उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने मदीने मुनव्वरा को हिजरत फ़रमायी। मदीना मुनव्वरा में एक लड़का और दो लड़कियाँ पैदा हुईं। लड़के का नाम उमर और लड़की का नाम दुर्रह और दूसरी लड़की का नाम ज़ैनब रज़ियल्लाहु अ़न्हुम रखा गया।

हज़रत अबू सलमा रज़ियल्लाहु अ़न्हु बदर की लड़ाई और उहुद की लड़ाई में शरीक हुए। उहुद की लड़ाई में उनके एक ज़ख़्म आ गया जो बज़ाहिर अच्छा हो गया था। हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उन्हें एक दस्ते का अमीर बनाकर भेज दिया था। वापस आये तो वह ज़ख़्म हरा हो गया और उसी के असर से जमादिउस्सानी सन् चार हिजरी में वफ़ात पाई। जब हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा की इद्दत ख़त्म हुई तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनसे निकाह फ़रमा लिया। हज़रत

---

(1) अ़रब में यह ख़ास दस्तूर है कि असल नाम के साथ-साथ बेटे या बाप की तरफ़ निस्बत करके भी पुकारते हैं जैसे 'अबू सलमा' यानी सलमा का बाप, 'इब्ने उमर' उमर का बेटा, इस तरह निस्बत से जो नाम लिया जाता है उसे 'कुन्नियत' कहते हैं। **मुहम्मद इमरान क़ासमी**

उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा ख़ुद रिवायत फ़रमाती हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब किसी मुसलमान को कोई मुसीबत पहुँचे और वह अल्लाह के फ़रमान के मुताबिक़ यह पढ़े:

इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन। अल्लाहुम्-म अजिर्नी फ़ी मुसीबती व अख़्लिफ़् ली ख़ैरम् मिन्हा

तर्जुमाः हम अल्लाह ही के लिये हैं और हमें अल्लाह ही की तरफ़ लौटकर जाना है। ऐ अल्लाह! मेरी मुसीबत में मुझे इसका सवाब दे और इससे बेहतर इसका बदल इनायत फ़रमा।

तो अल्लाह तआला ज़रूर उसको गई हुई चीज़ से बेहतर अता फ़रमाएँगे। जब अबू सलमा रज़ियल्लाहु अन्हु की वफ़ात हो गयी तो (मुझे यह हदीस याद आयी और) दिल में कहा (कि इस दुआ को क्या पढ़ूँ) अबू सलमा से बेहतर और कौन होगा? वह सबसे पहला शख़्स था जिसने सबसे पहले अपने घर से हिजरत की, फिर आख़िरकार मैंने यह दुआ पढ़ ली, जिसका नतीजा यह हुआ कि अल्लाह तआला ने अबू सलमा रज़ियल्लाहु अन्हु के बाद नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के निकाह में आने का शर्फ़ (सम्मान) अता फ़रमाया।

निकाह के बाद जब हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मकान में तशरीफ़ लाईं तो देखा कि वहाँ एक मटके में जौ रखे हुए हैं, और एक चक्की और एक हाँडी भी मौजूद है। हज़रत उम्मे सलमा ने ख़ुद जौ पीसे और चिकनाई डालकर मालीदा बनाया और पहले ही दिन अपने हाथ से नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को तैयार किया हुआ मालीदा खिलाया।

जब हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मकान शरीफ़ में आईं तो अपने छोटे बच्चों के साथ आ गईं जैसा कि पहले शौहर की छोटी औलाद माँ के साथ आ जाया करती है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने बच्चों की तरह उनके बच्चों की भी परवरिश फ़रमायी और उनकी तालीम व तरबियत का ख़ास ख़्याल रखा।

ऊपर जो हदीस नक़ल की गयी है उसमें हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा के बेटे उमर बिन अबू सलमा रज़ियल्लाहु अन्हु अपना एक वाक़िआ उसी ज़माने का नक़ल फ़रमाते हैं कि मैं बच्चा था। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु

अलैहि व सल्लम की गोद में परवरिश पाता था। एक दिन जो आपके साथ खाना खाने बैठा तो मेरा हाथ चारों तरफ़ गश्त करने लगा, कभी इधर डाला कभी उधर डाला। हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उस वक़्त तीन नसीहतें फ़रमाईं:

पहली: अल्लाह का नाम लेकर शुरू कर।

दूसरी: अपने दाहिने हाथ से खा।

तीसरी: जो हिस्सा तुझसे क़रीब है उसमें से खा। यानी प्याले में हर जगह हाथ मत डाल, अपनी तरफ़ जो प्याले का हिस्सा है उसी तरफ़ हाथ डालकर खा।

दूसरी रिवायत में है कि अगर प्लेट में एक ही तरह की चीज़ न हो बल्कि कई चीज़ें हों। (जैसे बादाम अखरोट मुनक़्क़ा खजूरें वग़ैरह) कई चीज़ें भरी हुई हों तो उसमें अपने क़रीब हाथ डालना आदाब में से नहीं है बल्कि हाथ बढ़ाकर जहाँ से जो चीज़ उठाना चाहे उठा सकता है।

इस हदीस में खाने के चन्द आदाब बताए हैं। इस्लाम सरासर अहकाम और आदाब और आमाल का नाम है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मुअल्लिमुल-ईमान (ईमान सिखाने वाले) मुअल्लिमुल-इबादात (इबादतों के सिखाने वाले) मुअल्लिमुल-अहकाम (अहकाम के सिखाने वाले) और मुअल्लिमुल-अदब मुअल्लिमुल-अख़्लाक़ (अख़्लाक़ के सिखाने वाले) और (अदब के सिखाने वाले) थे। आपने सब कुछ बताया और करके दिखाया ताकि उम्मत की तालीम क़ौल से भी हो और अमली तौर पर भी। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सारी ज़िन्दगी पूरी की पूरी तालीम व तरबियत है। पैदाईश से लेकर मौत तक किस तरह ज़िन्दगी गुज़ारी जाए? और इजतिमाई (सामूहिक) और इनफ़िरादी हैसियत (व्यक्तिगत तौर) से अपने समाज को किन अख़्लाक़ व आदाब से सुसज्जित करें? इसका जवाब हदीस व सीरत की किताबों में मौजूद है। आजकल नमाज़-रोज़े को तो कुछ लोग अहमियत देते भी हैं लेकिन अख़्लाक़ व आदाब को कुछ भी अहमियत नहीं देते, हालाँकि मुअल्लिमे इनसानियत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अख़्लाक़ व आदाब भी बड़ी अहमियत के साथ बताए हैं, जो सरासर इनसानी फ़ितरत के मुवाफ़िक़ हैं। जो लोग अपनी सामाजिक ज़िन्दगी में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के तौर-तरीक़े इस्तेमाल नहीं करते और खाने-पीने और

रहने-सहने और सोने-जागने और पहनने-ओढ़ने में नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इरशादात और आपके फ़रमानों का लिहाज़ नहीं रखते, उनकी ज़िन्दगी इनसानियत से दूर और हैवानियत से ज़्यादा क़रीब होती है, जिसको आ़म तौर देखा भी जाता है।

मौजूदा दौर के लोगों ने खाने-पीने और पहनने और ज़िन्दगी गुज़ारने के दूसरे तरीक़ों में यूरोप और अमेरिका के काफ़िरों को अपना इमाम और पेशवा बना रखा है। इन ख़ुदा को भूलने वालों का जो भी तरीक़ा सामने आता है उसे लपक कर क़बूल कर लेते हैं और बड़ी जाँनिसारी के साथ उसपर अ़मल करते हैं। ताज्जुब है कि ईमान तो लाये दोनों जहाँ के सरदार मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर और अ़मल करें बेदीनों और ईसाइयों के तरीक़ों पर! बहुत-से लोग तो इसमें इस क़द्र हद से आगे बढ़ते हैं कि अल्लाह के हबीब सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के तरीक़ा-ए-ज़िन्दगी को अपनाने में ऐब समझते हैं, और यह ख़्याल करते हैं कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के तरीक़े को इख़्तियार करेंगे तो लोग नाम रखेंगे, उंगलियाँ उठायेंगे कि फ़लाँ आदमी बड़ा दक़यानूसी (पुराने ख़्यालात का) है, मॉडर्न नहीं है। अल्लाह हिदायत दे, कैसी नासमझी के ख़्यालात हैं। अगर नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत और तरीक़े पर अ़मल करने की वजह से किसी इस्लाम के इनकारी ने कुछ कह भी दिया तो उससे क्या होता है, जिस पर हम ईमान लाये हैं हम उसी से जुड़े हुए हैं, वही हमारा आक़ा है, उसी का ज़िन्दगी का तरीक़ा हमको पसन्द है, उसी की शक्ल व सूरत रंग-ढंग लिबास वग़ैरह और पूरा तर्ज़े-ज़िन्दगी हमारा यूनिफ़ार्म है। हम उसके हैं वह हमारा है। अपने आक़ा की पैरवी करने में हल्कापन मेहसूस करना एहसासे-कमतरी है, और सरासर बेवक़ूफ़ी है। क़ुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमाः आप फ़रमा दीजिये कि अगर अल्लाह से मुहब्बत रखते हो तो मेरा इत्तिबा (पैरवी) करो, अल्लाह तुम से मुहब्बत फ़रमायेगा, और तुम्हारे गुनाह माफ़ फ़रमा देगा, और अल्लाह माफ़ करने वाला, रहम करने वाला है।

(सूरः आलि इमरान आयत 31)

इस आयते करीमा में बताया कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के तरीक़े पर ज़िन्दगी गुज़ारने से बन्दा अल्लाह का महबूब बन जाता है। हमें अल्लाह की बारगाह में महबूब और मक़बूल होना चाहिये। हमारी

सआदत (सौभाग्य) इसी में है कि अपने आक़ा की पैरवी करें और अपनी गुलामी का अ़मल से सुबूत दें। अल्लाह तआ़ला की किताब कुरआ़न मजीद को उतरे और अल्लाह तआ़ला के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को दुनिया में तशरीफ़ लाये तक़रीबन डेढ़ हज़ार साल हो रहे हैं। हमारा दीन और ईमान कुरआ़न और नबी पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से वाबस्ता और जुड़ा हुआ है। वह पुराने हैं और हम भी पुराने हैं। इसमें ऐब की क्या बात है? आख़िर दूसरी क़ौमें भी तो रंग-ढंग तौर-तरीक़ों, शक्ल व सूरत और सज-धज में अपने बड़ों की पैरवी करती हैं, इसमें ये लोग कोई बेइज़्ज़ती महसूस नहीं करते और फ़ख़्र (गर्व) करते हुए अपने दीन के शिआ़र (ख़ास पहचान) को इख़्तियार करते हैं और अपने बड़ों की मुर्दा चीज़ों को ज़िन्दा कर रहे हैं। हालाँकि जिनको ये लोग मानते हैं वे इस दुनिया में आने के एतिबार से हमारे रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से पुराने हैं। हम फिर भी अपने नबी के ज़िन्दगी के तर्ज़ के बजाय दुश्मनों के तौर-तरीक़े सीखते हैं और उनपर अ़मल करते हैं।

आख़िरत में इज़्ज़त और बड़ाई और सुर्ख़रूई नसीब होने की फ़िक्र करने वाले यही कोशिश करते हैं कि हम हुज़ूरे पाक सल्ल० की जमाअ़त में शुमार कर लिये जायें और वहाँ की रुस्वाई से महफ़ूज़ रहें। सबसे बड़ी रुस्वाई आख़िरत की रुस्वाई है, उससे बचने के लिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दामन से वाबस्ता होना लाज़िम है। जो तमाम नबियों के सरदार और दोनों जहान के आक़ा हैं। सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम।

मुसलमानो! अपने नबी की सुन्नतों पर मर-मिटो। दुनिया के जाहिलों की नज़र में इज़्ज़त वाला बनने के ख़्याल से आख़िरत की बड़ाई और बुलन्दी को न भूलो। वहाँ की ज़िल्लत और रुस्वाई बहुत बड़ी और बहुत बुरी है।

अब हम नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पाक हदीसों से चयन करके इस्लामी आदाब जमा कर रहे हैं। कोशिश यह है कि जो बात बयान हो हदीस का तर्जुमा हो, चाहे वह नबी करीम की ज़ुबानी हदीस हो या आपका अ़मल हो। हर हदीस के ख़त्म पर हदीस की किताबो का हवाला है। इसी लिये बहुत-सी जगह चन्द आदाब एक साथ बयान करने के बाद हवाला दिया गया है, क्योंकि वे सब एक हदीस में बयान हुए हैं। खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने, मेहमानी, मेहमानदारी, सलाम और मुलाक़ात, छींक और जमाई

और मजलिस के आदाब अलग-अलग बयान किये गये हैं। तथा लेटने, सोने, ख़्वाब देखने, सफ़र में आने-जाने के आदाब भी लिख दिये हैं। और एक उनवान में ख़ुसूसियत के साथ वे आदाब जमा किये हैं जो औ़रतों और लड़कियों के लिये ख़ास हैं। फिर मुतफ़र्रिक़ आदाब लिखकर इस मौज़ू (विषय) को ख़त्म कर दिया गया है।

वाज़ेह रहे कि आदाब का मतलब यह न समझ लिया जाए कि आदाब ही तो हैं, अ़मल न किया तो क्या हर्ज है। यह बहुत बड़ी नादानी है। मोमिन के लिये क्या यह बहुत बड़ा हर्ज नहीं है कि अ़मल किया और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के तरीक़े के मुताबिक़ न किया? और सुन्नत की पैरवी के सवाब से मेहरूम रहा। फिर इनमें बहुत-सी चीज़ें वे हैं जिनके ख़िलाफ़ अ़मल करना सख़्त गुनाह है जैसे औ़रतों को मर्दाना शक्ल व सूरत इख़्तियार करना, सोने चाँदी के बरतनों में खाना खाना, और तकब्बुर की वजह से कपड़ों को ज़मीन पर घसीटते हुए चलना, और जैसे कि मुसलमान के सलाम का जवाब न देना वग़ैरह वग़ैरह। और बाज़ चीज़ें ऐसी हैं जिनके छोड़ने में गुनाह तो न कहा जाएगा लेकिन उनके छोड़ने से बड़े-बड़े नुक़सानात का अन्देशा है, जैसे मश्कीज़े से मुँह लगाकर पानी पीना, (इसमें अन्देशा है कि कीड़ा-मकोड़ा पानी के साथ अन्दर चला जाए)। और जैसे खाना खाकर हाथ धोए बग़ैर सोना, (इसमें अन्देशा है कि कोई जानवर काट ले)। और जैसे उस छत पर सोना जिसमें चार-दीवारी न हो (इसमें सोते-सोते नीचे गिर पड़ने का अन्देशा है)। हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम बहुत बड़े मेहरबान थे, आपने वे बातें भी बताईं जिन्हें हर अ़क़्लमन्द को ख़ुद ही समझ लेना चाहिए लेकिन आपकी शफ़क़त ने यह गवारा न किया कि अपने लोगों के ख़ुद समझने पर एतिमाद फ़रमा लेते, बल्कि हर बात वाज़ेह (स्पष्ट) तौर पर समझा दी। अल्लाह तआ़ला नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर बेशुमार दुरूद व सलाम नाज़िल फ़रमाये, आमीन।

अब हम पहले खाने-पीने के आदाब लिखते हैं, उसके बाद दूसरे आदाब शुरू होंगे।

खाने-पीने के आदाब

फ़रमाया रहमते कायनात जनाब नबी करीम मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि:

हदीसः खाने की बरकत है, खाने से पहले और खाने के बाद वुज़ू करना। (यानी हाथ धोना और कुल्ली करना)। (तिर्मिज़ी)

बिस्मिल्लाह पढ़कर खाओ, दाहिने हाथ से खाओ, और अपने पास से खाओ, (यानी बरतन के चारों तरफ़ हाथ न मारो, अपनी तरफ़ से खाओ)।
(बुख़ारी व मुस्लिम)

बायें हाथ से हरगिज़ न खाओ न पियो, क्योंकि बायें हाथ से शैतान खाता-पीता है। (मुस्लिम)

जो शख़्स जिस बरतन में खाना खाए फिर उसे साफ़ करे तो बरतन उसके लिये बख़्शिश की दुआ करता है। (तिर्मिज़ी)

जब तुम्हारे हाथ से लुक़मा गिर जाए तो जो (तिनका वग़ैरह) लग जाए तो उसको हटाकर लुक़मा खा लो, और शैतान के लिये मत छोड़ो।

जब खाने से फ़ारिग़ हो जाओ तो हाथ धोने से पहले अपनी उंगलियाँ चाट लो, तुम्हें मालूम नहीं कि खाने के कौनसे हिस्से में बरकत है। (मुस्लिम)

बरतन के दरमियान से न खाओ बल्कि किनारे से खाओ क्योंकि दरमियान में बरकत नाज़िल होती है। (तिर्मिज़ी)

आपस में एक साथ मिलकर खाओ और अल्लाह का नाम लेकर खाओ क्योंकि इसमें तुम्हारे लिये बरकत होगी (अबू दाऊद)

जब खाना खाने लगो तो जूते उतार दो, इससे तुम्हारे क़दमों को आराम मिलेगा। (दारमी)

ऊँट की तरह एक साँस में पानी मत पियो बल्कि दो या तीन साँस में पियो।

और जब पीने लगो तो बिस्मिल्लाह कहो और जब पीकर मुँह से बरतन हटाओ तो अल्हम्दु लिल्लाह कहो। (तिर्मिज़ी)

जो शख़्स (पानी वग़ैरह कोई चीज़) पिलाने वाला हो वह सबसे आख़िर में खुद पीने वाला बने। (मुस्लिम)

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में एक बार खाना लाया गया, आपने असमा बिन्ते यज़ीद रज़ियल्लाहु अन्हा से खाने को फ़रमाया, उन्होंने कहा इस वक़्त ख़्वाहिश नहीं है, आपने फ़रमाया भूख और झूठ को जमा न करो। (इब्ने माजा) यानी भूख होने के बावजूद यह न कहो

कि ख़्वाहिश नहीं है।

जब शोरबा पकाओ तो उसमें पानी ज़्यादा डाल दो और उसमें से पड़ोसियों का ख़्याल कर लो। (मुस्लिम)

यानी उनको भी हदिये के (तोहफ़े और देने की चीज़ के) तौर पर सालन भेज दो, तुम्हारे पानी बढ़ा देने से पड़ोसियों को सालन मिल सकता है।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मेज़ पर और छोटी-छोटी पियालियों में खाना नहीं खाया। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और आपके सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम दस्तरख़्वान पर खाते थे। (बुख़ारी शरीफ़)

हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि एक आदमी का खाना दो आदमियों को और दो आदमियों का चार आदमियों को और चार आदमियों का आठ आदमियों को काफ़ी हो जाता है। (मुस्लिम)

यानी इस तरह काम चल सकता है और गुज़ारा हो सकता है। किसी मेहमान या ज़रूरतमन्द के आने से तंगदिल न हों, ख़ुशी के साथ शरीक कर लिया करें।

अगर कुछ लोग मिलकर खजूरें खा रहे हों तो उनके बारे में नबी करीम सल्ल० ने फ़रमाया कि कोई शख़्स एक लुक़मे में दो खजूरें न ले जब तक कि अपने साथियों से इजाज़त न ले ले। (बुख़ारी मुस्लिम)

खजूरों की तरह और कोई चीज़ मिलकर खा रहे हों तो उसका भी यही हुक्म है।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स प्याज़ खाये तो (बदबू जाने तक) मस्जिद से अलग रहे, या फ़रमाया कि अपने घर में बैठा रहे। (बुख़ारी व मुस्लिम)

खाना शुरू करते वक़्त बिस्मिल्लाह पढ़े, अगर शुरू में भूल जाये तो याद आने पर "बिस्मिल्लाहि अव्व-लहू व आख़ि-रहू" पढ़ ले। (तिर्मिज़ी)

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिस शख़्स ने इस हाल में रात गुज़ारी कि उसके हाथ में कोई चीज़ (चिकनाई वग़ैरह) लगी हो जिसको धोया न हो, और फिर उसकी वजह से कोई तकलीफ़ पहुँचे (जैसे ज़हरीला जानवर काट ले) तो यह शख़्स अपने नफ़्स के अलावा हरगिज़ किसी को मलामत न करे। (तिर्मिज़ी)

क्योंकि उस शख़्स को अपनी ही सुस्ती व ग़फ़लत की वजह से तकलीफ़

पहुँची।

एक बार हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पुरानी खजूरें खा रहे थे और उनमें से कीड़े ढूँढकर निकालते जाते थे। (अबू दाऊद)

मालूम हुआ कि कीड़ों के साथ खजूर या कोई फल या दाने वग़ैरह खाना जायज़ नहीं।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब मक्खी तुम में से किसी के बरतन में गिर जाए (तो जो कुछ बरतन में है, जैसे शोरबा दूध चाय वग़ैरह) उसमें मक्खी को पूरी तरह डूबो दे, फिर उसको फैंक दे, क्योंकि उसके एक बाज़ू (पर) में शिफ़ा है और एक बाज़ू में बीमारी है। (बुख़ारी)

एक रिवायत में है कि उसके एक बाज़ू (पर) में ज़हर है और दूसरे में शिफ़ा है, और वह ज़हर वाले बाज़ू को पहले डालती है और शिफ़ा वाले को हटाकर रखती है। (शरह सुन्नत)

दूसरी रिवायत में है कि वह अपने बीमारी वाले बाज़ू के ज़रिये बचाव करती है, (यानी शिफ़ा वाले बाज़ू को महफ़ूज़ रखना चाहती है) लिहाज़ा उसको पूरी तरह डुबो दो (ताकि बीमारी का इलाज भी हो जाए)। (अबू दाऊद)

फ़ायदाः हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह बीमारी का इलाज बताया है और उस खाने को खा लेने का हुक्म नहीं दिया है। अगर तबीयत न चाहे तो न खाए।

आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ज़्यादा खाने को पसन्द नहीं फ़रमाया, और फ़रमाया कि ज़्यादा खाना बुरा है और यह एक तरह की बीमारी है। यानी उस शख़्स के पीछे ऐसी इल्लत लगी हुई है जिससे उसे हर जगह तकलीफ़ होगी और लोग बुरी नज़र से देखेंगे। (बैहक़ी)

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तीन उंगलियों से खाते थे और पौंछने से पहले हाथ चाट लिया करते थे। (मुस्लिम)

जब कोई खाना बहुत गर्म हो तो उसे ढाँककर रख दे। यहाँ तक कि उसकी भाप की तेज़ी ख़त्म हो जाए। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः ऐसा करना बरकत के लिये बहुत बड़ी चीज़ है। (दारमी)

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु का बयान है कि मैंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को देखा कि उकड़ूँ बैठे हुए खजूरें खा रहे हैं। (बुख़ारी)

दोनों पिंडलियाँ खड़ी करके पन्जों के बल बैठने को उकड़ूँ बैठना कहते हैं।

एक मजलिस में खाने वाले ज़्यादा हो गये तो हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम दोज़ानू (यानी जैसे नमाज़ में बैठते हैं) होकर बैठ गये। (क्योंकि इसमें इन्किसारी भी है) और मजलिस वालों की रियायत भी, इससे उनके लिये जगह निकल आती है।-(अबू दाऊद)

दस्तरख़ान उठाने से पहले न उठो।

अगर किसी दूसरे शख़्स के साथ खाना खा रहे हो तो जब तक वह खाना खाता रहे अपना हाथ मत रोको अगरचे पेट भर चुका हो, ताकि उसे शर्मिन्दगी न हो। अगर खाना छोड़ना ही हो तो उज़्र कर दो। (इब्ने माजा)

मशकीज़े में मुँह लगाकर मत पियो। (बुख़ारी)

लोटे घड़े या सुराही बोतल वग़ैरह को मुँह लगाकर पीना भी इसी मुमानअ़त (मनाही) में दाख़िल है।

बरतन में न साँस लो न फूँक मारो। (तिर्मिज़ी)

खड़े होकर मत पियो (मुस्लिम) (आबे ज़मज़म और वुज़ू से बचा हुआ पानी इस हुक्म से ख़ारिज है)।

बरतन में फटी-टूटी जगह मुँह लगाकर न पियो। (अबू दाऊद)

हमारे प्यारे रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम टेक लगाकर नहीं खाते थे। (बुख़ारी) क्योंकि यह तकब्बुर की बात है।

नबी करीम सल्ल० ने कभी किसी खाने को ऐब नहीं लगाया, दिल को भाया तो खा लिया, पसन्द न आया तो छोड़ दिया। (बुख़ारी)

हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने बयान फ़रमाया कि नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हमें इस बात से मना फ़रमाया कि हम सोने-चाँदी के बरतन में खायें-पियें। (बुख़ारी व मुस्लिम)

पहनने और ओढ़ने के आदाब

हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिस शख़्स ने अपने तहबन्द को तकब्बुर के तौर पर इतारते हुए घसीटा, अल्लाह तआ़ला क़ियामत के दिन उसकी तरफ़ रहमत की नज़र से न देखेंगे।

(बुख़ारी व मुस्लिम)

आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि टख़्ने से नीचे जो तहबन्द (पाजामा वग़ैरह) का हिस्सा होगा, वह दोज़ख़ में होगा। (बुख़ारी)

यानी टख़्ने से नीचे कपड़ा पहनना दोज़ख़ में लेजाने का सबब है। यह मर्दों के लिए है, औरतें टख़्ने ढके रहें, अलबत्ता इतना नीचा कपड़ा औरतें भी न पहनें जो ज़मीन पर घिसटता हो।

हज़रत असमा बिन्ते यज़ीद रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की आस्तीन नीचे तक थी। (तिर्मिज़ी)

हज़रत सुमरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि सफ़ेद कपड़े पहनो, क्योंकि ये साफ़-सुथरे और पाकीज़ा होते हैं। (यह मर्दों को तवज्जोह दिलाई गयी है) और सफ़ेद कपड़ों में अपने मुर्दों को कफ़न दो। (तिर्मिज़ी) हज़रत रकाना रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि हमारे और मुश्रिकों के दरमियान टोपियों पर पगड़ी होने का फ़र्क है। (तिर्मिज़ी) यानी अगर पगड़ी बाँधे तो उसके नीचे टोपी भी होनी चाहिये। (मर्द इसका ख़्याल रखें)।

हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जब पगड़ी बाँधते थे तो पगड़ी का शमला (पगड़ी का सिरा) मोंढों के दरमियान डाल देते थे। (तिर्मिज़ी) एक बार सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत अब्दुर्रहमान बिन औफ़ रज़ियल्लाहु अन्हु को पगड़ी पहनायी तो उसका किनारा सामने की तरफ़ और दूसरा किनारा पीछे की तरफ़ डाल दिया। (अबू दाऊद)

यानी पगड़ी के दोनों तरफ़ एक-एक शमला कर दिया, और एक को आगे और एक को पीछे डाल दिया। पगड़ी के मसाइल मर्दों से मुताल्लिक हैं।

और फ़रमाया रहमते आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने: खाओ पियो और सदका करो, और पहनो (लेकिन) इस हद तक कि फ़ुज़ूलख़र्ची और ग़रूर (यानी शैख़ीपन) की मिलावट न हो। (मुसनद अहमद)

यह भी फ़रमाया कि मेरी उम्मत की औरतों के लिए सोना और रेशम (पहनना) हलाल है और मर्दों पर हराम कर दिया गया। (तिर्मिज़ी) और फ़रमाया कि जिसने (दुनिया में) नाम-नमूद का लिबास पहना, अल्लाह तआला उसे कियामत के दिन ज़िल्लत का लिबास पहनायेगा (मुस्नद अहमद)

और इरशाद फ़रमाया कि जब तुम (कपड़े) पहनो और जब तुम वुज़ू करो तो दाहिनी तरफ़ से शुरू किया करो (अबू दाऊद) मर्द औरत का और

औरत मर्द का लिबास न पहने, क्योंकि इससे ख़ुदा की लानत होती है।
(अबू दाऊद)

जूता पहनते वक़्त पहले दाहिने पाँव में जूता डालो, और जब जूता उतारो तो पहले बायाँ पाँव निकालो। (बुख़ारी) एक जूता पहनकर न चलो, दोनों जूते उतार दो या दोनों पहन लो। (बुख़ारी)

मेहमान के मुताल्लिक़ आदाब

फ़रमाया नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि:

जो शख़्स अल्लाह और आख़िरत पर ईमान रखता हो उसे चाहिये कि मेहमान की इज़्ज़त करे। मेहमान के लिए अच्छे यानी पुर-तकल्लुफ़ खाने का एहतिमाम एक दिन एक रात होना चाहिये, और मेहमानी तीन दिन तक है, उसके बाद सदक़ा होगा।

और मेहमान के लिए यह हलाल नहीं कि मेज़बान के पास इतना ठहरे कि वह तंग हो जाये। (यह सब बुख़ारी शरीफ़ से लिया गया है)।

जिसकी दावत की गयी और उसने कबूल न की तो उसने अल्लाह तआ़ला की और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नाफ़रमानी की। और जो शख़्स बग़ैर दावत के (खाने के लिए) दाख़िल हो गया, वह चोर बनकर अन्दर गया और लुटेरा बनकर निकला। (अबू दाऊद)

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह भी इरशाद फ़रमाया कि सुन्नत तरीक़ा यह है कि मर्द (रुख़्सत करते वक़्त) मेहमान के साथ घर के दरवाज़े तक निकले। (इब्ने माजा)

सलाम के आदाब

फ़रमाया सय्यिदुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि:

अल्लाह तआ़ला से सबसे ज़्यादा क़रीब वह शख़्स है जो (दूसरे का इन्तिज़ार किये बग़ैर) ख़ुद सलाम में पहल करे। (बुख़ारी)

इस्लाम का बेहतरीन काम यह है कि खाना खिलाओ और हर मुसलमान को सलाम करो, जान-पहचान हो या न हो। (बुख़ारी) औ़रतें औ़रतों में इसका लिहाज़ रखें कि सलाम में जान-पहचान को मेयार न बनायें बल्कि मुसलमान होने को देखें। और मर्द, मर्दों में इसका ख़्याल करें। बात करने से पहले सलाम किया जाये। (तिर्मिज़ी)

सवार पैदल चलने वाले को और पैदल चलने वाला बैठे हुए को, और थोड़ी तायदाद वाली जमाअत बड़ी जमाअत को, और छोटा बड़े को सलाम करे। (बुख़ारी)

यहूदी व ईसाई को सलाम न करो। (मुस्लिम)

हिन्दू सिख यहूदी ईसाई और मिरज़ाई सब काफ़िर इसी हुक्म में हैं।

जब मुलाक़ात के वक़्त अपने भाई को सलाम कर लिया और (ज़रा देर को) दरमियान में दरख़्त या पत्थर या दीवार की आड़ आ गयी, फिर उसी वक़्त दोबारा मुलाक़ात हो गयी तो दोबारा सलाम करे। (अबू दाऊद)

यानी यह न सोचे कि अभी आधा मिनट ही तो सलाम को हुआ है, इतनी जल्दी दूसरा सलाम क्यों करूँ।

जब किसी घर में दाख़िल हो तो वहाँ के लोगों को सलाम करे। और जब वहाँ से जाने लगे तो उनको सलाम के साथ रुख़्सत करे। (बैहक़ी)

जब तुम अपने घर में दाख़िल हो तो घर वालों को सलाम करो, इससे तुम्हारे और घर वालों के लिए बरकत होगी। (तिर्मिज़ी)

जब कोई शख़्स किसी का सलाम लाये तो यूँ जवाब दो:

'अ़लै-क व अ़लैहिस्सलाम' (अबू दाऊद)

मरीज़ की इयादत (बीमारी का हाल पूछने) का मुकम्मल तरीक़ा यह है कि उसकी पेशानी (माथे) पर हाथ रख दिया जाये। और तुम्हारे आपस में सलाम की मुकम्मल सूरत यह है कि मुसाफ़ा कर लिया जाये। (अहमद)

जब दो मुसलमान मुलाक़ात के वक़्त आपस में मुसाफ़ा करें तो जुदा होने से पहले ज़रूर उनकी बख़्शिश कर दी जाती है। (तिर्मिज़ी)

मजलिस के आदाब

फ़रमाया नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि:

मजलिसें अमानत के साथ हैं। (यानी मजलिस में जो बातें सुने उनका दूसरी जगह बयान करना अमानतदारी के ख़िलाफ़ और गुनाह है। (अबू दाऊद)

किसी को उसकी जगह से उठाकर ख़ुद न बैठ जाओ। और बैठने वाले को चाहिये कि आने वालों को जगह देने के लिए जगह बनाने की कोशिश करें। (बुख़ारी) जब मजलिस में तीन आदमी हों तो एक को छोड़कर दो आदमी आपस में आहिस्ता से बातें न करें, क्योंकि इससे तीसरे को रंज

होगा। (बुख़ारी) किसी ऐसी ज़बान में बातें करना जिसको तीसरा आदमी नहीं जानता वह भी इसी हुक्म में है।

किसी शख़्स के लिए हलाल नहीं कि वह दो शख़्सों के दरमियान बग़ैर उनकी इजाज़त के बैठ जाये। (तिर्मिज़ी) मजलिस में सब लोग मुतफ़र्रिक़ (यानी बिखर कर) न बैठें बल्कि मिल-मिलकर बैठें। (अबू दाऊद)

जब कोई मुसलमान भाई तुम्हारे पास आये तो जगह होने के बावजूद उसके इकराम के लिए ज़रा-सा खिसक जाओ। (बैहक़ी)

हर चीज़ का सरदार होता है और मजलिसों की सरदार वह मजलिस है जिसमें क़िब्ले की तरफ़ रुख़ करके बैठा जाये। (तिबरानी) औरतें भी इसका ख़्याल करें, जब कोई औरत मजलिस में आये तो उसके लिए ज़रा-सी खिसक जायें।

छींक और जमाई के आदाब

हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

जब तुम में से किसी को छींक आये तो चाहिये कि 'अल्हम्दु लिल्लाह' (सब तारीफ़ अल्लाह के लिए है) कहे। और अल्हम्दु लिल्लाह सुनने वाला साथी जवाब में 'यर्हमुकल्लाहु' (अल्लाह आप पर रहम करे) कहे। (बुख़ारी) और फिर छींकने वाला 'यहदीकुमुल्लाहु व युस्लिहु बालकुम' (अल्लाह आपको हिदायत दे और आपके हालात सुधार दे) कहे। (बुख़ारी)

फ़ायदाः अगर छींकने वाली औरत हो तो जवाब देने वाला 'क' पर 'छोटी इ' की मात्रा लगाये यानी यूँ कहेः 'यर्हमुकिल्लाहु'।

हमारे प्यारे रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को जब छींक आती थी तो हाथ या कपड़े से चेहरा मुबारक ढाँक लेते थे और छींक की आवाज़ बुलन्द न होने देते थे। (तिर्मिज़ी)

और फ़रमाया हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि जब तुमको जमाई आये तो मुँह पर हाथ रखकर रोक दो, क्योंकि (जमाई के सबब मुँह खुल जाने से) शैतान दाख़िल हो जाता है। (मुस्लिम)

लेटने और सोने के आदाब

फ़रमाया सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने किः

इस तरह चित न लेटो कि एक पाँव दूसरे पाँव पर रखा हुआ हो।

(मुस्लिम) औंधा होकर लेटना अल्लाह को पसन्द नहीं। (तिर्मिज़ी) किसी ऐसी छत पर न सोओ जिस पर (दीवार या जंगला वग़ैरह) कोई रुकावट न हो। (तिर्मिज़ी) जब बिस्तर पर जाने लगो तो उसको झाड़ लो। और वुज़ू की हालत में दाहिनी करवट पर लेट जाओ, और दाहिना हाथ रुख़्सार (गाल) के नीचे रख लो। (बुख़ारी)

बेशक आग तुम्हारी दुश्मन है, लिहाज़ा जब सोने लगो तो उसको बुझा दिया करो। (बुख़ारी)

जब तुम सोने लगो तो चिराग़ बुझा दो। (अबू दाऊद)

फ़रमाया रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने: जब तुम में से कोई शख़्स अपनी नींद से जागे तो हरगिज़ अपना हाथ (पानी वग़ैरह के) बरतन में दाख़िल न करे, यहाँ तक कि उसको तीन बार धो ले, क्योंकि वह नहीं जानता कि रात भर उसका हाथ कहाँ रहा। (बुख़ारी) और यह भी इरशाद फ़रमाया कि जब तुम में से कोई शख़्स नींद से जागने के बाद वुज़ू करने लगे तो तीन बार अपनी नाक साफ़ कर ले क्योंकि शैतान उस (की नाक) के बाँसे में रात गुज़ारता है। (बुख़ारी)

ख़्वाब के आदाब

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि:

जब अपना पसन्दीदा ख़्वाब देखो तो उसी से बयान करो जो तुमसे मुहब्बत रखता है। (बुख़ारी) और जब बुरा ख़्वाब देखो तो तीन बार बाईं तरफ़ थुतकार दो और किसी से बयान न करो, और करवट बदल दो, और तीन बार 'अऊज़ु बिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम' पढ़ो, और उस ख़्वाब की बुराई से पनाह माँगो। ऐसा करने से यह ख़्वाब नुक़सान न देगा। (मुस्लिम)

सफ़र के आदाब

सफ़र को रवाना होते वक़्त चार रकअ़त (नफ़िल नमाज़) पढ़ लेना चाहिये। (मज्मउज़्ज़वाइद)

हमारे प्यारे रसूल सरवरे आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जुमेरात के दिन सफ़र में जाने को पसन्द फ़रमाते थे। (बुख़ारी) और तन्हा सफ़र करने से आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मना फ़रमाया। और इसकी तरग़ीब (प्रेरणा) दी कि कम-से-कम तीन आदमी साथ हों (तिर्मिज़ी, अबू दाऊद) और

चार साथी हों तो बहुत ही अच्छा है। (अबू दाऊद)

और फ़रमाया कि जब सफ़र में तीन आदमी साथ हों तो एक को अमीर बना लें। (अबू दाऊद) और फ़रमाया कि सफ़र में जिसके पास अपनी ज़रूरत से फ़ालतू खाने-पीने की चीज़ें हों तो उन लोगों का ख़्याल करे जिनके पास अपना तोशा न हो। (मुस्लिम)

आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की आदते शरीफ़ा थी कि जब सफ़र से वापस तशरीफ़ लाते तो चाश्त के वक़्त (यानी दिन के क़रीब दस-ग्यारह बजे) मदीना में दाख़िल होते और पहले मस्जिद में जाकर दो रकअतें पढ़ते, फिर (कुछ देर) लोगों की मुलाक़ात के लिए वहीं तशरीफ़ रखते। (बुख़ारी) इस पर मर्द अमल करें।

और फ़रमाया कि सफ़र में अपने साथियों का सरदार वह है जो उनका ख़िदमत-गुज़ार हो। जो शख़्स ख़िदमत में आगे बढ़ गया किसी अमल के ज़रिये उसके साथी उससे आगे नहीं बढ़ सकेंगे। हाँ! अगर कोई शहीद हो जाये तो वह आगे बढ़ जायेगा। (बैहक़ी)

सफ़र में जिन लोगों के पास कुत्ता या घन्टी हो उनके साथ (रहमत के) फ़रिश्ते नहीं होते। (मुस्लिम)

जब बहार के ज़माने में जानवरों पर सफ़र करो तो ऊँटों (और दूसरे जानवरों) को उनका हक़ दे दो जो ज़मीन में हैं। (यानी उनको चराते हुए ले जाओ)। और जब सूखे के दिनों में सफ़र करो (जबकि जंगल में घास-फूँस न हो) तो रफ़्तार में तेज़ी इख़्तियार करो (ताकि जानवर जल्दी मन्ज़िल पर पहुँचकर आराम पा ले। (मुस्लिम)

एक और रिवायत में है कि इससे पहले सफ़र ख़त्म कर दो कि जानवर बिल्कुल बेजान हो जाये। (मुस्लिम) जानवरों की पुश्तों को मिम्बर न बनाओ (यानी उनपर सवार होकर खड़े किये हुए बातें न करो, क्योंकि इससे जानवर को ख़्वाह-मख़्वाह तकलीफ़ होती है। बातें करनी हों तो ज़मीन पर उतर जाओ, जब चलने लगो तो फिर सवार हो जाओ। (अबू दाऊद)

जब मन्ज़िल पर उतरें तो जानवरों के कजावे और चारजामे खोल दें, बाद में नफ़िल नमाज़ में (या किसी और काम में मशग़ूल हों)। सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम का यही अमल था। (अबू दाऊद)

जानवरों के गले में ताँत न डालो (क्योंकि उससे गला कट जाने का

ख़तरा है। (बुख़ारी व मुस्लिम) और जब रात को जंगल में पड़ाव डालो तो रास्ते में ठहरने से परहेज़ करो, क्योंकि रात को तरह-तरह के जानवर और कीड़े-मकोड़े निकलते हैं और रास्ते में फैल जाते हैं। (मुस्लिम)

जब किसी मन्ज़िल पर उतरो तो सब इकट्ठे साथ ठहरो और एक ही जगह रहो, और दूर-दूर पड़ाव न डालो। (अबू दाऊद)

सफ़र अज़ाब का एक टुकड़ा है, तुम्हें नींद से और खाने-पीने से रोकता है, लिहाज़ा जब वह काम पूरा हो जाये जिसके लिए गये थे, जल्द घर वापस आ जाओ। (बुख़ारी व मुस्लिम)

तहारत के आदाब

फ़रमाया नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि जब पाख़ाने में जाओ तो पेशाब की जगह को दाहिने हाथ से न छुओ, और दाहिने हाथ से इस्तिन्जा न करो। (मुस्लिम)

बड़ा इस्तिन्जा पत्थरों (या तीन ढेलों) से करो। (मुस्लिम) उसके बाद पानी से धोओ। (इब्ने माजा) जब पाख़ाने को जाओ तो क़िब्ला-रुख़ होकर या उधर को पुश्त करके न बैठो। (बुख़ारी) जब पेशाब करने का इरादा करो तो उसके लिए (मुनासिब) जगह तलाश करो। (अबू दाऊद) जैसे परदे का ध्यान करो और हवा के रुख़ पर न बैठो। ठहरे हुए पानी में जो जारी न हो पेशाब न करो। (बुख़ारी) जैसे तालाब, हौज़ वग़ैरह। गुस्लख़ाने में पेशाब न करो इससे अकसर वस्वसे (बुरे ख़्यालात और वहम) पैदा होते हैं। (तिर्मिज़ी) किसी सूराख़ में पेशाब न करो। (अबू दाऊद)

पाख़ाना करते हुए आपस में बातें न करो। (मुस्नद अहमद) पानी के घाटों पर, रास्तों में, साये की जगहों में (जहाँ लोग उठते-बैठते हों) पाख़ाना न करो। (अबू दाऊद)

बिस्मिल्लाह कहकर पाख़ाने में दाख़िल हो, क्योंकि बिस्मिल्लाह जिन्नात की आँखों और इनसानों की शर्मगाहों के दरमियान आड़ (पर्दा और रोक) है। (तिर्मिज़ी) लीद और हड्डियों से इस्तिन्जा न करो। (तिर्मिज़ी)

बाज़े वे आदाब जो औरतों और लड़कियों के लिए ख़ास हैं

मर्दों से अ़लैहदा होकर चलें। रास्तों के दरमियान से न गुज़रें, बल्कि किनारों पर चलें। (अबू दाऊद) चाँदी के ज़ेवर से काम चलाना बेहतर है। (अबू दाऊद) जो औरत शान (बड़ाई) ज़ाहिर करने के लिए सोने का ज़ेवर

पहनेगी तो उसको (इसकी वजह से) अज़ाब होगा। (अबू दाऊद) औरतों को अपने हाथों में मेहंदी लगाते रहना चाहिये। (अबू दाऊद)

और यह भी फ़रमाया रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि औरत की ख़ुशबू ऐसी हो जिसका रंग ज़ाहिर न हो और ख़ुशबू न आये। (यानी मामूली ख़ुशबू हो)। (अबू दाऊद)

बारीक कपड़ा न पहने। (अबू दाऊद) अगर दुपट्टा बारीक हो तो उसके नीचे मोटा कपड़ा लगा लें। (अबू दाऊद) बजने वाला ज़ेवर न पहनें। (अबू दाऊद) जो औरतें मर्दों जैसी शक्ल व सूरत इख़्तियार करें उनपर अल्लाह की लानत है। (बुख़ारी)

और फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि हरगिज़ कोई (ना-मेहरम) मर्द किसी औरत के साथ तन्हाई में न रहे, और हरगिज़ कोई औरत सफ़र न करे मगर इस हाल में कि उसके साथ मेहरम हो। (बुख़ारी)

मुतफ़र्रिक़ आदाब

अकड़-अकड़कर इतारते हुए न चलो। (क़ुरआन शरीफ़) कोई मर्द दो औरतों के दरमियान न चले। (अबू दाऊद) अल्लाह तआला को सफ़ाई-सुथराई पसन्द है, लिहाज़ा घरों से बाहर जो जगह ख़ाली पड़ी हैं उनको साफ़ रखा करो। (तिर्मिज़ी) औरतें अन्दर घर में सफ़ाई ख़ुद रखें और बाहर बच्चों से सफ़ाई करा दिया करें। उस घर में (रहमत के) फ़रिश्ते दाख़िल नहीं होते जिसमें कुत्ता या (जानदार की) तस्वीरें हों। (बुख़ारी)

जब किसी का दरवाज़ा खटखटाओ और अन्दर से पूछें कौन है? तो यह न कहो कि मैं हूँ (बल्कि अपना नाम बता दो)। (बुख़ारी) छुपकर किसी की बात न सुनो। (बुख़ारी) जब किसी को ख़त लिखो तो शुरू में अपना नाम लिखो। (अबू दाऊद) जब किसी के घर जाओ तो पहले इजाज़त ले लो, फिर अन्दर जाओ। (बुख़ारी) और इजाज़त से पहले अन्दर नज़र भी न डालो। (अबू दाऊद) तीन बार इजाज़त माँगो, अगर इजाज़त न मिले तो वापस हो जाओ। (बुख़ारी) और इजाज़त लेते वक़्त दरवाज़े के सामने खड़े न हो, बल्कि दायें या बायें खड़े रहो। (अबू दाऊद) अपनी वालिदा के पास जाना हो तब भी इजाज़त लेकर जाओ। (मुवत्ता मालिक) किसी की चीज़ मज़ाक़ में लेकर न चल दो। (तिर्मिज़ी) नंगी तलवार (जो मयान से बाहर हो) दूसरे शख़्स के हाथ में न दो। (तिर्मिज़ी) (इसी तरह चाक़ू, छुरी वग़ैरह खुली हुई किसी को न

पकड़ाओ। अगर ऐसा करना पड़े तो उसके हाथ में दस्ता दो, फल्का अपने हाथ में रखो, और ख़ुद भी एहतियात से पकड़ो)। ज़माने को बुरा मत कहो, क्योंकि इसका उलटफेर अल्लाह ही के कब्ज़े में है। (मुस्लिम) हवा को बुरा मत कहो। (मुस्लिम) जब छोटे बच्चे की ज़बान चलने लगे तो उससे ला इला-ह इल्लल्लाहु कहलाओ। (हिस्ने हसीन) और सात साल का हो जाये तो उसे नमाज़ सिखाओ और नमाज़ पढ़ने का हुक्म दो। और जब औलाद दस साल की हो जाये तो उनको नमाज़ न पढ़ने पर मारो और उनके बिस्तर अलग-अलग कर दो। (बुख़ारी) जब शाम का वक़्त हो जाये तो अपने बच्चों को (बाहर निकलने से) रोक लो, क्योंकि उस वक़्त शयातीन फैल जाते हैं। फिर जब रात का शुरू का कुछ वक़्त गुज़र जाये तो बच्चों को बाहर जाने की इजाज़त दे दो, और बिस्मिल्लाह पढ़कर दरवाज़े बन्द कर दो, क्योंकि शैतान बन्द दरवाज़े को नहीं खोलता। और बिस्मिल्लाह पढ़कर मश्कीज़ों के मुँह तस्मों से बाँध दो। और अल्लाह का नाम लेकर यानी बिस्मिल्लाह पढ़कर अपने बरतनों को ढाँक दो। अगर ढाँकने को कुछ भी न मिले तो कम-से-कम बरतन के ऊपर चौड़ाई में एक लकड़ी ही रख दो। (बुख़ारी व मुस्लिम)

एक रिवायत में बरतनों के ढाँकने और मश्कीज़ों का तस्मा लगाने की वजह यह इरशाद फ़रमायी कि साल भर में एक रात ऐसी होती है जिसमें वबा नाज़िल होती है। (यानी उमूमी बीमारी ताऊन वग़ैरह) यह वबा जिस ऐसे बरतन पर गुज़रती है जिस पर ढक्कन न हो ऐसे मश्कीज़ों पर जो तस्मे से बन्धा हुआ न हो तो उस वबा का कुछ हिस्सा ज़रूर उस बरतन और मश्कीज़े में नाज़िल हो जाता है। (मुस्लिम)

जब रात को चलना-फिरना बन्द हो जाये (यानी गली-कूचों में आवा-जाही बन्द हो जाये) तो ऐसे वक़्त में बाहर कम निकलो, क्योंकि अल्लाह तआ़ला (इनसानों के अलावा) अपनी दूसरी मख़्लूक़ में से जिसे चाहते हैं छोड़ देते हैं। (शरहे सुन्नत) (और हक़ीक़त यह है कि अल्लाह ही सबसे ज़्यादा जानने वाला है।

इन आदाब को ख़ूब याद कर लो और अ़मल में लाओ। बच्चों को याद कराओ, और उनसे अ़मल कराओ। खाते-पीते और सोते-जागते और उठते-बैठते वक़्त और हर मौक़े पर उनसे पूछगछ करो कि फ़लाँ चीज़ पर अ़मल किया या नहीं? अल्लाह तआ़ला हम सब को क़ुरआन व हदीस के बताये हुए आदाब पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ इनायत फ़रमाए। आमीन।

मुसलमान औ़रतों से

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बातें

* औ़रतों के लिए *

ज़बान की हिफ़ाज़त करें

लेखक

हज़रत मौलाना आ़शिक़ इलाही साहिब बुलन्द शहरी

रहमतुल्लाहि अ़लैहि

अनुवादक: मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा. लि.)

422, मटिया महल, उर्दू मार्किट, जामा मस्जिद

देहली-110006

ज़बान की हिफ़ाज़त करें

ज़बान के गुनाहों की तफ़सील और उनसे ज़बान की हिफ़ाज़त

हदीसः (194) हज़रत सुहैल बिन सईद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो शख़्स मेरे लिए इस चीज़ (की हिफ़ाज़त) का ज़ामिन (गारन्टी लेने वाला) बन जाये जो उसके दोनों जबड़ों के दरमियान है (यानी ज़बान) और उसकी दोनों रानों के दरमियान है (यानी शर्मगाह) तो मैं उसके लिए जन्नत का ज़ामिन हूँ। (मिश्कात शरीफ पेज 411)

तशरीहः इस हदीस पाक से मालूम हुआ कि ज़बान और शर्मगाह की हिफ़ाज़त करना बहुत ज़रूरी है। जो शख़्स इनकी हिफ़ाज़त करे उसे हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जन्नत के दाख़िले की ज़मानत दी है। एक दूसरी हदीस में है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रात सहाबा किराम रज़ियल्लहु अन्हुम से फ़रमाया कि क्या तुम जानते हो लोगों को जन्नत में क्या चीज़ सबसे ज़्यादा दाख़िल कराने वाली है? (फिर ख़ुद ही जवाब दिया कि) अल्लाह से डरना और अच्छे अख़्लाक़ इख़्तियार करना। (सबसे ज़्यादा जन्नत में दाख़िल कराने वाली चीज़ें हैं)। फिर फ़रमाया कि क्या तुम जानते हो कि लोगों को दोज़ख़ में सबसे ज़्यादा दाख़िल कराने वाली क्या चीज़ है? (उसके बाद ख़ुद ही जवाब दिया कि) सबसे ज़्यादा दोज़ख़ में दाख़िल कराने वाली चीज़ मुँह और शर्मगाह है। (मिश्कात)

मुँह यानी ज़बान और शर्मगाह के गुनाह बहुत ख़तरनाक हैं। इन दोनों की हिफ़ाज़त न करने से दोज़ख़ के दाख़िले का सामान बन जाता है और दोज़ख़ के दाख़िले का ज़्यादातर सबब इन्हीं दो चीज़ों के आमाल होते हैं। अल्लाह तआला हमारी हिफ़ाज़त फ़रमाये।

बहुत-से लोग शर्मगाह की हिफ़ाज़त तो कर लेते हैं मगर ज़बान की हिफ़ाज़त में बहुत कोताही और कम-हिम्मती दिखाते हैं। इसलिए ज़रूरी मालूम हुआ कि ज़बान की हिफ़ाज़त के मौज़ू (विषय) को किसी क़द्र तफ़सील से लिखा जाये।

इनसान के आज़ा (यानी बदन के हिस्सों और अंगों) में ज़बान भी है। लेकिन इसको दूसरे जिस्मानी अंगों के मुकाबले में ख़ास किस्म की अहमियत हासिल है। इनसान के जिस्मानी अंगों में ज़बान सबसे अच्छी चीज़ है और सबसे बुरी चीज़ भी है। अल्लाह का नाम ज़बान से लिया जाता है, इस्लाम का कलिमा इसी से पढ़ा जाता है, कुरआन की तिलावत इसी से होती है, ख़ैर की दावत इसी से दी जाती है। और बदन के दूसरे अंगों से जो नेकियाँ होती हैं उनमें भी उमूमन किसी न किसी तरह ज़बान की शिरकत होती है।

और इसके विपरीत (यानी इसका एक दूसरा रुख़ यह भी है कि) ज़बान ही से कुफ़्र का कलिमा निकलता है, और शिर्क के अलफ़ाज़ भी इसी से निकलते हैं। और इसी से गाली दी जाती है, लानत की जाती है, ग़ीबत की जाती है, चुग़ली होती है, झूठ बोला जाता है, झूठी कसम खायी जाती है, झूठी गवाही दी जाती है।

पस ज़बान की हिफ़ाज़त की बहुत ज़्यादा ज़रूरत है। हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है कि बेशक बन्दा कभी अल्लाह की रज़ामन्दी का कोई ऐसा कलिमा कह देता है कि जिसकी तरफ़ उसे ध्यान भी नहीं होता, और उसकी वजह से अल्लाह तआला उसके बहुत-से दरजे बुलन्द फ़रमा देता है। और बेशक बन्दा कभी अल्लाह की नाराज़गी का कोई ऐसा कलिमा कह गुज़रता है कि उसकी तरफ़ उसका ध्यान भी नहीं होता और उसकी वजह से दोज़ख़ में गिरता चला जाता है। (बुख़ारी)

एक हदीस में इरशाद है कि इनसान अपनी ज़बान की वजह से उससे भी ज़्यादा फिसल जाता है जितना अपने कदम से फिसलता है। (शुअबुल ईमान)

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब सुबह होती है तो जिस्म के सब अंग आजिज़ी के साथ ज़बान से कहते हैं कि तू हमारे बारे में अल्लाह से डर, क्योंकि हम तुझसे मुताल्लिक़ हैं (यानी हमारी ख़ैर व आफ़ियत और दुख-तकलीफ़ तुझसे मुताल्लिक़ है)। पस अगर तू ठीक रही तो हम ठीक रहेंगे, और अगर तुझमें कजी (यानी टेढ़पन) आ गयी तो हममें भी कजी आ जायेगी। (तिर्मिज़ी)

'कजी' टेढ़ेपन को कहते हैं। मतलब यह है कि तू टेढ़ी चली और तूने बेराही इख़्तियार की तो हमारी भी ख़ैर नहीं। देखो गाली ज़बान देती है और

उसके बदले जूता सर पर पड़ता है।

हज़रत उकबा बिन आमिर रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान फ़रमाया कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से मुलाकात की और अर्ज़ किया कि नजात की क्या सूरत है? आपने फ़रमाया कि ज़बान को काबू में रखो, और अपने घर में अपनी जगह रखो। (यानी ज़्यादातर अपने घर में ही रहो, बाहर कम निकलो, क्योंकि घर के बाहर बहुत-से फ़ितने हैं)। और अपने गुनाहों पर रोया करो। (तिर्मिज़ी)

हज़रत सुफ़ियान बिन अब्दुल्लाह सकफ़ी रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि मैंने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! आपको मुझसे सबसे ज़्यादा किस चीज़ का ख़ौफ़ है? आपने अपनी ज़बान मुबारक पकड़ी और फ़रमाया कि सबसे ज़्यादा इसका ख़ौफ़ है। (तिर्मिज़ी)

इन हदीसों से मालूम हुआ कि ज़बान की बहुत ज़्यादा हिफ़ाज़त की ज़रूरत है। मोमिन बन्दों पर लाज़िम है कि अपनी ज़बान को हर वक़्त ज़िक्र व तिलावत में मशग़ूल रखें और ज़रूरत के मुताबिक़ ही थोड़ी बहुत दुनियावी ज़रूरतों के लिए भी बात कर लिया करें।

एक हदीस में इरशाद है कि अल्लाह के ज़िक्र के अलावा ज़्यादा मत बोला करो, क्योंकि अल्लाह के ज़िक्र के अलावा ज़्यादा बोलना दिल में सख़्ती पैदा होने का सबब है। और अल्लाह से सबसे ज़्यादा दूर वही शख़्स है जिसका दिल सख़्त हो। (तिर्मिज़ी)

एक और हदीस में यह फ़रमाया कि इनसान की हर बात उसके लिए वबाल है, नफ़ा देने वाली नहीं है, सिवाय इसके कि नेकियों का हुक्म दे या बुराइयों से रोके, या अल्लाह का ज़िक्र करे। (तिर्मिज़ी)

इससे मालूम हुआ कि जिस बात के करने में गुनाह नहीं है और सवाब भी नहीं, जिसको 'मुबाह कलाम' कहते हैं, उससे भी परहेज़ करना चाहिये, क्योंकि वह भी वबाल का सबब है। और वजह इसकी यह है कि जितनी देर में वह बात की है उतनी देर में ज़िक्र और तिलावत और दुरूद शरीफ़ में लगकर जो सवाब और बुलन्द दरजे हासिल हो सकते थे उनसे मेहरूमी हो गयी। दूसरा नुक़सान यह हुआ कि अल्लाह के ज़िक्र के अलावा ज़्यादा बोलने से दिल में सख़्ती आ जाती है, और तजुर्बा किया गया है कि इसकी वजह से दिल की नूरानियत ख़त्म हो जाती है। और यह भी तजुर्बे की बात है कि

ज़्यादा बोलने वाला अगर जायज़ बात भी कर रहा हो तो बोलते-बोलते गुनाह में मुब्तला हो जाता है। यानी उसकी ज़बान से थोड़ी ही देर में ऐसी बातें निकलनी शुरू हो जाती हैं जो गुनाह की बातें होती हैं। जैसे कोई झूठी बात निकल जाती है। और यह तो बहुत ज़्यादा होता है कि बातें करते-करते ख़्वाह-मख़्वाह किसी की ग़ीबत शुरू हो जाती है। लिहाज़ा ख़ैरियत इसी में है कि इनसान ख़ामोश रहे, या अल्लाह का ज़िक्र करे।

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि एक सहाबी की वफ़ात हो गयी तो एक शख़्स ने कहाः तुझे जन्नत की ख़ुशख़बरी है। यह सुनकर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि क्या तुम जन्नत की ख़ुशख़बरी दे रहे हो? हालाँकि तुम्हें मालूम नहीं कि उसने कोई बेफ़ायदा बात की होगी, या ऐसी चीज़ ख़र्च करने से कंजूसी की होगी जिसके ख़र्च करने से नुक़सान नहीं होता। (तिर्मिज़ी) जैसे दीन का इल्म सिखा देना, ज़कात देना वग़ैरह।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

हदीसः जो ख़ामोश रहा उसने नजात पाई। (बुख़ारी)

यानी दुनिया व आख़िरत में उन आफ़तों और मुसीबतों से महफ़ूज़ रहा जो ज़बान से मुताल्लिक़ (सम्बन्धित) हैं।

एक हदीस में इरशाद हैः

हदीसः जो शख़्स अल्लाह पर और आख़िरत के दिन पर ईमान रखता है, उसे चाहिये कि ख़ैर की बात करे (इसमें हर वह नेक बात आ गयी जिसमें सवाब हो) या ख़ामोश रहे। (बुख़ारी व मुस्लिम)

हज़रत इमरान बिन हुतान रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान फ़रमाया कि मैं अबूज़र रज़ियल्लाहु अन्हु की ख़िदमत में आया, वह मस्जिद में बिल्कुल तन्हा बैठे हुए थे। मैंने अर्ज़ किया ऐ अबूज़र! यह तन्हाई कैसी है? उन्होंने फ़रमाया कि मैंने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से सुना है कि तन्हाई बुरे हमनशीन (यानी साथ के बैठने वाले बुरे शख़्स से) बेहतर है, और नेक हमनशीन तन्हाई से बेहतर है, और ख़ैर की बातें करना ख़ामोश रहने से बेहतर है और ख़ामोश रहना बुरी बातें ज़बान से निकालने से बेहतर है। (क्योंकि ख़ामोशी पर पकड़ नहीं है हाँ! मगर यह कि किसी वाजिब कलाम से

गुरेज़ किया हो)। (मिश्कात)

इन रिवायतों और हदीसों के जान लेने के बाद समझ लेना चाहिये कि ज़बान की आफ़तें और मुहलिकात (यानी इनसान को बरबाद करने वाली चीज़ें) बहुत ज़्यादा हैं। बहुत-से लोगों को बेजा बोलने की आदत हो जाती है, ख़्वाह-मख़्वाह झक-झक करते हैं, और दुनिया भर के क़िस्सों और ऐसी बातों में अपनी ज़बान को इस्तेमाल करते हैं जिनमें अपना कोई नफ़ा दुनिया व आख़िरत का नहीं होता है, बल्कि बातें करते-करते बड़े-बड़े गुनाहों में मुब्तला हो जाते हैं। ज़बान की आफ़तें बहुत हैं। हम उनमें से चन्द चीज़ों पर रोशनी डालना चाहते हैं। पहले उन चीज़ों को सूची के तौर पर लिख देते हैं, फिर इन्शा-अल्लाह तफ़सील से लिखेंगे।

ज़बान की आफ़तों में ये चीज़ें आती हैं:

(1) झूठ बोलना (2) लानत करना (3) चुग़ली करना (4) गाली देना (5) ग़ीबत करना (6) किसी का मज़ाक़ उड़ाना (7) झूठा वायदा करना (8) झूठी क़सम खाना (9) झूठी गवाही देना (10) दूसरों को हंसाने के लिए बातें करना (11) गाना गाना (12) किसी के मुँह पर तारीफ़ करना (13) झूठी तारीफ़ करना (14) काफ़िर या फ़ासिक़ की तारीफ़ करना (15) झगड़ा करना (16) अश्लील और गन्दी बातें करना (17) किसी मुसलमान को काफ़िर कहना (18) किसी की मुसीबत पर ख़ुशी ज़ाहिर करना (19) किसी की नक़ल उतारना (20) ताना मारना।

इन सब चीज़ों के मुताल्लिक़ हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इरशादात नक़ल किये जाते हैं।

झूठ का वबाल और फ़रिश्तों को उससे नफ़रत

हदीसः (195) हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब बन्दा झूठ बोलता है तो फ़रिश्ता उसकी बात की बदबू की वजह से एक मील दूर चला जाता है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 413)

तशरीहः इस हदीस से झूठ की सख़्त बुराई मालूम हुई और पता चला कि फ़रिश्तों को झूठ से बहुत ज़्यादा नफ़रत है। और उनको झूठ से ऐसी घिन आती है कि जैसे ही किसी के मुँह से झूठ निकला फ़रिश्ता वहाँ से चल देता

है और एक मील तक चला जाता है। ध्यान रहे कि इससे आमाल लिखने वाले फ़रिश्तों के अ़लावा दूसरे फ़रिश्ते मुराद हैं। नागवारी और नफ़रत तो सब ही फ़रिश्तों को होती है, लेकिन जो फ़रिश्ते आमाल लिखने पर मामूर (मुक़र्रर) हैं वे मजबूरन नागवारी को बरदाश्त करते हैं। अल्लाह की प्यारी मख़्लूक़ को तकलीफ़ पहुँचाना कितना बुरा अ़मल है। इसको ख़ूब समझ लो। और ऊपर से झूठ का गुनाह है जो इसके अ़लावा है।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि तुम सच को लाज़िम पकड़ो, क्योंकि सच नेकी की राह दिखाता है और नेकी जन्नत की राह बताती है। और इनसान सच बोलता रहता है और सच बोलने का ख़ूब ध्यान रखता है यहाँ तक कि अल्लाह के नज़दीक सिद्दीक़ (यानी बहुत सच्चाई वाला) लिख दिया जाता है। फिर फ़रमाया कि झूठ से बचो, क्योंकि झूठ फ़जूर (यानी गुनाहों में घुस जाने) की राह बताता है, और फ़जूर दोज़ख़ की राह दिखाता है और इनसान बराबर झूठ बोलता रहता है और झूठ बोलने का ध्यान रखता है। (यानी जान-बूझकर झूठ बोलता है और झूठ के मौक़े सोचता रहता है) यहाँ तक कि अल्लाह के नज़दीक बहुत बड़ा झूठा लिख दिया जाता है। (बुख़ारी व मुस्लिम)

पस मोमिन बन्दों पर लाज़िम है कि हमेशा सच बोलें, और सच ही को इख़्तियार करें। बच्चों को सच ही सिखायें, और सच ही की आ़दत डालें। उनको बहलाने के लिए भी जो कोई वायदा करें वह वायदा भी सच्चा होना चाहिये।

बच्चों को मनाने के लिए झूठ बोलने की मनाही

हदीसः (196) हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन आ़मिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने बयान फ़रमाया कि (जब मैं छोटा-सा था) एक दिन मेरी वालिदा ने मुझे बुलाया और कहाः ले, आ, मैं तुझे दे रही हूँ। उस वक़्त हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हमारे घर में बैठे हुए थे, आपने मेरी वालिदा से फ़रमायाः तूने इसको क्या चीज़ देने का इरादा किया है? उन्होंने अ़र्ज़ किया कि मैंने इसको खजूर देने की नीयत की है। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः ख़बरदार! अगर तू इसको (खजूर भी) न देती तो तेरे ऊपर एक झूठ (का गुनाह) लिख दिया जाता। (मिश्कात शरीफ़ पेज 416)

तशरीहः इस हदीस से माँ-बाप के हक में एक बड़ी नसीहत मालूम हुई। बच्चों को किसी काम के लिए बुलाने के लिए या कहीं साथ जाने की ज़िद ख़त्म करने के लिए या रोना बन्द करने के लिए झूटे वायदे कर लेते हैं, और एक-एक दिन में कई-कई बार ऐसा होता रहता है। वायदा करके फिर वायदा पूरा करने की फ़िक्र नहीं करते, बच्चों को बहलाने के लिए झूट बहका देते हैं कि फ़लाँ चीज़ लायेंगे, यह मंगाकर देंगे, वह बनवाकर लायेंगे। ये झूठे वायदे करना और पूरा न करना गुनाह है जैसा कि ऊपर की हदीस से मालूम हुआ।

सौतन वग़ैरह को जलाने के लिए झूठ बोलने की निन्दा

हदीसः (197) हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से रिवायत है कि एक औरत ने अ़र्ज़ कियाः या रसूलल्लाह! बेशक मेरी एक सौतन है। क्या मुझे गुनाह होगा अगर मैं (उसको जलाने के लिए) झूट-मूट यूँ कह दूँ कि यह चीज़ मुझे शौहर ने दी है, हालाँकि उसने न दी हो? इसके जवाब में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिसको कोई चीज़ हक़ीक़त में न मिली हो उसके बारे में यह ज़ाहिर करना कि यह मुझे मिली है, ऐसा है जैसे किसी झूट के दो कपड़े पहन ले। (मिश्कात पेज 281)

तशरीहः मोमिन के दिल में जो ईमान है, यह अल्लाह का वाइज़ (उपदेश देने वाला, सही बात की तरफ़ रहनुमाई करने वाला) है। ग़लत जज़्बात और बुरे ख़्यालात जो दिल में आते हैं, यह दिल का उपदेशक जो अन्दर बैठा हुआ है, सचेत करता है कि यह ठीक नहीं है। जिनका ईमान असली ईमान है और जिन्होंने ईमान की रोशनी को गुनाहों की अधिकता से धुन्धला नहीं किया, उनको जब किसी ख़राब अ़मल का ख़तरा गुज़रेगा, या गुनाह करने का वस्वसा (ख़्याल) आयेगा, फ़ौरन दिल में एक चुभन महसूस करेंगे। उनको ऐसा मालूम होगा कि जैसे अन्दर कोई अलारम दे रहा है और बता रहा है कि यह काम ठीक नहीं है। अगर ठीक बे-ठीक का फ़ैसला ख़ुद नहीं कर सकते तो जानने वालों से मालूम कर लें। जब अल्हम्दु लिल्लाह हम जैसे मुसलमानों का यह हाल है तो हज़रात सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम जिनका ईमान पहाड़ से भी बड़ा था, वे ऐसे ख़्यलात और दिल के वस्वसों पर क्यों सचेत न होते।

ऊपर की हदीस में इसी तरह का एक वाक़िआ एक सहाबी औ़रत का ज़िक्र हुआ है। उनके दिल में यह ख़्याल आया कि मैं अपनी सौतन को नीचा

दिखाने के लिए झूठ कह दूँ कि मुझे शौहर ने फ़लाँ-फ़लाँ चीज़ें दी हैं तो उसका दिल जलेगा, और उसके जलने से मुझे ख़ुशी होगी। लेकिन फ़ौरन नफ़्स के इस ऐब को उनके ज़िन्दा दिल ने पकड़ लिया और दिल में खटक हुई कि ऐसा करना शायद नाजायज़ हो, लिहाज़ा नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से दरियाफ़्त करना चाहिये। दर हक़ीक़त सच्चे मोमिन का दिल गुनाह पर मुत्मईन नहीं हो सकता।

एक हदीस में है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से एक शख़्स ने दरियाफ़्त किया कि या रसूलल्लाह! ईमान (की निशानी) क्या है? आपने जवाब में इरशाद फ़रमायाः

"जब नेकी करने से तेरा दिल ख़ुश हो, और बुराई से तेरा दिल दुखे तो (समझ ले) तू मोमिन है"

उस शख़्स ने अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! गुनाह (की निशानी) क्या है? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

जब कोई चीज़ तेरे दिल में खटके तो उसे छोड़ देना। (मिशकत पेज 16)

मतलब यह है कि जब किसी काम के मुताल्लिक़ अच्छा या बुरा होने में शक और दिल में खटक हो और उसके करने के तसव्वुर से दिल में बेचैनी की-सी कैफ़ियत मालूम होती हो तो उसे न करना, क्योंकि यह गुनाह होने की निशानी है।

यह बात उन लोगों को हासिल होती है जो गुनाहों से बचने की पाबन्दी करते हैं और दिल को संवारने की फ़िक्र में रहते हैं। और जो शख़्स गुनाहों से बचने की फ़िक्र नहीं करता उसके दिल का नास हो जाता है, फिर उसको नेकी-बदी का एहसास नहीं रहता, और गुनाह पर ख़ुश होता है। दिल के अन्दर जो गुनाहों की वजह से टीस और दर्द होना चाहिये वह नहीं होता।

इसी दिल की खटक और चुभन ने उन सहाबी औ़रत को मसला मालूम करने पर मजबूर किया और उन्होंने जनाब नबी पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से बेतकल्लुफ़ नफ़्स का खोट ज़ाहिर कर दिया, और अ़र्ज़ किया कि मेरे दिल में अपनी सौतन को जलाने का ऐसा ख़्याल आया है। अगर मैं ऐसा करूँ तो क्या इसमें गुनाह होगा? क़ुरबान जाइये नबी पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के, जवाब में क्या इरशाद फ़रमाया? बहुत गहरी बात और व्यापक जुमला इरशाद फ़रमा दिया, जिससे उस नेक औ़रत के सवाल का जवाब भी

हो गया और एक मुस्तकिल क़ायदा उम्मत को मालूम हो गया जो ज़िन्दगी के हर शोबे (क्षेत्र) में काम दे सकता है। और हर समझदार इसकी रोशनी में सच्चाई का पुतला बन सकता है। इरशाद फ़रमायाः

"जिसको कोई चीज़ नहीं मिली और उसके बाद झूठ ही कहता है कि वह मुझे मिली है, वह ऐसा है जैसे किसी ने झूट के दो कपड़े पहन लिये"

यानी उसने सर से पाँव तक अपने ऊपर झूठ ही झूठ लपेट लिया। किसी की ज़बान झूठी होती है, लेकिन यह पूरा का पूरा झूठा है।

मालूम हुआ कि जिस तरह ग़लत बात से ज़बान झूठी हो जाती है, ग़लत किरदार से बदन के दूसरे अंग भी झूठे करार दिये जाते हैं। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इस इरशाद से हर उस शख़्स को नसीहत व सबक़ हासिल करना चाहिये जो किसी चीज़ का मालिक न हो और ज़ाहिर करता हो कि मैं इसका मालिक हूँ। जैसे बहुत-सी औरतें माँगकर शादी-विवाह के मौक़ों पर ज़ेवर पहनकर चली जाती हैं, और शेख़ी बघारने के लिये यह यक़ीन दिलाती हैं कि यह हमारा ज़ेवर है। शेख़ी बघारना यूँ ही बुरा है, कहाँ यह कि दूसरे के माल को अपना बताकर फ़ख़्र किया जाये। बाज़ लोग हाजी नहीं होते मगर नीचा कुर्ता पहनकर हाजी होना बयान करते हैं। इसी तरह बहुत-से लोग पीर और सूफ़ी नहीं होते, लेकिन अपने को लोगों की नज़रों में बड़ा ज़ाहिर करने के लिये ऐसी बातें करते हैं जिनसे उनका सूफ़ी और पीर होना ज़ाहिर हो जाये। बहुत-से लोग ऐसी ही नीयत से पीरों और बुज़ुर्गों का लिबास पहन लेते हैं। ऐसे लोग भी इस हदीस के मज़मून में दाख़िल हैं। यानी हदीस के हुक्म के मुताबिक़ सर से पाँव तक झूठे हैं। बहुत-से लोग हज़रत अबू बक्र व उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा या किसी मशहूर बुज़ुर्ग की नस्ल से नहीं होते लेकिन अपने नाम के साथ सिद्दीक़ी फ़ारूक़ी लिखते हैं, या चिश्ती, क़ादरी (1) होने के दावेदार होते हैं, हालाँकि उनको चिश्तियत और क़ादरियत से दूर का भी वास्ता नहीं होता। ये लोग भी इस हदीस के तहत में आते हैं।

(1) यहाँ पहुँचकर हज़रत मौलाना अशरफ़ अ़ली साहिब थानवी की एक बात याद आ गयी। फ़रमायाः आजकल निस्बतें लगाने का फ़ैशन हो गया है। हैं कुछ नहीं और बनते हैं रशीदी, ख़लीली, इमदादी, साबरी वग़ैरह। और बाज़े तो कोड़ी भी नहीं और 'अशरफ़ी' बनते हैं। (यानी अपने को अशरफ़ अ़ली की तरफ़ मन्सूब करते हैं) क्या ही ख़ूब जुमला इरशाद फ़रमाया जिसके अन्दर दोनों मायनों की तरफ़ इशारा है।

ग़रज़ यह कि जिसका ज़ाहिर, बातिन (यानी बाहर की हालत अन्दर की हालत) के ख़िलाफ़ है, उसका ज़ाहिर पूरा-का-पूरा झूठा और झूठ है।

सख़्त और गन्दी बातों पर तंबीह

हदीसः (198) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने बयान फ़रमाया कि एक बार चन्द यहूदियों ने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िरी की इजाज़त चाही। और उस मौक़े पर (दबी ज़बान में उन्होंने) कहाः "अस्सामु अ़लैकुम" (यानी 'अस्सलामु' के बजाय 'अस्सामु' कह दिया। 'सलाम' सलामती को और 'साम' मौत को कहते हैं। उन्होंने बद्-दुआ़ देने की नीयत से यह समझकर ऐसा कहा कि सुनने वालों की समझ में न आयेगा)। हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने सुन लिया और फ़ौरन जवाब दिया, फ़रमाया "बल् अ़लैकुमुस्सामु वल्लअ्-नतु" (बल्कि तुम पर मौत हो और लानत हो)। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः ऐ आयशा! बेशक अल्लाह रहीम है, हर काम में नर्मी को पसन्द करता है, तुमको इस तरह जवाब नहीं देना चाहिये था। हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने अ़र्ज़ किया कि आपने नहीं सुना! उन्होनें क्या कहा। आपने फ़रमाया मैंने उसके जवाब में 'व अ़लैकुम' कह दिया। (यानी उनको मौत की बद्-दुआ़ दे दी। पस मेरी बद्-दुआ़ उनके हक़ में क़बूल होगी, और मेरे हक़ में उनकी बद्-दुआ़ क़बूल न होगी)। (मिश्कात शरीफ़ पेज 398)

तशरीहः हदीस की किताब मुस्लिम शरीफ़ की एक रिवायत में यूँ है कि उस मौक़े पर आपने हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से फ़रमाया कि तू भद्दी बात कहने वाली मत बन, क्योंकि अल्लाह तआ़ला भद्दी ज़बान बोलने और अश्लीलता इख़्तियार करने को पसन्द नहीं फ़रमाता।

यहूदी बड़े शरीर थे। उनकी शरारतें आज तक काम कर रही हैं। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को अल्लाह का नबी जानते थे और खुली निशानियों से पहचानते थे, लेकिन मानते नहीं थे। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जब मक्का शरीफ़ से हिजरत फ़रमाकर मदीना मुनव्वरा तशरीफ़ लाये तो मदीने में जो यहूदी रहते थे वे आपके सख़्त दुश्मन हो गये। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तकलीफ़ें देते थे। आपकी मजलिस में भी आते थे, बातें भी पूछते थे, लेकिन अपनी शरारतों से

बाज़ नहीं आते थे। उन्हीं शरारतों में से एक यह थी कि आपकी ख़िदमत में हाज़िर होते तो बजाय 'अस्सलामु अ़लैकुम' के दबी ज़बान से 'अस्सामु अ़लैकुम' कहते थे। दरमियान से 'लाम' को जान-बूझकर खा जाते थे। 'सलाम' के मायने सलामती के हैं और 'अस्साम' के मायने मौत के हैं। यहूदी अपनी ख़बासत और शरारत से बज़ाहिर सलाम करते थे लेकिन दबी ज़बान और दिल के इरादे से मौत की बद्-दुआ़ देते थे। एक बार जो आये और ऐसी ही शरारत की तो हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने सुन लिया और फ़ौरन सख़्त अलफ़ाज़ में उनको जवाब दिया। और उन्होंने जो कुछ कहा था उससे बढ़कर बद्-दुआ़ दी। यहूदियों ने तो सिर्फ़ मौत की बद्-दुआ़ दी थी, हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने उनको आड़े हाथों लिया और मौत की बद्-दुआ़ के साथ उनपर लानत भी भेजी, और अल्लाह पाक का ग़ज़ब नाज़िल होने की बद्-दुआ़ दी।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा को तंबीह फ़रमायी और फ़रमाया कि ऐ आ़यशा! ठहर और नर्मी इख़्तियार कर, सख़्ती और बुरी बात से परहेज़ कर, क्योंकि अल्लाह तआ़ला बद-कलामी को और बद-कलामी अपनाने को पसन्द नहीं फ़रमाता। हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने अ़र्ज़ किया कि आपने इनकी हरकतों की तरफ़ तवज्जोह नहीं फ़रमाई। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया: हाँ! मुझे पता है इन्होंने क्या कहा, मैंने भी तो 'व अ़लैकुमुस्सलाम' नहीं कहा बल्कि सिर्फ़ 'व अ़लैकुम' कहकर जवाब दिया। जो कुछ इन्होंने मेरे लिए कहा वही मैंने इन पर उलट दिया। इनकी बद्-दुआ़ मेरे हक़ में क़बूल न होगी और मेरी बद्-दुआ़ इनको लगकर रहेगी।

मतलब यह है कि जो इन्होंने कहा वह इन पर उलट दिया गया, और उससे ज़्यादा सख़्त-कलामी और बद-कलामी की ज़रूरत नहीं। अल्लाह तआ़ला को नर्मी पसन्द है, सख़्ती और सख़्त-कलामी और गन्दी बात करना पसन्द नहीं है।

देखो इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कैसी मुबारक नसीहत फ़रमाई। यहूदी जो ख़ुदा और दीन के दुश्मन थे। उनको जवाब देने में भी यह पसन्द न फ़रमाया कि सख़्ती की जाये, और बद-कलामी

इख़्तियार की जाये। जब दुश्मनों के साथ यह मामला है तो आपस में मुसलमानों को सख़्त-कलामी और बद-कलामी इख़्तियार करने की कहाँ गुंजाइश हो सकती है?

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि फ़रमाया हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि मोमिन ताना मारने वाला और लानत बकने वाला और गन्दी बातें करने वाला और बेहया नहीं होता। (तिर्मिज़ी)

मोमिन की शान ही दूसरी है। वह तो नर्म-मिज़ाज, नर्म-ज़बान, मीठे अलफ़ाज़ वाला होता है। इन्तिक़ाम और जवाब में कोई लफ़्ज़ निकल जाये तो वह भी उसी क़द्र होता है जितना दूसरे ने कहा है। हम सब इससे सबक़ लें और अपनी ज़बान पर कन्ट्रोल करें।

लानत करने की मनाही

हदीसः (199) हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम (एक बार) ईद या बक़र-ईद के मौक़े पर ईदगाह तशरीफ़ लेजा रहे थे। (रास्ते में) औरतों पर गुज़र हुआ, आपने उनको ख़िताब (संबोधित) करते हुए फ़रमाया कि ऐ औरतो! सदक़ा करो, क्योंकि मुझे दोज़ख़ में ज़्यादा तायदाद औरतों ही की दिखायी गयी है। औरतों ने सवाल कियाः यह किस वजह से या रसूलल्लाह? आपने फ़रमायाः इसलिए कि तुम लानत बहुत करती हो, और शौहर की नाशुक्री करती हो। (फिर फ़रमाया कि) मैंने औरत से बढ़कर किसी को नहीं देखा कि अक़्ल और दीन के एतिबार से नाक़िस होते हुए बहुत होशियार मर्द की अक़्ल को ख़त्म कर दे। औरतों ने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! हमारे दीन और अक़्ल में क्या नुक़सान है? आपने फ़रमायाः क्या तुम्हें मालूम नहीं है कि औरत की गवाही मर्द की आधी गवाही के बराबर है? अर्ज़ किया जी हाँ! ऐसा तो है। फ़रमाया यह उसकी अक़्ल की कमी (के सबब) है। फिर फ़रमाया क्या यह बात नहीं है कि जब औरत को माहवारी आती है तो (उन दिनों में शरीअत के हुक्म के सबब) न नमाज़ पढ़ती है न रोज़ा रखती है। औरतों ने जवाब दिया कि हाँ! ऐसा तो है। फ़रमाया यह उसके दीन का नुक़सान है। (मिश्कात पेज 113)

तशरीहः यह हदीस बहुत-सी नसीहतों पर आधारित है। सब की तशरीह

(तफ़सील और व्याख्या) ख़ूब ग़ौर से पढ़ें।

सरवरे आलम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सबसे पहले फ़रमाया कि औरतो! सदक़ा दो, क्योंकि दोज़ख़ में ज़्यादातर मैंने औरतों को देखा है। इससे मालूम हुआ कि दोज़ख़ में ज़्यादा तायदाद औरतों ही की होगी। जो इनसान (मर्द व औरत) काफ़िर या मुश्रिक या मुनाफ़िक़ या बेदीन होंगे, वे तो हमेशा ही दोज़ख़ में रहेंगे, और बहुत-से मुसलमान (मर्द व औरत) भी अपने-अपने बुरे आमाल की वजह से दोज़ख़ में चले जायेंगे। दोज़ख़ में दाख़िल होने वालों में ज़्यादातर औरतें होंगी, और उनके दोज़ख़ में जाने के कई कारण हैं। औरतों का जो आ़म हाल है, नमाज़ों को क़ज़ा करना, ज़ेवर की ज़कात न देना, बदगोई और बद-ज़बानी में लगे रहना, ये सब बड़े-बड़े गुनाह हैं। अगर अल्लाह तआ़ला माफ़ न करेगा और जिन लोगों की बुराइयाँ करती थीं वे माफ़ न करेंगे तो अ़ज़ाब भुगतना पड़ेगा।

इस हदीस में एक ख़ास अ़मल की तरग़ीब दी गयी है यानी सदक़ा करना। सदक़े को दोज़ख़ से बचाने में बहुत दख़ल है। एक हदीस में फ़रमाया है:

"सदक़ा करके दोज़ख़ से बचो, अगरचे आधी खजूर ही दे दो"

इसमें फ़र्ज़ सदक़ा यानी ज़कात और नफ़्ली सदक़ा यानी ख़ैर-ख़ैरात सब दाख़िल हो गये। इन सबको दोज़ख़ से बचाने में ख़ास दख़ल है। जिस क़द्र हो सके अल्लाह की राह में माल ख़र्च करो। अपने माल में तो अपने को इख़्तियार है, और शौहर का माल हो तो उससे इजाज़त लेकर ख़र्च करो।

ज़्यादा तायदाद में औरतों के दोज़ख़ में जाने का एक सबब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह बताया है कि लानत बहुत करती हैं, यानी कोसना-पीटना, बुरा-भला कहना, उलटी-सीधी बातें ज़बान से निकालना। यह औरतों का एक ख़ास मशग़ला है। शौहर, औलाद और भाई-बहन, जानवर, पशु, आग पानी हर चीज़ को कोसती रहती हैं। उसे आग लगे, वह मिलटी लगा है, यह नासपीटी है, उसे ढाई घड़ी की आये, वह मौत का लिया है, उसका नास हो। इस तरह की अनगिनत बातें औरतों की ज़बान से जारी रहती हैं। इसमें बद्-दुआ के कलिमात भी होते हैं, गालीयाँ भी होती हैं। यह बात अल्लाह तआ़ला को ना-पसन्द है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसको दोज़ख़ में जाने का सबब बताया। लानत करना यानी यूँ कहना कि फ़लाँ पर लानत है, या फ़लाँ मलऊन है, या मरदूद है, या उसपर

अल्लाह की मार या फटकार हो, बहुत सख़्त बात है। अल्लाह की रहमत से दूर करने की बद्-दुआ को लानत कहा जाता है। आम तौर पर यूँ तो कह सकते हैं कि काफ़िरों पर अल्लाह की लानत हो और झूठों पर और ज़ालिमों पर अल्लाह की लानत है। लेकिन किसी पर नाम लेकर लानत करना जायज़ नहीं है जब तक यह यक़ीन न हो कि वह कुफ़्र पर मर गया। आदमी तो आदमी, बुख़ार को, हवा को, जानवर को भी लानत करना जायज़ नहीं।

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि एक शख़्स हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ, उसने हवा पर लानत की। नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि हवा पर लानत न करो। क्योंकि वह अल्लाह की तरफ़ से हुक्म दी हुई है। और जो शख़्स किसी ऐसी चीज़ पर लानत करे जो लानत की हक़दार नहीं है तो लानत उसी पर लौट जाती है जिसने लानत की। (तिर्मिज़ी)

एक हदीस में इरशाद है कि बेशक इनसान जब किसी चीज़ पर लानत करता है तो लानत आसमान की तरफ़ बढ़ जाती है, वहाँ दरवाज़े बन्द कर दिये जाते हैं (ऊपर को जाने का कोई रास्ता नहीं मिलता) फिर ज़मीन की तरफ़ उतारी जाती है, ज़मीन के दरवाज़े भी बन्द कर दिये जाते हैं (कोई जगह ऐसी नहीं मिलती जहाँ वह नाज़िल हो)। फिर वह दायें-बायें का रुख़ करती है। जब किसी जगह कोई रास्ता नहीं पाती तो फिर उस शख़्स पर लौट जाती है जिस पर लानत की है। अगर वह लानत का हक़दार (पात्र) था तो उसपर पड़ जाती है, वरना उस शख़्स पर आकर पड़ती है जिसने मुँह से लानत के अलफ़ाज़ निकाले थे। (अबू दाऊद)

एक हदीस में है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह की लानत एक-दूसरे पर न डालो, और न आपस में यूँ कहो कि तुझ पर अल्लाह का गुस्सा हो। और न आपस में एक-दूसरे के लिए यूँ कहो कि जहन्नम में जाये। (तिर्मिज़ी, अबू दाऊद)

हज़रत सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अन्हु की ज़बान से एक मौक़े पर बाज़ गुलामों के बारे में लानत के अलफ़ाज़ निकल गये। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम वहाँ से गुज़र रहे थे, आपने (नागवारी और ताज्जुब के अन्दाज़ में) फ़रमायाः

"लानत करने वाले और सिद्दीक़ीन (क्या ये दोनों जमा हो सकते हैं)?

काबा के रब की क़सम! ऐसा हरगिज़ नहीं हो सकता (कि कोई शख़्स सिद्दीक़ भी हो और लानत करने वाला भी हो)! हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु पर इस बात से बहुत असर हुआ और उस रोज़ उन्होंने अपने कुछ गुलाम (बतौर कफ़्फ़ारा) आज़ाद कर दिये और नबी करीम की बारगाह में हाज़िर होकर अर्ज़ किया कि अब हरगिज़ ऐसा नहीं करूँगा। (बैहक़ी)

हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि बेशक लानत करने वाले क़ियामत के दिन किसी के हक़ में गवाह न बन सकेंगे और न सिफ़ारिश कर सकेंगे। (मुस्लिम शरीफ़)

दूसरी बात हदीस में यह बतायी (जो दोज़ख़ में दाख़िल होने का सबब है) कि औरतें शौहर की नाशुक्री करती हैं। एक दूसरी हदीस में इसका ख़ुलासा इस तरह बयान किया गया है:

"अगर तुम औरत के साथ एक लम्बे समय तक अच्छा सुलूक करते रहो, फिर कभी किसी मौक़े पर ज़रा-सी कोई बात पेश आ जाये तो (पिछला सब किया-धरा सब मिट्टी कर देगी, और) कहेगी कि मैंने तेरी तरफ़ से कभी कोई भलाई नहीं देखी है"। (मिश्कात शरीफ़ पेज 130)

दर हक़ीक़त हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने औरतों के मिज़ाज और अख़्लाक़ व आदतों का बहुत सही पता दिया है, औरतें वाक़ई उमूमन इसी तरह से शौहरों के साथ बर्ताव करती हैं।

इसके बाद नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने औरतों की एक और आदत का तज़किरा फ़रमाया और वह यह कि बहुत ज़्यादा अक़्लमन्द मर्द को भी बिल्कुल बेवक़ूफ़ बनाकर रख देती हैं। ज़िद करके और पट्टी पढ़ा-पढ़ाकर अच्छे-ख़ासे समझदार मर्द को भी बुद्धू बना देती हैं। जैसे मर्द से कहा: तुम्हारी आमदनी कम है, सारे घर का गुज़ारा नहीं होता, ऐसा करो कि माँ-बाप से अलग हो जाओ, फिर हमारा तुम्हारा गुज़ारा अच्छी तरह आराम के साथ हो सकेगा। माँ-बाप का फ़रमाँबरदार बेटा पहले-पहले तो कुछ दिनों तक ध्यान नहीं देता मगर वे उसे इतना मजबूर करती हैं और रोज़ाना इतना सबक़ पढ़ाती हैं कि आख़िर किसी दिन माँ-बाप से जुदा होने का फ़ैसला कर ही लेता है।

वह शख़्स जो बड़ी-बड़ी कम्पनियों को चलाता है, हुकूमत के किसी आला

महकमे का अफ़सर है, उसके मातहत बहुत-से आदमी काम करते हैं, बावजूद इस बड़ाई और अक्लमन्दी के उसे भी सबक़ पढ़ा-पढ़ाकर आख़िरकार अपनी राह पर डाल ही लेती हैं। इसकी सारी अक़्ल व समझ औरत के सामने कुछ काम नहीं देती। ज़ेवर और कपड़े के सिलसिले में भी शौहर को मजबूर करके अपना मतलब पूरा करा ही लेती हैं। मौहल्ले की किसी औरत ने हार बना लिया, बस ख़्याल हो गया कि हम पीछे रह गये, हमारा भी हार बने, और उसी डिज़ाईन का हो, और कम-से-कम उतने ही तौले का हो जैसा कि पड़ोसन ने बनाया है। अब शौहर के सर हैं कि अभी बने और आज ही ऑडर दो। शौहर कहता है कि अभी मौक़ा नहीं है, कारोबार मन्दा है, या तन्ख़्वाह थोड़ी है, बस बरस पड़ीं, तुम कभी फ़रमाईश पूरी ही नहीं करते, हमेशा हीले-बाहने करते हो, क्या ज़रूरत थी किसी की बेटी पल्ले बाँधने की। ख़र्च नहीं चलता है तो पाप काटो। पहली बार तो इतनी बात सुनकर शौहर ख़ामोश हो गया, रात को जब घर आया तो कान खाने शुरू किये, बेचारा समझा-बुझाकर किसी तरह सो गया। सुबह उठकर जब काम पर जाने लगा तो फिर टाँग पकड़ी कि आज ज़रूर तुम कहीं से रक़म लेकर आओ, शौहर ने कहा आज कहाँ से ले आऊँगा? क्या कहीं डाका डालूँ? फ़ौरन कहेंगी हम कुछ नहीं जानते, डाका डालो या कुछ करो, रकम लानी होगी। शौहर ने कहा मैं तो रिश्वत भी नहीं लेता, कहीं से कर्ज़ मिलने की भी उम्मीद नहीं, कहाँ से लाऊँगा? फ़ौरन आड़े हाथों लिया, सारी दुनिया रिश्वत लेती है, तुम बहुत बड़े मुत्तक़ी बने हो, हम चार औरतों में बैठने के क़ाबिल भी नहीं, न हाथ में चूड़ी न गले में लाकिट।

ग़रज़ कि ज़िद करके पीछे पड़कर ज़ेवर बनवाकर छोड़ती हैं। कपड़ों के सिलसिले में भी यही तरीक़ा है। जब कोई नया कपड़ा देखा, नया कपड़ा बाज़ार में आया, नए तर्ज़ का फ़ैशन चला, फ़ौरन उसी तरह का कपड़ा बनाने के लिए तैयार हो गईं। शौहर के पास पैसे हों न हों, मौक़ा हो या न हो, बनाने के लिए ज़िद शुरू कर दी। ज़िद करते-करते आख़िर बनवाकर छोड़ती हैं। फिर अजीब बात यह है कि जो जोड़ा एक बार किसी शादी पर पहन लिया, अब उसे आईन्दा किसी शादी-विवाह की या किसी और पार्टी में पहनने को ऐब समझती हैं। नयी शादी के लिए नया जोड़ा होना चाहिये। फिर काट भी नयी हो, छाँट भी मॉडर्न हो, इन्हीं ख़्यालात में गुम रहती हैं, और इन

ख़्वाहिशों के पूरा करने में बहुत-से गुनाह ख़ुद उनसे सरज़द होते हैं। और बहुत-से गुनाह शौहर से कराती हैं। शौहर इतने ख़र्चों से आजिज़ होता है तो रिश्वत लेता है, या बहुत ज़्यादा मेहनत करके रक़म हासिल करता है जिससे सेहत पर असर पड़ता है। यह जानते हुए कि रिश्वत लेना हराम है और यह अ़मल दोज़ख़ में लेजाने वाला है, और ज़्यादा मेहनत करने से सेहत पर असर पड़ेगा, अच्छा-ख़ासा समझदार आदमी बेवक़ूफ़ बन जाता है। औरत की ज़िद पूरी करने के लिए सब कर गुज़रता है।

औरत को ज़ेवर पहनना जायज़ तो है मगर इस जायज़ के लिए इतने बखीड़े करना और शौहर की जान पर क़र्ज़ चढ़ाना और उसको रिश्वत लेने पर मजबूर करना, और फिर दिखावे के लिये पहनना, इस्लाम में इसकी गुन्जाइश कहाँ है?

शादी-विवाह के मौके पर औरतों ने बहुत-सी बुरी रस्मों का रिवाज डाल रखा है जो ग़ैर-शरई हैं। उन रस्मों के लिये ऐड़ी-चोटी का ज़ोर लगाती हैं। मर्द कैसा ही इल्म रखने वाला और दीनदार हो, उसकी एक नहीं चलने देतीं। आख़िर वही होता है जो ये चाहती हैं। मरने-जीने में भी बहुत-सी बिद्अ़तें और शिर्क से भरी रस्में निकाल रखी हैं, उनकी पाबन्दी नमाज़ से भी बढ़कर ज़रूरी समझी जाती है। अगर मर्द समझाये कि यह शरीअ़त से साबित नहीं, छोड़ दो, एक नहीं सुनती, आख़िरकार मर्द मजबूर होकर उन रस्मों में ख़र्च करने को मजबूर हो जाता है।

ये सब मिसालें हमने हदीस का मतलब वाज़ेह (स्पष्ट) करने के लिये लिख दी हैं। हुज़ूर सल्ल० का यह फ़रमाना कि दीन और अ़क्ल में नाक़िस होते हुए बहुत बड़े अ़क्ल वाले आदमी को बेवक़ूफ़ बना देती हैं, बिल्कुल हक़ है।

हदीस के आख़िर में है कि औरतों ने यह दरियाफ़्त किया कि हमारे दीन और अ़क्ल में क्या कमी है? तो आपने फ़रमायाः अ़क्ल की कमी तो इससे ज़ाहिर है कि शरीअ़त ने दो औरतों की गवाही एक मर्द के बराबर शुमार की है, जैसा कि क़ुरआन मजीद में इरशाद हैः

तर्जुमाः फिर अगर वे दो गवाह मर्द न हों तो एक मर्द और दो औरतें ऐसे गवाहों में से जिनको तुम पसन्द करते हो, ताकि उन दोनों औरतों में से कोई एक भूल जाये तो उनमें की एक दूसरी को याद दिला दे।

(सूरः ब-क़रः आयत 282)

और औरत के दीन का नुक़सान यह है कि हर महीने जो ख़ास दिन उसपर आते हैं, उनमें नमाज़ों से मेहरूम रहती हैं और उन दिनों में रोज़ा भी नहीं रख सकतीं। (अगर रमज़ान में ये दिन आ जायें तो रमज़ान में रोज़ा छोड़ दें और बाद में क़ज़ा रख लें)।

शायद कोई औरत दिल में यह सवाल उठाये कि इसमें हमारा क्या क़सूर है, ख़ास दिनों की मजबूरी कुदरती है और शरीअ़त ने उन दिनों में खुद ही नमाज़-रोज़े से रोका है।

इस सवाल का जवाब यह है कि मजबूरी अगरचे फ़ितरी और तबई है, और शरीअ़त ने भी इन दिनों में नमाज़-रोज़े से रोका है, मगर यह बात भी तो है कि नमाज़-रोज़े की अदायगी की जो बरकतें हैं उनसे मेहरूमी रहती है। फ़ितरी मजबूरी ही की वजह से तो यह क़ानून है कि इन दिनों की नमाज़ें बिल्कुल माफ़ कर दी गयी हैं, जिनकी क़ज़ा भी नहीं, और रमज़ान के रोज़े की क़ज़ा तो है मगर रमज़ान में रोज़ा न रखने पर कोई पकड़ नहीं। अब अगर कोई औरत यूँ कहे कि खुदा तआ़ला ने यह मजबूरी क्यों लगायी है? तो यह अल्लाह की हिक्मत में दख़ल देना और उसकी कुदरत व मर्ज़ी पर एतिराज़ करना हुआ। यह ऐसी ही बात है कि जो शख़्स हज करेगा उसे हज का सवाब मिलेगा, जो न करेगा उसे यह सवाब नहीं मिलेगा। जिसके पास हज करने का पैसा नहीं है अगर वह कहे कि खुदा तआ़ला ने पैसा क्यों नहीं दिया तो यह उसकी बेवकूफ़ी है और उसके कम-अ़क्ल होने की दलील है।

कुरआन शरीफ़ में इरशाद है:

तर्जुमाः तुम लोग किसी ऐसी चीज़ की तमन्ना मत करो जिसमें अल्लाह तआ़ला ने तुम में से कुछ को कुछ पर बरतरी दी है। (सूरः निसा आयत 32)

गाली-गलोच से परहेज़ करने की सख़्त ताकीद

हदीसः (200) हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो दो आदमी आपस में एक-दूसरे को गालियाँ दें, सब का वबाल उसी पर होगा जिसने गाली देने में पहल की है, जब तक कि मज़लूम ज़्यादती न करे।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 411)

तशरीहः ज़बान के गुनाहों में गाली देना भी है। यह भी एक ऐसी बुरी

चीज़ है जो किसी तरह से भी मोमिन की शान के लायक़ नहीं है। एक हदीस में इरशाद है:

"मुसलमान को गाली देना बड़ी गुनाहगारी की बात है, और उससे जंग करना कुफ़्र की चीज़ है" (बुख़ारी व मुस्लिम)

बहुत-से मर्दों और औरतों को गाली देने की आ़दत होती है। और बाज़े तो इसको बड़ा कमाल समझते हैं, हालाँकि यह जहालत और जाहिलीयत (यानी इस्लाम के आने से पहले ज़माने के लोगों की आ़दत) की बात है। और इसमें सख़्त गुनाह भी है, और इसकी वजह से आपस में ताल्लुक़ात भी ख़राब होते हैं। और गाली-गलोच करते-करते मुर्दों तक पहुँच जाते हैं। एक ने किसी को गाली दी, दूसरे ने उसके बाप को गाली दी। फिर पहले वाले ने जवाब में दूसरे वाले के बाप के साथ दादा को भी लपेट लिया। इस तरह से अपने माँ-बाप को गालियाँ दिलवाने का ज़रिया भी बन जाते हैं।

हुज़ूर सल्ल० ने एक बार फ़रमाया कि बड़े-बड़े गुनाहों में से एक यह भी है कि कोई शख़्स अपने माँ-बाप को गाली दे। सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! क्या कोई शख़्स अपने माँ-बाप को गाली देगा? आपने फ़रमाया हाँ! कोई किसी आदमी के बाप को गाली देगा तो वह उलटकर उसके बाप को गाली दे देगा, और कोई किसी की माँ को गाली देगा तो वह उलटकर उसकी माँ को गाली दे देगा। (बुख़ारी व मुस्लिम)

यानी ख़ुद गाली न दी दूसरे से गाली दिला दी, और उसका सबब बन गया तो वह ऐसा ही हुआ जैसा कि ख़ुद गाली दे दी। और यह भी उस ज़माने की बात है कि सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम को ताज्जुब हुआ कि कोई अपने माँ-बाप को कैसे गाली देगा? आजकल तो बहुत-से लोग ऐसे पैदा हो गये हैं जो माँ-बाप को बिल्कुल सीधी साफ़-सुथरी गाली दे देते हैं। गाली यूँ भी बड़ा गुनाह है, लेकिन माँ-बाप को गाली देना और भी ज़्यादा बुरा है। अल्लाह तआ़ला जहालत से बचाये।

अगर कोई शख़्स किसी को गाली दे दे तो अच्छी बात यह है कि जिसको गाली दी है वह ख़ामोश हो जाये और सब्र करे। और गाली देने का वबाल उसी पर रहने दे। लेकिन अगर सब्र न करे और जवाब देना चाहे तो सिर्फ़ उसी क़द्र जवाब दे सकता है जितना दूसरे ने कहा है, आगे बढ़ गया तो यह ज़ालिम हो जायेगा। हालाँकि इससे पहले मज़लूम था। इसी को हुज़ूरे

अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब दो आदमी गाली-गलोच कर रहे हों तो सब गुनाह पहल करने वाले पर होगा, और अगर मज़लूम ने ज़्यादती कर दी (जिसे सबसे पहले गाली दी थी) तो फिर दोनों गुनाह में शरीक हो गये।

हज़रत जाबिर बिन सुलैम रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि मैं मदीना मुनव्वरा में आया, वहाँ मैंने देखा कि एक बड़ी शख़्सियत है कि सब लोग उनकी राय पर अ़मल करते हैं। जो भी कुछ फ़रमाया झट लोगों ने अ़मल कर लिया। मैंने लोगों से दरियाफ़्त किया कि यह कौन हैं? लोगों ने बताया कि यह अल्लाह के रसूल हैं। मैं आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और अ़र्ज़ कियाः अ़लैकस्सलामु या रसूलल्लाह! दो बार ऐसा ही कहा। आपने फ़रमाया कि अ़लैकस्सलामु मत कहो, क्योंकि अ़लैकस्सलामु (जाहिलीयत के ज़माने में) मय्यित को कहा जाता था। अस्सलामु अ़लैकुम कहो। मैंने कहाः आप अल्लाह के रसूल हैं, फ़रमाया मैं अल्लाह का रसूल हूँ। वह अल्लाह ऐसा कुदरत वाला है कि अगर तुमको कोई तकलीफ़ पहुँच जाये फिर तुम उससे दुआ़ करो तो तुम्हारी तकलीफ़ दूर कर दे। और अगर तुमको कहत-साली (सूखे के सबब अकाल) पहुँच जाये और तुम उससे दुआ़ माँगो तो तुम्हारे लिए (ज़रूरत की चीज़ें ज़मीन से) उगा दे। और जब तुम किसी चटियल मैदान में हो, जहाँ घास, पानी और आबादी न हो, और ऐसे मौके पर तुम्हारी सवारी गुम हो जाये, फिर तुम उससे दुआ करो तो तुम्हारी सवारी तुम्हारे पास वापस लौटा दे। मैंने अ़र्ज़ कियाः मुझे कुछ नसीहत फ़रमाइये। आपने फ़रमाया हरगिज़ किसी को गाली मत देना। हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि उसके बाद कभी मैंने किसी आज़ाद या गुलाम को या ऊँट को या बकरी को गाली नहीं दी। (फिर तीन नसीहतों के बाद फ़रमाया कि) अगर कोई शख़्स तुमको गाली दे और तुमको उस चीज़ का ऐब लगाये जो तुम्हारे अन्दर है तो तुम उसे उस चीज़ का ऐब न लगाओ जो ऐब उसका तुम उसके अन्दर जानते हो। (मिश्कात शरीफ़)

देखो इस हदीस में कैसी सख़्त तंबीह फ़रमायी कि हरगिज़ किसी को गाली न देना। जिन सहाबी को नसीहत की थी उन्होंने ऐसी सख़्ती से इसको पल्ले बाँधा और ऐसी मज़बूती के साथ इस पर अ़मल किया कि कभी किसी इनसान को या जानवर को गाली नहीं दी। ऊँट, बकरी, गधा, घोड़ा, कभी

किसी को गाली का निशाना नहीं बनाया। क़ुरआन मजीद में इरशाद है:

तर्जुमाः और गाली मत दो उनको जिनकी ये लोग ख़ुदा को छोड़कर इबादत करते हैं, क्योंकि फिर वे जहालत की वजह से हद से गुज़र कर अल्लाह की शान में गुस्ताख़ी करेंगे। (सूरः अनआम आयत 108)

देखिये आयते शरीफ़ा में मुश्रिक लोगों के बुतों को गालियाँ देने से भी मना फ़रमाया। और वजह यह बतायी कि जब तुम उनके बुतों को गाली दोगे तो वे तुम्हारे माबूदे बर्हक़ अल्लाह तआ़ला की शान में गुस्ताख़ी करेंगे। पस तुम इसका ज़रिया क्यों बनते हो?

इसी तरह से मुसलमानों को आपस में किसी के ख़ानदान के बड़ों को (ख़ानदान नसबी हो या दीनी हो या इल्मी हो) गाली देने या बुरा कहने से परहेज़ करना लाज़िम है। क्योंकि एक फ़रीक़ दूसरे फ़रीक़ के बड़ों को बुरा कहेगा तो दूसरा फ़रीक़ भी बुरा कहेगा, और गाली देगा। अगर कोई शख़्स किसी के बाप को गाली दे तो जवाब में दूसरा शख़्स गाली देने वाले के बाप-दादा और परदादा को गाली देगा, इसमें बहुत-सी बार उन लोगों को गाली देने की भी नौबत आ जाती है जो दुनिया से गुज़र गये हैं। मुर्दा लोगों को बुरा कहने की मनाही ख़ास तौर पर आई है। फ़रमाया हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने:

हदीसः जो लोग मर गये उनको गाली न दो, यानी बुराई के साथ याद न करो, क्योंकि वे उन आमाल की तरफ़ पहुँच गये जो उन्होंने पहले से आगे भेजे। (बुख़ारी)

एक और हदीस में इरशाद है कि:

मुर्दों को गाली न दो, जिसकी वजह से तुम ज़िन्दों को तकलीफ़ पहुँचाओगे। (तिर्मिज़ी)

यानी जब मुर्दों को गाली दोगे तो उनके मुताल्लिक़ीन (रिश्तेदार और उनसे ताल्लुक़ रखने वाले) जो ज़िन्दा हैं उनको तकलीफ़ पहुँचेगी, और इससे दोहरा गुनाह होगा। एक मुर्दों को गाली देने का दूसरा उनके मुताल्लिक़ीन का दिल दुखाने का।

एक और हदीस में इरशाद फ़रमाया कि अपने मुर्दों की ख़ूबियाँ बयान किया करो और उनकी बुराइयों से (ज़बान को) रोके रखो। (अबू दाऊद)

इस्लाम पाकीज़ा दीन है। इसमें जानवरों को गाली देने तक की भी मनाही

की गयी। एक हदीस में इरशाद है कि मुर्ग़ को गाली न दो, वह नमाज़ के लिए जगाता है। (अबू दाऊद)

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं: एक शख़्स को चीचड़ी ने काट लिया (यह जूँ से ज़रा बड़ा जानवर होता है जो ऊँट वग़ैरह के जिस्म पर होता है)। उस शख़्स ने चीचड़ी को गाली दे दी। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः उसको गाली न दो, क्योंकि उसने अल्लाह के नबियों में से एक नबी को नमाज़ के लिए जगाया था। (जमउल फ़वाइद)

फ़ायदाः लफ़्ज़ 'सब्ब' का तर्जुमा जगह-जगह हमने गाली देने से किया है। इसका मतलब यह नहीं है कि जो गन्दी गाली अश्लील बात कही जाए वही गाली है, बल्कि किसी को किसी बुरे लफ़्ज़ से याद करना भी गाली में शामिल है। ख़ूब समझ लें। अगर माँ-बहन की गाली न दी बल्कि बेहूदा, गधा कहीं का, कह दिया यह भी उन हदीसों के मफ़हूम में आता है, जिनमें गाली देने और बुरा-भला कहने की मनाही आती है।

किसी मुसलमान को फ़ासिक़ या काफ़िर या अल्लाह का दुश्मन कहने का वबाल

हदीसः (201) हज़रत अबूज़र रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिसने किसी आदमी को काफ़िर कहकर पुकारा या यूँ कह दिया कि ऐ अल्लाह के दुश्मन! और वह ऐसा नहीं है, तो यह कलिमा उसी पर उलट जाता है जिसने ऐसा कहा। (मिश्कात शरीफ़ 411)

तशरीहः इस हदीस में इस बात से मना फ़रमाया है कि मुसलमान को काफ़िर या अल्लाह का दुश्मन कहा जाये। दूसरी रिवायत में है कि जो शख़्स किसी को फ़ासिक़ (बदकार गुनाहगार) या काफ़िर कह दे और वह ऐसा नहीं है तो यह बात उसी पर उलट आती है जिसने ज़बान से निकाली। (बुख़ारी)

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मना करने का अजीब तर्ज़ इख़्तियार फ़रमाया। आपने फ़रमाया कि जब किसी मुसलमान को काफ़िर या अल्लाह का दुश्मन कहा और वह हक़ीक़त में ऐसा नहीं है तो जिसने कहा उसकी बात उसी पर उलट आयेगी। बहुत-से मर्द और औरतें ग़ुस्से के जुनून में आपस में एक दूसरे को काफ़िर या अल्लाह का दुश्मन कह देते हैं, इसका

वबाल बहुत सख़्त है। बात वही है कि ज़बान पर हर शख़्स को सख़्त कन्ट्रोल करने की ज़रूरत है। ज़रा-ज़रा से कलिमे में क्या से क्या हो जाता है, और इनसान को इसका ध्यान भी नहीं होता। यह बात ख़ूब अच्छी तरह ज़ेहन में बिठा लें।

चुग़ली खाने वालों का अ़ज़ाब और वबाल

हदीसः (202) हज़रत असमा बिन्ते यज़ीद रज़ियल्लाहु अ़न्हा से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि बेशक अल्लाह के अच्छे बन्दे वे हैं, जब उन्हें देखा जाये तो अल्लाह याद आ जाये। और अल्लाह के बुरे बन्दे वे हैं जो चुग़ली लेकर चलते-फिरते रहते हैं (और चुग़ली की वजह से) मुहब्बत करने वालों में जुदाई कराने वाले होते हैं। (और) जो लोग बुराई से बेज़ार हैं उनके लिए फ़साद (बिगाड़ और ख़राबी) की तलाश में रहते हैं। (मिश्कात शरीफ़ पेज 415)

तशरीहः इस हदीस मुबारक में चुग़ली की बुराई और निन्दा फ़रमायी, और जो लोग चुग़ली करते फिरते हैं उनको बुरे इनसानों में शुमार फ़रमाया, और फ़रमाया कि ये लोग मुहब्बत करने वालों और अच्छे ताल्लुक़ वालों में चुग़ली खा-खाकर जुदाई पैदा करने का सामान पैदा कर देते हैं। और जो लोग शर और फ़साद से बरी हैं उनके फ़साद और बरबादी का ज़रिया बनते हैं।

दर हक़ीक़त चुग़ली खाना बहुत बुरी चीज़ है। जो चुग़ली खाता है उसे कुछ नफ़ा नहीं होता बल्कि उसके गुनाह बढ़ते चले जाते हैं, और उसकी बुरी हरकत और शरारत से अच्छे ख़ासे अहले मुहब्बत और अहले वफ़ा में जंग हो जाती है, और दिलों में नफ़रत के शोले भड़क कर बुराइयाँ शुरू हो जाती हैं। और अफ़राद की लड़ाइयाँ ख़ानदानों को ले बैठती हैं। चुग़लख़ोर ज़रा-सा शगूफ़ा छोड़ता है और यहाँ की बात वहाँ पहुँचाकर लड़ाई झगड़े की आग को सुलगाता है। लोगों में लड़ाइयाँ होते देखता है तो ख़ुश होता है, गोया उसने बहुत बड़ा काम किया। लेकिन वह यह नहीं जानता कि दूसरों के लिए जो लड़ाई की आग सुलगायी उससे अपनी क़ब्र में भी अंगारे भर दिये।

एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का दो क़ब्रों पर गुज़र हुआ। आपने फ़रमाया कि बेशक इन दोनों को अ़ज़ाब हो रहा है, और किसी बड़ी चीज़ के बारे में अ़ज़ाब नहीं है (कि जिसके छोड़ने में कोई मुश्किल

उठानी पड़े, अगरचे गुनाह में वह बड़ी चीज़ है)। उसके बाद फ़रमाया कि इनमें से एक पेशाब करते वक़्त पर्दा नहीं करता था। और एक रिवायत में है कि पेशाब से नहीं बचता था। और दूसरा शख़्स चुग़ली लेकर चलता था (यानी झगड़ा फैलाने के लिए इधर की बात उधर और उधर की बात इधर लेजाता था)। (मिश्कात शरीफ़ पेज 42)

इस हदीस के पेशे-नज़र आ़लिमों ने बताया कि पेशाब से न बचना (यानी इस्तिन्जा न करना और बदन पर पेशाब की छींटें आने से न बचना, और पेशाब के वक़्त पर्दा न करना) और चुग़ली खाना क़ब्र का अ़ज़ाब लाने का बहुत बड़ा सबब है।

चुग़लख़ोर जन्नत में दाख़िल न होगा

एक हदीस में इरशाद है कि:

हदीसः जो शख़्स चुग़लख़ोर हो। जो दूसरों की बातें कान लगाकर सुनता है और उनको ख़बर भी नहीं, फिर चुग़ली खाता है, ऐसा शख़्स जन्नत में दाख़िल न होगा। (मिश्कात शरीफ़)

और एक हदीस में 'क़त्तात' की जगह 'नम्माम' आया है। नम्माम चुग़लख़ोर को कहते हैं। तर्जुमा यह हुआ कि चुग़लख़ोर जन्नत में दाख़िल न होगा।

आ़लिमों ने 'क़त्तात' और 'नम्माम' में यह फ़र्क़ बताया कि नम्माम वह है जो बात करने वालों के साथ मौजूद हो, फिर वहाँ से उठकर चुग़ली खाये। और क़त्तात वह है जो चुपके से बातें सुन ले, जिसका बात करने वालों को इल्म भी न हो। उसके बाद चुग़ली खाये।

मजलिस की बातें अमानत होती हैं

जब किसी मजलिस में मौजूद हो चाहे एक दो आदमी ही हों, वहाँ अगर किसी की ग़ीबत हो रही हो तो मना कर दे, और न रोक सके तो वहाँ से उठ जाये। और मजलिस में जो बातें हों उनको मजलिस से बाहर किसी जगह नक़ल न करे।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि मजलिसें अमानत के साथ हैं। (मजलिस में जो बात कान में पड़े उसको इधर-उधर नक़ल करना अमानतदारी के ख़िलाफ़ है)। हाँ! अगर किसी मजलिस में किसी

जान को क़त्ल करने का मश्विरा हुआ हो या ज़िनाकारी का मश्विरा हुआ हो, या किसी का नाहक़ माल लेने का मश्विरा हुआ हो, तो यह बात नक़ल कर (यानी जहाँ ज़ाहिर करनी ज़रूरी हो वहाँ ज़ाहिर कर) दे। (अबू दाऊद)

एक हदीस में इरशाद है: जब कोई शख़्स कोई बात कहे फिर इधर-उधर देखे तो उसकी यह बात अमानत है। (तिर्मिज़ी, अबू दाऊद)

यानी किसी शख़्स ने किसी से कोई ख़ास बात कह दी। फिर वह इधर-उधर देखने लगा कि किसी ने सुना तो नहीं, तो उसका यह देखना इस बात की दलील है कि वह किसी को सुनाना नहीं चाहता, लिहाज़ा जिससे बात कही है उसपर लाज़िम है कि वह बात किसी से न कहे। बहुत-से लोग मजलिस की बात यहाँ से वहाँ पहुँचा देते हैं जो ग़लत-फ़हमी और लड़ाई का ज़रिया बन जाती है, और यह शख़्स चुग़लख़ोर बन जाता है, और ख़ुद अपना बुरा करता है, न बात नक़ल करता न ख़राबी का ज़रिया बनता।

बाज़े मर्दों और औरतों की यह आदत होती है कि जिन दो शख़्सों या दो ख़ानदानों या दो जमाअतों के दरमियान अनबन हो उनके साथ मिलने-जुलने का ऐसा तरीक़ा इख़्तियार करते हैं कि हर फ़रीक़ के ख़ास और हमदर्द बनते हैं और यह ज़ाहिर करते हैं कि तुम सही राह पर हो, और हम तुम्हारी तरफ़ हैं। हर फ़रीक़ उनको हमदर्द समझकर अपनी सब बातें उगल देता है। फिर हर तरफ़ की बातें इधर की उधर और उधर की इधर पहुँचाते हैं, जिससे दोनों फ़रीक़ के दरमियान और ज़्यादा लड़ाई के शोले भड़क उठते हैं।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि क़ियामत के दिन लोगों में सबसे ज़्यादा बुरा आदमी उसको पाओगे जो (दुनिया में) दो चेहरे वाला है। उन लोगों के पास एक मुँह से आता है और इन लोगों के पास दूसरा मुँह लेकर जाता है। (बुख़ारी व मुस्लिम)

हज़रत अम्मार रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि दुनिया में जिसके दो चेहरे थे, क़ियामत के दिन उसकी आग की दो ज़बानें होंगी। (अबू दाऊद)

दो चेहरों का यह मतलब नहीं है कि हक़ीक़त में पैदाईशी तौर पर उसके दो मुँह थे। बल्कि चूँकि हर फ़रीक़ से इस तरह बात करता था जैसे ख़ास उसी का हमदर्द है इसलिए ऐसे शख़्स को दो मुँह वाला फ़रमाया। गोया कि पहले फ़रीक़ से जो बात की वह उस मुँह से की और दूसरे फ़रीक़ के साथ

दूसरा मुँह लेकर कलाम किया, और बात में दोग़लापन इख़्तियार किया। ऐसे शख़्स के एक ही चेहरे को दो चेहरे करार दिया गया। क्योंकि ग़ैरत वाला आदमी अपनी ज़बान से जब एक बात कह देता है तो उसके ख़िलाफ़ दूसरी बात उसी ज़बान से कहते हुए शर्म करता है। बेशर्म और बेग़ैरत आदमी एक चेहरे को दो चेहरों की जगह इस्तेमाल करता है। चूँकि ज़बान की उलटा-पलटी की वजह से एक चेहरे को दो चेहरे क़रार दिये गये, और एक ज़बान से दो चेहरों की वजह से एक चेहरे का किरदार अदा किया इसलिए क़ियामत के दिन इस बुरी हरकत की सज़ा यह मुक़र्रर की गयी कि ऐसे दोग़ले शख़्स के मुँह में आग की दो ज़बानें पैदा कर दी जायेंगी, जिनके ज़रिये जलता-भुनता रहेगा। और उसका यह ख़ास अज़ाब देखकर लोग समझ लेंगे कि यह शख़्स दो मुँह वाला और दोग़ला था।

बहनो! ऐसी बुरी हरकत से बचो। जिन लोगों में रन्जिश और मनमुटाव हो उनसे मिलने में तो कोई हर्ज नहीं, लेकिन हर फ़रीक़ को उसकी ग़लती समझाओ और दोनों में मेल-मिलाप की कोशिश करो। इधर की बात उधर पहुँचाकर और हर एक की बात सही कहकर पीठ न ठोको, और लड़ाई के बढ़ाने का ज़रिया न बनो, और अल्लाह से डरो जो दिलों के हाल से भी अच्छी तरह वाक़िफ़ है।

ग़ीबत किसे कहते हैं? और इसका नुक़सान व वबाल क्या है?

हदीसः (203) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने (एक बार सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम से) फ़रमाया कि क्या तुम जानते हो ग़ीबत क्या है? अर्ज़ किया गयाः अल्लाह और उसका रसूल ही सबसे ज़्यादा जानते हैं। आपने फ़रमाया (ग़ीबत यह है कि तू) अपने भाई को उस तरीक़े से याद करे जो उसे बुरा लगे। इस पर एक सहाबी ने अर्ज़ किया कि अगर वह बात मेरे भाई में मौजूद ही हो जो मैं बयान कर रहा हूँ? (तो इसका क्या हुक्म है?) इस पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः अगर तूने भाई का वह ऐब बयान कर दिया जो (उसमें) है, तब तो तूने उसकी ग़ीबत की, और अगर तूने उसके बारे में वह बात कही जो उसमें नहीं है तो उसे बोहतान लगाया।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 412)

तशरीहः इस हदीस मुबारक से मालूम हुआ कि ग़ीबत यह है कि किसी का ज़िक्र इस तरह किया जाये कि उसे नागवार हो और बुरा लगे। इससे उन लोगों की ग़लती भी मालूम हो गयी जो किसी की बुराई करते हुए यूँ कहते हैं कि हमने ग़लत तो नहीं कहा, जो कुछ कहा है दुरुस्त कहा है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः जो कोई बुराई या ऐब किसी के अन्दर मौजूद हो फिर उसको बयान करोगे तो ग़ीबत होगी, और अगर उसके अन्दर वह ख़राबी और ऐब नहीं है जो बयान कर रहे हो तो यह बोहतान होगा जो ग़ीबत से भी ज़्यादा सख़्त है।

बाज़ जाहिल कहते हैं कि मैंने उसके मुँह पर कहा है, या मैं उसके मुँह पर कह दूँगा, पीठ पीछे ग़ीबत नहीं की है। यह दलील शैतान ने समझायी है। इस दलील से ग़ीबत करना जायज़ नहीं हो जाता। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि ग़ीबत यह है कि किसी का ज़िक्र इस तरह किया जाये कि उसे नागवार हो। मालूम हुआ कि गुनाह की बुनियाद दिल दुखाने और नागवार होने पर है। सामने बुराई की जाये तब भी गुनाह है, मुँह पर की जाये तब भी गुनाह है।

क्या-क्या चीज़ ग़ीबत है?

आ़लिमों ने फ़रमाया है कि किसी के गुनाह का ज़िक्र करना, कपड़े में ऐब बताना, नसब (ख़ानदान और नस्ल) में कीड़े डालना, बुरे अलक़ाब से याद करना, उसकी औलाद को काला बेढंगा बताना, और हर वह चीज़ जिससे दिल दुखे, इस सब का ज़िक्र करना हराम है, और ग़ीबत में दाख़िल है।

औरतों में यह बड़ा मर्ज़ है कि बात-बात में नाम धर देती हैं, और ताने मार देती हैं। जहाँ दो-चार मिलकर बैठीं ऐब लगाने शुरू कर दिये, फ़लाँ काली है, और वह बुढ़िया है, और वह चूंधी है, उसे ख़ानदान के रस्म-रिवाज का इल्म नहीं, कपड़े ढंग के नहीं पहनती, न कपड़ा सीना जानती है न काटना, बस पान खाने के सिवा कुछ नहीं जानती, ऐसी है वैसी है। ये सब बातें सरासर ग़ीबत हैं।

ग़ीबत ज़िना से ज़्यादा सख़्त है

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः ग़ीबत ज़िना से ज़्यादा सख़्त (गुनाह और वबाल की चीज़) है। सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने

अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! ग़ीबत ज़िना से ज़्यादा सख़्त कैसे है? इरशाद फ़रमायाः ज़िनाकार तौबा करता है, ख़ुदा उसकी तौबा को कबूल कर लेता है और उसे बख़्श देता है। और ग़ीबत वाले की उस वक़्त तक बख़्शिश न होगी जब तक वह शख़्स ख़ुद माफ़ न कर दे जिसकी ग़ीबत की है। (मिश्कात)

ग़ीबत करना मुर्दे का गोश्त खाने के बराबर है

कुरआन पाक में अल्लाह तआला का इरशाद है:

तर्जुमाः ऐ ईमान वालो! बहुत-से गुमानों से बचा करो, कि बाज़े गुमान गुनाह होते हैं। और सुराग़ मत लगाया करो, और कोई किसी की ग़ीबत भी न किया करे। क्या तुम में से कोई इस बात को पसन्द करता है कि अपने मरे हुए भाई का गोश्त खाये? सो इसको तुम नागवार समझते हो, और अल्लाह से डरते रहो, बेशक अल्लाह तौबा कबूल करने वाला, मेहरबान है।

(सूरः हुजुरात आयत 12)

ग़ौर फ़रमायें, कुरआन मजीद की इस आयत में ग़ीबत करने को अपने मुर्दा भाई का गोश्त खाने के बराबर क़रार दिया है। पस जब किसी की ग़ीबत की तो यह ऐसा ही है जैसे मौत के बाद उसका गोश्त खाया। मतलब यह है कि जिस तरह मुर्दा भाई का गोश्त खाने से तबई तौर पर नफ़रत है, ऐसे ही उसकी ग़ीबत से सख़्त नफ़रत होनी चाहिये।

इहयाउल उलूम में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद नक़ल किया है कि जिसने (ग़ीबत करके) दुनिया में अपने भाई का गोश्त खाया आख़िरत में उसका (जिस्म वाला गोश्त) ग़ीबत करने वाले के क़रीब किया जायेगा और कहा जायेगा कि इसको खा ले, इस हालत में कि वह मुर्दा है, जैसा कि तूने इसका ज़िन्दगी की हालत में गोश्त खाया था। उसके बाद वह उस गोश्त को खायेगा और चीख़ता जायेगा और अपना मुँह बिगाड़ता जायेगा।

हज़रत उबैदा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि दो औरतों ने रोज़ा रखा था। एक शख़्स आया और अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! यहाँ दो औरतें हैं जिन्होंने रोज़ा रखा है, और क़रीब है कि वे प्यास से मर जायें। यह सुनकर आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ख़ामोशी इख़्तियार फ़रमायी। वह शख़्स दोपहर के वक़्त फिर आया और अर्ज़ किया ऐ अल्लाह के नबी! अल्लाह की

क़सम! मर चुकी हैं या मरने के क़रीब हैं। आपने फ़रमाया उन दोनों को बुलाओ, चुनाँचे दोनों हाज़िर हो गईं, और एक प्याला लाया गया। नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनमें से एक औ़रत से फ़रमाया, कै कर, चुनाँचे उसने कै की, तो पीप और ख़ून और गोश्त के टुकड़े निकले, जिससे आधा प्याला भर गया। फिर दूसरी औ़रत को कै करने का हुक्म फ़रमाया, चुनाँचे उसने भी पीप और ख़ून और अध-कचरे गोश्त वग़ैरह की कै की, यहाँ तक कि पूरा प्याला भर गया, आपने फ़रमाया कि इन दोनों ने हलाल चीज़ को छोड़ करके रोज़ा रख लिया, और जो चीज़ें अल्लाह तआ़ला ने हराम फ़रमायी थीं उनके छोड़ने का रोज़ा न रखा, (बल्कि उनमें मशग़ूल रहीं)। इनमें से एक दूसरी के पास बैठी और दोनों के गोश्त ख़ाती रहीं (यानी ग़ीबत करती रहीं)।

हज़रत माइ़ज़ अस्लमी रज़ियल्लाहु अ़न्हु एक सहाबी थे। उनसे एक बार गुनाह (यानी ज़िना) हो गया। उन्होंने नबी करीम की ख़िदमत में आकर चार बार अपने गुनाह का इक़रार किया। हर बार आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उनकी तरफ़ से बे-तवज्जोही बरतते रहे लेकिन वह बराबर इक़रार करते रहे। फिर आपने फ़रमाया कि इस बात के कहने से तुम्हारा क्या मक़सद है? उन्होंने अ़र्ज़ किया कि आप मुझे पाक फ़रमा दें, इस पर आपने उनको संगसार करने, यानी पत्थरों से मारने का हुक्म दिया, चुनाँचे उनको संगसार कर दिया गया।

उसके बाद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने सहाबा में से दो आदमियों की यह बात सुनी, एक दूसरे को कह रहा है कि उसको देखो, अल्लाह ने उसकी पर्दा-पोशी की, फिर उसके नफ़्स ने उसको नहीं छोड़ा, यहाँ तक कि (उसने ख़ुद ही आकर गुनाह का इज़हार और इक़रार किया और) उसको संगसार कर दिया गया, जैसे कुत्ते को संगसार किया जाता है। उसकी यह बात सुनकर उस वक़्त आपने ख़ामोशी इख़्तियार फ़रमायी, फिर थोड़ी देर चलते रहे यहाँ तक कि एक मरे हुए गधे पर गुज़र हुआ, जिसकी टाँग ऊपर को उठी हुई थी। आपने उन दोनों शख़्सों को बुलाया (जिन्होंने ज़िक्र हुए कलिमात कहे थे) और फ़रमाया कि फ़लाँ-फ़लाँ कहाँ हैं? उन दोनों ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! हम हाज़िर हैं। फ़रमाया तुम दोनों

उतरो, और इस मुर्दा गधे की लाश में से खाओ। उन दोनों ने कहा ऐ अल्लाह के नबी! इसमें से कौन खायेगा? फ़रमाया जो तुमने अभी अपने भाई की बे-आबरूई की (यानी ग़ीबत की और बुरा कहा) वह इसके खाने से भी ज़्यादा सख़्त है। क़सम उस ज़ात की जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है बेशक यह शख़्स (यानी हज़रत माइज़ रज़ियल्लाहु अन्हु अपनी सच्ची तौबा और शर्मिन्दगी की वजह से) जन्नत में ग़ोते लगा रहा है। (अबू दाऊद)

ग़ीबत कई तरह से होती है और उसका सुनना भी हराम है

ग़ीबत बहुत बुरी चीज़ है। जिस तरह ग़ीबत करना मना है, ग़ीबत सुनना भी मना है। और आख़िरत मे उसका वबाल भी बहुत बड़ा है। बाज़ मर्दों और औरतों को देखा गया है कि ग़ीबत का उनको ऐसा चस्का लग जाता है कि हर मजलिस और हर मौक़े में ग़ीबत ही करते या सुनते रहते हैं। जब तक किसी की ग़ीबत न करें उनकी रोटी ही हज़म नहीं होती। किसी की ज़बान से ग़ीबत कर दी और किसी की आँख के इशारे से और किसी की नक़ल उतार कर, किसी की ख़त लिखकर और किसी की ग़ीबत अख़बार में मज़मून देकर कर दी। ग़ीबत के शौक़ीन मुर्दों को भी नहीं बख़्शते। जो लोग इस दुनिया से गुज़र गये उनकी भी ग़ीबतें करते हैं, हालाँकि यह इस एतिबार से ख़तरनाक है कि दुनिया में न होने की वजह से उनसे माफ़ी नहीं माँगी जा सकती, फिर इसमें दोहरा गुनाह है, क्योंकि मय्यित की ग़ीबत के साथ उन लोगों के दिल को तकलीफ़ पहुँचाना भी होता है जो मरने वाले से नसब या किसी तरह की निस्बत से ताल्लुक़ रखते हैं। जो शख़्स दुनिया से चला गया, अगर उसका कोई माली हक़ रह गया हो तो वह उसके वारिसों को देकर जान छूट सकती है, लेकिन मरने वाले की ग़ीबत को उसके वारिस भी माफ़ नहीं कर सकते।

ग़ीबत करने या सुनने में जो नफ़्स को मज़ा आता है उस मज़े का नतीजा जो आख़िरत में अज़ाब की शक्ल में ज़ाहिर होगा, उस वक़्त नफ़्स की इस लज़्ज़त का ख़मियाज़ा भुगतना पड़ेगा, जो बहुत बड़ा होगा। जिस तरह किसी का माली हक़ दबा लेने यानी रुपया पैसा या कोई चीज़ ग़ैर-शरई तौर पर लेकर क़ब्ज़ा कर लेने से क़ियामत के दिन नेकियों और गुनाहों से लेन-देन होगा। इसी तरह जिसने किसी की ग़ीबत की होगी या ग़ीबत सुनी होगी,

तोहमत लगायी होगी, इन सूरतों में भी नेकियों और बुराइयों से लेन-देन होगा। जिसकी सूरत यह होगी कि जिसका हक़ दबाया होगा या किसी भी तरह से उसकी बे-आबरूई की होगी, तो जिसने ऐसी हरकत की होगी उसको ज़ालिम क़रार दिया जायेगा, और जिसका पैसा या कोई हक़ दबाया होगा या ग़ीबत की होगी या किसी भी तरह से बे-आबरूई की तो उसके बदले ज़ालिम की नेकियाँ मज़लूम को दिला दी जायेंगी। अगर नेकियों से पूरा न पड़ा तो मज़लूम की बुराइयाँ यानी गुनाह उससे लेकर ज़ालिम के सर डाल दिये जायेंगे, फिर उसे दोज़ख़ में डाल दिया जायेगा। यह मज़मून हदीस शरीफ़ में बहुत स्पष्ट तौर पर बयान फ़रमाया है।

अक़्लमन्द बन्दे वही हैं जो अपनी ज़बान पर क़ाबू रखते हैं, तेरी-मेरी बुराई में नहीं पड़ते, न ग़ीबत करते हैं न ग़ीबत सुनते हैं। बहुत-से लोगों को देखा गया है, ख़ूब ज़्यादा ज़िक्र व तिलावत करते हैं, नमाज़ें भी लम्बी-लम्बी पढ़ते हैं, और भी तरह-तरह की नेकियों में मशग़ूल रहते हैं, लेकिन चूँकि ग़ीबतों और तोहमतों से बचने का एहतिमाम नहीं करते इसलिए अपनी सारी नेकियों को अपने हक़ में मिट्टी कर देते हैं। जिनके हक़ दबाये या ग़ीबतें कीं या ग़ीबतें सुनीं ये भारी बोझल नेकियाँ उनको दे दी जायेंगी, और उनके गुनाह अपने सर पर उठायेंगें, और हैरान खड़े रह जायेंगे। फिर दोज़ख़ का अज़ाब भुगतना पड़ेगा।

जो ग़ीबत की है या सुनी है, इस दुनिया में माफ़ी माँगकर उससे बरी हो जाये

हर मुसलमान पर लाज़िम है कि आईन्दा के लिए ग़ीबत करने, ग़ीबत सुनने, तोहमत लगाने, गाली देने, किसी की नक़ल उतारने, किसी का मज़ाक़ बनाने से अपनी हिफ़ाज़त कर ले। और जिन लोगों के हुक़ूक़ दबाये या ग़ीबतें की हैं या सुनी हैं, या किसी के हक़ में किसी भी तरह से आगे या पीछे कोई कलिमा ऐसा कहा है जो नागवारी का सबब हो तो उन सबसे माफ़ी माँगे। अगर मुलाक़ात होने की सूरत न हो तो ख़त के ज़रिये माफ़ी तलब करे। अगर कोई शख़्स मर गया हो तो माली हक़ उसके वारिसों को दे दे और दूसरी चीज़ों की माफ़ी के वास्ते मरने वाले के लिए इतनी ज़्यादा मग़फ़िरत की दुआ करे जिससे यक़ीन हो जाये कि उसकी जो ग़ीबत या बुराई की थी या

ग़ीबत सुनी थी या तोहमत लगायी थी उसकी तलाफ़ी हो गयी।

कुछ आलिमों ने यूँ फ़रमाया है कि जिसकी ग़ीबत की या सुनी अगर उसे पता चल गया हो तो उससे मांफी माँग ले। और अगर पता न चला हो तो उसे बताये बग़ैर उसके लिए इस क़द्र दुआ-ए-मग़फ़िरत करे कि ग़ीबत वग़ैरह की पूरी तरह तलाफ़ी हो जाये।

किसी जगह ग़ीबत होने लगे तो बचाव करे वरना उठ जाये

हमारे एक उस्ताद ग़ीबत से बचने का इस क़द्र एहतिमाम फ़रमाते थे कि किसी का अच्छा तज़किरा भी अपनी मजलिस में नहीं होने देते थे। वह फ़रमाते थे कि आजकल किसी की तारीफ़ के कलिमात कहना भी मुश्किल है। अगर कोई शख़्स किसी के हक़ में अच्छे कलिमात कहना शुरू करे तो फ़ौरन ही दूसरा शख़्स उसकी बुराई शुरू कर देता है। फिर सब हाज़िरीन ग़ीबत सुनने में मुब्तला हो जाते हैं।

जैसा कि पहले अर्ज़ किया गया है कि ग़ीबत करना, ग़ीबत सुनना, दोनों बड़े गुनाह हैं। लिहाज़ा अगर किसी मौक़े पर किसी की ग़ीबत होने लगे तो मौजूद लोगों को चाहिये कि उसको रोकें, और जिसकी ग़ीबत हो रही है उसका पक्ष लें। अगर उसको रद्द करने की ताक़त न हो तो दिल से बुरा समझते हुए वहाँ से उठ जायें, उठना तो अपने इख़्तियार में है, ग़ीबत सुनने में कोई मजबूरी नहीं जैसा कि ग़ीबत करने वाले के लिए कोई मजबूरी नहीं। दोज़ख़ की आग का तसव्वुर करें तो हर गुनाह छोड़ना आसान हो जाता है।

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया है कि जिसके पास उसके मुसलमान भाई की ग़ीबत की गयी और वह उसकी मदद करने की ताक़त रखते हुए मदद कर देता है (यानी उसकी हिमायत करता है और उसकी तरफ़ से बचाव करता है और ग़ीबत करने वाले को रोक देता है) तो अल्लाह तआला दुनिया और आख़िरत में उसकी मदद फ़रमाएगा। और अगर ताक़त होते हुए उसकी मदद न की तो अल्लाह तआला दुनिया और आख़िरत में उसकी गिरफ़्त फ़रमाएगा। (मिश्कात शरीफ़)

जिसकी ग़ीबत की जा रही है उसकी तरफ़ से बचाव करने का अज्र

हज़रत असमा बिन्ते यज़ीद रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि हुज़ूरे

अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिसने अपने भाई के गोश्त की तरफ़ से बचाव किया जो ग़ीबत के ज़रिये खाया जा रहा था, तो अल्लाह तआ़ला के ज़िम्मे होगा कि उसको दोज़ख़ से आज़ाद फ़रमा दे।

(मिश्कात शरीफ़)

हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो भी कोई मुसलमान अपने भाई की आबरू की तरफ़ से बचाव करे (यानी उसकी बे-आबरूई के मौके पर जो ग़ीबत वग़ैरह के ज़रिये हो रही है उसकी हिमायत करे, और जो लोग बे-आबरूई कर रहे हों उनकी काट करे) तो अल्लाह तआ़ला के ज़िम्मे होगा कि क़ियामत के दिन दोज़ख़ को उससे दूर फ़रमा दे। फिर आपने यह आयत तिलावत फ़रमायीः

وَكَانَ حَقًّا عَلَيْنَا نَصْرُ الْمُؤْمِنِيْنَ

तर्जुमाः और ईमान वालों का ग़ालिब करना हमारे ज़िम्मे था।

(सूरः रूम आयत 47)

पस ऐ बहनो! ग़ीबत करने और सुनने, किसी का मज़ाक़ बनाने और नक़्ल उतारने और हर उस फ़ेल से सख़्ती से बचो, और अपनी औलाद को और सहेलियों को और मिलने वालों को बचाओ जिससे किसी मुसलमान की आगे या पीछे बे-आबरूई हो रही हो।

ताँबे के नाख़ूनों से चेहरों और सीनों को छीलने वाले

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब मेरे रब ने मुझे मेराज कराई तो मैं ऐसी क़ौम पर गुज़रा जिसके ताँबे के नाख़ून थे। वे उनसे अपने चेहरों और सीनों को छील रहे थे। मैंने पूछा कि ऐ जिबराईल! ये कौन लोग हैं? उन्होंने जवाब दिया कि ये वे लोग हैं जो लोगों का गोश्त खाते हैं (यानी ग़ीबतें करते हैं) और लोगों की बे-इज़्ज़ती करते हैं। (मिश्कात शरीफ़)

बहुत-से मर्द और औ़रत मजलिस वालों को हंसाने के लिए किसी मौजूद या ग़ैर-मौजूद की ग़ीबत करते हैं, या दिल्लगी करते हैं, या नक़्ल उतारते हैं, उस वक़्त तो ज़रा-सी देर की हंसी में नफ़्स को ज़रा मज़ा आ जाता है, लेकिन जब इसकी सज़ा मिलेगी तो इस मज़े का पता चलेगा। फ़रमाया हुज़ूरे

अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि बेशक बन्दा कभी ऐसा कलिमा कह देता है कि जिससे लोगों को सिर्फ़ हंसाना मक़सद होता है, उस कलिमे की वजह से इतना ज़्यादा गुमराही में गिरता चला जाता है कि उस गुमराही का फ़ासला इससे भी ज़्यादा होता है जितना फ़ासला आसमानों व ज़मीन के दरमियान है। (मिश्कात शरीफ़)

किसी पर तोहमत लगाने का अ़ज़ाब

हदीसः (204) हज़रत मुआ़ज़ बिन अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः जिसने किसी मोमिन को मुनाफ़िक़ से बचाया (यानी ग़ीबत करने वाले की तरदीद (खंडन) की और जिसकी ग़ीबत हो रही हो उसकी हिमायत की) तो अल्लाह तआ़ला क़ियामत के दिन एक फ़रिश्ता भेजेंगे जो हिमायत करने वाले के गोश्त को दोज़ख़ की आग से बचायेगा। (यानी या तो उसे दोज़ख़ में दाख़िल न होने देगा, और अगर वह दाख़िल हो गया तो अ़ज़ाब न होने देगा)। और जिस किसी ने मुसलमान को तोहतम लगा दी तो अल्लाह तआ़ला उसको दोज़ख़ के पुल पर रोके रखेगा यहाँ तक कि वह अपनी कही हुई बात से (साफ़-सुथरा होकर) निकल जायेगा। (मिश्कात शरीफ़ पेज 424)

तशरीहः इस हदीस पाक में दो बातों की तरफ़ तवज्जोह दिलायी है- पहली यह कि जो कोई किसी की ग़ीबत करे तो जिसकी ग़ीबत की जा रही हो उसकी तरफ़ से बचाव किया जाये। और इसका बहुत बड़ा फ़ायदा बताया है। यह मज़मून ग़ीबत के बयान में भी गुज़र चुका है।

दूसरी बात यह कि किसी को किसी भी तरह से तोहमत लगाने से परहेज़ करना वाजिब है। अगर किसी ने किसी को तोहमत लगा दी तो यह कोई मामूली बात नहीं है, इसकी वजह से क़ियामत के दिन बड़ी मुसीबत हो जायेगी। जिस किसी को तोहमत लगायी थी उससे छुटकारा पाना ज़रूरी होगा। दोज़ख़ के ऊपर पुलसिरात क़ायम किया जायेगा, सबको उसपर से गुज़रना होगा। जो उससे पार उतर जायेगा जन्नत में दाख़िल होता चला जायेगा। तोहमत लगाने वाला शख़्स पुलसिरात पर रोक लिया जायेगा, और जब तक तोहमत लगाने के गुनाह से पाक-साफ़ न होगा जन्नत में न जायेगा। पाक-साफ़ होने के दो तरीक़े हैं, या तो वह शख़्स माफ़ कर दे जिसको तोहमत

लगायी, या अपनी नेकियाँ उसको देकर उसके गुनाह अपने सर लेकर दोज़ख़ मे जले। चूँकि वहाँ बन्दे हाजत-मन्द होंगे इसलिए यह उम्मीद तो बहुत कम है कि कोई शख़्स माफ़ कर दे, अब दूसरी सूरत यानी दोज़ख़ में जलना ही रह जाता है। किसको हिम्मत है जो दोज़ख़ में जलने का इरादा करे? जब इसकी हिम्मत नहीं तो अपने नफ़्स और अपनी ज़बान पर काबू पाना ज़रूरी हुआ। बहुत-सी औरतें और मर्द इस बात का बिल्कुल ख़्याल नहीं करते कि किसके हक़ में क्या कह गुज़रे, किस पर क्या तोहमत लगा दी और किसको किस बोहतान से नवाज़ दिया। जहाँ सास-बहुओं में लड़ाई हुई झट कह दिया कि रंडी है। सौतनें लड़ने लगीं तो एक ने दूसरी को बदकार कह दिया, नन्द भावज में लड़ाई हुई तो कह दिया कि यार घेरे फिरती है, किसी को चोर बता दिया, किसी के बारे में कह दिया कि शराबी है। और तोहमत लगाने में उन लोगों तक को नहीं बख़्शा जाता जिनसे कभी मुलाक़ात भी नहीं हुई, बल्कि जो लोग मर गये, दुनिया से जा चुके उनपर भी तोहमतें धर देते हैं, यह बहुत ही ख़तरनाक बात है, जिसकी सज़ा बहुत सख़्त है।

जो लोग दुनिया में कमज़ोर हैं या दूर हैं या मर गये हैं, बदला लेने से आजिज़ हैं, उनके आगे या पीछे अगर उनको कोई तोहमत लगा दी और वे बदला न ले सके, तो इसका यह मतलब नहीं है कि यह मामला यहीं ख़त्म हो गया। आख़िरत का दिन आने वाला है, जहाँ पेशी होगी, हिसाब-किताब होगा, मज़लूमों को बदले दिलाये जायेंगे। उस दिन क्या होगा? इस पर ग़ौर करना चाहिये। आ़म लोग तो फिर भी कुछ न कुछ हैसियत रखते हैं, अपना ज़र-ख़रीद गुलाम तो दुनिया के रिवाज में कुछ भी हैसियत नहीं रखता, लेकिन अगर किसी ने अपने ज़र-ख़रीद गुलाम को ज़िना की तोहमत लगा दी तो तोहमत लगाने वाले पर क़ियामत के दिन इसकी सज़ा जारी की जायेगी। हाँ! मगर यह कि वह तोहमत लगाने में सच्चा हो। (बुख़ारी व मुस्लिम)

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः हलाक करने वाली सात चीज़ों से (बहुत ही ख़ास तरीक़े और पाबन्दी के साथ) बचो। हज़राते सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने अ़र्ज़ किया कि वे सात हलाक करने वाली चीज़ें क्या हैं? फ़रमायाः

(1) अल्लाह के साथ शिर्क करना (2) जादू करना (3) उस जान को क़त्ल करना जिसका क़त्ल करना अल्लाह ने हराम फ़रमा दिया, मगर यह कि हक़ के साथ हो। (जिसको उलमा और शरई क़ाज़ी जानते और समझते हैं)। (4) सूद खाना (5) यतीम का माल खाना (6) जिहाद के मैदान से पीठ फेरकर भाग जाना (7) पाकदामन मोमिन औरतों को तोहमत लगाना जो (बुराइयों से) ग़ाफ़िल हैं। (बुख़ारी व मुस्लिम)

यानी जो औरतें पाकदामन और आबरू वाली हैं उनको तोहमत लगाना, उन बड़े-बड़े गुनाहों में शामिल है जो हलाक कर देने वाले हैं, यानी दोज़ख़ में पहुँचाने वाले हैं। उनको तोहमत लगाना इसलिए ज़्यादा सख़्त है कि उन्हें बुराई का ध्यान तक नहीं है। और जिन्हें ज़बान पर काबू नहीं मर्द हों या औरत, वे इन बेचारियों पर तोहमत के गोले फैंकते रहते हैं। वैसे तो किसी भी औरत पर तोहमत लगाना दुरुस्त नहीं, चाहे किसी का चाल-चलन संदिग्ध हो।

नक़्ल उतारने पर चेतावनी

हदीसः (205) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा का बयान है कि मैंने (एक बार किसी मौक़े पर) रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से अर्ज़ किया कि सफ़िया बस इतनी-सी है (यानी उसके हुस्न वग़ैरह की कोई और ख़ामी बताने की ज़रूरत नहीं है, उसका छोटे क़द वाली होना ही काफ़ी है)। यह सुनकर जनाब नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तूने ऐसा कलिमा कहा है कि अगर इसे समुन्द्र में मिला दिया जाये तो समुन्द्र को भी बिगाड़ डाले।

यह वाक़िआ बताकर हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने बयान फ़रमाया कि मैंने एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सामने एक आदमी की नक़ल उतारी, इस पर नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मुझे यह पसन्द नहीं है कि किसी शख़्स की नक़्ल उतारूँ अगरचे मुझे ऐसा करने पर (दुनिया की) इतनी-इतनी दौलत मिल जाये। (अबू दाऊद)

तशरीहः इस हदीस से मालूम हुआ कि किसी के क़द-लम्बाई, हाथ-पाँव, नाक-कान वग़ैरह को ऐबदार बताना (अगरचे हक़ीक़त में ऐबदार हो) और किसी की बात या चाल-ढाल की नक़ल उतारना गुनाह है, और सख़्त मना है। आम तौर से किसी के हकलाने या लंगड़ाकर चलने या नज़र घुमाने की

नक्ल उतारी जाती है, और इसमें कुछ हर्ज नहीं समझा जाता, जिसकी वजह से सख़्त गुनाहगार होते हैं। चूँकि यह बात बन्दों के हुकूक में से है इसलिए जब तक बन्दे से माफ़ी न माँगी जाये तौबा से भी माफ़ न होगा।

हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने हज़रत सफ़िया रज़ियल्लाहु अन्हा के कद के कम होने को ख़ास अन्दाज़ में ज़िक्र किया तो नबी पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि यह कलिमा ऐसा ख़राब है कि अगर इसको जिस्म की सूरत देकर समुन्द्र में घोल दिया जाये तो समुन्द्र को भी ख़राब करके रख दे, और उसका मौजूदा रंग, बू और ज़ायका बदल डाले। हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह इरशाद हमारे लिए किस कद्र सीख लेने के लायक़ है। हर शख़्स ग़ौर करे, कितने इनसानों के जिस्मानी अंगों में अब तक कीड़े डाले हैं और कितने लोगों की चाल-ढाल को ऐबदार बताया है।

यहाँ यह बात भी काबिले ज़िक्र है कि बहुत-से लोग कहते हैं कि हमने तो लंगड़े को लंगड़ा कहा है और बहरे को बहरा बताया है और अन्धे को अन्धा कहकर बुलाया है, और यह बात हकीकत और वाकिए के ख़िलाफ़ नहीं। झूट होता तो पकड़ के काबिल होता। मगर शरीअत की निगाह में यह बहाना और उज़्र बे-मायने है। पहले हदीस नम्बर 203 के तहत में गुज़र चुका है कि गुनाह का मदार नागवारी पर है, बात के झूठा सच्चा होने पर नहीं है। देखो! हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने जो कद छोटा बताया है, ग़लत बांत न थी, फिर भी हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस पर तंबीह फ़रमायी।

बन्दों की तारीफ़ करने के अहकाम

हदीसः (206) हज़रत अबू बकरः रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सामने एक शख़्स ने दूसरे की तारीफ़ कर दी, इस पर आपने नागवारी का इज़हार फ़रमाते हुए तीन बार इरशाद फ़रमायाः तेरे लिए हलाकत है, तूने अपने भाई की गर्दन काट दी। (फिर फ़रमाया कि) जिसको किसी की तारीफ़ करनी हो तो यूँ कहेः मैं फ़लाँ को ऐसा समझता हूँ और अल्लाह उसका हिसाब लेने वाला है। और यह भी उस वक़्त है जबकि उसको हकीकत में वैसा ही समझता हो। (फिर फ़रमाया) और

अल्लाह के ज़िम्मे रखकर किसी की पारसाई बयान न करे। (मिश्कात 412)

तशरीहः अगर किसी की तारीफ़ में कुछ कलिमात कहे तो उसके सामने न कहे, क्योंकि अन्देशा है कि उसके दिल में खुद-पसन्दी और बड़ाई आ जाये। जब एक शख़्स ने दूसरे शख़्स की तारीफ़ की तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसको तंबीह फ़रमायी और फ़रमाया कि तूने अपने भाई की गर्दन काट दी। यानी उसके सामने तारीफ़ करके उसको घमण्ड और खुद-पसन्दी में डालने का इन्तिज़ाम कर दिया। फिर यह भी उस सूरत में है जबकि तारीफ़ सच्ची हो, अगर झूठी तारीफ़ हो तो इसकी गुन्जाइश बिल्कुल नहीं, क्योंकि वह तो बहुत बड़ा गुनाह है। फिर दूसरी तंबीह यह फ़रमायीः अगर किसी की तारीफ़ करनी ही है (उसके आगे पीछे का कोई फ़र्क़ नहीं) तो यूँ कहे कि मैं तो फ़लाँ को ऐसा समझता हूँ और सही सूरते हाल अल्लाह को मालूम है। वही उसका हिसाब लेने वाला है। इन कलिमात के कहने से अव्वल तो वह शख़्स नहीं फूलेगा जिसकी तारीफ़ में ये अलफ़ाज़ कहे, और इसमें तारीफ़ करने वाले की तरफ़ से इसका दावा भी न होगा कि वह हक़ीक़त में ऐसा ही है। क्योंकि बन्दा सिर्फ़ ज़ाहिर को जानता है और पूरे कमालात (ख़ूबियों और अच्छाइयों) और हालात ज़ाहिरी हों या बातिनी इन सबको अल्लाह तआ़ला ही जानता है, और आख़िरत में हर शख़्स किस हाल में होगा इसको भी अल्लाह तआ़ला ही जानता है, लिहाज़ा यकीन के साथ किसी को यह कहना कि वह ऐसा-ऐसा है, इसमें पूरे हालात से वाकिफ़ होने का दावा है। जब अल्लाह पाक की जानिब से उसके बारे में कोई ख़बर नहीं दी गयी तो पुख़्ता यकीन और भरोसे के साथ यह कह देना कि ऐसा ऐसा है, गोया अल्लाह के ज़िम्मे यह बात लगा देना है कि अल्लाह के नज़दीक यह शख़्स ऐसा ही है जैसा मैं बता रहा हूँ। इसी को फ़रमाया कि अल्लाह के ज़िम्मे रखकर किसी का पाकीज़ा और गुनाहों से बरी होना बयान न करे।

फ़ासिक़ और काफ़िर की तारीफ़

यह जो कुछ बयान हुआ, अच्छे बन्दों की तारीफ़ और सच्चे बन्दों की तारीफ़ में बयान हुआ, और झूठी तारीफ़ और काफ़िर व गुनाहगार की तारीफ़ की तो इस्लाम में कोई गुन्जाइश ही नहीं है।

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस

सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब फ़ासिक़ (गुनाहगार और बदकार) की तारीफ़ की जाती है तो परवर्दिगारे आ़लम गुस्सा होते हैं, और अल्लाह का अ़र्श हरकत करने लगता है। (बैहक़ी)

अ़र्श का हरकत करना अल्लाह की हैबत और बड़ाई की वजह से है। जिससे अल्लाह तआ़ला नाराज़ है उसकी तारीफ़ करना एक बहुत ही बुरी चीज़ है। जिसके सामने अल्लाह की बड़ाई नहीं होती वही उन लोगों की तारीफ़ करता है जिनसे अल्लाह तआ़ला नाराज़ है। अल्लाह के अ़र्श को यह तारीफ़ नागवार है इसलिए वह हरकत में आ जाता है।

काफ़िरों और फ़ासिक़ों की तारीफ़ बहुत बड़ा मर्ज़ है। शायरों का काम ही यह है कि तारीफ़ करने में हद से आगे बढ़ें, और आसमान व ज़मीन को एक कर कर दें, और झूठी तारीफ़ें करके रोटी हासिल किया करें। और राजनीति की दुनिया में भी यही होता है कि जिसको लीडर बना लिया वह चाहे काफ़िर हो चाहे बहुत बड़ा फ़ासिक़-फ़ाजिर (यानी गुनाहगार और बदकार) हो, उसकी तारीफ़ और प्रशंसा करने को फ़र्ज़ का दर्जा देते हैं। अव्वल तो हर मुसलमान पर लाज़िम है कि वह अल्लाह के नेक बन्दों को अपना रहनुमा व पेशवा बनाये और उनके साथ चले, और उनकी निगरानी करता रहे कि शरीअ़त के मुताबिक़ कहाँ तक चल रहे हैं, काफ़िरों और फ़ासिक़ों को मुक़्तदा (पेशवा) बनाना ही गुनाह है। और काफ़िरों और फ़ासिक़ों की तारीफ़ तो और ज़्यादा गुनाहगारी की बात है। चुनाव के मौक़े पर तो अपने लीडर और अपनी पार्टी के लोगों की हिमायत करते हैं और जिसे जितना चाहते हैं उसकी झूठी सच्ची तारीफ़ों के पुल बाँध देते हैं। चाहे वह कैसा ही बदकार और गुनाहगार हो। और इसके विपरीत दूसरे फ़रीक़ का उम्मीदवार चाहे कैसा ही नेक, ईमानदार हो, बैठकों में और जलसों में और कॉन्फ्रेन्सों में उसकी ग़ीबतें करने को ज़रूरी समझते हैं, और तोहमतें रखते हैं और जो गुनाह उसने न किए हों उनको भी उसके ज़िम्मे लगाते हैं, और यह नहीं सोचते कि इन तारीफ़ों और निन्दाओं का अन्जाम आख़िरत में क्या है। यह ज़बान की लगायी हुई खेतियाँ जब काटनी पड़ेंगी और अन्जाम भुगतना होगा तो क्या होगा? ख़ूब अच्छी तरह सोच-समझने की बात है।

झूठी कसम और झूठी गवाही का वबाल

हदीसः (207) हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि फ़रमाया हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि बड़े-बड़े गुनाह ये हैं:

(1) अल्लाह के साथ शिर्क करना (2) माँ-बाप को सताना (3) किसी जान को क़त्ल करना (4) झूठी कसम खाना। (मिश्कात शरीफ़ पेज 17)

तशरीहः कबीरा (यानी बड़े) गुनाह तो बहुत-से हैं लेकिन इस हदीस में चन्द ऐसे गुनाह ज़िक्र फ़रमाए जो बहुत बड़े हैं, और जिनमें आ़म तौर पर लोग मुब्तला रहते हैं। चूँकि इस मौक़े पर हम ज़बान की आफ़तें ज़िक्र कर रहे हैं, इसलिए इस हदीस में झूठी कसम की मुनासबत से यह हदीस यहाँ नक़ल की है।

अल्लाह के साथ शिर्क करना तो सबसे बड़ा गुनाह है जिसकी कभी भी बख़्शिश नहीं है, इसको तो सब ही मुसलमान जानते हैं। माँ-बाप की नाफ़रमानी और उनको सताना और तकलीफ़ देना भी बड़े गुनाहों में है, और इस हदीस में इसको शिर्क के बाद फ़रमाया है, जिससे इसकी बुराई ख़ूब ज़ाहिर हो रही है, और इस बारे में हम इस किताब में तफ़सील से लिख भी चुके हैं, और एक किताब अलग से भी "माँ-बाप के हुक़ूक़" के नाम से लिखी है, और झूठी क़सम के बारे में हम यहाँ लिखना चाहते हैं।

झूठी क़सम का ताल्लुक़ गुज़रे हुए ज़माने के वाक़िआ़त (घटनाओं) से होता है। जो कोई वाक़िआ़ न हुआ हो उसके बारे में कह दिया कि ऐसा हुआ, और उस पर क़सम खा ली। और किसी ने कोई काम नहीं किया, उसके बारे में कह दिया कि उसने ऐसा किया है, और इस पर क़सम खा ली। इसी तरह अपने किसी काम के करने या न करने पर झूठी क़सम खा ली। यह बहुत बड़ा गुनाह है। अव्वल तो झूठ! फिर ऊपर से झूठी क़सम! यानी अल्लाह के नाम को झूठ के लिए इस्तेमाल करना, यह गुनाह-दर-गुनाह हो जाता है। बहुत-से मर्द और औ़रत झूठी कसम से बिल्कुल परहेज़ नहीं करते, बात-बात में कसम खाते चले जाते हैं, और इस गुनाह का वबाल जो दुनिया और आख़िरत में है उसकी तरफ़ तवज्जोह नहीं करते।

औ़रतों में तेरी-मेरी बुराई करने की आ़दत होती है। ख़्वाह-मख़्वाह लड़ाई

झगड़ों में अपने आप को फंसाती हैं। तेरे-मेरे बारे में कुछ न कुछ कह देती हैं। जब कोई मौक़ा आता है तो मुकर जाती हैं और साफ़ इनकार कर देती हैं कि मैंने नहीं कहा, और इस पर क़सम भी खा जाती हैं। बहुत-से लोग माल बेचते वक़्त झूठी क़सम खा जाते हैं कि यह इतने का लिया है और इतने का पड़ा है। और कई बार ऐसा होता है कि किसी चीज़ के बारे में झूठी क़सम खा जाते हैं कि यह मेरी है हालाँकि अपनी नहीं होती। ये सब बातें इसलिए सरज़द होती हैं कि आख़िरत की पेशी का ख़्याल नहीं होता।

फ़रमाया हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कि जिस किसी शख़्स ने अल्लाह की क़सम खायी और उसमें मच्छर के पर के बराबर (ज़रा-सी बात ग़लत) दाख़िल कर दी तो यह क़सम उसके दिल में एक सियाह धब्बा बन जायेगी, जो क़ियामत तक रहेगा। (तिर्मिज़ी)

झूठी क़सम के ज़रिये माल हासिल करने की सज़ा

एक हदीस में है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिस किसी ने झूठी क़सम के ज़रिये कोई माल हासिल कर लिया, वह अल्लाह से इस हाल में मुलाक़ात करेगा कि कोढ़ी होगा। (अबू दाऊद शरीफ़)

हज़रत अ़ब्दुर्रहमान बिन शबल रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि बेशक ताजिर लोग फ़ाजिर हैं (यानी बड़े गुनाहगार हैं)। सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने अ़र्ज़ किया: या रसूलल्लाह! क्या अल्लाह ने ख़रीद व फ़रोख़्त को हलाल नहीं क़रार दिया? आपने फ़रमाया हाँ! हलाल तो है, लेकिन ताजिर लोग क़सम खाते हैं, गुनाहगार होते हैं, और बातें करते हैं और झूठ बोलते हैं। (मुस्नद अहमद)

हज़रत हारिस रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को दो जमरों (जमरा उस स्थान का नाम है जिस जगह हाजी लोग हज के दौरान कंकरी मारते हैं। ये तीन हैं) के दरमियान यह फ़रमाते हुए सुना कि जिस किसी ने अपने भाई का माल झूठी क़सम के ज़रिये हासिल कर लिया, वह अपना ठिकाना दोज़ख़ में बना ले। उसके बाद दो या तीन बार फ़रमाया: जो मौजूद हैं वे ग़ैर-मौजूद लोगों को पहुँचा दें। (मुस्नद अहमद)

एक रिवायत में है कि झूठी क़सम आबादियों को खंडर बना देती है। (तरग़ीब)

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि कसम सौदा तो बिकवा देती है (मगर) कमाई की बरकत ख़त्म कर देती है। (बुख़ारी व मुस्लिम)

जिस तरह अपना माल बेचने के लिए या किसी का कोई हक़ मारने के लिए झूठी कसम खाना हराम है, इसी तरह किसी दूसरे को किसी का माल नाहक दिलाने के लिए या मुकद्दमा जिताने के लिए झूठी गवाही देना हराम है। बड़े-बड़े गुनाहों की सूची में "बुख़ारी व मुस्लिम" की बाज़ रिवायतों में "झूठी गवाही" का लफ़्ज़ आया है। झूठी गवाही देना भी सख़्त गुनाह है। बहुत-से लोग किसी की दोस्ती में या रिश्तेदारी के ताल्लुकात की वजह से झूठी गवाही दे देते हैं, झूठी गवाही खुद ही बहुत बड़ा गुनाह है, फिर उसके साथ हाकिम कसम भी खिलाता है, जो झूठी होती है, इसलिए गुनाह दोगुना हो जाता है, और हराम पर हराम होता चला जाता है। ताज्जुब है कि लोग दुनिया के ताल्लुकात और रिश्तेदारी को देखते हैं और आख़िरत के अज़ाब की तरफ़ ध्यान नहीं देते। बहुत-से लोगों ने तो झूठी गवाही को पैशा ही बनाकर रखा है। पुलिस से और वकीलों से जोड़ रखते हैं और रोज़ाना कोर्ट-कचेहरी में पहुँच जाते हैं। पुलिस और वकील अलफ़ाज़ रटा देते हैं और उसी वक्त नकद गवाही देकर नकद दाम लेकर आते हैं। उनका यह पैशा हराम है और आमदनी भी हराम है। हराम के ज़रिये हराम खाते हैं, इसमें बड़े नमाज़ी तक मुब्तला हैं।

हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम एक बार फ़ज्र की नमाज़ पढ़कर खड़े हुए और इरशाद फ़रमायाः झूठी गवाही अल्लाह के साथ शिर्क करने के बराबर करार दी गयी है। इसको तीन बार फ़रमाया, फिर यह आयत तिलावत फ़रमायीः

तर्जुमाः बचते रहो बुतों की गन्दगी से और बचते रहो झूठी बात से।
(सूरः हज आयत 30) (मिश्कात पेज 328)

कुरआन मजीद में शिर्क से बचने का और झूठी बात से बचने का हुक्म एक साथ एक जगह बयान फ़रमाया है, इससे झूठी गवाही की मज़म्मत (बुराई और निन्दा) ज़ाहिर है।

फ़ायदाः अल्लाह के अलावा किसी की कसम खाना शिर्क है अगरचे सच्ची खायी हो। हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे

अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिसने अल्लाह के अ़लावा किसी की क़सम खायी उसने शिर्क किया। (तिर्मिज़ी)

बहुत-सी औ़रतें अल्लाह के अ़लावा की कसम खा जाती हैं, और यह भी कहती हैं कि तेरे सर की क़सम, दूध की क़सम, पूत की क़सम, धन-दौलत की कसम, बाप की कसम, यह सब शिर्क है। अव्वल तो जहाँ तक मुमकिन हो कसम खाये ही नहीं, अगर किसी मौक़े पर सच्ची कसम खानी पड़ जाये तो सिर्फ़ अल्लाह की क़सम खाये।

गाना गाने की बुराई और हुरमत

हदीसः (208) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अगर इनसान का बातिन (पेट वग़ैरह) पीप से भर जाये, जिससे उसके पेट वग़ैरह को ख़राब करके रख दे, तो यह इससे बेहतर है कि उसका बातिन शे'रों से भर जाये। (मिश्कात शरीफ़ पेज 409)

तशरीहः इस हदीस में शे'र पढ़ने की मज़म्मत (बुराई और निन्दा) फ़रमायी है। और खुलासा और तफ़सील इसकी यह है कि शे'र मायनों के एतिबार से अच्छे भी होते हैं और बुरे भी होते हैं, बुरे शे'र पढ़ने की इजाज़त नहीं है। जिन शे'रों में झूट हो, झूटी तारीफ़ हो, किसी की बुराई या ग़ीबत हो, जहालत व जाहिलीयत की हिमायत हो, कुफ़्र और शिर्क के मज़ामीन हों, ऐसे शे'र कहने, पढ़ने, लिखने और सुनने में गुनाह ज़ाहिर है। और उमूमन ऐसे शे'रों से नफ़्स को मज़ा आता है। और ज़ो शे'र अच्छे हों उनको पढ़ना, ज़बान पर लाना दुरुस्त है। लेकिन साज़, सारंगी और बाजे-गाजे और हारमूनियम, अलग़ोज़ा और ढोल के साथ उनका पढ़ना भी गुनाह है। और ये चीज़ें अगर न हों तो तब भी औ़रतों को बुलन्द आवाज़ में पढ़ना दुरुस्त नहीं है। तन्हाई में कोई शे'र पढ़ ले तो दुरुस्त है। ना-मेहरमों को नर्म लहजे वाली या गाने के तर्ज़ वाली आवाज़ सुनाना मना है। कुरआन मजीद में इरशाद हैः

तर्जुमाः तुम बोलने में नज़ाकत (लचीली आवाज़ इख़्तियार) मत करो कि ऐसे शख़्स को ख़्याल होने लगता है जिसके दिल में ख़राबी है।

(सूरः अहज़ाब आयत 32)

यह जो औ़रतों में रिवाज है कि मंगनी या बियाह-शादी या बच्चे की

पैदाईश पर गाती हैं, जिसमें बजाने की चीज़ें भी इस्तेमाल होती हैं, और ना-मेहरम को आवाज़ भी जाती है, यह किसी तरह भी दुरुस्त नहीं है। सख़्त अफ़सोस की बात है कि स्कूलों और कालिजों में मौसीक़ी के लिए मुस्तक़िल वक़्त दिया जाता है और गाना-बजाना सीखने-सिखाने बल्कि नाचना सिखाने के लिए मुस्तक़िल प्रियड रखे जाते हैं। फिर ये लड़कियाँ यह सब कुछ सीखकर स्टेज पर आती हैं, मजमों और मेहफ़िलों में डाँस और मौसीक़ी का प्रदर्शन करती हैं। इस बेहूदगी और बदकारी को फ़ुनूने लतीफ़ा का नाम दिया जाता है, और सभ्यता से ताबीर किया जाता है। अल्लाहु अकबर! नबी पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की उम्मत की औरतें और यह जाहिलीयत की हरकतें? फिर ऊपर से शरीफ़ होने का दावा! अहले दीन और समझदार ग़ौर कर लें कि इन हालात में नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तरफ़ मनसूब होने का क्या मुँह है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तो यह फ़रमायें: मेरे रब ने मुझे गाजे-बाजे की चीज़ें मिटाने का हुक्म दिया है, और नालायक़ उम्मती गाने-बजाने को और मौसीक़ी के उपकरणों को ज़िन्दगी का हिस्सा बना लें, यह कहाँ तक सजता है और कहाँ तक मुनासिब है। ऐ ईमान के दावेदारो! ग़ौर करो।

हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि गाना दिल में निफ़ाक़ को उगाता है जैसे पानी खेती को उगाता है। (मिश्कात शरीफ़)

अफ़सोस! कि जिन मुल्कों की हुकूमतें मुसलमानों के हाथों में हैं, वे रेडियो और टी० वी० पर गाने-बजाने के ख़ुसूसी और अहम वक़्ती प्रोग्राम पेश करते हैं और टी० वी० पर तो नाच भी दिखाते हैं। मुसलमान हाकिमों की यह ज़िम्मेदारी है कि अवाम को गुनाहों और बुरी बातों से रोकें, न यह कि ख़ुद शरीअत के ख़िलाफ़ प्रोग्राम पेश करें, और उम्मत की आने वाली नस्लों को बिगाड़ कर रख दें। टी० वी० ने तो हर घर को अश्लीलता और बुराइयों का केन्द्र बनाकर रख दिया है। छोटे-बड़े सब मिलकर बेहयाई के प्रोग्राम देखते हैं और मज़े लेते हैं। टी० वी० पर चूँकि तस्वीर होती है इसलिए उसको तो अच्छी बातें सुनने के लिए भी इस्तेमाल न करें।

लोगों ने गाने-बजाने को ज़िन्दगी का ऐसा हिस्सा बना रखा है कि खा रहे हैं तो गाना, सुन रहे हैं और लेटे-बैठे हैं तो गाना सुन रहे हैं। औरतें

खाना पका रही हैं या दूसरे मशग़ले में हैं तो रेडियो खोल रखा है या टेपरिकार्डर चालू कर रखा है, इसी लिए तो अमली निफ़ाक़ हो रहा है। शैतान ने क़ाबू पाया हुआ है और नेकी की तरफ़ तबीयत नहीं आती। अल्लाह समझ दे और हिदायत दे।

बसों में सफ़र करो तो गाना, टैक्सी में बैठो तो गाना। एक सच्चे मुसलमान के लिए सफ़र-हज़र सब मुसीबत बनकर रह गया है। कालिजों में मुस्तक़िल मौसीक़ी रूम हैं। जिस वक़्त गाना सुनना हो वहाँ चले जाते हैं, मस्जिदों का इन्तिज़ाम नहीं होता मगर गाने का इन्तिज़ाम ज़रूर होता है, और अध्यापक और छात्र सब इस्लाम का दम भरते हैं और मुसलमान होने के दावेदार हैं।

रोमांटिक गानों और ग़ज़लों और नाविल-अफ़सानों ने क़ौम की नस्लों को तबाह कर दिया है, और ख़ानदान के बड़ों को इस पर ख़ुशी है। इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन।

मुसलमान औरतों से

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बातें

* औरतों के लिए *

पर्दे का बयान

लेखक

हज़रत मौलाना आशिक़ इलाही साहिब बुलन्द शहरी

रहमतुल्लाहि अलैहि

अनुवादक: मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा. लि.)

422, मटिया महल, उर्दू मार्किट, जामा मस्जिद

देहली-110006

पर्दे के अहकाम व मसाइल

औरत छुपाकर रखने की चीज़ है

हदीसः (209) हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि औरत छुपाकर रखने की चीज़ है, और बेशक जब वह अपने घर से बाहर निकलती है तो उसे शैतान ताकने लगता है। और यह बात यक़ीनी है कि औरत उस वक़्त सबसे ज़्यादा अल्लाह से क़रीब होती है जबकि वह अपने घर के अन्दर होती है। (तिबरानी)

तशरीहः इस हदीस में पहले तो औरत का मुक़ाम बताया है, यानी यह कि वह छुपाकर रखने की चीज़ है। औरत को औरत होने की हैसियत से घर के अन्दर रहना लाज़िम है। जो औरत पर्दे से बाहर फिरने लगे वह अपनी औरत होने की हदों से बाहर हो गयी। उसके बाद फ़रमाया कि जब औरत घर से निकलती है तो शैतान उसकी तरफ़ नज़रें, उठा-उठाकर ताकना शुरू कर देता है। मतलब यह है कि जब औरत बाहर निकलेगी तो शैतान की यह कोशिश होगी कि लोग उसके चेहरे-मोहरे और हुस्न व ख़ूबसूरती और लिबास व पौशाक पर नज़र डाल-डालकर लुत्फ़ उठायें।

इसके बाद फ़रमाया कि औरत उस वक़्त सबसे ज़्यादा अल्लाह के क़रीब होती है जबकि वह अपने घर के अन्दर होती है। जिन औरतों को अल्लाह की नज़दीकी (निकटता यानी अल्लाह की रिज़ा और ख़ुशनूदी) की तलब और रग़बत है वे घर के ही अन्दर रहने को पसन्द करती हैं, और जहाँ तक मुमकिन होता है घर से बाहर निकलने से बचती हैं।

इस्लाम ने औरतों को हिदायत दी है कि जहाँ तक मुमकिन हो अपने घर के अन्दर ही रहें। किसी मजबूरी से बाहर निकलने की जो इजाज़त दी गयी है उसमें अनेक पाबन्दियाँ लगायी गयी हैं। जैसे यह कि ख़ुशबू लगाकर न निकलें, और यह भी हुक्म फ़रमाया कि औरत रास्ते के दरमियान न चले, अगर उसे बाहर जाना ही पड़े तो पूरे बदन पर मोटी चादर लपेटकर चले। (रास्ता नज़र आने के लिए एक आँख का खुला रहना काफ़ी है)।

यह भी फ़रमाया कि मर्द की नज़र किसी ना-मेहरम औरत पर या औरत की नज़र किसी ना-मेहरम मर्द पर पड़ जाये तो फ़ौरन नज़र हटा ले। अगर औरत को किसी ना-मेहरम मर्द से किसी सख़्त मजबूरी की वजह से बात करनी पड़े तो नर्म अन्दाज़ से बात न करे। और यह भी इरशाद फ़रमाया है कि औरत बग़ैर मेहरम के सफ़र न करे, मेहरम भी वह हो जिस पर भरोसा हो। बदकार मेहरम जिस पर इतमीनान न हो उसके साथ सफ़र करना दुरुस्त नहीं है। इसी तरह शौहर या मेहरम के अलावा किसी ना-मेहरम मर्द के साथ तन्हाई में रहने या रात गुज़ारने की बिल्कुल इजाज़त नहीं है। और मेहरम भी वह जिस पर इतमीनान हो। ये सब अहकाम दर हक़ीक़त इज़्ज़त व आबरू को महफ़ूज़ रखने के लिए दिये गये हैं।

एक साथ मिली-जुली तालीम का ज़हर

आजकल लड़कियों को स्कूलों कालिजों में पढ़ने के लिए भेजते हैं। उनको ऊँची डिग्रियाँ दिलाने की कोशिश करते हैं। अव्वल तो इसमें इस हुक्म की ख़िलाफ़वर्ज़ी (अवहेलना) है कि औरत अपने घर में रहे। अगर बाहर निकलना हो तो मजबूरी के दर्जे में पर्दे की पाबन्दियों के साथ निकल सकती है। मगर वे तो पर्दे के एहतिमाम के बग़ैर निकलती हैं, और ख़ूब बन-ठनकर ख़ुशबू लगाकर जाती हैं। फिर रही-सही कसर लड़के और लड़कियों की मिली-जुली एक साथ तालीम ने पूरी कर दी। एक ही क्लास में लड़के और लड़कियाँ और बालिग़ मर्द और औरत बेपर्दा होकर बैठते हैं और अजीब बात है कि इस्लामियात की डिग्री लेने वाले ऐन तालीम के वक़्त इस्लामी अहकाम को पामाल करते जाते हैं। और जो लोग इन बातों पर तंबीह करते हैं और बताते हैं कि यह ग़ैर-शरई तरीक़ा है, वे कितनी ही आयतें और हदीसें पेश करें उनकी बात को दक़्यानूसी कहकर टाल देते हैं। अल्लाह तआ़ला उनको समझ दे और दीन के सही तक़ाज़े को समझने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए।

इस्लाम पाकदामनी और आबरू वाला दीन है

इस्लाम हया और शर्म, पाकदामनी व आबरू और ग़ैरत वाला दीन है। इसने इनसानियत को ऊँचा मुक़ाम दिया है। इनसान और हैवान में जो इम्तियाज़ी फ़र्क़ है वह इस्लाम के अहकाम पढ़ने से वाज़ेह (स्पष्ट) हो जाता है। इस्लाम यह हरगिज़ गवारा नहीं करता कि इनसानों में हैवानियत आ जाये,

और जानवरों की तरह ज़िन्दगी गुज़ारें। मर्दों और औरतों के अन्दर जो एक-दूसरे की तरफ़ माईल होने (झुकने) का फ़ितरी तक़ाज़ा है, इस्लामी शरीअत ने इनकी हदें मुक़र्रर फ़रमायी हैं। नफ़्स के हुक़ूक़ और उसकी लज़्ज़तों सब का ख़्याल रखा है, लेकिन इनसान को बिना नकेल के ऊँट की तरह नहीं छोड़ा कि जो चाहे खाये और जो चाहे पहने और जहाँ चाहे नज़र डाले, और जिससे चाहे लज़्ज़त हासिल करे। बहुत-से लोग जो नाम के मुसलमान हैं (अगरचे दुनियावी उलूम में माहिर हैं और दुनियावी मामलात में अच्छी तरह वाक़िफ़ हैं) यूरोप व अमेरिका के यहूदियों व ईसाइयों और बेदीन खुदा के इनकारियों की देखा-देखी बिल्कुल उनकी तरग़ीब (प्रेरणा) और तहरीर से मुतास्सिर होकर मुसलमानों को भी हैवानियत के सैलाब में बहा देना चाहते हैं। जब इन लोगों के सामने पर्दे के अहकाम व मसाइल पेश किये जाते हैं तो क़ुरआन व हदीस की स्पष्ट दलीलों के सामने होते हुए बड़ी हठधर्मी के साथ कह देते हैं कि ये सब बातें मौलवियों ने निकाली हुई हैं। औरतों को बेपर्दा फिराने बल्कि क्लबों में नचवाने को ये लोग तरक़्क़ी से ताबीर करते हैं।

कौनसी तरक़्क़ी पसन्दीदा है?

औरत एक नाज़ुक वर्ग से तो ताल्लुक़ रखती ही है, कमज़ोर भी है। जब इसको बहकाया जाता है कि पर्दा तरक़्क़ी के लिए रुकावट है और मुल्ला की ईजाद है, तो ये अपनी नादानी से इस बात का यक़ीन कर लेती हैं और महफ़िलों और जलसों और पार्कों, बाज़ारों और तफ़रीह-गाहों में पर्दा तोड़कर खुलेआम मर्दों के सामने घूमती फिरती हैं। और बेहयाई और इज़्ज़त व आबरू को दाग़दार करने वाले अमल को तरक़्क़ी समझती हैं। इस्लाम के दुश्मनों ने बस तरक़्क़ी का लफ़्ज़ याद करा दिया है, और यह भी नहीं जानते कि किस चीज़ की तरक़्क़ी पसन्दीदा है और कौनसी तरक़्क़ी ना-पसन्दीदा है? अगर क़ौम की बहू-बेटियाँ बेपर्दा होकर घरों से निकलें और बाज़ारों, पार्कों में मर्दों के साथ मिल-जुलकर घूमती फिरें तो इसमें किस चीज़ की तरक़्क़ी है? क्या इसमें इनसानियत तरक़्क़ी के शिखर तक पहुँच गयी? या ग़ैरत और शराफ़त में कुछ इज़ाफ़ा हो गया? नहीं नहीं! इससे तो इज़्ज़त व आबरू के लुट जाने की राहें हमवार हो गईं। इनसान की शराफ़त और सम्मान बरबाद होने के इन्तिज़ाम हो गये। बुराई की तरक़्क़ी भी क्या कोई तरक़्क़ी है? ऐसी तरक़्क़ी

तो शैतान और उसके दोस्तों को पसन्द होती है। बुराई की तरक्क़ी अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को और नेक दिल मोमिनों और मोमिनात को पसन्द नहीं होती।

नज़र की हिफ़ाज़त करने का हुक्म

सबसे बड़ी चीज़ जो एक मर्द को औरत की तरफ़ या औरत को मर्द की तरफ़ माईल करने वाली है वह नज़र है, क़ुरआन मजीद में दोनों फ़रीक़ को हुक्म दिया है कि अपनी नज़रें नीची रखें। सूरः नूर रुकूअ 4 में पहले मर्दों को हुक्म फ़रमायाः

तर्जुमाः आप मुसलमान मर्दों से कह दीजिये अपनी निगाहें नीची रखें, और अपनी शर्मगाहों की हिफ़ाज़त करें। यह उनके लिए ज़्यादा पाकीज़गी की बात है। बेशक अल्लाह तआला उससे ख़ूब वाक़िफ़ है जो कुछ लोग किया करते हैं। (सूरः नूर आयत 30)

इसके बाद औरतों को ख़िताब फ़रमायाः

तर्जुमाः और मुसलमान औरतों से फ़रमा दीजिये कि अपनी निगाहें नीची रखें और अपनी शर्मगाहों की हिफ़ाज़त करें, और अपनी ज़ीनत (बनाव-सिंघार) को ज़ाहिर न करें, मगर जो उसमें से खुला रहता है।

(सूरः नूर आयत 31)

इन आयतों में मर्दों और औरतों दोनों फ़रीक़ को नज़रें नीची रखने और शर्मगाहों की हिफ़ाज़त करने का हुक्म फ़रमाया। पर्दे के मुख़ालिफ़ लोग देखते-भालते जान-बूझकर इन आयतों के मफ़हूम के जानने से गुरेज़ करते हैं। ज़ाहिर है कि नज़रें नीची रखने का हुक्म इसलिए नहीं दिया गया कि पेड़ और पत्थर और दीवारों और घर के सामानों की तरफ़ देखना मना है, बल्कि यह हुक्म इसलिए दिया गया कि नज़र को बेजा इस्तेमाल करने से शर्मगाहों की हिफ़ाज़त ख़तरे में पड़ जाती है। इसी लिए तो इसके साथ शर्मगाहों की हिफ़ाज़त करने का हुक्म फ़रमाया। नफ़्स और नज़र की लज़्ज़त के लिए शौहर को बीवी के लिए और बीवी को शौहर के लिए मख़्सूस कर दिया गया। मेहरम मर्द और औरत अगरचे एक-दूसरे को हदों के अन्दर रहकर देख सकते हैं लेकिन उनको भी एक-दूसरे पर शहवत की नज़र डालना जायज़ नहीं है। मेहरमों को भी बदन का हर हिस्सा दिखाना जायज़ नहीं है, इसमें भी

तफ़सील है। (जो आगे आयेगी इन्शा-अल्लाह तआ़ला)

हज़रत जरीर बिन अ़ब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अ़र्ज़ किया: या रसूलल्लाह! अगर अचानक (ना-मेहरम पर) नज़र पड़ जाये तो इसके बारे में क्या इरशाद है? हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि उसी वक़्त नज़र फैर लो। (मुस्लिम शरीफ़)

एक बार हज़रत नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत अ़ली को ख़िताब करते हुए इरशाद फ़रमाया: पहली नज़र के बाद दूसरी नज़र मत डाले रखो, क्योंकि पहली नज़र पर तुझे गुनाह न होगा (इसलिए कि वह बिना इख़्तियार थी) और दूसरी नज़र तेरे लिए हलाल नहीं है (उसपर पकड़ होगी, क्योंकि वह इख़्तियार से है)। (मिश्कात शरीफ़)

मतलब यह है कि अगर बिना इख़्तियार किसी ना-मेहरम पर नज़र पड़ गयी तो फ़ौरन हटा लो। नज़र न हटाई और देखते रहे तो ये दो नज़रें शुमार होंगी। और दूसरी नज़र इख़्तियार वाली होगी जिस पर गिरफ़्त और पकड़ होना ज़ाहिर है। बेपर्दगी में बद-नज़री बहुत-सी जगह देखी जा सकती है। मर्द और औरत सब इसका जुर्म करते हैं, नज़रें महफ़ूज़ होंगी तो शर्मगाह भी महफ़ूज़ होंगी। और ख़ुद बुरी नज़र को भी तो ज़िना करार दिया है, जो आगे आ रहा है, इन्शा-अल्लाह।

बाज़ जाहिल यह कहते हैं कि आयते शरीफ़ा में जो "इल्ला मा ज़-ह-र मिन्हा" (मगर जो उसमें से खुला रहता है) है, इसमें चेहरे और हाथों को अलग रखा गया है। यानी औरतें इसको खोल सकती हैं। उन लोगों को पता नहीं इस आयत की तफ़सीर में मुफ़स्सिरीन के क्या-क्या अक़वाल (रायें) हैं।

'मगर जो उसमें से खुला रहता है' की तफ़सीर

हज़रत इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि इससे ऊपर के वे कपड़े मुराद हैं जो पर्दे की पाबन्दी के लिए जिस्म से लगे हुए कपड़ों के ऊपर होते हैं। 'तफ़सीरे मज़हरी' के लेखक 'बैज़ावी' से नकल करते हुए लिखते हैं कि यह नमाज़ की हालत का एक हुक्म अलग बयान किया गया है, यानी नमाज़ में चेहरे और दोनों हाथ गट्टों तक अगर खुले रहें। ग़ैर-मेहरम के सामने सिंघार की जगहों में से कोई हिस्सा खोलने का ज़िक्र आयत के इस टुकड़े में नहीं है। फिर 'तफ़सीरे मज़हरी' के लेखक लिखते हैं कि अगर

"मगर जो उसमें से खुला रहता है" से सिंघार के स्थान मुराद हों तो इसका मतलब यह होगा कि ज़रूरत के मौक़े पर मजबूरी में किसी सजावट और सिंघार को ज़ाहिर करने की नीयत के बग़ैर जो हिस्सा ज़ाहिर हो जाए उसको इस हुक्म से अलग किया गया है। फिर लिखते हैं कि आज़ाद औरत के चेहरे और दोनों हाथों के पौशीदा रखने से अलग होना सिर्फ़ नमाज़ के लिए है, क्योंकि अल्लाह तआला के फ़रमानः 'व युदनी-न अलैहिन्-न मिन् जलाबीबिहिन्-न' (यानी सर से नीची कर लिया करें अपने ऊपर थोड़ी-सी अपनी चादरें) से साफ़ ज़ाहिर है कि औरत अपना चेहरा ना-मेहरम के सामने नहीं खोल सकती।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने "मगर जो उसमें से खुला रहता है" की तफ़सीर करते हुए फ़रमाया कि "औरत अपना चेहरा और दोनों हाथों की हथेलियाँ खोले रह सकती है" अगर इसी तफ़सीर को माना जाये तब भी ग़ैर-मेहरम के सामने खोलने का कोई ज़िक्र नहीं। जो लोग इस बात को पर्दे के हुक्म से अलग किया हुआ मानते हैं और इससे औरतों के लिए आम तौर पर चेहरा खोले हुए फिरने को जायज़ साबित करना चाहते हैं वे बहुत बड़ी ग़लती पर हैं। क्योंकि इन अलफ़ाज़ में औरतों को चेहरा खोलने की इजाज़त दी गयी ताकि दूसरे अंगों की तरह इनके छुपाने की पाबन्दी से ज़हमत और तकलीफ़ न हो, इसमें ना-मेहरमों के सामने खोलने के जायज़ या नाजायज़ होने का कोई ज़िक्र नहीं है।

आयत में यह फ़रमाया कि जो उसमें से आम तौर पर खुला रहता है, यह नहीं फ़रमाया कि जिसको औरतें खोल लें। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि औरत को जान-बूझकर ना-मेहरमों के सामने चेहरा खोलने की इजाज़त नहीं दी गयी।

अरबी ज़बान के ग्रामर के हिसाब से अगर देखा जाए तो उससे भी साफ़ ज़ाहिर है कि यहाँ आम तौर पर खुल जाने की बात है न कि जान-बूझकर खोलने की। यानी अगर कोई औरत नमाज़ की मुशग़ूलियत में या काम-काज में व्यस्त रहने की वजह से या और किसी मजबूरी के सबब अपना चेहरा खोले तो ग़ैर-मेहरम को जायज़ नहीं कि वह उसके चेहरे को ताकता रहे, क्योंकि इससे पहली ही आयत में मर्दों को नज़रें नीची करने की

ताकीद फ़रमा दी गयी है। बाद में औरतों के मुताल्लिक अहकाम ज़िक्र किये हैं। मर्दों को नज़रें नीची रखने का जो हुक्म दिया गया है उससे जहाँ बाज़ारों और रास्तों में औरतों पर नज़रें डालने की मनाही साबित हुई वहाँ यह भी साबित हुआ कि औरतें अगर मुँह खोले हुए काम-काज में मशग़ूल हों या पर्दा न करें तो जो मर्द उनके मेहरम न हों उनको कसदन नज़र डालना मना है।

सूरः नूर की ऊपर लिखी गयी आयत की हमने ज़्यादा तफ़सील व तशरीह (व्याख्या) इसलिए की है कि कुरआन से पर्दे और पर्दे के अहकाम का सुबूत माँगने वालों को अपनी टेढ़ी चाल का इल्म हो जाये। इस आयत में पहले आँखें नीची करने का हुक्म दिया है, फिर औरतों को हुक्म दिया है कि बनाव-सिंघार की जगहों को पोशीदा रखने का एहतिमाम करें। यह बात कि ना-मेहरमों के सामने चेहरा खोले रहें और ना-मेहरम उनको देखा करें, आयत से साबित करना सख़्त नादानी है।

औरतों को घरों में रहने का हुक्म

सूरः अहज़ाब में इरशाद है:

तर्जुमाः ऐ नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की बीवियो! तुम मामूली औरतों की तरह नहीं हो, अगर तुम परहेज़गारी इख़्तियार करो, पस तुम (ना-मेहरम मर्द से) बोलने में (जबकि ज़रूरत के तहत बोलना पड़े) नज़ाकत (लचीला अन्दाज़ इख़्तियार) मत करो, क्योंकि इससे ऐसे शख़्स को दिली मैलान हो जायेगा जिसके दिल में रोग होगा, (बल्कि) तुम कायदे के मुवाफ़िक बात करो (जैसे पाकदामन औरतें इख़्तियार करती हैं, और तुम अपने घरों में रहो, और पुराने जहालत के ज़माने के दस्तूर के मुवाफ़िक मत फिरो, और तुम नमाज़ की पाबन्दी रखो और ज़कात अदा करो, और अल्लाह और उसके रसूल की फ़रमाँबरदारी करो। (सूरः अहज़ाब आयत 33)

इन आयतों में पहले तो यह हुक्म दिया गया है कि किसी ग़ैर-मेहरम से ज़रूरत की वजह से अगर बात करनी पड़े तो गुफ़्तगू के अन्दाज़ में नज़ाकत और लहजे में कशिश के तरीके पर बात न करें। जिस तरह चाल-ढाल और रफ़्तार के अन्दाज़ से दिल खिंचते हैं, उसी तरह गुफ़्तगू के नज़ाकत वाले अन्दाज़ की तरफ़ भी कशिश होती है। औरत की आवाज़ में फ़ितरी तौर पर नर्मी और लहजे में दिलकशी होती है।

पाक-नफ़्स औरतों की यह शान है कि ग़ैर-मर्दों से बात करने में बे-तकल्लुफ ऐसा लबो-लहजा इख़्तियार करें जिसमें खुरदुरापन और रूखापन हो, ताकि किसी बद-नीयत का दिली मैलान न होने पाये।

दूसरा हुक्म यह इरशाद फ़रमाया कि तुम अपने घरों में रहो। इससे मालूम हुआ कि औरतों के लिए दिन-रात गुज़ारने की असल जगह उनके अपने घर ही हैं। शरअ़न जिन ज़रूरतों के लिए घर से निकलना जायज़ है, पर्दे की ख़ूब पाबन्दी के साथ ज़रूरत के हिसाब से निकल सकती हैं। आयत के मज़मून से साफ तौर पर मालूम हो रहा है कि बिना ज़रूरत पर्दे के साथ भी बाहर निकलना अच्छा नहीं है। जहाँ तक हो सके ना-मेहरम की नज़रों से लिबास भी पोशीदा रखना चाहिये।

पुराने जाहिलीयत के ज़माने के दस्तूर के मुताबिक़ फिरने की मनाही

तीसरा हुक्म यह दिया गया कि जाहिलीयत के पुराने ज़माने के मुताबिक़ फिरा मत करो। पुराने ज़माने की जहालत से अ़रब की वह जाहिलीयत मुराद है जो हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नबी बनकर तशरीफ़ लाने से पहले अ़रब के रिवाज और रस्में समाज में जगह पकड़े हुए थीं। उस ज़माने की औरतें बेहयाई और बेशर्मी के साथ बिना झिझक बाज़ारों में और महफ़िलों में और गली-कूचों में बेपर्दा होकर फिरा करती थीं, और बन-ठनकर निकलती थीं। सर पर या गले में फ़ैशन के लिए दुपट्टा डाल लिया, न उससे सीना ढका, न कान और चेहरा छुपाया, जिधर को जाना हुआ चल पड़ीं। मर्दों की भीड़ में घुस गईं। न अपने पराये का फ़र्क़ न ग़ैर-मेहरमों से बचने का फ़िक्र। यह था क़दीम और पहली जाहिलीयत का रिवाज और समाज, जो आज भी इस्लाम का दावा करने वाली औरतों में जगह ले चुका है। और दीन में नई बात निकालने वाले पर्दे के तोड़ने की दावत देकर उसी क़दीम ज़माने की जाहिलीयत का फिर प्रसार करना चाहते हैं जिसके मिटाने के लिए क़ुरआन करीम उतरा। सूरः अहज़ाब ही में इरशाद है:

तर्जुमाः और जब तुम उनसे कोई चीज़ माँगो तो पर्दे के बाहर से माँगा करो। (सूरः अहज़ाब आयत 53)

यहाँ बाज़ लोग यह सवाल उठाते हैं कि इन आयतों में नबी करीम की

पाक बीवियों को ख़िताब है। (जिनको उम्महातुल-मोमिनीन यानी मोमिनों की माएँ कहते हैं) फिर आप दूसरी मुसलमान औरतों पर इस क़ानून को क्यों लागू करते हैं? यह लचर सवाल शरीअत का पूरा और मुकम्मल इल्म न होने के सबब उठाया जाता है। अगर क़ुरआन के मिज़ाज से यह लोग वाक़िफ़ होते और इसको जान लेते कि क़ुरआन का ख़िताब ख़ास और हुक्म आम हुआ करता था तो ऐसा सवाल न करते। हज़राते सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम, ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन रज़ियल्लाहु अन्हुम, दीन के इमाम और बुज़ुर्ग हज़रात हमेशा यही समझते और कहते आये हैं कि इन आयतों में अगरचे नबी पाक की पाक बीवियों को मुख़ातब किया गया है लेकिन ये अहकाम तमाम औरतों के लिए आम हैं। पूरी उम्मत के आलिमों और नबी करीम की पाक हदीसों से यह बात साबित शुदा है कि इन आयतों का हुक्म उम्मत की तमाम माओं, बहनों और बेटियों के लिए आम है।

एक मोटी समझ वाला इनसान भी (जिसे ख़ुदा का ख़ौफ़ हो) इन आयतों से यह नतीजा निकालने पर मजबूर होगा कि नबी पाक की पाक बीवियों के लिए यह हुक्म है कि अपने घरों ही में रहा करें और जाहिलीयत वाले पुराने दस्तूर के मुताबिक़ बाहर न निकलें, हालाँकि उनको तमाम मोमिनों की मायें फ़रमाया गया:

وَ اَزْوَاجُهٗۤ اُمَّهٰتُهُمْ

यानी नबी पाक की बीवियाँ मोमिनों की माएँ हैं।

तो उम्मत की दूसरी औरतों के लिए बेपर्दा होकर बाहर निकलना क्योंकर दुरुस्त होगा? अदब व सम्मान और उनके बुलन्द रुतबे के सबब उम्मत की नज़रें जिन पाक औरतों पर नहीं पड़ सकती थीं, जब उनको भी घरों में रहने का हुक्म दिया गया है तो जिन औरतों की तरफ़ जान-बूझकर नज़रें उठायी जाती हों और ख़ुद ये औरतें भी मर्दों को अपनी तरफ़ माईल करने का इरादा रखती हों, उनको जाहिलीयत के क़दीम ज़माने के तरीक़े पर बाहर निकलने की कैसे इजाज़त होगी? क्या यह बात समझ में आ सकती है कि नबी करीम के ख़ानदान की चन्द औरतों को छोड़कर उम्मत की करोड़ों औरतों को क़दीम ज़माने की जाहिलीयत की तरह बाहर फिरने की इजाज़त क़ुरआन शरीफ़ की तरफ़ से दी गयी हो?

ज़िक्र हुई आयतों में जो अहकाम बयान हुए हैं, ये बिगाड़ और ख़राबी के असबाब को रोकने के लिए हैं। और ज़ाहिर है कि दूसरी औ़रतें इन असबाब से रोकने की ज़्यादा मोहताज हैं। फिर आम औ़रतों को इन अहकाम से अलग करना जहालत नहीं तो क्या है?

सूरः अहज़ाब में नबी करीम की पाक बीवियों और पाक बेटियों के साथ-साथ आ़म मुसलमानों की औ़रतों को भी पर्दे का हुक्म दिया गया है

सूरः अहज़ाब में यह भी इरशाद है:

तर्जुमाः ऐ नबी (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम)! आप अपनी बीवियों से और अपनी बेटियों से और मुसलमानों की औ़रतों से फ़रमा दीजिये कि (जब मजबूरी की बिना पर घरों से बाहर जाना पड़े तो) अपने (चेहरों के) ऊपर चादरों का हिस्सा लटका लिया करें। (सूरः अहज़ाब आयत 59)

इस आयत से चन्द बातें साबित हुईं:

पहली यह कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बीवियों और बेटियों (रज़ियल्लाहु अ़न्हुन्-न) के साथ दूसरी मुसलमानों की औ़रतों को भी पूरा बदन और चेहरा ढाँक के निकलने के हुक्म में शरीक फ़रमाया गया है। इससे भी उन लोगों की कम-अ़क़्ली की साफ़ तौर पर तरदीद (खंडन) हो गयी है जो यह बातिल दावा करते हैं कि पर्दे का हुक्म सिर्फ़ नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पाक बीवियों के लिए ख़ास था।

दूसरी बात जो इस आयत से साबित हो रही है वह पर्दे के लिए चेहरे पर चादर लटकाने का हुक्म है। इससे उन जाहिल और गुमराह लोगों के दावों का रद्द होता है जो दीन में अपनी अ़क्ल चलाकर यह कहते हैं कि औ़रतों को चेहरा छुपाकर निकलने का हुक्म इस्लाम में नहीं है।

तफ़सीर इब्ने कसीर में इस आयत की तफ़सीर करते हुए हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु का इरशाद नक़ल किया है कि:

अल्लाह तआ़ला ने मोमिनों की औ़रतों को हुक्म दिया है कि जब किसी मजबूरी से अपने घरों से निकलें तो उन चादरों से चेहरों को ढाँक लें जो सरों के ऊपर ओढ़ रखी हैं, और राह चलने के लिए सिर्फ़ एक आँख खोल लें।

तीसरी बात इस आयत से यह स्पष्ट हो रही है कि पर्दे के लिए 'जलबाब' (बड़ी चादर) इस्तेमाल करने का हुक्म है। अरबी ज़बान में 'जलबाब' बड़ी चादर को कहते हैं जिसे औरतें अपने पहनने के लिए कपड़ों के ऊपर लपेटकर बाहर निकलती हैं। कुरआन शरीफ़ ने इस आयत में हुक्म दिया है कि औरतें जिस तरह जलबाब बदन के हिस्सों पर ऊपर पहने हुए कपड़ों पर लपेटती हैं इसी तरह चेहरों पर भी उसका एक हिस्सा लटका लिया करें। इस तरह की चादर का रिवाज बाज़ इलाक़ों की औरतों में अब तक है और बुर्क़ा उसी जलबाब की एक तरक़्क़ी-याफ़्ता (आधुनिक) शक्ल है। बुर्क़े के बारे में यह कहना कि इस्लामी शरीअ़त में इसकी कोई असल नहीं है, यह सरासर जहालत की बात है। बुर्क़े का सुबूतऊपर बयान हुई आयत के हिस्से "युदनी-न अ़लैहिन्-न मिन् जलाबीबिहिन्-न" से हो रहा है।

और बाज़ जाहिल यह कहते हैं कि यह हुक्म वक़्ती हालात के लिए था। उस वक़्त मुनाफ़िक़ लोग शरारत करते थे। पस जबकि मुनाफ़िक़ लोगों का दमन हो गया और उनसे ख़तरा न रहा तो यह हुक्म मनसूख़ (निरस्त) हो जाना चाहिये। जवाब इसका यह है कि फ़ितना व फ़साद रोकने के लिए यह हुक्म दिया गया था, और इस दौर में जबकि फ़ितना व फ़साद बहुत ज़्यादा है। इज़्ज़त व आबरू के दुश्मन बढ़ गये हैं, जो बुरी नज़र वाले और बद-नफ़्स हैं, जो अपनी बुरी फ़ितरत के सबब औरतों को ताकते-झाँकते और परेशान करते हैं। तो इस हुक्म की अहमियत और ज़्यादा हो गयी। इस आयत के उतरने का सबब जो भी हो, हुक्म आ़म हुआ करता है। जिनको समझ और अ़क़्ल है वह इसकी अहमियत को अच्छी तरह समझते हैं। आजकल तो खुली आँखों दिखाई दे रहा है कि शरीअ़त के इस हुक्म पर अ़मल करना कितना ज़रूरी है।

एक ग़लत-फ़हमी का निवारण

बाज़ लोग यह भी कहते हैं कि पर्दे का हुक्म तो इस्लाम में है लेकिन चेहरे का पर्दा नहीं है। उन नादानों की समझ में यह भी नहीं आता कि अगर चेहरे का पर्दा नहीं है तो मर्दों और औरतों को नज़रें नीची रखने का क्यों हुक्म है? (जो सूरः नूर में स्पष्ट तौर पर मौजूद है)। चेहरे ही में कशिश है और वही तमाम ख़ूबसूरती और हुस्न का केन्द्र है। सूरः अहज़ाब की आयतः

"युदनी-न अ़लैहिन्-न मिन् जलाबीबिहिन्-न" से चेहरा ढाँकने का वाज़ेह हुक्म मालूम हो रहा है। और बाज़ लोगों को नमाज़ के मसले से धोखा हुआ है, औरत का 'सतर' (छुपाने का हिस्सा) नमाज़ के लिए इतना है कि चेहरा और गट्टों तक दोनों हाथ और टख़्नों तक दोनों क़दमों के अ़लावा पूरा जिस्म ऐसे कपड़े में ढका हुआ रहे कि बाल और खाल अच्छी तरह छुप जाये। नमाज़ में अगर चेहरा खुला रहे तो नमाज़ हो जायेगी। फ़ुक़हा (दीन के आ़लिमों) की किताबों में यह मसला नमाज़ की शर्तों के बयान में लिखा है, पर्दे के बयान में नहीं लिखा। मुँह खोलकर नमाज़ हो जाने के जायज़ होने से ग़ैर-मेहरम के सामने बेपर्दा होकर आने का सुबूत देना बड़ी बद-दियानती है।

क़ुरआन व हदीस से मसाइल निकालने वाले आ़लिमों पर अल्लाह की हज़ारों रहमतें हों। उन पाक-दिल बुज़ुर्गों के दिल पहले ही खटक गये थे कि कम-अ़क़्ल लोग नमाज़ के मसाइल में जो बात बयान हुई है वे इससे ना-मेहरमों के सामने बेपर्दा होकर आने पर दलील पकड़ेंगे। 'दुर्रे मुख़्तार' (मसाइल की बहुत मशहूर और मोतबर किताब) में जहाँ नमाज़ की शर्तों के बयान में यह मसला लिखा है कि चेहरा और हथेलियाँ और दोनों पाँव ढाँकना नमाज़ के सही होने के लिए ज़रूरी नहीं है, वहीं यह भी दर्ज है:

"और जवान औ़रत को (ना-मेहरम) मर्दों के सामने चेहरा खोलने से रोका जायेगा (और यह रोकना) इस वजह से नहीं कि चेहरा (नमाज़ के) 'सतर' में दाख़िल है, बल्कि इसलिए कि ना-मेहरम के सामने चेहरा खोलने में फ़ितने (ख़राबी और बिगाड़) का डर है"। (दुर्रे मुख़्तार पेज 284 जिल्द 1)

शैख़ इब्ने हुमाम रहमतुल्लाहि अ़लैहि 'ज़ादुल-फ़क़ीर' में नमाज़ की शर्तें बयान करते हुए लिखते हैं:

"फ़तावा की किताबों में है कि सही मसला यह है कि कानों से ऊपर (यानी बाल और सर) के खुल जाने से नमाज़ फ़ासिद होगी, और ग़ैर-मर्दों के लिए कानों के ऊपर का हिस्सा और कानों के नीचे का हिस्सा यानी चेहरे वग़ैरह के देखने का एक ही हुक्म है। यानी दोनों हिस्सों का देखना हराम है"।

बहुत-से लोग नमाज़ भी पढ़ते हैं और अपने को दीनदार भी समझते हैं, और पर्दे को भी मानते हैं, ये लोग बेदीन और गुमराह लोगों की बातों से मुतास्सिर हैं। जिन लोगों के दिलों में थोड़ा-बहुत इस्लाम से ताल्लुक़ बाक़ी है उनको हक़ रास्ते से हटाने के लिए शैतान ने यह नयी चाल चली है कि हर

ऐसे हुक्म को जिसके मानने से नफ़्स भागता है, मौलवी का तैयार किया हुआ बता देता है, और उसकी बात का यक़ीन करने वाले इस धोखे में पड़े रहते हैं कि हमने न इस्लाम को झुठलाया न क़ुरआन के मानने से इनकार किया, बल्कि मौलवी के ग़लत मसले का इनकार किया है। काश! ये लोग अपने मोमिन होने की ज़िम्मेदारी का एहसास करते और सही आ़लिमों से घुल-मिलकर उनके ज़ाहिरी व बातिनी हालात का जायज़ा लेते, और उनके बयान किये हुए मसाइल की दलीलें मालूम करके अपने नफ़्सों को मुत्मईन करते। जो सच्चे आ़लिम हैं वे अपनी तरफ़ से किसी हुक्म को तजवीज़ करके उम्मत के सर नहीं मंढते, और न वे ऐसा करने का हक़ रखते हैं।

बात सिर्फ़ इतनी-सी है कि चूँकि दीन के आ़लिमों को क़ुरआन व हदीस की तशरीहात (व्याख्याएँ) और शरीअ़त के अहकाम की पूरी-पूरी तफ़सील मालूम हैं, साथ ही दीन में जो गुन्जाइश और सहूलियतें हैं वे उनको भी जानते हैं। और शरीअ़त की जो हदें और पाबन्दियाँ हैं वे उनसे भी वाक़िफ़ हैं। इसलिए अपनी तक़रीरों और मज़ामीन व तहरीरों के ज़रिये शरीअ़त के अहकाम की हदों व पाबन्दियों और क़ानूनों व शर्तों से उम्मत को आगाह फ़रमाते रहते हैं।

स्कूलों और कालिजों के पढ़े हुए नीम-मुल्ला चूँकि शरीअ़त का पूरा इल्म नहीं रखते, इसलिए शरीअ़त के तथ्यों और बल्कि जिन मसाइल में उम्मत के आ़लिमों का इत्तिफ़ाक़ है उनको भी मौलवी की ईजाद कहकर टाल देते हैं। और यह अ़जीब तमाशा है कि जिस मसले पर अ़मल न करना हो उससे बचने के लिए "मौलवी की ईजाद" का बहाना पेश कर देते हैं, हालाँकि नमाज़, रोज़ा वग़ैरह के जिन मसाइल पर अ़मल करते हैं वे भी तो मौलवियों ने ही बताये हैं। लेकिन चूँकि भागने की नीयत नहीं है इसलिए उनको सही मानते हैं। क़ियामत के मैदान में जब पेशी होगी तो क्या ऐसी टेढ़ी चाल और बहाने बनाने से जान बच सकेगी?

नबी पाक सल्ल० के ज़माने में पर्दे की ख़ास पाबन्दी थी

हदीसः (210) हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि नबी पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तीन दिन ख़ैबर और मदीना के दरमियान ठहरे। तीनों दिन हज़रत सफ़िया रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने आपके साथ रात गुज़ारी (और

वहीं जंगल में वलीमा हुआ)। वलीमे में कोई गोश्त-रोटी नहीं थी (बल्कि अलग-अलग किस्म की चीज़ें थीं) नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने चमड़े के दस्तरख़्वान बिछाने का हुक्म फरमाया, जिस पर खजूरें और पनीर घी लाकर रख दिया गया। मैं लोगों को बुला लाया, लोगों ने वलीमे की दावत खायी। (पूरे लश्कर में से जिनको निकाह का इल्म न हुआ था वे) लोग इस दुविधा में रहे कि सफ़िया रज़ियल्लाहु अन्हा से नबी पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने निकाह फ़रमा लिया या बाँदी बना लिया है? फिर उन लोगों ने खुद ही इसका फ़ैसला कर लिया कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनको पर्दे में रखा तो हम समझेंगे कि आपकी बीवी हैं और उम्महातुल-मोमिनीन में से हैं, वरना यह समझेंगे कि आपने उनको बाँदी बना लिया है। चुनाँचे आपने जब कूच फ़रमाया तो अपनी सवारी पर उनके लिए पीछे जगह बनायी और उनको सवार करके उनके और लोगों के दरमियान पर्दा तान दिया। इससे सब समझ गये (कि उम्मुल-मोमिनीन हैं)। (बुख़ारी शरीफ 775 जिल्द 2)

तशरीहः सन् सात (7) हिजरी में नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ग़ज़्वा-ए-ख़ैबर के लिए तशरीफ़ ले गये। ख़ैबर में यहूदी रहते थे। (उनमें हज़रत सफ़िया का बाप हय्यि बिन अख़्तब भी था। इस जंग में हज़रत सफ़िया रज़ियल्लाहु अन्हा का शौहर कत्ल हो गया था। जंग के ख़त्म पर जब कैदी जमा किये गये तो उनमें हज़रत सफ़िया भी थीं। हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इनको आज़ाद करके निकाह फ़रमा लिया।

हज़रात सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम में यह बात बहुत मज़बूती के साथ जमी हुई थी कि आज़ाद औरत को पर्दे में रहना लाज़िम है। इसी लिए उन्होंने खुद ही फ़ैसला कर लिया कि नबी पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इनको पर्दे में रखा तो हम समझेंगे कि आपकी बीवी हैं, वरना यह समझेंगे कि आपने इनको बाँदी बना लिया है। फिर जब रवानगी के वक़्त नबी पाक ने उनके और लोगों के दरमियान पर्दा तान लिया तो सबने समझ लिया कि बाँदी नहीं बल्कि बीवी हैं। अगर उस ज़माने में पर्दे का रिवाज न होता तो हज़रात सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम के दिलों में यह सवाल ही पैदा न होता।

ऊपर के मसले में बाँदी से मुराद शरई बाँदी है। जो काफ़िर औरतें मैदाने जिहाद से कैद होकर आती थीं और मुसलमानों का अमीर उनको मुजाहिदीन पर तक़सीम कर देता था वे शरई बाँदियाँ बन जाती थीं।

मुसलमानों ने जब से शरई जिहाद छोड़ा है उस वक़्त से गुलाम और बाँदियाँ भी मौजूद नहीं रहे। जो औरतें नौकरी और मज़दूरी पर घरों में काम करती हैं ये बाँदियाँ नहीं हैं। इनको पर्दे की वैसी ही पाबन्दी करनी लाज़िम है जो हर आज़ाद औरत के लिए ज़रूरी है। इसी तरह जो लड़के अमीर घरानों में मुलाज़िम होते हैं, जब बालिग़ हो जायें या बालिग़ होने के क़रीब पहुँच जायें तो उनसे पर्दा करना लाज़िम है। कैसी बेशर्मी की बात है कि नौकरों के सामने बहू-बेटियाँ आती हैं और ज़रा भी गुनाह और ऐब नहीं समझतीं।

सफ़र में शादी और वलीमा

ऊपर की हदीस में जो वाकिआ ज़िक्र हुआ है, हम लोगों के लिए एक और एतिबार से भी इबरत के क़ाबिल है। नबी पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सफ़र ही में निकाह फ़रमा लिया और सफ़र ही में सुहागरात हो गयी और वलीमा भी वहीं हो गया। लोगों ने शादी-विवाह के लिए बड़े बखेड़े तजवीज़ कर रखे हैं। उन बखेड़ों की वजह से शादियों में देर हो जाती है, और भारी कर्ज़ों के नीचे आ जाते हैं। दुनिया भर के यार-रिश्तेदार जमा हों, जो सफ़र के ख़र्चे करके आयें और औरतों की घढ़ी हुई रस्मों की पाबन्दी हो। मकान लीप-पोत कर सजाये जायें। दूल्हा-दुल्हन के लिए बहुत जोड़े बनें, ज़ेवरात तैयार हों, और इसी तरह की बहुत-सी पाबन्दियाँ और शर्तें पीछे लगा रखी हैं, जो ख़ानदानों के लिए अज़ाब बनी हुई हैं। इन रस्मों को बहुत-से लोग मुसीबत समझते हैं मगर औरतों के फन्दे और रिवाज के शिकन्जे में अपने को ऐसा फंसा रखा है कि सुन्नत के मुवाफ़िक़ सादा तरीक़े पर शादी-विवाह करने को ऐब जानते हैं। अल्लाह तआला हिदायत फ़रमाये।

एक बात इस हदीस से यह मालूम हुई कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जो इस मौक़े पर वलीमा किया उसमें गोश्त-रोटी नहीं थी। कुछ पनीर कुछ दूसरी चीज़ें थीं। मौजूद लोगों के सामने वही रख दी गईं। मालूम हुआ कि वलीमा बग़ैर बकरे काटे और क़ीमती खाने पकाये भी हो सकता है, और ग़रीब आदमी भी वलीमे की सुन्नत पर अमल कर सकता है। इस तरह के वलीमे से अगरचे नाम न होगा, जिसके आज के मुसलमान लालची और इच्छुक हैं, मगर सुन्नत अदा हो जायेगी।

मुसीबत के वक़्त भी पर्दा लाज़िम है

हदीसः (211) हज़रत कैस बिन शम्मास रज़ियल्लाहु अ़न्हु का बयान है कि एक सहाबी औ़रत जिनको उम्मे ख़ल्लाद कहा जाता है, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में अपने बेटे के मुताल्लिक मालूमात हासिल करने की ग़रज़ से हाज़िर हुईं। उनका बेटा (किसी लड़ाई में) शहीद हो गया था। जब वह आईं तो अपने चेहरे पर नक़ाब डाले हुए थीं। उनका यह हाल देखकर किसी सहाबी ने कहा कि तुम अपने बेटे का हाल मालूम करने के लिए आयी हो और नक़ाब डाले हुए हो? हज़रत उम्मे ख़ल्लाद रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने जवाब दिया कि अगर बेटे के बारे में मुसीबत-ज़दा हो गयी हूँ तो अपनी शर्म व हया खोलकर हरगिज़ मुसीबत-ज़दा न बनूँगी। (यानी हया का चला जाना ऐसी मुसीबत में डालने वाली चीज़ है जैसे बेटे का ख़त्म हो जाना)। हज़रत उम्मे ख़ल्लाद रज़ियल्लाहु अ़न्हा के पूछने पर हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जवाब दिया कि तुम्हारे बेटे के लिए दो शहीदों का सवाब है। उन्होंनें अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! क्यों? इरशाद फ़रमायाः इसलिए कि उसे अहले किताब ने कत्ल किया है। (अबू दाऊद शरीफ़ पेज 336 जिल्द 1)

तशरीहः इस वाक़िए से भी उन लोगों का रद्द होता है जो पश्चिम की तहज़ीब में रंगे हुए हैं। जो चेहरे को पर्दे से ख़ारिज करते हैं। और यह भी साबित होता है कि पर्दा हर हाल में लाज़िम है। रंज हो या खुशी, ना-मेहरम के सामने बेपर्दा होकर आना मना है। बहुत-से मर्द और औ़रत ऐसा तर्ज़ इख़्तियार करते हैं कि गोया उनके नज़दीक शरीअ़त का कोई क़ानून मुसीबत के वक़्त लागू नहीं है। जब घर में कोई मौत हो जायेगी तो इस बात को जानते हुए कि बयान करके रोना सख़्त मना है, औ़रतें ज़ोर-ज़ोर से नौहा (यानी बयान कर-करके रोना) करती हैं। जनाज़ा जब घर से बाहर निकाला जाता है तो औ़रतें दरवाज़े के बाहर तक उसके पीछे चली जाती हैं, और पर्दे का कुछ ख़्याल नहीं करतीं। ख़ूब याद रखो गुस्सा हो या रज़ामन्दी, ख़ुशी हो या मुसीबत, हर हाल में शरीअ़त के अहकाम की पाबन्दी करना लाज़िम है।

इलाज कराने में पर्दे की पाबन्दी वाजिब है

हदीसः (212) हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि उम्मुल-मोमिनीन हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने हुज़ूर सल्लल्लाहु

अलैहि व सल्लम से सींगी लगवाने की इजाज़त तलब की, लिहाज़ा नबी करीम ने अबू तैबा रज़ियल्लाहु अन्हु को हुक्म दिया कि उम्मे सलमा (रज़ियल्लाहु अन्हा) को सींगी लगा दें।

यह वाक़िआ बयान करने के बाद जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि अबू तैबा से जो सींगी लगवायी तो मेरे ख़्याल में इसकी वजह यह थी कि वह हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा के दूध-शरीक भाई थे, या नाबालिग़ लड़के थे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 268)

तशरीहः इस हदीस से मालूम हुआ कि औरत के इलाज के सिलसिले में भी पर्दे का ख़्याल रखना ज़रूरी है। अगर मुआलिज (इलाज करने वाले, डॉक्टर) के सामने बेपर्दा आ जाने में कुछ हर्ज न होता तो हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु को यह क्यों बताना पड़ा कि अबू तैबा रज़ियल्लाहु अन्हु हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा के दूध-शरीक भाई या नाबालिग़ लड़के थे। हमारे ज़माने के लोगों का अजीब हाल है कि जिन ख़ानदानों और घरों में पर्दे का एहतिमाम है, इलाज के सिलसिले में उनके यहाँ भी पर्दे का ख़्याल छोड़ दिया जाता है।

ऊपर जो हदीस दर्ज की गयी है उससे मालूम हुआ कि औरत के इलाज के लिए मेहरम को तलाश करें। अगर कोई मेहरम इलाज करने वाला न मिले तो ग़ैर-मेहरम से भी इलाज करा सकते हैं।

इलाज के लिए सतर खोलने के अहकाम

लेकिन शरीअत के इस अहम उसूल का ख़्याल रखना लाज़िम है कि ज़रूरत, ज़रूरत ही के मुताबिक़ रखी गयी है। जिसका मतलब यह है कि मजबूरी में जितने बदन का दिखाना ज़रूरी है, इलाज करने वाला बस उसी क़द्र देख सकता है- जैसे इलाज के लिए नब्ज़ देखने और हाल कहने से काम चल सकता है तो इससे ज़्यादा देखने या हाथ लगाने की इजाज़त न होगी। इसी तरह अगर बाज़ू में पिंडली में ज़ख़्म है तो जितनी जगह मजबूरी में देखने की ज़रूरत हो बस उसी क़द्र मुआलिज (इलाज करने वाला) देख सकता है। अगर इलाज की मजबूरी के लिए आँख, नाक, दाँत, देखने हैं तो इस सूरत में पूरा चेहरा खोलना जायज़ नहीं है, जिस क़द्र देखने से काम चल सकता हो बस उसी क़द्र दिखा सकते हैं, बल्कि ऐसे मुआलिज के लिए भी

यही तफ़सील है जो औरत का मेहरम हो। और वजह इसकी यह है कि मेहरम को औरत का पूरा बदन देखना जायज़ नहीं है क्योंकि औरत को अपने मेहरम के सामने पेट और पीठ और रान खोलना मना है। पस अगर पेट या पीठ में ज़ख़्म हो तो हकीम-डॉक्टर चाहे मेहरम हो या ना-मेहरम, सिर्फ़ ज़ख़्म की जगह देख सकता है, उससे ज़्यादा दिखाना गुनाह है। जिसकी सूरत यह है कि पुराना कपड़ा पहनकर ज़ख़्म के ऊपर का हिस्सा काट दिया जाये ताकि पेट या पीठ के बक़ीया हिस्से पर उसकी नज़र न पड़े, और चूँकि औरत को नाफ़ से लेकर घुटनों के ख़त्म तक किसी औरत के सामने भी खोलना नाजायज़ है इसलिए अगर लेडी डॉक्टर को जैसे रान या कूल्हों का फोड़ा वग़ैरह दिखाना मक़सद हो तो इस सूरत में भी कपड़ा काटकर सिर्फ़ फोड़े की जगह दिखाई जाये।

इसके साथ यह याद रखना भी ज़रूरी है कि ज़रूरत के लिए हकीम-डॉक्टर को जो जगह दिखाई जाये तो मौजूद लोगों में जो रिश्तेदार और क़रीबी लोग मौजूद हों उनको उस जगह के देखने की इजाज़त नहीं है। हाँ! अगर मौजूद लागों में से कोई शख़्स ऐसा है जिसे शरअ़न उस जगह को देखना जायज़ है तो वह इस पाबन्दी से ख़ारिज है। जैसे अगर पिंडली में ज़ख़्म है और वह डॉक्टर या जर्राह को दिखाना है और औरत का बाप, सगा भाई भी वहाँ मौजूद है, उसने अगर देख लिया तो गुनाह न होगा, क्योंकि पिंडली का खोलना मेहरम के सामने दुरुस्त है।

फ़ायदाः यह तफ़सील जो अभी-अभी ज़िक्र की गयी है, मर्द के इलाज के सिलसिले में भी है, क्योंकि नाफ़ से लेकर घुटने तक मर्द का मर्द से भी पर्दा है। अगर रान या कूल्हों का ज़ख़्म किसी डॉक्टर को दिखाना है या कूल्हे में किसी मजबूरी से इन्जेक्शन लगवाना है तो सिर्फ़ डॉक्टर ज़रूरत के हिसाब से बदन देख सकता है, दूसरे लोगों को देखना हराम है।

मसलाः गर्भ वग़ैरह के ज़माने में अगर दाई से पेट मलवाना हो तो नाफ़ से नीचे का बदन खोलना दुरुस्त नहीं है। चादर वग़ैरह डाल लेनी चाहिये, बिना ज़रूरत कोई जगह दाई को भी दिखाना जायज़ नहीं।

बच्चे की पैदाईश के मौक़े पर बे-एहतियाती

बच्चा पैदा होने के वक़्त दाई और नर्स को सिर्फ़ ज़रूरत के मुताबिक

पैदाईश की जगह देखना जायज़ है, उससे ज़्यादा देखना मना है। और आस-पास जो औरतें मौजूद हों अगरचे माँ-बहनें ही हों, उनको भी देखना मना है, क्योंकि उनका देखना बिना ज़रूरत है। लिहाज़ा उनको नज़र डालने की इजाज़त नहीं। यह जो दस्तूर है कि औरत को नंगा करके डाल देते हैं और सब औरतें देखती रहती हैं, यह हराम है।

मसलाः अगर ग़ैर-मुस्लिम दाई या नर्स बच्चा पैदा कराने के लिए बुलायी जाए तो उसके सामने सर खोलना हराम होगा, क्योंकि काफ़िर औरत के सामने मुसलमान औरत सिर्फ़ मुँह और गट्टों तक दोनों हाथ और टख़्नों से नीचे दोनों पैर खोल सकती है। इनके अलावा एक बाल का खोलना भी दुरुस्त नहीं। ग़ैर-मुस्लिम औरतें जैसे भंगन, धोबन, नर्स, लेडी डॉक्टर वग़ैरह जो भी हों उन सब के मुताल्लिक यही हुक्म है।

कुछ नई तालीम वाले लोगों में यह रिवाज है कि बजाय दाईयों के मर्द डाक्टरों से बच्चा जनवाते हैं, जबकि अपनी हम-जिन्स को भी अपनी जिन्स के सतर की तरफ़ बिना ज़रूरत नज़र डालना मना है, तो ग़ैर-जिन्स के लिए कैसे जायज़ हो सकता है, और ग़ैर-जिन्स में भी जितनी दूरी होती जायेगी उतनी ही मनाही और हुरमत में सख़्ती बढ़ती जायेगी।

मुसलमान औरत की क़रीबी हम-जिन्स मुसलमान औरत है, पहले ज़रूरत के वक़्त उसी को इख़्तियार किया जाये, उसके बाद काफ़िर औरत है, उसके बाद डॉक्टर की अगर ज़रूरत ही आ पड़े तो मुसलमान डॉक्टर को इख़्तियार किया जाये, वह भी न हो तो काफ़िर की तरफ़ रुजू किया जाये। न यह कि शुरू ही में काफ़िर मर्द के पास ले जाये या उसको बुलाये। यह सख़्त बेहयाई और गुनाह की बात है। और बच्चे की पैदाईश कराने के लिए डॉक्टर और नर्स का ज़रूरी होना काबिले तस्लीम नहीं है, क्योंकि जब तक यह रिवाज शुरू न हुआ था तब भी बराबर बच्चे होते थे। और अब भी जिन ख़ानदानों में ग़ैरत और हया है उनमें बराबर बच्चे होते हैं और दाईयाँ पर्दे के साथ सब काम करती हैं।

तंबीहः बाज़ी औरतें मन्हिार से चूड़ियाँ पहनती हैं जिसकी वजह से उसके हाथ में हाथ देना पड़ता है, यह गुनाह है। चूँकि ऐसा करने की कोई मजबूरी नहीं है, इसलिए इससे परहेज़ करना लाज़िम है।

ससुराल वाले मर्दों से पर्दे की सख़्त ताकीद

हदीसः (213) हज़रत उक़बा बिन आमिर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि (ना-मेहरम) औरतों के पास मत जाया करो। एक शख़्स ने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! औरत की ससुराल के मर्दों के मुताल्लिक़ क्या हुक्म है? नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि ससुराल के रिश्तेदार तो मौत हैं। (मिश्कात शरीफ़ पेज 286)

तशरीहः इस हदीस में जो सबसे ज़्यादा क़ाबिले तवज्जोह चीज़ है वह यह है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने औरत की ससुराल के मर्दों को मौत से तश्बीह दी है। जिसका मतलब यह है कि औरत अपने जेठ और देवर और नन्दोई वग़ैरह से और इसी तरह ससुराल के दूसरे मर्दों से गहरा पर्दा करे। यूँ तो हर ना-मेहरम से पर्दा करना लाज़िम है लेकिन जेठ-देवर और उनके रिश्तेदारों के सामने आने से इसी तरह बचना ज़रूरी है जैसे मौत से बचने को ज़रूरी ख़्याल करते हैं, और वजह इसकी यह है कि इन लोगों को अपना समझकर अन्दर बुला लिया जाता है, बिला तकल्लुफ़ जेठ-देवर और शौहर के रिश्तेदार अन्दर चले जाते हैं, और बहुत ज़्यादा घुल-मिल जाते हैं, और हंसी-दिल्लगी तक नौबतें आ जाती हैं। शौहर यह समझता है कि ये तो अपने लोग हैं, इनसे क्या रोक-टोक की जाये, लेकिन जब दोनों तरफ़ एक-से जज़्बात हों और कसरत से आना-जाना हो और शौहर घर से ग़ायब हो तो फिर अनहोने वाक़िआत तक सामने आ जाते हैं। एक पड़ोसी किसी औरत को इतनी जल्दी अग़वा नहीं कर सकता जितनी जल्दी और आसानी से देवर या जेठ अपनी भाभी को अग़वा करने या बेहयाई के काम पर आमादा करने की ताक़त रखता है।

इन्हीं हालात को सामने रखते हुए नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ससुराल के मर्दों से बचने और पर्दे की सख़्त ताकीद फ़रमा दी है, और इन लोगों को मौत बताकर यह बताया है कि इनसे ऐसा परहेज़ करो जैसा मौत से बचती हो। और मर्दों को भी यही हुक्म है कि अपनी भावज और साले वग़ैरह की बीवी से ज़्यादा न घुलें-मिलें और उनपर नज़र न डालें।

बाज़ी औरतें अपने देवर को छोटी उम्र में परवरिश करती हैं और जब

वह बड़ा हो जाता है तो उससे पर्दा करने को बुरा समझती हैं। और अगर मसला बताया जाता है कि यह ना-मेहरम है तो कहती हैं कि इसको हमने छोटा-सा पाला है, रात-दिन साथ रहा है, इससे कैसा पर्दा? यह बड़े गुनाह की बात है कि आदमी गुनाह भी करे और शरीअ़त के मुक़ाबले में हुज्जतबाज़ी पर उतर आये। अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तो देवर को मौत बतायें और जहालत की मारी औरतें उसके सामने आने को ज़रूरी समझती हैं, यह क्या मुसलमानी है?

तंबीह: पर्दा शरीअ़त का हक़ है, शौहर का हक़ नहीं है। बहुत-सी औरतें समझती हैं कि शौहर जिससे पर्दा कराये उससे पर्दा किया जाये, और शौहर जिसके सामने आने को कहे उसके सामने आ जायें, यह सरासर ग़लत है। शौहर हो या कोई दूसरा शख़्स, उसके कहने से गुनाह करने की इजाज़त नहीं हो जाती, ख़ूब समझ लो।

नाबीना से पर्दा करने का हुक्म

हदीस: (214) उम्मुल-मोमिनीन हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा फ़रमाती हैं कि मैं और मैमूना रज़ियल्लाहु अ़न्हा हम दोनों रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास थीं कि अचानक अ़ब्दुल्लाह बिन उम्मे मकतूम (रज़ियल्लाहु अ़न्हु) सामने से आ गये और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास आने लगे। (चूँकि अ़ब्दुल्लाह नाबीना यानी अंधे थे, इसलिए हम दोनों ने उनसे पर्दा करने का इरादा नहीं किया और उसी तरह अपनी जगह बैठी रहीं) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि इनसे पर्दा करो। मैंने अ़र्ज़ किया ऐ अल्लाह के रसूल! क्या वह नाबीना (आँखों से अंधे) नहीं हैं? हमको तो वह नहीं देख रहे हैं। इसके जवाब में रसूलुल्लाह सल्ल० ने इरशाद फ़रमाया: क्या तुम दोनों (भी) नाबीना हो? क्या तुम उनको नहीं देख रही हो? (मिश्कात शरीफ़ पेज 269)

तशरीह: इस हदीस से मालूम हुआ कि औरतें भी जहाँ तक मुमकिन हो सके मर्दों पर नज़र न डालें। हज़रत अ़ब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अ़न्हु नाबीना थे, पाकबाज़ सहाबी थे, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की दोनों बीवियाँ निहायत पाकदामन थीं, इसके बावजूद भी आपने दोनों बीवियों को हुक्म फ़रमाया कि हज़रत अ़ब्दुल्लाह से पर्दा करें, यानी उनपर नज़र न डालें।

देखो! जहाँ बद-नज़री की ज़रा-सी भी आशंका न थी वहाँ इस क़द्र सख़्ती फ़रमायी, तो आजकल की औरतों के लिए इस मामले की क्योंकर इजाज़त हो सकती है कि मर्दों को झाँका-ताका करें? यूँ अगर कोई औरत किसी मजबूरी से सफ़र में निकली और रास्ता चलते हुए बिना इख़्तियार राहगीरों पर नज़र पड़ गयी तो वह दूसरी बात है, लेकिन जान-बूझकर मर्दों पर नज़र डालना मना है। सूरः नूर की आयत पहले गुज़र चुकी है, जिसमें मर्दों और औरतों को नज़रें नीची करने का हुक्म फ़रमाया है।

इसी से शादी-विवाह की इस बुरी रस्म की मनाही भी मालूम हुई कि जब दूल्हा दुल्हन को लेकर रुख़्सत होने लगता है तो उसको सलामी के लिए घर के अन्दर बुलाया जाता है और जो औरतें (कुनबे या पास-पड़ोस की या मेहमानी में दूर-दराज़ से आने वाली मौजूद) होती हैं, दूल्हा को देखती हैं और सालियाँ उससे मज़ाक़ करती हैं। कोई उसका जूता छुपाती है, और कोई उसके मुँह पर चूना लगाती है। इस तरह औरतों के भरे मजमे में एक ग़ैर-मेहरम मर्द का आ जाना जो जवानी से भरपूर है और बेहतरीन लिबास व पौशाक पहने हुए है, किसी तरह दुरुस्त नहीं। ख़ासकर जबकि औरतों का मक़सद दूल्हा को देखना होता है। यही वजह है कि सलामी की मजलिस ख़त्म होने के बाद औरतें बड़े खुले अन्दाज़ से दूल्हे की शक्ल व सूरत पर तबसिरे (टिप्पणियाँ) करती हैं।

बुरी निगाह डालना लानत का सबब है

हदीसः (215) हज़रत हसन बसरी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि मुझे यह हदीस पहुँची है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह की लानत हो देखने वाले पर और जिसकी तरफ़ देखा जाये उसपर भी। (मिश्कात शरीफ़ पेज 270)

तशरीहः यह हदीस बहुत-सी बातों पर मुश्तमिल है। जिसमें बतौर क़ायदा कुल्लिया के हर नज़र जो कि हराम हो उसे लानत का मुस्तहिक़ बताया है। और न सिर्फ़ देखने वाले पर लानत भेजी बल्कि अपनी ख़ुशी और इख़्तियार से जो कोई भी मर्द-औरत किसी ऐसी जगह खड़ा हो जहाँ से शरीअ़त के ख़िलाफ़ नज़र डाली जा सके, या कोई भी मर्द-औरत किसी मर्द-औरत के सामने अपने बदन का वह हिस्सा खोल दे या खुला रहने दे

जिसका देखना देखने वाले के लिए हलाल न हो, तो दिखाने वाला भी लानत का हक़दार है।

अपने इख़्तियार से बेपर्दगी की जगह खड़ा होने की निन्दा

इस हदीस की ज़्यादा तफ़सील और व्याख्या यह है कि कोई औरत बग़ैर पर्दे के बाज़ार या मेले में या पार्क में चली गयी, जिसकी वजह से ग़ैर-मर्दों ने उसे देख लिया, तो वह मर्द और औरत इस लानत के मुस्तहिक़ हुए। इसी तरह कोई औरत दरवाज़े से या खिड़की से या बरामदे से बाहर ताकती-झाँकती है, तो यह औरत बद-नज़री की वजह से लानत की मुस्तहिक़ (पात्र) हुई। इसी तरह शादी के मौक़े पर सलामी के लिए जब दूल्हा अन्दर घर में आ गया और ना-मेहरम औरतों को देखने का मौक़ा दिया तो यह दूल्हा औरतों के दरमियान बैठने की वजह से, और औरतें उसको देखने की वजह से लानत की हक़दार हुईं। किसी औरत ने किसी औरत को अगर नाफ़ से लेकर घुटनों के ख़त्म तक पूरा हिस्सा दिखला दिया तो देखने वाली और दिखाने वाली दोनों लानत की मुस्तहिक़ हुईं। किसी औरत ने अपने मेहरम यानी बाप भाई वग़ैरह के सामने अपना पेट या पीठ या रान खोल दी तो देखने वाला और दिखाने वाली दोनों ने लानत का काम कर लिया। बहुत-से घराने जिन पर पश्चिमी तहज़ीब की पैरवी का जुनून सवार है, उनमें यह आफ़त है कि अंग्रेज़ औरतों की देखा-देखी सिर्फ़ एक फ्रॉक पहने हुए घरों में रहती हैं और पायजामा और साड़ी की जगह ज़रा-सी लंगोटी या जाँघिया पहने रहती हैं, जिसकी वजह से रानें और घुटने घर के मर्दों के सामने बल्कि नौकरों के सामने भी (जिनको घरों में रखना हराम है) खुले रहते हैं। इस तरह घर के सब मर्द व औरत लानत के मुस्तहिक़ होते हैं।

ना-मेहरम मर्द के साथ तन्हाई में रहने और रात गुज़ारने की मनाही

हदीसः (216) हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि कोई मर्द जब किसी औरत के साथ तन्हाई में होता है तो उन दोनों के अलावा तीसरा फ़र्द शैतान भी ज़रूर मौजूद होता है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 269)

तशरीह: शैतान का काम मालूम ही है कि वह गुनाह कराता है। जब भी कोई मर्द ग़ैर-औरत के साथ तन्हाई में होगा शैतान भी वहाँ मौजूद होगा, जो दोनों के जज़्बात को उभारेगा, और दोनों के दिलों में ख़राब काम करने के वस्वसे और ख़्यालात डालेगा। इसी वजह से नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सख़्ती के साथ ग़ैर-मेहरम के पास तन्हाई में रहने की मनाही फ़रमाई। इस मनाही पर भी सख़्ती से अमल करने की ज़रूरत है, चाहे उस्ताद हो, या पीर हो, मामूँ फूफी चचा और ख़ाला का बेटा हो, उनके पास तन्हाई में रहने से औरत को परहेज़ करना लाज़िम है। और मर्दों को भी ना-मेहरम औरतों के साथ तन्हाई में बैठने-उठने से बचने का एहतिमाम करना ज़रूरी है। ना-मेहरम से घुलना-मिलना गुनाह है।

हदीस: (217) हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि ख़बरदार! कोई शख़्स किसी बिना शौहर वाली औरत के पास रात न गुज़ारे, हाँ! मगर यह कि वह शख़्स जिसने उस औरत से निकाह कर लिया हो या उसका मेहरम हो। (मिश्कात पेज 268)

तशरीह: इस हदीस पाक में बहुत सख़्ती के साथ इस चीज़ की मनाही की गयी है कि कोई मर्द अपनी बीवी या मेहरम के अलावा किसी ग़ैर-मेहरम के पास रात को रहे। यह मनाही बड़ी दूर-अन्देशी पर आधारित है, और इसमें बड़ी मस्लेहत और हिक्मत है। यूँ तो हर वक़्त ही ना-मेहरम मर्द व औरत का तन्हाई में रहना मना है, जैसा कि अभी-अभी पिछली हदीस में गुज़रा, लेकिन ख़ास तौर पर किसी ग़ैर-मेहरम के साथ रात को रहने की मनाही सख़्ती के साथ इसलिए फ़रमायी कि रात की अन्धेरी और एकान्त में गुनाह करने का मौक़ा मिल जाना आसान होता है। इस मनाही में हर ना-मेहरम आ गया- जेठ, देवर, नन्दोई, चचाज़ाद भाई, मामूँ और फूफी का लड़का, ये सब ग़ैर-मेहरम हैं। औरतें आम तौर पर इनके पास बेखटक तन्हाई में चली जाती हैं, और रात हो या दिन इनसे पर्दा करने का एहतिमाम नहीं करती हैं, शरीअत के नज़दीक यह सख़्त मना है।

मर्द औरत दोनों के लिए हुक्म बराबर है कि ना-मेहरम के साथ तन्हाई में रात न गुज़ारें। हदीस में ख़ासकर मर्द को ख़िताब इसलिए फ़रमाया कि मर्द

ताक़तवर होता है, अगर वह तन्हाई में किसी ना-मेहरम औरत के पास पहुँच जाये तो औरत उसको हटाने से आजिज़ होगी, लिहाज़ा ख़िताब का रुख़ मर्द की तरफ़ रखा गया कि ग़ैर-औरत के पास रात न गुज़ारे। अगर कोई मर्द इस हुक्म की ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन और अवहेलना) करे तो औरत पर लाज़िम है कि वहाँ से चल दे और उस मर्द को तन्हा छोड़ दे। हदीस में "बिना शौहर वाली" कहकर हर औरत के साथ तन्हाई में रहने की मनाही फ़रमाई। हदीस में "सय्यिब" का लफ़्ज़ है। सय्यिब बेवा औरत को कहते हैं, और जिसका शौहर न हो उसको भी सय्यिब कहते हैं। इस आम हुक्म में बेवा भी आ गयी और कुंवारी भी और जिसको तलाक़ हो गयी हो वह भी।

अल्लामा नववी रहमतुल्लाहि अलैहि मुस्लिम शरीफ़ की शरह में कहते हैं कि 'सय्यिब' का ज़िक्र ख़ुसूसियत से इसलिए फ़रमाया कि निकाह की ख़्वाहिश रखने वाले या ख़राब ख़्याल वाले लोग बेवा को बे-ठिकाना समझकर उसके पास आना-जाना रखना चाहते हैं। कुंवारी लड़की के पास बेखटक जाने की जुर्रत भी नहीं करते, और वह ख़ुद भी अपने को महफ़ूज़ रखना चाहती है। घर वाले भी उसकी हिफ़ाज़त का ख़्याल रखते हैं। इसके बाद अल्लामा नववी रहमतुल्लाहि अलैहि लिखते हैं कि जब 'सय्यिब' के पास ग़ैर-मेहरम को रात गुज़ारने की मनाही है हालाँकि उसके पास आने-जाने में ग़फ़लत बरती जाती है (यानी इस पर ज़्यादा रोक-टोक नहीं की जाती) तो कुंवारी औरत के पास ना-मेहरम को रात गुज़ारना तो और भी ज़्यादा मना है।

मर्द का मर्द से और औरत का औरत से कितना पर्दा है?

हदीसः (218) हज़रत अबू सईद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि कोई मर्द किसी मर्द की शर्मगाह को न देखे, और न कोई औरत किसी औरत की शर्मगाह को देखे। और न नंगे होकर दो मर्द एक कपड़े में लेटें, और न दो औरतें एक कपड़े में नंगी होकर लेटें। (मिश्कात शरीफ़ पेज 268)

तशरीहः इस हदीस से मालूम हुआ कि जिस तरह औरत का मर्द से पर्दा है उसी तरह औरत का औरत से और मर्द का मर्द से भी पर्दा है। लेकिन पर्दों में तफ़सील है। नाफ़ से लेकर घुटनों के ख़त्म तक किसी भी मर्द को किसी मर्द की तरफ़ देखना हलाल नहीं है। बहुत-से लोग आपस में ज़्यादा

दोस्ती हो जाने पर पर्दे की जगह एक-दूसरे को बिला तकल्लुफ़ दिखा देते हैं, यह सरासर हराम है। इसी तरह औरत को औरत के सामने नाफ़ से लेकर घुटनों के ख़त्म तक खोलना हराम है, और काफ़िर औरत के सामने मुँह और गट्टों तक हाथ और टख़्नों तक पैर के अलावा जिस्म का कोई हिस्सा या कोई बाल खोलना दुरुस्त नहीं। बच्चा पैदा होने के चन्द दिन बाद जब ज़च्चा को गुस्ल कराया जाता है तो घर की सब औरतें उसको नंगी करके नहलाती हैं और रानें वग़ैरह सब देखती हैं, यह बहुत बड़ी बे-ग़ैरती है और हराम है।

मसलाः जितनी जगह में नज़र का पर्दा है उतनी जगह को छूना भी दुरुस्त नहीं है। चाहे कपड़े के अन्दर हाथ डालकर ही क्यों न हो। जैसे किसी भी मर्द को जायज़ नहीं कि किसी मर्द के नाफ़ से लेकर घुटनों तक के हिस्से को हाथ लगाये। इसी तरह कोई औरत किसी औरत के नाफ़ से नीचे के हिस्से को घुटनों के ख़त्म तक हाथ नहीं लगा सकती। इसी वजह से ऊपर गुज़री हदीस में दो मर्दों को एक कपड़े में नंगे होकर लेटने की मनाही फ़रमायी है, और यही मनाही औरतों के लिए भी है। यानी दो औरतें एक कपड़े में नंगी होकर न लेटें।

शौहर के सामने किसी दूसरी औरत का हाल बयान करने की मनाही

हदीसः (219) हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि एक औरत दूसरी औरत के साथ बैठने के बाद अपने शौहर के सामने उस दूसरी औरत का पूरा-पूरा हाल (नाक-नक़्शा और हुस्न व ख़ूबसूरती वग़ैरह का) इस तरह बयान न करे कि जैसे वह उस औरत को देख रहा है।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 268)

तशरीहः मतलब यह है कि अपने शौहर के सामने किसी बात के सिलसिले में यूँ ही अगर किसी औरत का ज़िक्र आ जाये तो इस हद तक कोई हर्ज नहीं है, मगर उसके सामने किसी औरत का पूरा-पूरा हाल इस तरह बयान न करे कि जिसे सुनकर उस औरत के हुस्न व ख़ूबसूरती और नाक-नक़्शे की सूरत उसके ज़ेहन में आ जाये। किसी औरत के हालात का ऐसा साफ़ और वाज़ेह बयान अपने मर्द के सामने करना भी एक तरह की

बेपर्दगी है। जैसे किसी को आँख से देखकर तबीयत माईल हो जाती है ऐसे ही बग़ैर देखे हुस्न व ख़ूबसूरती का हाल सुनकर दिल में उमंग पैदा होती है, और देखने और मुलाक़ात करने को दिल चाहने लगता है, लिहाज़ा इस तरह के तज़किरे से मना फ़रमाया। और इसमें बयान करने वाली के नुक़सान का भी अन्देशा है, क्योंकि अपना शौहर अगर उस औरत के हासिल करने के चक्कर में पड़ गया तो पछताएगी।

ना-मेहरम औरतों से मुसाफ़ा करने की मनाही

हदीसः (220) हज़रत उमैमा रज़ियल्लाहु अन्हा का बयान है कि मैं और चन्द दूसरी औरतें नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में इस्लाम की बैअ़त के लिए हाज़िर हुईं। औरतों ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! हम आप से इन शर्तों पर बैअ़त होती हैं कि अल्लाह के साथ किसी चीज़ को शरीक न करेंगी, और चोरी न करेंगी, और ज़िना न करेंगी, और अपनी औलाद को क़त्ल न करेंगी, और कोई बोहतान की औलाद न लायेंगी, जिसे अपने हाथों और पाँव के दरमियान डालें (और अपने शौहर की औलाद बतायें), और नेक काम में आपकी नाफ़रमानी न करेंगी। यह सुनकर नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि यह और कह लो कि हम अपनी ताक़त के मुताबिक़ पूरा अ़मल करेंगी। यह सुनकर उन औरतों ने अ़र्ज़ किया कि अल्लाह और उसके रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) हम पर उससे ज़्यादा मेहरबान हैं जितना हम अपने नफ़्सों पर रहम करते हैं। उसके बाद उन औरतों ने अ़र्ज़ किया (या रसूलल्लाह! ज़बानी इक़रार तो हमने कर ही लिया है) लाइये (हाथ में हाथ देकर भी) आप से बैअ़त कर लें। यह सुनकर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः मैं औरतों से मुसाफ़ा नहीं करता। (जो मैंने ज़बान से कह दिया सबके लिए लाज़िम हो गया और अलग-अलग बैअ़त करने की ज़रूरत भी नहीं है, क्योंकि) सौ औरतों से (भी) मेरा वही कहना है जो एक औरत से कहना है।

(मुवत्ता इमाम मालिक पेज 449)

हदीसः (221) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि मोमिन औरतों में से जिसने इन शर्तों का इक़रार कर लिया (जिनका पिछली हदीस में और सूरः मुम्तहिना में ज़िक्र है) तो उसको हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व

सल्लम ने ज़बानी फ़रमा दिया कि मैंने तुझे बैअ़त कर लिया (क्योंकि हाथ में हाथ लेकर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम औ़रतों को बैअ़त न फ़रमाते थे)। ख़ुदा की क़सम! नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हाथ ने बैअ़त करते वक़्त (भी) किसी औ़रत का हाथ न छुआ। आप औ़रतों को सिर्फ़ ज़बानी बैअ़त फ़रमाते थे। आपका इरशाद होता थाः "मैंने तुझे बैअ़त कर लिया"। (बुख़ारी शरीफ़ पेज 726 जिल्द 2)

तशरीहः इन दोनों हदीसों से वाज़ेह (स्पष्ट) तौर पर मालूम हुआ कि नबी करीम हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कभी किसी औ़रत का हाथ बैअ़त के सिलसिले में नहीं छुआ। जब किसी औ़रत ने बैअ़त के लिए अ़र्ज़ किया आपने इरशाद फ़रमाया कि जाओ मैंने तुमको बैअ़त कर लिया। जब चन्द औ़रतों ने इकट्ठे होकर बैअ़त की दरख़्वासत की तो आपने फ़रमा दिया कि "मैं औ़रतों से मुसाफ़ा नहीं किया करता"।

इसके बाद फ़रमा दिया कि सौ औ़रतों से मेरा वही कहना है जो एक औ़रत से कहना है। मतलब यह है कि हाथ देकर बैअ़त करने ही से बैअ़त नहीं होती बल्कि ज़बानी कह देना भी काफ़ी है। पस जबकि ज़बानी बैअ़त से काम चल सकता है तो ग़ैर-मेहरम औ़रतों का हाथ क्यों हाथ में लिया जाये।

अब ज़रा हम इस ज़माने के नाम के पीरों और जाहिल मुर्शिदों की बदहाली का भी जायज़ा लें। ये पीरी के झूठे मुद्दई मुरीदनियों में बिना पर्दे के यूँ ही घुस जाते हैं, और मुरीद करते वक़्त हाथ में हाथ लेते हैं, जिसकी वजह से उमूमन ऐसे वाक़िआ़त भी पेश आ जाते हैं जिनका पेश आ जाना बेपर्दगी और बेशर्मी के बाद ज़रूरी हो जाता है। भला ऐसे फ़ासिक़ और बदकार लोग इस लायक़ हो सकते हैं कि कोई मुसलमान उनसे मुरीद हो? हरगिज़ नहीं।

तंबीहः जो मर्द व औ़रत आपस में मेहरम हों, एक-दूसरे के बदन के उन हिस्सों को छू भी सकते हैं जिनको शरअ़न देखना दुरुस्त हो, और आपस में मुसाफ़ा भी कर सकते हैं, बशर्तेकि दोनों में से किसी के मुताल्लिक़ शहवत (नफ़्सानी ख़्वाहिश) की आशंका न हो। और ग़ैर-मेहरम औ़रत से मुसाफ़ा करना दुरुस्त नहीं है, अगरचे बिना शहवत के हो। यूरोप व अमेरिका के तरीक़े पर हाकिमों के तब्क़े में या ग्रेजुऐट क़िस्म के लोगों में जो यह दस्तूर है कि दावतों और पार्टियों में अपनी औ़रतों से ना-मेहरमों का मुसाफ़ा कराते हैं,

यह हराम है। इस्लाम के अहकाम सबके लिए हैं, हाकिम हो या महकूम, अमीर हो या ग़रीब, गोरा हो या काला, देसी हो या परदेसी, अलबत्ता बहुत बूढ़ी औरत से मुसाफ़ा करने की गुंजाइश है, बशर्तेकि शहवत (नफ़्सानी ख़्वाहिश) का अन्देशा न हो, और नफ़्स पर इतमीनान हो। इस मसले की तफ़सील मसाइल की मशहूर किताब दुर्रे मुख़्तार में मौजूद है।

बहुत बूढ़ी औरत जिसकी तरफ़ बिल्कुल भी मैलान न हो, उसको सिर्फ़ चेहरा और दोनों गट्टों तक हाथ खोलकर ग़ैर-मेहरम के सामने आने की इजाज़त है, लेकिन इससे भी परहेज़ करे तो बेहतर है। सूरः नूर में इरशाद है:

तर्जुमाः और बड़ी-बूढ़ी औरतें (जो बुढ़ापे के सबब हैज़ यानी माहवारी से और औलाद के जन्म देने से) बैठ चुकी हैं, जिनको किसी के निकाह में आने की कोई उम्मीद न रही हो, उनको इस बात में कोई गुनाह नहीं कि अपने (फ़ालतू) कपड़े (ग़ैर-मेहरम के सामने) उतार रखें (जिनसे चेहरा छुपा रहता है) बशर्तेकि सिंघार के इज़हार का ख़्याल न हो। और इससे भी एहतियात रखें तो यह उनके लिए ज़्यादा बेहतर है, और अल्लाह सुनने वाला और जानने वाला है। (सूरः नूर आयत 60)

इस आयत में बूढ़ी-खूसट औरत को ना-मेहरम के सामने चेहरा खोलने की इजाज़त देने के बावजूद यह फ़रमाया है कि परहेज़ करें तो बेहतर है।

पस जो औरत ज़रा भी ऐसी हो कि उसकी तरफ़ कशिश और रग़बत हो उसके लिए चेहरा खोलकर ग़ैर-मेहरम के सामने आ जाने की कोई गुंजाइश कैसे हो सकती है जबकि उसको ना-मेहरमों के सामने चेहरा ढाँकने का मुस्तकिल हुक्म है।

हम्मामों और तालाबों में नहाने के अहकाम

हदीसः (222) हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो शख़्स अल्लाह पर और आख़िरत के दिन पर ईमान रखता हो उसपर लाज़िम है कि बग़ैर तहबन्द के हम्माम में न दाख़िल हो। और जो शख़्स अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखता हो वह अपनी बीवी को हम्माम में दाख़िल न करे। और जो शख़्स अल्लाह पर और आख़िरत के दिन पर ईमान रखता

हो वह किसी ऐसे दस्तरख़्वान पर न बैठे जिस पर शराब का दौर चल रहा हो। (मिश्कात शरीफ़ पेज 384)

तशरीहः जो क़ौमें नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हिदायत से मेहरूम हैं, हया व शर्म से ख़ाली हैं, इनसान का नफ़्स शर्म व हया की पाबन्दी से बचता है, इसलिए जो दीने हक़ के पाबन्द नहीं होते शर्म व हया से भी आज़ाद होते हैं। मिल-जुलकर मर्दों और औ़रतों का नहाना और पर्दे का ख़्याल न करना जाहिलीयत की पुरानी तहज़ीब में भी था, और अब नई तहज़ीब में भी है। सऊदी से बाहर नबी करीम के ज़माने में ऐसे हम्मामों का रिवाज था और समाज में दाख़िल था। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने पहले तो मर्दों और औ़रतों को ऐसे हम्माम में नहाने से मना फ़रमाया, फिर बाद में मर्दों को तहबन्द बाँधकर नहाने की इजाज़त दी। (लेकिन यह इजाज़त इस शर्त से है कि किसी दूसरे मर्द का सतर न देखे, और किसी औ़रत पर नज़र न डाले)। और औ़रतों के लिए उन हम्मामों में नहाने की मनाही बदस्तूर बाक़ी रही। क्योंकि पूरे कपड़े पहनकर भी औ़रत नहायेगी तब भी मर्दों की नज़रें उसकी तरफ़ उठेंगी। भीगा हुआ कपड़ा बदन पर इस तरह चिपक जाता है कि बदन के हिस्सों को अलग-अलग ज़ाहिर करता है, उस हालत में मर्दों की नज़र किसी औ़रत पर पड़ेगी तो और भी ज़्यादा कशिश का सबब बनेगी। हदीस की किताब 'तरग़ीब व तरहीब' की एक रिवायत में है कि तहबन्द और कुर्ता और दुपट्टा पहनकर भी औ़रत को उक्त हम्मामों में नहाने की मनाही फ़रमायी।

हमारे इस ज़माने में क्लब बनाने और उसका मेम्बर बनने का रिवाज है। उन्हीं क्लबों में बाज़ क्लब नहाने के और बाज़ तैरने के बनाये जाते हैं। मर्द व औ़रत लड़के-लड़कियाँ इकट्ठे मिलकर नहाते और तैरते हैं, और तैराकी के मुक़ाबले मिलकर करते हैं। मर्दों और औ़रतों के नंगे जिस्मों की बेपर्दगी होती है, मर्द और औ़रत का यह मिलाप नज़र लड़ाने और इश्क़बाज़ी पर आमादा करता है। इस तरह के क्लब यूरोप के बेशर्मों की ईजाद हैं, मगर अफ़सोस है कि मुसलमानी का दावा करने वाले भी इस तरह के क्लबों के मेम्बर बनने को बड़ा कारनामा समझने लगे हैं।

अगर कोई क्लब ऐसा हो जिसमें सिर्फ मर्द ही नहाते हों तब भी इसका लिहाज़ रखना लाज़िम है कि कोई मर्द किसी मर्द का सतर (नाफ़ से लेकर घुटनों तक) न देखे। इसी तरह से कुश्तियों के अखाड़ों और फुटबाल वग़ैरह के मैचों में नाफ़ से लेकर घुटनों के ख़त्म तक का हिस्सा किसी के सामने खोलना या किसी के सतर का कोई हिस्सा देखना सख़्त मना है। अफ़सोस है कि कुश्ती के मुक़ाबले में क्रिकेट व फुटबाल वग़ैरह के मैचों में बड़े-बड़े दीनदारी के दावेदार इस मसले को भूल जाते हैं और सतर देखने-दिखाने को ज़रा भी ऐब नहीं समझते।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक शख़्स को देखा कि खुले मैदान में नहा रहा है। (उसके जिस्म के बाज़ हिस्से खुले हुए थे) उसे देखकर नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मिम्बर पर तशरीफ़ ले गये और अल्लाह पाक की तारीफ़ व प्रशंसा के बाद फ़रमायाः

हदीसः बेशक अल्लाह तआ़ला शर्म वाला है और पर्दे को पसन्द फ़रमाता है, लिहाज़ा तुम में से जब कोई शख़्स नहाये तो पर्दे में नहाया करे।

(अबू दाऊद शरीफ़)

जिन मुल्कों और इलाक़ों (जैसे बंगाल, आसाम वग़ैरह) में तालाबों में गुस्ल करने का रिवाज है, वहाँ इकट्ठे तालाब में नहाते हैं, और कपड़े धोते हैं, जिसकी वजह से औ़रतों का सर और सीना और पिंडलियाँ और कमर और पेट मर्द देखते हैं हालाँकि यह देखना और दिखाना हराम है। बाज़ी क़ौमों और ख़ानदानों में यह दस्तूर है कि औ़रत की जहाँ उम्र ढली बस उसने सिर्फ़ साड़ी से काम चलाना शुरू कर दिया, कुर्ता, कमीज़ या ब्लाउज़ वग़ैरह बिल्कुल नदारद। बेतुके तरीक़े पर आधी पिंडलियों तक साड़ी लपेट ली और कुछ हिस्सा सर पर डाल लिया। पेट, कमर, सीना, आधी आधी पिंडलियाँ और अकसर सर भी खुला रहता है। मद्रास, बिहार, बंगाल, आसाम वग़ैरह में सफ़र किया जाये तो रेलवे में इस तरह की औ़रतें बहुत मिलेंगी। उनमें मुसलमान औ़रतें भी होती हैं। नंगा रहना तो उन लोगों का शिआ़र (चलन) है जो नबी करीम मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तालीम से मेहरूम हैं, मुसलमानों को हर बात में अपने दीन पर क़ायम रहना लाज़िम है।

इस्लाम तो हरगिज़ बेग़ैरती और बेपर्दगी को जायज़ क़रार नहीं देता। पर्दे के अहकाम बूढ़ी औरतों के लिए भी हैं। बस इतना फ़र्क़ है कि जो ज़्यादा बूढ़ी औरत हो वह सिर्फ़ मुँह और हथैली और टख़्ने तक पाँव ना-मेहरम के सामने खोल सकती है। सर, कमर, पेट और पिंडली ना-मेहरम के सामने बूढ़ी औरत के लिए भी खोलना हराम है।

नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हम्माम में गुस्ल करने की मनाही के बाद दूसरी नसीहत यह फ़रमायी कि जो शख़्स अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखता हो किसी ऐसे दस्तरख़्वान पर न बैठे जिस पर शराब का दौर चल रहा हो। हमारे इस ज़माने में जिस तरह बेपर्दगी को तरक़्क़ी के लिए लाज़िम समझ लिया गया है, और इसके लिए पश्चिम की सभ्यता से मुतास्सिर लोग ऐड़ी-चोटी का ज़ोर लगा रहे हैं कि किसी तरह बेपर्दगी आम हो जाये, इसी तरह से बड़े-बड़े ओहदों पर फ़ायज़ होने वाले लोग जो यूरोप और अमेरिका के माहौल में कुछ दिन गुज़ार चुके हैं, शराब के पीने और पिलाने को या पार्टियों और दावतों का एक अहम हिस्सा बनाये हुए हैं। इन लोगों को हमारे सरदार हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की पैरवी में तरक़्क़ी नज़र नहीं आती, बल्कि यूरोप व अमेरिका के बेहया इनसानों की तक़लीद (पैरवी) में तरक़्क़ी समझते हैं। अल्लाह के रसूल सल्ल० ने तो यह फ़रमाया कि जिस दस्तरख़्वान पर शराब का दौर चल रहा हो, उसपर मत बैठो, और इन दीन व समझ के दावेदारों का यह हाल है कि इस्लामी गणतंत्र और दीनी हुकूमत के नाम पर जो दावतें करते हैं उनको भी शराब के ज़रिये रंगीन किये बग़ैर बाज़ नहीं रहते।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह की लानत है शराब पीने वाले पर, और उसके बनाने वाले पर, और उसके बेचने वाले पर, और उसके ख़रीदने वाले पर, और उसको उठाकर दूसरी जगह लेजाने वाले पर, और जिसके पास ले जाये उसपर भी। (अबू दाऊद शरीफ़, इब्ने माजा)

एक हदीस में इरशाद है:

"शराब मत पी क्योंकि वह हर बुराई की कुंजी है" (मिश्कात शरीफ़)

यह हर बुराई की जड़ उन लोगों में जो दुनिया के एतिबार से ऊँचे तब्क़े में शुमार हैं, ख़ूब पी और पिलाई जाती है। और हर बुराई का उन लोगों से ज़हूर होता रहता है। और उनपर जो अल्लाह की लानत बरसती है उससे बचने का ज़रा भी ख़्याल नहीं करते।

सफ़र में औरत के जान-माल और आबरू की हिफ़ाज़त के लिए शरीअ़त का एक ताकीदी हुक्म

हदीसः (223) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि किसी भी औ़रत के लिए जो अल्लाह पर और आख़िरत के दिन पर ईमान रखती हो, यह हलाल नहीं है कि मेहरम के बग़ैर एक दिन एक रात की दूरी का सफ़र करे। (बुख़ारी शरीफ़ पेज 148 जिल्द 1)

तशरीहः इस हदीस में मुसलमान औ़रत को एक बहुत ही अहम हुक्म दिया गया है, और वह यह कि एक दिन-रात की मसाफ़त (दूरी) का सफ़र बग़ैर मेहरम के न करे। बाज़ रिवायतों में मेहरम के बग़ैर सफ़र से बिल्कुल ही मना किया गया है। और बाज़ रिवायतों में है कि औ़रत को तीन दिन तीन रात का सफ़र बग़ैर मेहरम के मना है। एहतियात का तक़ाज़ा तो यही है कि क़रीब का सफ़र हो या दूर का, औ़रत बग़ैर मेहरम के न जाये, ख़ासकर इस ज़माने में जो फ़ितनों का ज़माना है। लेकिन दूसरी हदीसों के पेशेनज़र ऐसे सफ़र के लिए बग़ैर मेहरम के चले जाने की गुंजाइश है जो तीन दिन तीन रात की दूरी से कम हो। वाज़ेह रहे कि एक दिन एक रात की मसाफ़त (दूरी) से सोलह मील और तीन दिन तीन रात की मसाफ़त से अड़तालीस (48) मील मुराद है। नबी पाक के ज़माने में चूँकि ऊँटों पर सफ़र होता था और रोज़ाना एक मन्ज़िल तय-करते थे, जो सोलह मील की होती थी, इसलिए सफ़र की दूरी और फ़ासले को एक दिन एक रात या तीन दिन तीन रात की मसाफ़त कहकर बताया करते थे। तेज़-रफ़्तार कार से सफ़र करे या रेल से या हवाई जहाज़ से, अड़तालीस मील (77 किलो मीटर) का सफ़र औ़रत के लिए बग़ैर मेहरम या बग़ैर शौहर के हलाल नहीं है, और इससे कम सफ़र हो तो गुन्जाइश है, मगर बचना उससे भी बहरहाल अच्छा है, क्योंकि बाज़

रिवायतों में हर सफ़र और बाज़ में एक दिन एक रात के सफ़र की भी मनाही आई है। जैसा कि अभी ऊपर बयान हुआ।

अ़ल्लामा शामी रहमतुल्लाहि अ़लैहि किताबुल-हज में 'बहरुर्राइक़' से नक़ल करते हुए लिखते हैं कि जो सफ़र तीन दिन तीन रात की दूरी से कम का हो, कोई ज़रूरत सामने होने की सूरत में उसके लिए बग़ैर मेहरम के चला जाना जायज़ है। फिर लिखते हैं कि हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम अबू यूसुफ़ रहमतुल्लाहि अ़लैहिमा से रिवायत किया गया है कि एक दिन की दूरी के लिए भी बग़ैर मेहरम या शौहर के सफ़र में निकलने को मक्रूह क़रार देते थे। इसके बाद लिखते हैं: और चाहिये कि फ़तवा इसी पर दिया जाये (कि एक दिन के सफ़र के लिए भी औ़रत को मेहरम या शौहर के बग़ैर सफ़र में निकलने की मनाही हो)। क्योंकि इस ज़माने के लोग बिगड़ गये। और बुख़ारी व मुस्लिम की हदीस इसकी ताईद करती है, जिसमें यह मज़मून आया है कि जो औ़रत अल्लाह पर और आख़िरत के दिन पर ईमान रखती हो उसके लिए हलाल नहीं कि एक दिन एक रात का सफ़र बग़ैर मेहरम के करे। और मुस्लिम शरीफ़ की एक रिवायत में बजाय एक दिन एक रात के सिर्फ़ एक रात भी आया है। और एक रिवायत में सिर्फ़ एक दिन भी आया है।

चूँकि एहतियात का तक़ाज़ा है कि थोड़े-बहुत सफ़र के लिए भी औ़रत बग़ैर मेहरम या शौहर के न जाये। इसलिए दुनियावी हो या दीनी सफ़र जो फ़र्ज़ न हो उसके लिए तीन दिन तीन रात के सफ़र से कम के लिए भी औ़रत को बग़ैर मेहरम के जाने से रोकना चाहिये, और हज का सफ़र अगर तीन मन्ज़िल से कम हो तो फ़र्ज़ हज के लिए बग़ैर मेहरम के जाने से शौहर को रोकने का हक़ न होगा, जैसा कि मसाइल की किताबों में लिखा है। और मेहरम वह है जिसके साथ कभी भी किसी हाल में निकाह दुरुस्त न हो, चाहे नसब के रिश्ते से हो चाहे दूध के रिश्ते से, या ससुराली रिश्ते से। और शौहर के साथ भी सफ़र करना दुरुस्त है।

हदीस की किताब 'तरग़ीब व तरहीब' में बुख़ारी वग़ैरह के हवाले से हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का पाक इरशाद नक़ल किया है कि जो औ़रत अल्लाह पर और आख़िरत के दिन पर ईमान रखती हो उसके

लिए यह हलाल नहीं है कि ऐसा कोई सफ़र करे जो तीन दिन या इससे ज़्यादा का हो, मगर यह कि उसके साथ उसका बाप हो या उसका भाई हो या शौहर हो या बेटा हो या (कोई दूसरा) मेहरम हो।

(तरग़ीब व तरहीब पेज 71 जिल्द 4)

और यह बात ध्यान रहे कि मामूँ फूफी चचा ख़ाला, इन सबके बेटे मेहरम नहीं हैं। न उनके साथ सफ़र में जाना दुरुस्त है, न उनके सामने बेपर्दा होकर आने की इजाज़त है। इसी तरह जिस लड़के को बेटा बनाकर पाल लिया हो वह भी मेहरम नहीं है, बड़ा होने के बाद उसके सामने भी बेपर्दा होकर आना-जाना जायज़ नहीं है, और उसके साथ सफ़र करना भी दुरुस्त नहीं है।

बहुत-से लोग अपने को साली का मेहरम समझते हैं और यह कहते हैं कि जब तक उसकी बहन हमारे निकाह में है चूँकि उस वक़्त तक उसका निकाह हमसे दुरुस्त नहीं है इसलिए हम उसके मेहरम हैं। इन लोगों का यह ख़्याल बातिल है, क्योंकि शरीअ़त के नज़दीक मेहरम सिर्फ़ वही है जिससे कभी भी निकाह दुरुस्त न हो। चाहे वह कुंवारी हो, चाहे बेवा हो, चाहे तलाक़ पाई हुई हो, चाहे किसी के निकाह में हो। इन जाहिलों की तशरीह के मुताबिक़ मेहरम की तारीफ़ की जाये तो दुनिया भर के मर्दों की बीवियाँ हर शख़्स की मेहरम हो जायेंगी।

ग़रज़ यह कि मेहरम की यह तशरीह बिल्कुल जाहिलाना है जिसके ज़रिये साली को मेहरम बना रहे हैं। सफ़र में चूँकि बहुत-सी घटनाएँ पेश आ जाती हैं इसलिए शरीअ़ते पाक ने बग़ैर मेहरम या बग़ैर शौहर के सफ़र करने की पाबन्दी औ़रतों पर लगायी है, जिसमें बहुत-सी मस्लेहतें और हिक्मतें हैं। मेहरम या शौहर के साथ होने में औ़रत की जान, माल, इज़्ज़त-आबरू की हिफ़ाज़त के ख़त्म हो जाने का अन्देशा हो तो उसके साथ भी सफ़र करना दुरुस्त नहीं है। हज के बयान में भी ये मसाइल गुज़र चुके हैं।

औ़रतें रास्तों के दरमियान न चलें

हदीसः (224) हज़रत अबू उसैद रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मस्जिद से बाहर तशरीफ़ ला

रहे थे और मर्द व औरत वहाँ से गुज़रने लगे। रास्ते में मर्द व औरत (इस तरह से) मिल गये (कि सब इकट्ठे गुज़रने लगे, और औरतें एक तरफ़ नहीं थीं, अगरचे औरतें पर्दे में थीं, मगर रास्ते के दरमियान मर्दों के मजमे में जा रही थीं)।

यह माजरा देखकर हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि ऐ औरतो! पीछे हटो, तुमको रास्ते के बीच में चलने की इजाज़त नहीं है। तुम रास्ते के किनारों पर होकर गुज़रो। हदीस को बयान करने वाले कहते हैं कि इस इरशाद के बाद औरतें रास्ते के किनारों में ऐसे तरीक़े पर गुज़रती थीं कि रास्ते के दायें-बायें जो कोई दीवार होती थी, उससे चिपकी जाती थीं, यहाँ तक कि उनका कपड़ा दीवार पर अटकने लगता था। (मिश्कात पेज 405)

तशरीहः इस हदीस में भी औरतों को मर्दों से दूर रहने की ताकीद फ़रमायी है। अगर औरत को किसी मजबूरी की वजह से घर से निकलना हो तो ख़ूब ज़्यादा पर्दे का एहतिमाम करे और पर्दे की पाबन्दी के साथ निकलने की सूरत में भी ख़ुशबू लगाकर न निकले, और जब रास्ते में गुज़रे तो रास्ते के दरमियान न चले बल्कि रास्ते का दरमियानी हिस्सा मर्दों के लिए छोड़े और ख़ुद रास्ते के दरमियान से हटकर किनारों पर चले।

यहाँ यह बात भी क़ाबिले ज़िक्र है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने औरतों को इसका हुक्म दिया कि मर्दों से बचकर और किनारे से होकर चलें, लिहाज़ा औरतों का यह जज़्बा न होना चाहिए कि हम जैसे चाहें चलेंगे, मर्दों को हटना है तो हट जायेंगे।

हया और ईमान एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं

हदीसः (225) हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि बेशक हया और ईमान दोनों साथी हैं। पस जब इन दोनों में से एक उठाया जाता है तो दूसरा भी उठा लिया जाता है। (मिश्कात पेज 432)

तशरीहः हया मोमिन बन्दों की ख़ास सिफ़त है। जो क़ौमें हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से दूर हैं, हया और शर्म से उनको कुछ वास्ता नहीं। हया और ईमान दोनों एक-दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं। या तो दोनों रहेंगे

या दोनों रुख़सत हो जायेंगे। बेपर्दगी और जो इससे जुड़ी हुई बातें हैं और जो बातें इसकी तरफ़ लेजाने वाली हैं, उन सब को काफ़िरों की देखा-देखी नाम के मुसलमानों के माहौल में रिवाज पा गये, और वही लोग मुसलमान औरतों को पर्दे से बाहर निकाल कर बेहयाई के प्लेट फ़ार्म पर लाने की कोशिश में लगे हुए हैं। जो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पैरवी से ज़्यादा ईसाइयों के हालात और आ़दतें अपनाये हुए हैं, ऐसे लोग बड़ी मुश्किल में हैं, उनका दिल तो यह चाहता है कि ख़ूब आज़ादी और बेहयाई के साथ मुसलमानों की बहू-बेटियों को बाज़ारों और पार्कों में नंगेपन के लिबास में देखें, लेकिन साथ ही कुरआन व हदीस की तालीमात को ग़लत कहने की हिम्मत भी नहीं। न यूँ कहते बनता है कि हम इस्लाम को छोड़ चुके हैं, और न औरतों को पर्दे में देखना गवारा करते हैं। जो लोग बेपर्दगी को रिवाज देने की कोशिश में हैं और अपनी बहू-बेटियों को यूरोपियन लेडियों की तरह बेहया और बेशर्म बना चुके हैं और उनके नंगे लिबास से अपने नफ़्सों को सुकून देने का रास्ता निकाल चुके हैं, उनमें बहुत-से तो ऐसे हैं जो सिर्फ़ नाम के मुसलमान हैं, और हया व शर्म के साथ ईमान की दौलत भी खो चुके हैं। और बहुत-से लोग वे हैं जो किसी दर्जे में इस्लाम से चिपके हुए हैं मगर उनको यूरोप की पैरवी का मिज़ाज और बेहयाई और बेशर्मी की तबीयत आहिस्ता-आहिस्ता उनके इस्लाम से हटाती जा रही है। नबी पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जो यह फ़रमाया कि हया और ईमान दोनों साथी हैं, एक उठाया जाता है तो दूसरा भी उठा लिया जाता है, यह इरशाद बिल्कुल हक़ है। तजुर्बा इसकी गवाही दे रहा है।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया:

"पिछले नबियों की जो बातें नक़ल होती चली आ रही हैं उनमें से एक बात यह भी है कि जब तुझ में शर्म न रहे तो जो चाहे कर"।

इस हदीस से मालूम हुआ कि तमाम अम्बिया-ए-किराम शर्म व हया की तालीम देते आये हैं। और यह भी मालूम हुआ कि जो क़ौमें अल्लाह के बाज़े पैग़म्बरों से अपना रिश्ता जोड़ने के दावेदार हैं और साथ ही बेशर्म और बेहया भी हैं, वे अपने दावे में झूठे हैं। और अपने कुफ़्र व शिर्क और बेहयाई

की ज़िन्दगी के सबब उन नबियों की पाक ज़ात के लिए शर्म का कारण हैं जिनसे अपनी निस्बत क़ायम करती हैं। कोई बेशर्म व बेहया किसी भी नबी के रास्ते पर नहीं हो सकता।

एक हदीस में इरशाद है:

हदीसः पैग़म्बरों की ज़िन्दगी के तरीक़े में चार चीज़ें (बहुत अहम) हैं: शर्म करना, ख़ुशबू लगाना, मिस्वाक करना, निकाह करना।

अल्लाह के सबसे महबूब बन्दे उसके पैग़म्बर हैं। उन्होंने हया और शर्म की ज़िन्दगी को इख़्तियार किया और अपनी-अपनी उम्मत को अपने-अपने ज़माने में शर्म व हया के इख़्तियार करने पर आमादा किया। जो लोग बेशर्म हैं, अल्लाह तआला से दूर हैं, उसके पैग़म्बर से दूर हैं, अलबत्ता काफ़िरों और बदकारों से क़रीब हैं। शैतान मलऊन के दोस्त हैं।

यह नाम-निहाद तरक़्क़ी का ज़माना है। इसमें आबरू और पाकदामनी, शर्म व हया ऐब बनकर रह गयी है। यूरोप वालों की पैरवी में नाम के मुसलमान भी इसकी रौ में बह रहे हैं। औरत अगर पर्दा करे तो उसे समाज में शरीफ़ नहीं समझा जाता। अगर बेहया बने, चेहरा खोलकर निकलें, झलकते लिबास में बदन के हिस्सों और अंगों को ज़ाहिर करती हुई बाज़ारों में घूमे या मार्किट में सौदा ख़रीदे, सैकड़ों मर्दों के सामने पार्कों में बेहिजाब होकर तफ़रीह करे तो उसे शरीफ़ समझा जाता है। अस्तग़फ़िरुल्लाह! कैसी उलटी तरक़्क़ी है? और कैसी अंधेरी रोशनी है? जिसमें इनसान इनसानियत की हदों से निकल गया है, और इनसानी शराफ़त इनसान की हरकतों पर थू-थू करने लगी है।

चूँकि शौहर भी नाम-निहाद तरक़्क़ी के आदी हैं इसलिए वे भी बीवियों को इस हरकत से नहीं रोकते बल्कि पर्दे वाली बीवी के पर्दे को ख़ुद ही तार-तार करते हैं, और यारों-दोस्तों की महफ़िलों में साथ ले जाते हैं। उनसे मुसाफ़े कराते हैं, बल्कि क्लबों में लेजाकर नचवाते हैं। इन बेहूदा लोगों के नज़दीक डाँस भी वह ज़्यादा दिल-पसन्द है जिसमें एक की बीवी दूसरे के साथ डाँस करे। अगर कोई औरत अपने शौहर के साथ डाँस करने लगे तो उसे गिरी हुई नज़रों से देखा जाता है। अव्वल तो डाँस! और वह भी बेपर्दा, और ग़ैर-मर्दों के साथ? वह भी अपने शौहर के सामने, कैसी बेहयाई पर

बेहयाई सवार है। क्या ऐसे लोग ज़िन्दा रहने के क़ाबिल हैं? और ख़ुदा की नेमतों से फ़ायदा उठाने के हक़दार हैं?

अल्लाह तआला हर क़िस्म की गुमराही, बेदीनी और बेहयाई व बेशर्मी से तमाम मुसलमानों को बचाए और अमन में रखे, आमीन।

मुसलमान औरतों से

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बातें

* औरतों के लिए *

लिबास और पहनने-ओढ़ने का बयान

लेखक

हज़रत मौलाना आशिक़ इलाही साहिब बुलन्द शहरी

रहमतुल्लाहि अलैहि

अनुवादक: मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी

प्रकाशक

फरीद बुक डिपो (प्रा. लि.)

422, मटिया महल, उर्दू मार्किट, जामा मस्जिद

देहली-110006

लिबास और पहनने-ओढ़ने के मसाइल

लिबास और बनाव-सिंघार का बयान

औरतों का लिबास कैसा हो?

हदीसः (226) हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने फ़रमाया कि अल्लाह उन औरतों पर रहम फ़रमाये जिन्होंने इस्लाम के शुरू के दौर में (मक्का से मदीना को) हिजरत की। जब अल्लाह पाक ने हुक्मः "वल्-यज़्रिब्-न बिख़ुमुरिहिन्-न अ़ला जुयूबिहिन्-न" (यानी मोमिन औरतों से कह दीजिए कि वे अपने दुपट्टों को अपने सीनों पर डाले रहा करें) नाज़िल फ़रमाया तो उन्होंने अपनी मोटी-सी चादरों को काटकर दुपट्टे बना लिये।

(अबू दाऊद पेज 211 जिल्द 2)

तशरीहः क़ुरआन की तफ़सीर करने वाले उलमा लिखते हैं कि जाहिलीयत के ज़माने में औरतों का दस्तूर था कि दुपट्टों से अपने सरों को ढाँक कर बाक़ी कमर पर डाल लेती थीं। मुसलमान औरतों को हुक्म हुआ कि अपने दुपट्टों से सर भी ढाँकें और गले और सीने पर भी डाले रहा करें। इस हुक्म को सुनकर सहाबी औरतों ने मोटी-मोटी चादरों के दुपट्टे बना लिए और क़ुरआन के हुक्म के मुताबिक़ अपने गलों और सीनों को भी दुपट्टों से ढाँकने लगीं। चूँकि बारीक कपड़े से सर और बदन का पर्दा नहीं हो सकता है इसलिए मोटी चादरों के दुपट्टे बना लिए। (अबू दाऊद पेज 211 जिल्द 2)

आजकल की औरतें सर छुपाने को ऐब समझने लगी हैं, और दुपट्टा ओढ़ती भी हैं तो अव्वल तो इस क़द्र बारीक होता है कि सर के बाल और सिंघार की जगहें उससे छुपती नहीं, दूसरे इस क़िस्म के कपड़े का दुपट्टा बनाती हैं कि सर पर ठहरता ही नहीं, चिकनाहट की वजह से बार-बार सरकता है, और पर्दे के मक़सद को ख़त्म कर देता है।

हज़रत दहया बिन ख़लीफ़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु का बयान है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में मिस्र के बारीक कपड़े हाज़िर किये गये। उनमें से एक कपड़ा आपने मुझे इनायत फ़रमाया कि इसके दो टुकड़े

करके एक से अपना कुर्ता बना लेना और दूसरा अपनी बीवी को दे देना जिसका वह दुपट्टा बना लेगी। वह कपड़ा लेकर जब मैं चल दिया तो इरशाद फ़रमाया कि अपनी बीवी को बताना कि इसके नीचे कोई कपड़ा लगा ले (जिससे इसकी बारीकी की तलाफ़ी हो जाये और जो उसके सर वग़ैरह को छुपाये रहे)। (अबू दाऊद)

एक बार हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा की ख़िदमत में उनके भाई अ़ब्दुर्रहमान बिन अबू बक्र रज़ियल्लाहु अ़न्हु की बेटी हफ़्सा पहुँच गईं। उस वक़्त हफ़्सा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने बारीक दुपट्टा ओढ़ रखा था। हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने उसको लेकर फाड़ दिया, और अपने पास से उनको मोटा दुपट्टा उढ़ा दिया। (मुवत्ता इमाम मालिक)

इन रिवायतों से मालूम हुआ कि बारीक दुपट्टे से परहेज़ करना लाज़िम है। और अगर मान लो कि बारीक दुपट्टा ओढ़ना ही पड़ जाये तो उसके नीचे मोटा कपड़ा लगा लें ताकि सर और दूसरे बदनी हिस्से नज़र न आयें।

मुसलमान औरत को इस्लाम ने हया और शर्म सिखायी है। ना-मेहरमों से घुलने-मिलने से मना फ़रमाया है। और ऐसे कपड़े पहनने की मनाही फ़रमायी है जिनका पहनना न पहनना बराबर है, और जिनसे पर्दे का मक़सद ही ख़त्म हो जाता हो। औरतें सरों पर ऐसे दुपट्टे ओढ़ें जिनसे बाल छुप जायें, गर्दन और गला ढक जाये और ना-मेहरमों के आ जाने का अन्देशा हो तो मोटे दुपट्टों से अपने चेहरों को भी ढाँप लें। कमीज़ जमपर और फ्रॉक भी ऐसा पहने जिससे बदन नज़र न आये। आस्तीन पूरी हों, गले और गिरेबान की काट में इसका ख़्याल रखें कि पीछे और आगे सीने का कुछ भी हिस्सा खुला न रहे। शलवार और साड़ी वग़ैरह भी ऐसे कपड़े की पहने जिससे रान, पिंडली वग़ैरह का कोई हिस्सा नज़र न आये।

आजकल राईज लिबास की ख़राबी

आजकल ऐसे कपड़ों का रिवाज हो गया है कि कपड़ों के अन्दर से नज़र आर-पार हो जाती है। बहुत-से मर्द और औरतों को देखा गया है कि ऐसे कपड़ों की शलवार बनाकर पहन लेती हैं, जिनमें पूरी टाँग नज़र आती है। ऐसे कपड़े को पहनना न पहनना बराबर है, और उससे नमाज़ भी नहीं होती। आम तौर पर औरतें बारीक दुपट्टे ओढ़ती हैं, और उनकी चौड़ाई भी कम

होती है। अव्वल तो ये दुपट्टे पूरे सर पर नहीं आते, और अगर उनसे सर को ढाँप भी लिया तो पर्दे का मक़सद पूरा नहीं होता, और उनको ओढ़कर नमाज़ भी नहीं होती।

जब कुरआन में यह हुक्म नाज़िल हुआ कि मोमिन औरतों को फ़रमा दीजिए कि वे अपने दुपट्टों को अपने सीनों पर डाले रहा करें, तो सहाबी औरतों ने मोटी से मोटी चादरें काटकर दुपट्टे बना लिए। लेकिन आजकल की औरतों को गर्मी खाये जाती है और ग़लत रिवाज की वबा ऐसी फैली है कि जो औरतें अपने को दीनदार समझती हैं वे भी बारीक दुपट्टा छोड़ने को तैयार नहीं। फिर ऐसे ही दुपट्टे से नमाज़ पढ़ लेती हैं। हज को रवाना होती हैं तो बुर्क़ा जहाज़ में उतार कर रख देती हैं और उस बारीक दुपट्टे से जहाज़ में, बाज़ारों में और हरम शरीफ़ में घूमती फिरती हैं, और सैकड़ों मर्दों की भीड़ में बाल चमकाती हुई, मुँह दिखाती हुई बड़ी चादर लपेटे बग़ैर बुर्क़ा ओढ़े बग़ैर घुसी चली जाती हैं, जैसे ये सब लोग उनके बाप भाई हैं। पहले तो यही रोना था कि औरतें जेठ-देवर और मामूँज़ाद, फूफीज़ाद और चचाज़ाद लड़कों के सामने चेहरा खोले आ जाती हैं जो शरअन गुनाह है, मगर अब चेहरा छोड़ बारीक कपड़े पहनकर ऊपर का पूरा या आधा बदन सबके सामने खोले फिरती हैं। और बुर्क़े में नक़ाब ऐसा इख़्तियार कर लिया है जो ख़ूब बारीक जाली का होता है और पूरा चेहरा रास्ते के चलने वालों को नज़र आता है। ये सब बातें शरअन सख़्त गुनाह हैं।

औरत की नमाज़ दुरुस्त होने के लिए शर्त यह है कि चेहरे और गट्टों तक दोनों हाथ और दोनों क़दमों के अलावा पूरा जिस्म ढका हुआ हो, मगर हक़ीक़त यह है कि अकसर औरतों की नमाज़ इसलिए नहीं होती कि बाँहें खुली हुई हैं, अगर ढकी हुई हैं तो उसी बारीक दुपट्टे से ढाँक लेती हैं जिससे सब कुछ नज़र आता है। बाज़ी औरतें साड़ी बाँधती हैं और ब्लाऊज़ इतना छोटा होता है कि नाफ़ पर ख़त्म हो जाता है और आधा पेट नज़र आता है, उससे नमाज़ नहीं होती। इसको ख़ूब समझ लें और दुनिया के रिवाज को न देखें, शरीअत को देखें। दुनिया में थोड़ी-सी गर्मी की तकलीफ़ हो ही गयी और फ़ैशन वालियों ने कुछ कह ही दिया तो इससे क्या होता है, जन्नत के उम्दा कपड़े तो नसीब होंगे जहाँ सब कुछ नफ़्स की ख़्वाहिश के मुताबिक़ होता है।

मर्दों को अपनी तरफ़ माईल करने वाली औरतें

हदीसः (227) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि दोज़ख़ियों की दो जमाअ़तें मैंने नहीं देखी हैं (क्योंकि वे अभी मौजूद नहीं हुईं। बाद में उनका वजूद और ज़हूर होगा)। एक जमाअ़त उन लोगों की होगी जिनके पास बैलों की दुमों की तरह के कोड़े होंगे, वे उनसे लोगों को (ज़ुल्म के तौर पर) मारेंगे, दूसरी जमाअ़त ऐसी औरतों की होगी जो कपड़े पहने हुए होंगी (मगर इसके बावजूद) नंगी होंगी। (मर्दों को) माईल करने वाली और (ख़ुद उनकी तरफ़) माईल होने वाली होंगी। उनके सर ख़ूब बड़े-बड़े ऊँटों के कोहानों की तरह होंगे जो झुके होंगे। ये औरतें न जन्नत में दाख़िल होंगी और न उसकी ख़ुशबू सूँघेंगी। और इसमें शक नहीं कि जन्नत की ख़ुशबू इतनी-इतनी दूर से सूँघी जाती है। (मिश्कात शरीफ़)

तशरीहः इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने दो ऐसे गिरोहों के मुताल्लिक़ पैशीनगोई (भविष्य वाणी) फ़रमायी है, जिनको आपने अपने ज़माने में नहीं देखा था, लेकिन आज ये दोनों गिरोह अपने शर और बिगाड़ के साथ मौजूद हैं। ख़ुदा के पाक पैग़म्बर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने पहले तो उन लोगों का ज़िक्र फ़रमाया जो कोड़े लिए फिरेंगे और उनसे लोगों को मारेंगे। यह उन लोगों के बारे में पैशीनगोई फ़रमायी जो अपनी हुकूमत व ताक़त के नशे में बात-बात पर कमज़ोरों और बेबसों को पीट दिया करते हैं, देहात और क़स्बों के ज़मीनदारों और मालदारों को देखा गया है कि तंगदस्तों और बेकसों को झूटे-सच्चे बहाने बनाकर पीटते हैं, उनसे सैकड़ों काम बेगार में लेते हैं, और तरह तरह के ज़ुल्म व सितम उनपर ढहाते हैं। इस सिलसिले में बाज़ वाक़िआत यहाँ तक सुने गये हैं कि अगर किसी कम-हैसियत वाले मुसलमान ने किसी दौलतमन्द मुसलमान को सलाम कर लिया तो उस ग़रीब को इस जुर्म में पीट डाला कि इसने अपने आपको हमारे बराबर समझा। अल्लाह ऐसे ज़ालिमों से बचाये। ये बेकस और बेबस मज़लूम बन्दे जब आख़िरत में दावा करेंगे और वहाँ अल्लाह तआ़ला की अ़दालत में पेशी होगी, तो ज़ुल्म व सितम के अन्जाम का पता चलेगा।

कपड़े पहने हुए भी नंगी

दूसरी पैशीनगोई (भविष्य वाणी) औरतों के हक़ में इरशाद फ़रमायी कि ऐसी औरतें मौजूद होंगी जो कपड़े पहने हुए होंगी लेकिन फिर भी नंगी होंगी। यानी इस कद्र बारीक कपड़े पहनेंगी कि उनके पहनने से जिस्म छुपाने का फ़ायदा हासिल न होगा। या कपड़ा बारीक तो न होगा मगर चुस्त होने और बदन की बनावट पर कस जाने से उसका पहनना न पहनना बराबर होगा। बदन पर कपड़े होने और इसके बावजूद नंगा होने की एक सूरत यह भी है कि बदन पर सिर्फ़ थोड़ा-सा कपड़ा हो और बदन का अधिकतर हिस्सा और ख़ासकर बदन के वे हिस्से खुले रहें जिनको हयादार औरतें मर्दों से छुपाती हैं। जैसा कि यूरोप (और ऐशिया के बाज़ शहरों में जैसे मुम्बई, कोलकाता, रंगून, सिंगापुर वग़ैरह) में ऐसा लिबास पहनने का रिवाज है कि घुटनों तक कमीज़ या फ्रॉक होता है, आस्तीन या तो होती नहीं या इस कद्र छोटी होती है कि मोंढों से सिर्फ़ दो-चार इंच बड़ी होती हैं, पिंडलियाँ बिल्कुल नंगी होती हैं, और सर भी दुपट्टे से ख़ाली होता है, और फ्रॉक का गला आगे और पीछे से इस कद्र खुला और चौड़ा होता है कि आधी कमर और आधा सीना नज़र आता है।

फिर फ़रमाया ये औरतें (ग़ैर-मर्दों को) अपनी तरफ़ माईल करेंगी और खुद भी उनकी तरफ़ माईल होंगी। नंगा होने का रिवाज मुफ़लिसी और गुरबत की वजह से न होगा बल्कि मर्दों को अपना बदन दिखाना, और उनका दिल लुभाना मकसद होगा, और लुभाने का दूसरा तरीक़ा यह इख़्तियार करेंगी कि अपने सरों को (जो दुपट्टों से ख़ाली होंगे) मटका कर चलेंगी, जिस तरह ऊँट की पीठ का ऊपरी हिस्सा (जिसको कोहान कहते हैं) तेज़ रफ़्तारी के वक़्त ज़मीन की तरफ़ झुका करता है। ऊँट के कोहान से तशबीह देकर यह बताया कि वे औरतें बालों को फुला-फुलाकर अपने सरों को मोटा करेंगी।

फ़ैशन की बुरी वबा

फ़ैशन की वबा ने बड़े-बड़े इज़्ज़तदार और शरीफ़ ख़ानदानों की औरतों को ईसाई लेडियों और फ़िल्म कम्पनियों में काम करने वाली हिरोईनों की पैरवी पर आमादा कर दिया है। सिनेमा देखने से जहाँ और बहुत-से गुनाह और नुकसान हैं वहाँ एक यह भी है कि नई उम्र की लड़कियाँ और नई तहज़ीब की दीवानी औरतें सिनेमा में काम करने वाली बेशर्म और बेहया औरतों का

लिबास पहनकर और उनके जैसे काम और हरकतें सीखकर आती हैं और फिर अपनी शक्ल व सूरत और चाल-ढाल को उन्हीं की तरह बनाने और नक़ल उतारने में फ़ख़्र समझती हैं। आजकल की बहुत-सी औरतें तरह-तरह से ग़ैर-मर्दों को अपनी तरफ़ माईल करने की तदबीरें करती हैं जैसे बुर्क़ा पहनकर बाहर निकलीं और हाथों को बाहर निकाल लिया या बुर्के का नक़ाब इतना छोटा रखा कि दोनों तरफ़ के रुख़्सार (गाल) साफ़ नज़र आ सकें। या ऐसा बारीक नक़ाब बुर्के में लगाया जो शक्ल व सूरत और हुस्न व ख़ूबसूरती को और भी नुमायाँ कर दे, और ख़ुद बुर्क़ा ही बजाय पर्दे के कशिश का सामान बन गया है। बुर्के पर फूलों का बनाना, चमकदार या बारीक कपड़े का बुर्क़ा होना बुरी निगाह वाले लोगों को बुर्के वाली की तरफ़ मुतवज्जह कर देता है। बुर्के क्या हुए पर्दे के बजाय नज़रों के खींचने का सामान बन गये, और वही मिसाल हो गयी कि जो न देखे वह भी देखे।

आजकल नाच बहुत इज़्ज़त का काम समझा जाने लगा है। स्कूलों और कालिजों में इसकी बाक़ायदा ट्रेनिंग दी जाती है, क्लबों और बड़े-बड़े होटलों में नंगे नाच होते हैं। यूरोप के नफ़्स परस्तों ने यह तजवीज़ किया है कि हर औरत अपने शौहर के सिवा ग़ैर-मर्द के साथ नाचे, जो औरत इसके ख़िलाफ़ करेगी वह उस समाज और सोसाईटी में बुरी समझी जायेगी। अफ़सोस है मुसलमानों पर कि यूरोप के बेहयाओं के तरीक़ों पर चलने को तरक़्क़ी और कामयाबी समझने लगे हैं। नाच मर्दों को अपनी तरफ़ माईल करने का सबसे ज़्यादा कामयाब ज़रिया है, इससे जिन्सी (यानी मर्द और औरत के ताल्लुक़ का) उभार होता है और यह बेहयाई की सब मन्ज़िलें तय होने का ज़रिया है।

फ़ायदाः हदीस के आख़िर में फ़रमाया कि ऐसी औरतें जन्नत में न तो दाख़िल होंगी और न उसकी ख़ुशबू पा सकेंगी। फिर फ़रमाया कि उसकी ख़ुशबू इतनी दूर से सूँघी जाती है। इस हदीस में उस दूरी और फ़ासले का ज़िक्र नहीं है जिस दूरी से जन्नत की ख़ुशबू सूँघी जाती है। हदीस की बाज़ रिवायतों में है कि जन्नत की ख़ुशबू सौ साल की दूरी और फ़ासले से सूँघी जाती है। (तरग़ीब) देखो ऐसी जन्नत से मेहरूमी कैसी बदबख़्ती है।

जो औरत ख़ुशबू लगाकर मर्दों के पास से गुज़रे वह ऐसी-वैसी है

हदीसः (228) हज़रत अबू मूसा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि

रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि (बुरी नज़र डालने वाली) हर आँख ज़िनाकार है, और कोई औरत जब इत्र लगाकर (मर्दों की) मजलिस के करीब से गुज़रे तो वह ऐसी-वैसी है, यानी ज़िनाकार है।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 94)

तशरीहः इस हदीस में पहले तो एक मुस्तक़िल उसूल इरशाद फ़रमाया कि बुरी नज़री डालने वाली हर आँख ज़िनाकार है। यह हुक्म मर्दों और औरतों दोनों को शामिल है। जो मर्द ना-मेहरम औरतों को देखे या जो औरत ना-मेहरम मर्दों की ताक-झाँक करे, ऐसे मर्द और ऐसी औरत की आँख ज़िनाकार है। असल ज़िना जिसको कहते हैं सभी को मालूम है, लेकिन ज़िना के असबाब को भी अल्लाह के रसूल सल्ल० ने ज़िना फ़रमाया है।

बदन के हिस्सों का ज़िना

एक हदीस में फ़रमाया है कि आँखों का ज़िना देखना है, और कानों का ज़िना सुनना है, और ज़बान का ज़िना बात करना है, और हाथों का ज़िना पकड़ना है, और पाँवों का ज़िना चलकर जाना है, और दिल (बदकारी की) ख़्वाहिश और तमन्ना करता है और शर्मगाह उस (की उम्मीद) को झुठला देती है या सच्चा कर देती है।

मालूम हुआ कि ना-मेहरम मर्द व औरत का एक-दूसरे पर नज़र डालना भी ज़िना है, और बुरी नीयत के साथ या लज़्ज़त के लिए ना-मेहरम मर्द व औरत का आपस में बात करना और सुनना भी ज़िना है। किसी ना-मेहरम मर्द या औरत की तरफ़ बुरी नीयत से चलकर जाना या हाथ से छूना, यह सब ज़िना है, अगरचे बड़ा ज़िना दोनों की शर्मगाहों का मिलना है।

इस हदीस शरीफ़ में आँखों का ज़िना बयान फ़रमा कर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो औरत ख़ुशबू लगाकर मर्दों की मजलिस के पास से गुज़रे उसका यह अमल भी ज़िना है। किसी मर्द व औरत में जब ज़िनाकारी के ताल्लुक़ात होते हैं तो एकदम नहीं हो जाते, बल्कि असल ज़िना से पहले बहुत-से ऐसे काम किये जाते हैं जो आपस में एक-दूसरे को क़रीब और निकट करते चले जाते हैं। इसी लिए शरीअत ने ज़िना को दावत देने वाले, उसके असबाब और वे सब चीज़ें जो इसकी तरफ़ उभारें उन सबको भी ज़िना क़रार दिया है।

औरत को अगर किसी मजबूरी से कहीं जाना हो तो पर्दे का लिहाज़ करके मर्दों से बचते हुए रास्तों के किनारे से गुज़रते हुए जाने की इजाज़त दी गयी है। ख़ुशबू लगाकर बाहर निकलना अगरचे बुर्के के अन्दर हो शरीअ़त के नज़दीक इतनी बुरी बात है कि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ऐसा करने वाली औ़रतों को ज़िनाकार फ़रमा दिया। यूँ भी औ़रत को तेज़ ख़ुशबू लगाना मना है अगरचे अपने घर के अन्दर ही हो।

ख़ुलासा यह कि औ़रत को हर तरह से ग़ैर-मर्दों से बचकर रहना लाज़िम और ज़रूरी है, यहाँ तक कि ऐसा मौक़ा भी न आने दे कि कोई ग़ैर-मर्द उसकी ख़ुशबू भी पा सके।

ना-मेहरमों से गुफ़्तगू का तरीक़ा

हदीस से मालूम हुआ कि ज़बान का ज़िना बात करना है और कानों का ज़िना सुनना है। इसी को सामने रखते हुए ना-मेहरम मर्द व औ़रत को बहुत एहतियात की ज़रूरत है। अगर किसी ज़रूरत और मजबूरी से बात करनी पड़े तो बहुत मुख़्तसर कर लें, हाँ-ना का जवाब देकर ख़त्म कर डालें। जहाँ तक मुमकिन हो आवाज़ धीमी रखें और लहजे में कशिश पैदा न होने दें।

मसाइल की मशहूर किताब "दुर्रे मुख़्तार" के मुसन्निफ़ (लेखक) लिखते हैं:

"ज़रूरत के लिए हम इस बात को जायज़ समझते हैं कि औ़रत ना-मेहरम से गुफ़्तगू या सवाल व जवाब करे, लेकिन इस बात की इजाज़त नहीं है कि ना-मेहरम से बात करते हुए गुफ़्तगू को लम्बी करती चली जायें, या नर्म लहजे में बात करें, या बात में लचक पैदा करें, क्योंकि ऐसा करने से मर्दों के दिल माईल होंगे और उनकी तबीयतों में उभार पैदा होगा।

(मिश्कात पेज 272 जिल्द 1)

सूरः अहज़ाब में इरशाद है:

तर्जुमाः तुम बात करने में नज़ाकत इख़्तियार न करो, क्योंकि इससे ऐसे शख़्स को तबई मैलान होगा जिसके दिल में रोग है, लिहाज़ा तुम मुनासिब तरीक़े पर बात करो। (जो पाकबाज़ आबरू का पास रखने वाली औ़रतों का जाना-पहचाना और परिचित तरीक़ा है) (सूरः अहज़ाब आयत 32)

मर्दों और औ़रतों की ख़ुशबू में फ़र्क़

हदीसः (229) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि

रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः मर्दों की ख़ुशबू ऐसी हो जिसकी ख़ुशबू ज़ाहिर हो, यानी दूसरों को भी पहुँच रही हो, और उसका रंग पोशीदा हो। और औरतों की ख़ुशबू ऐसी हो जिसका रंग नज़र आ रहा हो और ख़ुशबू पोशीदा हो। (यानी बहुत मामूली ख़ुशबू आ रही हो)।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 318)

तशरीहः इस हदीस में मर्दों और औरतों की ख़ुशबू में फ़र्क़ बताया गया है। यानी मर्द ऐसी ख़ुशबू लगायें जिससे कपड़े पर रंग न लगे या हल्का-सा रंग लग जाये, मगर ख़ुशबू तेज़ हो, जो दूसरों तक पहुँच रही हो- जैसे इत्रे गुलाब, मुश्क, अंबर, काफ़ूर वग़ैरह लगायें और औरतों की ख़ुशबू ऐसी हो जिसका रंग कपड़ों पर ज़ाहिर हो जाये, मगर ख़ुशबू बहुत ही मामूली हो, जो ख़ुद अपनी नाक तक पहुँच सके, या शौहर क़रीब हो तो उसको ख़ुशबू आ जाये। और हदीस में फ़रमाया है कि जो औरत ख़ुशबू लगाकर मर्दों की मजलिस में गुज़रेगी और लोगों को उसकी ख़ुशबू आयेगी तो उस औरत का यह अ़मल ज़िना में शामिल होगा। इस बिना पर तेज़ ख़ुशबू लगाने से औरत को सख़्त परहेज़ करना लाज़िम है। और औरत को तेज़ ख़ुशबू लगाने की ज़रूरत ही क्या है? सिर्फ़ शौहर से ताल्लुक़ है उसको सुंघा देना काफ़ी है।

देखिये इ़ज़्ज़त व आबरू को महफ़ूज़ रखने के लिए नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कैसे-कैसे उसूल बताये हैं, और कैसी-कैसी नसीहतें की हैं। अफ़सोस है कि इस दौर के मुसलमान सिर्फ़ नाम के मुसलमान बने हुए हैं। इस्लाम के दुश्मन जो रंग-ढंग और बेहयाई इख़्तियार करते हैं, ये लोग भी उनके पीछे लग लेते हैं। अल्लाह के पाक नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पैरवी छोड़कर बेहयाओं के पीछे लग जाना ईमान के दावेदारों को कहाँ तक सजता है? ख़ुद ही ग़ौर कर लें।

सोने और रेशम की वजह से क़ियामत के मैदान में औरतों की परेशानी

हदीसः (230) हज़रत अबू उमामा रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि मुझे अल्लाह की तरफ़ से यह मन्ज़र दिखाया गया कि मैं जन्नत में दाख़िल हुआ हूँ वहाँ क्या देखता हूँ कि बुलन्द दर्जों वाले वे बिना पैसे वाले हज़रात हैं जिन्होंने

(अल्लाह की रिज़ा के लिए) वतन छोड़कर हिजरत की है और ईमान वालों के बच्चे भी आला दरजों में हैं। और जन्नत में मालदार और औरतें सबसे कम हैं। (यह देखकर मेरे दिल में इसका सबब मालूम होने का जज़्बा पैदा हुआ) चुनाँचे मुझे बताया गया कि दरवाज़े पर मालदारों का हिसाब हो रहा है और माल के सिलसिले में उनकी छानबीन हो रही है (कि कहाँ से कमाया और कहाँ-कहाँ ख़र्च किया) लिहाज़ा वे अभी यहाँ नहीं पहुँचे, और औरतें यहाँ आने से इसलिए रह गईं कि उनको सोने और रेशम ने (अल्लाह तआ़ला से और दीन व आख़िरत से) ग़ाफ़िल रखा। (तरग़ीब पेज 101 जिल्द 3)

तशरीहः एक हदीस में है जिसके रिवायत करने वाले हज़रत उसामा बिन ज़ैद रज़ियल्लाहु अ़न्हु हैं कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मैं जन्नत के दरवाज़े पर खड़ा हुआ तो देखा कि उसमें अकसर दाख़िल होने वाले ग़रीब व मिस्कीन लोग हैं (जिनके पास दुनिया में माल व ज़र न था, जिसके ज़रिये अल्लाह को भूलकर गुनाहों में मुब्तला होते हैं) और माल वाले हिसाब देने के लिए रोक लिये गये हैं, अलबत्ता जिन मालदारों को दोज़ख़ में दाख़िल होना है उनके बारे में दोज़ख़ में जाने का हुक्म मिल चुका है। और मैं दोज़ख़ के दरवाज़े पर खड़ा हुआ तो देखा कि उसके अन्दर दाख़िल होने वालों में अकसर औरतें हैं। (मिश्कात शरीफ़)

इस हदीस और इसके अलावा और भी दूसरी हदीसों से वाज़ेह तौर पर यह साबित होता है कि दोज़ख़ में अकसर औरतें होंगी। और इसके असबाब (कारण) भी कई बताये गये हैं, जो हदीसों में बयान हुए हैं। ऊपर की हदीस में बताया है कि औरतों के दोज़ख़ में दाख़िल होने का सबब यह है कि दुनिया में इनको सोने और रेशम ने ख़ुदा से और शरीअ़त के अहकाम पर अ़मल पैरा होने से ग़ाफ़िल रखा है।

दर हक़ीक़त औरतों में अच्छे से अच्छे कपड़े और उम्दा से उम्दा ज़ेवर की तलब इतनी ज़्यादा होती है कि इन दोनों चीज़ों के लिए बहुत-से गुनाहों में न सिर्फ़ मुब्तला होती हैं बल्कि अपने शौहरों और दूसरे अ़ज़ीज़ों को भी मुब्तला कर देती हैं। अगर माल हलाल हो और गुंजाइश हो तो ज़ेवर पहनना जायज़ है, और औरत को रेशम के कपड़े पहनना भी जायज़ है। और अब तो रेशम की कोई हक़ीक़त नहीं इससे ज़्यादा बढ़कर उम्दा और अच्छे बहुत-से पसन्दीदा कपड़े मार्किट में आ चुके हैं। बहरहाल क़ीमती कपड़ों का

पहनना भी जायज़ है, लेकिन उनके हासिल करने के लिए जो नाजायज़ तरीके इख़्तियार किये जाते हैं, और ज़ेवर और कपड़ों के इस्तेमाल में दिखावा और खुद-पसन्दी (घमण्ड) और दूसरों को हक़ीर जानना और अपने को बड़ा समझना जो औरतों में पाया जाता है, इसने औरतों को आख़िरत की कामयाबी से पीछे धकेल दिया है।

अव्वल यह देख लेना चाहिये कि अपना ज़ाती हलाल माल ज़ेवर बनाने के लायक़ है या नहीं। यानी दूसरी जायज़ ज़रूरतों के बावजूद माल में गुंजाइश है या नहीं। अगर अपने पास ज़ाती माल न हो और शौहर से बनवाना हो या माँ बाप से तैयार कराना हो तो उनके पास भी गुंजाइश देखनी चाहिये। लेकिन होता यह है कि पैसा पास न हो, या कम हो तो सूद पर रक़म लाकर बनवा लेती हैं। शौहर के पास नहीं होता तो मजबूर करती हैं कि कहीं से रक़म लाकर दे। अगर वह नेक आदमी है, रिश्वत से बचता है तो उसे मजबूर करती हैं कि रिश्वत ले और ज़ेवर बनवाकर दे। फिर यह भी सब औरतें जानती हैं कि ज़ेवर घर में हर वक़्त नहीं पहनती हैं, बल्कि उसकी ज़रूरत ब्याह-शादी में शरीक होने या और किसी तरह की मजलिसों में जाने के लिए होती है। उसमें चूँकि शान जताने और दिखावा करने की नीयत होती है इसलिए जिस शादी में शरीक होना है या जिस महफ़िल में जाना है उसकी तारीख़ आने तक बनवाकर छोड़ती हैं। फिर यह मुसीबत है कि पुराना डिज़ाईन नहीं चलता। समाज में जिस नये डिज़ाईन के ज़ेवर आ जायें तो पुराने तुड़वाकर नये डिज़ाईन के मुताबिक़ बनवाने की फ़िक्र की जाती है, और इसमें भी वही रियाकारी वाला नफ़्स का चोर मौजूद होता है। कपड़ों के बारे में भी यही है कि कई जोड़े कपड़े रखे हैं लेकिन मजलिसों और महफ़िलों में जाने के लिए नये लिबास की ज़रूरत समझती हैं और कहती हैं कि ये जोड़े तो कई बार पहने जा चुके हैं, इन्हें मैं पहनकर जाऊँगी तो औरतें नाम रखेंगी और कहेंगी कि फ़लानी के पास तो यही दो जोड़े रखे हैं, इन्हीं को अदल-बदल कर आ जाती है। इसमें भी वही दिखावे का जज़्बा मौजूद होता है।

लिबास और ज़ेवर की तैयारी से पहले और बाद में

लिबास व ज़ेवर तैयार करने से पहले हलाल माल देखना चाहिये, और हलाल माल मौजूद हो तो गुंजाइश देखनी चाहिये। और जब ज़ेवर कपड़ा बन जाये तो उसके इस्तेमाल करने में दिखावा और रियाकारी और खुद पसन्दी

(अपने को अच्छा समझना) और दूसरों को हक़ीर जानने से परहेज़ करना लाज़िम है। जब औरतों के सामने ऐसी बातें की जाती हैं तो कहती हैं कि मौलवियों को क्या हो गया कि बदन पर चीथड़े डालने से भी मना करते हैं और हाथों में चूड़ियाँ डालने से भी रोकते हैं। बहनो! मौलवी की क्या हैसियत जो हलाल से रोके, अलबत्ता वह शरीअ़त की बात बताता है और अल्लाह के सच्चे रसूल सल्ल० की हदीस सुनाता है। तुम ज़ेवर भी बनाओ, कपड़े भी तरह-तरह के बनाओ, हर हाल में अल्लाह से डरो, अल्लाह की याद दिल में बसाओ, ज़ेवर कपड़े के लिए सूदी लेन-देन न करो, न शौहर से रिश्वत लेने के लिए कहो। हलाल माल में गुंजाइश देखकर बना लो। फिर शरीअ़त के उसूल के मुताबिक़ सालाना ज़कात के देने की फ़िक्र करो, और पहनने में दिखावा न करो, और न किसी को हक़ीर समझो। अल्लाह तआ़ला के हुक्मों पर चलने में जन्नत का दाख़िला है और उसकी नाफ़रमानियाँ करने पर जन्नत के दाख़िले से रुकावट है। हदीस शरीफ़ में यही तो फ़रमाया कि औरतों को सोने और रेशम ने अल्लाह तआ़ला से और उसके हुक्मों से ग़ाफ़िल रखा, और यह चीज़ उनके जन्नत के दाख़िले के लिए रुकावट बन गयी।

शरीअ़त के उसूल के मुताबिक़ लिबास और ज़ेवर पहनो। कौन रोकता है, और किसको रोकने की मजाल है? शरीअ़त के अहकाम बताना सबसे बड़ी ख़ैरख़्वाही है, जो बताये उसका शुक्रिया अदा करना चाहिये।

सोने-चाँदी का ज़ेवर और इनकी दूसरी चीज़ें इस्तेमाल करने का हुक्म

हदीसः (231) हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अन्हु की बहन रिवायत करती हैं कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि ऐ औरतो! क्या चाँदी के ज़ेवर से तुम्हारी आरास्तगी (यानी सजने-संवरने) का काम नहीं चल सकता? ख़बरदार! तुममें से जो औरत ज़ाहिर करने के लिए सोने का ज़ेवर पहनेगी उसकी वजह से ज़रूर अज़ाब भुगतेगी।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 379)

तशरीहः यह तो सब जानते हैं कि औरतों को ज़ेवर से बहुत ज़्यादा मुहब्बत होती है। एक बुज़ुर्ग कहते हैं कि अगर औरत के जिस्म में हर जगह सोने की कील गाड़ दी जाये तो सोने की मुहब्बत की वजह से ज़रा भी

तकलीफ़ महसूस न करेगी। अल्लाह की शरीअत में एतिदाल (दरमियानी राह, सन्तुलन) है। नफ़्स की ख़्वाहिशों की भी रियायत रखी है, मगर हदें और सीमाएँ मुक़र्रर फ़रमा दी हैं, और ऐसे क़ानून लागू फ़रमा दिये हैं जो इनसान को ग़रूर, तकब्बुर, शैख़ी दूसरों को छोटा समझने, अपनी निगाह में ख़ुद बड़ा बनने और अल्लाह की मख़्लूक़ का दिल दुखाने और हक़-तल्फ़ी से बाज़ रखते हैं। अगर किसी औरत को हलाल माल से मयस्सर हो तो सोने और चाँदी दोनों का ज़ेवर पहन सकती है।

जायज़ होने की एक शर्त ज़ेवर बनाने से पहले है, यानी यह कि हलाल माल से हो। और दो शर्तें ज़ेवर पहनने के बाद हैं- एक यह कि ज़कात और दूसरे वाजिबात की अदायगी में कोताही न हो, दूसरी यह कि दिखावे के लिए ज़ेवर न पहना जाये, और उससे शैख़ी बघारना मक़सद न हो। चाँदी का ज़ेवर कोई ख़ास ज़ेवर नहीं समझा जाता है और उसमें दिखावे और रियाकारी और शैख़ी बघारने का मौक़ा ज़्यादा नहीं होता, इसलिए चाँदी के ज़ेवर से काम चलाने के लिए इरशाद फ़रमाया, अगरचे दिखावे और अपनी शान ज़ाहिर करने और दूसरों को हक़ीर जानने से बचना चाँदी का ज़ेवर पहनकर भी ज़रूरी है। चाँदी के ज़ेवर से काम चलाने की तरग़ीब (प्रेरणा) देते हुए नबी करीम सल्ल० ने इरशाद फ़रमाया कि जो औरत ज़ाहिर करने के लिए सोने का ज़ेवर पहनेगी उसकी वजह से उसे अज़ाब दिया जायेगा।

ज़ेवर दिखाने का मर्ज़ औरतों में बहुत होता है, और किसी को पता न चले तो मजलिस में बैठे हुए अनेक तरकीबों और तदबीरों से बताती हैं कि हम ज़ेवर पहने हुए हैं- जैसे बैठे-बैठे गर्मी का बहाना करके एक दम कान और गला खोल देंगी। ज़बान से कहेंगी उई कितनी गर्मी है और दिल में ज़ेवर ज़ाहिर करने की नीयत है। अल्लाह तआला नफ़्स की मक्कारियों से बचाये। अगर ये ज़िक्र हुई ख़राबियाँ न हों तो औरतों को ज़ेवर पहनने की गुंजाइश है। मगर न पहनना फिर भी अफ़ज़ल है। दुनिया में न पहनेंगी तो आख़िरत में मिलेगा।

हज़रत उक़बा इब्ने आमिर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

हदीसः अगर तुम जन्नत के ज़ेवर और रेशम को चाहते हो तो इनको दुनिया में मत पहनो। (मिश्कात शरीफ़ पेज 379)

जन्नत में जो ज़ेवर और लिबास और दूसरी नेमतें मिलेंगी उनकी तफ़सील जानने के लिए हमारी किताब "जन्नत की नेमतें" पढ़ें।

हदीसः (232) हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ख़ादिम हज़रत सोबान रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान फ़रमायाः नबी करीम सल्ल० का यह मामूल था कि जब सफ़र में तशरीफ़ ले जाते तो अपने घर वालों में से सबसे आख़िरी मुलाक़ात हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा से फ़रमाते थे। उसके बाद रवाना होते थे। और जब वापस तशरीफ़ लाते तो सबसे पहले हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा के पास तशरीफ़ ले जाते थे।

एक बार आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम एक जिहाद से वापस हुए (और हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा के घर में दाख़िल होने का इरादा फ़रमाया) मगर दाख़िल नहीं हुए। बात यह थी कि हज़रत फ़ातिमा ने (दीवार पर या ताक़ पर) एक पर्दा लटका लिया था, और हज़रत हसन व हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हुमा को चाँदी के दो कंगन पहना दिये थे। हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा ने (यह माजरा देखकर कि आप तशरीफ़ लाते-लाते वापस रवाना हो गये) फ़ौरन महसूस फ़रमाया कि आपकी वापसी की वजह यही दो चीज़े हैं जो आपके मिज़ाज शरीफ़ को नागवार हुईं। चुनाँचे उन्होंने ख़ुद ही वह पर्दा फाड़ दिया और दोनों साहिबज़ादों के कंगन काटकर अलग फ़रमा दिये। दोनों साहिबज़ादे रोते हुए रसूले ख़ुदा सल्ल० की ख़िदमत में हाज़िर हुए। आपने वे कंगन उनके हाथों से ले लिए और (मुझसे) फ़रमाया कि ऐ सोबान! लो यह ले जाओ और फ़लाँ (ग़रीब) घराने के लोगों को दे दो। (वह बेचकर अपना काम चला लेंगे)। ये लोग मेरे घर वाले हैं, मैं यह पसन्द नहीं करता कि ये लोग अपने हिस्से की उम्दा चीज़ें दुनियावी ज़िन्दगी में इस्तेमाल कर लें। (फिर फ़रमाया कि) ऐ सोबान! फ़ातिमा के लिए (जानवरों के) पट्ठों से बना हुआ एक हार और हाथी दाँत के दो कंगन ख़रीद लाओ। (मिश्कात पेज 383)

तशरीहः इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के दुनिया से क़ता-ताल्लुक़ और दुनियावी नेमतों और लज़्ज़तों के इस्तेमाल से बे-रग़बती की एक झलक मालूम होती है। आप न सिर्फ़ ख़ुद अपने लिए बल्कि अपने घर वालों के लिए भी दुनियावी लज़्ज़तों और नेमतों में पड़ना ना-पसन्द फ़रमाते थे। ना-पसन्द तो सभी के लिए था, मगर इस सिलसिले में ज़्यादा तवज्जोह ख़ुद अपने आप अमल करने की तरफ़ थी। हलाल चीज़ें

इस्तेमाल करना चूँकि गुनाह नहीं है, इसलिए सख़्ती से रोकना मुनासिब न था, अलबत्ता अपने हक में सख़्ती फ़रमाते थे और घर वालों को तंबीह फ़रमाते रहते थे। ज़ेवर अगरचे औरत के लिए हलाल है मगर इसी को पसन्द फ़रमाया कि इस्तेमाल न किया जाये, क्योंकि दुनिया में नेमतों के इस्तेमाल से ख़तरा है कि आख़िरत की नेमतें कम मिलें, ज़ाहिर है कि दुनिया की नेमतें आख़िरत की नेमतों के सामने बिल्कुल बे-हैसियत हैं। अल्लाह का प्यारा नबी (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) यह क्योंकर पसन्द फ़रमाता कि आख़िरत की नेमतों में कमी आये, इसी लिए चाँदी के कंगन एक ग़रीब घराने के लिए भेज दिये।

मसलाः औरतों को चाँदी-सोने का ज़ेवर पहनना जायज़ है, बशर्तेकि हलाल माल से हो, और रियाकारी मक़सद न हो जैसा कि पहले भी गुज़र चुका है। और मर्दों को सिर्फ़ चाँदी की अंगूठी की इजाज़त है बशर्तेकि साढ़े चार माशे से कम हो। औरतों और मर्दों को और किसी तरह से सोने-चाँदी का इस्तेमाल जायज़ नहीं है। जैसे सोने-चाँदी के बरतनों में खाना-पीना, और सोने-चाँदी के चमचे से खाना या उनकी सलाई से या सुर्मेदानी से सुर्मा लगाना, यह सब हराम है, मर्दों के लिए भी औरतों के लिए भी। जिस पलंग या कुर्सी के पाये सोने या चाँदी के हों उनपर लेटना-बैठना भी हराम है, और इसमें मर्द व औरत सबका एक हुक्म है।

बजने वाला ज़ेवर पहनने की मनाही

हदीसः (233) हज़रत बुनाना रज़ियल्लाहु अ़न्हा फ़रमाती हैं कि मैं हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा के पास हाज़िर थी उस वक़्त यह वाकिआ पेश आया कि एक औरत एक लड़की को साथ लिये हुए हज़रत आयशा के पास अन्दर आने लगी। वह लड़की झाँजन (पाज़ेब) पहने हुए थी, जिनसे आवाज़ आ रही थी। हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने फ़रमाया कि जब तक इसके झाँजन न काटे जायें मेरे पास इसे हरगिज़ न लाना। मैंने रसूले खुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सुना है कि जिस घर में घंटी हो उसमें (रहमत के) फ़रिश्ते दाख़िल नहीं होते। (मिश्कात शरीफ़ पेज 379)

तशरीहः एक हदीस में हैः घण्टियाँ शैतान के बाजे हैं।

(मिश्कात पेज 338)

एक और हदीस में इरशाद हैः

हर घंटी के साथ शैतान होता है। (मिश्कात पेज 379)

इन हदीसों से मालूम हुआ कि बजने वाला ज़ेवर और घुंघरू और घंटियाँ शैतान को पसन्द हैं, और यह शैतान के बाजे हैं। जब इनमें से आवाज़ निकलती है तो वह ख़ुश होता है, और जहाँ पर ऐसी चीज़ें होती हैं वहाँ रहमत के फ़रिश्ते दाख़िल नहीं होते। इन हदीसों को सामने रखते हुए दीन के आलिमों ने लिखा है कि ऐसा ज़ेवर जिसके अन्दर ख़ोल में बजने वाली चीज़ें पड़ी हुई हों, उसके पहनने की शरअ़न इजाज़त नहीं है, जैसे पुराने ज़माने में झाँजन होते थे, और इसके अलावा भी कई चीज़ें ऐसी बनायी जाती थीं। देहात में अब भी इस तरह के ज़ेवर का रिवाज है, यह सब मना है।

जिस ज़ेवर में बजने वाली चीज़ न हो मगर ज़ेवर आपस में एक-दूसरे से मिलकर बजता हो, उसके बारे में अल्लाह तआ़ला का इरशाद है:

तर्जुमाः और अपने पैर (चलने में ज़मीन पर) ज़ोर से न मारें, ताकि उनका बनाव-सिंघार मालूम हो जाये, जिससे वह पौशीदा तौर पर सजी-संवरी हैं। (सूरः नूर आयत 31)

जानवरों के गले में जो घंटी डाल देते हैं उससे भी नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मना फ़रमाया है। एक हदीस में इरशाद है:

हदीसः जिन लोगों के साथ कुत्ता या घंटी हो (रहमत के) फ़रिश्ते उनके साथ नहीं रहते। (मिश्कात पेज 338)

गाना-बजाना शैतानी धन्धा है

यह हक़ीक़त है कि जो लोग शैतानी आमाल करते हैं, उनको बजने-बजाने वाली चीज़ों से मुहब्बत और दिलचस्पी होती है। और शैतानी कामों में ऐसी चीज़ों की अधिकता होती है। हिन्दुओं और यहूदियों व ईसाइयों के मन्दिरों और गिरजाओं में ख़ास तौर से ऐसी चीज़ों का ख़्याल रखा जाता है। शैतान को चूँकि ये चीज़ें पसन्द हैं इसलिए अपने मानने वालों के दिलों में वस्वसे (ख़्यालात) डालता है कि ऐसी चीज़ें रखें और बजायें। मुसलमानों में भी जो लोग नफ़्स की ख़्वाहिश के मुताबिक़ चलते हैं और रंज व ख़ुशी में क़ुरआन व हदीस की तरफ़ रुजू नहीं करना चाहते, उनपर शैतान क़ाबू पा लेता है, और उनको गाने-बजाने की चीज़ों में मशग़ूल कर देता है। उनसे गाने गवाता है और बाजे बजवाता है, और ख़ुद भी सुनता और मज़े लेता है। यह मुसीबत आम ही हो गयी है कि हर वक़्त नफ़्स को ख़ुश करने के लिए

रेडियो खुले रहते हैं, या टेपरिकार्डर चलाये रखते हैं। ख़ुसूसन खाने के वक़्त गाना सुनने का बहुत ज़्यादा ख़्याल रखते हैं ताकि जब मुहँ में लुक़्मा जाये तो गले से नीचे धकेलने का काम गाने की धुन और सुर से हो जाये।

क़व्वाली की महफ़िलों में बाजे

और मुसीबत से बढ़कर मुसीबत यह है कि बहुत-से मौक़ों में गाजे-बाजे को सवाब समझते हैं, और वह यह कि क़व्वाली की मजलिस आयोजित करते हैं और पूरी-पूरी रात क़व्वाल का गाना सुनने के लिए जागते हैं। और चूँकि उस मौक़े पर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तारीफ़ आपकी सिफ़ात के शे'र भी होते हैं, इसलिए उस महफ़िल में शरीक होने को सवाब समझते हैं। अगर कोई शख़्स समझाये और बताये तो उसको कहते हैं कि वह "वहाबी" है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नअ़त सुनने से मना करता है, हालाँकि मना करने वाला ऐसे नअ़तिया शे'रों के कहने और सुनने से नहीं रोकता जो सच हों और सही हों, वह तो गाने-बजाने के उपकरणों पर पढ़ने से रोकता है। अगर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नअ़त सुनने का शौक़ है तो बग़ैर हारमोनियम और बग़ैर तबले और बग़ैर साज़ सारंगी के सुने। हालाँकि सब जानते हैं कि अगर कोई शख़्स बग़ैर सारंगी के और बग़ैर तबले बाजे के नअ़त पढ़ने बैठ जाये तो दस-पाँच आदमी सुनने के लिए जमा हो जायेंगे और दस-पाँच मिनट में तितर-बितर हो जायेंगे। ख़ुदा के लिए इन्साफ़ करो, क्या यह पूरी-पूरी रात का जागना नबी (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) की नअ़त सुनने के लिए है या नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का पाक नाम इस्तेमाल करके नफ़्स और शैतान को मज़ेदार गाने की हराम ग़िज़ा देने के लिए है। हुज़ूरे अक़्दस सल्ल ने फ़रमायाः

हदीसः मेरे रब ने मुझे हुक्म फ़रमाया है कि गाने-बजाने के आलात (उपकरणों) को और बुतों को और सलीब को (जिसे ईसाई पूजते हैं) और जाहिलीयत के कामों को मिटा दूँ।

कैसी नादानी की बात है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जिन चीज़ों के मिटाने के लिए तशरीफ़ लाये उन ही चीज़ों को हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नअ़त सुनने में इस्तेमाल करते हैं, फिर ऊपर से सवाब की उम्मीद रखते हैं। नफ़्स व शैतान ने ऐसा ग़लबा पाया है कि क़ुरआन व हदीस के क़ानून बताने वालों की बात नागवार मालूम होती है।

अल्लाह पाक समझ दे और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इरशादात पर अ़मल करने के जज़्बात नसीब फ़रमाये। फिर रात भर क़व्वाली सुनते हैं और फ़ज्र की अज़ान होते ही नमाज़ पढ़े बग़ैर सो जाते हैं। ये हैं नबी पाक से मुहब्बत करने वाले, जिन्हें फ़र्ज़ों के ग़ारत करने पर ज़रा भी मलाल नहीं। इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन।

मुहर्रम के ताज़ियों में ढोल-बाजे

और देखिये मुहर्रम में क्या होता है। आठवीं, नवीं, दसवीं तारीख़ के जुलूस और ऊँचे-ऊँचे ताज़ियों की लम्बी-लम्बी क़तारें बाज़ारों में होकर गुज़रती हैं, और हज़रत हुसैन रज़ियल्लाहु अ़न्हु का मातम और हज़रात अहले बैत रज़ियल्लाहु अ़न्हुम की मुसीबतों और तक्लीफ़ों की मरसिया-ख़्वानी के उनवान पर जो काम होते हैं वे भी ढोल और बाजे-गाजे से भरपूर होते हैं। जो शख़्स इन ग़ैर-शरई हरकतों से मना करे तो उसकी बात को वहाबी की बात कहकर टाल देते हैं। अरे समझदारो! यह बताओ कि मातम और मरसिया-ख़्वानी में ताशे बजाना, नक़्क़ारे पीटना और बजाने के दूसरे सामान इस्तेमाल करना, यह रंज की कौनसी क़िस्म है? निकलते हैं मातम करने और सामान करते हैं नफ़्स व शैतान को ख़ुश करने के। अव्वल तो मातम और मरसिया-ख़्वानी ही मना है, फिर ऊपर से इसको सवाब समझना और गाने-बजाने के सामान से इसको भरपूर कर देना यह सब एतिक़ाद की ख़राबी है। और सब हरकतें गुनाह दर गुनाह हैं। जिन चीज़ों की बुनियाद ख़ैर पर होती है उनमें क़ुरआन व हदीस के ख़िलाफ़ नहीं किया जाता, और शैतान को ख़ुश नहीं किया जाता। अ़जीब तमाशा है कि हज़रात अहले बैत रज़ियल्लाहु अ़न्हुम का ग़म लेकर निकलते हैं और हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ही के इरशादात की नाफ़रमानी करते हुए झूठे ग़म का इज़हार करते हैं कि हज़रत हुसैन रज़ियल्लाहु अ़न्हु से मुहब्बत होने की बुनियाद पर मातम करते हैं, और उन्हीं के नाना जान सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इरशादात को ऐन मातम ही के वक़्त पीठ पीछे डाल देते हैं। बात यह है कि मुहब्बत सही उसूलों पर नहीं है, अगर सही उसूलों के मुताबिक़ होती तो आमाल व मशग़ले भी सही होते, सही मुहब्बत वह है जो शरई उसूल पर हो, ख़ूब समझ लो।

मर्दों को ज़नाना और औरतों को मर्दाना शक्ल व सूरत इख़्तियार करना मना और लानत का सबब है

हदीसः (234) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा का बयान है कि एक औरत ने हाथ में एक पर्चा देने के लिए पर्दे के पीछे से नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तरफ़ हाथ बढ़ाया, आपने हाथ रोक लिया और फ़रमाया कि न मालूम मर्द का हाथ है या औरत का। उसने कहा कि यह औरत का हाथ है। फ़रमाया अगर औरत होती तो अपने नाख़ूनों को मेहंदी के ज़रिये बदल देती। (यानी मेहंदी से रंग लेती)। (मिश्कात शरीफ़ पेज 383)

तशरीहः इस हदीस से यह बात मालूम हुई कि सहाबी औरतें नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से पर्दा करती थीं। इसी लिए तो एक औरत ने पर्दे के पीछे से पर्चा देने के लिए हाथ बढ़ाया, अगर बेपर्दा सामने आती तो पर्दे की क्या ज़रूरत थी?

जाहिल पीरों की गुमराही

इस हदीस से उन जाहिल पीरों की गुमराही भी मालूम हुई जो अपनी मुरीदनियों में बेधड़क अन्दर घरों में घुस जाते हैं और पर्दे का एहतिमाम नहीं करते। जाहिल औरतें कहती हैं कि इनसे क्या पर्दा? पीर मियाँ हैं, नेक आदमी हैं, भला अल्लाह के पाक रसूल दोनों जहान के सरदार सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से बढ़कर कौन नेक और पाकबाज़ होगा? जब सहाबी औरतों ने आपसे भी पर्दा किया तो किसी दूसरे को दम मारने की क्या मजाल है? जो नेकी के झूठे दावे करके बेधड़क औरतों में चले जाते हों, ऐसे लोग पीर मुरशिद नहीं बल्कि गुमराह हैं, जो शैतान की राह दिखाते हैं। ऐसे लोगों से मुरीद होना हराम है, मर्दों को भी और औरतों को भी।

अल्लाह वाले मुरशिदों का तरीक़ा

हमारे दादा-पीर हज़रत अक़्दस मौलाना ख़लील अहमद साहिब मुहाजिर मदनी रहमतुल्लाहि अलैहि बहुत बड़े पीर थे। जब औरतों को मुरीद करते थे तो पर्दा डालकर हाथ में हाथ लिए बग़ैर तौबा पढ़ा देते थे। लेकिन तौबा के अलफ़ाज़ कहलवाते वक़्त पर्दे की तरफ़ पुश्त करके बैठते थे ताकि ग़लती से भी नज़र न पड़ जाये, और औरतें अपनी ताक-झाँक वाली आदत से भी

वाज़ नहीं आती हैं इसलिए ऐसा करना ज़रूरी हुआ। किसी मौके पर एक औरत ने अर्ज़ किया कि हज़रत! जब पर्दा डाल लिया तो मुँह फेरकर बैठने की क्या ज़रूरत रही? फ़रमाया तुमको क्या मालूम मेरा मुहँ किधर को है? पता चला कि बावजूद पर्दे के एहतियात लाज़िम है। क्योंकि तुम नज़र डालने में बे-एहतियात होती हो। देखो! अच्छे और सच्चे पीर ऐसे होते हैं जो प्यारे रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के तरीके को मज़बूती से थामे रहते हैं, और मुरीदों और मुरीदनियों को भी उसी तरीके पर चलाते हैं।

बेपर्दा होकर ट्यूशन पढ़ने की बुराई

बहुत-से लोग बड़ी लड़कियों बल्कि अच्छी-ख़ासी उम्र की जवान औरतों को मास्टरों या हाफ़िज़ों से बतौर ट्यूशन पढ़वाते हैं और पर्दे का बिल्कुल ख़्याल नहीं करते। पढ़ाने वाला उस्ताद और पढ़ने वाली लड़कियाँ आमने-सामने बैठकर बिना पर्दा पढ़ते-पढ़ाते हैं। और न सिर्फ़ बेपर्दा बल्कि एकान्त और तन्हाई भी हो जाती है, क्योंकि कई बार वहाँ कोई तीसरा नहीं होता, यह सब हराम है। उस्ताद या पीर अगर ग़ैर-मेहरम है तो पर्दा लाज़िम है, ख़ूब समझ लो।

दूसरी बात ऊपर वाली हदीस से यह मालूम हुई कि औरत को औरतों वाली शक्ल व सूरत में रहना चाहिये। औरत के हाथ में मेहंदी होना इस बात की निशानी है कि यह औरत का हाथ है। चाहिये तो यह कि औरत हाथ की हथेलियों पर मेहंदी लगाती रहे वरना नाख़ूनों में तो ज़रूर ही मेहंदी रहनी चाहिये। मर्द को अपनी मर्दाना शक्ल व सूरत और हुलिये में और औरत को अपनी ज़नाना शक्ल व सूरत और हुलिये में रहना चाहिये। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इसका ख़ास एहतिमाम था। और एक को दूसरे की शक्ल व सूरत बनाने और लिबास पहनने से मना फ़रमाते थे, जिसका कुछ बयान अभी दूसरी हदीसों की तशरीह में आयेगा, इन्शा-अल्लाह।

हदीसः (235) हज़रत इब्ने मलीका रज़ियल्लाहु अ़न्हु (ताबिई) का बयान है कि हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से किसी ने अर्ज़ किया कि एक औरत (मर्दाना) जूते पहनती है। हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने फ़रमाया कि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ऐसी औरत पर लानत की है जो मर्दों के तौर-तरीके इख़्तियार करे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 383)

हदीसः (236) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि

हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ऐसे मर्द पर लानत की है जो औ़रत का लिबास पहने और ऐसी औ़रत पर लानत की है जो मर्द का लिबास पहने। (मिश्कात शरीफ़ पेज 383)

हदीसः हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने लानत की उन मर्दों पर जो औ़रतों की तरह शक्ल-सूरत बनाकर फिरते हैं, और लानत की उन औ़रतों पर जो शक्ल व सूरत में मर्दाना हालत इख़्तियार करें। और इरशाद फ़रमाया कि उनको अपने घरों से निकाल दो। (मिश्कात शरीफ़ पेज 380)

तशरीहः इन हदीसों से मालूम हुआ कि हमारे प्यारे रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इस बात से बहुत ही ज़्यादा नफ़रत थी कि मर्द ज़नाना लिबास पहनें या किसी तरह से ज़नानापन इख़्तियार करें। और इस बात से भी आपको सख़्त नफ़रत थी कि औ़रतें मर्दाना लिबास पहनें या मर्दाना चाल-ढाल इख़्तियार करें। और इसी नफ़रत के सबब इस तरह के मर्दों और औ़रतों पर आपने लानत फ़रमायी।

दर हकीकत अ़क्ल का तक़ाज़ा भी यही है कि मर्द, मर्द बनकर रहें, और औ़रत, औ़रतें बनी रहें। आजकल के लोग रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हिदायत को नहीं देखते, बल्कि यूरोप व अमेरिका के काफ़िरों और सिनेमा में काम करने वाले मर्दों और औ़रतों को शक्ल व सूरत और तौर-तरीके व चाल-ढाल और सज-धज में अपना इमाम बनाते हैं। उधर से जो लिबास और तरीक़ा मिलता है, उसी को इख़्तियार करना इज़्ज़त का सबब समझते हैं, अगरचे वह लिबास और तर्ज़ और तौर-तरीक़ा अल्लाह के नज़दीक लानत ही का सबब हो। अल्लाह तआ़ला हमको समझ दे और अपने रसूल सल्ल० की हिदायतों पर चलने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये।

हदीस में फ़रमाया है कि औ़रत बनने वाले मर्दों और मर्द बनने वाली औ़रतों को अपने घरों से निकाल दो। इससे मालूम हुआ कि हिजड़े बने हुए जो लोग फिरते रहते हैं, उनको घरों में आने की इजाज़त देना सख़्त मना है।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि एक हिजड़ा नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास लाया गया, जिसके हाथों और बाज़ुओं में मेहंदी लगी हुई थी। आप ने फ़रमायाः इसको क्या हुआ? अ़र्ज़ किया गया कि यह औ़रतों की तरह बना रहता है, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व

सल्लम ने यह सुनकर मदीने से बाहर निकलवा दिया, और बक़ीअ़ (यह एक जगह का नाम है) में रहने को फ़रमाया। (मिश्कात शरीफ़)

ख़्याल रहे कि यहाँ बक़ीअ़ से मुराद बक़ीअ़ क़ब्रिस्तान नहीं है, यह जगह बक़ीअ़ के अलावा है।

बाज़ घरों में बच्चे की पैदाईश पर हिजड़ों से गाना गवाया जाता है, इसमें दोहरा गुनाह है। एक तो उनको घर में घुसाना, दूसरा गाना गवाना, अल्लाह तआ़ला हर गुनाह से बचाए। दीन के आ़लिमों ने लिखा है कि जो औ़रतें बेपर्दा फिरती हैं, मुसलमान औ़रत को उनसे भी पर्दा करना लाज़िम है।

आजकल के समाज में यह चीज़ ज़्यादा मकबूल हो रही है कि लड़कों को लड़कियों का लिबास और लड़कियों को लड़कों का लिबास पहनाते हैं और नौजवान मर्द व औ़रत इसी सैलाब के बहाव में बह रहे हैं। यह तरीक़ा भी यूरोप और अमेरिका के बदकारों से शुरू हुआ है। उनके नज़दीक यह फ़ैशन और फ़ख़्र की चीज़ है। एक जगह का वाक़िआ़ है कि किसी जगह दावत थी जो लोग बुलाए गये थे मर्द व औ़रत एक ही जगह मौजूद थे। एक नौ-उम्र को देखा गया कि रिवाज के मुताबिक़ सलीक़े से मेज़-कुर्सी लगा रहा है और खाने की चीज़ें चुन रहा है। किसी की ज़बान से यह निकल गया कि यह लड़का बड़ा होनहार है, सलीक़े से काम कर रहा है। इस पर पीछे से आवाज़ आयी कि मियाँ क्या फ़रमा रहे हैं? यह लड़का नहीं मेरी लड़की है। उन साहिब ने पीछे मुड़कर देखा और नज़र डालकर कहा कि माफ़ कीजिये मुझे मालूम न था कि आप इसकी वालिदा (माँ) हैं। फ़ौरन जवाब दिया गया कि मियाँ आप सही देखा कीजिये, मैं वालिदा नहीं हूँ मैं उसका वालिद (बाप) हूँ।

खुलासा यह कि लड़की को लड़के के लिबास और शक्ल व सूरत बनाने में रिवाज के मुताबिक़ फ़ैशन से सजा रखा था और जनाब वालिद साहिब खुद औ़रतों के लिबास और ज़नाना शक्ल व सूरत में बैठे हुए थे। मर्दों में ज़नानापन और औ़रतों में मर्दानापन किस-किस तरह से जगह पकड़ रहा है इसकी तफ़सीलात वही लोग ख़ूब जानते हैं जो इस लानत के फ़ैशन में मुब्तला हैं। पहले तो सिर्फ़ यही रोना था कि मर्द दाढ़ी मुंड़वा कर ज़नानापन इख़्तियार करते हैं, लेकिन अब तो इससे आगे बढ़कर मर्दों ने और ख़ासकर नौ-उम्र लड़कों ने सुर्ख़ी-पाउडर और जमपर-फ़्रॉक वग़ैरह सब कुछ इख़्तियार कर रखा है। बहुत-से मर्द बिल्कुल ज़नाना रंग की शलवार और क़मीज़ पहनकर

निकलते हैं। अगर कोई शख़्स ग़ौर से न देखे तो फ़ैशन के मतवाले औरत ही मालूम होते हैं और यह बात तो अब ख़ासी पुरानी हो गयी कि लड़कियाँ शर्त लगाती हैं कि दाढ़ी मुंडे से शादी करूँगी, दाढ़ी वाला पसन्द नहीं। गोया उनको ऐसा शख़्स चाहिये जो देखने में औरतों की फ़ेहरिस्त (सूची) में आता हो।

औरतें पतलून वग़ैरह इख़्तियार कर रही हैं। अगर मशरिक़ी लिबास पहनती हैं तो वह भी मर्दाना तर्ज़ का। लड़कों को ज़नाना और लड़कियों को मर्दाना ड्रेस में सजाया जाता है, और इस ग़लत ख़्याल में मुब्तला हैं कि हम तरक़्क़ी के ज़ीने पर पहुँच गये हैं। भला जो चीज़ अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नज़दीक लानत का सबब हो वह तरक़्क़ी की चीज़ कैसे होगी? उसमें ईमानी और इनसानी तरक़्क़ी तो नहीं हो सकती, हाँ! हैवानी और शहवत की और सरकशी की और नाफ़रमानी की (गुनाहगारी) की तरक़्क़ी है, जो लानत के क़ाबिल है।

बालों में बाल मिलाने वाली और जिस्म गूदने वाली पर अल्लाह की लानत हो

हदीसः (237) हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि ख़ुदा की लानत हो उस औरत पर (जो बालों को लम्बा या फूला हुआ बनाने के लिए दूसरे किसी मर्द या औरत के बाल) अपने बालों में या किसी और के बालों में मिला दे। और फ़रमाया ख़ुदा की लानत हो उस औरत पर जो गूदने वाली है, और जो गुदवाने वाली है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 381)

तशरीहः पुराने ज़माने से ही औरतों में बनाव-सिंघार के लिए तरह-तरह के तरीक़े राईज हैं। और ये तरीक़े बदलते भी रहते हैं। उन तरीक़ों में एक यह तरीक़ा भी था (और अब भी बाज़ इलाक़ों और क़ौमों में है) कि औरतें अपने बाल लम्बे या घने फूले हुए ज़ाहिर करने के लिए दूसरे किसी मर्द या औरत के बाल लेकर अपने बालों में मिला लेती थीं। और कुछ औरतें यह पैशा करती थीं कि बाल लिए फिर रही हैं, जिस औरत ने अपने बालों में बाल मिलवाने चाहे उस औरत से कुछ पैसे लेकर मिला दिये। चूँकि इसमें झूठ और फ़रेब है, लिहाज़ा रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसको सख़्त ना-पसन्द फ़रमाया और बालों में बाल जोड़ने वाली और बालों में बाल

जुड़वाने वाली, इन दोनों पर लानत फ़रमायी।

इसी तरह गूदने और गुदवाने का सिलसिला भी पुराने ज़माने से चल रहा है। इसको अ़रबी में 'वश्म' कहते हैं। इसका तरीक़ा यह है कि किसी सूई वग़ैरह से खाल में गहरे-गहरे निशान डालकर उसमें सुर्मा या नील भर दिया जाता है, इस तरह जिस्म पर जानवरों और दूसरी चीज़ों की तस्वीरें बनायी जाती हैं; हिन्दुस्तान के हिन्दुओं में तो यह रिवाज बहुत है, और बिलोचिस्तान वग़ैरह के बाज़ मर्दों के जिस्मों में भी ऐसा देखा गया है। ख़ुदा के सच्चे रसूल हमारे आक़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इससे भी मना फ़रमाया। और इस तरह निशान डालने वाली और डलवाने वाली औ़रत पर लानत फ़रमायी। बुख़ारी शरीफ़ में है कि हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० ने फ़रमायाः

तर्जुमाः अल्लाह तआ़ला की लानत हो गूदने वालियों पर और गुदवाने वालियों पर, और उन औ़रतों पर जो अबरू (यानी भवों) के बाल चुनती हैं (ताकि भवें बारीक हो जायें)। ख़ुदा की लानत हो उन औ़रतों पर जो ख़ूबसूरती के लिए दाँतों के दरमियान खुलापन कराती हैं, जो अल्लाह की बनावट और कारीगरी को बदलने वाली हैं।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु की यह बात सुनकर एक औ़रत आयी और उसने कहा कि मैंने सुना है कि आप इस तरह की औ़रतों पर लानत भेजते हैं? फ़रमाया कि मैं उन लोगों पर क्यों न लानत भेजूँ जिन पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने लानत भेजी, और जिन पर अल्लाह की किताब में लानत आयी है। वह औ़रत कहने लगी कि मैंने तो सारा क़ुरआन पढ़ लिया मुझे तो यह बात कहीं न मिली। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि अगर तूने क़ुरआन पढ़ा होता तो ज़रूर यह बात मिल जाती। क्या तूने यह नहीं पढ़ाः

तर्जुमाः और रसूल (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) तुमको जो (हिदायत) दे उसे क़बूल कर लो, और जिस चीज़ से रोके उससे रुक जाओ।

(सूरः हश्र आयत 7)

यह सुनकर वह औ़रत कहने लगी कि हाँ! यह तो क़ुरआन में है। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि मैंने जिन कामों के करने वाली औ़रतों पर लानत की है अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इन कामों से मना फ़रमाया है। लिहाज़ा क़ुरआन की

रू-से भी इन कामों की मनाही साबित हुई। क्योंकि क़ुरआन ने फ़रमाया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जिन बातों का हुक्म दें उनपर अमल करो और जिन चीज़ों से रोकें उनसे रुक जाओ। (मिश्कात शरीफ़ पेज 381)

इस क़िस्से से कई बातें मालूम हुईं:

पहली तो यह कि बालों में बाल मिलाने और गूदने की मनाही के अलावा भवों के बाल नोचना भी मना है। साथ ही दाँतों को किसी तरह घिसकर बारीक करना और दाँतों के दरमियान कुशादगी (खुली जगह) निकालने की कोशिश करना भी मना है, और ये चीज़ें भी क़ाबिले लानत हैं। ऐसा करने से अल्लाह की पैदा फ़रमाई हुई शक्ल व सूरत में अपनी तरफ़ से अदल-बदल करना लाज़िम आता है जो बहुत ही बुरा, सख़्त मना और निन्दनीय है, और लानत का काम है। हाँ! जिस जगह के बाल लेने का हुक्म दिया गया है और जिस अदल-बदल की तरग़ीब दी गयी है, उसका इख़्तियार करना न सिर्फ़ दुरुस्त बल्कि सवाब का सबब है। बन्दे को अपने आक़ा का इशारा देखना चाहिये।

बात यह है कि ज़्यादा बन-ठनकर रहना शरीअत में पसन्द नहीं है। शौहर वाली औरत ज़रूरत के मुताबिक़ बनाव-सिंघार कर ले, यह ठीक है। लेकिन बनाव-सिंघार को मुस्तक़िल एक मशग़ला बना लेना और तरह-तरह के तरीक़े उसके लिए सोचना मोमिन के मिज़ाज के ख़िलाफ़ है। जिनको नेक आमाल और अच्छे अख़्लाक़ से आरास्ता (सुसज्जित) होना हो उनके पास इतनी फ़ुरसत कहाँ कि सजने और बनने-ठनने में वक़्त और पैसा ज़ाया करें।

दूसरी बात हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु के क़िस्से से यह मालूम हुई कि हदीस में जिन चीज़ों का हुक्म है, वह भी अल्लाह ही का हुक्म है। और जिन चीज़ों से हदीसों में रोका है वह भी अल्लाह ही की तरफ़ से मनाही है। आजकल के बहुत-से जाहिल जिनकी अक़्लों को यूरोप और अमेरिका से नाम की रोशनी मिली है (जो सरासर अंधेरी है), यूँ कहते हैं कि हदीस की ज़रूरत नहीं, सिर्फ़ क़ुरआन पर अमल कर लेंगे। हालाँकि क़ुरआन पर अमल हदीस जाने और माने बग़ैर हो ही नहीं सकता। क्योंकि हदीस क़ुरआन मजीद की शरह (तफ़सीर और व्याख्या) है। इसकी और ज़्यादा तफ़सील हमारी किताब "फ़ज़ाइले इल्म" में देखो।

तीसरी बात हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु के क़िस्से से यह मालूम हुई कि उस ज़माने की औरतों में इल्मे दीन का बड़ा चर्चा था,

और कुरआन मजीद पर इस क़द्र उबूर (महारत) था कि एक औरत अपनी कुरआन-दानी के बलबूते पर हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु जैसे बड़े और ज़बरदस्त इल्म रखने वाले सहाबी से बहस करने लगी कि यह बात कुरआन में कहीं नहीं है।

अफ़सोस! कि आजकल की औरतें स्कूलों और कालिजों में पढ़ने के लिए कई-कई साल ख़र्च करती हैं, मगर कुरआन और हदीस की तरफ़ ज़रा तवज्जोह नहीं। यह बेदीनी के माहौल का नतीजा है। अल्लाह पाक हम सब को कुरआन व हदीस के उलूम नसीब फ़रमाये, आमीन।

औरत को सर मुंडवाने की मनाही

हदीसः (238) हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने औरत को इस बात से मना फ़रमाया कि वह अपना सर मूँडे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 334)

तशरीहः यह इरशाद भी इसी उसूल की एक कड़ी है कि औरत को मर्दानापन इख़्तियार करना हराम है। जिसकी तशरीह पिछली हदीसों के तहत में हो चुकी है। मुल्ला अली कारी रहमतुल्लाहि अलैहि लिखते हैं कि औरतों के लिए बाल और ज़ुल्फ़ें उसी तरह ज़ीनत (संवरने की चीज़) हैं जैसे मर्दों के लिए दाढ़ी ज़ीनत है। मर्द को दाढ़ी और औरत को सर मुंडाना हराम है।

और यह भी मालूम होना चाहिये कि औरतों और मर्दों को एक-दूसरे की मुशाबहत (शक्ल व सूरत) इख़्तियार करना तो मना है ही, ग़ैर-मुस्लिमों की मुशाहबत इख़्तियार करना (यानी उन जैसा बनना) भी हराम है। और इस हुक्म में मर्द व औरत सब बराबर हैं। लिहाज़ा मुसलमान औरतों को जहाँ अपनी शक्ल व सूरत और लिबास में मर्दानापन से बचना लाज़िम है, वहाँ यह ख़्याल रखना भी ज़रूरी है कि हिन्दुओं या यहूदियों या ईसाइयों के जैसा भी न बना जाए। साथ ही मुनाफ़िक़ों और बदकार लोगों जैसा बनना भी मना है। आजकल यह मुसीबत आम हो गयी है कि मर्द व औरत शक्ल व सूरत, रंग-ढंग और पहनने-ओढ़ने में प्यारे आक़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इरशादात को सामने नहीं रखते बल्कि यहूदियों और ईसाइयों को अपना इमाम बनाते हैं। इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन।

ख़ुदा के लिए फ़ासिक़ों और काफ़िरों की पैरवी को छोड़ो और मदनी आक़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इरशादात और अख़्लाक़ व आमाल की

पैरवी करो।

सजावट के लिए दीवारों पर कपड़ा लटकाने और तस्वीर वाला क़ालीन देखकर नबी करीम सल्ल० को नागवारी

हदीसः (239) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा का बयान है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम एक बार जिहाद के लिए तशरीफ़ ले गये। आपके पीछे मैंने एक अच्छा उम्दा कपड़ा ख़रीदा जिसमें बारीक झालर थी। और उस कपड़े को बतौर पर्दा (दरवाज़े पर) लटका दिया। जब आप तशरीफ़ लाये तो उस कपड़े को देखकर (इतनी ज़ोर से) खींचा कि वह फट गया। फिर फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने हमको यह हुक्म नहीं फ़रमाया कि पत्थरों को और मिट्टी को कपड़े पहनायें। (मिश्कात शरीफ़ पेज 385)

तशरीहः घरों की सजावट में पैसा ख़र्च करना हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को पसन्द न था, इसी लिए आपने हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा का सजाया हुआ ख़ूबसूरत पर्दा फाड़ दिया, और फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने हमको यह हुक्म नहीं फ़रमाया कि पत्थरों और मिट्टी को कपड़े पहनायें। जहाँ तक दरवाज़े पर ग़ैरों की नज़रों से बचने के लिए पर्दा डालने का ताल्लुक़ है, वह टाट या मोटे सस्ते कपड़े का भी हो सकता है। क़ीमती या ख़ूबसूरत पर्दा लटकाना इस मक़सद के लिए कोई ज़रूरी नहीं है। इस ज़माने में दीवारों और दरवाज़ों और खिड़कियों पर पर्दे लटकाने का फ़ैशन हो गया है। महज़ सजावट और चमकाने के लिए क़ीमती और ख़ूबसूरत पर्दे लटकाये जाते हैं। और इसमें मुसलमानों के लाखों रुपये ख़र्च हो रहे हैं। पास-पड़ोस और शहर व देहात के बेशुमार इनसानों के पास तन ढकने के लिए कुछ नहीं है, और हम ग़ैरों की देखा-देखी दर-दीवार को पौशाक पहना कर अपने लिए नज़र की लज़्ज़त का इन्तिज़ाम कर रहे हैं। इनसानों की हाजतें अटकी हुई हैं और ईंट-पत्थरों के साथ सजावट हो रही है। दर हक़ीक़त यह सबक़ अमली तौर पर ग़ैरों ने पढ़ाया है। अगर अपने प्यारे नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हिदायतों पर चलने का इरादा करते तो कभी फ़ुज़ूलख़र्ची की तरफ़ ज़ेहन भी न जाता।

फिर यह बात अजीब है कि शरई पर्दा तो औरतें छोड़ती जा रही हैं और जो पर्दा ना-मेहरमों की नज़रों से बचाने के लिए था वह दर-दीवार की

सजावट के लिए मख़्सूस कर दिया गया है। पार्कों और कपड़े की मार्किटो में बेपर्दा मुँह खोले फिरती हैं। ज़रा-सा नक़ाब चेहरे पर डालने को आमादा नहीं, और बड़ी क़ीमत के पर्दे बिना ज़रूरत दीवारों से सजे होते हैं। इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन।

यहाँ यह बात भी ज़िक्र करने के क़ाबिल है कि 'सजावट', 'तहारत' और 'नज़ाफ़त' तीन चीज़ें अलग-अलग हैं। सजावट तो उर्दू ज़बान का लफ़्ज़ है, इसका मतलब सब ही जानते हैं। और तहारत पाकी को और नज़ाफ़त सफ़ाई-सुथराई को कहते हैं। तहारत का हुक्म दिया गया है। अल्लाह तआ़ला का इरशाद है:

तर्जुमा: बेशक अल्लाह तआ़ला बहुत तौबा करने वालों को और ख़ूब पाक रहने वालों को पसन्द फ़रमाता है। (सूरः ब-क़र आयत 222)

और नज़ाफ़त की भी तरग़ीब (प्रेरणा) दी गयी है। चुनाँचे नबी पाक का इरशाद है:

हदीसः अपने घरों के सामने पड़ी हुई जगहों को साफ़-सुथरी रखा करो।

लेकिन सजावट का ख़ास एहतिमाम करना और इसके लिए मुस्तकिल चीज़ें ख़रीदना और ज़ेहन को इसमें उलझाना और वक़्त और पैसा ख़र्च करना अच्छा और पसन्दीदा नहीं है। अल्लाह तआ़ला हम सबको अपने हबीबे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के तरीक़े पर चलाये। (आमीन)

हदीसः (240) हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा का बयान है कि मैंने (एक बार) एक ग़लीचा (ऊनी चादर या क़ालीन) ख़रीद लिया जिसमें तस्वीरें थीं। जब उसको रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने देखा तो आप दरवाज़े पर खड़े रह गये और अन्दर दाख़िल न हुए। मैंने आपके चेहरे मुबारक पर नागवारी महसूस की और अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! मैं अल्लाह की बारगाह में तौबा करती हूँ और अल्लाह के रसूल से माफ़ी चाहती हूँ। मुझसे कौनसा गुनाह हो गया? आपने फ़रमाया यह ग़लीचा कैसा है? (यहाँ क्योंकर आया?) मैंने अ़र्ज़ किया यह आपके लिए मैंने ख़रीदा है, ताकि इस पर तशरीफ़ रखें, और इसको तकिये की जगह (भी) इस्तेमाल फ़रमायें। आपने फ़रमाया कि बेशक क़ियामत के दिन इन तस्वीर वालों को अ़ज़ाब होगा, और इनसे कहा जायेगा कि तुमने जो कुछ बनाया था उसमें जान डालो। और आपने यह भी फ़रमाया कि जिस घर में तस्वीर हो उसमें (रहमत के) फ़रिश्ते

दाख़िल नहीं होते। (मिश्कात शरीफ़ पेज 385)

तशरीहः इस हदीस से चन्द बातें मालूम हुईं:

(1) तस्वीर वाला कपड़ा, गद्दा, ग़ालीचा, क़ालीन और दूसरी चीज़ें जैसे क्लैंडर, बरतन, फ़र्नीचर, घर में, दफ़्तर में, दुकान में रखना हराम है। हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तस्वीर वाला ग़ालीचा घर में देखा तो दरवाज़े के बाहर ही खड़े हो गये और अन्दर तशरीफ़ न लाये।

(2) यह भी मालूम हुआ कि रहमत के फ़रिश्ते उस घर में नहीं जाते जिसमें तस्वीर हो। हदीस में तो मुतलक़ फ़रिश्तों का ज़िक्र है, मगर दूसरी आयतों व हदीसों को सामने रखते हुए हदीस के आ़लिमों ने बताया है कि यहाँ रहमत के फ़रिश्ते मुराद हैं। आमाल लिखने वाले और मौत के फ़रिश्तों का यहाँ ज़िक्र नहीं है। क्योंकि उनको अल्लाह के हुक्म के पालन के लिए हाज़िर होना पड़ता है। अलबत्ता तस्वीरों से उनको भी नागवारी होती है, मगर हुक्म के पालन के लिए मौजूद होते हैं। जो लोग फ़रिश्तों पर ईमान नहीं रखते या ख़ुदा तआ़ला की इस मासूम मख़्लूक़ की तकलीफ़ का ख़्याल नहीं करते वही तस्वीरें घर में रख सकते हैं। अल्लाह तआ़ला उनको हिदायत दे।

फ़रिश्तों को जिन कामों से तकलीफ़ हो शरीअ़त में उनसे बचने का ख़ास ख़्याल रखा गया है। एक हदीस में है कि सरवरे आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो कोई शख़्स यह बदबूदार पौधा यानी प्याज़ खा ले, हरगिज़ हमारी मस्जिद के पास न फटके, क्योंकि उस चीज़ से फ़रिश्तों को (भी) तकलीफ़ होती है जिससे इनसान दुख पाते हैं। (मिश्कात शरीफ़ 68)

यानी बदबू फ़रिश्तों को नागवार है जैसा कि इनसानों को बुरी लगती है। लिहाज़ा बदबूदार चीज़ खाकर मस्जिद में न आयें चाहे वहाँ कोई आदमी भी न हो, क्योंकि फ़रिश्ते तो मौजूद होते हैं। बदबू दूर होने के बाद जा सकते हैं।

जिन चीज़ों की शरीअ़त में मनाही है उनसे शैतान ख़ुश होते हैं। फिर उनसे ख़ुदा पाक के मासूम फ़रिश्ते क्योंकर राज़ी हो सकते हैं? जो लोग तस्वीर घर में रखते हैं या और किसी तरह के बुरे कामों और गुनाहों में मुब्तला हैं, वे शैतान को ख़ुश करते हैं और अल्लाह तआ़ला और उसके रसूले पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और पाक फ़रिश्तों को नाराज़ करते हैं। कितनी बड़ी नादानी है।

(3) हदीस से यह भी मालूम हुआ कि क़ियामत के दिन तस्वीर वालों

को अज़ाब होगा और उनसे कहा जायेगा कि तुमने जो तस्वीरें बनायी हैं उनमें जान डालो। यह हुक्म डाँट-डपट के तौर पर होगा, क्योंकि वे जान न डाल सकेंगे।

एक हदीस में है कि अल्लाह तआला ने फ़रमाया कि उससे बढ़कर कौन ज़ालिम होगा कि जो मेरी तरह ख़लक़त (मख़्लूक़) पैदा करने लगे। अगर पैदा करने का हौसला है तो एक ज़र्रा या एक दाना या एक जौ का दाना पैदा करके दिखायें। यानी एक ज़र्रा भी वजूद में नहीं ला सकते हैं, फिर शक्लें बनाने के शग़ल में क्यों लगे हैं।

रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि क़ियामत के दिन सबसे ज़्यादा अ़ज़ाब उन लोगों को होगा जो पैदा करने की सिफ़त में अल्लाह तआला के जैसे बनते हैं। (यानी तस्वीरें बनाते हैं)। यह भी इरशाद फ़रमाया कि हर तस्वीर बनाने वाले को उसकी बनायी हुई तस्वीरों के ज़रिये अ़ज़ाब दिया जायेगा। जितनी सूरतें बनायी थीं उनमें से हर तस्वीर पर एक जानदार चीज़ होगी, जिसके ज़रिये बनाने वाले को उससे अ़ज़ाब होगा।

मसलाः जिस चीज़ में जान न हो उसकी तस्वीर बनाना और घर में रखना दुरुस्त है, जैसे दरख़्त वग़ैरह। हाँ! अगर कोई ऐसी चीज़ है जो कुफ़्र की पहचान और निशानी हो तो बेजान की तस्वीर से भी परहेज़ लाज़िम है, जैसे ईसाइयों का सलीब (सूली का निशान) वग़ैरह।

मसलाः टेलीवीज़न इस्तेमाल करने से सख़्ती से परहेज़ करें। क्योंकि उसको बनाया ही तस्वीर के लिए है।

तंबीहः बाज़ लोग समझते हैं कि हदीस में जिस तस्वीर बनाने की मनाही है, वह हाथ से तस्वीर बनाने के मुताल्लिक़ है। और कैमरे से जो तस्वीर उतारी जाती है वह चूँकि हाथ से नहीं बनायी जाती इसलिए वह जायज़ है। यह ख़्याल ग़लत, फ़ासिद और शैतान की समझायी हुई दलील है। असल मक़सद तस्वीर बनाने की हुरमत (हराम होना) है, चाहे किसी भी साधन और उपकरण से बनायी जाये।

आजकल तस्वीरें रखना और मूर्तियों से घरों को और बंगलों व मोटरों को सजाना एक फ़ैशन हो गया है, और तहज़ीब व सभ्यता का हिस्सा बना लिया गया है। आर्ट के नाम से जहाँ और बहुत-से गुनाह ज़िन्दगी में दाख़िल हो गये हैं, उनमें तस्वीरें बनाना, सजाना, देखना-दिखाना भी शामिल है। जहाँ

किसी के पास चार पैसे हुए बनावट, सजावट, कैमरा, मुर्ति और मुजस्समों की तरफ़ मुतवज्जह हुआ। हज़ार समझाओ कि ख़ुदा और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हुक्म के ख़िलाफ़ है, मगर कान धरने को तैयार नहीं। जब यूरोप व अमेरिका को पैशवा (यानी जिसकी पैरवी की जाए) बना लिया तो मक्का मदीना का रुख़ करने की ज़रूरत महसूस ही नहीं होगी। यह सैयद हैं, यह अ़ल्वी हैं, यह सिद्दीक़ी हैं, यह फ़ारूक़ी हैं, यह उस्मानी हैं, यह ज़ुबैरी हैं, यह चिश्ती हैं, यह क़ादरी हैं! बस नाम और दिखावे की निस्बतों तक हैं। सामाजिक तौर-तरीक़ों और घर-बाहर के रहन-सहन में तो ईसाई मालूम होते हैं। अलमारी में एक कुत्ता रखा हुआ है, मोटर कार में गुडिया झूल रही है, और सामने किसी की फ़ोटो लटकी हुई है, दफ़्तर में किसी का स्टैचू (मूरत, बुत) रखा है। अल्लाह की पनाह! क्या मुसलमान ऐसे ही होते हैं? जिन्हें फ़रमाने रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़रा भी परवाह नहीं, और जिनको रहमत के फ़रिश्तों से बैर है, उनका घर में आना पसन्द नहीं करते।

बाज़े लोग बच्चों से मरऊब हो जाते हैं। अच्छे-ख़ासे नमाज़ी, वाईज़ व सूफ़ी घरानों में बच्चों और बच्चियों के खेलने के लिए गुड़िया और तस्वीरें और मूर्तियाँ ख़रीदकर लायी जाती हैं। बच्चे की इच्छा है, उसका दिल बुरा न हो, मगर मदनी आक़ा नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पाक दिल को रंज पहुँच जाये इसकी परवाह नहीं।

ज़िन्दगी गुज़ारने के लिए मुख़्तसर सामान काफ़ी होना चाहिये

हदीसः (241) हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने फ़रमाया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मुझे मुख़ातब फ़रमा कर इरशाद फ़रमायाः ऐ आ़यशा! अगर तुम (आख़िरत में) मुझसे मिलना चाहती हो तो तुम्हें दुनियावी ज़िन्दगी गुज़ारने के लिए इतना (मुख़्तसर-सा) सामान काफ़ी होना चाहिये जितना मुसाफ़िर साथ लेकर चलता है, और मालदार के पास न बैठना, और किसी कपड़े को पुराना (यानी इस्तेमाल के ना-क़ाबिल) न समझना, जब तक कि उसे पैवन्द लगाकर न पहन लो। (मिश्कात पेज 375)

तशरीहः इस हदीस में तीन अहम नसीहतें इरशाद फ़रमायी हैं जो बड़ी अकसीर हैं। पहली नसीहत यह फ़रमायी कि दुनियावी ज़िन्दगी के गुज़ारे के लिए मामूली सामान से काम चलाओ। मुसाफ़िर जितना सामान साथ लेकर जाता है उतने-से सामान में गुज़ारा करो। ज़्यादा सामान के लिए ज़्यादा पैसों

की ज़रूरत होती है और अकसर हलाल माल से फ़ुज़ूल चीज़ों और फ़र्निचर और सजावट व बनावट के ख़र्चे पूरे नहीं होते, मजबूर होकर इनके लिए हराम की तरफ़ तवज्जोह करनी पड़ती है और आख़िरत में जो माल का हिसाब होगा वह भी माल ही के हिसाब से होगा। कम आमदनी और कम ख़र्च वाले वहाँ मज़े में रहेंगे। इसलिए दुनियावी ज़िन्दगी का सामान जिस क़द्र कम हो बेहतर है।

आजकल सामान बढ़ाने की दौड़ है। हज़ारों रुपये फ़र्निचर और नये-नये डिज़ाईन के बंगलों पर और तरह-तरह की ग़ैर-ज़रूरी चीज़ों पर ख़र्च हो रहे हैं। ग़रीब से ग़रीब को भी सोफ़ासैट की तलब है, और टी० वी० टेपरिकार्डर वग़ैरह की चाहत है। मख़्मली क़ालीन उठने-बैठने के लिए नहीं बल्कि महज़ बिछाने के लिए चाहते हैं जिसको जूतों से रौंदते हैं।

देखो! ये ढंग नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के उम्मतियों के नहीं हैं। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जब अपने ख़ास सहाबी हज़रत मुआ़ज़ बिन जबल रज़ियल्लाहु अ़न्हु को यमन का गवर्नर बनाकर भेजा तो नसीहत फ़रमायी:

'मज़े उड़ाने से बचना, क्योंकि अल्लाह के बन्दे मज़े उड़ाने वाले नहीं होते'

हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

"जो शख़्स अल्लाह की तरफ़ से मिलने वाले थोड़े रिज़्क़ पर राज़ी हो जाये, अल्लाह उससे थोड़े अ़मल से राज़ी हो जाते हैं" (शुअ़बुल ईमान)

और एक बार हज़रत रसूले मक़बूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम एक चटाई पर सो गये। सोकर उठे तो जिस्म शरीफ़ पर चटाई की बनावट के निशान पड़ गये थे। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अ़र्ज़ किया: या रसूलल्लाह! आप हुक्म फ़रमायें तो हम आपके लिए अच्छा बिछौना बिछा दिया करें, और अच्छी-अच्छी चीज़ें हासिल करके आपके लिए लाया करें। आपने यह सुनकर फ़रमाया कि मुझको दुनिया से क्या ताल्लुक़? मेरा दुनिया से बस ऐसा ही वास्ता है जैसे कोई मुसाफ़िर पेड़ के नीचे साया लेने के लिए बैठ गया और फिर उसे छोड़कर चल दिया। (मिश्कात पेज 442)

मुसलमान को हर हाल और काम में अपने प्यारे नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पैरवी करना लाज़िम है। आजकल के मुसलमान और ख़ासकर

नौजवान लड़कों और लड़कियों ने ग़ैर-क़ौमों को देखकर ऐसे-ऐसे ख़र्चे बढ़ा लिये हैं कि न वे ज़रूरी हैं, न उनपर ज़िन्दगी का दारोमदार है। फ़ैशन की बला ऐसी सवार हुई है और ज़ाहिरी टीप-टाप इतनी बढ़ा रखी है कि जितनी भी आमदनी हो सब कम पड़ जाती है, और क़र्ज़ पर क़र्ज़ चढ़ता चला जाता है।

हज़रत मुआज़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने एक बार अपने साथियों से फ़रमाया कि तुम तकलीफ़ों के ज़रिये जाँच में डाले गये तो तुमने सब्र कर लिया। बहुत जल्दी माल के ज़रिये तुम्हारी जाँच की जायेगी, और मुझे सबसे ज़्यादा ख़ौफ़ तुम्हारे बारे में यह है कि औरतों के फ़ितने में डाल दिये जाओगे, जबकि औरतें सोने-चाँदी के कंगन पहनेंगी, और शाम व यमन के बारीक और उम्दा कपड़े इस्तेमाल करेंगी। (ये चीज़ें मुहैया करने के लिए) मालदार को थका देंगी, और ग़रीब से वह माँगेंगी जो उससे न हो सकेगा। (हिल्यतिल औलिया)

आजकल हम उसी दौर से गुज़र रहे हैं और औरतों का यही हाल है जो अभी ज़िक्र हुआ। सफ़ाई-सुथराई तो अच्छी चीज़ है मगर लिबास और फ़ैशन की दूसरी बेजा ज़रूरतें जो यूरोप वालों ने निकाल दी हैं, मुसलमानों के लिए किसी तरह भी उनके ख़्याल में पड़ना और उनको इस्तेमाल करना ठीक नहीं है। उनकी अन्धी तक़लीद में यह हाल बन गया है कि देखने में ख़ुशहाल दिल में परेशान। आमदनी अच्छी-ख़ासी मगर गुज़ारा मुश्किल। इतमीनान और बेफ़िक्री का नाम नहीं, मुहब्बत के जोश में बच्चों की परवरिश शुरू ही से ऐसे आला पैमाने पर करते हैं कि बाद में उनकी कमाई उन ख़र्चों को बरदाश्त नहीं कर सकती। जो कुछ पास होता है बच्चे के फ़ैशन पर ख़र्च कर देते हैं, और जब बेचारा कुछ लिख-पढ़कर मुलाज़िम होता है या कारोबार शुरू करता है तो परेशान हो जाता है। बाल-बच्चों का ख़र्च, माँ-बाप की ख़िदमत, पोज़ीशन और समाज का ख़्याल, एक जान को हज़ार मुसीबतें लगी होती हैं। ग़रज़ यह कि पूरी घरेलू ज़िन्दगी का बोझ उठाना वबाले जान हो जाता है। अगर सादी ज़िन्दगी सिखायें तो परेशानी क्यों हो।

लड़कियों को फ़ैशन का इस क़द्र शौक़ीन बना दिया जाता है कि बचपन से ही उसको इतने ज़्यादा ख़र्चों का आदी बना देते हैं कि शादी के बाद शौहर पर बोझ हो जाती है। शौहर की सारी आमदनी फ़ैशन, लिबास और ज़ेवर की भेंट हो जाती है, आख़िरकार ना-इत्तिफ़ाक़ी और आपस में मनमुटाव ज़ाहिर होने लगता है, और ज़्यादा बनाव-सिंघार की आदत डालने से क़ुरआन पाक

की तिलावत, दुरूद इस्तिग़फ़ार, दीनी मालूमात में लगने की फ़ुरसत भी नहीं मिलती। फिर असल सजावट तो बातिन यानी दिल और रूह की सजावट और पाकीज़गी है। जिस्म और लिबास की उम्दगी और सजावट भी उसी वक़्त भली मालूम होती है जब दिल सुथरा, अख़्लाक़ अच्छे, आदतें पाकीज़ा हों। अख़्लाक़ गंदे और ज़ाहिर अच्छा! इसकी ऐसी मिसाल है जैसे कि गंदगी को रेशम में लपेटकर रख दिया जाये।

यह भी समझना चाहिये कि ज़रूरत उसको कहते हैं जिसके बग़ैर ज़िन्दगी दूभर हो जाये, ख़ूब समझ लो और अपने ख़र्चों का जायज़ा ले लो। हमने हर तुके-बेतुके ख़र्च को ज़रूरत में शामिल कर रखा है।

दूसरी नसीहत हदीस शरीफ़ में यह फ़रमायी कि मालदारों के पास न बैठा करो। यह बहुत काम की नसीहत है। मालदार अकसर दुनियादार होते हैं। उनकी सोहबत से दुनिया की तलब बढ़ती है और आख़िरत की रग़बत (तवज्जोह और दिलचस्पी) घटती है। और उनका हाल और माल देखकर ख़्याल आता है कि अल्लाह ने इनको बहुत कुछ दिया है और हम मेहरूम हैं। इसकी वजह से नाशुक्री होती है, हालाँकि कोई शख़्स ऐसा नहीं जिससे कम दर्जे का कोई न हो। शुक्रगुज़ार बनने का तरीक़ा यह है कि जो दुनियावी एतिबार से कम हो उसको देखिये। मुस्लिम शरीफ़ में है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

हदीसः (दुनियावी सामान और रुपये-पैसे में) जो तुम से कम है उसको देखो। और जो तुम से बढ़ा हुआ है उसको न देखो। ऐसा करने से अल्लाह की नेमतों की नाक़द्री न कर सकोगे जो उसने इनायत फ़रमायी हैं।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 447)

इसको दूसरे उनवान से नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस तरह फ़रमाया कि जिस शख़्स में दो ख़स्लतें होंगी अल्लाह तआ़ला उसको शाकिर (शुक्र करने वाला) और साबिर (सब्र करने वाला) लिख देंगे। जिसने दीन में उसको देखा जो उससे बढ़कर हो और फिर उसकी पैरवी की, और दुनिया में उसको देखा जो उससे कम है और उसको देखकर अल्लाह का शुक्र अदा किया कि उसने मुझे इस शख़्स पर फ़ौक़ियत (बरतरी) दी है। ऐसे शख़्स को अल्लाह शुक्र करने वालों और सब्र करने वालों में शुमार फ़रमायेंगे। और जिसने दीन में ऐसे शख़्स को देखा जो उससे कम है और दुनिया में ऐसे

शख़्स को देखा जो उससे ज़्यादा है और फिर उन चीज़ों पर अफ़सोस किया जो (दुनिया में) उसको नहीं मिलीं तो उसे अल्लाह शुक्र करने वालों और सब्र करने वालों में शुमार नहीं फ़रमायेंगे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 448)

और यह बात भी है कि मालदारों में अकसर गुनाहगार बुरे और बदकार बेनमाज़ी होते हैं। उनकी दौलत पर राल टपकाना बहुत बड़ी नादानी है। हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि किसी फ़ाजिर (बदकार) की नेमत देखकर रश्क न करो, क्योंकि तुम्हें मालूम नहीं कि मौत के बाद उसका क्या हाल बनने वाला है। बेशक उसके लिए अल्लाह पाक के पास एक दर्दनाक अज़ाब है, यानी दोज़ख़ की आग है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 447)

अगर दुनिया में सामान बहुत जमा कर लिया और आख़िरत में अज़ाब भुगतना पड़ा तो क्या नफ़ा हुआ? ख़ूब समझ लो। और दोज़ख़ का अज़ाब अगरचे इस क़द्र ज़्यादा होगा कि उसकी तकलीफ़ से आदमी मर जायेगा मगर मरेगा नहीं, अज़ाब भुगतता रहेगा।

तीसरी नसीहत हदीस शरीफ़ में यह फ़रमायी कि कपड़े को उस वक़्त तक पुराना यानी ना-क़ाबिले इस्तेमाल मत समझना जब तक कि उसको पैवन्द लगाकर न पहन लो। मतलब यह है कि इस एतिबार से पुराना मत समझना कि बहुत दिन से इस्तेमाल हो रहा है। बल्कि कपड़ा जब तक सही-सालिम रहे उस वक़्त तक तो इस्तेमाल करते रहो, और जब फटना शुरू हो जाये तब भी उसको ना-क़ाबिले इस्तेमाल समझने में जल्दी न करो बल्कि उसमें पैवन्द लगाकर पहनते रहो। इस पर अमल करने से जल्दी-जल्दी कपड़े बनाने की ज़रूरत न होगी और ज़्यादा कमायी की फ़िक्र न करनी पड़ेगी, और साथ ही साथ तकब्बुर और ख़ुद-पसन्दी (अपने को अच्छा और दूसरों से बड़ा समझने) और दूसरों को हक़ीर जानने का जज़्बा भी पैदा न होगा।

यह नसीहत अगरचे आज के नये दौर के लड़कों और लड़कियों की समझ में न आयेगी, क्योंकि दुनियादारी, ख़ुद-पसन्दी, रियाकारी का माहौल है, मगर नसीहत है बहुत काम की। जो कोई अमल करेगा दुनिया का उसे सुकून नसीब होगा, और आख़िरत की इज़्ज़त भी मिलेगी। यह बात अलग है बाज़े दुनिया वाले पैवन्द का कपड़ा देखकर हक़ीर (ज़लील और कम दर्जे का) ही जानेंगे।

मुसलमान औरतों से

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बातें

* औरतों के लिए *

पाकी और नापाकी

का बयान

लेखक

हज़रत मौलाना आशिक़ इलाही साहिब बुलन्द शहरी

रहमतुल्लाहि अलैहि

अनुवादक: मौलाना मुहम्मद इमरान कासमी

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा. लि.)

422, मटिया महल, उर्दू मार्किट, जामा मस्जिद

देहली-110006

पाकी और नापाकी के मसाइल

तहारत का बयान

वुज़ू और गुस्ल का तरीक़ा और उनसे मुताल्लिक़ ज़रूरी मालूमात हम "ईमान और अक़ीदों के बयान" के बाद "नमाज़ के मसाइल" से पहले लिख आये हैं। अब यहाँ गुस्ल के फ़र्ज़ होने के असबाब (कारणों), नापाक और बेवुज़ू होने के अहकाम, माहवारी और निफ़ास (यानी बच्चे की पैदाईश के बाद जो ख़ून आता है उस) के मसाइल और पाक करने के तरीक़े और दूसरे ज़रूरी अहकाम लिखते हैं। इनको अच्छी तरह समझ कर पढ़ें।

गुस्ल कब फ़र्ज़ होता है?

हदीसः (242) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से दरियाफ़्त किया गया कि अगर कोई मर्द सोकर उठने के बाद कपड़े पर तरी (गीलापन) देखे मगर एहतिलाम (स्वपनदोष) होना याद न हो तो क्या उसपर गुस्ल फ़र्ज़ है? इसके जवाब में सरवरे आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि यह शख़्स गुस्ल करे। (फिर) यह दरियाफ़्त किया गया कि एक मर्द को एहतिलाम हो गया (यानी) ख़्वाब में उसने देख लिया कि मनी (वीर्य) ख़ारिज हुई मगर (जागा तो कोई तरी नज़र न आयी, क्या उस शख़्स पर गुस्ल फ़र्ज़ है?) इसके जवाब में नबी करीम सल्ल० ने फ़रमाया कि उस शख़्स पर गुस्ल नहीं है। (जब मर्द के बारे में यह सवाल-जवाब हो लिया तो) हज़रत उम्मे सुलैम रज़ियल्लाहु अन्हा ने औ़रत के बारे में (भी यही मसला) दरियाफ़्त कर लिया और अ़र्ज़ किया कि अगर औ़रत ख़्वाब से जागने के बाद (कपड़े या बिस्तर पर) तरी देखे तो क्या उसपर भी गुस्ल फ़र्ज़ है? इसके जवाब में सरवरे आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि हाँ! उस सूरत में औ़रत पर भी गुस्ल फ़र्ज़ है। (क्योंकि) औ़रतें मर्दों की बहनें हैं। (मिश्कात शरीफ़ पेज 48)

तशरीहः कभी-कभी नफ़्सानी उभार की वजह से मर्द व औ़रत को सोने की हालत में नहाने की ज़रूरत पेश आ जाती है और मनी (वीर्य) निकल

जाती है। अगर मनी ख़ारिज हो जाये तो गुस्ल फ़र्ज़ हो जाता है। उसपर नापाक आदमी के अहकाम जारी हो जाते हैं। अगर सिर्फ़ ख़्वाब नज़र आये और जागने पर कोई तरी (गीलापन) मालूम न हो तो सिर्फ़ ख़्वाब की वजह से गुस्ल फ़र्ज़ न होगा। इस हदीस में यही मसला बयान किया गया है।

हदीसः (243) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब मर्द की ख़तना की जगह (यानी आगे का वह हिस्सा जिसकी ख़तना होती है, जिसे सुपारी कहते हैं) औरत के ख़ास मुक़ाम में पहुँच जाये तो (दोनों पर) गुस्ल फ़र्ज़ हो गया। (रिवायत बयान करके हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने फ़रमाया कि) मैंने रसूले ख़ुदा ने ऐसा किया, फिर हम दोनों ने गुस्ल किया।

(मिश्कात पेज 48 जिल्द 1)

तशरीहः एहतिलाम (स्वपनदोष) से गुस्ल होने के बारे में तो वही मसला है जो अभी ऊपर पिछली हदीस से मालूम हुआ कि ख़्वाब में मनी ख़ारिज हो गयी तो गुस्ल फ़र्ज़ होगा, महज़ ख़्वाब से गुस्ल फ़र्ज़ न होगा। और अगर मियाँ-बीवी आपस में वह काम करें जिसमें शर्म की सब हदें ख़त्म हो जाती हैं तो इस सूरत में गुस्ल फ़र्ज़ होने के लिए मर्द या औरत की मनी ख़ारिज होना ज़रूरी नहीं है, बल्कि जब मर्द ने अपने ख़ास जिस्म का अगला हिस्सा (यानी सुपारी) दाख़िल कर दी तो मर्द व औरत दोनों पर गुस्ल फ़र्ज़ हो गया, मनी ख़ारिज हो या न हो।

फ़ायदाः औरत पर गुस्ल चार कारणों से फ़र्ज़ होता है। ख़ूब याद रखोः

(1) माहवारी ख़त्म होने से। (2) निफ़ास (यानी बच्चे की पैदाईश के बाद जो ख़ून आता है उस) के ख़त्म होने से। (3) ख़्वाब में मनी ख़ारिज होने से। (4) मर्द की हमबिस्तरी से (मनी निकले या न निकले) जिसकी तशरीह अभी गुज़री।

मसलाः अगर किसी बेहूदा मर्द ने ग़ैर-फ़ितरी मुक़ाम में सोहबत की, यानी पीछे के रास्ते से अपनी ख़्वाहिश पूरी की और सुपारी अन्दर चली गयी, तब भी दोनों पर गुस्ल फ़र्ज़ हो गया, मनी ख़ारिज हो या न हो, और यह सख़्त गुनाह है और हराम है। ऐसा करने पर हदीस शरीफ़ में लानत आयी है।

जिस पर गुस्ल फ़र्ज़ हुआ उसकी नजासत हुक्मी है

हदीसः (244) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने बयान फ़रमाया कि (मुझपर और रसूले अकरम सल्ल० पर गुस्ल फ़र्ज़ होता था, फिर) आप (मुझसे पहले) गुस्ल फ़रमा लेते थे और इससे पहले कि मैं गुस्ल करती आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम (गुस्ल के बाद) मेरी निकटता से गर्मी हासिल फ़रमाते थे। (मिश्कात पेज 49)

तशरीहः इस हदीस से मालूम हुआ कि जिस पर गुस्ल फ़र्ज़ हो उसका जिस्म इस तरह का नापाक नहीं हो जाता कि उससे मिलना-जुलना, बात करना, उसके पास बैठना-उठना नाजायज़ हो। हाँ! अगर उसके बदन में ज़ाहिरी नापाकी लगी होगी और वह नापाकी दूसरे आदमी को लग जाये तो दूसरे आदमी का उसी क़द्र हिस्सा नापाक हो जायेगा जितने हिस्से में नापाकी लगी है। गुस्ल फ़र्ज़ हो जाने के बाद मियाँ-बीवी में से अगर कोई शख़्स पहले गुस्ल कर ले और दूसरे ने अभी गुस्ल न किया हो तो आपस में मिलकर लेटने में कुछ हर्ज नहीं है, दूसरा शख़्स बाद में गुस्ल कर सकता है। हाँ! अगर पास लेटने से दोबारा गुस्ल फ़र्ज़ हो जाये तो जो गुस्ल कर चुका है उसे दोबारा गुस्ल करना लाज़िम है।

गुस्ल का फ़र्ज़ होना शरीअ़त का हुक्म होने की वजह से है, इसी लिए गुस्ल के फ़र्ज़ होने की हालत को 'नजासते हुक्मिया' कहा जाता है। नजासते हुक्मी की वजह से थूक-राल और पसीना नापाक नहीं होता, बल्कि अगर गुस्ल करते हुए इस्तेमाल-शुदा पानी की कुछ छींटें पानी में गिर जायें जो असल नापाकी के ऊपर से न गुज़री हों तो उनकी वजह से पानी नापाक न होगा। अगर ये छींटें कपड़ों पर पड़ जायें तो कपड़े पाक ही रहेंगे।

अगर किसी पर गुस्ल फ़र्ज़ हो तो उसको खाना-पीना और सोना जायज़ है, अलबत्ता बेहतर यह है कि वुज़ू कर ले, उसके बाद खाये-पिये और सोये। इन मसाइल को ख़ूब समझ लें, अच्छी तरह समझ लेंगे तो इस्लामी शरीअ़त में जो आसानियाँ हैं वे समझ में आ जायेंगी।

जुनुबी से फ़रिश्ते दूर रहते हैं

हदीसः (245) हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि सरवरे आ़लम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिस घर में तस्वीर

या कुत्ता हो या जुनुबी (यानी ऐसा मर्द या औरत हो जिस पर गुस्ल फ़र्ज़) हो, ऐसे घर में फ़रिश्ते दाख़िल नहीं होते। (मिश्कात शरीफ़ पेज 50)

तशरीहः जिस पर गुस्ल फ़र्ज़ हो उसके लिए यह जायज़ तो है कि नमाज़ पढ़ने का वक़्त होने-तक गुस्ल न करे, लेकिन बेहतर यही है कि जल्द से जल्द गुस्ल कर ले। और वजह इसकी यह है कि फ़रिश्तों को जुनुबी (नापाक आदमी, जिस पर गुस्ल फ़र्ज़ हो) से ज़िद है। जिस घर में जुनुबी हो उसमें जाने से फ़रिश्तों को तकलीफ़ महसूस होती है। इसलिए उस घर में नहीं जाते जिसमें जुनुबी हो। इस हदीस में यह बात बतायी है, अलबत्ता एक हदीस में यह आया है कि जुनुबी अगर वुज़ू कर ले तो फ़रिश्तों को उसके क़रीब जाने से गुरेज़ नहीं होता, लिहाज़ा गुस्ल फ़र्ज़ हो जाने के बाद अगर अगर गुस्ल करने में नफ़्स सुस्ती करने लगे तो कम-से-कम वुज़ू ही कर लें। ख़ुसूसन रात को अगर ऐसी सूरत पेश आ जाये तो वुज़ू करके सो जायें और फिर फ़ज्र की अज़ान हो जाने पर गुस्ल करके फ़ज्र की नमाज़ अदा कर लें। गुस्ल फ़र्ज़ हो जाने की हालत में अगर कुछ खाना चाहे तो वुज़ू करके खाना-पीना बेहतर है।

इस हदीस में यह भी है कि फ़रिश्ते उस घर में भी दाख़िल नहीं होते जिसमें तस्वीर हो या कुत्ता हो। तस्वीर अगर किसी पेड़ या इमारत की हो तो घर में रख सकते हैं, बशर्तेकि कुफ़्र व फ़िस्क़ (बुराई और गुनाह) की निशानी न हो और उसके साथ किसी जानदार की तस्वीर न बनी हुई हो। और जानदार की तस्वीर बनाना या घर, दफ़्तर वग़ैरह में लगाना और सजाना सब हराम है।

इसी तरह कुत्ता पालने के बारे में भी सख़्त वईद (तंबीह और डाँट) आयी है। शौक़िया कुत्ता पालने की सख़्त मनाही है, अलबत्ता खेती की हिफ़ाज़त और घर की हिफ़ाज़त और शिकार के लिए कुत्ता पाल सकते हैं।

हदीस शरीफ़ में जो यह फ़रमाया कि फ़रिश्ते उस घर में दाख़िल नहीं होते जिसमें तस्वीर या कुत्ता या जुनुबी हो, इससे रहमत के फ़रिश्ते मुराद हैं। जो फ़रिश्ते आमाल लिखने की ड्यूटी अन्जाम देते हैं या जान निकालने के काम पर लगाये गये हैं, उनको हर घर में जाना पड़ता है, मगर नागवारी के साथ जाते हैं। आजकल मुसलमानों पर यह मुसीबत सवार है कि दुश्मनों की देखा-देखी तस्वीरों से घर भरा रखते हैं और शौक़िया कुत्ते भी पालते हैं, और अपने अमल से रहमत के फ़रिश्तों को घर में आने से रोकते हैं।

एक कुत्ता पालने वाला जाहिल कहने लगा कि जब फ़रिश्ते कुत्ता होते हुए घर में दाख़िल नहीं होते तो हम हर वक़्त कुत्ता घर में रखेंगे, फिर हमारी रूह फ़रिश्ता कैसे क़ब्ज़ करेगा? एक आलिम ने जवाब दिया कि जो फ़रिश्ता कुत्ते की रूह क़ब्ज़ करता है वही उसकी रूह क़ब्ज़ करेगा जो मौत से बचने के लिए कुत्ते को घर में घुसाये रहेगा।

नापाकी के गुस्ल में औरतों के बालों का हुक्म

हदीसः (246) उम्मुल-मोमिनीन हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि मैंने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! मैं एक ऐसी औरत हूँ जो अपने सर की मेंढियाँ कसके बाँधती हूँ। तो क्या जब शौहर व बीवी के मेल-मिलाप की वजह से मुझ पर गुस्ल फ़र्ज़ हुआ करे तो गुस्ल करने के लिए अपने सर की मेंढियाँ खोला करूँ? (इसके जवाब में) नबी पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि नहीं! (बाल खोलना ज़रूरी नहीं, बालों की जड़ों में पानी पहुँचाना ज़रूरी है, लिहाज़ा) यह काफ़ी है कि तुम अपने सर पर तीन लप पानी भरकर डालो, फिर अपने पूरे बदन पर पानी बहा लो, ऐसा करने से तुम पाक हो जाओगी। (मिश्कात शरीफ़ पेज 48 जिल्द 1)

तशरीहः गुस्ल का तरीक़ा हम किताब के शुरू में लिख आये हैं, यहाँ गुस्ल से मुताल्लिक़ बाज़ ज़रूरी मसाइल लिखे रहे हैं।

जब गुस्ल फ़र्ज़ हो जाये तो जिस्म पर जो ज़ाहिरी नापाकी (ख़ून, मनी, वग़ैरह) लगी हो उसको धो देने और पूरे जिस्म पर पानी बहा देने से फ़र्ज़ गुस्ल अदा हो जाता है। फ़र्ज़ गुस्ल की अदायगी के लिए पूरे बदन पर हर जगह सिर्फ़ एक बार पानी बहाना फ़र्ज़ है, और हर जगह तीन बार पानी बहाना सुन्नत है। अगर एक बाल के बराबर ज़रा-सी भी खाल ऐसी रह गयी जिस पर पानी न बहा तो गुस्ल नहीं होगा, ख़ूब समझ लो। लेकिन औरत के सर के बालों के बारे में शरीअत में यह आसानी कर दी गयी है कि अगर उसने मेंढियाँ बाँध रखी हों तो बालों की जड़ों में पानी पहुँचा देना काफ़ी हो जाता है, और उस सूरत में जड़ों के अलावा बाक़ी बालों का धोना माफ़ है। और अगर बालों की जड़ों में मेंढियाँ बाँधने की वजह से पानी न पहुँचे तो मेंढियाँ खोलकर जड़ों में पानी पहुँचाना और पूरे बालों का धोना फ़र्ज़ है। और अगर मेंढियाँ बाँधी हुई न हों तब भी सर के तमाम बालों का धोना और

जड़ों में पानी पहुँचाना फ़र्ज़ है। और आजकल शहरी औरतें मेंढियाँ बाँधती ही नहीं हैं, लिहाज़ा उनपर ग़ुस्ल में सारे बालों का धोना फ़र्ज़ है।

बाज़ औरतों में जो यह मशहूर है कि ग़ुस्ल में सर धोना फ़र्ज़ नहीं है, यह सख़्त जहालत की बात है और बिल्कुल ग़लत है। जो औरतें ग़ुस्ल फ़र्ज़ होने के बाद सर छोड़कर पानी डाल लेती हैं, हमेशा नापाक रहती हैं, उनकी कोई नमाज़ नहीं होती।

हैज़ और इस्तिहाज़ा के ज़रूरी मसाइल

हदीसः (247) उम्मुल मोमिनीन हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा का बयान है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़माने में एक औरत को ख़ून आता ही रहता था (बन्द होता ही नहीं था) उस औरत के लिए उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा ने हज़रत रसूले करीम से मसला मालूम किया (कि यह औरत इस हाल में क्या नमाज़ बिल्कुल ही छोड़े रखे? इसके जवाब में) नबी पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि यह औरत ग़ौर करे कि आदत से ज़्यादा ख़ून जारी होने से पहले हर महीने उसको कितने दिन (माहवारी का) ख़ून आता था। हर महीने के उतने ही दिनों को (हैज़ यानी माहवारी का) ख़ून समझे और उतने दिनों की नमाज़ छोड़े। फिर जब ये दिन गुज़र जायें तो ग़ुस्ल कर ले। (उसके बाद जो ख़ून आता रहेगा वह माहवारी का शुमार न होगा, और उसपर माहवारी के अहकाम जारी न होंगे) लिहाज़ा यह औरत कपड़े का लंगोट बाँध ले, फिर नमाज़ पढ़े।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 57 जिल्द 1)

शरीअत के मसाइल मालूम करने में शर्म करना जहालत है

हर महीने औरत को जो ख़ून आता है उसे हैज़ (माहवारी) कहते हैं। उसके कुछ अहकाम हम पिछली हदीसों की तशरीह में लिख चुके हैं। लेकिन इस सिलसिले के मसाइल की चूँकि ज़रूरत ज़्यादा रहती है और इनके जानने वाले और बताने वाले बहुत कम होते हैं, इसलिए ज़रा और तफ़सील के साथ लिखते हैं। शरीअत में क्या शर्म है, हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने फ़रमाया किः

"अन्सार की औरतें बहुत अच्छी औरतें हैं। शर्म उनको इस बात से नहीं रोकती कि दीनी समझ हासिल करें"। (बुख़ारी शरीफ़ पेज 24 जिल्द 1)

यह हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा की बात हमने यहाँ इसलिए लिख दी कि बाज़ जाहिल औरतें ऐसे मसाइल के लिखने और बताने पर एतिराज़ करती हैं, जिनके पूछने या बताने में शर्म आती है। यह जहालत की मारी बराबर ग़लतियाँ करती रहती हैं, और मसला दरियाफ़्त करने को शर्म के ख़िलाफ़ समझती हैं। शरीअ़त में ऐसी शर्म की तारीफ़ नहीं की गयी बल्कि यह बुरी शर्म है।

हैज़ की कम-से-कम और ज़्यादा-से-ज़्यादा मुद्दत

सबसे पहले यह समझो कि हैज़ (माहवारी के ख़ून) की मुद्दत जो शरीअ़त में मोतबर है, कम-से-कम तीन दिन तीन रात है और ज़्यादा-से-ज़्यादा दस दिन दस रात है। अगर तीन दिन से कम आकर बंद हो जाये तो उसमें हैज़ के अहकाम जारी न होंगे। इसी तरह अगर दस दिन से ज़्यादा आ जाये तो जितने दिन सबसे आख़िरी बार ख़ून आया था, उससे जो ज़ायद होगा वह भी हैज़ न होगा। हैज़ के ज़माने में चूँकि नमाज़ पढ़ना मना है और भी बहुत-से मसाइल इससे मुताल्लिक़ हैं इसलिए सहाबी औरतें (रज़ियल्लाहु अन्हुन्-न) इस सिलसिले के मसाइल हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मालूम करती रहती थीं। ऊपर वाली हदीस (जिसका तर्जुमा ऊपर लिखा गया है) इसमें हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा ने एक अहम मसला दरियाफ़्त किया है जिसके जानने की औरतों को ज़रूरत रहती है, अगरचे यह मसला एक औरत के वाक़िए से मुताल्लिक़ है मगर इससे हमारी उम्मत को हिदायत मिल गयी।

जो ख़ून मियाद से बढ़ जाये उसका हुक्म

औरतों को मालूम है कि जो माहवारी का ख़ून आता है कभी कभी ऐसा होता है कि बन्द ही नहीं होता, और दस दिन दस रात से आगे बढ़ जाता है। बाज़ औरतों को कई महीने तक आता रहता है। जो औरतें मसला नहीं जानती हैं, जब तक ख़ून आता रहता है, न नमाज़ पढ़ती हैं न रोज़ा रखती हैं, यह ग़लत है और ख़िलाफ़े शरीअ़त है। हदीस शरीफ़ में जिस तरह फ़रमाया है उसी तरह करना लाज़िम है।

मसला यह है कि जिस औरत को बराबर ख़ून आ रहा हो, बन्द ही नहीं होता, तो यह औरत ग़ौर करे कि पिछले माह में (सबसे आख़िरी बार) कितने

दिन ख़ून आया। पस आख़िरी माह में जितने दिन ख़ून आया था हर माह से सिर्फ़ उतने ही दिन हैज़ है और उससे ज़्यादा जो ख़ून है वह हैज़ नहीं है। मिसाल के तौर पर यूँ समझ लो, किसी औरत को लगातार ख़ून जारी होने से पहले, सात दिन हैज़ आता था, और आख़िरी बार भी सात दिन आया था, और अब पन्द्रह दिन आ गया, या आना शुरू हुआ तो महीनों गुज़र गये, बन्द ही नहीं होता। तो इस सूरत में सिर्फ़ सात दिन हैज़ माना जायेगा और बाक़ी दिन यानी उसके बाद जो आठ दिन या उनसे भी ज़्यादा ख़ून आया है वह हैज़ नहीं होगा। शरीअत में इस ज़्यादती वाले ज़माने में हैज़ वाली न मानी जायेगी, बशर्तेकि यह ज़्यादती दस दिन दस रात से आगे बढ़ जाये। जब ये ज़ायद दिन हैज़ में शुमार नहीं तो इन ज़ायद दिनों की नमाज़ें उस पर फ़र्ज़ होंगी, जितने दिनों की नहीं पढ़ीं उनकी कज़ा करे। और अगर आदत के ख़िलाफ़ ख़ून ज़्यादा दिन तक आया मगर दस दिन दस रात से आगे न बढ़ा तो यह सब हैज़ शुमार होगा। और अगर किसी औरत को पहली बार हैज़ आया और बराबर जारी रहा यहाँ तक कि दस दिन से बढ़ गया तो उसका मसला यह है कि दस दिन दस रात हैज़ के शुमार होंगे और बाक़ी उससे ज़ायद जो ख़ून आयेगा वह हैज़ न होगा। अगर उस औरत का ख़ून बराबर जारी रहे तो हर महीने दस दिन दस रात हैज़ के शुमार होंगे और बाक़ी इससे ज़ायद जो ख़ून आयेगा वह हैज़ न होगा। अगर उस औरत का ख़ून बराबर जारी रहे तो हर महीने दस-दस रात-दिन हैज़ में और बाक़ी इस्तिहाज़ा में शुमार करती रहे।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़माने में बाज़ सहाबी औरतों को बहुत ज़्यादा ख़ून आया, यहाँ तक कि एक ख़ातून को सात साल तक ख़ून आता रहा। जब आपसे इस ज़ायद ख़ून के जारी होने के मुताल्लिक दरियाफ़्त किया गया तो आपने फ़रमाया कि यह हैज़ का ख़ून नहीं है बल्कि शैतान अन्दर घुसकर 'रहम' (बच्चेदानी) में ऐसी चोट मारता है जिसकी वजह से ख़ून जारी होता है, जिससे तबई ख़ून जितना आना चाहिये उससे ज़्यादा आ जाता है।

इस्तिहाज़ा का हुक्म

ऊपर वाली तफ़सील मालूम करके दिल में यह सवाल पैदा हो रहा होगा

कि जो ख़ून हैज़ में शुमार न होगा उसको किस नाम से याद करेंगे, और उसका क्या हुक्म है? लिहाज़ा हम तफ़सील के साथ इस पर रोशनी डालते हैं।

जो ख़ून तीन दिन तीन रात से कम आकर बन्द हो जाये या आदत से बढ़कर दस दिन से आगे निकल जाये, या जो ख़ून हमल (गर्भ) के ज़माने में आये या नौ (9) साल की उम्र होने से पहले आ जाये, दीन के आलिमों की बोल-चाल में उसको 'इस्तिहाज़ा' कहते हैं। और जिस औरत को यह ख़ून आता हो उसे 'मुस्तहाज़ा' कहते हैं। हैज़ के ज़माने में नमाज़ पढ़ना और रोज़ा रखना मना है, बल्कि हैज़ के ज़माने की नमाज़ें तो बिल्कुल माफ़ हैं और रमज़ान के रोज़ों की कज़ा बाद में रखे। और इस्तिहाज़ा वाली औरत पर नमाज़ फ़र्ज़ है, और अगर रमज़ान का महीना हो तो रोज़े रखना भी फ़र्ज़ है। और यह औरत वुज़ू करके काबा शरीफ़ का तवाफ़ भी कर सकती है, और कुरआन शरीफ़ भी छू सकती है, और कुरआन शरीफ़ की तिलावत भी कर सकती है। नमाज़ का वक़्त आ जाने पर वुज़ू करके नमाज़ पढ़े। अगर ख़ून बन्द नहीं होता तब भी वुज़ू करके नमाज़ शुरू कर दे, चाहे नमाज़ पढ़ने में कपड़े ख़ून में भर जायें और जाय-नमाज़ पर ख़ून लग जाये।

कायदे के मुताबिक (जिसका ज़िक्र ऊपर हुआ) जब हैज़ के दिन चले जायें तो एक बार गुस्ल कर ले, उसके बाद अगर ख़ून आता रहे तब भी अपने को पाक समझे और वुज़ू करके नमाज़ पढ़ा करे। अगर ख़ून बिल्कुल बन्द नहीं होता तो उसपर माज़ूर के अहकाम जारी होंगे जो ज़रूरत के वक़्त आलिमों से मालूम कराये जा सकते हैं। और माज़ूर के कुछ अहकाम हम भी इस किताब में मरीज़ की नमाज़ के अन्तर्गत बयान कर चुके हैं।

अगर इस्तिहाज़ा का ख़ून हर वक़्त नहीं आता, कभी-कभी आता है, और बहुत-सा वक़्त ऐसा भी गुज़रता है कि ख़ून जारी नहीं है, तो नमाज़ का वक़्त आने पर इन्तिज़ार कर ले। जब ख़ून बन्द हो जाये तो वुज़ू करके नमाज़ पढ़ ले।

माहवारी के बाकी मसाइल

मसलाः हैज़ (माहवारी) के दिनों में यह ज़रूरी नहीं है कि बराबर ख़ून आता ही रहे, कायदे में जब हैज़ का ख़ून आये तो आदत के दिनों के अन्दर या दस दिन दस रात के अन्दर-अन्दर बीच में जो ऐसा वक़्त गुज़रेगा जिसमें

ख़ून न आया (कभी दो घण्टे, कभी एक घण्टा, कभी रात, कभी दिन) साफ़ रही, फिर ख़ून आ गया। तो यह एक दिन जो साफ़ रहने का था हैज़ में शुमार होगा।

मसलाः किसी औरत को पिछले हैज़ के बाद पन्द्रह दिन गुज़र जाने पर ख़ून आया, उसने समझा कि यह हैज़ है और नमाज़ें न पढ़ीं। फिर वह तीन दिन तीन रात पूरा होने से पहले रुक गया, और फिर पन्द्रह-बीस दिन कुछ न आया, तो हैज़ समझकर जो नमाज़ें छोड़ी थीं उनकी क़ज़ा पढ़ना फ़र्ज़ है।

मसलाः दो हैज़ के दरमियान पाक रहने की मुद्दत कम-से-कम पन्द्रह दिन है और ज़्यादा की कोई हद नहीं। अगर हैज़ आना बन्द हो जाये और महीनों न आये तो जितने दिन भी ख़ून न आये पाक समझी जायेगी।

मसलाः अगर किसी ने नमाज़ का वक़्त हो जाने पर फ़र्ज़ नमाज़ पढ़नी शुरू कर दी और नमाज़ के दरमियान हैज़ आ गया तो नमाज़ फ़ासिद हो गयी, और माहवारी के दिन गुज़र जाने पर नमाज़ पढ़ने में देर लगायी यहाँ तक कि वक़्त ख़त्म होने के क़रीब हो गया और उस वक़्त हैज़ आ गया तो उस वक़्त की नमाज़ भी माफ़ हो गयी। अब उसकी क़ज़ा लाज़िम न होगी।

मसलाः अगर सुन्नत या नफ़िल नमाज़ पढ़ते हुए हैज़ आ गया तो नमाज़ फ़ासिद हो गयी और उसकी क़ज़ा लाज़िम होगी।

मसलाः अगर दस दिन से कम हैज़ आया और ऐसे वक़्त ख़ून बन्द हुआ कि नमाज़ का वक़्त बिल्कुल तंग है, कि जल्दी और फुर्ती से गुस्ल अदा कर सकती है। और उसके बाद बिल्कुल ज़रा-सा वक़्त बचेगा जिस में सिर्फ़ एक बार अल्लाहु अकबर कह सकती है, इससे ज़्यादा कुछ नहीं पढ़ सकती, तब भी उस वक़्त की नमाज़ वाजिब हो जायेगी। गुस्ल करके अल्लाहु अकबर कहकर फ़र्ज़ नमाज़ शुरू कर दे और पूरी पढ़ ले, अलबत्ता अगर फ़ज्र की नमाज़ पढ़ते हुए सूरज निकल आया तो नमाज़ फ़ासिद हो जायेगी, उसको सूरज ऊँचा हो जाने के बाद पढ़ना लाज़िम होगा और क़ज़ा पढ़नी पड़ेगी। और अगर इससे भी कम वक़्त मिला जिसमें गुस्ल और तकबीर तहरीमा (यानी अल्लाहु अकबर) दोनों की गुंजाइश न थी तो उस वक़्त की क़ज़ा लाज़िम नहीं।

मसलाः अगर पूरे दस दिन दस रात हैज़ आया, और ऐसे वक़्त ख़ून बन्द हुआ कि बिल्कुल ज़रा-सा वक़्त है कि एक दफ़ा अल्लाहु अकबर कह

सकती है, इससे ज़्यादा नहीं पढ़ सकती और नमाज़ की गुंजाइश नहीं तो इस सूरत में नमाज़ वाजिब हो जाती है, उसकी कज़ा पढ़ना लाज़िम है।

माहवारी वाली औरत का जिस्म और लुआब (थूक, मुँह का पानी) पाक हैं

हदीसः (248) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने बयान फ़रमाया कि मैं माहवारी के ज़माने में बर्तन से पानी (वग़ैरह) पीकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देती थी, आप बर्तन में उसी जगह मुंह लगाकर पीते थे जिस जगह मेरा मुंह लगा था। इसी तरह गोश्त वाली हड्डी को मैं मुँह में लेकर दाँतों से गोश्त छुड़ाकर रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देती थी। आप उसी जगह मुहँ लगा (कर गोश्त छुड़ा) लेते थे, जहाँ मैंने मुँह लगाया था। (मिश्कात शरीफ़ पेज 56)

माहवारी वाली औरत की गोद में तिलावत करना

हदीसः (249) हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने यह भी बयान फ़रमाया कि रसूले पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मेरे माहवारी के ज़माने में मेरी गोद में तकिया लगाकर (लेट-बैठ जाते थे, और उसी हालत में) कुरआन मजीद पढ़ते थे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 56)

हदीसः (250) उम्मुल-मोमिनीन हज़रत मैमूना रज़ियल्लाहु अन्हा का बयान है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मेरी माहवारी के ज़माने में इस हाल में नमाज़ पढ़ते रहते थे कि चादर का एक हिस्सा आपके ऊपर और एक हिस्सा मेरे ऊपर होता था। (मिश्कात शरीफ़ पेज 56)

तशरीहः इन हदीसों से मालूम हुआ कि माहवारी के ज़माने में औरत के हाथ-पाँव, मुँह और लुआब (मुँह का पानी, राल, थूक) और पहने हुए कपड़े नापाक नहीं हो जाते हैं, अलबत्ता किसी जगह, बदन या कपड़े में ख़ून लग जायेगा तो वह जगह नापाक हो जाती है। माहवारी वाली औरत के साथ दूसरी औरतों का या उसकी औलाद का, उसके शौहर या दूसरे मेहरमों का उठना-बैठना मना नहीं हो जाता। हैज़ वाली औरत का झूठा पाक है। उसकी गोद में लेटकर उसका शौहर कुरआन शरीफ़ पढ़ ले तो कुछ हर्ज नहीं। जब हैज़ के ज़माने में यह बात है तो इस्तिहाज़ा में और भी ज़्यादा उसके ज़ाहिरी जिस्म और लुआब को पाक माना जायेगा। और जो हुक्म हैज़ के ज़माने का

है वही निफ़ास (यानी उस ख़ून के आने के दौरान का है जो बच्चे की पैदाईश के बाद औरत को आता है) के ज़माने का भी है।

यहूदियों और हिन्दुओं में दस्तूर है कि हैज़ वाली औरत को अछूत बनाकर छोड़ देते हैं। न वह बर्तन को हाथ लगाये, न किसी का कपड़ा छुए, इस्लामी शरीअत में ऐसा नहीं है।

हैज़ वाली औरत का खाना पकाना, उसके छुए हुए आटे और पानी वग़ैरह को इस्तेमाल करना मुक्रूह नहीं है। उसके बिस्तर को अलग न किया जाये क्योंकि यह यहूदियों की हरकत जैसा है। हैज़ वाली औरत को अलग कर देना कि वहाँ कोई न जाये, ऐसा करना दुरुस्त नहीं है।

(शामी पेज 194 जिल्द 1)

इस्लाम से पहले लोगों ने औरत को बहुत गिरा रखा था और उसकी कोई हैसियत नहीं समझी जाती थी। इस्लाम ने औरत को बुलन्द किया और उसके अदब व सम्मान का सबक़ दिया, मगर अफ़सोस है कि आज औरतें इस्लाम ही को मुसीबत समझने लगी हैं और इसके अहकाम से जी चुराती हैं।

माहवारी के ज़माने में मियाँ-बीवी की बे-तकल्लुफ़ी की क्या हद है?

हदीसः (251) हज़रत ज़ैद बिन असलम रहमतुल्लाहि अ़लैहि (तबिई) का बयान है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से एक शख़्स ने दरियाफ़्त किया कि जब मेरी बीवी के माहवारी के दिन हों उस वक़्त मेरे लिए उसके बीवी होने की हैसियत से उसके साथ ताल्लुक़ात की किस हद तक इजाज़त है? आपने फ़रमाया कि उसके जिस्म पर तहबन्द बाँध दो, फिर उसके ऊपर के हिस्से में मशग़ूल हो सकते हो। (जैसे चूम सकते हो)।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 56)

तशरीहः माहवारी के ज़माने के मुताल्लिक़ जो अहकाम हैं उनमें एक यह हुक्म भी है कि औरत का शौहर उससे लज़्ज़त हासिल न करे। लेकिन लज़्ज़त हासिल करने की कई सूरतें हैं, और हुक्म भी अलग-अलग है। मियाँ-बीवी का जो एक ख़ास काम है जिसमें शर्म की सब हदें टूट जाती हैं, यह माहवारी के ज़माने में बिल्कुल हराम है। अगर कभी ऐसा हो जाये तो तौबा करें। क़ुरआन शरीफ़ में इरशाद हैः

तर्जुमाः औरतें जब तक हैज़ से पाक न हो जायें (अपने मख़्सूस काम के लिए) उनके करीब तक न जाओ। (सूरः ब-करः आयत 222)

बाकी रहा माहवारी में हैज़ वाली औरत के साथ उठना-बैठना, खाना-पीना, तो यह सब जायज़ है जैसा कि ऊपर वाली हदीस की तशरीह में गुज़रा है। मगर इस बात का ख़्याल लाज़िम है कि नाफ़ से लेकर घुटनों तक औरत के जिस्म का जो हिस्सा है, माहवारी के दिनों में उसका शौहर उस हिस्से को हाथ न लगाये, और न कोई दूसरा जिस्मानी अंग उससे छुवाए। नाफ़ से ऊपर और घुटनों से नीचे औरत के जिस्म का जो हिस्सा है, माहवारी के दिनों में शौहर उसको हाथ लगा सकता है और चूम सकता है। ऊपर वाली हदीस में जो यह फ़रमाया कि "हैज़ की हालत में अपनी बीवी को तहबन्द बंधवाकर उससे ऊपर वाले हिस्से में मशग़ूल हो सकता है" इसका मतलब यह है कि चूम सकता है। सर, सीना, कमर छू सकता है।

मसलाः जो तफ़सील अभी बयान हुई है, औरत पर लाज़िम है कि मर्द को उसके ख़िलाफ़ न करने दे। और ख़ास काम तो बिल्कुल ही न होने दे। अगर औरत की रज़ामन्दी से गुनाह का काम हो गया तो वह भी गुनाहगार होगी। जहाँ तक मुमकिन हो मर्द को गुनाह से बाज़ रखे।

निफ़ास का हुक्म

मसलाः निफ़ास के ज़माने में भी मियाँ-बीवी का ख़ास काम नहीं हो सकता। इस ज़माने में भी वह शरअन हराम है। अलबत्ता निफ़ास वाली औरत के साथ उसका शौहर या औलाद या दूसरे मेहरम खा-पी सकते हैं और उठ-बैठ सकते हैं। (निफ़ास का बयान ज़रा तफ़सील से आगे आयेगा, इन्शा-अल्लाह तआ़ला)

माहवारी के अहकाम

मसलाः अगर किसी औरत का हैज़ (माहवारी) दस दिन दस रात पूरे हो जाने पर ख़त्म हुआ है और उस औरत ने सुस्ती काहिली की वजह से गुस्ल नहीं किया, तो उसका शौहर गुस्ल से पहले भी उससे मियाँ-बीवी वाला ख़ास काम कर सकता है। मगर बेहतर और अफ़ज़ल यही है कि गुस्ल से पहले परहेज़ करे।

मसलाः और अगर दस दिन के अन्दर-अन्दर आदत के मुताबिक किसी औरत का हैज़ ख़त्म हो गया (जैसे किसी को पाँच या छह दिन की आदत

थी) और औरत ने अभी गुस्ल नहीं किया और किसी नमाज़ का आख़िरी वक़्त इस क़द्र गुज़रा है कि जिसमें गुस्ल करने और तकबीरे-तहरीमा कहने की गुंजाइश बाक़ी न हो तो उस सूरत में उसका शौहर उससे अपना ख़ास काम नहीं कर सकता। हाँ! अगर औरत गुस्ल कर चुकी है या एक नमाज़ का वक़्त गुज़र गया कि जिसमें गुस्ल करके तकबीरे-तहरीमा (अल्लाहु अकबर) कह सकती थी, तो मियाँ-बीवी का ख़ास काम जायज़ हो गया।

मसलाः जितने दिन हैज़ आने की आ़दत है अगर उससे कम दिन हैज़ आकर रह गया। जैसे सात दिन की आ़दत थी, किसी महीने पाँच दिन आकर ख़ून बन्द हो गया तो औरत को चाहिये कि गुस्ल करके नमाज़ और फ़र्ज़ रोज़ा शुरू कर दे, लेकिन उसके शौहर को अपना ख़ास काम करना जायज़ नहीं है अगरचे गुस्ल कर चुकी हो। आ़दत के दिन पूरे होने का इन्तिज़ार करे।

मसलाः जिस औरत को सबसे पहला हैज़ आया मगर दस दिन से कम आकर बन्द हो गया हो, या किसी औरत को आ़दत के दिनों से कम हैज़ आया जैसे सात दिन के बजाय पाँच दिन आकर बन्द हो गया, तो इन दोनों सूरतों में गुस्ल करने में जल्दी न करे बल्कि ख़ून बन्द होने के बाद नमाज़ का पहला जो वक़्त आये या नमाज़ का जो वक़्त मौजूद हो उसके ख़त्म के क़रीब गुस्ल करके नमाज़ पढ़े। मगर मकरूह वक़्त से पहले पढ़ ले।

माहवारी का कपड़ा पाक करके उसमें नमाज़ पढ़ी जा सकती है

हदीसः (252) हज़रत अबू बक्र रज़ियल्लाहु अ़न्हु की बेटी हज़रत असमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने बयान फ़रमाया कि एक औरत ने मसला मालूम करते हुए अ़र्ज़ किया: या रसूलल्लाह! जब हम में से किसी औरत के कपड़े में हैज़ का ख़ून लग जाये तो (उसको पाक करने के लिए) क्या सूरत इख़्तियार करे? आपने फ़रमाया: जब तुममें से किसी के कपड़े को हैज़ का ख़ून लग जाये (और सूख जाये) तो उसको (किसी लकड़ी वग़ैरह से) खुरच दे, फिर पानी से धो दे। उसके बाद उस कपड़े में नमाज़ पढ़ ले। (मिश्कात पेज 152)

तशरीहः ख़ून 'नजासते ग़लीज़ा' (गाढ़ी नापाकी) है, चाहे हैज़ का ख़ून हो, चाहे निफ़ास का, चाहे इस्तिहाज़ा का, चाहे बदन के किसी और हिस्से से निकला हो। जब किसी कपड़े पर ख़ून लग गया तो जितनी जगह लगा है उतनी ही जगह नापाक हो गयी। जब उस जगह को पानी से धो डाले तो वह कपड़ा पाक हो जायेगा। अगर ख़ून कपड़े में लगकर सूख गया हो तो धोने से

पहले खुरच डालना बेहतर है ताकि पानी से पाक-साफ़ करते वक़्त आसानी हो। अगर साबुन से धो दे तो यह भी ठीक है। बहरहाल जिस जगह ख़ून लगा हो वही जगह नापाक होगी, पूरा कपड़ा धोना लाज़िम नहीं है, बल्कि पूरे कपड़े को यह समझकर धोना कि शरीअ़त के हिसाब से पूरा धोना लाज़िम है, बिदअ़त (यानी दीन में अपनी तरफ़ से एक नई बात निकालना) होगा, ख़ूब समझ लो।

इसी तरह जिस कपड़े में मियाँ-बीवी का ख़ास काम हुआ वह भी नापाक नहीं होता, हाँ! जिस जगह नापाकी लग जाये वह जगह नापाक हो जायेगी। बाज़ जगह दस्तूर है कि शादी की रात गुज़ारने पर सुबह को दुल्हन के सब कपड़े मुकम्मल धोते हैं और रेशमी कपड़ों का नास कर दिया जाता है, यह जहालत की बात है।

निफ़ास के अहकाम

हदीसः (253) उम्मुल-मोमिनीन हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा ने बयान फ़रमाया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़माने में औ़रत, बच्चे की पैदाईश के बाद चालीस दिन तक बैठी रहती थी (यानी न नमाज़ पढ़ती थी न रोज़ा रखती थी) और हम झाइयाँ दूर करने के लिए अपने चेहरों पर वर्स मला करते थे (जो एक क़िस्म की घास थी)।

(तिर्मिज़ी शरीफ़ पेज 26 जिल्द 1)

तशरीहः बच्चे की पैदाईश के बाद ख़ून जारी हुआ करता है, इस ख़ून को निफ़ास कहते हैं, और इस ज़माने में औ़रत का 'नुफ़सा' कहा जाता है। इस औ़रत के भी वही अहकाम हैं जो हैज़ वाली औ़रत के हैं। जिस तरह हैज़ वाली औ़रत पर नमाज़ फ़र्ज़ नहीं और उसे कोई भी नमाज़ अदा करना या क़ुरआन शरीफ़ पढ़ना या उसका छूना या मस्जिद में दाख़िल होना जायज़ नहीं, उसी तरह निफ़ास वाली औ़रत पर भी नमाज़ फ़र्ज़ नहीं है और न उसे नमाज़ पढ़ना दुरुस्त है। और क़ुरआन शरीफ़ पढ़ना या उसका छूना या मस्जिद में दाख़िल होना भी उसके लिए जायज़ नहीं है। अलबत्ता क़ुरआन शरीफ़ को ग़िलाफ़ के साथ छूना जायज़ है। मगर जिल्द पर जो चोली चढ़ी रहती है वह ग़िलाफ़ के हुक्म में नहीं है। अगर ग़िलाफ़ के अन्दर क़ुरआन शरीफ़ नहीं है तो चढ़ी हुई चोली को हाथ लगाना उनके लिए जायज़ न होगा।

चोली से मुराद वह कपड़ा है जो फट्टों के साथ सिला हुआ हो। प्लास्टिक कवर जो फट्टों से बिल्कुल चिपका हुआ या सिला हुआ होता है, जो अलग नहीं होता वह भी चोली के हुक्म में है।

मसलाः निफ़ास वाली औरत को कोई रोज़ा (नफ़िल या फ़र्ज़) रखना जायज़ नहीं। अगर रमज़ान में ऐसा मौक़ा आ जाये तो रोज़े छोड़ दे, फिर बाद में पाकी के ज़माने में क़ज़ा रख ले।

मसलाः हैज़ वाली औरत की तरह निफ़ास वाली औरत भी क़ुरआन मजीद के अलावा दूसरी चीज़ें पढ़ सकती है। जैसे दुरूद शरीफ़, इस्तिग़फ़ार, पहला- दूसरा- तीसरा- चौथा- कलिमा वग़ैरह। और अगर कोई दुआ की आयत दुआ के तौर पर पढ़ना चाहे तो वह भी पढ़ सकती है।

निफ़ास की मुद्दत

ऊपर की हदीस में निफ़ास की आख़िरी और ज़्यादा से ज़्यादा मुद्दत बताई गयी है जिसकी तशरीह यह है कि बच्चा पैदा होने के बाद जो ख़ून आता है चालीस दिन के अन्दर-अन्दर जब भी बन्द हो जाये (चाहे सिर्फ़ एक दिन आकर बन्द हो जाये) तो ग़ुस्ल करके नमाज़ शुरू कर दे। चालीस दिन पूरे हो जाने पर भी ख़ून बन्द न हो तब भी निफ़ास ख़त्म हो गया। अब ग़ुस्ल करे और वुज़ू करके नमाज़ें पढ़ती रहे। क्योंकि इस पर पाक औरत के अहकाम शुरू हो गये। औरतों में जो यह दस्तूर है कि ख़ुद को चालीस दिन नमाज़ से रोके रखती हैं, अगरचे ख़ून आना पहले ही बन्द हो जाये, यह ग़लत है और शरीअ़त के ख़िलाफ़ है। अगर चालीस दिन पूरे हो चुके और ख़ून बराबर आता रहे किसी वक़्त भी बन्द न हो, तब भी एक बार ग़ुस्ल करके नमाज़ शुरू कर दे। फिर हर फ़र्ज़ नमाज़ का वक़्त आने पर नया वुज़ू कर लिया करे।

यहाँ यह बात याद रखना ज़रूरी है कि अगर किसी औरत के पहली बार विलादत (पैदाईश) हुई है और ख़ून चालीस दिन जारी रहा तो चालीस दिन पूरे हो जाने पर ग़ुस्ल करके नमाज़ शुरू कर दे। और अगर किसी औरत के पहले भी विलादत हो चुकी हो और यह मालूम है कि इस विलादत से पहले जो विलादत हुई थी उस वक़्त इतने दिन ख़ून आया था, तो चालीस दिन के अन्दर-अन्दर सब निफ़ास ही का ख़ून माना जायेगा, लेकिन अगर चालीस दिन से बढ़ गया तो पिछली बार के दिन गुज़रने के बाद जिस क़द्र

ज़ायद दिन होंगे, वे सब पाकी में शुमार होंगे। और इस ज़ायद ख़ून को 'इस्तिहाज़ा' कहेंगे।

जैसे किसी औरत को तीस (30) दिन निफ़ास आता था। अब एक बार पैंतीस दिन आ गया तो यह निफ़ास है, लेकिन अगर पैंतालीस दिन आ गया तो तीस दिन के बाद जो पन्द्रह दिन हैं ये निफ़ास में शुमार न होंगे बल्कि इन दिनों में औरत पर पाकी के अहकाम जारी होंगे, और निफ़ास समझकर तीस दिन के बाद जो नमाज़ें छोड़ी हैं उन सबकी कज़ा लाज़िम होगी। अच्छी तरह समझ लो।

निफ़ास के मसाइल

मसलाः अगर किसी औरत को विलादत (बच्चे की पैदाईश) के बाद ही ख़ून न आये तो पैदाईश के बाद ही गुस्ल करके नमाज़ शुरू करे। अगर गुस्ल करने से जान का ख़तरा हो या किसी सख़्त बीमारी में मुब्तला होने का प्रबल अन्देशा हो, और गर्म पानी भी ऐसा ही नुक़सान दे तो गुस्ल की जगह तयम्मुम कर ले और नमाज़ के लिए वुज़ू और (तयम्मुम जायज़ होने की सूरत में) तयम्मुम कर लिया जाये। फिर जब हलाक होने या सख़्त बीमारी में मुब्तला होने का अन्देशा जाता रहे (जिसकी वजह से गुस्ल की जगह तयम्मुम किया था) तो गुस्ल कर ले। नमाज़ की ताक़त खड़े होकर या बैठकर न हो तो लेटे-लेटे पढ़े।

मसलाः यह कोई ज़रूरी नहीं है कि निफ़ास का ख़ून हर वक़्त आता ही रहे, बल्कि निफ़ास की मुद्दत के अन्दर जो ख़ून आयेगा वह निफ़ास होगा, अगरचे दरमियान में दो-चार घण्टे या एक दो दिन तक न आये।

मसलाः अगर किसी का नामुकम्मल बच्चा जाता रहा (यानी गर्भ गिर गया) तो देखा जायेगा कि उसका कोई-आध अंग (उंगली, नाख़ुन वग़ैरह) बन चुका था तो जो ख़ून जारी होगा उसपर निफ़ास के अहकाम जारी होंगे। और अगर कोई अंग न बना था तो जो ख़ून आये वह निफ़ास के हुक्म में न होगा। अलबत्ता बाज़ सूरतों में उसे इस्तिहाज़ा और बाज़ सूरतों में हैज़ कह सकते हैं। ज़रूरत के वक़्त किसी आलिम से मसला दरियाफ़्त करा लें।

मसलाः अगर एक हमल (गर्भ) से किसी औरत के दो बच्चे पैदा हुए और दोनों की पैदाईश के दरमियान घण्टे दो घण्टे या एक दो दिन या एक माह से ज़्यादा वक़्फ़ा हुआ (बशर्तेकि छह माह से कम हो) तो पहले ही बच्चे की पैदाईश के बाद से जारी हुआ ख़ून निफ़ास माना जायेगा।

मसलाः हमल की हालत में जो ख़ून आये वह हैज़ या निफ़ास नहीं है बल्कि इस्तिहाज़ा है। इसी तरह पैदाईश से पहले जो ख़ून या पानी वग़ैरह जारी होता है वह भी हैज़ व निफ़ास नहीं है बल्कि इस्तिहाज़ा है। बच्चे का अकसर हिस्सा बाहर आने के बाद जो ख़ून जारी होगा वह निफ़ास होगा।

मसलाः हैज़ और निफ़ास के ज़माने में काबा शरीफ़ का तवाफ़ करना हराम है। बहुत-सी औरतें हज को जाती हैं, और मसला मालूम न होने की वजह से ऐसी ग़लती कर बैठती हैं, फिर जहालत की वजह से उसकी शरई तलाफ़ी भी नहीं करती हैं। अगर किसी ने ऐसा किया हो तो आलिमों से मालूम करके तलाफ़ी करे।

मसलाः पैदाईश से छठे दिन जो औरत को ग़ुस्ल देना ज़रूरी समझा जाता है, शरीअत में इसकी कुछ असल नहीं है।

हदीस शरीफ़ के आख़िर में यह भी फ़रमाया कि निफ़ास के ज़माने में नहाने-धोने का मौका न मिलने की वजह से जो चेहरे पर झाइयाँ पड़ जाती हैं और मुरझाने का जो असर आ जाता है, उसके लिए चेहरे पर 'वर्स' मला करते थे। यह एक घास होती थी जिसके मलने से खाल दुरुस्त हो जाती थी जैसा कि बाज़ इलाकों में सन्तरे के छिलकों से यह काम लिया जाता है, और अब इसकी जगह बहुत-से पाउडर और क्रीम चल गयी हैं। इससे मालूम हुआ कि चेहरे को साफ़-सुथरा रखना और अच्छा बनाना भी अच्छी बात है मगर काफ़िरों और फ़ासिकों के ढंग और तर्ज़ पर न हो।

लड़के और लड़की के पेशाब का हुक्म

हदीसः (254) हज़रत लुबाबा रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि जब हज़रत हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु की पैदाईश हुई तो मैंने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! इस बच्चे को मुझे दे दीजिये ताकि मैं इसकी परवरिश करूँ और अपना दूध पिलाऊँ। आपने मेरी दरख़्वास्त कबूल फ़रमायी और बच्चा मुझे इनायत फ़रमा दिया। मैं (कभी-कभी आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में लाया करती थी) एक दिन आपके पास लायी तो आपने इनको अपने सीने पर रख लिया। (यानी लिटा लिया या बैठा लिया)। हज़रत हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु ने पेशाब कर दिया जो आपके तहबन्द मुबारक में लग गया। मैंने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! अपना तहबन्द मुझे इनयात फ़रमा दीजिये ताकि धो दूँ। आपने फ़रमाया कि लड़के के पेशाब पर पानी डाला जाता है

और लड़की के पेशाब को धोया जाता है।

दूसरी रिवायत में यूँ है कि लड़की के पेशाब की वजह से (कपड़ा) धोया जाता है और लड़के के पेशाब की वजह से पानी छिड़क दिया जाता है।

(शरह मआनियुल आसार)

तशरीह: हज़रत लुबाबा रज़ियल्लाहु अन्हा उम्मुल-मोमिनीन हज़रत मैमूना रज़ियल्लाहु अन्हा की बहन और हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु की बीवी थीं। और उनके बेटे हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास की वालिदा थीं। हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में उनका अकसर आना-जाना रहता था। उन्होंने एक बार अर्ज़ किया: या रसूलल्लाह! मैंने ख़्वाब देखा है कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के जिस्म मुबारक का एक टुकड़ा मेरे घर में गिरा है। आपने इसकी ताबीर इस तरह से दी कि फ़ातिमा के एक बच्चा पैदा होगा (और) तुम उसे दूध पिलाओगी।

जब हज़रत हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु पैदा हुए तो यह उनको ले गईं और उनकी परवरिश शुरू कर दी। एक बार उनको लेकर नबी पाक की ख़िदमत में हाज़िर हुईं तो उन्होंने सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर पेशाब कर दिया। जैसे बड़े आदमियों का पेशाब नापाक है ऐसे ही बच्चा और बच्ची का पेशाब भी नापाक है। जब हज़रत लुबाबा रज़ियल्लाहु अन्हा ने देखा कि नबी पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का तहबन्द नापाक हो गया तो कहने लगीं कि लाइये धो दूँ। इस पर आपने फ़रमाया कि लड़के के पेशाब पर पानी डाला जाता है। (ख़ूब अच्छी तरह मल-मलकर धोने की ज़रूरत नहीं) और लड़की के पेशाब को धोया जाता है। दूसरी रिवायत में पानी डालने के बजाय छिड़कने के अलफ़ाज़ हैं। यानी लड़के के पेशाब पर पानी छिड़क दिया जाता है। इस छिड़कने का मतलब छींटे मारना नहीं है बल्कि ख़ूब मलकर न धोने को छिड़कने के अलफ़ाज़ से ताबीर फ़रमाया है।

लड़का हो या लड़की, जब दोनों ही का पेशाब नापाक है तो फ़र्क़ क्यों हुआ, कि लड़की के पेशाब को ख़ूब अच्छी तरह धोना लाज़िम हुआ और लड़के के पेशाब पर मले बग़ैर ही पानी बहा देने से कपड़ा पाक क़रार दे दिया गया। इसकी वजह आलिमों ने यह लिखी है कि लड़की के पेशाब में गाढ़ापन होता है और बदबू ज़्यादा होती है, इसलिए अच्छी तरह धोने को फ़रमाया। और लड़के के पेशाब में यह बात नहीं है, इसलिए पानी बहा देना ही काफ़ी हो जाता है। लेकिन यह मसला उसी बच्चे के पेशाब के बारे में है

जो दूध पीता हो, अगर दूध पीने का ज़माना ख़त्म हो गया तो उस वक़्त यह हुक्म न होगा, बल्कि उस सूरत में लड़के का पेशाब भी अच्छी तरह धोया जायेगा, जैसा कि अभी दूसरी हदीस में आता है।

हदीसः (255) हज़रत उम्मे कैस रज़ियल्लाहु अन्हा का बयान है कि मैं अपने बच्चे को हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में लेकर हाज़िर हुई। उस बच्चे ने खाना शुरू न किया था। (दूध पर गुज़ारा था)। उसको मैंने आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की गोद में बैठा दिया, उसने पेशाब कर दिया। फिर आपने बस इतना ही किया कि कपड़े पर पानी छिड़क दिया (यानी ख़ूब अच्छी तरह से नहीं धोया)।

तशरीहः ख़ूब अच्छी तरह से न धोने को पानी छिड़कने से ताबीर किया है। इस हदीस से साफ़ मालूम हो गया कि जिस लड़के के पेशाब को अच्छी तरह धोने की ज़रूरत नहीं बल्कि उसपर पानी बहा देना ही काफ़ी है, यह उस बच्चे के पेशाब के बारे में है जो दूध पीता बच्चा हो।

साथ ही यह भी मालूम हुआ कि हज़रात सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम (मर्द और औरत) अपने बच्चों को बरकत के लिए हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर किया करते थे। और यह भी मालूम हुआ कि हुज़ूरे पाक अपने बच्चों के अलावा दूसरे मुसलमानों के बच्चों से भी मुहब्बत फ़रमाते थे। और उनको गोद में बैठा लेते थे। बाज़ मर्तबा ये बच्चे आपके ऊपर पेशाब भी कर देते थे। इससे आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को बिल्कुल नागवारी नहीं होती थी।

फ़ायदाः जब कोई लड़का या लड़की पेशाब करने लगे चाहे किसी भी बड़े आदमी पर हो तो उसको डाँट-डपट न करो। ऐसा करने से पूरा पेशाब न कर सकेगा, दरमियान में रोक लेगा। और इससे पेशाब रुकने की तकलीफ़ हो जाने का अन्देशा हो जायेगा।

एक बार हज़रत हसन या हज़रत हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हुमा में से किसी ने नबी पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मुबारक पेट पर पेशाब कर दिया। वहाँ मौजूद लोगों ने उनको पकड़ना चाहा, आपने फ़रमाया छोड़ो मेरे बच्चे का पेशाब न रोको। चुनाँचे उनको छोड़े रखा। जब पूरा पेशाब कर लिया तो आपने पानी मंगाया और उसपर डाल दिया। (कन्ज़ुल उम्माल)

इसी से मिलता-जुलता अरब के एक देहाती का क़िस्सा है। उन्होंने अपनी

ना-जानकारी की वहज से मस्जिद के एक कोने में खड़े होकर पेशाब करना शुरू कर दिया। जो सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम उस वक़्त वहाँ हाज़िर थे, उन्होंने कहा हाय-हाय! जिसका मक़सद पेशाब से रोकना था। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मौजूद हज़रात को रोका और फ़रमायाः "उसको पेशाब कर लेने दो और पेशाब में रुकावट पैदा न करो" चुनाँचे सब ने उनको छोड़ दिया। जब उन्होंने पेशाब कर लिया तो नबी पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनको बुलाकर नर्मी से समझा दिया और पेशाब की जगह पर एक डोल पानी बहाने का हुक्म दे दिया। (मुस्लिम शरीफ़)

बात यह है कि पेशाब रुकने की तकलीफ़ अगर किसी बच्चे या बड़े आदमी को हो जाये तो यह ज़्यादा परेशानी की चीज़ है। रहा कपड़े और ज़मीन वग़ैरह का धोना तो यह आसान है।

कपड़े से मनी धोना

हदीसः (256) हज़रत सुलैमान बिन यसार रहमतुल्लाहि अलैहि (ताबिई) फ़रमाते हैं कि मैंने हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से दरियाफ़्त किया कि कपड़े में मनी (वीर्य) लग जाये तो (पाक करने के लिए) क्या किया जाये? हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने जवाब दिया कि मैं रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के कपड़े से मनी को धो देती थी, फिर आप उस कपड़े को पहनकर नमाज़ के लिए इस हाल में तशरीफ़ ले जाते थे कि धोने के निशान नज़र आते थे। (मिश्कात शरीफ़ पेज 52 जिल्द 1)

'मज़ी' और 'मनी' दोनों नापाक हैं

मर्द व औरत में अल्लाह तआला ने फ़ितरी तक़ाज़े रखे हैं। मियाँ-बीवी को जो एक-दूसरे की तरफ़ ख़ास मैलान होता है, उसे ख़्वाहिश और शहवत कहते हैं। जब शहवत होती है तो पहले-पहल कुछ गाढ़ा-सा पानी निकलता है, उससे शहवत (ख़्वाहिश) बढ़ती है। उस पानी को **मज़ी** कहते हैं। शहवत और ख़्वाहिश बढ़ते-बढ़ते फिर एक माद्दा ख़ारिज होता है जिसके निकल जाने पर ख़्वाहिश ख़त्म हो जाती है, उस माद्दे को **मनी** (वीर्य) कहते हैं।

मज़ी और मनी दोनों नापाक हैं। कपड़े या बदन पर (एक रुपये के फैलाव से) ज़्यादा मात्रा में लगी हों तो नमाज़ न होगी, उसको धोकर नमाज़ पढ़ें।

मज़ी से वुज़ू और मनी से ग़ुस्ल फ़र्ज़ हो जाता है

मज़ी निकलने से वुज़ू टूट जाता है, और जागते में या सोते में मनी

निकलने से गुस्ल फ़र्ज़ हो जाता है। अलबत्ता मर्दों को जो जिरयान की बीमारी हो जाती है जिसमें ख़्वाहिश के बग़ैर मनी के क़तरे आ जाते हैं, या औरतों को जो बीमारी की वजह से (लिकोरिया के मर्ज़ में) जो सफ़ेद पानी आता रहता है, उससे गुस्ल फ़र्ज़ नहीं होता। हाँ! उससे वुज़ू टूट जाता है।

मनी और मज़ी दोनों को अगर इस तरह धो डालें कि बदन या कपड़े से छूट जाये तो बदन और कपड़ा पाक हो जाता है। अलबत्ता मनी अगर ख़ूब गाढ़ी हो जो बताशे की तरह कपड़े पर जमकर सूख गयी हो, और उसमें पेशाब या कोई दूसरी नापाकी न मिल गयी हो तो ऐसी सूरत में ख़ूब रगड़ देने से भी कपड़ा पाक हो जाता है, बशर्तेकि रगड़ने से मनी बिल्कुल छूट जाये।

कुछ हदीसों में पाक करने का यह तरीक़ा भी आया है और यह तरीक़ा सिर्फ़ सूखी हुई मनी के लिए है। लेकिन हमारे ज़माने में चूँकि ग़िज़ायें ख़राब हैं, नक़ली घी, चर्बी और मिलावट की चीज़ें खायी जाती हैं, इसलिए ऐसी गाढ़ी मनी आजकल उमूमन नहीं होती, लिहाज़ा ऐसी सूरत में मनी तर (गीली) हो या ख़ुश्क (सूखी हुई) उसको धोकर ही कपड़ा पाक कर लें।

इस हदीस से जहाँ यह साबित हुआ कि मनी वाला कपड़ा धो देने से पाक हो जाता है, यह भी साबित हुआ कि औरत को चाहिये कि शौहर की ख़िदमत करे। उसके कपड़े धोये और दूसरी ख़िदमत अन्जाम दे।

साथ ही यह भी मालूम हुआ कि रसूले अकरम सल्ल० बन-ठनकर बाहर निकलने का ख़्याल न फ़रमाते थे। देखो! कपड़े से नापाक चीज़ धुली है, पानी के निशान नज़र आ रहे हैं, और आप उसी कपड़े को पहनकर नमाज़ पढ़ाने के लिए मस्जिद में तशरीफ़ ले जाते हैं। आजकल के लोगों में बनावट, ज़ाहिरी टीप-टाप और फ़ैशनबाज़ी का बहुत ख़्याल है। बहुत-से कपड़े रखने पड़ते हैं, जिनकी वजह से कर्ज़दार भी होते हैं। रिश्वत लेते हैं और तरह-तरह की परेशानियों में फंस जाते हैं। फिर यह बात अजीब है कि जिन लिबासों का रिवाज चल रहा हो, और जिस तरह की सिलाई का फ़ैशन चल रहा हो उसका और लिबास की चमक-दमक का ख़्याल तो बहुत करते हैं मगर पाकी का ख़्याल नहीं करते। यानी सफ़ाई-सुथराई को देखते हैं पाकी की तरफ़ ज़रा ख़्याल नहीं ले जाते। इस ज़माने के फ़ैशन-परस्त सौ दो सौ रुपये गज़ का कपड़ा पहनकर निकलते हैं जिसमें ज़रा-सी शिकन हो तो बाहर न निकलें, ज़ाहिरी टीप-टाप इस क़द्र, मगर पेशाब करके बिना इस्तिन्जा किए यूँ ही खड़े

हो जाते हैं। सैकड़ों रुपये के सूट में काफ़ी मिक़दार (मात्रा) में पेशाब भी भरा रहता है। यह नतीजा है अपने मेहरबान और शफ़क़त वाले नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पैरवी छोड़ने और दुश्मनों के रंग-ढंग और तौर-तरीक़े इख़्तियार करने का। अल्लाह तआ़ला हमारी इससे हिफ़ाज़त फ़रमाए।

घी वग़ैरह पाक करने का तरीक़ा

हदीसः (257) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब चूहा घी में गिर जाये (और गिरकर मर जाये) अगर घी जमा हुआ है तो उस चूहे को और उसके आस-पास के घी को निकाल डालो। और अगर घी पिघला हुआ हो तो तुम उसके क़रीब भी न जाओ। (मिश्कात शरीफ़ पेज 361)

तशरीहः इस हदीस में यह मसला बयान किया गया है कि अगर घी जमा हुआ हो और उसमें मरा हुआ चूहा गिर जाये या गिरकर मर जाये तो उस चूहे को और उसके आस-पास के घी को फेंक दिया जाये और बाक़ी घी को इस्तेमाल कर लिया जाये। क्योंकि जमे हुए घी में नापाकी का असर ज़्यादा अन्दर नहीं पहुँचेगा। और अगर घी जमा हुआ न हो, और उसमें मरा हुआ चूहा गिर जाये या गिरकर मर जाये तो उसका इस्तेमाल करना जायज़ नहीं है। जितनी जगह में मरा हुआ चूहा गिरा है वह जगह और उसके अ़लावा सारा घी नापाक हो गया। उसके पाक करने का तरीक़ा अभी हम लिखेंगे। उससे पहले यह समझ लें कि घी बतौर मिसाल बताया है और चूहे का ज़िक्र भी बतौर मिसाल आ गया है। घी की तरह अगर कोई और जमी हुई चीज़ हो जैसे तेल, वनस्पति घी, शीरा, चर्बी वग़ैरह, उसके अन्दर अगर मरा हुआ चूहा या कोई नापाक चीज़ गिर जाये तो जितनी जगह में वह नापाक चीज़ पड़ी हो उस जगह और उसके आस-पास से थोड़ा-थोड़ा लेकर फेंक दिया जाये और बाक़ी इस्तेमाल कर लिया जाये।

और अगर जमी हुई चीज़ न हो बल्कि बहती हुई चीज़ हो तो इस तरह कुछ हिस्सा फेंक देने से पाक न होगा बल्कि उसे तीन बार धोकर पाक किया जाये। जिसका तरीक़ा यह है कि जिस क़द्र तेल या घी हो उतना ही या उससे ज़्यादा पानी डालकर पकाया जाये। जब वह पानी जल जाये तो फिर उतना ही पानी डालकर पकाया जाये। जब दूसरी बार डाला हुआ पानी भी जल जाये तो

तीसरी बार फिर उतना ही पानी डालकर पकाया जाये। जब तीसरी बार का पानी भी जल जाये तो तेल या घी जो भी कुछ था पाक हो जायेगा।

और एक तरीक़ा यह है कि जितना घी या तेल हो उतना ही पानी डालकर हिलाओ, जब पानी ऊपर आ जाये तो उसको किसी तरह उठा लो। फिर उतना ही पानी डालकर हिलाओ, जब पानी ऊपर आ जाये तो उसको किसी तरह उठा लो। फिर तीसरी बार ऐसा ही करो। इस तरह से घी, तेल पाक हो जायेगा। अगर नापाक हो जाने के बाद घी-तेल जम गया है तो उसको आग पर रख दो ताकि पिघल जाये, उसके बाद ज़िक्र हुए तरीक़े से पाक कर लो।

ऊपर की हदीस के मज़मून से यह मसला भी निकल आया कि अगर आटा गूंधा हुआ हो, और उसमें कुत्ता या बन्दर मुँह डालकर झूठा कर दे तो जहाँ उसका मुँह लगा है अगर उस जगह से थोड़ा-थोड़ा सा निकाल दिया जाये तो बाक़ी आटा इस्तेमाल किया जा सकता है।

मसलाः ज़िन्दा चूहा पानी या घी वग़ैरह में गिर जाये तो नापाक नहीं होगा। हाँ! चूहे का झूठा मक्रूह है।

खाल पाक करने का तरीक़ा

हदीसः (258) हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि उम्मुल-मोमिनीन हज़रत मैमूना रज़ियल्लाहु अन्हा की बाँदी को किसी ने सदक़े में एक बकरी दे दी थी। बाद में वह बकरी मर गयी। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का उधर से गुज़र हुआ तो आपने फ़रमायाः तुमने इसकी खाल उतार कर दबाग़त करके (यानी उसको नमक या मसाला वग़ैरह लगाकर के इस्तेमाल के क़ाबिल बनाकर) अपने इस्तेमाल में क्यों न ले ली। लोगों ने अर्ज़ किया कि यह मुर्दार है (यानी अपनी मौत मरी है, शरई तरीक़े पर ज़िबह नहीं की गयी) आपने फ़रमाया सिर्फ़ इसका खाना हराम किया गया है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 53)

तशरीहः इनसानों के इस्तेमाल के लिए अल्लाह तआ़ला ने बहुत-सी चीज़ें पैदा फ़रमायी हैं, जिनके बर्तन वग़ैरह बना लेते हैं। फिर उन बर्तनों में इस्तेमाल करने की चीज़ें रखते हैं। ये चीज़ें (जिनसे बर्तन बनाते हैं) मादनियात (खनिज पदार्थ) भी हैं जैसे लोहा, ताँबा, पीतल, गिलट वग़ैरह और दरख़्तों की

लकड़ियाँ भी, और मिट्टी और पत्थर से भी बहुत-से बर्तन बनाये जाते हैं। और जानवरों की खालों से भी तैयार होते हैं। ख़ासकर पानी भरने के मश्क तो खाल ही के होते हैं। और बहुत-से इलाक़ों में तेल की कुप्पियाँ भी खाल से बनाते हैं।

जिसे हलाल जानवर को शरई तरीक़े पर ज़िबह कर लिया जाये तो उसकी खाल और गोश्त और चर्बी के पाक होने में कोई शक नहीं, अलबत्ता खाल में अगर किसी जगह गोबर या पेशाब लगा हुआ हो या ज़िबह करते वक़्त ख़ून लग गया हो तो उसको धो डाले। और शरीअ़त के मुताबिक़ ज़िबह किये हुए जानवर की खाल के लिए 'दबाग़त' की ज़रूरत नहीं है। वह बग़ैर दबाग़त के भी पाक है। और अगर कोई जानवर बग़ैर ज़िबह किये मर गया चाहे अपनी मौत मरा हो चाहे ऊपर से गिरकर मौत आयी हो या लाठी या बन्दूक़ से मारा गया हो। उसकी खाल और गोश्त और चर्बी नापाक हैं। ऐसे जानवर की खाल दबाग़त से पाक हो सकती है, अलबत्ता गोश्त और चर्बी वग़ैरह पाक नहीं हो सकते। ऊपर ज़िक्र हुई हदीस में यही मसला इरशाद फ़रमाया है कि अगर बकरी वग़ैरह शरई तौर पर ज़िबह किये बग़ैर मर जाये तो उसकी खाल को दबाग़त देकर काम में ला सकते हैं। दबाग़त के बाद अगर उसका मश्क बना लिया और उसमें पानी भर दिया तो वह पानी नापाक न होगा। अगर उस खाल के मोज़े, दस्ताने, सदरी, टोपी, कोट वग़ैरह बना लिया और इन चीज़ों के बदन पर होते हुए नमाज़ पढ़ ली तो नमाज़ हो जायेगी।

दबाग़त का मतलब यह है कि खाल को नमक या कोई मसाला, बबूल का बुरादा, मिट्टी वग़ैरह लगाकर गंदगी दूर कर दी जाये और उसको सुखा दिया जाये, जिससे सड़ने से महफ़ूज़ हो जाये।

मसलाः जिन जानवरों का खाना हराम है जैसे शेर, भेड़िया, गीदड़, बन्दर वग़ैरह, उनकी खाल भी दबाग़त से पाक हो जाती है।

मसलाः अगर इन जानवरों को **बिस्मिल्लाहि अल्लाहु अकबर** कहकर कोई मुसलमान ज़िबह कर दे तब भी इनकी खाल पाक हो जाती है। इस सूरत में सुखाना, दवा लगाना, पाक होने के लिए शर्त नहीं है। लेकिन जिसका गोश्त खाना हराम है, उसका गोश्त शरई तौर पर ज़िबह करने से भी हलाल न होगा। अलबत्ता इस तरह उसकी खाल पाक हो जायेगी।

मुसलमान औरतों से

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बातें

* औरतों के लिए *

तकलीफ़ों और मुसीबतों

पर

सब्र करने का सवाब

लेखक

हज़रत मौलाना आशिक़ इलाही साहिब बुलन्द शहरी

रहमतुल्लाहि अलैहि

अनुवादक: मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा. लि.)

422, मटिया महल, उर्दू मार्किट, जामा मस्जिद

देहली-110006

तकलीफ़ों और मुसीबतों पर सब्र करने का सवाब

मुसीबतों और तकलीफ़ों पर सब्र करने की फ़ज़ीलत और जिस्मानी बीमारियों पर सब्र करने का सवाब

हदीसः (259) हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि एक बार हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उम्मे साइब रज़ियल्लाहु अन्हा के पास तशरीफ़ ले गये (यह एक सहाबी औरत थीं) आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनका हाल देखकर दरियाफ़्त कियाः तुम क्यों कपकपा रहीं हो? कहने लगीं बुख़ार चढ़ा हुआ है, इसका नास हो। आपने इरशाद फ़रमायाः बुख़ार को बुरा न कहो, क्योंकि यह इनसानों के गुनाहों को इस तरह दूर कर देता है जैसे लोहे के मैल-कुचैल को (आग की) भट्टी दूर कर देती है।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 135)

तशरीहः औरतों को कोसने-पीटने और दुनिया भर की चीज़ों को बुरा-भला कहने की आदत होती है। बच्चों को भी कोसती रहती हैं। जानवरों तक के बारे में उलटे-सीधे अलफ़ाज़ इस्तेमाल करती हैं।

हज़रत उम्मे साइब रज़ियल्लाहु अन्हा को बुख़ार चढ़ा हुआ था, नबी पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनकी मिज़ाज-पुरसी फ़रमायी, और हाल मालूम किया। उन्होंने औरतों की आदत के मुताबिक़ कह दिया कि बुख़ार ने तकलीफ़ दे रखी है, ख़ुदा इसका बुरा करे।

नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को यह बात पसन्द न आई। आपने फ़रमाया कि बुख़ार को बुरा न कहो, क्योंकि उसने कोई ख़ता नहीं की, और यह मोमिन बन्दों का मोहसिन (एहसान करने वाला) भी है, क्योंकि बुख़ार की वजह से गुनाह धुल जाते हैं और ख़ताएँ दूर हो जाती हैं। जो चीज़ गुनाह माफ़ कराने का जरिया हो उसको बुरा कहना मोमिन की शान नहीं है।

एक बार नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मजलिस में बुख़ार

का ज़िक्र हुआ। मजलिस में मौजूद किसी ने बुख़ार को बुरा कह दिया। उस शख़्स से भी आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यही फ़रमाया कि उसे बुरा-भला न कहो, क्योंकि यह गुनाहों से ऐसा साफ़ करते हैं जैसे आग लोहे का मैल-कुचैल साफ़ कर देती है। (इब्ने माजा)

एक और हदीस में है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक बीमार की इयादत की (यानी उनकी बीमारी क हाल पूछा) उनको भी बुख़ार चढ़ा हुआ था। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनसे फ़रमाया कि तुम ख़ुश हो जाओ क्योंकि अल्लाह तआला ने फ़रमाया है कि यह बुख़ार मेरी (पैदा की हुई ख़ास क़िस्म की) आग है। दुनिया में अपने मोमिन बन्दों पर मुसल्लत करता हूँ ताकि (गुनाहों की वजह से) कियामत के दिन जो आग का अज़ाब होना है उसके बदले यह बुख़ार की तकलीफ़ दुनिया में उसकी जगह ले ले। (इब्ने माजा)

बीमारी की शक्ल में जो तकलीफ़ें मोमिन बन्दों को होती हैं, मुबारक हैं। अल्लाह तआला से तकलीफ़ माँगनी तो न चाहिये लेकिन अगर तकलीफ़ आ जाये तो दिल की ख़ुशी से सब्र करो। आफ़ियत की दुआ भी करते रहो, लेकिन तकलीफ़ की वजह से अज्र व सवाब की भी पुख़्ता उम्मीद रखो। बीमारियाँ गुनाहों के लिए कफ़्फ़ारा (गुनाहों को धोने वाली) बन जाती हैं, और सवाब की उम्मीद रखने से बीमारी की तकलीफ़ हल्की हो जाती है। मोमिन बन्दों की अजीब शान है, तन्दुरुस्त होते हैं तो ख़ूब इबादत करते हैं, बीमार होते हैं तो सब्र करके सवाब पाते हैं। और बीमारी गुनाहों का कफ़्फ़ारा (गुनाहों को धोने वाली) बन जाती है और चूँकि बीमारी बहुत बड़ा फ़ायदा है इसलिए मोमिन बन्दों के हक़ में बीमारी मुसीबत नहीं रहती और तकलीफ़ की वजह से जो नेक आमाल छूट जाते हैं उनका सवाब भी मिलता है।

हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब तकलीफ़ वाले बन्दों को क़ियामत के दिन सवाब मिलने लगेगा तो आफ़ियत वाले लोग जो बीमार नहीं होते थे, तमन्ना करेंगे कि काश! दुनिया में हमारी खालें कैंचियों से काटी जातीं। (ताकि बहुत ज़्यादा अज्र व सवाब के हक़दार होते)। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि मैं एक बार नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास हाज़िर हुआ। उस वक़्त

आप बुख़ार में मुब्तला थे। मैंने जो हाथ लगाया तो बहुत तेज़ बुख़ार महसूस हुआ। अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! आपको बहुत सख़्त बुख़ार आता है? फ़रमाया हाँ! मेरा बुख़ार तुम में से दो आदमियों के बुख़ार के बराबर होता है। मैंने अ़र्ज़ किया यह इस वजह से है कि आपका सवाब दोहरा है? फ़रमाया हाँ! उसके बाद इरशाद फ़रमायाः जिस किसी मुसलमान को बीमारी या और किसी वजह से तकलीफ़ पहुँचे तो अल्लाह तआ़ला ज़रूर उसके ज़रिये से उसके गुनाहों को इस तरह मिटा देंगे जैसे दरख़्त से पत्ते गिर जाते हैं। (बुख़ारी व मुस्लिम)

एक हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मोमिन की ऐसी मिसाल है जैसे खेती के पौधों को हवायें झुकाती चली जाती हैं। कभी गिराती हैं, कभी सीधा कर देती हैं। (इसी तरह मोमिन बन्दा कुछ न कुछ दुख-तकलीफ़ में रहता है, यहाँ तक कि उसकी मौत आ जाये)। और मुनाफ़िक़ की मिसाल ऐसी है जैसे सर्व का पेड़ जो अच्छी तरह से ज़मीन में जमा हुआ और सख़्त हो। (हवायें उसे हिलाती-झुलाती नहीं हैं) यहाँ तक कि उसका उखड़ना एक ही बार में हो जाता है। (बुख़ारी व मुस्लिम)

मतलब यह है कि मुनाफ़िक़ को चूँकि आख़िरत में बख़्शना नहीं है इसलिए उसकी ख़ताओं के बख़्शने के इन्तिज़ार की ज़रूरत नहीं। लिहाज़ा बीमारियाँ भेजकर उसके गुनाहों का कफ़्फ़ारा (गुनाहों को ख़त्म करने वाला) नहीं किया जाता। ज़िन्दगी भर ठीक-ठाक ऐश व आराम और मज़े से रहता है, फिर जब आख़िरत में अ़ज़ाब होगा तो बहुत ही सख़्त होगा।

एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्ल० ने फ़रमाया बेशक मोमिन बन्दा जब बीमार हो जाये फिर अल्लाह उसको आराम दे दें, तो यह उसके पिछले गुनाहों का कफ़्फ़ारा (गुनाहों का बदला) हो जाता है, और आईन्दा के लिए नसीहत हो जाती है। (कि गुनाहों से परहेज़ करे) और जब मुनाफ़िक़ (कभी-कभार) बीमार हो जाता है और उसके बाद आ़फ़ियत (चैन-सुकून) पा लेता है तो उससे कोई सबक़ नहीं लेता)। उसकी ऐसी मिसाल है जैसे ऊँट को उसके मालिकों ने बाँध दिया, फिर छोड़ दिया। उसे कुछ पता न चला कि उन्होंने क्यों बाँधा और फिर क्यों छोड़ा?

मजलिस में यह बात हो ही रही थी कि एक शख़्स ने कहाः या रसूलल्लाह! बीमारी क्या चीज़ है? मैं तो कभी बीमार ही नहीं हुआ। आप

सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि हमारे पास से उठ जा, क्योंकि तू हमारी जमाअ़त में से नहीं है। (अबू दाऊद शरीफ़)

देखो! कैसी बड़ी बात है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उस शख़्स को फ़रमा दिया कि तू हमारी जमाअ़त में से नहीं है। इससे मालूम हुआ कि दुख-तकलीफ़ मोमिन की ख़ास निशानी है, और उससे घबराना नहीं चाहिये। और बीमारी को बुरा कहना इस वजह से भी दुरुस्त नहीं है कि उसके ज़रिये गुनाह माफ़ होते हैं, और इस वजह से भी कि बीमारी अल्लाह का भेजी हुई है। जो तकलीफ़ है अल्लाह के हुक्म से है, इसमें बीमारी और मुसीबत का क्या कसूर है? कायनात का पैदा करने वाला (यानी अल्लाह पाक) जो चाहेगा वह होगा।

हदीसः (260) हज़रत अ़ता रज़ियल्लाहु अ़न्हु का बयान है कि हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने मुझसे फ़रमाया कि मैं तुम्हें एक जन्नती औ़रत न दिखाऊँ? मैंने अ़र्ज़ किया हाँ! (ज़रूर दिखायें) इस पर उन्होंने एक औ़रत की तरफ़ इशारा करते हुए फ़रमाया कि (देखो) यह काले रंग की औ़रत है (इसके बारे में जन्नती होने की ख़ुशख़बरी है। (क़िस्सा इसका यह है कि) यह नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुई और अ़र्ज़ कियाः या रसूलल्लाह! मुझे (मिर्गी का) दौरा पड़ जाता है और उस दौरे में मेरे बदन के हिस्सों से कपड़ा हट जाता है और जिस्म के अंग खुल जाते हैं। आप अल्लाह पाक से दुआ़ फ़रमा दीजिये कि मेरी यह तकलीफ़ दूर हो जाये। नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अगर तुम चाहो तो सब्र करो, तुम्हें उसके बदले जन्नत मिलेगी, और अगर तुम चाहो तो मैं दुआ़ कर दूँगा कि अल्लाह पाक आ़फ़ियत (चैन-सुकून) दे दे। यह सुनकर उन्होंने कहा कि मैं सब्र करती हूँ। आप यह दुआ़ फ़रमा दें कि दौरे के वक़्त मेरे कपड़े न खुला करें। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उसके लिए यह दुआ़ फ़रमा दी। (मिश्कात शरीफ़ पेज 137)

तशरीहः इस हदीस में भी यही बात बतायी और समझायी गयी है कि बीमारियाँ और तकलीफ़ें मोमिन बन्दों के लिए नेमत हैं। जो शख़्स मर्द हो या औ़रत तकलीफ़ पर सब्र कर ले और बीमारी की बेचैनी को सह ले उसके लिए बड़े दरजे हैं। सहाबी मर्द और औ़रतें हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बातों पर पुख़्ता यकीन रखते थे और जन्नत मिल जाने को बड़ी

दौलत समझते थे, इसी वजह से तो उस सियाह-फ़ाम (काले रंग की) औरत ने जिसका हदीस शरीफ़ में ज़िक्र हुआ जन्नत की खुशख़बरी का यकीन रखते हुए सब्र ही को इख़्तियार किया, और हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से आफ़ियत की दुआ न कराने की तरजीह दी। अलबत्ता इस दुआ की ख़्वाहिश की कि दौरा पड़ने के वक़्त जिस्म न खुला करे। इस ज़माने के लोग क़ुरआन व हदीस की तालीमात से दूर जा रहे हैं, इसलिए कोई तकलीफ़ आती है तो बेसब्री में चीख़ उठते हैं और बीमारी पर सब्र करके अज्र व सवाब लेने पर ज़रा भी ज़ेहन नहीं ले जाते।

हज़रत यहया बिन सईद (ताबिई रहमतुल्लाहि अलैहि) का बयान है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मौजूदगी में एक शख़्स बीमारी में मुब्तला हुए बग़ैर वफ़ात पा गये। यह सुनकर हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः कैसी अफ़सोसनाक बात कह रहे हो, तुम्हें पता नहीं, अगर अल्लाह उसको बीमारी में मुब्तला फ़रमाते तो उसके गुनाहों का कफ़्फ़ारा फ़रमा देते। (यानी उसके गुनाहों को माफ़ फ़रमा देते) (मुवत्ता इमाम मालिक)

एक हदीस में है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से दरियाफ़्त किया गया कि किन लोगों को ज़्यादा तकलीफ़ में डाला जाता है। आपने फ़रमायाः सबसे ज़्यादा तकलीफ़ में हज़रात अम्बिया अलैहिमुस्सलाम मुब्तला होते हैं। फिर उनके बाद जो जिस क़द्र ऊँचे दरजे वाला होता है उसी क़द्र तकलीफ़ों में मुब्तला होता है। (फिर फ़रमाया) इनसान अपनी दीनी हैसियत के मुताबिक़ मुब्तला किया जाता है। अगर दीन में सख़्त है तो उसकी तकलीफ़ और सख़्त हो जाती है, और अगर अपने दीन में नर्म यानी कमज़ोर है तो उसके लिए ख़ुदा पाक की तरफ़ से आसानी कर दी जाती है। (बराबर इसी तरह तकलीफ़ें रहती हैं) यहाँ तक कि यह (दीन से जुड़ा हुआ) शख़्स ज़मीन पर इस हाल में चलता-फिरता है कि उसपर तकलीफ़ों की वजह से कोई गुनाह बाक़ी नहीं रहता। (तिर्मिज़ी, इब्ने माजा)

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जब अल्लाह तआला अपने बन्दे के साथ भलाई का इरादा फ़रमाते हैं तो उसके गुनाहों की सज़ा दुनिया में ही मौत से पहले दे देते हैं। और जब किसी को अज़ाब में मुब्तला करना चाहते हैं तो दुनिया में उसके गुनाहों के बदले में सज़ा नहीं देते, और

सज़ा को रोक लेते हैं, ताकि क़ियामत के दिन पूरी सज़ा दें। (तिर्मिज़ी)

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से यह भी रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि बड़ा इनाम, बड़ी मुसीबत के साथ वाबस्ता (लगा हुआ और जुड़ा हुआ) है, और बेशक अल्लाह तआ़ला जब किसी क़ौम से मुहब्बत फ़रमाते हैं तो उनको मुसीबत में मुब्तला फ़रमा देते हैं। उस मुसीबत पर जो ख़ुदा तआ़ला से राज़ी रहा उसके लिए अल्लाह की रिज़ा है, और जो नाराज़ हुआ अल्लाह भी उससे नाराज़ होगा।

(तिर्मिज़ी, इब्ने माजा)

हदीसः (261) हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि मोमिन बन्दा मर्द हो या औरत बराबर तकलीफ़ों में मुब्तला किया जाता है, और ये तकलीफ़ें उसकी जान में और माल में और औलाद में आती रहती हैं। इन तकलीफ़ों की वजह से मोमिन बन्दा इस हाल में हो जाता है कि उसपर कोई गुनाह भी बाक़ी नहीं रहता। (मिश्कात शरीफ़ पेज 136)

तशरीहः इस हदीस से साफ़ मालूम हुआ कि तकलीफ़ों की वजह से मोमिन के गुनाहों का कफ़्फ़ारा होता है। कोई ज़रूरी नहीं कि उसके लिए उसके जिस्म में ही तकलीफ़ पहुँचे, बल्कि उसकी जान को जो तकलीफ़ पहुँचे और औलाद को जो तकलीफ़ पहुँचे और माल में जो नुक़सान पहुँचे, यह सब गुनाहों का कफ़्फ़ारा है, और यह मोमिन के हक़ में इस एतिबार से बेहतर भी है कि सिर्फ़ जिस्म ही पर सारी तकलीफ़ें आतीं तो जीना दूभर हो जाता। गुनाहों का कफ़्फ़ारा हो जाये और दरजे बुलन्द हो जायें इसके लिए अल्लाह तआ़ला ने मुसीबतों को बाँट दिया। कुछ जान में, कुछ माल में, कुछ औलाद में तकलीफ़ें तक़सीम कर दी गईं।

और यह बात भी जान लेनी चाहिये कि औलाद के दुख-दर्द पर औलाद को सवाब अपनी जगह मिलता है और बच्चों को जो तकलीफ़ होती है माँ-बाप को उनका अलग मुस्तक़िल सवाब मिल जाता है। मोमिन बन्दे का काम यह है कि सब्र व शुक्र के साथ ज़िन्दगी गुज़ारता रहे। तकलीफ़ तो काफ़िरों को भी पहुँचती है, लेकिन मोमिन और काफ़िर की तकलीफ़ में ज़मीन-आसमान का फ़र्क़ है। मोमिन अपनी तकलीफ़ पर अज्र व सवाब लेता है और आख़िरत में दरजे पायेगा। और काफ़िर को जो तकलीफ़ पहुँचती है

उसकी वजह से आख़िरत में उसे कुछ मिलने वाला नहीं। गोया मुसलमान को तकलीफ़ पहुँचती ही नहीं, जिस तकलीफ़ की आख़िरत में कीमत मिल गयी वह क्या तकलीफ़ है? देखो! दुनिया कमाने के लिए मज़दूर और काश्तकार और व्यापारी लोग कितनी तकलीफ़ उठाते हैं लेकिन उस तकलीफ़ को ख़ुशी से सहते हैं बल्कि तकलीफ़ ही नहीं समझते, क्योंकि उसका नफ़ा मिलता रहता है।

मोमिन का हर हाल बेहतर है। तकलीफ़ में सब्र करता है तो उसका भी सवाब पाता है, और आराम में शुक्र करता है तो उसका भी सवाब पाता है। ग़रज़ यह कि चित और पट दोनों में फ़ायदा है। जब यह बात है तो मोमिन को किसी हाल में परेशान होने का कोई मौक़ा नहीं।

हज़रत अबू सईद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः मुसलमान को जो कुछ दुख-तकलीफ़, थकन और परेशानी, रंज और चिन्ता और घुटन पहुँच जाये तो उसके ज़रिये अल्लाह पाक उसके गुनाहों का कफ़्फ़ारा फ़रमा देते हैं। यहाँ तक कि अगर काँटा भी लग जाये तो वह भी गुनाहों के माफ़ होने का ज़रिया बन जाता है। (बुख़ारी व मुस्लिम)

औलाद की मौत पर सब्र करने का सवाब और आख़िरत का फ़ायदा

हदीसः (262) हज़रत अबू सईद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में एक सहाबी औरत रज़ियल्लाहु अन्हा हाज़िर हुए और अर्ज़ कियाः या रसूलल्लाह! आपकी बातें मर्दों ने ख़ूब हासिल कर लीं (और हम मेहरूम रही जा रही हैं)। लिहाज़ा अपनी तरफ़ से एक दिन हमारे लिए मुक़र्रर फ़रमा दें, जिसमें हम आपकी ख़िदमत में हाज़िर हों और आप उन मालूमात में से जो अल्लाह तआला ने आपको अता फ़रमायी हैं, हमको बतायें। यह सुनकर आपने इरशाद फ़रमायाः (अच्छा) फ़लाँ-फ़लाँ दिन तुम फ़लाँ जगह जमा हो जाना। चुनाँचे मुक़र्ररा दिन और जगह पर सहाबी औरतें जमा हो गईं। उसके बाद नबी पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ ले गये और उनको अल्लाह के दिये हुए उलूम में से बहुत कुछ बताया। फिर फ़रमाया कि तुममें से जो औरत अपनी ज़िन्दगी में तीन बच्चे पहले से आख़िरत में भेज देगी (यानी तीन बच्चों की मौत पर सब्र

कर लेगी) तो यह बच्चों का पहले से चला जाना उस औरत के लिए दोज़ख़ से आड़ बन जायेगा। उनमें से एक औरत ने सवाल कियाः या रसूलल्लाह! अगर दो ही बच्चों को आगे भेजा हो? यानी किसी औरत के दो ही बच्चे फ़ौत हुए और उन्हीं पर सब्र करने का मौक़ा मिला, तीसरे की मौत की नौबत ही न आयी, तो क्या दो बच्चों पर सब्र करने का भी यही दरजा है? नबी पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अभी तक जवाब न देने पाए थे कि उसने फिर यही सवाल दोहरा दिया। नबी पाक ने फ़रमायाः और दो बच्चे भेज देने का भी यही दरजा है, दो बच्चे भेज देने का भी यही दरजा है।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 153)

तशरीहः इस हदीस से मालूम हुआ कि नबी पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुबारक ज़माने में औरतों को दीनी मालूमात हासिल करने का बड़ा शौक़ था। और यह भी मालूम हुआ कि जब पहले औरतें जमा हो गईं तब उसके बाद हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ ले गये। औरतों की वअ़ज़ (दीनी बयान) की मजलिस में जब कोई मर्द बयान करने जाये तो उसके लिए सुन्नत तरीक़ा मालूम हो गया कि जब सब औरतें जमा हो जायें तब पहुँचे। इसमें पर्दे का ज़्यादा एहतिमाम है। क्योंकि वअ़ज़ करने वाले की नज़र आने वालियों पर न पड़ेगी।

इस हदीस में तीन बच्चों और दो बच्चों पर सब्र करने का मर्तबा (दरजा और सवाब) बताया है। दूसरी हदीसों से साबित है कि एक बच्चे पर सब्र करना भी दोज़ख़ से महफ़ूज़ होने का ज़रिया है। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि जिसने ऐसे तीन बच्चे अपने आगे भेज दिये जो बालिग़ नहीं हुए थे तो ये बच्चे उसके लिए दोज़ख़ से हिफ़ाज़त करने के लिए मज़बूत क़िला बन जायेंगे। हज़रत अबूज़र सहाबी रज़ियल्लाहु अ़न्हु भी वहीं मौजूद थे, उन्होंने अ़र्ज़ किया मैंने तो दो ही बच्चे आगे भेजे, आप सल्ल० ने फ़रमाया दो बच्चे भेजने का भी यही दरजा है। हज़रत उब्बी बिन कअ़ब ने फ़रमाया कि मैंने तो एक ही बच्चा आगे भेजा है, आपने फ़रमाया कि एक बच्चा भेजने का भी यही दरजा है। (मिश्कात शरीफ़)

आगे भेजने का मतलब यह है कि बच्चा माँ-बाप की ज़िन्दगी में उनसे पहले मर गया। और एक हदीस में है कि नबी पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः क़सम उस ज़ात की जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है, बेशक

गिरा हुआ हमल (गर्भ) भी नाफ़ के ज़रिये अपनी माँ को खींचकर जन्नत में पहुँचा देगा, बशर्तेकि उसकी माँ ने अल्लाह तआ़ला से अज्र व सवाब की उम्मीद रखी हो। (मिश्कात शरीफ़)

बच्चों की मुहब्बत एक फ़ितरी चीज़ है। माँ-बाप को बच्चे से बहुत मुहब्बत होती है। ख़ासकर माँ की ममता तो मशहूर ही है। बच्चे की ज़रा-सी तकलीफ़ नहीं देख सकती। अगर बच्चा मर जाये तो माँ का बुरा हाल बन जाता है और उसके दिल को सख़्त सदमा होता है। उस वक़्त सारी ख़ुशियाँ मिट्टी हो जाती हैं, इसी लिए माँ बाप के सब्र करने का बहुत बड़ा दरजा है।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह फ़रमाते हैं कि जब मैं अपने बन्दे के प्यारे को उठा लूँ और वह सवाब का यक़ीन करे तो उसका बदला जन्नत के सिवा कुछ नहीं। (बुख़ारी शरीफ़)

हज़रत अबू मूसा अश्अ़री रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः जब बन्दे का कोई बच्चा फ़ौत हो जाये (यानी मर जाए) तो अल्लाह तआ़ला फ़रिश्तों से फ़रमाते हैं कि क्या तुमने मेरे बन्दे के बच्चे को क़ब्ज़ कर लिया है? वे अ़र्ज़ करते हैं हाँ! हमने ऐसा किया। फिर फ़रमाते हैंः क्या तुमने उसके दिल का फूल ले लिया? वे अ़र्ज़ करते हैं जी हाँ! फिर अल्लाह तआ़ला दरियाफ़्त फ़रमाते हैं (हालाँकि उनको सब कुछ मालूम है) कि मेरे बन्दे ने क्या कहा? वे अ़र्ज़ करते हैं अल्हम्दु लिल्लाह कहा, और इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊ़न पढ़ा। अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैंः मेरे बन्दे के लिए जन्नत में एक घर बना दो और उसका नाम "बैतुल-हम्द" (यानी तारीफ़ का घर) रख दो। (मिश्कात शरीफ़)

हज़रत क़ुर्रह मुज़नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि एक शख़्स हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में अपने बच्चे को लेकर आया करते थे। आपने उनसे पूछाः क्या तुम इस बच्चे से (बहुत ज़्यादा) मुहब्बत करते हो? उन्होंने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! अल्लाह आप से भी ऐसी मुहब्बत करे जैसी मैं इससे मुहब्बत करता हूँ। (यह उन्होंने अपनी समझ के मुताबिक़ कहा)। फिर आपने एक बार देखा कि उनका बच्चा साथ नहीं है। लोगों से पूछाः उनका बच्चा क्या हुआ? अ़र्ज़ किया वह मर गया। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनसे फ़रमायाः क्या तुम यह पसन्द करते हो

कि तुम्हारा बच्चा तुमको जन्नत के हर दरवाज़े पर इन्तिज़ार करता हुआ मिले? (मतलब यह है कि तुमने जो सब्र किया है उसका बदला इस तरह से मिलेगा कि जन्नत के जिस दरवाज़े से दाख़िल होना चाहोगे बच्चे को स्वागत के लिए मौजूद पाओगे)। एक शख़्स ने सवाल कियाः या रसूलल्लाह! क्या यह बात उसी शख़्स के लिए ख़ास है या हम सबके लिए है? आपने फ़रमायाः तुम सबके लिए है। (मिश्कात शरीफ़)

अधूरा बच्चा माँ-बाप को जन्नत में लेजाने के लिए झगड़ा करेगा

हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि बेशक अधूरा गिरा हुआ बच्चा (भी) अपने रब से झगड़ा करेगा जबकि उसके माँ-बाप दोज़ख़ में दाख़िल कर दिये गये हों। उस बच्चे से कहा जायेगा कि ऐ अधूरे बच्चे! जो अपने रब से झगड़ रहा है, अपने माँ-बाप को जन्नत में दाख़िल कर दे, लिहाज़ा अपनी नाफ़ के ज़रिये खींचता हुआ उनको जन्नत में दाख़िल कर देगा। (इब्ने माजा)

अपने किसी अज़ीज़ और रिश्तेदार की मौत पर सब्र कर लेना और अल्लाह से सवाब की उम्मीद कर लेना तो बड़े दरजे वाला काम है, लेकिन किसी मुसीबत में फंसे को तसल्ली देना भी बड़े दरजे की बात है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है:

जिसने किसी ऐसी औरत को तसल्ली दी जिसका बच्चा गुम हो गया हो या मर गया हो तो उसको जन्नत में चादरें पहनाई जायेंगी, यानी जन्नत में दाख़िल होकर यह शख़्स वहाँ के लिबास से फ़ायदा उठाने वाला होगा।

(तिर्मिज़ी शरीफ़)

फ़ायदाः यहाँ तक जो अनेक हदीसों का तर्जुमा लिखा गया है इससे मालूम हुआ कि मुसलमानों के लिए दुनियावी तकलीफ़ और मुसीबतें, बीमारियाँ और परेशानियाँ सब नेमतें हैं। इनके ज़रिये गुनाह माफ़ होते हैं, दरजे बुलन्द होते हैं और गुनाहों का कफ़्फ़ारा हो जाने की वजह से 'बरज़ख़' (मरने के बाद से कियामत के बीच के समय और ज़िन्दगी को बरज़ख़ कहते हैं) और कियामत के दिन के अज़ाब से हिफ़ाज़त हो जाती है। मोमिन बन्दों पर लाज़िम है कि सब्र व शुक्र के साथ हर हाल को बरदाश्त करते चलें और अल्लाह तआला से सवाब की बहुत ज़्यादा और पुख़्ता उम्मीद रखें और यकीन जानें

कि हमारे लिए सेहत व आफ़ियत भी ख़ैर है और दुख-तकलीफ़ भी बेहतर है।

असल तकलीफ़ तो काफ़िर की तकलीफ़ है। तकलीफ़ भी पहुँची और सवाब भी न मिला। मोमिन की तकलीफ़, तकलीफ़ नहीं है। इसका यह मतलब भी नहीं कि मुसीबत व तकलीफ़ और बीमारी की दुआ किया करें, या शिफ़ा की दुआ न माँगे, क्योंकि जिस तरह सब्र में सवाब है इसी तरह शुक्र में भी सवाब है। सवाल आफ़ियत (चैन-सुकून) ही का करें और करते रहें, और तकलीफ़ पहुँच जाये तो सब्र करें।

बहुत-से लोग जो आराम और राहत और दुख-तकलीफ़ की हिक्मत (मस्लेहत) और इस बारे में अल्लाह के कानून को नहीं जानते, बेतुकी बातें करते हैं। कहते हैं कि दुनिया की सारी मुसीबतें मुसलमान कौम ही पर आ पड़ती हैं। कभी कहते हैं कि काफ़िरों को तो महल और दुनियावी राहत व आराम और मुसलमान को सिर्फ़ आख़िरत की नेमतों का वयदा। कभी कहते हैं कि अल्लाह तआ़ला ने ग़ैरों को ख़ूब नवाज़ा है और अपनों को तंगदस्ती व फ़ाक़े और दूसरी मुसीबतों में रखा है, हालाँकि अपना होने की ही वजह से मुसलमानों को तकलीफ़ में मुब्तला फ़रमाया जाता है ताकि इनके गुनाह माफ़ हों, दरजे बुलन्द हों और आख़िरत में गुनाहों पर सज़ा न हो।

दर हकीकत यह बहुत बड़ी मेहरबानी है कि दुनिया की थोड़ी-बहुत तकलीफ़ में मुब्तला करके आख़िरत के सख़्त अ़ज़ाब से बचा दिया जाये। और काफ़िरों को चूँकि आख़िरत में कोई नेमत नहीं मिलनी, कोई आराम नसीब नहीं होना, बल्कि उनके लिए सिर्फ़ अ़ज़ाब ही अ़ज़ाब है, इसलिए उनको दुनिया ज़्यादा दे दी जाती है और उनपर मुसीबतें कम आती हैं। अगर किसी काफ़िर ने मख़्लूक़ की ख़िदमत वग़ैरह का कोई काम किया है तो उसका बदला इसी दुनिया में दे दिया जाता है ताकि आख़िरत में उसे ज़रा-सी ख़ैर और मामूली-सा आराम भी न मिले, और हमेशा-हमेशा के लिए दोज़ख़ में रहे।

बच्चे की मौत पर रंज होना और आँसू आ जाना सब्र के ख़िलाफ़ नहीं है

हदीसः (263) हज़रत उसामा बिन ज़ैद रज़ियल्लाहु अ़न्हु का बयान है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बेटी (हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अ़न्हा) ने आपकी ख़िदमत में ख़बर भेजी कि मेरा बेटा मरने के क़रीब है,

आप तशरीफ़ लायें। आपने जवाब में सलाम कहलाया और यह पैग़ाम भिजवाया कि बेशक अल्लाह जो कुछ ले वह उसी का है, और जो कुछ दे वह भी उसी का है। और हर चीज़ के लिए उसके यहाँ वक़्त मुक़र्रर है, लिहाज़ा सब्र करना चाहिये और सवाब की पुख़्ता उम्मीद रखें। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बेटी ने दोबारा क़सम देकर पैग़ाम भेजा कि ज़रूर ही तशरीफ़ लायें। आप रवाना हुए और आपके साथ सअ़द बिन उबादा, मुआ़ज़ बिन जबल, उब्बी बिन कअ़ब, ज़ैद बिन साबित रज़ियल्लाहु अ़न्हुम और दूसरे चन्द हज़रात थे। जब आप वहाँ पहुँचे तो बच्चा आपके हाथों में दे दिया गया। जो जान निकलने की हालत में था। बच्चे की हालत खुद देखकर आपकी दोनों आँखों से आँसू जारी हो गये। हज़रत सअ़द बिन उबादा रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अ़र्ज़ कियाः या रसूलल्लाह! यह क्या बात है? (आप रो रहे हैं?) आप सल्ल० ने फ़रमायाः यह रोना उस रहम के जज़्बे की वजह से है जो अल्लाह पाक ने अपने बन्दों के दिलों में पैदा फ़रमाया है। और अल्लाह तआ़ला रहम करने वालों पर रहम फ़रमाता है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 150)

तशरीहः हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने पहले तो अपनी बेटी को पैग़ाम भेजा कि बच्चे की वफ़ात पर सब्र करें और अल्लाह पाक की तरफ़ से मिलने वाले अज्र व सवाब का पुख़्ता यक़ीन रखें, और साथ ही साथ सब्र दिलाने वाला मज़मून भी बताया कि बन्दों को कोई चारा नहीं, न कोई दम मारने की मजाल है। अल्लाह ने जो कुछ दिया वह उसी की मिलकियत है, और जो कुछ उसने वापस लिया वह भी उसी का है। अगर देने वाला अपनी चीज़ वापस ले ले उसमें किसी को एतिराज़ का क्या मौक़ा है? ख़ुसूसन जबकि लेने वाला अपनी चीज़ ले रहा है और लेने के साथ बहुत बड़ा अज्र व सवाब का वायदा भी फ़रमा रहा है। ख़्वाह-मख़्वाह बेसब्री करके अपना सवाब खोना और ख़ुदा पाक को नाराज़ करना बहुत बड़ी नादानी और कम-अक़्ली है। जब आपकी बेटी ने दोबारा पैग़ाम भिजवाया और क़सम दिलायी तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ ले गये। बच्चे को उठाया तो मुबारक आँखों से आँसू जारी हो गये। यह कैफ़ियत देखकर हज़रत सअ़द बिन उबादा रज़ियल्लाहु अ़न्हु को ताज्जुब हुआ और बिना सोचे ही एक दम बोल पड़े कि या रसूलल्लाह! आप रो रहे हैं? हालाँकि आप सब्र की तलक़ीन फ़रमाते हैं। आपने फ़रमायाः यह रोना आ जाना ग़ैर-इख़्तियारी चीज़ है, जो रहमदिल होने

की दलील है। इस पर न पकड़ है और न यह सब्र के ख़िलाफ़ है।

जो चीज़ इख़्तियार में हो उसपर पकड़ है

असल बात यह है कि शरीअ़त में उन चीज़ों पर पकड़ है जो बन्दे के इख़्तियार में हों, और जो चीज़ इख़्तियार में न हो उसपर गिरफ़्त नहीं है। आँखों से आँसुओं का आ जाना बन्दे के इख़्तियार में नहीं है। इस पर न पकड़ है और न यह बेसब्री में शुमार है। हाँ! ज़बान को इस्तेमाल करना चूँकि एक इख़्तियारी चीज़ है इसलिए इस पर पकड़ हो जाती है। अगर अल्लाह पर एतिराज़ किया जाये, कुफ़्र के कलिमात बके जायें और जाहिलाना बातें ज़बान से निकाली जायें, तो इस पर पकड़ है। और अल्लाह पर एतिराज़ करने और कुफ़्रिया कलिमात बकने से कुफ़्र लागू हो जाता है।

बेसब्र जाहिलों और मज़मून लिखने वालों की बातें

बाज़ लोग कहते हैं: ख़ुदा को मेरा ही बच्चा लेना था, और कोई न मिला। ख़ुदा ने मुझपर ज़ुल्म किया। फ़लाँ शख़्स को कुदरत के बेरहम हाथों ने ऐसे वक़्त में हम से छीन लिया जबकि हमको उसकी बहुत ज़्यादा ज़रूरत थी। यह तो ताज़ियत (मरने वाले के प्रति उसके वारिसों से इज़हारे हमदर्दी करने) के लिखने वाले मज़ामीन लिखने वाले पढ़े लिखे जाहिल अख़बारों और पत्रिकाओं में लिखे जाते हैं। बाज़ औरतें शौहर या औलाद की मौत पर कहती हैं कि ऐ अल्लाह! तूने यह क्या किया? मैं अब क्या करूँगी? मुझे पहले मौत क्यों न दे दी? अल्लाह की पनाह! ये सब जाहिलाना बातें हैं। जिनसे ईमान जाता रहता है। मोमिन का काम तो यह है कि जो मुसीबत पहुँचे उसपर सब्र करे, और हर हाल में अल्लाह से राज़ी रहे। और मुसीबत पर आख़िरत के सवाब की पुख़्ता उम्मीद रखे।

मुँह पीटने और गिरेबान फाड़ने पर वईद

किसी के मर जाने पर मुँह पीटना, कपड़े फाड़ना, शोर मचाना, गिरेबान चाक करना, यह सब सख़्त मना है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"वह शख़्स हममें से नहीं है जो किसी मुसीबत पर अपने मुँह पर तमाँचे मारे, गिरेबान फाड़े और जाहिलीयत की दुहाई दे" (बुख़ारी व मुस्लिम)

यानी ऐसे अलफ़ाज़ ज़बान से निकाले जिनकी इस्लाम इजाज़त नहीं देता।

एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"अल्लाह तआ़ला आँख के आँसुओं और दिल के ग़म पर अ़ज़ाब नहीं देता, बल्कि ज़बान के सबब से अ़ज़ाब देता है या रहम फ़रमाता है"। (बुख़ारी व मुस्लिम)

मतलब यह है कि ज़बान से शरीअ़त के ख़िलाफ़ जो कलिमात निकलें उनपर गिरफ़्त है। और अगर ज़बान से जैसे **इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊ़न** पढ़ा या कोई और ख़ैर का कलिमा निकला, तो यह रहमत का सबब है।

हुज़ूरे पाक के एक बेटे का वाक़िआ़

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अपने बेटे हज़रत इब्राहीम रज़ियल्लाहु अ़न्हु की जान निकलने के वक़्त तशरीफ़ लाये, उस वक़्त आपकी आँखों से आँसू जारी हो गये। हज़रत अ़ब्दुर्रहमान बिन औ़फ़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अ़र्ज़ कियाः या रसूलल्लाह! आ़म लोग तो बच्चों की मौत पर रोते ही हैं, भला आप भी रोने लगे? आपने फ़रमायाः यह तबई रहमत है (जो अल्लाह पाक ने दिल में रखी है)। फिर फ़रमाया कि बेशक आँख रो रही है और दिल ग़मगीन है, और ज़बान से हम वही कहते हैं जिससे हमारा रब राज़ी हो। फिर फ़रमाया ऐ इब्राहीम! तुम्हारी जुदाई से हमको रंज है। (बुख़ारी व मुस्लिम)

किसी की मौत पर बयान करके रोना-पीटना लानत का सबब है

हदीसः (264) हज़रत अबू सईद रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने नौहा (मय्यित पर बयान करके रोना-पीटना) करने वाली पर और जो ध्यान देकर नौहा सुनने वाली हो उसपर (यानी दोनों पर) लानत भेजी है। (मिश्कात शरीफ़ पेज 151)

तशरीहः जैसा कि पहली हदीस की तशरीह से मालूम हुआ कि किसी की मौत पर बेइख़्तियार आँखों में आँसू आ जाना और दिल का रंजीदा होना पकड़ और गिरफ़्त की बात नहीं है। लेकिन ज़बान से जाहिलीयत की बातें निकालना और ख़ुदा तआ़ला पर एतिराज़ करना और अपने इख़्तियार से बुलन्द आवाज़ें निकालना, चीख़ना, चिल्लाना, शोर मचाना, कपड़े फाड़ना, इस्लाम में इन चीज़ों की बिल्कुल गुंजाइश नहीं है।

इस हदीस में इरशाद फ़रमाया है कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व

सल्लम ने नौहा करने (यानी मय्यित पर बयान करके रोने-पीटने) वाली औरत पर लानत फ़रमायी है। और उस औरत पर भी लानत फ़रमायी जो नौहा सुनने का इरादा करे और इसको पसन्द करे।

नौहा करने का यह मतलब है कि किसी मरने वाले पर रोये और उसकी ख़ूबियों को शुमार कराये। और बाज़ आलिमों ने फ़रमाया है कि बयान करने की भी क़ैद नहीं बल्कि सिर्फ़ आवाज़ के साथ रोने को नौहा कहा जाता है। औरतों को आदत होती है कि रिश्तेदार और क़रीबी, शौहर और औलाद की मौत पर नौहा करती हैं। चीख़ना, चिल्लाना, शोर मचाना, मय्यित को ख़िताब करना और यह कहना कि हाय मेरे प्यारे! ऐ मेरे जवान! ऐ बेटा! तू कहाँ गया, मुझे किसपर छोड़ा? तू ऐसा था, तू वैसा था। और इस तरह की बहुत-सी बातें पुकार-पुकारकर बयान करना और रोना-पीटना, महीनों तक के लिए मशग़ला बन जाता है। और बाज़ इलाक़ों में सालों-साल तक यह सिलसिला चलता है। ये बातें सख़्त मना हैं। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने नौहा करने वाली पर लानत फ़रमायी और साथ ही नौहा सुनने वाली पर भी। क्योंकि नौहा करने वाली का नौहा सुनने के लिए जो औरतें जमा हों वे नौहा करने का सबब बनती हैं। आम तौर पर नौहा करने वाली औरत तन्हाई में नौहा नहीं करती है।

जाहिलीयत की रस्मों की इस्लाम में कोई गुंजाइश नहीं

इस्लाम से पहले अरब में दस्तूर था कि औरतों में नौहा का अदला-बदला चलता था। किसी के मरने पर कोई औरत मरने वाले के घर आयी और वहाँ रो-पीटकर चली गयी। फिर जब रोने वाली के घर में कोई मरा तो उस घर की औरतें आकर उसके वहाँ रोती थीं, जिस घर में जाकर यह औरत रोकर आयी थी। जब एक औरत दूसरी औरत के घर रोने के लिए जाती थी तो घर वाली औरतें और यह वाली औरत सब मिलकर रोती थीं। इस तरह से बाहर से आकर रोने वाली का अमल घर वालों की रोने वाली का सहायक हो जाता था और इस अमल का नाम 'इसआद' रखते थे।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने औरतों से बैअत लेते हुए यह भी बैअत ली थी कि नौहा न करेंगी। एक बार जब आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम यह बैअत लेने लगे तो औरतों ने अर्ज़ किया: या

रसूलल्लाह! जाहिलीयत (इस्लाम से पहले) ज़माने में बहुत-सी औरतों ने हमारे नौहा में मदद दी है तो क्या इसकी गुंजाइश नहीं कि हम भी उनके रंज के मौके पर नौहा करके उनकी मदद करें। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः "इस्लाम में नौहा करने वाली की मददगारी की कोई गुंजाइश नहीं"। (निसाई शरीफ़)

बयान करके रोने का वबाल

बाज़ रिवायतों में है कि मय्यित को उसके घर वालों के रोने की वजह से अज़ाब दिया जाता है। इसके बारे में दीन के आलिमों ने फ़रमाया है कि यह अज़ाब उन लोगों को होता है जो यह वसीयत कर जाते हैं कि हमारे मरने पर नौहा करना। जैसा कि अरब के लोगों की आदत थी। वसीयत करने वाला चूँकि गुनाह की तरग़ीब (प्रेरणा) देने वाला बन गया, इसलिए मौत के बाद अज़ाब में मुब्तला होना समझ में आने वाली बात है। और बाज़ आलिमों ने फ़रमाया है कि अज़ाब का मतलब यह है कि जब औरत पुकारती हैः वह ऐसा था, तो फ़रिश्ते उस मरने वाले से सवाल करते जाते हैंः क्या तू ऐसा ही है जैसा कि तेरे घर वाले कहते हैं?

मालूम हुआ कि रोने वालों को रोकर अपनी मुहब्बत की रियाकारी और भड़ास निकालने के बजाय मरने वाले का ख़्याल करना चाहिये। क्योंकि जब उसके हालात और सिफ़तें बयान करके रोया जायेगा और उससे फ़रिश्ते पूछेंगेः क्या तू ऐसा ही है? तो इससे उसको तकलीफ़ होगी। अरब में यह भी रिवाज था कि जनाज़े के साथ रोने वाली औरतें जाया करती थीं। हुज़ूरे अक्दस सल्ल० ने इससे भी मना फ़रमाया। (इब्ने माजा पेज 113)

नौहा मर्दों के लिए भी मना है

नौहा करना मर्द व औरत सबके लिए मना है। हदीस शरीफ़ में औरतों का ज़िक्र ख़ास तौर पर इसलिए फ़रमाया कि यह मशग़ला ज़्यादातर औरतें ही करती हैं। मुल्ला अली क़ारी ने यही वजह बयान फ़रमाई है।

नौहा के बारे में जो सख़्त मनाही और लानत की वईद (धकमी और डाँट-डपट) आई है उससे वाकिफ़ होने के बावजूद अफ़सोस है कि चौदह सौ साल गुज़रने के बावजूद हज़रत हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु की शहादत के ज़िक्र के नाम से हर साल नौहा किया जाता है। गली-कूचों में, बाज़ारों में, मिलकर

गा-गाकर नौहा पढ़ते हैं। बाज़ शायरों ने नौहों के नाम से किताबें लिख दी हैं। और रुलाने वाले अश्आर जमा कर दिये हैं। उन किताबों को मिल-जुलकर पढ़ते हैं और रोते हैं, और यह समझते हैं कि हम सवाब का काम करते हैं, हालाँकि सख़्त गुनाह का काम करते हैं।

रोने के लिए जमा होना ग़ैर-इस्लामी है

किसी मुसीबत पर बेइख़्तियार रोना आ गया, तो यह एक तबई बात है जिसमें इनसान माज़ूर है। लेकिन रोने के लिए जमा होना, उसके लिए मजलिस आयोजित करना और रोने-रुलाने वाले अश्आर पढ़कर रंज ताज़ा करना, और रोने को अपने ऊपर मुसल्लत करना, इस्लाम में इसकी कोई गुंजाइश नहीं। राफ़ज़ियों का तो दीन ही इतना है कि मुहर्रम की दस तारीख़ को रो-पीट लिया करें। लेकिन अफ़सोस है कि बहुत-से सुन्नी मुसलमान भी उनके साथ हो जाते हैं। कोई तो जहालत की वजह से सवाब समझकर और कोई उनकी मजलिसों में रोज़ाना शिरकत पर मुक़र्रर उजरत मिलने की ख़ातिर शरीक होता है। यह सब गुनाह है। अल्लाह सब मुसलमानों की हिफ़ाज़त फ़रमाये।

हज़रत हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु से मुहब्बत का दावा और उनके नाना जान फ़ख़्रे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की नाफ़रमानी? (जिनकी वजह से हज़रत हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु से मुहब्बत है) यह कैसी उल्टी मनतिक़ है? और नाफ़रमानी भी मुहब्बत के उनवान से? यह और भी बड़ी हिमाक़त है।

नौहा करने वाली को आख़िरत में अज़ाब

हदीसः (265) हज़रत अबू मालिक अश्अरी रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि नौहा करने वाली औरत मौत से पहले तौबा न कर लेगी तो क़ियामत के दिन इस हाल में खड़ी की जायेगी कि उसके बदन पर एक कुर्ता 'क़तिरान' का होगा, और एक कुर्ता खुजली का होगा। (मिश्कात शरीफ़ पेज 150)

तशरीहः इस हदीस में नौहा करने वाली औरत की सज़ा का ज़िक्र है, जो क़ियामत के दिन उसको दी जायेगी। उसके बदन पर एक कुर्ता खुजली का होगा, यानी उसके बदन पर खुजली ही खुजली होगी, जैसे सर से पाँव तक कपड़ा ओढ़ लिया जाये, और दूसरा कुर्ता उस खुजली पर 'क़तिरान' का

होगा। अरब में क़तिरान एक दरख़्त का पानी होता था जिसे ख़ुजली वाले बदन पर लगाते थे। उसकी ख़ासियत तेज़ाब जैसी थी। जिससे ख़ुजली जल जाती थी, और जलकर आराम हो जाता था। नौहा करने वाली औरत के जिस्म पर क़ियामत के दिन अव्वल तो ख़ुजली मुसल्लत की जायेगी, गोया कुर्ते की जगह ख़ुजली का लिबास होगा। फिर उस ख़ुजली पर क़तिरान मला हुआ होगा। जिसकी वजह से बहुत सख़्त तकलीफ़ होगी। जिसका अन्दाज़ा करने के लिए यूँ ख़्याल कर लो कि दुनिया में जब किसी का दाद अच्छा नहीं होता तो उसपर तेज़ाब लगा देते हैं, या लहसुन पीसकर मल देते हैं। उससे जो तकलीफ़ होती है बयान से बाहर है। और यह तकलीफ़ दुनिया में होती है, आख़िरत की तकलीफ़ दुनिया की तकलीफ़ों से कहीं ज़्यादा है। (अल्लाह की पनाह) फिर दुनिया में तेज़ाब या लहसुन लगाकर दाद जलाते हैं तो उससे दाद अच्छा हो जाता है, लेकिन आख़िरत में चूँकि अज़ाब देना मक़सद होगा इसलिए क़तिरान के मलने से ख़ुजली जायेगी नहीं बल्कि बराबर सख़्त तकलीफ़ होती रहेगी। बहनो! नौहा करने से तौबा करो और आख़िरत की फ़िक्र करो ताकि वहाँ अज़ाब न हो।

सब्र की अहमियत और फ़ज़ीलत उसी वक़्त है जबकि मुसीबत का वक़्त हो

हदीसः (266) हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि (एक बार) रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का एक औरत पर गुज़र हुआ। वह एक क़ब्र के पास रो रही थी। आपने उससे फ़रमाया कि अल्लाह तआला से डर और सब्र कर। उस औरत ने आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को पहचाना नहीं (और एक आम आदमी समझकर) कहने लगी हटो मुझे छोड़ दो। क्योंकि तुम्हें वह मुसीबत नहीं पहुँची जो मुझे पहुँची है। (इसी लिए नसीहत कर रहे हो, अगर तुम्हें ऐसी मुसीबत पहुँचती तो पता चलता कैसी मुसीबत है) उसके बाद (आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ ले गये और) उस औरत से किसी न कहा कि (तुझे मालूम है कि तूने कैसा बेढंगा जवाब दिया है?) आप नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम थे। यह सुनकर वह औरत नबी करीम की ख़िदमत में हाज़िर हुई। दरवाज़े पर पहुँची तो वहाँ दरबान (चौकीदार) न पाया (हालाँकि उसका ख़्याल था कि आप बहुत

ठाट-बाट से रहते होंगे, आपके दरवाज़े पर बादशाहों की तरह दरबान होंगे। यह देखकर हैरत में रह गयी कि नबी पाक की कैसी सादा ज़िन्दगी है)। कहने लगी कि या रसूलल्लाह! मैंने आपको पहचाना नहीं (इसलिए ऐसा जवाब दे दिया)। आपने फ़रमायाः (असली) सब्र वही है जो ताज़ा-ताज़ा मुसीबत के मौक़े पर हो। (क्योंकि वक़्त गुज़र जाने पर ख़ुद ही सब्र आ जाता है)।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 150)

तशरीहः इस हदीस में एक ख़ास नुक्ते की तरफ़ तवज्जोह दिलायी है, और वह यह कि क़ुरआन व हदीस में जो सब्र करने की फ़ज़ीलत आई है उससे वह सब्र मुराद है जो मुसीबत और तकलीफ़ के वक़्त हो। नया-नया हादसा है, अभी-अभी किसी प्यारे की मौत हुई है, या रक़म खो गयी है, दिल रंजीदा है, उस वक़्त हमने सब्र कर लिया तो सब्र की क़ीमत है और बहुत बड़ी फ़ज़ीलत है। बल्कि हक़ीक़त में सब्र ही वह है जो दिल दुखा होने के वक़्त हो, क्योंकि जैसे-जैसे वक़्त गुज़रता जाता है मुसीबत का एहसास तबई तौर पर कम होता चला जाता है, यहाँ तक कि कुछ दिन के बाद बिल्कुल एहसास नहीं रहता और इनसान उसी तरह ख़ुश और मगन रहने लगता है जैसा कि मुसीबत से पहले था। वक़्त गुज़रने से मुसीबत भूल-भुलैयाँ हो गयी और उसका नाम सब्र रख दिया, यह ग़लत है। न यह सब्र है, न इसकी कोई फ़ज़ीलत है। इसमें मोमिन व काफ़िर दोनों बराबर हैं। जिस सब्र पर मोमिन से सवाब और अज्र का वायदा है वह वही सब्र है जो उस वक़्त हो जबकि रंज ताज़ा-ताज़ा हो और दिल बेचैन हो। तबीयत बेक़रार हो, दिल में बुरे-बुरे ख़्यालात आ रहे हों, ज़बान अल्लाह पाक पर एतिराज़ करने के लिए खुलना चाहती हो, नफ़्स शरीअत के ख़िलाफ़ कामों पर उभारता हो, ऐसी हालत में सब्र करना सवाब और अज्र का सबब है।

जब उस औरत ने माज़िरत की कि या रसूलल्लाह! मैं आपको पहचानी न थी। रंज व ग़म की हालत में आपको बेतुका जवाब दे दिया, तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उससे फ़रमाया कि सब्र असल वही है जो ताज़ा मुसीबत के वक़्त हो। जब तुमको सब्र की तलक़ीन की थी उसी वक़्त सब्र करने और यह समझने का मौक़ा था कि यह कौन हैं और यह क्या नसीहत की जा रही है। अब जब यह मुसीबत हल्की हो गयी तो माज़िरत कर रही हो, हालाँकि सब्र व तक़वा (जिसकी नसीहत फ़रमायी थी) वह चीज़ें हैं

जिनकी तरफ़ कोई भी तवज्जोह दिलाये, बात मान लेनी चाहिये।

घर में मौत हो जाने और मय्यित को गुस्ल और कफ़न देने का तरीक़ा

हदीसः (267) हज़रत उम्मे अ़तीया अन्सारिया रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने बयान फ़रमाया कि जब नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बेटी की वफ़ात हो गयी तो (हम उनको गुस्ल देने लगे)। उस मौके पर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हमारे पास तशरीफ़ लाये और फ़रमाया कि तीन बार या पाँच बार या मुनासिब समझो तो इससे ज़्यादा बार बेरी के पत्तों और पानी से इनको गुस्ल दो। और आख़िरी बार में काफ़ूर इस्तेमाल करना। फिर जब गुस्ल दे चुको तो मुझे इत्तिला दे देना। चुनाँचे जब हम फ़ारिग़ हो गये तो आपको इत्तिला दे दी। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपना तहबन्द इनायत फ़रमाया और इरशाद फ़रमाया कि (इसको कफ़न में शामिल कर दो, और) इसका कफ़न का वह हिस्सा बनाना जो जिस्म से लगा रहे।

(बुख़ारी शरीफ़ पेज 167 जिल्द 1)

तशरीहः इस्लामी शरीअ़त हर तरह मुकम्मल और व्यापक है। इसमें बच्चे की पैदाईश फिर उसकी परवरिश, शादी-विवाह, नमाज़ रोज़ा, हज व ज़कात, ज़िन्दगी और मौत के सब अहकाम मौजूद हैं। जब कोई आदमी मर जाये तो उसकी लाश के साथ क्या मामला किया जाये, और कहाँ पहुँचाया जाये? इसके तफ़सीली अहकाम मौजूद हैं। मय्यित को गुस्ल देना, कफ़नाना, नमाज़े जनाज़ा पढ़ना और दफ़न करना, इस सबकी तफ़सीलात शरीअ़त की किताबों में लिखी हैं। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जीने और मरने के सब अहकाम बड़ी तफ़सील के साथ बताये। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मौजूदगी में ख़ुद आपके घराने में मौतें हुईं। आपकी बाज़ बीवियों की वफ़ात हुई। छोटे बच्चों ने वफ़ात पाई। आपकी चार साहिबज़ादियाँ (बेटियाँ) थीं। हज़रत ज़ैनब, हज़रत रुक़य्या, हज़रत उम्मे कुलसूम, हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अ़न्हुन्-न। सबसे छोटी हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा थीं। हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अ़न्हा, हज़रत रुक़य्या, हज़रत उम्मे कुलसूम रज़ियल्लाहु अ़न्हुन्-न ने आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात से पहले ही वफ़ात पाई, और हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने आपकी वफ़ात से

छह महीने बाद वफ़ात पाई। हज़रत रुक़य्या रज़ियल्लाहु अ़न्हा की वफ़ात के वक़्त आप मदीना मुनव्वरा में तशरीफ़ फ़रमा नहीं थे, क्योंकि बदर की लड़ाई के लिए तशरीफ़ ले गये थे। उनकी वफ़ात आपकी ग़ैर-मौजूदगी में हुई।

यह सन् दो हिजरी का वाक़िआ है। हज़रत रुक़य्या हज़रत उसमान रज़ियल्लाहु अ़न्हु की बीवी थीं, उनके जनाज़े में जो लोग शरीक थे वे उनको दफ़न कर रहे थे कि अल्लाहु अकबर की आवाज़ आयी। हज़रत उसमान ने मौजूद लोगों से पूछा कि यह तकबीर कैसी है? लोगों ने तवज्जोह से देखा तो मालूम हुआ कि हज़रत ज़ैद बिन हारिस रज़ियल्लाहु अ़न्हु हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ऊँटनी पर सवार हैं और बदर की लड़ाई के बाद मुशरिकों की शिकस्त और मुसलमानों की फ़तह की ख़ुशख़बरी लेकर आये हैं।

हज़रत रुक़य्या रज़ियल्लाहु अ़न्हा की वफ़ात के बाद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपनी दूसरी साहिबज़ादी हज़रत उम्मे कुलसूम रज़ियल्लाहु अ़न्हा से हज़रत उसमान रज़ियल्लाहु अ़न्हु का निकाह फ़रमा दिया। छह साल हज़रत उसमान के निकाह में रहकर उन्होंने भी वफ़ात पायी। यह सन् नौ हिजरी का वाक़िआ है। हज़रत उम्मे अ़तीया रज़ियल्लाहु अ़न्हा और हज़रत असमा बिन्ते उमैस रज़ियल्लाहु अ़न्हा और हज़रत लैला बिन्ते क़ानिफ़ रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने इनको ग़ुस्ल दिया। इनका बयान है कि ग़ुस्ल देने के बाद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से कफ़न लेकर हमने उनको कफ़ना दिया। आप कफ़न के कपड़े लिए दरवाज़े पर मौजूद थे। आप हमको कफ़न देते रहे और हम उनको पहनाते रहे।

जो हदीस ऊपर बुख़ारी शरीफ़ से नक़ल की गयी है उसमें हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अ़न्हा की वफ़ात और उनके ग़ुस्ल और कफ़न का ज़िक्र है। उन्होंने सन् आठ हिजरी में वफ़ात पाई। जिन औ़रतों ने उनको ग़ुस्ल दिया उनमें हज़रत उम्मे अ़तीया रज़ियल्लाहु अ़न्हा भी थीं। उन्होंने हज़रत उम्मे कुलसूम रज़ियल्लाहु अ़न्हा के ग़ुस्ल और कफ़न में शिरकत की थी। हज़रत उम्मे अ़तीया रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने मय्यित को ग़ुस्ल देने का तरीक़ा ख़ूब अच्छी तरह याद कर लिया था। हज़रात सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम और ताबिईन रहमतुल्लाहि अ़लैहिम मय्यित को ग़ुस्ल देने का तरीक़ा सीखने के लिए इनके पास आया करते थे। ख़ासकर अ़ल्लामा मुहम्मद बिन सीरीन का इस मक़सद

के लिए उनकी ख़िदमत में आना-जाना हदीस के आलिमों ने तहरीर फ़रमाया है। (अल-इसाबा)

ऊपर ज़िक्र हुई हदीस में बयान किया गया है कि जब हज़रत उम्मे अ़तीया रज़ियल्लाहु अ़न्हा और दूसरी औरतें हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अ़न्हा को ग़ुस्ल दे रही थीं तो आप वहाँ तशरीफ़ ले गये और फ़रमाया कि तीन-तीन बार या पाँच-पाँच बार ग़ुस्ल दो। यानी जिस्म के हर हिस्से पर तीन-तीन बार पानी डालो। और फ़रमाया कि मुनासिब जानो तो इससे भी ज़्यादा धो दो। बाज़ रिवायतों में सात बार का भी ज़िक्र है। बहरहाल तीन से कम तो न होना चाहिये और जिस अ़दद (संख्या) पर भी ख़त्म करें यह ख़्याल रखें कि ताक़ अ़दद रहे। (यानी वह संख्या बेजोड़ हो- जैसे तीन, पाँच, सात, नौ वग़ैरह)

हदीस शरीफ़ में यह भी है कि पानी और बेरी से ग़ुस्ल दें। हनफ़ी मज़हब की किताबों में लिखा है कि बेरी के पत्तों को पानी में डालकर गर्म कर लिया जाये। फिर उससे ग़ुस्ल दिया जाये। इससे एक तो सफ़ाई-सुथराई का फ़ायदा होता है, दूसरे क़ब्र में मय्यित की लाश महफ़ूज़ रहने का फ़ायदा पहुँचता है। यानी पानी और बेरी के पत्तों से ग़ुस्ल दे दिया जाये तो बदन देर में गलता है।

हदीस में यह भी फ़रमाया कि आख़िरी बार में काफ़ूर इस्तेमाल करें। हदीस की किताब अबू दाऊद में है कि हज़रत इब्ने सीरीन रहमतुल्लाहि अ़लैहि मय्यित को नहलाने का तरीक़ा हज़रत उम्मे अ़तीया रज़ियल्लाहु अ़न्हा से सीखा करते थे। और दो बार बेरी के पत्तों के साथ और आख़िरी तीसरी बार पानी और काफ़ूर से ग़ुस्ल देते थे। (इब्ने हुमाम)

काफ़ूर मिलाकर पानी डालने से एक हिक्मत तो यह है कि उसकी ख़ुशबू फ़रिश्तों को पसन्द आती है। और यह भी है इससे मय्यित के बदन में सख़्ती आती है और ज़मीन के कीड़े-मकोड़े इसकी वजह से दूर रहते हैं। गोया इस तरह से मय्यित के जिस्म का ज़रा ज़्यादा दिन महफ़ूज़ रहने का इन्तिज़ाम हो जाता है।

जब किसी मुसलमान की मौत क़रीब हो और जान निकलनी शुरू होने लगे तो उसको चित लिटा दो और उसके पाँव क़िब्ले की तरफ़ कर दो, और सर ऊँचा कर दो, ताकि मुँह क़िब्ले की तरफ़ हो जाये, और उसके पास

बैठकर ज़ोर-ज़ोर से कलिमा तय्यिबा पढ़ो ताकि तुमसे सुनकर वह भी पढ़ ले। लेकिन उससे यूँ मत कहो कि कलिमा पढ़। इसलिए कि वह सख़्त मुश्किल का वक़्त है, ख़ुदा न करे पढ़ने से इनकार कर दे, या मुँह से कुछ और निकल जाये। सूरः यासीन शरीफ़ पढ़ने से मौत आसान हो जाती है। ख़ुद पढ़ो या किसी से पढ़वा दो। जब रूह निकल जाये तो कोई कपड़ा लेकर ठोड़ी के नीचे से निकालकर दोनों जबड़ों से गुज़ारते हुए सर पर लेजा कर बाँध दो ताकि मुँह न फैल जाये, और पाँव के दोनों अंगूठे मिलाकर बाँध दो और आँखें बन्द कर दो। फिर उसको चादर वग़ैरह उढ़ाकर नहलाने का इन्तिज़ाम करो, और उसके पास लोबान वग़ैरह कोई ख़ुशबू सुलगा दो।

मय्यित को नहलाना

जब नहलाने का इरादा करो तो किसी तख़्त या किसी बड़े तख़्ते को (जिस पर ग़ुस्ल देना हो) लोबान या अगरबत्ती की धूनी तीन बार या पाँच बार या सात बार दे दो, फिर मय्यित को उसपर लिटा दो, और उसके पहने हुए कपड़े अलग कर दो, और उसकी नाफ़ से घुटनों तक एक कपड़ा सतर छुपाने के लिए डाल दो। बेरी के पत्ते डालकर गर्म किये हुए पानी से ग़ुस्ल देना शुरू कर दो। अगर बेरी के पत्ते डालकर पानी गर्म न किया हो तो सादे गर्म पानी से नहलाना और साबुन लगाना भी काफ़ी है। जब ग़ुस्ल देना शुरू कर दो तो पहले मय्यित को इस्तिन्जा कराओ, लेकिन उसकी रानों और इस्तिन्जे की जगह को हाथ न लगाओ, और उसपर निगाह भी न डालो, बल्कि अपने हाथ में कोई कपड़ा लपेट लो, और जो कपड़ा नाफ़ से लेकर घुटनों तक पड़ा है उसके अन्दर-अन्दर धुला दो। इस्तिन्जा कराकर उसके बाद सबसे पहले वुज़ू कराओ, पहले उसका मुँह तीन बार धुलाओ, फिर दोनों हाथ तरतीब से यानी पहले दायाँ फिर बायाँ हाथ कोहनियों समेत धुलाओ। उंगलियों से लेकर गट्टों तक जो हिस्सा है उसको भी उसी वक़्त धुला दो। (1) फिर

(1) हाथ गट्टों तक शुरू में इसलिए नहीं धोए जाते क्योंकि उसको ख़ुद ग़ुस्ल नहीं करना है। और कुल्ली और नाक में पानी चढ़ाने में चूँकि अपने इख़्तियार में दाख़िल है और मुर्दा कुछ नहीं कर सकता इसलिए ये दोनों यहाँ उसके ज़िम्मे से ख़त्म हो जाते हैं। हाँ! अगर नापाकी या माहवारी या पैदाईश के बाद ख़ून आने (यानी ज़चगी की) हालत में मौत आई हो तो रूई का फाया तर करके उसकी नाक और मुँह में अच्छी तरह फेर दें।

सर का मसह कर दो, फिर दोनों पाँव तरतीब से यानी पहले दाहिना पाँव फिर बायाँ पाँव धुला दो।

जब वुज़ू करा चुको तो उसके सर को गुले-ख़ैरू से या साबुन से अच्छी तरह मलकर धो डालो, ताकि ख़ूब साफ़ हो जाये। फिर मय्यित को बाईं करवट पर लिटाकर हल्का गर्म पानी सर से पैर तक डालो यहाँ तक कि बाईं करवट तक पानी पहुँच जाये। फिर दाहिनी तरफ़ करवट पर लिटा दो और उसी तरह सर से पैर तक इतना पानी डालो कि दाहिनी करवट तक पहुँच जाये। उसके बाद मुर्दे को अपने बदन की टेक लगाकर ज़रा बैठा दो और उसके पेट को आहिस्ता-आहिस्ता मलो, अगर कुछ पाख़ाना वग़ैरह निकले तो पोंछकर धो डालो, और वुज़ू और गुस्ल में उसके निकलने से कोई नुक़सान नहीं। उसके बाद फिर बाईं करवट पर लिटा दो, और काफ़ूर डला हुआ पानी सर से पाँव तक जिस्म के हर हिस्से पर पहुँचा दो। यह गुस्ल पूरा हो गया। इसके बाद मुर्दे के बदन को किसी कपड़े से पोंछ दो।

कफ़नाना

और जब गुस्ल से फ़ारिग़ होकर मय्यित को कफ़न पर रख दो तो उसके सर पर इत्र लगा दो, और माथा और नाक और दोनों हथेलियों और घुटनों और पाँव पर काफ़ूर मल दो। मर्द को तीन कपड़ों में और औरत को पाँच कपड़ों में कफ़न देना सुन्नत है। सब की तफ़सील यह है।

(1) इज़ार सर से लेकर पाँव तक (2) चादर जो इज़ार से एक हाथ बड़ी हो, इसको लिफ़ाफ़ा कहते हैं (3) कुर्ता गले से लेकर पाँव तक जिसमें न आस्तीन हों न कलियाँ हों। इसको कफ़नी कहते हैं। ये तीनों कपड़े मर्द व औरत दोनों के कफ़न में होते हैं।

औरत के कफ़न में दो कपड़े जो ज़्यादा हैं वे ये हैं। एक सर-बन्द जो तीन हाथ लम्बा हो, दूसरा सीना-बन्द जो छातियों से लेकर रानों तक हो। क़ब्रिस्तान लेजाते वक़्त जो चादर ऊपर से डालते हैं वह कफ़न से ख़ारिज है। लेकिन औरत के जनाज़े पर चादर डालना पर्दे की वजह से ज़रूरी है, और मर्द के जनाज़े पर डालना ज़रूरी नहीं। आम तौर से मर्द के कफ़न में ऊपर की चादर के अलावा दस गज़ कपड़ा ख़र्च होता है, और औरत के लिए ऊपर की चादर को मिलाकर बाईस गज़ कपड़ा लगता है, और बच्चे के लिए उसके

क़द और लम्बाई के एतिबार से कपड़ा ले लिया जाये।

जब किसी औरत को कफ़न पहनाने लगो तो पूरे कफ़न को तीन या पाँच या सात बार ख़ुशबूदार धूनी दे दो। फिर यूँ करो कि पहले चादर बिछाओ, फिर उसके ऊपर इज़ार बिछाओ और उस पर कुर्ता बिछाओ, फिर मय्यित को उसपर लिटा दो। उसके बाद कुर्ता पहनाओ। कुर्ता पहनाकर सर के बालों के दो हिस्से करके कुर्ते के ऊपर सीने पर डाल दो। एक हिस्सा दाहिनी तरफ़ और एक हिस्सा बाईं तरफ़ रहे। उसके बाद सर पर और बालों पर डाल दो, इसको न बाँधो न लपेटो। उसके बाद सरहाने और पाँयती से कफ़न कपड़े की कत्तर से बाँध दो, और इसी तरह एक बन्द कमर के पास भी बाँध दो ताकि लेजाते वक़्त खुल न जाये, और पाँयती की तरफ़ कफ़नी में गिरह दे दो। कफ़नाने के बाद नमाज़े जनाज़ा और दफ़नाने में जल्दी करो। नमाज़े जनाज़ा का तरीक़ा पहले गुज़र चुका है।

दफ़नाना

औरतों को मुर्दे दफ़न करने के मौक़े तो नहीं आते, इसलिए इस किताब में इसका ज़िक्र करने की ज़रूरत न थी, लेकिन इस ख़्याल से कि जनाज़े का पूरा बयान हो जाये, दफ़नाने का तरीक़ा भी लिखा जाता है।

जब नमाज़े जनाज़ा से फ़ारिग़ हो जायें तो दफ़न कर दें। दफ़न करना भी फ़र्ज़े किफ़ाया है। जब दफ़न के लिए जनाज़े को क़ब्रिस्तान ले चलें तो तेज़ क़दम चलें लेकिन दौड़ें नहीं। जनाज़े के साथ पैदल चलना मुस्तहब (पसन्दीदा और अच्छा) है।

मसला: जनाज़ा लेजाते वक़्त दुआ या ज़िक्र (जैसे **ला इला-ह इल्लल्लाहु** या **अल्लाहु अकबर**) बुलन्द आवाज़ से पढ़ना बिद्अ़त है। और आहिस्ता आवाज़ से भी किसी ख़ास ज़िक्र का करना साबित नहीं है। अगर आहिस्ता कुछ पढ़े और जनाज़ा लेजाने की सुन्नत न समझे तो पढ़ सकता है।

मसला: जब क़ब्र तैयार हो जाये तो मय्यित को क़िब्ले की तरफ़ से क़ब्र में उतारें जिसका तरीक़ा यह है कि जनाज़े को क़ब्र से क़िब्ले की तरफ़ रखा जाये और उतारने वाले क़िब्ले की तरफ़ रुख़ करके खड़े होकर मय्यित को क़ब्र में उतारें।

मसला: क़ब्र में रखते वक़्त **बिस्मिल्लाहि व बिल्लाहि व अ़ला मिल्लति**

रसूलिल्लाहि कहना मुस्तहब है।

मसलाः मय्यित को क़ब्र में रखकर दाहिनी करवट पर क़िब्ले की तरफ़ रुख़ करके लिटाना सुन्नत है।

मसलाः क़ब्र में रखकर कफ़न की दोनों गिरहें खोल दें जो सिरहाने और पाँयती और दरमियान में कफ़न खुल जाने के डर से लगायी गयी थीं।

मसलाः औरत को क़ब्र में रखते वक़्त पर्दा करना मुस्तहब है। और अगर मय्यित का बदन ज़ाहिर होने का अन्देशा हो तो पर्दा करना वाजिब है।

मसलाः क़ब्र में मसनून तरीक़े पर लिटाकर क़ब्र को बन्द कर दें। क़ब्र भरने के लिए जब मिट्टी डालने लगें तो हर शख़्स दोनों हाथों से मिट्टी भरकर तीन बार डालेः पहली बार **'मिन्हा ख़लक़्नाकुम'** और दूसरी बार **'व मिन्हा नुईदुकुम्'** और तीसरी बार **'व मिन्हा नुख़्रिजुकुम् तारतन् उख़्रा'** पढ़े।

मसलाः क़ब्र को एक बालिश्त से ज़्यादा ऊँचा बनाना मना है।

मसलाः क़ब्र को चोकोर न बनायें और ऊँट के कोहान की शक्ल में बनायें। क़ब्र को पुख़्ता बनाने और उसपर इमारत बनाने की हदीसों में मनाही आई है। इसके ख़िलाफ़ करना गुनाह है।

चेतावनियाँ

1. बाज़ कपड़े लोगों ने कफ़न के साथ ज़रूरी समझ रखे हैं, हालाँकि वे सुन्नत कफ़न से ख़ारिज हैं। मय्यित के छोड़े हुए माल से उनका ख़रीदना जायज़ नहीं, वे ये हैंः (1) जायनमाज़, लम्बाई सवा गज़, चौड़ाई चौदह गिरह। (2) पटका, लम्बाई डेढ़ गज़, चौड़ाई चौदह गिरह, यह मुर्दे को क़ब्र में उतारने के लिए होता है। (3) बिछौना, लम्बाई ढाई गज़, चौड़ाई सवा गज़, यह चारपाई पर बिछाने के लिए होता है। (4) बड़ी चाँदर, लम्बाई तीन गज़, चौड़ाई पौने दो गज़, जो चारपाई को ढाँक लेती है, और अगरचे यह चादर पर्दे के एहतिमाम की वजह से औरत के जनाज़े पर डालना ज़रूरी है, मगर कफ़न का हिस्सा नहीं है। जिसका कफ़न के रंग का होना भी ज़रूरी नहीं, पर्दे के लिए कोई भी कपड़ा काफ़ी हो सकता है।

2. अगर जायनमाज़ वग़ैरह की ज़रूरत समझी जाये तो घर के कपड़े कारामद हैं, मय्यित के छोड़े हुए माल से न ख़रीदें।

3. नहलाने और कफ़नाने के सामान में से अगर कोई चीज़ घर में

मौजूद हो और पाक-साफ़ हो तो उसको इस्तेमाल करें।

4. यह जो दस्तूर है कि मुर्दे के इस्तेमाल किए हुए कपड़े या बर्तन वग़ैरह ख़ैरात कर दिये जाते हैं, यह वारिसों की बग़ैर इजाज़त के हरगिज़ जायज़ नहीं। और अगर वारिसों में कोई नाबालिग़ हो तब तो इजाज़त देने पर भी ऐसा करना जायज़ नहीं है। पहले तक़सीम करें, फिर जो बालिग़ हैं वे अपने हिस्से में से शरीअ़त के मुताबिक़ सवाब पहुँचाएँ।

औ़रतों को क़ब्रों पर जाने, उनपर चिराग़ जलाने और सज्दा की जगह बनाने की मनाही

हदीसः (268) हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने क़ब्रों की ज़ियारत के लिए जाने वाली औ़रतों पर और उन लोगों पर लानत की जो क़ब्रों को सज्दा-गाह (सज्दे का स्थान) बनायें, और जो क़ब्रों पर चिराग़ जलायें।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 71)

तशरीहः इस हदीस में क़ब्रों की ज़ियारत करने वाली औ़रतों और उन लोगों पर लानत फ़रमायी जो क़ब्रों को सज्दा-गाह बनायें और जो क़ब्रों पर चिराग़ जलायें। मालूम हुआ कि क़ब्रों पर औ़रतों का जाना सख़्त मना है। और वजह इस मनाही की और लानत की यह है कि औ़रतें अव्वल तो बेपर्दा होकर जाती हैं, दूसरे क़ब्रों पर तरह-तरह की बिद्अ़तें करती हैं और शिर्क के काम करती हैं- जैसे क़ब्र वाले की मन्नत मानती हैं, और उसे पूरा करने के लिए उसकी क़ब्र पर जाती हैं, और अल्लाह को छोड़कर क़ब्र वाले से औलाद माँगती हैं। ये दोनों चीज़ें शिर्क हैं। और भी इसी तरह की बहुत-सी बिद्अ़तें अन्जाम देती हैं।

ऊपर वाली हदीस से क़ब्रों को सज्दा-गाह (सज्दे की जगह) बनाने और उनपर चिराग़ जलाने की मनाही भी साबित हुई। हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपनी उस बीमारी में जिसमें आपकी वफ़ात हुई, यह फ़रमायाः

हदीसः अल्लाह की लानत हो यहूदियों और ईसाइयों पर जिन्होंने अपने नबियों की क़ब्रों को सज्दा-गाह बना लिया। (बुख़ारी व मुस्लिम)

मालूम हुआ कि क़ब्रों को सज्दा-गाह बनाने का काम यहूदी व ईसाई

किया करते थे। हदीस के आलिमों ने लिखा है कि इन लोगों पर इसलिए लानत फ़रमायी कि वे लोग नबियों की क़ब्रों को अदब के तौर पर सज्दा किया करते थे जो कि खुला हुआ शिर्क है। और या नमाज़ तो अल्लाह की पढ़ते लेकिन सज्दा नबियों की क़ब्रों पर करते थे, और नमाज़ की हालत में क़ब्रों की तरफ़ मुतवज्जह होते थे।

पहली उम्मतों की तरह उम्मते मुहम्मदिया में भी क़ब्रों को अदब व सम्मान के लिए सज्दा करने का रिवाज सदियों से चला आ रहा है। अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जिस चीज़ से सख़्ती से रोका और जिसको लानत का सबब बताया, अफ़सोस कि नाम के पीर व फ़क़ीर और क़ब्रों के मुजाविर लोग वहाँ पर ज़ियारत के लिए आने वाले हज़रात से ऐसे शिर्क भरे आमाल कराते हैं। इन दीन के दुश्मनों ने सज्दे को ज़ियारत के लिए एक लाज़िमी चीज़ बना रखा है। औलिया-अल्लाह के किसी मज़ार पर अगर जाकर देखा जाये तो बहुत-से मर्द व औ़रत मज़ार को सज्दा करते हुए नज़र आयेंगे। (अल्लाह अपनी पनाह में रखे)।

हदीस शरीफ़ में उन लोगों पर भी लानत फ़रमायी जो क़ब्रों पर चिराग़ जलाते हैं। हदीस की किताब मिरक़ात शरह मिश्कात में लिखा है कि:

तर्जुमाः क़ब्रों पर चिराग़ जलाने की मनाही इस वजह से है कि इसमें माल का ज़ाया करना है जो कि फ़ुज़ूलख़र्ची है, जिसकी वजह यह है कि चिराग़ से किसी (मय्यित) को कोई नफ़ा नहीं। और मनाही की एक वजह यह है कि आग दोज़ख़ के आसार में से है (लिहाज़ा मोमिन की क़ब्र पर आग नहीं होनी चाहिये)। और चिराग़ जलाना क़ब्रों के अदब व सम्मान के लिए भी होता है, इस वजह से भी मना है, जैसा कि सज्दे की जगह बनाना मना है।

मिरक़ात के लेखक ने यह जो फ़रमाया कि क़ब्र पर चिराग़ जलाने में किसी मय्यित को कुछ नफ़ा नहीं है। इसकी तशरीह यह है कि अगर मय्यित अ़ज़ाब में है और उसकी क़ब्र में अंधेरा है तो बाहर के उजाले से उसे कोई फ़ायदा नहीं होगा। और अगर वह अल्लाह तआ़ला के इनाम व इकराम में है तो उसकी क़ब्र नबी पाक के फ़रमान के मुताबिक़ ख़ुद मुनव्वर (रोशन) है, और बाहर की रोशनी की उसे हाजत नहीं। और सब को मालूम है कि उमूमन जिन हज़रात को बुज़ुर्ग समझा जाता है उन्हीं की क़ब्रों पर चिराग़ जलाए जाते हैं, यह अ़क़्ल व नक़ल के ख़िलाफ़ नहीं तो और क्या है?

दर हक़ीक़त हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जिस ख़तरे की रोक-थाम के लिए क़ब्रों को सज्दा-गाह बनाने और वहाँ चिराग़ जलाने से रोका था वह ख़तरा आज हक़ीक़त बन गया है। उम्मत ने मनाही पर अ़मल नहीं किया। और मुसीबत पर मुसीबत यह है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की साफ़ और खुली मनाही के बावजूद जिसकी रिवायतें बुख़ारी व मुस्लिम और हदीस की दूसरी किताबों में मौजूद हैं, उल्टा उसे बेदीन बताते हैं जो क़ब्रों पर चिराग़ न जलाए।

'मुवत्ता इमाम मालिक' (हदीस की किताब) में है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अल्लाह पाक से दुआ़ की कि:

हदीसः ऐ अल्लाह! मेरी क़ब्र को बुत न बनाइयो जिसकी पूजा की जाए। उन लोगों पर अल्लाह का सख़्त गुस्सा हुआ जिन्होंने अपने नबियों की क़ब्रों को सज्दा-गाह बनाया।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः

हदीसः अपने घरों को क़ब्रें न बनाओ। (क़ब्रों की तरह घरों को अल्लाह के ज़िक्र से ख़ाली मत रखो बल्कि नफ़िल नमाज़, ज़िक्र, वज़ीफ़ा घरों में पढ़ा करो) और मेरी क़ब्र को ईद न बनाओ, और मुझपर दुरूद भेजो क्योंकि तुम्हारा दुरूद मुझ तक पहुँचा दिया जाता है, तुम जहाँ कहीं भी हो।

ऊपर ज़िक्र हुई हदीसों से मालूम हुआ है कि क़ब्रों को बुत बनाना और वहाँ मेले के तरीक़े पर इस तरह जमा होना जैसे ईद में जमा होते हैं, अल्लाह रब्बुल-इ़ज़्ज़त और उसके पाक नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नज़दीक सख़्त गुनाह है।

क़ब्रों पर उ़र्स के नाम से जो मेले लगते हैं, उनमें बेशुमार बुराइयाँ और गुनाह के काम होते हैं। क़ब्रों के चारों तरफ़ तवाफ़ करना जो सिर्फ़ बैतुल्लाह के लिए ख़ास है, मज़ारों पर चिराग़ जलाना, तवायफ़ों का नाच होना, हारमोनियम और तबले पर गाना बजाना, और नमाज़ों को ग़ारत करना और क़ब्रों को गुस्ल दिलाना। और इसी तरह के बहुत-से बड़े-बड़े गुनाहों और बहुत-सी शिर्क व बिद्अ़त की बातों और बद्तरीन बुराइयों और ख़ुराफ़ात के काम किये जाते हैं। अल्लाह समझ दे।

मुसलमान औरतों से
रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बातें
* औरतों के लिए *
तौबा का बयान
लेखक
हज़रत मौलाना आशिक़ इलाही साहिब बुलन्द शहरी
रहमतुल्लाहि अलैहि
अनुवादक: मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी
प्रकाशक
फ़रीद बुक डिपो (प्रा. लि.)
422, मटिया महल, उर्दू मार्किट, जामा मस्जिद
देहली-110006

तौबा की हकीकत और उसका तरीक़ा

तौबा की हक़ीक़त और उसकी अहमियत व ज़रूरत

हदीसः (269) हज़रत अग़र रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि ऐ लोगो! अल्लाह की बारगाह में तौबा करो, क्योंकि मैं रोज़ाना सौ बार अल्लाह की बारगाह में तौबा करता हूँ। (मुस्लिम शरीफ़ पेज 643 जिल्द 2)

तशरीहः इस हदीस मुबारक में हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तौबा की तरफ़ तवज्जोह दिलाई है। चूँकि नफ़्स व शैतान के तकाज़े पर लोग गुनाह कर बैठते हैं, इसलिए तौबा करते रहना बेहद ज़रूरी है। यह अल्लाह जल्ल शानुहू का इनाम है कि उसने यह क़ानून नहीं बनाया कि गुनाह पर ज़रूर ही अज़ाब हो, बल्कि जो शख़्स अल्लाह से माफ़ी माँगे और उसकी बारगाह में तौबा करे जो सच्चे दिल से हो, तो अल्लाह उसको माफ़ फ़रमा देते हैं और तौबा क़बूल फ़रमा लेते हैं। क़ुरआन मजीद में इरशाद है किः

तर्जुमाः और वह ऐसा है कि अपने बन्दों की तौबा क़बूल फ़रमा लेता है, और वह तमाम गुनाह माफ़ फ़रमाता है। और जो कुछ तुम करते हो वह जानता है। और उन लोगों की इबादत क़बूल करता है जो ईमान लाए और उन्होंने नेक अमल किए। और उनको अपने फ़ज़्ल से और ज़्यादा देता है। और जो लोग कुफ़्र कर रहे हैं उनके लिए सख़्त अज़ाब है।

(सूरः शूरा आयत 25-26)

सूरः नूर में तौबा का हुक्म देते हुए इरशाद फ़रमायाः

तर्जुमाः और मुसलमानो! तुम सब अल्लाह के सामने तौबा करो ताकि तुम फ़लाह पाओ। (सूरः नूर आयत 31)

सूरः तहरीम के आख़िरी रुकूअ में इरशाद फ़रमायाः

तर्जुमाः ऐ ईमान वालो! तुम अल्लाह के आगे सच्ची तौबा करो, तुम्हारा रब तुम्हारे गुनाह माफ़ कर देगा और तुमको ऐसे बाग़ों में दाख़िल करेगा जिनके नीचे नहरें जारी होंगी। जिस दिन कि अल्लाह तआला नबी को और जो मुसलमान उनके साथ हैं उनको रुस्वा न करेगा। (सूरः तहरीम आयत 8)

इनके अलावा अनेक आयतों में तौबा का हुक्म और तौबा करने की

तारीफ़ ज़िक्र की गयी है। गुनाह छोटे हों या बड़े, तायदाद में ज़्यादा हों या कम, सब कत्ल करने वाला ज़हर हैं। इसलिए ज़रूरी है कि जैसे ही कोई गुनाह हो जाए सच्चे दिल से तौबा की जाए। छोटे गुनाह तो नेकियों के ज़रिये माफ़ होते रहते हैं, लेकिन कबीरा (बड़े) गुनाह सिर्फ़ तौबा ही से माफ़ होते हैं। यूँ अल्लाह तआला को सब इख़्तियार है कि बग़ैर तौबा भी सब माफ़ फ़रमा दें, लेकिन यक़ीनी तौर माफ़ होने के लिए तौबा करना लाज़िम है। जब सच्चे दिल से तौबा के तरीक़े के मुताबिक़ तौबा कर ली जाए तो ज़रूर क़बूल होती है। और यह समझ लेना चाहिये कि सिर्फ़ ज़बान से तौबा-तौबा करने से तौबा नहीं होती, तौबा तीन चीज़ों का नाम है:

अव्वल: जो गुनाह हो चुका उसपर निहायत सच्चे दिल से शर्मिन्दा और पशेमान और नादिम होना, अपनी हक़ीर ज़ात को देखना और अल्लाह जल्ल शानुहू जो तमाम हाकिमों के हाकिम हैं और कायनात के ख़ालिक़ व मालिक हैं, उनकी बुलन्द ज़ात की तरफ़ नज़र करना, कि हाय-हाय! मुझ जैसे हक़ीर व ज़लील से ऐसी पाक ज़ात की नाफ़रमानी हुई जो सबसे बड़ा है और सबको पैदा करने वाला है।

दूसरे: बहुत ही पुख़्ता इरादे के साथ यह तय कर लेना कि अब आईन्दा कभी भी कोई गुनाह नहीं करूँगी।

तीसरे: जो चीज़ अल्लाह के हक़ों में से या मख़्लूक़ और बन्दों के हक़ों में से क़ाबिले तलाफ़ी हों उनकी तलाफ़ी करना। और यह बात बहुत अहम है। बहुत-से लोग तौबा करते हैं, लेकिन तौबा के इस तीसरे उसूल की तरफ़ तवज्जोह नहीं करते।

हुक़ूक़ुल्लाह (यानी अल्लाह के हक़ों) की तलाफ़ी का मतलब यह है कि बालिग़ होने के बाद से जिन फ़राइज़ को छोड़ा हो और जिन वाजिबात को छोड़ा हो उनकी अदायगी करे। जैसे हिसाब लगाए कि जब से मैं बालिग़ हुआ हूँ मेरी कितनी नमाज़ें छूटी हैं, उन नमाज़ों का इस क़द्र अन्दाज़ा लगाए कि दिल गवाही दे दे कि इससे ज़्यादा नहीं होंगी। फिर उन नमाज़ों की क़ज़ा पढ़े। क़ज़ा नमाज़ के लिए कोई वक़्त मुक़र्रर नहीं है, बस यह देख ले कि सूरज निकलता छुपता न हो और ज़वाल का वक़्त न हो। सूरज निकलकर जब एक नेज़े (भाले और बल्लम) के बराबर ऊँचा हो जाए तो क़ज़ा पढ़ना दुरुस्त है। अलबत्ता जब सूरज छुपने से पहले सूरज में ज़र्दी (पीलापन) आ जाए उस वक़्त क़ज़ा न पढ़े। एक दिन की पाचँ फ़र्ज़ नमाज़ें और तीन रकअ़त नमाज़

वित्र यानी कुल बीस रकअ़त बतौर क़ज़ा पढ़ ले।

और यह भी मालूम होना चाहिए कि लम्बे सफ़र में (जो कम-से-कम अड़तालीस मील का हो) जो चार रकअ़त वाली नमाज़ें कज़ा हुई हैं उनकी कज़ा दो ही रकअ़त है। जैसे कि सफ़र में दो ही रकअ़त वाजिब थीं। अगर घर आकर उनकी कज़ा पढ़े तो दो ही रकअ़त पढ़े।

यह भी समझ लेना चाहिये कि ज़रूरी नहीं कि जो नमाज़ें कज़ा हुई हों तायदाद में सब बराबर हुई हों। क्योंकि बाज़ लोग नमाज़ें पढ़ते भी रहते हैं और छोड़ते भी रहते हैं। बाज़ लोग सफ़र में नहीं पढ़ते, आ़म हालात में पढ़ लेते हैं। और बहुत-से लोग बीमारी में नमाज़ छोड़ बैठते हैं। कुछ लोगों की फ़ज्र की नमाज़ ज़्यादा कज़ा हो जाती है। कुछ लोग अ़स्र की नमाज़ें ज़्यादा कज़ा कर देते हैं। पस जो नमाज़ जिस कद्र कज़ा हुई उसी कद्र ज़्यादा-से-ज़्यादा अन्दाज़ा लगाकर नमाज़ पढ़ ली जाए।

अ़वाम में जो यह मशहूर है कि ज़ोहर की कज़ा नमाज़ ज़ोहर में ही पढ़ी जाए और अ़स्र की अ़स्र ही में पढ़ी जाए यह दुरुस्त नहीं है। जिस वक़्त की नमाज़ जिस वक़्त चाहे क़ज़ा पढ़ सकते हैं। और एक दिन में कई-कई दिन की नमाज़ें भी अदा हो सकती हैं। अगर क़ज़ा नमाज़ें पाँच से ज़्यादा हो जाएँ तो तरतीब वाजिब नहीं रहती, जौन-सी नमाज़ पहले पढ़ ले दुरुस्त हो जाएगी। जैसे अगर अ़स्र की नमाज़ पहले पढ़ ली और ज़ोहर की बाद में पढ़ ली तो इस तरह भी अदा हो जायेगी।

ग़ैर-मुअक्कदा की जगह भी क़ज़ा नमाज़ें पढ़ लिया करें और उनके अ़लावा भी क़ज़ा नमाज़ों के लिए वक़्त निकालें। अगर पूरी क़ज़ा नमाज़ों के अदा किए बग़ैर मौत आ गई तो सख़्त ख़तरा है।

जब नमाज़ों की तायदाद का बहुत ही एहतियात के साथ अन्दाज़ा लगा लिया तो चूँकि हर नमाज़ बहुत बड़ी तायदाद में है और दिन व तारीख़ याद नहीं, इसलिए दीन के आ़लिमों ने आसानी के लिए यह तरीक़ा बतलाया है कि जब भी कोई नमाज़ क़ज़ा पढ़ने लगे तो यूँ नीयत कर लिया करे कि मेरे ज़िम्मे (जैसे) ज़ोहर की जो सबसे पहली फ़र्ज़ नमाज़ है उसको अल्लाह के लिए अदा करती हूँ। रोज़ाना जब भी ज़ोहर की नमाज़ अदा करने लगे तो इसी तरह नीयत करे। ऐसा करने से तरतीब क़ायम रहेगी। अगर किसी के ज़िम्मे एक हज़ार ज़ोहर की नमाज़ क़ज़ा थीं तो हज़ारवीं नमाज़ (शुरू की जानिब) सबसे पहले थी और उसको पढ़ने के बाद उसके बाद वाली सबसे

पहली होगी, और जब तीसरी भी पढ़ ली तो उसके पढ़ने के बाद उसके बाद वाली सबसे पहली होगी। इसको ख़ूब समझ लो।

इसी तरह ज़कात के बारे में ख़ूब ग़ौर करे कि मुझ पर कभी फ़र्ज़ हुई है या नहीं। और अगर फ़र्ज़ हुई है तो हर साल पूरी अदा हुई या नहीं। जितने साल की ज़कात बिल्कुल ही न दी हो या कुछ दी हो और कुछ न दी हो उन सबका ख़ूब एहतियात के साथ अन्दाज़ा लगाए यहाँ तक कि दिल गवाही दे दे कि इससे ज़्यादा माल ज़कात की अदायगी के बारे में मुझ पर वाजिब नहीं है।

फिर उतना ही ज़कात का माल उसके हक़दारों को दे दे। चाहे एक ही दिन में दे चाहे थोड़ा-थोड़ा करके अदा करे। अगर गुंजाइश हो तो जल्द-से-जल्द सब की अदायगी कर दे वरना अदा करती रहे, और पुख़्ता नीयत रखे कि इन्शा-अल्लाह पूरी अदायगी ज़िन्दगी में कर दूँगी, और जब भी माल मयस्सर आ जाए अदायगी में कोताही न करे, और देर न लगाये।

सदक़ा-ए-फ़ित्र भी वाजिब है। और जो कोई नज़्र (मन्नत) मान ले तो वह भी वाजिब हो जाती है, उनमें से जिसकी भी अदायगी न की हो उसकी भी अदायगी करे।

ख़्याल रहे कि गुनाह की मन्नत मानना गुनाह है, अगर किसी ने ऐसी मन्नत मानी तो आ़लिमों से मसला मालूम करके अ़मल करे।

इसी तरह रोज़ों का हिसाब करे कि बालिग़ होने के बाद कितने फ़र्ज़ रोज़े छोड़े, उन सबकी कज़ा रखे। (कज़ा रखने के मसाइल आ़लिमों से मालूम कर ले)। औरतें उमूमन रोज़े रखने की शौक़ीन होती हैं, लेकिन उनके साथ हर महीने वाली मजबूरी लगी हुई है, और इस मजबूरी की वजह से शरअ़न हुक्म है कि इन ख़ास दिनों में रोज़ा न रखे और बाद में इन रोज़ों की कज़ा रख ले। बहुत-सी औरतें इसमें कमज़ोरी दिखाती हैं और बाद में इन रोज़ों की कज़ा नहीं रखतीं। ख़ूब याद रखो, बालिग़ होने से लेकर जितने फ़र्ज़ रोज़े रह गए हों, सबकी कज़ा रखना लाज़िम है।

हज भी बहुत-सी औरतों और मर्दों पर फ़र्ज़ हो जाता है, लेकिन हज नहीं करते। जिस पर हज फ़र्ज़ हो या पहले कभी हो चुका था और माल को दूसरे कामों में लगा दिया, वह हज करने की फ़िक्र करे। जिस तरह मुम्किन हो इस फ़रीज़े का बोझ अपने ज़िम्मे से अदा कर दे। अगर किसी पर हज फ़र्ज़ हो और उसने हज नहीं किया और इतनी ज़्यादा उम्र हो गई कि सख़्त बीमारी या बहुत ज़्यादा बुढ़ापे की वजह से हज करने के सफ़र से आ़जिज़ हो और

मौत तक सफ़र के क़ाबिल होने की उम्मीद न हो तो ऐसा शख़्स मर्द हो या औरत, किसी को भेजकर अपनी तरफ़ से हज्जे-बदल करा दे। अगर ज़िन्दगी में न करा सके तो वारिसों को वसीयत कर दे कि उसके माल से हज कराएँ। लेकिन वसीयत सिर्फ़ एक तिहाई माल में लागू हो सकती है। हाँ! अगर वारिस अपने हिस्से में से देना गवारा करें तो उन्हें इख़्तियार है।

उन बन्दों के हुक़ूक़ की तलाफ़ी का मतलब यह है कि बन्दों के जो हक़ूक़ वाजिब हों उन सब की अदायगी करे। और ये हुक़ूक़ दो किस्म के हैं:

अव्वल माली हुक़ूक़। दूसरे आबरू के हुक़ूक़।

माली हुक़ूक़ का मतलब यह है कि जिस किसी का थोड़ा-बहुत माल नाहक़ कब्ज़े में आ गया हो, उसे पता हो या न हो, वह सब वापस कर दे- जैसे किसी का माल चुराया हो या क़र्ज़ लेकर मार लिया हो, किसी से रिश्वत ली हो या किसी के माल में ख़ियानत की हो, या किसी की कोई चीज़ मज़ाक़ में लेकर रख ली हो (जबकि वह उसके देने पर अपने नफ़्स की ख़ुशी से राज़ी न हो) या किसी से सूद लिया हो, तो उस सबको वापस कर दे। वापस करने के लिये यह बताना ज़रूरी नहीं है कि मैंने आपकी ख़ियानत की थी, हदिया (तोहफ़े) के नाम से देने से भी अदायगी हो जाएगी।

आबरू के हुक़ूक़ की तलाफ़ी का मतलब यह है कि अगर किसी को नाहक़ मारा हो या किसी की ग़ीबत की हो या सुनी हो या किसी को तोहमत लगाई हो या गाली दी हो या किसी भी तरह जिस्मानी या रूहानी या दिली तकलीफ़ पहुँचाई हो तो उससे माफ़ी माँग ले। अगर वह दूर हो तो इस दूरी को उज़्र न समझे, बल्कि ख़ुद जाकर या ख़त भेजकर माफ़ी तलब करे। और जिस तरह मुम्किन हो उसको राज़ी करे। अगर नाहक़ मार-पीट का बदला देना पड़े तो उसे भी गवारा करे, अलबत्ता ग़ीबत के बारे में बुज़ुर्गों ने यह लिखा है कि अगर उसे ग़ीबत की इत्तिला (यानी ख़बर) पहुँच चुकी है तो उससे माफ़ी माँगे वरना उसके लिए बहुत ज़्यादा मग़फ़िरत की दुआ करे, जिससे यह यकीन हो जाए कि जितनी ग़ीबत की थी उसके बदले में उसके लिए उतनी दुआ हो चुकी है कि उसकी दुआ को देखते हुए वह ज़रूर ख़ुश हो जाएगा।

बहुत-से लोग ज़ाहिरी दीनदारी भी इख़्तियार कर लेते हैं। ज़बानी तौबा भी करते रहते हैं, लेकिन गुनाह नहीं छोड़ते, हराम कमाई से बाज़ नहीं आते और लोगों की ग़ीबत को माँ के दूध की तरह समझते हैं और ज़रा भी दिल

में एहसास नहीं होता है कि हम ग़ीबतें कर रहे हैं। बस अब दीनदारी, नमाज़, रोज़े की हद तक रह गई है कि सिर्फ़ ज़बानी तौबा करना और गुनाह न छोड़ना और अल्लाह के हक़ों और बन्दों के हक़ों की तलाफ़ी न करना, यह कोई तौबा नहीं है। जो लोग रिश्वत लेते हैं या सूद लेते हैं या कारोबार में फ़रेब देकर नाजायज़ तौर पर पैसा खींच लेते हैं। ऐसे लोगों का मामला बहुत कठिन है। किस-किसके हक़ की तलाफ़ी करेंगे? हक़ वालों को याद रखना और उनके हुक़ूक़ की तलाफ़ी करना और हुक़ूक़ वालों को तलाश करके हुक़ूक़ पहुँचाना अगरचे पहाड़ खोदने के बराबर है लेकिन जिनके दिल में आख़िरत की फ़िक्र अच्छी तरह जम जाए वे बहरहाल हुक़ूक़ वालों के हुक़ूक़ किसी न किसी तरह पहुँचाकर ही रहते हैं।

हमारे एक उस्ताद एक तहसीलदार का क़िस्सा सुनाते थे। जब वह हज़रत हकीमुल-उम्मत मौलाना अशरफ़ अली साहिब थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि से मुरीद हुए और दीनी हालत सुधरने लगी और आख़िरत की फ़िक्र ने हुक़ूक़ की अदायगी की तरफ़ मुतवज्जह किया तो उन्होंने अपने तैनाती के ज़माने में जो रिश्वतें ली थीं उनको याद किया और हिसाब लगाया। ग़ालिबन (हिन्दुस्तान के बटवारे से पहले संयुक्त) पंजाब की तहसीलों में वह तहसीलदारी पर मामूर रहे थे, और जिन लोगों से रिश्वतें ली थीं उनमें से ज़्यादातर सिख क़ौम के लोग थे। उन्होंने तहसीलों में जाकर मुक़द्दमों की पुरानी फ़ाइलें निकलवाईं और उनके ज़रिये मुक़द्दमात लाने वालों के पते लिए। फिर गाँव गाँव उनके घर पहुँचे और बहुत सों से माफ़ी माँगी और बहुत सों को नक़द रक़म देकर मुक्ति हासिल की। उन तहसीलदार साहिब से हमारे उस्ताद साहिब की ख़ुद मुलाक़ात हुई और उन्होंने अपना यह वाक़िआ ख़ुद सुनाया था। वह कहते थे कि अकसर अदा कर चुका हूँ थोड़ा बाक़ी है जिसके लिए बराबर फ़िक्रमन्द (चिन्तित) हूँ।

बहुत से लोग मुरीद भी हो जाते हैं। बुज़ुर्गों के हाथ पर तौबा भी कर लेते हैं। लेकिन यह तौबा सिर्फ़ ज़बानी होती है। न हराम खाना छोड़ते हैं, न हराम कमाना छोड़ते हैं। न बैंक की नौकरी से अलग होते हैं, न रिश्वत लेने से बचते हैं, न लोगों के हुक़ूक़ अदा करते हैं, न ग़ीबत से बचते हैं, बल्कि मुरीद होकर ग़ीबत के एक सबब में इज़ाफ़ा हो जाता है और वह यह कि जो लोग अपने शैख़ के तरीक़े पर न हों उनकी ग़ीबतें शुरू हो जाती हैं और दूसरों की ग़ीबत करने को अपने शैख़ की तारीफ़ का अहम हिस्सा समझते हैं। ये सब ज़िन्दगी के ख़तरनाक आमाल हैं। आख़िरत की फ़िक्र नहीं है तो किस

काम की मुरीदी और कैसी तौबा?

मुमकिन है बाज़ हज़रात यह सवाल करें कि कुछ लोग ऐसे होते हैं कि उन्होंने कुछ हुकूक मार लिए और जो होना था वह हो चुका, अब उनके पास पैसे नहीं, किस तरह अदा करें। और बहुत-से लोग ऐसे हैं कि उनके पास पैसे तो हैं लेकिन हक वाले याद नहीं और तलाश करने से भी नहीं मिल सकते, उनको पहचानने का कोई रास्ता नहीं तो क्या करें?

इसके बारे में अर्ज़ है कि अल्लाह की शरीअत में इसका भी हल मौजूद है। और वह यह है कि जो हक वाले मौजूद हैं उनसे जाकर या ख़तों के ज़रिये माफ़ी माँगें और उनको बिल्कुल खुश कर दें, जिससे अन्दाज़ा हो जाए कि उन्होंने सच्चे दिल से हुकूक़ माफ़ कर दिए। अगर वे माफ़ न करें तो उनसे मोहलत ले लें और थोड़ा-थोड़ा कमाकर और आमदनी में से बचाकर अदा करें। और अगर अदायगी से पहले उनमें से कोई फ़ौत हो (मर) जाए तो बाकी बचा हुआ उनके वारिसों को पहुँचा दें। और जिन लोगों का पता मालूम न हो उनकी तरफ़ से उनके हुकूक के बराबर मिस्कीनों को सदका दे दें। जब तक अदायगी न हो सदका करते रहें।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिस किसी ने अपने भाई पर उसकी आबरू के एतिबार से या और किसी तरिके पर ज़ुल्म किया हो तो उसका आज ही उस दिन से पहले जिस दिन दीनार व दिर्हम (यानी रुपया-पैसा) न होगा (अदा करके या माफ़ी माँगकर) हलाल कर ले (वहाँ रुपये का सिक्का न चलेगा बल्कि वहाँ की अदायगी का तरीका यह है कि) अगर ज़ुल्म व ज़्यादती करने वाले के पास नेक आमाल होंगे तो उससे लेकर मज़लूम को दे दिये जाएँगे (जिसपर ज़ुल्म व ज़्यादती की थी)। और अगर ज़्यादती करने वाले की नेकियाँ न हुईं तो जिसपर ज़्यादती हुई थी उसकी बुराइयाँ लेकर ज़्यादती करने वाले पर डाल दी जाएँगी। (बुख़ारी शरीफ़)

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से ही यह भी रिवायत किया गया है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक बार हज़रात सहाबा से दरियाफ़्त फ़रमाया: क्या तुम जानते हो मुफ़्लिस (यानी तंगदस्त और फ़कीर) कौन है? सहाबा ने अर्ज़ किया हम तो उसे मुफ़्लिस शुमार करते हैं जिसके पास दिर्हम (यानी रुपया-पैसा और माल व सामान न हो)। आपने फ़रमाया: बेशक मेरी उम्मत में मुफ़्लिस वह है जो क़ियामत के दिन नमाज़, रोज़ा और

ज़कात लेकर आएगा और इस हाल में भी आएगा कि उसने किसी को गाली दी होगी और किसी को तोहमत लगाई होगी, और किसी का माल (नाहक़) खाया होगा और किसी का ख़ून बहाया होगा, और किसी को मारा होगा। पस उसकी नेकियों में से कुछ उसको दे दी जाएँगी और कुछ इसको दे दी जाएँगी। अगर हुक़ूक़ की अदायगी से पहले उसकी नेकियाँ ख़त्म हो गईं तो हुक़ूक़ वालों के गुनाह लेकर उसपर डाल दिये जाएँगे। फिर उसे दोज़ख़ में डाल दिया जाएगा। (मुस्लिम)

अल्लाहु अकबर! कितना सख़्त मामला है। हर शख़्स को हुक़ूक़ की अदायगी की फ़िक्र करना लाज़िम है। गुनाहों से पुख़्ता तरीक़े पर तौबा करे, और तौबा का क़ानून पूरा करे, यानी अल्लाह के और उसके बन्दों के हुक़ूक़ पूरी तरह अदा करे। ज़बानी तौबा, तौबा नहीं है, ख़ूब समझ लो। वल्लाहु अअ्लम।

तौबा का तरीक़ा

हदीसः (270) हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने इरशाद फ़रमाया कि मुझसे हज़रत अबू बक्र (सिद्दीक़) रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने बयान किया और सच बयान किया कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः जो कोई शख़्स कोई गुनाह कर बैठे, फिर उसके बाद वुज़ू करे, नमाज़ पढ़े, फिर अल्लाह से मग़फ़िरत तलब करे तो अल्लाह तआ़ला ज़रूर उसको माफ़ कर देगा। उसके बाद आपने यह आयत तिलावत फ़रमाई किः "वल्लज़ी-न इज़ा फ़-अ़लू फ़ाहिश-तन्" (इस पूरी आयत का तर्जुमा अभी आगे आ रहा है)। (मिश्कात शरीफ़)

तशरीहः तौबा के असल हिस्से और अंश तो वही तीन हैं जो पहले गुज़र चुके हैं यानीः

1. जो गुनाह हो चुके उनपर शर्मिन्दगी और नदामत।
2. आईन्दा को गुनाह न करने का पुख़्ता अ़हद।
3. जो अल्लाह और बन्दों के हुक़ूक़ बरबाद और ज़ाया किये हैं उनकी तलाफ़ी करना।

और इस तरह तौबा की जाए तो ज़रूर क़बूल होती है। लेकिन अगर इन बातों के साथ बाज़ और चीज़ें भी मिला ली जाएँ तो तौबा और ज़्यादा क़बूल होने के लायक़ हो जाती है- जैसे नेकियों की कसरत करने लगे (यानी

ख़ूब ज़्यादा नेक काम करने लगे). या किसी बड़ी नेकी का एहतिमाम ज़्यादा करे। हदीस शरीफ़ में है कि एक शख़्स हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और अ़र्ज़ कियाः या रसूलल्लाह! मैंने बहुत बड़ा गुनाह कर लिया, क्या मेरी तौबा कबूल होगी? आपने फ़रमायाः क्या तेरी वालिदा (माँ) मौजूद हैं? अ़र्ज़ किया नहीं। फ़रमायाः तेरी कोई ख़ाला? अ़र्ज़ किया हाँ! ख़ाला है। फ़रमायाः बस तुम उसके साथ अच्छा मामला और सुलूक किया करो। (तिर्मिज़ी)

इससे मालूम हुआ कि वालिदा और ख़ाला के साथ अच्छा बर्ताव और अच्छा सुलूक करने को तौबा कबूल कराने में बहुत दख़ल है।

नमाज़ पढ़कर तौबा करने की जो तालीम फ़रमाई वह भी इसलिये है कि नमाज़ बहुत बड़ी नेकी है। अव्वल दो-चार रकअ़त नमाज़ पढ़कर तौबा की जाए तो तौबा ज़्यादा कबूल होने के लायक होगी।

ऊपर की हदीस में जो आयत का कुछ हिस्सा ज़िक्र किया है, यह सूरः आलि इमरान की आयत है जिसका तर्जुमा यह है:

तर्जुमाः और ऐसे लोग कि जब कोई ऐसा काम कर गुज़रते हैं जिसमें ज़्यादती हो, या अपनी ज़ात पर नुकसान उठाते हैं तो अल्लाह तआ़ला को याद कर लेते हैं। फिर अपने गुनाहों की माफ़ी चाहने लगते हैं, और अल्लाह के सिवा और है कौन जो गुनाहों को बख़्शता हो? और वे लोग अपने फ़ेल पर इसरार नहीं करते, और वे जानते हैं। (सूरः आलि इमरान आयत 135)

उसके बाद उन हज़रात का अज्र व सवाब बयान करते हुए इरशाद फ़रमायाः

तर्जुमाः उन लोगों की जज़ा (यानी बदला और इनाम) बख़्शिश है उनके रब की तरफ़ से। और ऐसे बाग़ हैं कि उनके नीचे से नहरें चलती होंगी। उनमें वे हमेशा-हमेशा रहने वाले होंगे, और अच्छा बदला है उन काम करने वालों का। (सूरः आलि इमरान आयत 136)

तौबा और इस्तिग़फ़ार के फ़ज़ाइल व फ़ायदे

हदीसः (271) हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन बुस्र रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि उस शख़्स के लिये बहुत उम्दा हालत है जो (कियामत के दिन, अपने आमालनामे में ख़ूब ज़्यादा इस्तिग़फ़ार पाए)। (मिश्कात शरीफ़ पेज 206)

तशरीह: चूँकि बन्दों से ज़्यादातर छोटे-बड़े गुनाह होते रहते हैं, और जो नेकियाँ करते हैं वे भी सही तरीक़े पर अदा नहीं होती हैं और शुरू से आख़िर तक हर इबादत में कोताहियाँ होती रहती हैं। और बुराइयाँ भी होती रहती हैं और फ़राइज़ व वाजिबात की अदायगी ऐसी नहीं हो पाती जैसा कि उनका हक़ है। इसलिये ज़रूरी है कि इस्तिग़फ़ार की ज़्यादा कसरत की जाए।

इस्तिग़फ़ार गुनाहों की मग़फ़िरत तलब करने को कहते हैं। जब कोई शख़्स दुनिया में कसरत से इस्तिग़फ़ार करेगा तो क़ियामत के दिन अपने आमालनामे में भी उसका असर पाएगा और उसकी वजह से वहाँ गुनाहों की माफ़ी और नेकियों के अंबार देखेगा। उस वक़्त इसकी क़द्र होगी।

हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने अर्ज़ किया: या रसूलल्लाह! मुझे कोई दुआ सिखाइये जो मैं अपनी नमाज़ में माँगा करूँ। इसपर हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनको वही मशहूर दुआ तालीम फ़रमाई जिसे आम तौर पर नमाज़ में दुरूद शरीफ़ के बाद पढ़ा करते हैं, यानी:

अल्लाहुम्-म इन्नी ज़लम्तु नफ़्सी ज़ुलमन् कसीरंव्-व ला यग़फ़िरुज़्-ज़ुनू-ब इल्ला अन्-त फ़ग़फ़िर् ली मग़फ़ि-रतम् मिन् इन्दि-क वर्हम्नी इन्न-क अन्तल् ग़फ़ूरुर्रहीम (बुख़ारी व मुस्लिम)

तर्जुमा: ऐ अल्लाह! मैंने अपने नफ़्स पर बहुत ज़्यादा ज़ुल्म किया है, और नहीं बख़्श सकता गुनाहों को मगर तू ही। पस मुझे बख़्श दे, ऐसी बख़्शिश जो तेरी तरफ़ से हो, और मुझपर रहम फ़रमा, बेशक तू बख़्शने वाला मेहरबान है।

ग़ौर करने की बात है कि नमाज़ पढ़ी है जो सरासर ख़ैर है। अल्लाह तआला का फ़रीज़ा अदा किया है, जिसके नेकी होने में कोई शक नहीं है। और फ़रीज़ा अदा भी किसने किया है? सिद्दीक़े अकबर ने, फिर उनको तालीम दी जा रही है कि नमाज़ के ख़त्म पर मग़फ़िरत की दुआ करो। इसकी वजह यह है कि अल्लाह जल्ल शानुहू की बारगाह की शान के मुताबिक़ किसी से भी इबादत नहीं हो सकती, इबादत किए जाओ और मग़फ़िरत माँगे जाओ। नेक लोगों का यही तर्ज़े-अमल रहा है और इसी में ख़ैर है।

गुनाह हो जाने पर तो सभी तौबा व इस्तिग़फ़ार करते हैं। जो अल्लाह के कामिल मुख़्लिस बन्दे हैं वे नेकी करके इस्तिग़फ़ार करते हैं। और ज़िन्दगी का यह तर्ज़ उनको हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की पैरवी में नसीब

हुआ है। हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सारी मख़्लूक से अफ़ज़ल हैं। अल्लाह तआला के सबसे ज़्यादा मुकर्रब (करीबी) बन्दे हैं। अल्लाह तआला ने आपको वह सब कुछ अता फ़रमाया जो किसी को नहीं दिया। आप पूरी-पूरी रात नमाज़ में खड़े रहते थे और अल्लाह के दीन को बुलन्द करने के लिए बड़ी-बड़ी मेहनतें करते थे। अल्लाह ने आपको हुक्म दिया कि:

तर्जुमा: पस आप अपने रब की तस्बीह और तहमीद कीजिए (यानी पाकी और तारीफ़ बयान कीजिए) और उससे मग़फ़िरत की दरख़्वास्त कीजिए। बेशक वह बड़ा तौबा कबूल करने वाला है। (सूर: नस्र आयत 3)

आप फ़र्ज़ नमाज़ का सलाम फैरकर तीन बार 'अस्तग़फ़िरुल्लाह' पढ़ते थे। यानी अल्लाह तआला से मग़फ़िरत का सवाल करते थे। (मुस्लिम शरीफ़)

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर ने फ़रमाया कि हम यह शुमार करते थे कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मजलिस में सौ बार यह पढ़ा करते थे:

रब्बिग़्फ़िर् ली व तुब् अलय्-य इन्न-क अन्तत्तव्वाबुल् ग़फ़ूर।

तर्जुमा: ऐ अल्लाह! मेरी मग़फ़िरत फ़रमा दे और मेरी तौबा कबूल फ़रमा, बेशक तू बहुत तौबा कबूल फ़रमाने वाला है, और बहुत बख़्शिश फ़रमाने वाला है। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

पस जब सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह हाल था जो अल्लाह के मासूम (गुनाहों और ख़ता से महफ़ूज़) बन्दे थे और तमाम मासूमों के सरदार थे तो हम गुनाहगारों को किस क़द्र इस्तिग़फ़ार करना चाहिए इसपर खुद ही ग़ौर कर लें।

आजकल जैसा कि हर इबादत में ग़फ़लत और बे-ध्यानी और कोताही ने जगह पकड़ ली है, तौबा व इस्तिग़फ़ार भी ग़फ़लत के साथ होते हैं। और सच्ची तौबा जिसमें दिल हाज़िर हो और जिसमें आईन्दा गुनाह न करने का अहद हो, और जिसके बाद हुकूक की तलाफ़ी की जाती हो, इसका ख़्याल भी नहीं आता। इसी ग़फ़लत वाले इस्तिग़फ़ार के बारे में हज़रत राबिआ बसरिया ने फ़रमाया:

"हमारा इस्तिग़फ़ार भी एक तरह की नाफ़रमानी और गुनाह है। उसके लिए भी इस्तिग़फ़ार की ज़रूरत है"।

'और हज़रत रबीअ बिन ख़शीम रहमतुल्लाहि अलैहि ने फ़रमाया कि तुम लोग **अस्तग़फ़िरुल्ला-ह व अतूबु इलैहि** मत कहो। इसके मायने यह हैं कि मैं

अल्लाह से मग़फ़िरत तलब करता हूँ और उसके हुज़ूर में तौबा करता हूँ। यह एक तरह का दावा है। ज़बान से तौबा व इस्तिग़फ़ार का लफ़्ज़ निकाला और दिल उसकी तरफ़ मुतवज्जह न था। इस तरह उक्त दावा एक तरह का झूठ हो जाता है।

उसके बाद हज़रत रबीअ़ बिन ख़शीम ने फ़रमाया कि बजाय इन ज़िक्र हुए अलफ़ाज़ के **अल्लाहुम्मग़फ़िर् ली व तुब् अ़लय्-य** कहता रहे, क्योंकि इसमें कोई दावा नहीं है बल्कि सवाल है। और अगरचे सवाल भी ग़फ़लत के साथ मुनासिब नहीं, क्योंकि यह भी बे-अदबी है, लेकिन अल्लाह तआ़ला का करम है कि इस पर पकड़ नहीं फ़रमाते। जब कोई शख़्स बराबर **रब्बिग़फ़िर् ली व तुब् अ़लय्-य** कहता रहेगा तो किसी मकबूलियत की घड़ी में तो इन्शा-अल्लाह तआ़ला दुआ़ कुबूल हो ही जाएगी। क्योंकि जो शख़्स बराबर दरवाज़ा खटखटाता रहेगा, कभी न कभी उसके लिए दरवाज़ा खुल ही जाएगा, और दाख़िल होने का मौका मिल ही जाएगा।

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

हदीसः ज़िन्दगी भर नेक काम करते रहो और अल्लाह तआ़ला की रहमत की हवाओं के सामने आते रहो, क्योंकि अल्लाह की रहमत की हवाएँ चला करती हैं। अल्लाह तआ़ला उनको अपने बन्दों में से जिसे चाहते हैं पहुँचा देते हैं। और तुम अल्लाह से इस बात का सवाल करो कि वह तुम्हारे गुनाहों और ऐबों को छुपाए और तुम्हारे ख़ौफ़ को हटाकर अमन व सुकून अ़ता फ़रमाये। (तिबरानी)

मालूम हुआ कि दुआ़ व इस्तिग़फ़ार में लगा ही रहना चाहिए, न जाने किस वक़्त कबूलियत की घड़ी हो और काम बन जाए। हज़रत लुक्मान हकीम ने फ़रमाया कि तू अपनी ज़बान को **अल्लाहुम्मग़फ़िर् ली** कहते रहने की आ़दत डाल दे, क्योंकि बाज़ घड़ियाँ ऐसी होती हैं जिनमें अल्लाह पाक साईल का सवाल रद्द नहीं फ़रमाते।

इस्तिग़फ़ार दिल हाज़िर करके हो तो बहुत ही उम्दा बात है। अगर दिल की हाज़िरी के साथ न हो तब भी ज़बान पर तो इस्तिग़फ़ार जारी रहना चाहिए यह भी इन्शा-अल्लाह बहुत काम दे देगा। इस्तिग़फ़ार में कभी कोताही न की जाए और मौका निकालकर दिल को हाज़िर करके और पूरी शर्मिन्दगी के साथ तौबा भी करते रहा करें, ताकि हमेशा ग़फ़लत वाला ही इस्तिग़फ़ार न

रहे। हर वक़्त दिल हाज़िर नहीं हो सकता तो कभी-कभी तो इस पर क़ाबू पाया जा सकता है। जैसे यह कि रात को सोते वक़्त ख़ूब दिल हाज़िर करके दो रकअ़त नमाज़ नफ़िल पढ़कर ख़ूब गिड़गिड़ाकर तौबा व इस्तिग़फ़ार कर लिया करे।

हज़रत इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि बेशक मोमिन बन्दा अपने गुनाहों को (ख़ुदा के ख़ौफ़ की वजह से) ऐसा समझता है जैसे कि वह पहाड़ के नीचे बैठा है, और डर रहा है कि उसपर गिर न पड़े। और बदकार आदमी अपने गुनाहों को ऐसा समझता है कि उसकी नाक पर कोई मक्खी गुज़रने लगी और उसने हाथ हिलाकर हटा दी। (मिश्कात शरीफ़)

अव्वल तो गुनाहों से बचने का बहुत ज़्यादा एहतिमाम (पाबन्दी) करने की ज़रूरत है। फिर अगर गुनाह हो जाए तो फ़ौरन तौबा व इस्तिग़फ़ार करे। हज़रत आयशा से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम यह दुआ़ करते थे:

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! मुझे उन लोगों में फ़रमा दे कि जब वे नेक काम करें तो ख़ुश हों और जब गुनाह कर बैठें तो इस्तिग़फ़ार करें।

दर हक़ीक़त हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपनी उम्मत को तालीम देने के लिए यह दुआ़ इख़्तियार फ़रमाई क्योंकि आप तो मासूम थे, गुनाहों से पाक थे।

एक सहाबी ने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सवाल किया कि ईमान (की निशानी) क्या है? आपने जवाब में इरशाद फ़रमाया कि जब तेरी नेकी तुझे ख़ुश करे और तेरी बुराई तुझे बुरी लगे तो (समझ ले कि) तू मोमिन है। (मिश्कात)

जिस तरह नेकी करके ख़ुश होना चाहिए कि मुझपर अल्लाह तआ़ला का बड़ा फ़ज़्ल व इनाम है जिसने नेकी की तौफ़ीक़ दी और उसका एहसान है कि उसने अपनी मर्ज़ी के काम में मुझे मशग़ूल फ़रमा दिया, इसी तरह गुनाह हो जाने पर बहुत ज़्यादा रंजीदा होने की ज़रूरत है कि हाय! मुझसे ख़ालिक़ व मालिक की नाफ़रमानी हो गई। और मुझ जैसा हक़ीर व ज़लील इस कायनात के मालिक के हुक्म के ख़िलाफ़ कर बैठा, या अल्लाह! मुझे माफ़ फ़रमा, दरगुज़र फ़रमा, मेरी मग़फ़िरत फ़रमा, बख़्श दे, रहमत की गोद में छुपा ले।

गुनाह तो बन्दे से हो ही जाते हैं लेकिन गुनाहों में जुर्रत करना और गुनाहों में तरक़्क़ी करते रहना बहुत बड़ी नादानी है। एक हदीस में इरशाद है:

हदीसः तमाम इनसान ख़ताकार हैं, और बेहतरीन ख़ताकार वे हैं जो ख़ूब तौबा करने वाले हैं। (मिश्कात शरीफ़)

हज़रत अबू सईद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि बेशक शैतान ने अल्लाह तआला की बारगाह में अर्ज़ किया कि ऐ रब! आपकी इज़्ज़त की क़सम! मैं आपके बन्दों को बराबर सही राह से हटाता रहूँगा जब तक कि उनकी रूहें उनके जिस्मों में रहेंगी। अल्लाह तआला ने फ़रमाया कि मुझे अपनी इज़्ज़त व जलाल और बुलन्द मुक़ाम की क़सम है, जब तक वे मुझसे इस्तिग़फ़ार करते रहेंगे मैं उनको बख़्शता रहूँगा। (मिश्कात शरीफ़)

और यह भी समझ लेना ज़रूरी है कि तौबा व इस्तिग़फ़ार कर लेने के घमण्ड में गुनाह करते रहना दुरुस्त नहीं है, क्योंकि आईन्दा का हाल मालूम नहीं है। क्या पता तौबा से पहले मौत आ जाए। फिर यह भी तर्जुबा है कि तौबा व इस्तिग़फ़ार की दौलत उन्हें नसीब होती है जो गुनाहों से बचने का ध्यान रखते हैं, और कभी-कभार गुनाह हो जाता है तो तौबा कर लेते हैं। और जो लोग मग़फ़िरत की ख़ुशख़बरियों को सामने रखकर गुनाह-पर-गुनाह करते चले जाते हैं उनको तौबा व इस्तिग़फ़ार का ध्यान तक नहीं आता।

और यह भी ध्यान रहे कि अल्लाह की बड़ी शान है, उसकी रहमत से मायूस कभी न हों, जितने भी ज़्यादा गुनाह हो जाएँ चाहे लाखों करोड़ों हों, अल्लाह की मग़फ़िरत के सामने उनकी कोई हैसियत नहीं है। अल्लाह पाक का इरशाद हैः

तर्जुमाः (आप मेरी तरफ़ से) फ़रमा दीजिए कि ऐ मेरे बन्दो! जिन्होंने अपनी जानों पर ज़्यादतियाँ की हैं, तुम अल्लाह तआला की रहमत से ना-उम्मीद मत हो। बेशक अल्लाह तआला तमाम गुनाहों को माफ़ फ़रमा देगा। वाक़ई वह बड़ा बख़्शने वाला, बहुत रहम वाला है। (सूरः ज़ुमर आयत 53)

इस्तिग़फ़ार जहाँ गुनाहों की माफ़ी और नेकियों की ख़ामी और कोताही की तलाफ़ी का ज़रिया है, वहाँ और दूसरे बहुत-से फ़ायदों का भी सबब है। बारिश लाने और दूसरे बहुत-से फ़ायदे हासिल करने के लिए कसरत से इस्तिग़फ़ार करना चाहिये। क़ुरआन शरीफ़ में हज़रत हूद अलैहिस्सलाम की नसीहत का ज़िक्र फ़रमाया है जो उन्होंने अपनी क़ौम को की थीः

तर्जुमाः ऐ मेरी क़ौम! तुम अपने रब से मग़फ़िरत तलब करो, फिर उसके हुज़ूर में तौबा करो, वह तुम पर ख़ूब बारिश बरसा देगा और तुमको और

कुव्वत देकर तुम्हारी कुव्वत में इज़ाफ़ा कर दे देगा, और मुजरिम होकर मुँह मत फैरो। (सूरः हूद आयत 52)

अल्लाह तआला ने सूरः नूह में हज़रत नूह अलैहिस्सलाम की नसीहत नक़ल फ़रमाई है, जो उन्होंने अपनी क़ौम को की थीः

तर्जुमाः और मैंने कहा कि तुम अपने परवर्दिगार से गुनाह बख़्शवाओ वह बड़ा बख़्शने वाला है। कसरत से तुम पर बारिश भेजेगा और तुम्हारे मालों और औलादों में तरक़्क़ी देगा और तुम्हारे लिए बाग़ बना देगा, और तुम्हारे लिए नहरें बना देगा। (सूरः नूह आयत 10, 11, 12)

इन आयतों से वाज़ेह तौर पर मालूम हुआ कि तौबा व इस्तिग़फ़ार बारिश के आने और ताक़त और कुव्वत में इज़ाफ़ा होने और माल और औलाद के बढ़ने और बाग़ात और नहरें नसीब होने का बहुत बड़ा ज़रिया है।

लोग बहुत-सी तदबीरें करते हैं ताकि ताक़त में इज़ाफ़ा हो और मालों में तरक़्क़ी हो और आल-औलाद में इज़ाफ़ा हो, लेकिन तौबा व इस्तिग़फ़ार की तरफ़ मुतवज्जह नहीं होते बल्कि इसके विपरीत गुनाहों में तरक़्क़ी करते चले जाते हैं, यह बहुत बड़ी नादानी है।

आमाल के सुधार में भी इस्तिग़फ़ार का बड़ा दख़ल है। हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान फ़रमाया कि मैं अपने घर वालों के बारे में तेज़ ज़बान वाक़ेअ हुआ था। मैंने अर्ज़ किया कि या रसूलुल्लाह! मुझे डर है कि मेरी ज़बान कहीं दोज़ख़ में दाख़िल न करा दे। आपने फ़रमाया कि तुम इस्तिग़फ़ार को क्यों छोड़े हुए हो? बेशक मैं अल्लाह तआला से सौ बार रोज़ाना मग़फ़िरत तलब करता हूँ और तौबा करता हूँ। (हाकिम)

ज़बान की तेज़ी के सुधार के लिए इस हदीस में इस्तिग़फ़ार को इलाज बताया है। हर तरह की मुश्किलों और चिन्ताओं से महफ़ूज़ रहने के लिए भी इस्तिग़फ़ार बहुत अक्सीर है।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया हैः

हदीसः जो शख़्स इस्तिग़फ़ार में लगा रहे अल्लाह तआला उसके लिए हर दुश्वारी से निकलने का रास्ता बना देंगे और हर फ़िक्र को हटाकर कुशादगी अता फ़रमा देंगे। और उसको ऐसी जगह से रिज़्क़ देंगे जहाँ से उसको गुमान भी न होगा। (अबू दाऊद)

दिल की सफ़ाई के लिए भी इस्तिग़फ़ार बहुत बड़ी चीज़ है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि बेशक मेरे दिल में मैल

आ जाता है और बेशक मैं ज़रूर अल्लाह से रोज़ाना सौ बार इस्तिग़फ़ार करता हूँ। (मुस्लिम)

इस रिवायत में रोज़ाना सौ बार इस्तिग़फ़ार फ़रमाने का ज़िक्र है और दूसरी रिवायत में है कि आप हर मज्लिस में सौ बार तौबा व इस्तिग़फ़ार करते थे। इसमें कोई टकराव नहीं, मुम्किन है कि पहले रोज़ाना सौ बार इस्तिग़फ़ार फ़रमाते हों, फिर हर मज्लिस में सौ बार इस्तिग़फ़ार का एहतिमाम फ़रमा दिया हो। और यह भी मुम्किन है कि रोज़ाना सौ बार इस्तिग़फ़ार का जो ज़िक्र है वह हर मज्लिस वाले इस्तिग़फ़ार के अलावा हो।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह जो फ़रमाया कि "मेरे दिल में मैल आ जाता है" इसके बारे में दीन के आलिमों और बुज़ुर्गों ने कई बातें लिखी हैं, जिनमें से एक यह है कि जिहाद वग़ैरह के इन्तिज़ामी मामलात, उम्मत की मस्लेहतों की तरफ़ मुतवज्जह होने की वजह से थोड़ा-सा जो दिल बट जाता था और हक़ तआला की तरफ़ पूरी तवज्जोह में थोड़ा-सा फ़र्क़ आ जाता था (जो ग़ैर की शिरकत के बिना होनी चाहिये) उसको आपने मैल से ताबीर फ़रमाया है। अगरचे उम्मत की तरफ़ मुतवज्जह होना और जिहाद के मामलात को अन्जाम देना भी बहुत बड़ी इबादत है, लेकिन इसमें लगने की वजह से अल्लाह की बारगाह में दूसरे की शिरकत के बग़ैर हाज़िरी में जो कमी आ गई और उससे जो दिल मुतास्सिर हुआ उसको मैल फ़रमाया, और उसको दूर करने के लिए आप कसरत से इस्तिग़फ़ार करते थे।

जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने बारे में यह इरशाद फ़रमाया कि मेरे दिल में मैल आ जाता है और मैं उसको इस्तिग़फ़ार से धोता और साफ़ करता हूँ तो हम लोगों को किस क़द्र इस्तिग़फ़ार की तरफ़ मुतवज्जह होने की ज़रूरत है? हर शख़्स ख़ुद ही ग़ौर कर ले। इसपर ख़ूब ग़ौर करें और इस्तिग़फ़ार की तरफ़ मुतवज्जह हों क्योंकि हम तो पूरे के पूरे गुनाहों में लत-पत हैं, और ख़ताओं में डूबे हुए हैं।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि बेशक मोमिन बन्दा जब गुनाह करता है तो उसके दिल पर एक सियाह दाग़ लग जाता है। पस अगर तौबा व इस्तिग़फ़ार कर लेता है तो उसका दिल साफ़ हो जाता है। और अगर (तौबा व इस्तिग़फ़ार न किया बल्कि) और ज़्यादा गुनाह करता गया तो यह (सियाह) दाग़ भी बढ़ता रहेगा, यहाँ तक कि उसके दिल पर ग़ालिब आ

जाएगा। पस यह दाग़ वह 'रान' है जिसको अल्लाह तआला ने यूँ ज़िक्र फ़रमाया है:

कल्ला बल् रा-न अ़ला क़ुलूबिहिम् मा कानू यक्सिबून

यह सूरः ततफ़ीफ़ की आयत है। इसका तर्जुमा यह है।

तर्जुमाः हरगिज़ ऐसा नहीं, बल्कि उनके दिलों पर उनके आमाल का ज़ंग बैठ गया है। (सूरः ततफ़ीफ़ आयत 14)

एक रिवायत में है कि दिलों में ज़ंग लग जाता है और उनकी सफ़ाई इस्तिग़फ़ार है। (तरग़ीब)

यह ज़ंग गुनाहों की वजह से दिल पर सवार हो जाता है, जैसा कि हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की ऊपर ज़िक्र हुई रिवायत से मालूम हुआ। गुनाहों की गन्दगी से तौबा व इस्तिग़फ़ार की तरफ़ मुतवज्जह नहीं होते, उनके दिल का नास हो जाता है। फिर नेकी-बदी का एहसास तक नहीं रहता, और इस एहसास का ख़त्म हो जाना बद-बख़्ती का सबब हो जाता है। अपने लिए और अपने माँ-बाप के लिए और उस्ताद व पीरों के लिए, यार-दोस्तों के लिए मुर्दा हों या ज़िन्दा, मर्द हों या औरत, सबके लिए इस्तिग़फ़ार करते रहना चाहिए। ख़ासकर उन लोगों के लिए बराबर इस्तिग़फ़ार करते रहें जिनका कभी दिल दुखाया हो या किसी की ग़ीबत की हो या किसी की ग़ीबत सुनी हो, या किसी पर तोहमत लगाई हो। उन लोंगो के लिए इतना इस्तिग़फ़ार करें कि दिल गवाही दे दे कि उनको अगर इस्तिग़फ़ार का पता चले तो वे ज़रूर ख़ुश हो जायगें।

इस्तिग़फ़ार के कलिमात

जिन अलफ़ाज़ में भी अल्लाह पाक से गुनाहों की मग़फ़िरत तलब की जाए वे सब इस्तिग़फ़ार हैं। लेकिन जो अलफ़ाज़ हदीसों में आए हैं उनके ज़रिये इस्तिग़फ़ार करना ज़्यादा अफ़ज़ल है। क्योंकि ये अलफ़ाज़ मुबारक हैं जो नबी करीम हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़बाने मुबारक से निकले हैं। इन सतरों के लिखने के वक़्त जो अलफ़ाज़ हदीस की किताबों में हमें मिले उनको नीचे दर्ज किया जाता है। (इनमें से बाज़ कलिमात किताबुल ज़िक्र में फ़ज़ाइले इस्तिग़फ़ार के बयान में गुज़र चुके हैं)।

(1) **रब्बिग़फ़िर् ली व तुब् अ़लय्-य इन्न-क अन्तत्तव्वाबुल् ग़फ़ूर।**

तर्जुमाः ऐ मेरे रब! मेरी मग़फ़िरत फ़रमा दे और मेरी तौबा क़बूल

फ़रमा, बेशक आप बहुत तौबा क़बूल फ़रमाने वाले हैं और बख़्शिश फ़रमाने वाले हैं।

हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हर मज्लिस में सौ बार यह कलिमात पढ़ते थे। (तिर्मिज़ी)

(2) हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिसने तीन बार यूँ कहाः

अस्तग़फ़िरुल्लाहल् अज़ीमल्लज़ी ला इला-ह इल्ला हुवल् हय्युल् कय्यूमु व अतूबु इलैहि

तर्जुमाः मैं अल्लाह से मग़फ़िरत तलब करता हूँ जो बड़ा है, जिसके सिवा कोई माबूद नहीं, ज़िन्दा है, वह क़ायम रखने वाला है, मैं उसकी जनाब में तौबा करता हूँ।

तो उसके गुनाह बख़्श दिए जाएगें अगरचे मैदाने जिहाद से भागा हो।

(हाकिम पेज 511)

एक हदीस में इरशाद है कि जिसने (रात को) अपने बिस्तर पर ठिकाना पकड़कर तीन बार यह पढ़ाः

अस्तग़फ़िरुल्लाहल्लज़ी ला इला-ह इल्ला हुवल् हय्युल् कय्यूमु व अतूबु इलैहि

अल्लाह तआला उसके गुनाह माफ़ फ़रमा देंगे अगरचे समुन्द्र के झागों के बराबर हों, अगरचे पेड़ों के पत्तों के बराबर हों, अगरचे आलिज मुक़ाम की रेत के बराबर हों। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

(3) हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि एक शख़्स हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और उसने दो या तीन बार यूँ कहाः हाय! मेरे गुनाह, हाय! मेरे गुनाह। हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उससे फ़रमायाः तू यूँ कहः

अल्लाहुम्-म मग़फ़ि-रतु-क औसउ मिन् ज़ुनूबी व रहमतु-क अरजी इन्दी मिन् अ-मली

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! आपकी मग़फ़िरत मेरे गुनाहों से बहुत ज़्यादा बड़ी है, और आपकी रहमत मेरे नज़दीक मेरे अमल से बढ़कर उम्मीद दिलाने वाली है।

उसने ये अलफ़ाज़ कहे। आपने फ़रमाया फिर कहो। उसने फिर दोहराए। आपने फ़रमाया फिर कहो। उसने फिर इनको दोहराया। आपने फ़रमाया खड़ा

हो जा, अल्लाह तआला ने तेरी मग़फ़िरत फ़रमा दी। (हाकिम)

(4) हज़रत अबू मूसा अश्अरी रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान फ़रमाया कि मैंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह दुआ करते हुए सुना है किः

अल्लाहुम्-म इन्नी अस्तग़फ़िरु-क लिमा क़द्दम्तु व मा अख़्ख़रतु व मा अअ्लन्तु व मा असर्रतु अन्तल् मुक़द्दिमु व अन्तल् मुअख़्ख़िरु व अन्-त अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर।

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! मैं आप से उन सब गुनाहों की मग़फ़िरत चाहता हूँ जो मैंने पहले किए और बाद में किए। और ज़ाहिर में किए और जो पौशीदा तरीक़े पर किए। आप आगे बढ़ाने वाले हैं और आप पीछे हटाने वाले हैं। और आप हर चीज़ पर क़ादिर हैं। (हाकिम)

(5) हज़रत शद्दाद बिन औस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूले अकरम सल्ल० ने इरशाद फ़रमाया कि सय्यिदुल- इस्तिग़फ़ार यूँ हैः

अल्लाहुम्-म अन्-त रब्बी ला इला-ह इल्ला अन्-त ख़लक़्तनी व अ-न अ़ब्दु-क व अ-न अ़ला अ़ह्दि-क व वअ्दि-क मस्ततअ्तु अऊ़ज़ु बि-क मिन् शर्रि मा सनअ्तु अबूउ ल-क बिनिअ्मति-क अ़लय्-य व अबूउ बिज़म्बी फ़ग़फ़िर् ली फ़-इन्नहू ला यग़फ़िरुज़्ज़ुनू-ब इल्ला अन्-त

तर्जुमाः ऐ अल्लाह! तू मेरा रब है और तेरे सिवा कोई माबूद नहीं। तूने मुझको पैदा फ़रमाया है और मैं तेरा बन्दा हूँ और तेरे अ़हद पर और तेरे वायदे पर क़ायम हूँ जहाँ तक मुझसे हो सका, मैंने जो गुनाह किए उनके शर से तेरी पनाह चाहता हूँ। मैं तेरी नेमतों का इक़रार करता हूँ और अपने गुनाहों का भी इक़रार करता हूँ। लिहाज़ा मुझे बख़्श दे क्योंकि तेरे अ़लावा गुनाहों को कोई नहीं बख़्श सकता है।

रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जो शख़्स दिन को यक़ीन के साथ सय्यिदुल-इस्तिग़फ़ार पढ़े और शाम से पहले मर जाए तो जन्नती होगा। और जो शख़्स रात को यक़ीन के साथ सय्यिदुल-इस्तिग़फ़ार पढ़े और सुबह से पहले मर जाए तो जन्नती होगा

(मिश्कात शरीफ़ पेज 204)

किताब का समापन और अ़मल की दावत

अल्लाह का लाख-लाख शुक्र है कि यह किताब जल्द ख़त्म हुई। अल्लाह तआ़ला से दुआ है कि इसको क़बूल फ़रमाये और तमाम मुसलमानों में इसकी

मक़्बूलियत और नफ़ा आम व मुकम्मल फ़रमाये। जिन हज़रात तक यह किताब पहुँचे उन सब से ख़ास तौर पर मुसलमान औरतों से दरख़्वास्त है कि इस किताब को सिर्फ़ अलमारी की ज़ीनत न बनायें बल्कि इसको बार-बार पढ़ें और रोज़ाना आपस में मिलकर बैठा करें, और इस किताब को सुनें। बच्चों को भी साथ लेकर बैठें और ख़ास तौर पर उन्हें किताब के मज़ामीन समझायें। फिर दूसरे दिन पूछें कि कल क्या बयान गुज़रा था। बल्कि एक-एक सबक़ करके पूरी किताब घर में सबको पढ़ा दें। और इसके मज़ामीन याद करवा दें, और अमल करने और अमल कराने की कोशिश करें। अलबत्ता तहारत के बयान में जो मसाइल बच्चों के सामने ज़िक्र करने के नहीं हैं वे उनके सामने न पढ़ें।

आजकल इल्म का ज़ौक़ है, जो किताब छपती है हाथों-हाथ फ़रोख़्त हो जाती है। लेकिन यह सब कुछ पढ़ने और बहस-मुबाहसे की हद तक है, अमल के लिए अपने नफ़्सों को आमादा नहीं करते। जानते-बूझते हुए इस्लामी अहकाम व आदाब पर अमल करने से बचते हैं और समाज में ज़िन्दगी का जो तरीक़ा आम हो गया है उसी की तरफ़ लपकते हैं। सब को मालूम है कि यह दुनिया चन्द दिन की है और आख़िरत हमेशा रहने वाली है, और इस्लामी अहकाम व आमाल पर अमल करना दोज़ख़ से बचाने और जन्नत दिलाने का ज़रिया है, इसके बावजूद नफ़्स व तबीयत और शैतान की फ़रमाँबरदारी करते हैं, और अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की फ़रमाँबरदारी से मुँह मोड़ते हैं। यह सूरते-हाल ईमान वालों के लिए बहुत अफ़सोसनाक है। हिम्मत करके नफ़्स और शैतान के फन्दों से आज़ाद हों और क़ुरआन व हदीस को अपना रहबर बनाएँ। सच्चे उलमा की किताबों का मुताला करें। जो लोग पेन्शन पाते हैं, रिटायर्ड होकर घर बैठ गए हैं, इसी तरह वे हज़रात जो तिजारत व खेती-बाड़ी से फ़ारिग़ हैं, जिनकी औलाद कारोबार और रोज़ी-रोटी कमाने की ज़िम्मेदार बन चुकी है, उनसे गुज़ारिश है कि अपनी बाक़ी ज़िन्दगी बरबाद न करें। यह फ़ुरसत व फ़राग़त के चन्द साल जो नसीब हुए हैं इनमें आख़िरत के लिए दौड़-धूप कर लें। इसी तरह वे औरतें जो दुनिया से फ़ारिग़ हो चुकी हैं, जिन्हें पोता-पोती, नवासा-नवासी खिलाने के सिवा कुछ काम नहीं रहा, अपनी बाक़ी उम्र की क़द्र करें और आख़िरत की तरफ़ बढ़ें।

सब हज़रात सच्चे दिल से तौबा करें। तौबा का तरीक़ा और तौबा की

हकीकत और इस्तिग़फ़ार के फ़ज़ाइल व फ़ायदे जो अभी-अभी इस किताब में गुज़रे हैं उनके मुताबिक़ अमल करें। पुरानी कज़ा नमाज़ें थोड़ी-थोड़ी करके सब पढ़ें। रोज़े, हज, ज़कात वग़ैरह जो कुछ ज़िम्मे हो उन सबकी अदायगी करें। जो रोज़े छोड़े हैं या फिर छूटे हैं उनकी कज़ा रखें। बन्दों के हुक़ूक़ की अदायगी करें। सुबह-शाम और रात के ज़िक्र और तस्बीहें जो इस किताब में हम हदीस नम्बर 97 के ख़त्म पर लिख आए हैं उनको मामूल बनायें। हर वक़्त अपनी ज़बान अल्लाह की याद में तर रखें। मसनून दुआओं का एहतिमाम करें। बेकार की चीज़ों से परहेज़ करें। ग़ीबतों से बचें, और इधर-उधर बैठकर वक़्त बरबाद न करें। गया वक़्त फिर हाथ नहीं आएगा। बुढ़ापे में अगर इनसान नेक न बना तो कब नेक बनेगा? और इस उम्र में गुनाहगार होना बहुत सख़्त बात है।

सत्तर-अस्सी साल की उम्र दुनिया के धन्धों में गंवा दें और गुनाहगारी की ज़िन्दगी गुज़ार कर क़ब्र में पहुँच जाएँ यह बहुत बड़ी नादानी है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया है: जिसको अल्लाह तआला ने साठ साल की उम्र में पहुँचाया उसके लिए माज़िरत चाहने का कोई मौक़ा नहीं छोड़ा। (बुख़ारी)

और एक हदीस में इरशाद है कि क़ियामत के दिन एक पुकारने वाला यह पुकारेगा: (जो अल्लाह का मुनादी होगा) कि साठ साल वाले कहाँ हैं? और यह उम्र है जिसके बारे में अल्लाह तआला का इरशाद है कि:

तर्जुमा: क्या हमने तुमको इतनी उम्र न दी थी कि जिसको उसमें समझना होता तो समझ सकता था। और तुम्हारे पास डराने वाला भी पहुँचा था।

(मिश्कात शरीफ़ पेज 451)

बुढ़ापे में ख़ास तौर पर आख़िरत की तरफ़ बढ़ना लाज़िम है। अपनी फ़िक्र करें, औलाद के लिए चिन्तित हों और औलाद की औलाद को भी इस्लामी उलूम व आमाल से जोड़ने की फ़िक्र और कोशिश करें।

ये बूढ़े मर्द और बूढ़ी औरतें ही हैं, जिन्होंने औलाद को सब कुछ सिखाया मगर इस्लाम की तालीम नहीं दी। नमाज़ तो न सिखाई, अलबत्ता अंग्रेज़ों के तौर-तरीक़े समझाए और बताए। अब इसकी तलाफ़ी यह है कि अपने बुढ़ापे में ख़ुद भी अपने को सुधारें, गुनाह छोड़ें, नेकियों पर चलें, सच्ची तौबा करके पूरी ज़िन्दगी की तलाफ़ी करें और अपनी औलाद को बताएँ कि हमने बहुत बुरा किया जो तुमको इस्लाम के अहकाम नहीं सिखाये, अब तुम

ख़ुद आक़िल बालिग़ (समझदार और जवान) हो, संभल जाओ और दीने इस्लाम को पूरी तरह अपनाओ। गुनाहों को छोड़ो, अपना ज़िन्दगी गुज़ारने का तरीक़ा इस्लामी बनाओ और अपने बच्चों और बच्चियों को इस्लामी तौर-तरीक़ों से मानूस (अवगत) कराओ। और उनको अहकाम सिखाओ और अ़मल कराओ, वरना बुढ़ापे में हमारी तरह तुम्हें और तुम्हारी औलाद को अफ़सोस के हाथ मलने पड़ेंगे।

सत्तर-अस्सी साल की लम्बी ज़िन्दगी इनसान इस दुनिया में गुज़ार दे और अल्लाह तआ़ला का नाफ़रमान बनकर क़ब्र में जाए और पूरी ज़िन्दगी जो जन्नत कमाने के लिए थी उसको दोज़ख़ के आमाल में लगाकर मर जाए। फिर क़ब्र और हश्र में और उसके बाद के हालात में अ़ज़ाब भुगते, यह सरासर नुक़सान का सौदा है। जो लोग मुलाज़िम हैं या व्यापारी हैं। आठ-दस घन्टे ही तो रोज़ी-रोटी के लिए ख़र्च करते हैं, और औरतों के ज़िम्मे सिर्फ़ घर का काम-काज है, रोज़ी कमाने और घर के काम-काज के अ़लावा सोलह या चौदह घन्टे रोज़ाना बचते हैं। आठ या छह घन्टे आराम है बाक़ी सब फ़ारिग़ हैं। इस वक़्त की क़द्र नहीं की जाती, और उस वक़्त गाना सुनने, टी.वी. देखने, होटलों में बैठने, ताश खेलने और बेकार व बे-फ़ायदा बातों में बरबाद करते हैं। उसमें से बहुत-सी बातें गुनाह हैं, और जो गुनाह नहीं जैसे बेफ़ायदा बातें, वे भी इस एतिबार से नुक़सानदेह हैं कि जिस वक़्त में बेकार की बात की उस वक़्त में अल्लाह का ज़िक्र कर सकते थे और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर दुरूद व सलाम भेज सकते थे। (बेफ़ायदा (लायानी) बात उसको कहते हैं कि जिसमें दीन व दुनिया का नफ़ा न हो, और उसमें गुनाह का पहलू भी न हो)।

बहुत-से हज़रात जो ये सतरें पढ़ेंगे उनके दिल में यह बात आएगी कि ये बातें तो ठीक हैं जो यहाँ लिखी हैं, लेकिन तबीयत नमाज़, रोज़े और ज़िक्र व तिलावत करने पर लायानी (बेफ़ायदा) बातों बल्कि गुनाहों को छोड़ने पर आमादा नहीं होती। इसका जवाब यह है कि तबीयत को न देखें, बल्कि आख़िरत के अ़ज़ाब-सवाब को देखें, जहाँ हमेशा रहना है। तबीयत को तोड़कर और नफ़्स के तक़ाज़े को दबाकर शैतान को ज़लील करें, और अल्लाह तआ़ला के अहकाम पर अ़मल करें। गुनाहों को छोड़ें, नमाज़, रोज़ा, ज़िक्र व तिलावत में लगें। क्या दुनिया के बहुत-से काम तबीयत के ख़िलाफ़ नहीं करते? देखो रात को मीठी नींद सो रहे हैं, बच्चे ने उठकर कहा कि मुझे

पाख़ाना करना है, मेरे साथ चलो। नींद छोड़कर सर्दी में लिहाफ़ से निकलकर बच्चे के साथ पाख़ाने तक जाते हैं। दफ़्तर में मुलाज़िम हैं, ऑफ़िसर से तबीयत नहीं मिलती लेकिन मातहती के बग़ैर गुज़ारा भी नहीं, तबीयत के ख़िलाफ़ बरसों उसकी मातहती में गुज़ार देते हैं।

बात असल यह है कि दुनिया सामने है, इसके तक़ाज़े समझते हैं और उन तक़ाज़ों को पूरा करते हैं। और आख़िरत सामने नहीं है, इसलिए वहाँ के इनाम व सम्मान या अ़ज़ाब व तकलीफ़ की आयतें और हदीसें सुनकर अ़मल के लिए आमादा नहीं होते। लेकिन सोचने की बात यह है कि आख़िरत अगर इस वक़्त सामने नहीं है तो यक़ीनी तो है। जब यक़ीनी है तो उसके लिए दौड़-धूप क्यों नहीं? असल बात यह है कि आख़िरत का यक़ीन ही कमज़ोर है, वरना वह ज़रूर अ़मल पर आमादा करता।

अल्लाह वालों की किताबें पढ़ने से और नेक बन्दों की सोहबत इख़्तियार करने से आख़िरत के यक़ीन में पुख़्तगी आती है, और नेक आमाल पर तबीयत आमादा हो जाती है, और नफ़्स भी गुनाह छोड़ देने पर आमादा हो जाता है। अल्लाह के वे बन्दे जिनकी मज्लिसों में बैठने से और जिनसे ख़त-पत्र लिखने का सिलसिला रखने से तबीयत का रुख़ दीन की तरफ़ फिर जाता है, अभी नापैद नहीं हैं। उनको तलाश करें, अपने बच्चों को साथ ले जाएँ। उनके पास उठें-बैठें, वहाँ से आएँ तो मज्लिस की बातें घर में सुनाएँ। बच्चों को और सब घर वालों को रोज़ाना लेकर बैठें, दीनी किताबें सुनाएँ (उन किताबों की फ़ेहरिस्त तरबियत व तालीम के बयान में गुज़र चुकी है)।

ख़ुलासा यह कि करने का काम करने से होगा। नफ़्स राज़ी हो या न हो दीन पर चलें और घर वालों को चलाएँ। किताब लिखने वाला तो लिख ही सकता है, दीन की बातें बयान करने वाला अच्छी बातें ज़बानी बता सकता है, मगर अ़मल तो हर एक को ख़ुद ही करना है।

नसीहत करने वाला तो बस नसीहत ही कर सकता है। हमने भी ये सब बातें आपके सामने रख दीं। अब अगर कोई नसीहत क़बूल न करे और अ़मल न करे तो उसी का नुकसान है। इस लिए कि पहुँचाने वाले के ज़िम्मे तो सिर्फ़ पहुँचाना है। व मा अ़लैना इल्लल् बलाग़ुल् मुबीन

बन्दा

मुहम्मद आ़शिक़ इलाही बुलन्द शहरी अ़फ़ल्लाहु अ़न्हु

मदीना मुनव्वरा (25 जमादिउस्सानी 1399 हिजरी)